

मध्यएशिया का इतिहास

खण्ड १

राहुल सांकृत्यायन

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना

प्रकाशक
बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना

प्रथम मस्करण, वि० स० २०१३, सन् १९५६ ई०
सर्वाधिकार सुरक्षित
मूल्य १०।।। सजिल्द १२।।

मुद्रक
सम्मेलन मुद्रणालय
प्रयाग

समर्पण

परगत डा० काशीप्रसाद जायसवालको
जिनकी स्मृति अठारह वर्षोंके अनन्त वियोगके बाद भी
मेरे जीवनकी प्रिय निधि है

वैयक्तिक

“विद्वानेव विजानाति विद्वज्जनपरिश्रमम्”

बिहार-राज्य के शिक्षा-विभाग के अन्तर्गत यह परिषद् एक साहित्यिक संस्था है। अबतक इसके द्वारा दो दर्जन महत्वपूर्ण पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है। उन्हें समस्त हिन्दी-संसार ने पसंद भी किया है।

सन् १९५४ ई० में, बिहार के तत्कालीन शिक्षासचिव श्री जगदीशचन्द्र माथुर आई० सी० एस० के अनुरोध से, परिषद् ने इस पुस्तक का प्रकाशन स्वीकृत किया था। किन्तु परिषद् की स्वीकृति से पूर्व ही इसके दूसरे खण्ड के कई फार्म लखनऊ में छप चुके थे। तब भी, हिन्दी में ऐसी पुस्तक का अभाव और एक अधिकारी विद्वान् द्वारा उस अभाव की पूर्ति का सत्प्रयास देखकर, परिषद् ने अपने नियमों के अपवाद-स्वरूप, विशेष परिस्थिति में, वह स्वीकृति दी थी।

इसलिए कि लेखक ने इस पुस्तक के दूसरे खण्ड की छपाई पहले ही शुरू करा दी थी, इस पहले खण्ड की पाण्डुलिपि भी—दोनों खण्डों की एक-सी छपाई कराने के विचार से—लखनऊ भेज दी गई। परन्तु कुछ अनिवार्य कारणों से जब दूसरे खण्ड की ही छपाई में विलम्ब होने लगा, तब प्रस्तुत खण्ड को पहले ही प्रकाशित करना आवश्यक समझा, प्रयाग में इसकी छपाई का प्रबन्ध करना पड़ा, क्योंकि इसके लिए लखनऊ में खरीदा हुआ कागज भी प्रयाग भेजना था।

हम चाहते थे कि दोनों खण्ड एक साथ ही प्रकाशित हों। पर दूसरा खण्ड इससे कुछ बड़ा है। फिर भी हम उसे अविलम्ब प्रकाशित करने में प्रयत्नशील हैं। आशा है कि वह भी शीघ्र ही पाठकों की सेवा में पहुँचेगा। तबतक इस खण्ड का पहले निकल जाना उचित ही हुआ।

इस पुस्तक में विभक्तियों के चिह्न सर्वत्र शब्दों के साथ लगे हुए हैं। परिषद् की अन्य पुस्तकों में ऐसा नहीं है। किन्तु इस पुस्तक के दूसरे खण्ड के कई फार्म जैसे पहले छप चुके थे वैसे ही इस खण्ड के भी छपवाने पड़े। कारण, दोनों खण्डों की छपाई में समता रखना आवश्यक प्रतीत हुआ। विभक्तियों को शब्दों से हटाकर या सटाकर लिखने-छापने की परिपाटी आज भी हिन्दी-जगत् में प्रचलित है। अतः पहले के छपे हुए पृष्ठों को नष्ट करके परिषद् की परम्परा के अनुसार पुनः नये सिरे से छपाई शुरू कराना हमने अनावश्यक समझा, क्योंकि पुस्तक के महत्त्व में इसमें कोई बाधा नहीं पड़ी है।

अस्तु। भारत का इतिहास पढ़ने पर प्रायः ऐसा अनुभव होता है कि मध्य एशिया के इतिहास में भारत के इतिहास की कितनी ही घटनाएँ सम्बद्ध हैं। परन्तु हिन्दी में मध्य एशिया के कुछ देशों के भौगोलिक एवं ऐतिहासिक विवरण तो मिलते हैं, सम्पूर्ण मध्य एशिया का क्रम-बद्ध इतिहास नहीं मिलता। इसलिए अनेक ऐतिहासिक जिज्ञासाओं का समाधान नहीं हो पाता था। आशा है कि अब यह पुस्तक भारत और उसके पड़ोसी देशों के इतिहास की शृंखला को अटूट सिद्ध करके पाठकों को सन्तुष्ट करेगी।

इस पुस्तक के समर्थ लेखक महापण्डित श्री राहुल माकृत्यायनजी अन्तरराष्ट्रीय ख्याति के विद्वान् हैं। इस युग के आप एक धुरन्धर साहित्यकार हैं। साहित्यिक शोध का क्षेत्र आपके अनवरत अनुसन्धानात्मक परिश्रम एवं लेखनी-मंचालन से बहुत उर्वर हुआ है। आपकी अथक लेखनी ने किन्ने ही ऐसे विषयों को सनाथ किया है, जिनकी ओर हिन्दी-संसार के विद्वज्जनों का ध्यान आकृष्ट नहीं हुआ था। अतः हिन्दी-साहित्य आपकी खोज की लगन और देन में बहुत लाभान्वित हो रहा है। विश्वास है कि यह पुस्तक भी हिन्दी-साहित्य के एक चिर-अनुभूत अभाव की पूर्ति करेगी तथा ऐतिहासिक गोघ के कामों में भी सहायक होगी।

शिवपूजन सहाय
(संचालक)

दीपावली, मवत् २०१३ वि०



लेनिन

भूमिका

भारतके इतिहास की जगह मध्य एसियाके इतिहासपर मैंने क्यों कलम उठाई, यह प्रश्न हो सकता है। उत्तर आसान है। भारतके इतिहासपर लिखनेवाले बहुत हैं। जिसका अभाव है, उसकी पूर्ति करना जरूरी था, यही विचार इस प्रयासका कारण हुआ। अपनी यात्राओंमें मैं रूस और मध्य-एसियाके सम्पर्कमें आया, उनके ऊपर कितनी ही पुस्तके लिखी और अनुवादित की। उसी समय विचार आया, आधुनिक ऐतिहासिक घटनाओंको पिछले इतिहासकी पृष्ठभूमिमें देखना चाहिये। इस तरफ आगे बढ़ा, तो यह भी मालूम हुआ, मध्य-एसियाका इतिहास हमारे देशके इतिहाससे बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है। द्रविड (फिनो-द्रविड) जाति—जिसने मोहनजोडरो और हड़प्पाके भव्य नगर और यशस्वी सिन्धु-सभ्यताको प्रदान किया—का सम्बन्ध मध्य-एसियासे भी था। हालके पुरातात्विक अनुसन्धान बतलाते हैं, कि आर्योंका सम्पर्क द्रविड जातिसे सबसे पहले सिन्धु-उपत्यकामें नहीं, बल्कि ख्वारेज़्ममें हुआ था। वहां पराजित करके उनका स्थान ले आर्य भारतकी ओर बढ़े। उनका बढ़ाव पिछली विजित भूमिको बिना छोड़े आगे की तरफ होता रहा, इसीलिये भारतीय आर्योंकी परम्परा में अपने-पुराने छोड़े हुये स्थानका उल्लेख नहीं पाया जाता। आर्योंकी अनेक लहरोंके बाद ग्रीक लोगोंने भी बाख्त्रियासे आकर भारतके कुछ भाग पर शासन किया। शक-कुषाण भी वहांसे ही होकर आये। तथाकथित हूण—हेप्ताल—भी मध्य-एसियासे भारतकी ओर बढ़े। तुर्क और इस्लाम भी वहांसे चलकर भारत आया। इन शासकों और उनकी जातियोंके इतिहासका एक भाग मध्य-एसियामें पड़ा रहा, जिसे जानें बिना हम अपने इतिहासको समझनेमें गलती कर बैठते हैं। इस दृष्टि से भी मुझे इस पुस्तकके लिखनेकी प्रेरणा मिली।

यद्यपि मैं अपने इतिहासको मध्य-एसिया—अर्थात् मुख्य चीन, भारत-अफगानिस्तान, ईरान, कास्पियन समुद्र और रूस द्वारा घिरी हुई भूमि—तक ही सीमित रखना चाहता था, लेकिन इतिहासकी नदी बहुत ट्रेडी-मेडी बहती है, जिसके कारण मुझे इन सीमांत देशोंके इतिहास में भी कहीं-कहीं भटकना पड़ा। वैसे न करनेसे विषयके समझनेमें कठिनाई होती।

नामोंके उच्चारणमें हिन्दीमें अभी हमारी कोई परम्परा नहीं बनी है, विशेषकर उन नामोंके बारेमें, जो कि पहली बार इस पुस्तकमें आ रहे हैं। अंग्रेज़ों और अंग्रेज़ीका उच्चारण सबसे श्रुत होता है, इसलिये मैंने उससे बचनेकी कोशिश की है। जर्मन इसके बारेमें ज्यादा अच्छे रहते हैं, और अपनी अधिक उच्चारणानुरूप लिपिके कारण रूसी सबसे अच्छे हैं। पर, मूल भाषाओंकी लिपियोंमें जो दोष हैं, उसे वह कैसे दूर कर सकते हैं? मंगोल लिपिमें मुद्रिकलसे डेढ़ दर्जन अक्षर हैं। वहां क, ग, और ह में कोई अन्तर नहीं है। कगान, खगान, हगान, हकान चाहें जिस तरह एक ही लिखें शब्द को पढ़ लीजियें। चीनी नामोंके उच्चारणमें भी ऐसी कठिनाई है। इसके अतिरिक्त पुस्तककी छपाई जिस निराशाजनक परिस्थितियोंमें वर्षों रुक-रुक

कर हांती रही, उसके कारण मैं नामों के एक समान उच्चारण को बराबर इस्तेमाल नहीं कर सका। इस तथा दूसरी बातों में भी विषय-सूचि में दिये गये रूप को अन्तिम मानना चाहिये।

पुस्तक की सामग्री का बहुत बड़ा भाग मैंने रूस में अपने दो साल के प्रवास (१९४५-४७ ई०) में जमा किया। इसमें शक नहीं, मध्य-एशिया के इतिहास की जितनी सामग्री रूस और रूसी भाषा में है, उतनी अन्यत्र नहीं मिल सकती। जिस तत्परता से वहाँ ऐतिहासिक और पुरातात्विक अनुसन्धान हो रहे हैं, उनके कारण हर साल नई-नई सामग्री प्राप्त हो रही है। अफसोस है १९४७ के बाद की उपलब्ध सामग्री में बहुत कम ही का इस्तेमाल मैं कर सका। प्रो० ताल्स्तोफ कई वर्षों से पुरातात्विक अभियानों के नेता होते रहे हैं। इस विषय में—विशेषकर ख्वारेज्म, कराकुम और किजिलकुम की भूमिक सम्बन्ध में—उनका ज्ञान अद्भुत है। सप्तनद के बारे में डा० वेर्नास्तामका अध्ययन गंभीर है। इन दोनों विद्वानों से जब-जब मुझे मिलने का मिला, उन्होंने समय और धन का कुछ भी न खयाल करके दिल खोल कर अपने ज्ञान से लाभ उठाने का मुझे अवसर दिया। इसका उल्लेख मैं अपनी यात्रा-पुस्तक “रूस में पच्चीस मास” में कर चुका हूँ। मैं अपनी कुछ कल्पनाओं में उतना आग्रहवान् न होता, यदि उनके साथ विचार-विनिमय के बाद उनमें सार न रता। मध्य-एशिया का इतिहास लिखने के अधिकारी सोवियत् विद्वान् ही हो सकते हैं, लेकिन अभी वह भिन्न-भिन्न कालों और अंशों पर ही अनुशीलन कर रहे हैं। न मालूम कब तक वह इस अनुशीलन को क्रमबद्ध इतिहास के महाग्रन्थ के रूप में परिणत करेंगे। उस ग्रन्थ के तैयार होने तक मेरे इस प्रयास का मूल्य रहेगा ही।

दो साल के बाद रूस से भारत चले आने का एक बड़ा कारण सगृहीत सामग्री और अध्ययन को पुस्तक के रूप में लाने का खयाल था। मैंने वहाँ चार-पाच मन पुस्तकें जमा की थीं। इनके अतिरिक्त दो वर्षों में पड़ी पुस्तकों से बहुत से नोट लिये थे। वहाँ रहते पुस्तक लिखने पर वह प्रेस का मुह देख सकती, इसमें पीछे के तर्जों में भी सन्देह पैदा कर दिया। इन्हीं पुस्तकों को सुरक्षित लाने के खयाल से मैं अफगानिस्तान के छोटे रास्ते को छोड़ इंग्लैण्ड होते भारत लौटा। यदि सीधे रास्ते लौटा होता, तो अगस्त १९४७ में पश्चिमी पाकिस्तान में आता, फिर न मालूम सामग्री और संप्राप्त पर क्या बीतती?

इतनी बड़ी पुस्तक को छापने वाले मिलने मुश्किल थे। एक प्रकाशक ने पहिली जिल्द के बीस-पच्चीस पृष्ठ कम्पोज कर लिये, और दूसरी जिल्द को नेशनल हेरल्ड प्रेस में छापने के लिये दिलवा दिया; पर अन्त में यह भार उनको अपनी शक्ति से बाहर मालूम हुआ। नेशनल हेरल्ड प्रेस ने मेरी जिम्मेवारी पर उस जिल्द को छापना शुरू किया, जिसके लिये कागज भी मैं दे चुका था। पहले वाले प्रकाशक के हाथ ढीला करने पर यह सारा बोझ मुझे बर्दाश्त करना पड़ा—और वह पहला नहीं दूसरा खड था। श्री जगदीशचन्द्र माथुर ने पुस्तक की पाण्डुलिपि को देखकर इसे बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् को देने के लिये कहा। पर पहिले तो पहले वाले प्रकाशक को तैयार करना था, जिन्हें मैं वचन दे चुका था। वह राजी हुये। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् ने प्रकाशित करने की इच्छा प्रकट की, जिसमें श्री जगदीशचन्द्र माथुर और परिषद् के सचालक-मण्डल ने जो प्रयत्न किया, वह न होता, तो पुस्तक की सद्गति कीड़े-मकोड़े ही करते।

पुस्तक का पहला जिल्द सम्मेलन मुद्रणालय प्रयाग में छपा है, और दूसरा नेशनल हेरल्ड प्रेस लखनऊ में। सम्मेलन मुद्रणालय के अध्यक्ष श्री सीताराम गुटे अपनी चुस्ती और कार्य-

धमताके लिये प्रसिद्ध है। उन्होंने इसको जिस तत्परतासे छापा, उसके लिये मैं उनका हृदयसे कृतज्ञ हूँ। पहले नेशनल हेरल्डने फुर्तीसे छापना शुरू किया था, फिर उसने वर्षों तक चुप्पी साध ली। हर्ष है, नये प्रबन्धकने अब तत्परता दिखलाई है। आशा है, दूसरा खंड भी जल्दी निकल जायगा।

लिक्वावट खराब होने और अभ्यास छूट जानेके कारण, मैं पुस्तक को टाइपराइटर-पर बोल कर लिखाता हूँ। मुझे परिश्रमका अभ्यास है, और बाहरी बाधा उपस्थित न हो, तो सारा समय लिखने-पढ़नेमें बिता सकता हूँ। मेरे साथ चलनेवाले सहायक बहुत कम मिल सकते हैं। श्री मंगलदेव परियार इस विषयमें मेरी ही तरह निरलस हैं। उनकी सहायता और द्रुतगतिने इस पुस्तकमें बड़ी सहायता की है।

त्रुटियोंके बारेमें विषय-सूचीके हेडिंगो और उच्चारणोको अन्तिम मानना चाहिये।
मसूरी,

४-६-५६

राहुल सांकृत्यायन

मध्य-एशियाका इतिहास (१)

विषय-सूची

अध्याय	पृष्ठ	अध्याय	पृष्ठ
भाग १.		५ नवपाषाण-युग, (५००० ई० पू०)	
(प्रागैतिहासिक मानव १ लाख—		अ-नवपाषाण-युग (३००० ई० पू०)	३७
३००० वर्ष पूर्व)	१	५१. नवपाषाण-युग	३७
०१ पुराकल्प	३	(१) कृषि	३७
०१ पृथिवी पर प्राणी	३	(२) पशुपालन	३९
०२ प्राकृतिक भूगोल	५	(३) मृत्पात्र	४०
०३ जलवायु-परिवर्तन	७	(४) पाषाणास्त्र	४१
०४ वनस्पति क्षेत्र पे परिवर्तन	८	(५) जलवायु	४१
०५ हिमयुग	०	(६) अनौमे नवपाषाण-युग	४२
२ पुरापाषाणयुग (—२६०००—		५२ अनवपाषाण-युग	४४
१३००० वर्ष पूर्व)	११	५३ मानव-जाति	४५
०१ मानव-जातिया	११	भाग २	
०२ निम्न-पुरापाषाण युग	१४	(धातु-युग ३०००—७०० ई० पू०)	
(१) जावा मानव	१४	१ ताम्र-युग (२५००—१५०० ई०	
(२) पेकिंग-मानव	१६	पू०)	५१
(३) हैडलवर्ग-मानव	१७	१ युगकी विशेषता	५१
(४) मुस्तेर-मानव	२०	२ ताम्र-उद्योग	५२
३. उपरि-पुरापाषाणयुग और मध्य-		३ व्यापार	५३
पाषाणयुग	२०	४ हथियार	५४
५१. ओरल्यक (१५००० वर्ष पूर्व)	२०	५ राज-व्यवस्था	५४
(१) क्रोमेवो	२०	६ अनौमे ताम्रयुग	५७
(२) ग्रिमाल्दी	२०	७ ख्वारेज्ममे ताम्रयुग	५८
(३) मोलत्रे	२०	८ लिपि आदि	५८
(४) मदलैन	२२	२ पित्तल-युग (१५००—७०० ई० पू०)	६०
५२ मध्यपाषाण (१२००० पूर्व)	२३	१ युगकी विशेषता	६०
५३. मानव शरीर-लक्षण	२४	२ ख्वारेज्ममे पित्तल-युग	६१
(१) शरीर-लक्षण	२४	३ सप्तनदमे पित्तल-युग	६१
(२) जातियो का सम्मिश्रण	२५	४ अनौमे पित्तल-युग	६२
(३) रक्त-भेद	२६	५ जातिया-	६२
४ मध्य-एशिया के आदिम मानव		३ लौहयुग (७०० ई० पू०)	६४
(—२५००० ई० पू०)	२८	१ शकद्वीप	६४
५१ मध्यपाषाण-युग	२८	२ शक लोग	६७
(१) तेशिकताश मानव	२८	भाग ३	
(२) जीवन-चर्या	३१	उत्तरापथ (ई० पू० ६००—७२० ई०)	
(३) भाषा	३३	१ शक (६००—१७४ ई० पू०)	७३
५२ मध्यपाषाण-युग	३५	१ शक-जातिया	७३

अध्याय	पृष्ठ	अध्याय	पृष्ठ
२ अलताई के शक	७५	७ सिु शे-खू	१३४
२ हूण (ई० पू० ३००—३०० ई०)	७९	८ निशू दुलू-खान	१३४
७१ प्राचीन हूण	७९	९ शबोलो खिलिश खान	१३
७२ हूण पराभव	८१	१० इबी दुलू-खान	१३
७३ पीछे के हूण शासक	८७	११ इबी शबोलो शे-खू	१३४
(१) वूनी और हूण	८८	१२ अशिना शिन्	१३४
(२) हूण पराभव	८९	१३ मोगे	१३५
(३) उत्तरो और दक्षिणी शान्यू	९२	१४ सु-लू	१३५
३ वू-सुन, अवार		(तुर्क जा तिया)	१३७
७१ वू-सुन् (३००-१०० ई० पू०)	९७	भाग ४.	
(१) सस्कृति	९८	(दक्षिणापथ ई० पू० ५५०—६७३ ई०)	
(२) इतिहास	९८	१ अखमनी (५५०—३२६)	
(३) वू-सुनो के पडोसी	१००	१ कुरव (कौरोग)	१४६
(४) वू-सुन् राजा (सेन्-वू)	१०२	२ दारयबहु	१४७
७२ अवार ४००-५८२ ई० पू०)	१०४	(१) शासन-व्यवस्था	१४८
(१) अवार	१०४	(२) धर्म	१५१
४ तुर्क (५४६—७०४ ई०)		(३) क्षयार्थ	१५१
१ तुर्क साम्राज्यकी स्थापना	१०६	(४) दारयबहु	१५४
२ शव-क्रिया	१०८	(५) अलिकसुदर	१५४
३ तुर्क-राजावलि	१०९	२ कग ई० पू० ५००—१०० ई०)	
(१) इल-खान तू-मिन	११०	१ केलतमीनार सस्कृति	१५८
(२) इसि-गी	११०	२ ताजाबागायब	१५९
(३) मू-यू खान	११०	३ ताजामीराबाद	१६०
(४) तौबा खान	१११	४ आदिम कग	"
(बौद्ध धर्मका प्रवेश)	१११	५ कग	"
(५) शेतू शबोलियो	११२	(कग-कुषाण)	
(६) दून खान	११२	६ कुषाण-अफोग	१६२
(७) दानू बुगा खान	११५	७ अफोग सस्कृति	"
(८) खे-ली खान	११५	३ ग्रीक-बास्त्र (३३०—१३० ई० पू०)	
(९) तु-ली खान	११७	३ ग्रीक-बास्त्री (२६०—१३० ई० पू०)	१६४
(१०) सि-वू-ली खान	११८	७१ अलिकसुदर	"
(११) चे-बी खान	११९	७२ सेल्युक (१)	१६७
४ अशोना-निशो		७३ ग्रीको-बास्त्ररी	१६८
(१२) गु-डु-लू कगान	१२०	(तुलनात्मक बास्त्ररी ग्रीक-वश)	१६९
(१) मोचो	१२१	(१) दिवोदात (१)	१७०
(२) मो-गि-ल्यान्	१२४	(२) दिवोदात (२)	१७०
५ पश्चिमी तुर्क (५८०—७०४ ई०)		(३) एउथुदिम	१७१
१ दालोव्यान	१२८	(४) दिमित्रि	१७३
२ नीली	१२९	(भारत-विजय)	१७४
३ चुओ कगान	"	(५) एउकतिद	१७८
४ श-गुइ	१३०	(६) हेलियोकल	१७९
५ तुन्-शे-खू	१३०	(७) अन्तिलियकिद	१८०
६ क्यू-ली सि-बु खान	१३३	७४ भारतमे	

अध्याय	पृष्ठ	अध्याय	पृष्ठ
(१) मेनान्दर	१८१	३ तुमेन	२३६
(२) स्त्रात (१)	१८१	८ वोरन,	२३६
(३) स्त्रात (२)	१८१	५ बीहत पीली	"
६५ राजव्यवस्था	१८२	६ तु-खे-ली	"
६६ कला	१८५	७ बखतेवर	"
४ शक (ई० पू० १३०—४२५ ई०)		८ पुत्र	२३७
१ यूची	१८७	९ कुतुलिग बिगा	"
६१ अहिरात वश	१९०	१० मोइनचुरा	"
२ मोग	१९०	११ यितिकिन	२४०
३ पहलव	१९१	१३ दुर्मोगो	"
(तुलनात्मक शक-पहलव वश)		१५ आचो	२४२
६२ कुपण	१९५	१६ कुतुलुग	"
१ कुजुल कदफिस्	१९६	१७ काउ-साङ्ग	"
२ विम कदफिस्	१९८	१८ गुदुलुग जिगिन	"
३ कनिष्क (१)	१९९	१९ भाई	२४३
४ वशिष्क	२०७	२० भतीजा	"
५ कनिष्क (२)	"	२१	"
६ हविष्क	"	२२ ओके	२४४
७ वासुदेव	२०९	२३ ओ-नेयन	"
पिरो	२१०	२४ अन्तिम उइगुर	"
५ हेफताल (४२५—५५७ ई०)		आतुर्युक	२४५
१ राजा	"	२ करलुक (७३९—९४० ई०)	
२ तुलनात्मक हेफताल-अवार वश	"	१ करलुक (करलोग) जाति	२४८
३ ईरानी और हेफताल	२१३	२ धर्म	२४९
६ तुर्क (५५७—७०४ ई०)		३ करलुकोके नगर	२५०
१ दाओबियन	"	भाग ६	
२ चुलो कगान	"	(दक्षिणापथ ६७३—९०० ई०)	
३ तुलनात्मक तुर्क-वश	२१७	१ अरब (—६७३—८१२ ई०)	
४ शो-गुइ और ५ तुन-शे-खू	२१८	६१ पैगम्बर मुहम्मद	
५ स्वेन्-वाङ्ग का देश-वर्णन	२१९	(नई आर्थिक व्याख्या)	२५७
६ अन्तिम तुर्क	२२६	६२ आरम्भिक खलीफा	२५८
(१) शेरेकिश्वर, सेकेजकेत	"	१ अबू-बकर	२५९
(२) बेन्दून	"	२ उमर	२५९
(३) तग़शादे	२२७	३ उस्मान	२६१
भाग ५		४ अली	२६२
(उत्तरापथ ७६६—९४० ई०)		२ उमैय, वश (खलीफा ६६१—७४९ ई०)	
१ आगूज, उइगुर (६२९—९२६ ई०)		१ म्वाविया मेरवान (१)	२६४
६१ आगूज	२३१	(१) (तुलनात्मक अरब वश)	२६६
६२ उइगुर	२३३	(२) (अरब-विजय के समय)	२६८
६३ उइगुर-खाकान	२३४	२ यज़ीद मेरवान-पुत्र	२७१
१ जिकेन्	"	३ म्वाविया (२)	२७२
उइगुर-राजावली		४ अब्दुल-मलिक	"
२ बोसत	३३५	५ वलीद	२७३

अध्याय	पृष्ठ	अध्याय	पृष्ठ
कुतैब मुस्लिम-युव वाहिली	२७३	७ बोगरा खान	"
स्वतंत्रताका अतिम प्रयास	२७९	८ इब्राहीम	३३१
६ सुलेमान	२८२	९ तुगरल कराखान युसुफ	"
७ उमर (२)	२८५	१० तुगरल तैमन	३३२
८ यज़ीद (२)	२८६	११ बोगरा खान हारून	"
९ हिशाम	२८७	१२ कादिर खान जिबराईल	३३३
शिथा-आदोलन	२८९	२ कराखिताई (१११५—१२१९ ई०)	"
अबू-मस्लिम	२९४	११ उद्गम	"
३ अन्बासी (खलीफा ७४९—८१८ ई०)	"	१२ खित्तन सम्राट्	३३५
१ सफ़ाह अबुल्-अन्बास	२९७	१ अपोकी	"
२ मसूर	३०१	२ ताई-चुङ्ग	३३८
३ मेंहदी	३०४	३ शी-चुङ्ग	३३९
(मुक़ना-विद्रोह)	३०५	४ मू-चुङ्ग	३४०
४ हादी	३०६	५ चिङ्ग-चुङ्ग मिग्ची	"
५ हारून रशीद	३०७	६ शङ्ग-चुङ्ग	३४१
६ अमीन	३०८	७ शिङ्ग-चुङ्ग	३४२
७ मामून	३०९	८ ताउ-चुङ्ग	३४३
(अरबी साहित्य)	"	९ ताउ चू-ति	३४४
(सिक्के)	३११	१० ते-चुङ्ग	३४५
४ ताहिरी (८१८—७२ ई०)	"	११ कराखिताई	३४७
१ ताहिर (१)	३१३	१ येलू दैशी	"
(तुलनात्मक वश)	"	२ गुरखान-पुत्री	३५०
२ तलहा	३१४	३ येलू-इ-ले	"
३ अली	३१५	४ चे-लु-नू	"
४ अब्दुल्ला	"	५ गुरखान	३५१
५ ताहिर (२)	३१६	(१) मुस्लिम विद्रोह	"
(शामन-व्यवस्था)	"	स्वार्ज्मसे झगडा	३५२
६ महम्मद	"	(१) परंपरा	"
५ सफ़्फ़ारी (८६१—९३० ई०)	"	(२) परंपरा	३५३
१ याकूब	"	६. कुचुलूक	३५५
२ अम्र सफ़्फ़ार	३१९	(१) उस्मान खाते झगडा	३५६
		(२) मंगोलोसे झगडा	३५७
भाग ६		भाग ७	
(उत्तरापथ ९४०—१२१२ ई०)		(दक्षिणापथ ८९२—१२२९ ई०)	
१ कराखानो (९४०—११२५ ई०)	"	१ सामानी (८९२—९९९ ई०)	३५८-६०
११ उद्गम	३२६	उद्गम	३६१
१२ राजावलि	३२८	१ नस्र (१)	"
१३ राजा	"	२ इस्माईल	३६२
१ शतुक कराखान	"	३. अहमद	३६४
२ बोगराखान	"	(फाराबी)	"
३ इलिक नस्र	३२९	४ नस्र (२)	३६६
४ तुगान	"	५ नूह (१)	"
५ कादिरखान युसुफ	"	६. अब्दुलमलिक (१)	"
६ अरमलन खान सुलेमान	३३०		

अध्याय	पृष्ठ	अध्याय	पृष्ठ
८ मन्सूर (१)	३६७	५२ उद्भव	४१७
९ नूह (२)	"	५३ सुल्तान	४१८
बू-अली सीता	१६८	१. तुगरल मिकाईल-पुत्र	"
१० मन्सूर (२)	३७०	२ अल्प अरसलन	४२१
११ अब्दुलमलिक (२)	३७१	३ मलिकशाह (१)	४२२
१२ मुन्तसिर	"	(गजाली)	४२३
(१) सामाना शासन-व्यवस्था	३६३	४ महमूद (१)	४२४
(२) शिल्प और व्यवसाय	३७६	५ बराकियारुक	"
२ कराखानी (९९३—११३१ ई०)	"	६. मलिकशाह (२)	४२५
उद्गम	"	७ मुहम्मद	"
१ इलिक नख	३८०	८. महमूद (२)	"
२ इब्राहीम (१)	३८२	९ सिजर	"
३ इब्राहीम (२)	३८३	५ गोरी (११५६—१२०७ ई०)	४३२
४ शम्शुलमूल्क	३८४	५१. कराखिताई	"
५. खिष् खान	३८६	५२ गोरी	४३३
६ अहमद	"	१ गयासुद्दीन मुहम्मद (१)	४३४
९ महमूद तगिन	३८८	२ शहाबुद्दीन	४३६
१० तमगाच बोगरा खान	३८९	३ गयासुद्दीन (२) महमूद	४३८
११ किलिच तमगाच खान	"	६ ख्वारेज्मी (१०७७—१२३१ ई०)	४३९
१२ रकुनद्दीन महम्मद	३९०	५१ प्रवेशक	"
१३ सिके	"	तुलनात्मक वशावलि	"
३ गजनवी (९९८—१०५९ ई०)	"	५२ सुल्तान	"
५१ उद्गम	"	१. अनाश तगिन	"
१ अल्प तगिन	३९३	२ कुतुबुद्दीन मुहम्मद	४४०
२ सुबुक तगिन	३९४	३ अत्सिज	"
३ तुलनात्मक वशावलि	३९७	४ इल्-अरसलन	४४२
५२ राजावलि	३९८	६ तकाश	४४४
१ सुबुक तगिन	"	(बौद्ध-ईसाई-जर्थुस्ती)	४४८
२ महमूद	"	७ मुहम्मद (अलाउद्दीन)	४५०
३ महमूद और ख्वारेज्मशाह	४००	(१) शासन-व्यवस्था	४५५
(१) मामून (१)	"	(२) मासे झगडा	४५६
(२) मामून (२)	"	७ चिंगिसखान (१२१९—१२९ ई०)	४५८
(३) अबुल हारिस	४०२	५१ तैयारी	४५९
(१) अलतुनताश	४०३	१. शासन, शिक्षा	४६१
३ मसऊद	४०९	२ ख्वारेज्मशाह से वैमनस्य	४६३
(२) हाखन ख्वारेज्मशाह	४१०	५२ अभियान	४६६
(सल्जूकी तुर्कमान)	४११	१ अन्तर्वेद-विजय	४६७
(बूरीतगिन)	४१३	२ जूचीकी सफलता	४७०
४ मुहम्मद	४१५	३ मुहम्मद का अन्त	४७२
५ मोदूद	"	४ जलालुद्दीन ख्वारेज्मी	४७५
६ इब्राहीम	"	५ विद्या-कद्र ख्वारेज्म	४७६
४ सल्जूकी (१०३६—११५७ ई०)	"	६ ख्वारेज्मका पतन	४७७
५१ राजावलि	४१६	७ जलालुद्दीन भगोडा	४७९

अध्याय	पृष्ठ	अध्याय
८ गजनीका झगडा	४८१	८ " हथियार
९ एक सफलता	"	९, १० शक
१० पराजय	४८२	११ उत्तरापथ, दक्षिणापथ
११ खुरासान-विद्रोह-दमन	४८४	१२ माउदुन-साम्राज्य
१३ पश्चिमकी विजय-यात्रा	४८५	१३ वूसुन-भूमि
१४ मंगोल युद्ध-साधन	४८६	१४ अवार-साम्राज्य
१५ चिंगिस सम्राट्	४८८	१५ तोबा-साम्राज्य
१ चाङ्चुन की यात्रा	"	१६ पूर्वी-पश्चिमी तुर्क
२ चिंगिस मंगोलिया लौटा	४९०	१७ दारयबहु-साम्राज्य
३ जूचीकी मृत्यु	४९२	१८ ख्वारेज्मी सस्कृतिया
४ चिंगिसकी मृत्यु	"	१९ "
५ चिंगिसकी समाधि	४९३	२० अलिकसुदर-साम्राज्य
६ जलालुद्दीनका अवसान	"	२१ देमित्रि "
७ परिणाम	"	२२ कनिष्क "
८ याम्सा	४९४	२३ कनिष्क-मूर्ति
परिशिष्ट		२४ हेफ्ताल-साम्राज्य
१ पुस्तक-सूची	४९९	२५ उङ्गुर राज्य
२ नामानुक्रमण	५०४	२६ अरब-साम्राज्य
३ ग्राक-बास्तरी मुद्राये		२७ उमैया "
मानचित्र-चित्र-सूची		२८ अब्बासी "
१ जलनिर्गम-रहित भूमि	७	२९ कराखिताई "
२ पुरापाषाण मानव	१४	३०. कराखानी "
३ जावा मानव	१५	३१ सलजूकी "
४ पेकिंग मानव	१६	३२ गोरी "
५ मुस्तेर (नियडर्थल) मानव	१८	३३. चिंगिसखान
६ क्रोमर्गो मानव	१९	३४ चिंगिसी साम्राज्य
७ तैशिक ताश गुहा	२९	३५-३७ ग्रीक-बास्तरी मुद्राये

मध्यएसिया का इतिहास

खण्ड १

भाग १

प्रागैतिहासिक मानव (१ लाख वर्ष—३००० ई० पू०)

अध्याय १

राकल्प

§१. पृथ्वीपर प्राणी

वैज्ञानिक खोजों से पता लगता है, कि हमारी पृथिवी का जन्म आज से दो या चार अरब वर्ष पहले हुआ था। लेकिन, उस समय अपनी उष्णता के अधिक होने और दूसरे साधनों के अभाव से कोई वनस्पति या प्राणी न पैदा हो सकता और न जी सकता था। मनुष्य तो पृथिवी के आयु से मिलाने पर बिल्कुल हाल में आया हुआ प्राणी है। पन्द्रह लाख वर्ष पहले भी उसका बहुत मुश्किल से पता लगता है। एक तरह हम कह सकते हैं, कि उसकी सत्ता का भान दस लाख वर्ष से पहले नहीं जाता। आगे हम देखेंगे, कि इस दस लाख वर्ष में भी साढ़े नौ लाख वर्ष तक वह मनुष्य कहलाने का पूरी तौर से अधिकारी नहीं हो सका था और जिसे हम मानवता कहते हैं, उसका आरम्भ तो आज से पन्द्रह हजार वर्ष से भी पीछे नहीं होता।

मध्य-एशिया में मानव का इतिहास लिखते समय मानव की पृष्ठभूमि पर भी एक सरसरी दृष्टि डाल देना अनावश्यक नहीं होगा। दो (या चार) अरब वर्ष की पृथिवी की आयु में तीन चौथाई अथवा १४२ ५ करोड़ वर्ष तो अजीव-कल्प के हैं। इस सारे समय में पृथिवी पर किसी तरह का कोई जीवधारो नहीं था। ५७ ५ करोड़ वर्ष पहल ही सर्वप्रथम हमें प्राणी के फोसील (पथराये शरीर) का पता लगता है। इसी समय से जीव-कल्प आरम्भ होता है—अर्थात् पृथिवी पर प्रथम जीवधारी को आये अभी साढ़े सत्तावन करोड़ वर्ष हुए हैं। जीवकल्प के पहले प्राक्-कैम्ब्रियन चट्टानें एक लाख अस्सी हजार तथा २५ हजार फुट मोटी मिलती हैं। जीवकल्प भी पुराजीवक (पलियोज़ोइक्), मध्य-जीवक (मेसो-ज़ोइक्) और नव-जीवक (किनोज़ोइक्) तीन कल्पों में विभक्त हैं। पुरा-जीवक कल्प के छ भेद हैं, जिनके नाम फलक (१) से मालूम होंगे। पुराजीवक कल्प में हम अत्यारंभिक तथा मीन जैसे प्राणी तक को ही देख पाते हैं, प्रथम मीन का अस्तित्व ३२ करोड़ वर्ष से पहले नहीं मिलता। पुराजीवक को आदिकल्प भी कह सकते हैं।

मध्य-जीवक (द्वितीय-कल्प) में विशालकाय शरटो (छिपकली-मगर की जातियों), दन्त-धारी पक्षियों तथा प्रथम शुद्ध पक्षी तक जीवन का विकास हो जाता है। शरट-युग को त्रियासिक युग कहते हैं और दन्तधारी पक्षी जुरासिक युग में हुए थे। जहाँ पुराजीव कल्प ३० करोड़ वर्ष तक रहा, वहाँ मध्य-जीवक कल्प साढ़े १४ करोड़ वर्ष में समाप्त हो गया। इसके बाद नवजीवक (किनोज़ोइक्) कल्प आज से ६ करोड़ वर्ष पहले आरम्भ हुआ, जो अब तक चला जाता है। नवजीवक कल्प के तृतीयक और चतुर्थक दो युग-भेद हैं। यदि जीवकल्प के आरम्भ से इस तरह

के विभाजन को स्वीकार करे, तो पुराजीवक आदि युग हुआ, मध्य-जीवक द्वितीयक युग, नवजीवक तृतीयक और चतुर्थक दो युगों में विभक्त हुआ। नवजीवक के तृतीयक और चतुर्थक युग भी अनेक भागों में विभक्त हैं। इसी युग में प्रायः ५ करोड़ वर्ष पूर्व प्रथम स्तनधारी प्राणी का प्रादुर्भाव हुआ। इससे पहले के प्राणी (शुद्ध पक्षी, दन्तधारी पक्षी) अण्डज थे। अण्डज प्राणी का उत्पादन उनना सुरक्षित नहीं होता, क्योंकि माता को अण्डे बाहर कहीं रख देने होते हैं, जहाँ पर उनके खाने-पाने की सख्या कम नहीं होती। उनकी रक्षा में मीन और शरट जैसे जल-थल उभयजीवी प्राणियों का, विशेषकर अंडे से बाहर निकलने के बाद पानी और भोज्य पत्तियों के लिए वृक्ष सहायक होता है। स्तनधारी प्राणियों को सबसे बड़ी सुविधा यह है, कि उनका अंडा बाहर नहीं, बल्कि माँ के पेट के भीतर परिपुष्ट होता है और काफी शक्ति-संचय के बाद बाहर आता है। उम्र वक्त भी तुरन्त वह अपने पैर पर खड़ा होकर स्वावलम्बी नहीं हो जाता, किन्तु, उसकी रक्षा के लिये जहाँ माँ की बच्चे के प्रति ममता सहायक होती है, वहाँ माता के स्तन में दूध निकलकर भोजन से उसे निश्चिन्त कर देता है। नवजीवक कल्प एक तरह स्तनधारियों का कल्प था।

जैसा कि अभी कहा, नवजीवक कल्प तृतीयक और चतुर्थक दो युगों में विभक्त है। इस सारे नवजीवक को जीवन की उषा मान कर पाँच भागों में विभक्त किया गया है, जिनमें उषा (एओसेन), लघुउषा (ओलिगोसेन), मध्यउषा (मिओसेन) और अतिउषा (ग्लाइसोन) के चार युगों को तृतीय युग कहा जाता है। मध्यउषा-युग आज से साढ़े तीन करोड़ वर्ष पहले था और अतिउषा पन्द्रह लाख वर्ष पहले। मियोसेन (मध्यउषा) युगके अन्त के करीब प्रागमानव का आरम्भ माना जाता है। इसे स्पष्ट करने के लिए यह समझ लेना आवश्यक है, कि उषायुग में ही लेमूर और नर-वानर वंश का अलग विभाजन हुआ था। लघुउषा-युग में अभी नर-वानर वंश अलग नहीं हुआ था। यह मध्य उषा युग ही था, जिसमें नर और वानर दोनों वंश अलग होने लगे। अतिउषा युग के सारे समय तक हम कल्पना ही से कह सकते हैं, कि मानव का पूर्वज किमी रूप में अवस्थित था। हमारे यहाँ सिवालिक में इस जन्तु की फॉसिल हड्डियाँ मिली हैं। ता भी हममें भारी सन्देह है, कि मनुष्य बनने की ओर बढ़ने में यह सफल हुआ था, उधर गढ़ रहा था, उम्र में ना सन्देह नहीं, क्योंकि वनमानुषों की अपेक्षा उसके शरीर और कपाल का विकास अधिक मानवोचित था।

तृतीय कल्प के अन्त में चाहे मानव का प्रथम पूर्वज किमी रूप में आमान्व में आया हो, किन्तु उसका स्पष्ट पता हमें चतुर्थयुग या अतिउषा युग में ही मिलता है, जब कि उसे हम जावा-मानव, पेकिंग-मानव, हैडलबर्ग-मानव, नियडर्थल (मुस्टर)-मानव आदि के रूप में पाते हैं। तो भी हमारे नृवंश (सपियन-मानव) का पता बहुत पछले लगता है।

मानव और उससे सम्बन्ध रखनेवाले प्राणियों के विकास का परिचय यहाँ दिये फलकों से अच्छी तरह हो जायगा। लेकिन, मध्य-एशिया में मानव-विकास का वहाँ प्राप्त सामग्री के आधार पर बतलाने के लिए यह जरूरी होगा, कि वहाँ के प्राकृतिक भूगोल और जलवायु के इतिहास पर भी कुछ कहा जाय, क्योंकि मानव-विकास में इनका भारी हाथ रहा है।

फलक १—भूतत्त्वीय कल्प^१

		युग	रत्न की मुटाई (फुट)	काल (वर्ष)	शरीर विशेष
जीवकल्प	नवजैविक	श्रद्धिउपा	८०००	१० लाख	मानव
		अर्निउपा	१३०००	१५ "	मानव
		मध्यउपा	२१०००	३५ करोड	
		नवउपा	१२०००		स्तनधारी
		उपा	२३०००	६ करोड	
	मध्यजैविक	क्रोतागम्	८६०००		शुद्ध पक्षी
		जुर्गागिक	२००००		दन्तधारी पक्षी
		त्रिगागिक	२२०००		शरट
		पैमीयन	१३०००		
		कर्वनभक्षीय	८००००	३० करोड	
	पुराजैविक	प्राचीन रत्न	५००००		प्रथम मीन
		मिन्नूयन	१५०००		
		और्दाविचियन्	८००००		
		कैम्ब्रियन्	८००००	५७५ करोड	प्रथम फोसील
अजीव कल्प		प्राक्-कैम्ब्रियन	१८०००		
			२५०००	२ या ४ अरब	

१२. प्राकृतिक भूगोल

तृतीय कल्प ऐसा समय था, जबकि पृथिवी लगातार कँप रही थी, भूकंपों का ताँता लगा हुआ था। पृथिवी की ऊपरी पपड़ी भिँकुड रही थी, जिसके कारण एक विशाल पर्वत-श्रेणी पृथिवी के भीतर में ऊपर की ओर उठने लगी। यह उठी पर्वत-श्रेणी युरोप और एसिया (युरेसिया महा-द्वीप) को दो भागों में विभक्त करनी आज भी मौजूद है। इसी सुदीर्घ पर्वत-श्रेणी के अलग-अलग भाग हैं पेरिनेस, काकेशस, हिमालय और उसके आगे मध्य-चीन के पर्वत। युरेसिया द्वीप का रूप आज की तरह पहिले नहीं था। इसके भीतर एक बड़ा समुद्र लहरे मार रहा था, जो कि अतला-न्तिक को भूमध्य सागर और काला सागर से मिलाने कास्पियन, अराल समुद्र तथा बलकाश को लेते तियेनशान पर्वतमाला तक फैला हुआ था। उत्तर से दक्षिण की ओर फैली अल्ताई और तियेनशान पर्वतमाला इस महान् समुद्र को और पूर्व बढ़ने में बाधक थी। इससे यह भी मालूम होगा, कि मध्य-एसिया का पूर्वी और पश्चिमी भागों में विभाजन कृत्रिम और राजनीतिक नहीं, बल्कि प्राकृतिक है। तियेनशान और पामीर की पर्वतमालाएँ दक्षिण में हिमालय-श्रेणी से मिलकर पश्चिमी मध्य-एसिया को पूर्वी मध्य-एसिया से अलग करती हैं।

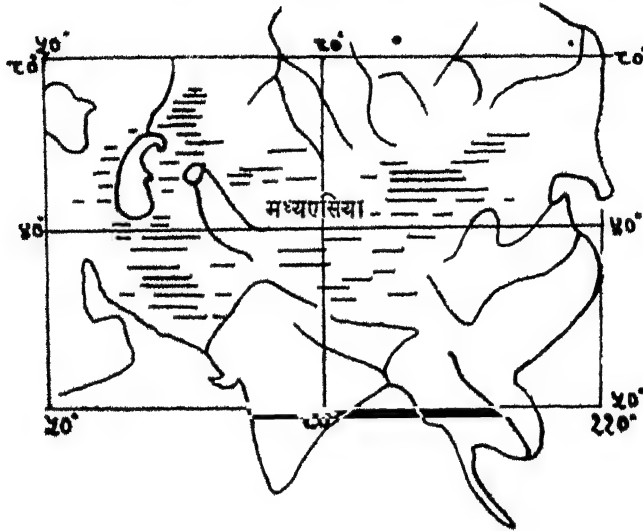
^१ Geology in the Life of Man (Duncan Leith 1945) p 39

यह अवस्था तृतीय कल्प के आरम्भ में थी। तृतीय कल्प के मध्य में पहुँचने तक युरेसियन महासागर कई स्थानों में छिन्न-भिन्न हो गया और उसके स्थान पर आस्ट्रिया से बलकाश सागर तक एक महासागर दिखाई पड़ने लगा। बल्कान से काला सागर, कास्पियन सागर, अराल और बलकाश तक को अपने पेट में रखनेवाले इस जलनिधि को भूतत्व-विशारद सरमातिक सागर कहते हैं। लेकिन, भूपरिवर्तन का काम अभी समाप्त नहीं हुआ था, तृतीय कल्प के अन्त में सरमातिक सागर भी कई स्थानों से विलुप्त हो गया और उसके स्थान पर काला सागर, कास्पियन सागर तथा अराल और बलकाश के महासरोवर बच रहे।

तृतीय कल्प का अन्त हो रहा था और चतुर्थ का आरम्भ, जबकि एक और प्राकृतिक परिस्थिति उपस्थित हुई। तियेनशान् के पश्चिमवाले मध्य-एशिया में महामुद्र के बहुत सूख जाने के कारण जलवायु में सूखापन होना जरूरी था, उधर भूमध्य-रेखाके ऊपर जमी महाजनराशि से आशा हो सकती थी, कि वह इस सूखी प्यासी भूमि के लिए बादल भेजकर सहायता करेगी। लेकिन, बादलों के रास्ते में हिमालयसे काकेशस तक फैली अति उच्च पर्वतमाला बैसा करने नहीं देती थी। वह बल्कि, समय-समय पर उचककर अभी और भी ऊपर उठती जा रही थी। आकाशमें मिर उठाकर बादलों का रास्ता रोकनेके लिए तैयार इस महापर्वत-श्रेणीने पश्चिमी मध्य-एशियाकी वर्षा को बहुत कम कर दिया। इसका परिणाम मध्य-एशियाकी भूमिपर यही हुआ, कि वहाँके बच्चे-बूढ़े समुद्र या महासरोवर और क्षीण होने लगे, नदियोंकी धाराएँ पतली हो चली, भूमि और शुष्क होने लगी। पानी और नमीके अभावमें वनस्पतियों और उनपर अवलम्बित प्राणियोंकी स्थितिमें क्रान्ति होना आवश्यक था। कजाकस्तानकी प्यासी भूमि, उज्बेकिस्तान तथा तुर्कमानिस्तानके कराकुम (कालामरु) एवं किजिलकुम (लालमरु) उसीके परिणाम हैं। चतुर्थ कल्पके आरम्भसे आज तक मध्य-एशियाकी यह सूखी प्यासी भूमि इसी अवस्थामें चली आई है, बीचमें कभी-कभी सूखा और नमीके कारण जलवायुमें थोड़ा-सा अन्तर देखनेमें आया। आज भी इस भूमिमें जाड़ोंमें थोड़ी-सी हिमवर्षा हो जाती है और वर्षाके नामपर गर्मियोंमें कभी-कभी कुछ छोटे पड़ जाते हैं। अत्यन्त ऊँचे पर्वत-शिखरों या पर्वत-पृष्ठोंको छोड़कर मध्य-एशियाकी सारी भूमि सालभर प्यासी ही रहती है।

पूर्वी और पश्चिमी दोनों मध्य-एशियाको लेकर देखे, तो मालूम होगा, कि मचूरियाकी पश्चिमी सीमासे लेकर कालासागर या अजोफ सागरके पूर्वी छोर तकके दक्खिन की भूमि ऊँची घाटी या पर्वतोंसे घिरी एक विशाल खलार है। यहाँका पानी बासफोरस (तुर्की) के एक सँकरे से मार्गको छोड़कर महासागरोंसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता। बल्कि कालासागर मध्य-एशियामें बाहर होनेके कारण हम कह सकते हैं, कि उसके वर्षा या समुद्रके पानीका पृथिवीके महासागरोंमें कोई सम्बन्ध नहीं है। बासफोरसका जलमार्ग भी बहुत समय तक बन्द था और वह अन्तिम हिमयुग (प्रायः १००००० वर्ष पूर्व) के बलके कम होनेपर पिघली अपार जलराशिके फूट निकलनेके कारण ही खुला। मध्य-एशियाकी यह जलनिर्गमहीन खलार अल्ताई-तियेनशान्की पर्वत-श्रेणियों द्वारा दो भागोंमें विभक्त है, जिसमें (१) पूर्वी मध्य-एशिया गोबीसे लेकर तरिम-उपत्यका तक पश्चिममें तियेनशान् और दक्षिणमें क्वेलुन पर्वतमालासे घिरा है। (२) पश्चिमी मध्य-एशियाके पूर्वमें तियेनशान् और पामीर दक्षिणमें अफगानिस्तान और ईरानकी पर्वतमाला तथा पश्चिममें काकेशस गिरिमेखलासे घिरा है। इसका पश्चिमी भाग अर्थात् कास्पियन समुद्रके पासकी

भूमि समुद्रतलसे ६०० फुट नीची है। यदि कालासागरमें कास्पियन सागरके बीचकी पार्वत्य भूमिको तोड़कर जलमार्ग बना दिया जाय, तो कालासागरका पानी बड़े वेगसे कास्पियनमें गिरने लगेगा और कास्पियन तथा अराल समुद्र मिलकर एक बहुत बड़े सागरके रूपमें परिणत हो जायेंगे, जिसका प्रभाव मध्य-एशियाके जलवायु पर भी बहुत भारी पड़ेगा। दूसरी ओर यदि तियेनशान्-पामीरके



१. जलनिर्गमरहित

हिमाच्छादित पहाड़ोंसे निकलनेवाली इली, चू, सिर, जरफशाँ और वक्षु (आमू) नदियाँ दक्षिणसे मुर्गाब आदि, और पश्चिमी (काकेशस) गिरिमालासे किरा आदि छोटी-बड़ी नदियाँ पानी खाना बन्द कर दें, तो सारा पश्चिमी मध्य-एशिया पूर्णतया रेगिस्तान हो जायगा।^१

§३. जलवायु-परिवर्तन

यद्यपि मध्य-एशियाके तीन तरफ खड़े इन विशाल पर्वतोंने वर्षाको रोक उसका बहुत अहित किया है, किन्तु साथ ही इस भूमिको बिल्कुल प्यासा मरने भी नहीं दिया। इनसे निकलनेवाली नदियाँ कम या अधिक परिमाणमें हिमगलित पानी बराबर लाती रही। मानवका प्रादुर्भाव तृतीयकल्पके अन्तमें उपापापाण-युगमें हुआ। उस समय मध्य-एशियामें मानवके अस्तित्वका कोई पता नहीं लगता और जैसा कि हम आगे बतलायेंगे, जावा नर-वानरकी विचरण-भूमि मध्य-एशियासे तीस डिग्रीसे भी अधिक दक्षिणमें है। मध्य-एशियामें बीस हजार वर्ष पहले चतुर्थ हिमयुगके समय मानव अवश्य मौजूद था। निर्मानव कालसे मानवकाल लेते आज तक मध्य-एशियाकी भूमि प्रकृतिके निष्ठुर हाथोंमें खेल रही थी,^१ जिसके साथ मनुष्य भी अपनी बेबसी दिखलानेके सिवा कोई चारा नहीं रखता था। आज वहाँ मानव अपने भव्य सामाजिक उत्कर्षमें पहुँचकर प्रकृतिके

^१ Exploration in Turkistan, (R Pumpelly, 1903) vol. I. pp 1-4

^१ वही, I pp 2,8

बाधाको हटानेके लिए कटिबद्ध हुआ है। कास्पियन सागरका अजोफ-कालामागरमे मिलानेके लिए बोलगा-दोनकी विशाल नहर तैयार हो गई है, जिसके द्वारा बम्बईमे चला जहाज बाकूके तैलक्षेत्रमे आसानीसे पहुँच सकता है। लेकिन, यह परिवर्तन उससे बहुत कम है, जो कि मध्य-एशियाकी तीन विशाल मरुभूमियो (प्यासी भूमि, कराकुम और किजिलकुम) का मध्यमामना भूमिमे परिणत करनेके लिए किया जा रहा है। वक्षु (आमूदरिया) को एक विशाल नहर द्वारा किजिलकुम-मरुभूमिके भीतर हो कास्पियन समुद्रसे मिलानेका काम बड़े जोर-शोरमे चल रहा है। इससे किजिलकुमकी करोड़ों एकड़ बालुका-भूमि मेवेके बागों और गेहूँ के खेतोंके रूपमे परिणत हो जायगी। इस नहरके कारण बम्बईका कपडा लालमागर, भूमध्यसागर, कालामागर, अजोफ-सागर, दोन नदी, दोन-बोलगा नहर, बोलगा नदी और कास्पियन सागर होने वक्षु नहर और वक्षु नदी द्वारा अफगानिस्तान पहुँच जायेगा। लेकिन, इतनेमे हम पश्चिमी मध्य-एशियाकी जल-समस्याको पूरी हल हुई नहीं देखते। सिर, जरफशाँ और आमू दरियाके पानीमें बनी अनेक महान् जलनिधियो तथा उनसे निकलनेवाली नहरों द्वारा मिचित कराडा एकड़ भूमि रेगिस्तानके पेटसे निकालकर जो हरे-भरे खेतोंके रूपमे परिणत की जायगी, उसके कारण सूर्य-किरणे इस भूमिके जलको मनमानी तौरमे सोखने नहीं पायेंगी और उगने जलवायुम भी अनुकूल परिवर्तन होगा। लेकिन सोवियत विज्ञानवेत्ता इतने ही से संतोष नहीं करना चाहते। वह सोच रहे हैं, कि कैसे जिब्राल्टर और बासफोरसकी जलप्रणालिया द्वारा सम्बन्धित पृथिवीके महासागरोंको अजोफ और कास्पियनके कृत्रिम मार्ग द्वारा मिलाकर मध्य-एशियाकी जलमालाका बढाया जा सकता है। परमाणु-शक्ति और परमाणु-बमका आविष्कार कर मनुष्यका मन्त्रिक बैठ नहीं सकता, वह उस दिनकी आशा रख रहा है, कि मध्य-एशियाके जलाभायोंको बह दूर करने छोडेगा। सोवियत राष्ट्र ओब नद के पानी के बहुत से भाग को मध्य-एशिया के रेगिस्तान की ओर मोड़ कर इसे करना चाहत है। प्रसंगवश यह कह देना आवश्यक है, कि हमारे यहाँ भी, जहाँ कि वर्षा करनेमें प्रकृति बहुत उदार है, अपने प्राकृतिक जलमार्गोंमे अनुकूल परिवर्तन करनेकी बहुत सम्भावना है। कटक या उडीसासे हमे समुद्र द्वारा बम्बई या सूरत जानेकी अनिवार्यता नहीं होगी, यदि महानदी और नर्मदाके ऊपरी भागोंको कुछ ही मील लम्बी नहर द्वारा मिला दिया जाय।

§४ वनस्पति-क्षेत्र में परिवर्तन

तृतीय कल्पका अति-उषा युग आया, जब कि जावामे प्रथम मनुष्यका दर्शन होने लगा। उस समय पश्चिमी मध्य-एशियामे समुद्रके पास जहाँ-तहाँ थोडा-सा रेगिस्तान था, अर्थात् प्यासी भूमि, कराकुम और किजिलकुमका अभी शिलान्यास ही भर हो पाया था, बाकी भूमि या तो तृण-वनस्पतिसे आच्छादित मैदान अथवा भारी जंगलोसे ढके पहाड और उसकी तराईया थी। भूकम्प समय-समयपर आए, जिनसे ये पर्वत उचककर और ऊपर उठ गये, बादलका रास्ता और रुका, वर्षाकी और कमी हुई, जिससे वनस्पति-क्षेत्र समुद्रोंके तटसे पहाडोंकी ओर सिकुडने लगा।

मध्यउषायुग (साढे तीन करोड वर्ष पूर्व) के बाद महासागरोंसे सरमातिक सागरका सम्बन्ध टूट गया। उसका जल भाप बनकर उडता गया, समुद्र सूखता और उसका जल अधिक

खारा होता गया। इसके अवशेषोंके रूपमें ज़िम्स और लवणकी राशि जमा होती गई, जो आज भी वहाँ मिलती है। प्रकृतिने सूर्य-किरणों द्वारा ही जल सुखाकर अपना काम समाप्त नहीं कर दिया, बल्कि यह युग भीषण आँधियोंका भी था। आज वैसी प्रचण्ड आँधियोंके न होनेपर भी वायु देवता अपने पूर्व पौरुषका रेगिस्तानोंमें किसी जगह बालूके पहाड़ोंको बना और किसी जगह बिगाड़कर दिखाते हैं। उस समय जब कि वनस्पति-हीन^१ होने मैदान में अभी बालू नहीं, साधारण मिट्टीकी प्रधानता थी, इन प्रलयकर भस्मावतोंने मिट्टीके अतिमूक्ष्म रेणुओं (त्रसरेणुओं) को आकाशमें बहुत ऊपर उठाकर लें जाके ऊँचे पर्वतोंके मस्तकपर जमा करना शुरू किया। इन त्रसरेणुओंकी भारी माटी तब वनस्पतियोंके लिए बड़ी ही उर्वर है, जिसमें वायुने मैदानोंको वचित कर पहाड़ोंका घर भरा।

५५ हिमयुग^१

सूर्य-किरण और भस्मावतोंका प्रभाव मध्य-एशियाकी भूमिमें बहुत पड़ा, किन्तु उससे कम प्रभाव चारों हिमयुगोंका इस भूमिपर नहीं पड़ा। तृतीय कल्पके अति-उपायुगके बाद ये हिमयुग आने शुरू हुए। एक-एक हिमयुग हजारों नहीं लाखों वर्षों तक रहा। इनके समयमें मनुष्य पृथिवीपर आ चुका था, यद्यपि अभी वह उसका एक दुर्लभ प्राणी था और पृथिवीके कुछ ही स्थानोंमें देखा जाता था। यह हिमयुग आजके परमाणु-बमसे भी अधिक भयानक साबित हुए थे। मानव प्रकृतिमाना पर बहुत विद्वाम करके बहुत-कुछ आलसीकी जिन्दगी बिताने लगा था, न उसे तन ढाँकनेकी फिकर थी, न छत ढूँढ़नेकी। हिमयुग उनसे कहने लगा—या तो हमारे प्रहार-कों सहन करने लायक बनो, नहीं तो पृथिवीसे लुप्त होनेके लिए तैयार हो जाओ। आज भी यदि यूरॉपका वार्षिक माध्यम तापमान पाँच ही डिग्री सेंटीग्रेड नीचे गिर जाये, तो हिमयुगकी अवस्था पैदा हो जायगी। सारे अनिउपाकालमें तापमान गिरता गया, सर्दी बढ़ती गई, जिसके परिणाम-स्वरूप हिमयुगोंका आरम्भ हुआ। चारों हिमयुगोंमें युरोपकी भूमिपर इगलैण्डसे उराल पर्वत तक हजारों फुट मोटी बर्फ की तह जम गई थी। लेकिन, उरालसे पूर्व अर्थात् मध्य-एशियामें वैसा नहीं हुआ। बर्फकी तह मोटी न होनेपर भी जलवायु अत्यन्त भीषण रूपमें शीतल हो गया था। हिम-युगोंकी उग्र सर्दियोंके कारण पशु-वनस्पतिके क्षेत्र क्षीण होने लगे। हर दो हिमयुगोंके बीचके सन्धिकाल (हिममन्धि) में जलवायुकी अवस्था कुछ नरम जरूर हो जाती और प्राणी-वनस्पति फिर अपनी खोई हुई भूमिों प्राप्ति करनेकी कोशिश करते। यह स्मरण रखना चाहिए, कि यह सन्धिकाल भी हजारों वर्षोंके थे।

मान लो, हम आजमें लाखों वर्ष पूर्वके प्रथम हिमयुगमें जाकर मध्य-एशियाको देख रहे हैं। उस समय इसके पश्चिमोत्तरमें उरालसे परे हजारों फुट मोटी बर्फसे ढँकी रूसकी भूमि है। मध्य-एशियाकी भूमिमें एक अनि विशाल समुद्र (सरमातिक) लहरे मार रहा है, जिसमें पूर्व, दक्षिण और पश्चिमके हिम-पर्वतोंकी हिमानियोंसे निकलकर बड़ी-बड़ी नदियाँ गिर रही हैं, जो अपने सागर-सगमोपर डेल्टा और कछारोंमें मिट्टीके स्तर जमा करती जा रही हैं। हजारों

^१ General Anthropology (Franz Boas and others, New York 1938) p. 116; Expl. Turk. pp. 1-4।

वर्ष बाद प्रथम हिमयुग समाप्त हो गया। अब हिमसन्धि-काल आ गया। पश्चिमोत्तर-भागम दुरन्तव्यापी हिममालिका रूससे लुप्त हो गई। पूर्व, दक्षिण और पश्चिमके हिम-पर्वतार्का दूर तक विस्तृत हिमानियाँ भी सकुचित होने लगी, इसके कारण नदियोंकी धाराएँ क्षीण होनी गई। मरु-मातिक समुद्रमे जलकी आय कम और व्यय अधिक होने लगा—नदियोंम जितना जल आता था, उससे कहीं अधिक धूपमे भाप होकर उड़ता जा रहा था। विशाल मरुमातिक समुद्र और भी छिन्न-भिन्न होने लगा। सहस्राब्दियाँ बीतती गईं, नदियोंकी धाराएँ और भी कृश हो गईं। पानीकी कमी और रेगिस्तानकी वृद्धिके कारण चू, तलस, जरफशाँ और मुर्गाबकी भाँति किननी ही समुद्रमे पहुँचनेसे पूर्व ही अपनेको मरुभूमिमे खोने लगी। झझावात नदियाँकी लार्ड मिर्दाँके साथ खेलवाड करने लगा। मोटे कण अर्थात् बालू एक जगहमे दूसरी जगह टीनाके रूपम बनने-बिगडते रहे और सूक्ष्म कण (त्रसरेणु) टिड्डी दलकी भाँति उड़ने-मुस्ताने, घामके मैदानों, तराई और पहाडोंके जगलोको पड कर ढाँकते जा रहे थे।

इस प्रकार हिमयुगो और हिमसन्धियोंने मध्य-एशियाके भूतलको बड़ी निर्दयतापूर्वक दलित-मर्दित कर दूसरा ही रूप दे दिया। प्रकृतिकी इस निष्ठुर क्रीडाने केवल धरातलके ही आकार-प्रकारमे परिवर्तन नहीं किये, बल्कि वनस्पतियो और प्राणियोंकी अवस्थाम भीपण उथल-पुथल मचाई।

स्रोत ग्रन्थ

- १ पेर्रोबिलोये ओबश्चेस्त्वो (प० प० येफिमेको) लेनिनग्राद १९३८
- 2 Geology in the Life of Man (Duncan Leith, London 1915)
- 3 Exploration in Turkistan (R. Pumpelly, 1903) vols I, II
- 4 General Anthropolgy (Frunz Boas and others, New York 1938)
- 5 Everyday Life in the Old Stone Age (Marjorie and C. H. B. Quennell, London 1945)

अध्याय २

पुरा-पाषाण-युग^१

§१ मानव-जातियाँ

चतुर्थयुग अधिउषा (प्लेस्तोसेन) और अतिउषा (होलोसेन) के दो उपयुगोमे विभक्त है। अधिउषायुग हमारी सपियन-मानव-जातिकी प्रधानताका है, जिसमे नवपाषाण युग प्रथम है, जो आजसे ७००० हजार वर्ष पहले शुरू हुआ था—यद्यपि उसका यह अर्थ नहीं, कि वह पृथिवी पर सभी जगह एक ही समय आरम्भ हुआ। तस्मानियाके मूल निवासी, जो युरोपीय लोभी नर-राक्षसोंके कारण अब ससारसे लुप्त हो चुके हैं, उन्नीसवीं सदी तक अभी पुरापाषाण-युगमे विचरण कर रहे थे। चतुर्थ युगके आदिम भाग पुरापाषाण-युगके आदिम या निम्न पुरापाषाण-युगमे और भी कितनी ही मानव-जातियाँ अस्तित्वमे आई थी, जिनमेसे नियडर्थल (मुस्तेर) मानवका ही अभी तक मध्य-एसियामे पता लगा है। हो सकता है, इससे पहलेकी हैंडलवर्ग और पेकिंग मानव जैसी जातियोंके भी अवशेष आगे मिले। मानव-इतिहासको क्रमबद्ध करनेके लिए यह आवश्यक है, कि उज्बेकिस्तानमे मिले मुस्तेर मानवकी कडीको पीछेसे मिलानेके लिए दूसरे मानवोंका भी कुछ वर्णन कर दिया जाय।

मभी मानव-जातियाँ उसी समय विद्यमान थी, जब कि पृथिवीपर चार महान् हिमयुग आये थे। ये हिमयुग निम्न प्रकार थे^२—

		मानव-जाति
पश्च-हिमयुग	१३००० वर्ष	ओरिन्थक
चतुर्थ हिमयुग (उर्म)	५०००० ”	मुस्तेर
तृतीय हिमसंधि	१ ५० लाख	अश्योल
तृतीय (रिस्)	२ ”	प्राग्-अश्योल
द्वितीय हिमसंधि	३ ”	शैल (हैंडलवर्ग)
द्वितीय ० (मिदेल)	४ ”	पेकिंग
प्रथम हिमसंधि	५ ”	
प्रथम ० (गुज)	६ ”	

ऊपरी-पुरापाषाण-युग चारो हिमयुगोंके समाप्त होनेके साथ आजसे प्राय १५ हजार वर्ष पूर्व आरम्भ होता है। कुछ विद्वान् पुरापाषाण-युगमे एक मध्य-पुरापाषाण-युग को भी मानते

^१ Our Early Ancestors (M C Burkitt 1929) pp 3-6, Prehistoric India (P Mitra, Calcutta 1928)

^२ पेर्वोबित्तनोये ओबश्चेस्त्वो (५० प० येफिमको) पृष्ठ ३०, Everyday Life in the Old Stone Age (Marjorie and C H B Quennell (1945) p 11, Progress and Archaeology (V, Gordon Childe) p 9

है, जो ३५ से ५० हजार वर्ष पूर्व मौजूद था और इसी समय चतुर्थ हिमयुगके भीतरमें मुस्तेर (नियण्डर्थल) मानव जीवन-सघर्ष कर रहा था। ऊपरी पुरापाषाण-युगके ६ हजार वर्षोंमें निम्न प्राचीन जातियोका पता लगा है—

वर्ष पूर्व	जाति	उपजाति
१५०००	ओरिन्यक	ग्रिमान्दी, क्राम्पान्
१४०००	सोलूत्र	
१३०००	मदलेन	
११०००	अजिल	

यहाँ जो काल दिया गया है, उसे एकदम निश्चित नहीं समझना चाहिए। उदाहरणार्थ, जहाँ मदलेन मानवको कोई-कोई विद्वान् १३००० हजार वर्ष पहले मानते हैं, वहाँ दूसरे उसे २४-२६ हजार वर्ष पहले स्वीकार करते हैं। इनको स्पष्ट करनेके लिए यहाँ दिये हुए दूसरे, तीसरे और चौथे फलको को देखे। पाँचवे फलकसे ताम्र और लौह-युगकी सम्यता भारतवर्षमें किम रूपमें रही, इसका पता लगेगा।

फलक २—नवजीवक-कल्पका विवरण

क	युग	सम्यता	काल	जनवायु
अ	इदउषा	लौह	१००० ई० पू०	नरम
		ताम्र	१५०० ई० पू०	
		नवपाषाण	५००० ई० पू०	
	अधि-उषा	अजिल	११००० ई० पू०	आद्रं
		मदलेन	१३००० ई० पू०	
ब	अधि-उषा	सोलूत्र	१४००० "	गुह्यवासी
		ओरिन्यक	१५००० "	
		मुस्तेर	२०००० "	
	अधि-उषा	अश्व्योल्	२२०००	पदवाद्-हिम
		प्राग्-अश्व्योल्	२६०००	
ग	अधि-उषा	शेल्स		चतुर्थ हिम (बुमं)
		स्त्रेपो		
		अतिउषा		
	अधि-उषा	मध्यउषा		तृ० हिममंथि
		लघुउषा		
घ	अधि-उषा	अतिउषा		तृ० हिम (गुग्)
		मध्यउषा		
		लघुउषा		
	अधि-उषा	अतिउषा		द्वि० हिमसधि
		मध्यउषा		
ङ	अधि-उषा	अतिउषा		द्वि० हिम (मिन्देल)
		मध्यउषा		
		लघुउषा		
	अधि-उषा	अतिउषा		प्र० हिमसधि
		मध्यउषा		
च	अधि-उषा	अतिउषा		प्र० हिमसधि (गुज)
		मध्यउषा		
		लघुउषा		
	अधि-उषा	अतिउषा		नरम
		मध्यउषा		
छ	अधि-उषा	अतिउषा		उष्ण
		मध्यउषा		
		लघुउषा		
	अधि-उषा	अतिउषा		नरम
		मध्यउषा		

फलक ३—चतुर्थ युग^१

युग	हिमयुग	पुरातत्वीय युग	मानव-जाति	समाज
चतुर्थ युग	इद-उषा	लौह पित्तल ताम्र		
	वर्म	नवपाषाण अजिल		
	रिस	मद्लेन सोल्त्र ओरिन्क मुस्तेर	सपियन क्रोमत्रो ग्रिमाल्दी नेयण्डर्थल	मातृसत्ताक सर्गात्र विवाह
	मिन्देल प्राग्हिम	अश्येल शेल	हैडलवर्ग	आदिम साम्यवाद

—प० प० एफिमैन्को ('पेर्वोबित्नोये ओब्चेस्त्वो') पृष्ठ ६६

फलक ४—मानव-जातियाँ^२

मानव-जातियाँ	वर्ष	हिमयुग	उद्योग	आविष्कार (मिश्र)
	१५०० ई० पू०			लौह
	२००० "			पित्तल
	३००० ई० पू०			इतिहासारम्भ
	४००० "			लोह उपयोग
	५५०० "			ताम्र
	६५०० "			
पुरापाषाण	क्रोमत्रो ८५०० "			
	ग्रिमाल्दी १३५०० "			
	मुस्तेर ७५०० "			
	हैडलवर्ग	रिस उतार प्राचीन मुस्तेर, आग, धनुष		
	पेकिङ	मिन्देल, अश्येल		
	जावा ५०००० "	गुज सधि, शेल		
	१० लाख	अधिउषा		

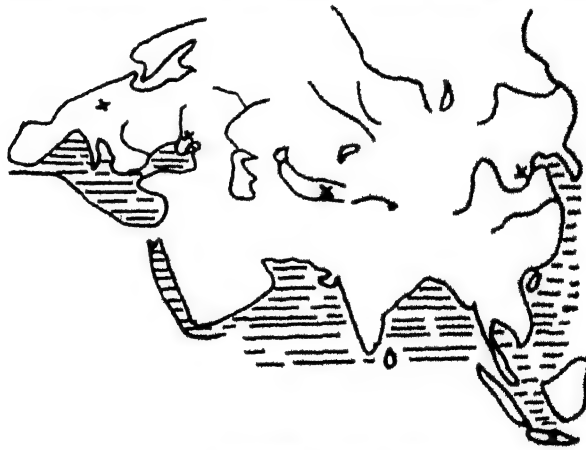
^१ पे० ओब्० पृ० ११२।^२ वही पृ० ६६ General Anthropology (Frunz Boas and others 1938)

फलक ५--भारत में इद-उषा युग

काल	वर्ष
इस्लाम	१००० ई०
गुप्त	४०० „
शक	०
मौर्य	३०० ई० पू०
बुद्ध	५०० „
उपनिषद्	७०० „
ऋग्वेद	१२०० „
सिंधु सभ्यता	३००० „

§२. निम्न-पुरापाषाण युग^११. जावा मानव^१

अभी तक जितने मानव-अवशेषोंका पता लगा है, उनमें जावा-मानव 'सबसे पुराना है। इसे त्रिनील मानव या पिथक-अथाप भी कहते हैं। १८९१ ई० में डच विद्वान् प्रोफेसर ई० दुम्बाका मध्य-जावाकी सोलो नदीके किनारे त्रिनील स्थानमें इस मानव-खोपड़ीका ऊपरी भाग, दाढ़के दा



२ पुरापाषाणयुग का मानव

दाँतो और जाँघकी एक हड्डीके साथ प्राप्त हुआ। यह फोसील जिस स्तरमें मिली थी, उसमें वह अतिउषाकालकी मालूम होती थी। इसी स्तरमें सूअर, जलीय अश्व, हरिन तथा बिलुप्त स्टेगोडन

^१काल एक लाख वर्षसे पूर्व Gen. Anth. p 227 'पेर्वो बित्त्नोये ओब्श्चेस्को (प० प० येफिमैको १९३८, पृष्ठ २७)

^२Pithecanthropus, इसके समकालीन मानव नर्वदा उपत्यका (होशंगाबाद और जब्बलपुर के जिले) में मिले हैं—Prehistoric India (Stuart Pigget, 1950) p. 29

गज जैसे प्राणियोंकी फोसीलायित हड्डियाँ मिली थी, जिससे मालूम होता है, कि जावा मानवको भोजनके लिए इन जानवरोंको मारना पड़ता था। जावा मानवका कपाल-क्षेत्र ६४० घन सेन्टीमीटर है, जो सभी वन-मानुषोंसे अधिक है, क्योंकि उनका कपाल-क्षेत्र ६५५ घन सेन्टीमीटरसे अधिक नहीं होता। लेकिन यह आधुनिक मानवके कपाल-क्षेत्र १६०० घन सेन्टीमीटरका दो-तिहाई है, अथवा उतना ही, जितना कि आधुनिक मानवके अत्यल्प विकसित वेदा (लका) लोगोका कपाल-क्षेत्र होता है। जावा मानव बाहरसे दीर्घ कपाल (७१२) किन्तु खोपड़ीके भीतर आयत-कपाल (८०) था। इलियट स्मिथके मतसे वह निसन्देह मानव-वशका था और कुछ थोड़ी-सी वाणी (भाषा) की शक्ति भी रखता था, किन्तु वह खॉसने जैसी ध्वनिसे अधिक विकसित नहीं थी। खड़ा होके चलनेमें वह बहुत-कुछ मनुष्य जैसा था, किन्तु दात वनमानुषसे अधिक समानता रखते थे। ऊँचाईमें वह ५ फुट ६ या ७ इंच था अर्थात् बहुत-कुछ आजकलके साधारण मनुष्य जितना लम्बा था। भय उपस्थित होनेपर वह आसानीसे वृक्षोपर चढ़ जाता था



३. जावा मानव

और शायद रहनेके लिए वही घास-फूसकी नीड जैसी झोपड़ी भी बना लेता था। जावा-मानव^१ उन्नीसवीं सदी में जावाके सदाहरित जंगलोंमें निवास करता था, जब कि यूरोप प्रथम-हिमयुगसे गुजर रहा था। उन्नीसवीं सदी में सुमात्रा और मलायासे मिला हुआ जावा, एसियाका एक अभिन्न अंग था। जावा मानवके कालके विषयमें मतभेद होना स्वाभाविक है। कोई-कोई उसे हैडलवर्गीय मानवका समकालीन मानते हैं और कोई उसे पैकिंग मानवसे पीछेका।^२

^१ विशेष के लिए पठनीय General Anthropology, History of Anthropology (A.C. Haddon) 56-57 Man the verdict of science (G N Ridley 1946) p 41, Progress and Archaeology ^२ History of Anthropology (A C Haddon)p. 53

२ पेकिग-मानव

प्रोफेसर ओसबोर्न तथा दूसरे कितने ही नृतत्व-विशारदोंका मत है, कि मानव-जातिका उद्गम एशिया हीमें कही होता चाहिए। जावा मानव एशियामें मिला। पेकिग मानव भी एशियामें ही प्राप्त हुआ। चीन और मंगोलियामें पुरा-पाषाण युगके बहुतमें पुराने पाषाण हथियार मिले हैं, किन्तु उनके साथ मानव-अवशेष नहीं मिले, अतः मानवकी आकृति आदिके बारेमें कुछ कहना मुश्किल है। वर्तमान शताब्दीके आरम्भमें कुछ फोमील हुए मानव-दन्त भी मिले थे। नैफ़्तन सबसे महत्वपूर्ण प्राप्ति १९२६ में हुई जब कि चीनकी राजधानी पेकिगमें ३७ मीन दक्षिण-पश्चिम चूकूतीयानकी एक गुहामें अधिउषा (प्लैस्तोसेन) के दो मानव-दन्त प्राप्त हुए। १९२७ में एक और दौत तथा निचली दाढ़ का फोमील मिला, जो कि किसी तरुणका बिना घिसा हुआ दौत था। यह जावा-मानव से अधिक विकसित रहा होगा। २ दिसम्बर १९२६ को मभी मन्देहाको दूरे करनेवाली प्राप्ति एक तरुण चीनी विद्वान्को मिली। यह खोपड़ी प्रायः पूरी है और इसका कपाल-क्षेत्र जावा मानवसे कुछ अधिक है। इसका काल प्रायः ५ लाख वर्ष पूर्व बनलाया जाना है। बड़ा होनेपर भी पेकिग मानवका कपाल जावा-मानवसे बहुत समानता रखता है। खोपड़ी अधिक चिपटी, सँकरी और पीछेकी ओर नीचा होती, ललाट तथा आँखों के ऊपर उभरी हुई हड्डी दानोंमें एक-सी है। किन्तु पेकिग मानवकी अपेक्षा जावा मानवका ललाट अधिक ऊँचा है, इमनिंग किनने ही विद्वान् उसे नेयण्डर्थल (मुस्तेर) के पास खींच लाना चाहते हैं। इसका कपाल-क्षेत्र ६०० घन सेतीमीटर तक अर्थात् जावा-मानवसे ४० ही सेतीमीटर कम है। जून १९३० ई० में उर्मा गुहासे एक और खोपड़ी मिली, जिसका कपाल-क्षेत्र प्रथमसे अधिक तथा आकृति मुस्तेर-मानवमें बहुत समानता रखती है। नवम्बर १९३६ में उसी गुफामेंसे तीन और खोपड़ियाँ मिली, जिनमेंसे दो १२०० और ११०० घन सेतीमीटरवाली दो पुरुषोंकी थी और तीसरी १०५० घन सेतीमीटरकी



४ पेकिङ् मानव (खोपड़ी और मानव)

एक स्त्रीकी थी। स्टाइहाइडको मिली नियडर्थल स्त्रीकी खोपड़ी ११०० घन-सेतीमीटरकी थी। इन पिछली खोपड़ियोंके साथ गालकी हड्डियाँ भी मिली, जिनसे पता लगता है कि पेकिग-मानव गाल और नाककी हड्डियोंमें आधुनिक मंगोलायित जातियोंसे समानता रखता था, यह

समानता उसके दाँतोमे भी थी। इस प्रकार यह कहा जा सकता है, कि यह मगोलीय जातियोका पूर्वज था। प्रोफेसर ब्लैकका कहना है—‘पेकिङ्ग-मानवके दाँतोकी विशेषता बतलाती है, कि वह उस मानवित (होमोनिद) से बहुत अन्तर नहीं रखता था, जिससे कि पीछे नियडर्थल (मुस्तेर) और सपियन मानव-जातियोका विकास हुआ।’

पेकिग मानव अग्निका उपयोग करता था, यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि वह अग्नि बना भी सकता था। इसके हथियार लकड़ी पत्थर और हरितकी सीगके होते थे।

३ हैडलवर्ग मानव^१

आजसे डेढ़ लाख वर्ष पहले प्रथम या द्वितीय हिमसन्धिमे एक मानव रहता था, जिसे हैडलवर्ग मानव कहा जाता है। १९०७ ई० मे जर्मनीके हैडलवर्ग नगरके समीप मावरमे इस मानवका सबसे पहले जबड़ा मिला था। स्थानके कारण इस मानव-जातिका नाम हैडलवर्ग पड़ गया। इससे पहले जावा और पेकिङ्ग मानव यद्यपि मौजूद थे, किन्तु उनपर अब भी नर या वन-मानुषके बीचमे होनेका सन्देह हो सकता था। हैडलवर्ग मानव पहला असदिग्ध मानव है। इसका वह जबड़ा आजके धरातलमे ७९ फुट नीचे एक प्राचीन नदीकी बालुकामे चिपका हुआ मिला था। उमी स्तरमे अधि-उपा युगके स्तनधारियोकी हड्डियो भी मिली थी, जिनमे सरलदन्त गज, सिंह और लोमधारी गंडा भी थे। हैडलवर्ग मानवके ये ही खाद्य थे और इन्हीसे उसका सघर्ष था। उस समय हिमसन्धिके कारण जलवायु अधिक ठंडा नहीं था, जिससे उसे गुहामे रहनेकी अवश्यकता नहीं थी। इस मानवका जबड़ा बहुत बड़ा और भारी था, ठुड्डीका एक तरह अभाव था। वह आजकलके कितने ही आधुनिक मानवोसे अधिक बड़ा नहीं था। कितने ही शरीर-शास्त्रियो का कहना है, कि जबड़ा यद्यपि वनमानुष जैसा भारी है, किन्तु कुछ दूसरे शरीर-लक्षण आगे आनेवाली मुस्तेर जाति जैसे हैं। इसीलिए कितने ही विद्वान् इसे मुस्तेर (नियडर्थल) का पूर्वज मानते हैं। शायद इसके हथियार शैल-कालीन हथियारो जैमे थे। यह भी अनुमान किया जाता है, कि अपने सांस्कृतिक विकसित हैडलवर्ग-मानव पेकिग-मानव जैसा ही था।

४. मुस्तेर (नियडर्थल)^२

वर्तमान सपियन मानव-वर्गमे भिन्न जिन पुरातन मानव-वर्गोके चिह्न प्राप्त हुए हैं, उनमे सबसे अधिक इसी मानवके हैं। सर्वप्रथम १८४५ ई० मे जिब्लाटोरमे इसकी एक खोपड़ी मिली थी, किन्तु उस समय विद्वानोंका ध्यान उसकी ओर नहीं गया। उससे आठ वर्ष बाद डुसेल्डोर्फ (जर्मनी) के पास नियडर्थलकी घाटीकी एक गुहामे खुदाई करने समय मजूरोको एक खड्डित कंकाल मिला, जिसमे ऊपरी कपाल, बाँह और पैर एवं कंधे और कूल्हेकी हड्डियाँ थी। खोपड़ी अधिक चिपटी तथा बाँहोंकी हड्डी अधिक उभड़ी हुई थी, जो कि आगे चलकर इस जातिका विशेष शरीर-लक्षण माना गई, इसी कारण इसका नाम नियडर्थल-मानव पड़ा। लेकिन, नियडर्थलके

^१ Man the Verdict of Science (G N Ridley) p 41

^२ काल ५०००० वर्ष (V. Gordon Childe Progress and Archaeology, p. 79 : ५००००-३०००० वर्ष (Gen Anth.)

अतिरिक्त इसका दूसरा अधिक प्रसिद्ध नाम मुस्तेर है। १९०८ ई० में फ्रामके दोंगदोंग इलाकेके मुस्तेर स्थानमें एक नियण्डर्थल ककाल प्राप्त हुआ था, जिसके नामपर यह मानव और उसकी संस्कृति मुस्तेरके नामसे प्रसिद्ध हुई। इस मानवकी हड्डियाँ बेल्जियम, इंग्लिशचेनलके द्वीप-समूह (१८४८ ई०), युगोस्लाविया (१८९९ ई०), क्रिमिया (१९२३ ई०), फिलस्तीन (१९२५ ई०), इताली (१९२९ ई०), क्रिमिया, दोनेत्स उपत्यका,^१ उज्बेकिस्तान (१९३८ ई०) आदि बहुत जगहों पर मिली हैं। यह मानव तृतीय हिमयुग (रिस्) के बादकी तृतीय हिममाधिमें मौजूद था, जिसका काल एक लाखसे २५ हजार वर्ष पूर्व तक आँका गया है। मुस्तेरीय संस्कृतिके हाथियार मंगोलिया और चीन (शेनसी) तक मिले हैं, किन्तु शरीर-अवशेष न मिलनेमें यह कहना मुश्किल है, कि वह मुस्तेर मानवके है।

मुस्तेरकी गुहामें प्राप्त हड्डी १५ वर्षके एक बालककी थी, जो ५ फुटमें कम लम्बा था। आमतौरसे यह जाति छोटे कदके लोगोकी थी, जिनकी लम्बाई ५ फुट २ इंचमें ५ फुट ८ इंच तक पाई जाती है। जिब्राल्टरकी स्त्री-खोपड़ीका कपालक-क्षेत्र १२८० घन-गर्नामीनर था और शापेल-ओ-सेतकी खोपड़ी १६०० घन-सेन्तीमीनर। मुस्तेर मानव दीर्घ-कपाल (३० और ३६ कें



५. मुस्तेर (नियण्डर्थल मानव)

बीच) था। बाँहोंकी हड्डीका उभड़ा होना इसकी अपनी विशेषता थी, यह बतला आये हैं। इसका चेहरा बहुत लंबोतरा और नाक अधिक चौड़ी होती थी। चौड़ी होने का यह अर्थ नहीं, कि वह चिपटी होती थी। इसकी ठुड्डी नहींके बराबर थी। नियण्डर्थल-मानवके पैर आजकलके बच्चों

^१पेरोंओब् ० पृष्ठ २९०, २९६, और २२०, ३०० में भी।

जैसे थे, जिससे जान पड़ता है, कि उसकी घुट्टीके जोड़ ऐसे थे, कि वह पैरोपर अधिक चक्कर काट सकता था। कंधेपर सिर कुछ आगेको निकला रहता था।^१

मुस्तेर-मानव तेशिकताश (मध्य-एसिया) में भी मिला है, इसे हम आगे बतलायेगे। इसका मूलस्थान एसिया माना जाता है।^२

चतुर्थ हिमयुगके उतार आरम्भ होनेके बाद कुछ सहस्राब्दियों (२५ हजार वर्ष पूर्व) तक मुस्तेर मौजूद रहा। आजसे २५-३० हजार वर्ष पूर्व सपियन (उत्तम) मानवकी पुरातन शाखा क्रोमेओन मौजूद हुई। कितने ही नृतत्त्व-विशारद् मानते हैं, कि विशेष परिस्थितियोंके कारण मुस्तेर मानव का ही सपियन-मानवके रूपमें जाति-परिवर्तन हुआ।^३ दूसरोका कहना है, कि सपियन विजेताओंने मुस्तेरको पराजित कर उन्हें अपनेमें हजम कर लिया। अन्तिम उपरि-पुरापाषाण युगके क्रोमेओन, ग्रिमाल्दी और मड्लेन मानव सपियन जातिके थे। आजसे २५-३० हजार वर्ष पहले मुस्तेर मानव जाति लुप्त हो गई। सबसे पुरातन अवशेष मुस्तेर जातिका ही मध्य-एसियामें मिला है, इसलिए उसके बारेमें और विस्तारके साथ हम आगे लिखेंगे। यहाँ मानव-विकासकी कड़ीको स्पष्ट करनेके लिए सपियन मानवकी कुछ पुरानी जातियोंका वर्णन कर देना उचित है।

^१ आग का उपयोग यह जानता था (General Anthropology p. 239 विशेष के लिए I., Humanite Prehistorique (G) acquies de Morgan, Paris (1924)

^२ 10 Hist of Anth p 58

^३ Gen. Anth p 78

स्रोत ग्रन्थ :

- 1 पेरॉ० ओबू०
- 2 Our Early Ancesters (M H Burkitt, Cambridge, 1929)
- 3 Prehistoric India (Paggot),
- 4 Prehistoric India, (P Mitra, Cal 1924)
- 5 General Anthropology
- 6 History of Anthropology (A C Haddon, London, 1945)
- 7 7 Man the Verdict of Science (G N Ridley, London 1946)
- 8 Progress and Archaeology (V G Childe, London 1944)
- 9, Stone Age in India (P, T, S, Ayyangar)

अध्याय ३

उपरि-पुरापाषाण और मध्यपाषाण-युग

§१. ओरन्यक (१५००० वर्ष पूर्व)

तूलू (फ्रांस) से ४० मील दक्षिण-पश्चिम ओरन्यक नामक स्थान है। यहीं पर हम मानव के शरीर-अवशेष मिले थे, जिसके कारण इस जाति तथा इसकी शाखाओं का नाम ओरन्यक पड़ा। इसी जाति के अन्तर्गत क्रोमेओ, सोलूत्रे, मड्लेन और अखिल जानिय है, जो आज से १५ हजार वर्ष पूर्व तक मौजूद थी। मुस्तेर मानव के साथ पुरापाषाण युग का निम्न स्तर खनम हो जाता है और ओरन्यक से हम उपरिपुरापाषाण युग में पहुँचते हैं।

१. क्रोमेओ^१

फ्रांस की वेजेर नदी की उपत्यका में, जहाँ पर कि पूर्वोक्त मुस्तेर-गुहा है, एक दूसरी लटकी हुई चट्टान है, जिसे क्रोमेओ कहते हैं। १८६८ ई० में क्रोमेओ की खान-गुहा में पाँच मानव-कंकाल मिले, जिनका नाम प्राप्ति-स्थान के कारण क्रोमेओ पड़ गया। उपरि-पुरापाषाण युग में यूरोप का सब से अधिक प्रसिद्ध मानव यहीं था। मुस्तेर मानव जहाँ खर्वकाय था, वहाँ क्रोमेओ कितनी ही बार ६ फुट का कड़ावर मनुष्य था। यह दीर्घ कपाल था और इसका कपाल-क्षेत्र १५६० से १७१५ घन सेंटीमीटर तक होता था। चेहरा शरीर की अपेक्षा छोटा और चौड़ा था। क्रोमेओ स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक नाटो होती थी। इस मानव का शरीर-लक्षण कितनी ही बातों में आधुनिक एस्किमो—विशेष कर ग्रीनलैण्डवालों—से इतनी समानता रखता है, कि कितने ही विद्वान् मानते हैं, कि मध्य-एशिया से नवपाषाण-युग के मानव के आने पर क्रोमेओ उत्तर की ओर हटते दूर चले गये, जो ही आजकल एस्किमो हैं। इस बात में तो सभी सहमत हैं, कि यह मानव-वंश मुस्तेर की भाँति उच्छिन्न नहीं हो गया, बल्कि उसकी मजान या रक्त आधुनिक मानव में मौजूद हैं।^२

२. ग्रिमाल्दी^३

भूमध्यसागर के तट पर फ्रांस के माने प्रदेश में ग्रिमाल्दी नाम की नौ गुफाएँ हैं, जिनमें अधिकांश ध्वस्त हो चुकी हैं। इन्हीं में से एक शिशु-गुहा में १६०१ में माँ और बेटे के दो सम्पूर्ण

^१ पेर्वो० ओब्० पृ० ४३, Gen Anth. pp. 78-82

^२ Gen Anth pp 76, 78,

^३ Everyday Life in the old Stone Age p. 73

ककाल मिले। स्त्री प्रौढा रही होगी और पुत्र १४ वर्ष के करीब का। स्त्री का कद ५ फुट ३ इंच था और लडके का ५ फुट से थोड़ा ही अधिक। दोनों ककाल ओरन्यूक काल के हैं, यद्यपि इनका सम्बन्ध उनसे नहीं है। नूतन्त्व-विशारद् इसे निग्रोयित जाति का बतलाते हैं। इसकी खोपड़ी दीर्घ कपाल, ठुड़ी थोड़ी सी विकसित, दाँत बहुत बड़े, नाक की हड्डियाँ चिपटी थी। बड़े नथुने विशेष तौर से निग्रो जैसे थे। इसके निग्रो-सम्बन्ध को अपेक्षाकृत लम्बी टाँगें तथा बाहु के ऊपरी भाग भी बतलाते हैं। ग्रिमाल्दी ककाल अफ्रीका के श्मेस लोगो से अधिक समानता रखते हैं। यद्यपि यह प्रश्न जटिल है, कि निग्रोयित आकार के ये लोग युरोप में कैसे पहुँचे। कुछ विद्वानों का कहना है, कि ग्रिमाल्दी-मानव क्रोमेजो मानव का पूर्वज था। प्रोफेसर इलियट-स्मिथ का मत है, कि ग्रिमाल्दी जाति का शरीर-लक्षण, निग्रो की अपेक्षा आस्ट्रेलियायित मानव से ज्यादा मिलता है।



६ क्रोमेजो मानव

ग्रिमाल्दी मानव यद्यपि ओरन्यूक कालमें था, तो भी उस जातिमें इसे सम्मिलित करनेके लिए अधिकांश विद्वान् तैयार नहीं हैं।

ओरन्यूक मानव सांस्कृतिक विकासमें मुस्तेर मानवसे आगे बढ़ा था। उसके चकमक-पत्थरके हथियार अधिक सुधरे तथा कार्यकारी थे। उसके हथियारोंके भेद भी अधिक थे। यद्यपि हथियार पत्थरके अतिरिक्त कुछ हड्डियोंके भी थे, लेकिन इसमें सन्देह नहीं उसके हथियारोंमें लकड़ीके भी बहुतसे रहे होंगे, जो १०-१५ हजार वर्षों तक सुरक्षित नहीं रह सकते थे। अपने पत्थरके हथियारोंमें वह बारहसिंगेकी सींगोंको काटकर वाण और भालेके फल बनाता था। हड्डियोंके हथियारोंका बनाना शायद इसी मानवने पहले-पहल आरम्भ किया। हड्डियोंकी सूइयोंसे वह चमड़ेकी सिलाई भी करने लगा था, यद्यपि इस सूईमें मोची की सुईकी तरह सूत खींचा जाता था। ओरन्यूक मानव धनुष और वाणका इस्तेमाल जानता था। इसने हड्डियोंपर अपनी कलाभिरुचिका प्रदर्शन

किया है, साथ ही गुफाओमें उसके हाथके चित्र भी मिलते हैं। स्पेनके अलतमीरा गुफाकी छत और दीवारोंपर उसके हाथके बनाये हुए कितने ही बैल, बिसोन, हरिन और घोड़ेके अत्यन्त सजीव चित्र हैं। अलतमीराकी गुफा बहुत अँधेरी—२८० मीटर लम्बी है, (एक मीटर ३ फुट पीने ४ इंचका होता है)। गुफाके भीतर रोशनी बिल्कुल नहीं जा सकती और चित्र भीतरकी दीवारमें सब जगह बने हुए हैं। आज भी प्रकाशके बिना उन्हें देखा नहीं जा सकता, इसलिए चित्रकारोंने अवश्य दिये की सहायता ली होगी। ओरनयक् मानव ४-५ इंचकी मिट्टीकी मूर्तियाँ भी बना लेता था, जो काफी अच्छी थीं।

३. सोलूत्रे^१ (१४००० वर्ष पूर्व)

फ्रासमें मासोके पास सोलूत्रे नामक स्थान है, जहाँ ऊपरी पुरापाषाण युगके मानवके शरीरावशेष मिले हैं, जिसके कारण उसका नाम सोलूत्रे पड़ा। इस मानवके अवशेष इंग्लैण्ड, उत्तरी स्पेन और मध्य युरोप तक मिले हैं। वह घोड़ोका शिकारी था और हिमयुगके समाप्त होनेके बाद युरोपमें जो घासके मैदान मौजूद हुए थे, उनमें घूमा करता था। चकमक-पत्थरके बने हुए सुन्दर फल वह अपने भालो और वाणोमें लगाता था, जो शिकारके लिए ही भयकर हथियार नहीं थे, बल्कि उनके बनानेमें कला और सुश्रुतिका भी भारी परिचय दिया गया था। सोलूत्रे मानवकी दस्तकारीके रूपमें चकमक पत्थरकी छिलाई और सफाई अपने जिस उच्चतम विकासपर पहुँची थी, उसका मुकाबिला नवपाषाण युगके पहलेवालोंने नहीं कर पाया। इसने हड्डीकी सच्ची सूई बनाई, इससे पहले मोचियोंकी तरह ही सिलाई होती थी। इस मानवकी सूईके लिए सूतका काम अँतड़ियोंके रेशे या नसे करती रही होगी। इस समय मानवने अपने चमड़ेके परिधान और जूता आदिके बनानेमें बहुत तरक्की की होगी, इसमें सन्देह नहीं। इस मानवके रहनेके समय युरोपका जलवायु वैसा गरम नहीं था, जैसा ओरनयक् मानवके समय। वह कुछ अधिक सर्द था। इस समय युरोपमें मम्मथ गज अब भी मौजूद थे।

४. मद्लेन^२ (१३००० वर्ष पूर्व)

सोलूत्रे मानवके दो सहस्राब्दियों बाद मद्लेन मानवका पता लगता है। फ्रासकी वेज़ेर नदीकी उपत्यकामें मद्लेन कैसल (गढ़) के करीब ही इस मानवका अवशेष मिला था। अपने पत्थरके हथियारोंमें यह सोलूत्रे मानवका मुकाबिला नहीं कर सकता था। हड्डी और हाथी-दाँतके हथियारोंको यह ज्यादा पसन्द करता था और चकमकको बहुत कठोर हथियारोंके^३ तौर पर ही इस्तेमाल करता था। औरनयक्-वशका इसे नालायक उत्तराधिकारी कह सकते हैं। यह फ्रास ही नहीं स्पेन, जर्मनी, बेल्जियम और इंग्लैण्डमें भी रहता था। इसके समय शायद हिमयुग की स्मृति भी लुप्त हो चुकी थी। मद्लेन मानव अपने भालो और वाणोके फल हाथी-दाँत तथा हरिनकी

^१ पेर्वो० ओब्० पृ० ३५०-६३।

^२ Gen Anth p. 242

^३ पेर्वो० ओब्० पृ० ४६६-८३, Gen Anth pp 77, 143,

सीगोका बनाता था। इन फलोमें कुछ कंटैदार भी होते थे, जिनसे आगे मछली मारनेकी वशीका विकास हुआ। अपने हड्डीके हथियारोपर यह चित्रकारी भी करना जानता था। मदलेन मानव के चित्रो में सील और सामोन मछलीकी आकृतियाँ काफी मिलती हैं। इसकेमोसे इसके शरीर-लक्षणो में भारी समानता है। एस्कमो लोग भी हड्डी और लकडी पर कारुकार्य करनेमें बहुत दक्ष होते हैं। हो सकता है, मदलेन मानव लकडीके बोटोको चमडेसे बाँधकर एक तरहकी नाव बनाता था। वह धनुहीके सहारे बर्मा द्वारा लकडी और हड्डीमें गोल छेद कर सकता था। वह जाडेके दिनोंमें गुफाओ या चट्टानोकी छायाके नीचे शरण लेता और गर्मियोमें फूस या चमडेकी झोपडी में। आधुनिक एस्कमो लोगोसे आकृति और हस्त-शिल्पमें ही नहीं वह भारी समानता रखता था, बल्कि दीपकसे प्रकाश और खाना पकानेका भी शायद काम लेता था। चित्रकलाके विकासमें, प्रागैतिहासिक मानवोमें इसे सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इसके चित्रोमें मम्मथ गजका सजीव चित्रण यदि कही देखा जाता है, तो कही बिसौन और सिंहका आकार, कही लाल और दूसरे हरिनोका शिकार अंकित मिलता है। वह लाल, भूरे, काले और पीले रगोको इतनी सुन्दरताके साथ इस्तेमाल करता था, कि चित्र बहुत सजीव और भावपूर्ण हो जाता था। इसके चित्रोमें कितने ही पूर्ण आकार के हैं। वह ब्रुशका अवश्य इस्तेमाल करता था। रगोको शायद हरिनकी सीगोकी बनी नलियो में रखता था।^१

१२ मध्यपाषाण

अजिल, अश्योल^२ (११००० वर्ष पूर्व)

मदलेनसे दो सहस्राब्दी बाद इस मानवका पता लगता है, जो कि पुराण मानवजातियोका अन्तिम प्रतिनिधि था, और अपनी विशेषताओ के कारण इसे पुरापाषाण और नवपाषाणके बीचवाले मध्यपाषाण युगका मानव कहते हैं। दक्षिणी फ्रासमें लूदके समीप मा-द-अजिलकी गुफामें इसके हाथकी चीजे मिली थी। इंग्लैण्ड और स्काटलैण्डमें भी इसका पता लगता है। अजिल मानवकी एक विशेषता यह थी, कि वह मुर्देकी बहुत सी खोपडियोको अलग करके अण्डेकी तरह एक जगह गाडा करता था। बवेरियामें नोर्दालिंगेन के पास ओफनेत गुहामें एक ही जगह १७ खोपडियाँ गाडी मिली थी, जिनके साथ गेरूके टुकडे भी थे, जिससे मालूम होता है, कि वह गेरूसे रगकर शरीरका शृङ्गार किया करता था। उन खोपडियोमें एक छोटे बच्चेकी भी थी, जिसके पास बहुतसे घोघे आदि रक्खे हुए थे, जो मरनेपर भी लडकेको खेलनेके लिए थे। जान पडता है, शरीरके बाकी भागको ये लोग जला दिया करते थे। पीछे जब शरीरका जलाना आम हो गया, तो भस्मको मिट्टीके बर्तनमें रखकर गाड दिया जाता था, लेकिन यह नव-पाषाण युगकी बात है। हिमयुगके बीते बहुत दिन हो गये थे, युरोपका जलवायु इस वक्त नरम था। मदलेनके समय घासवाले मैदानो का स्थान घने जंगलोने ले लिया था। अजिल मानव अच्छे मछुए थे, साथ ही शिकार भी उनकी जीविकाका बडा साधन था। पालतू

^१ दक्षिण-भारत में कुर्नूल के पास एक गुहा में इस जसे हथियार १८८१ ई० में मिले थे, Prehistoric India (Paggot, page 35)

^२ (पेबो० ओव् पु० बि० १६०, Gen. Anth. p. 45)

पशुका पहले-पहल इन्हीके समय पता लगता है, जो कि कुत्ता था। अभी कृषिका कही पता नहीं था। अजिल मानवको मछली या जानवरके शिकारपर गुजारा करना पड़ता था। कुत्तेकी घ्राणशक्तिका उपयोग करके वह शिकारके जानवरोंका अच्छी तरह पीछा कर सकता था और शायद कुत्ते जानवरके घेरनेमें भी सहायता करते थे। अभी फल जमा करने और शिकारसे प्राप्त मांसके सिवाय आहारका कोई दूसरा साधन मानवको प्राप्त नहीं हुआ था।

§३ मानव शरीर-लक्षण

प्राचीन मानवका फोसिल-भूत हड्डियोंके सिवा और कोई शरीरावशेष नहीं मिला, इसलिए उनके केशकी बनावट कैसी थी, चमड़े, आँख और केशका रंग कैसा था, रुधिर किम वर्णका था इत्यादि बातोंके जाननेका हमारे पास साधन नहीं है। आजकलकी मानव-जातिके मुख्यतः चार भेद हैं आस्ट्रेलायित, निग्रोयित, मगोलायित और श्वेताग। रंगोंका अन्तर दिखलाई पड़ते भी मगोलायित और श्वेताग जातियोंके शिशुओंकी नासाकृतिमें पहले अन्तर नहीं रहता, नासा-सेतु (बॉसा) का विकास वयस्कताके साथ होता है।

१ शरीर-लक्षण^१

केशकी बनावट चमड़ेका वर्ण और नासाकृतिको देखकर आज हम मानव-जातियोंके भिन्न-भिन्न भेदको समझ लेते हैं। निग्रोयित जातियोंके चमड़ेका रंग काला, बाल काले तथा ऊन जैसे फूले होते हैं। आस्ट्रेलायित लोगोंका चमड़ा काला और बाल काले तथा लहुरदार होते हैं। मगोलायित, जिसमें अमेरिकन इंडियन भी शामिल हैं, हल्का रंग, सीधे बाल तथा उन्नत-नासा-सेतुके होते हैं। श्वेताग बहुत हल्का रंग, पतली नाक तथा भिन्न-भिन्न वर्ण और बनावटके केशवाले होते हैं। नेत्रकी आकृतिमें भी भेद देखा जाता है, किन्तु वह अधिक स्थिर लक्षण नहीं है। श्वेतागों और निग्रोयितोंकी आँखें अधिक विस्फारित होती हैं, जब कि मगोलायितोंकी ऊपरी पपनीमें एक भारी परत पड़ी रहती है, जिसके कारण वह पूरी तौर से खुल नहीं सकती। निग्रोयितों और आस्ट्रेलायितोंके ओठ बहुत मोटे होते हैं, मगोलायितोंके उनसे कम और श्वेतागोंके ओठ बहुत पतले होते हैं। कभी-कभी शरीराकृतिमें भिन्न प्रकारके विकास भी देखे जाते हैं। अमेरिकन इंडियन नियमितरूपेण काले बालों और आँखों तथा हल्के रंगवाले होते हैं, किन्तु अलास्का और ब्रिटिश कोलम्बियाके विशालतम मस्तिष्क और अल्पतम रोमवाले लिगित और हैदा एस्किमो इसके अपवाद हैं। इनका चमड़ा बहुत सफेद, केश लाल और आँखें हल्की भूरी होती हैं, जिनके कारण इन्हें कपिल (ब्लौड) एस्किमो कहा जाता है। आजकल भी देखा जाता है, भिन्न-भिन्न जातिके लोग प्रायः अपनी ही जातिमें विवाह या सन्तानोत्पत्ति करते हैं, जिसके कारण उनकी शरीराकृतिमें आनुवंशिकता कायम हो जाती है अर्थात् एक जातिमें एक ही रूपरंगके

^१ Gen. Anth. p. 102

व्यक्ति पैदा होते रहते हैं। मानव-आकृति और रंगके परिवर्तनमें जलवायु भी कारण होता है। अधिक गरम देशोंमें रहनेवाले लोगोंका रंग श्याम होने लगता है, चाहे उनके माता-पिता श्वेतांग ही हों, तो भी जलवायु का प्रभाव उतना अधिक और शीघ्रतासे नहीं देखा जाता, जितना कि जोड़ा-निर्वाचन या एस्किमोकी भाँति अज्ञात कारणों द्वारा देखा जाता है।

भिन्न-भिन्न मानव-जातियोंमें वर्ण-भेद और रूप-भेद किस तरह हुआ, इसके बारेमें विद्वानोंने बहुत सी कल्पनाएँ दौड़ाई हैं। अर्थर कीथके मतानुसार वर्ण-भेदका कारण मनुष्य-शरीरके भीतरकी निष्प्रणालिक ग्रंथियोंके हारमोन (जीवन-रस) है। मस्तिष्कके ललाटकी बगलमें अवस्थित पिटुइटरी ग्रंथि अधिक बड़ी हो, तो उससे हारमोनका भी अधिक स्राव होगा, जिसके कारण नाक,^१ चिबुक (ठुड्डी), हाथ और पैर अधिक लम्बे हो जायेंगे। शरीरकी वृद्धिपर थाइराइड ग्रंथि नियंत्रण करती है। यदि इसका हारमोन कम निकले, तो नासा और केश बहुत कम विकसित हो पाते हैं और चेहरा चिपटा हो जाता है। इस हारमोनकी कमी से निग्रो जातिके लोगों के शरीरपर बालकी कमी है। जलमें आइडिनका अभाव होनेसे थाइराइड ग्रंथि हारमोन स्राव के लिए अधिक प्रयत्न करके स्वयं बढ़कर घेघेका रूप धारण कर लेती है। बचपनसे वैसा होना बकलोल भी बना देता है। इसका अर्थ यह हुआ, कि बाहरी प्रकृति (जलमें आइडिनका अभाव) भी मनुष्यकी भीतर की निष्प्रणालिक ग्रंथियोंपर प्रभाव डालती है और उसके द्वारा (अर्थात् प्राकृतिक वातावरणके कारण) शरीर-लक्षणोंमें परिवर्तन होता है। केवल रंग आदि हीमें नहीं, बल्कि शरीरके ढाँचे पर भी इस तरहके प्रभाव देखे जाते हैं, जिससे मालूम होता है कि शरीर-लक्षण कोई स्थिर चीज नहीं है। पूर्वी युरोपसे अमेरिका आये हुए यहूदियोंकी कपाल-मिति ८३ होती है, किन्तु उनके पुत्र-पुत्रियोंकी ८१.४ और पौत्र-पौत्रियोंकी ७८ ७ बन जाती है। शरीर-दीर्घताकी बात तो यह है, कि हार्वर्ड-विश्वविद्यालयके छात्र अपने माता-पितासे ३ ४ सेन्टीमीटर अधिक ऊँचे हो जाते हैं।

२. जातियों का सम्मिश्रण^१

प्राचीन मानव-जातियों में भी जाति-सम्मिश्रण हुआ, क्योंकि मानव सदासे घुमन्तू रहा है—कृषियुगसे पहले तो वह घुमन्तू छोड़कर और कुछ था ही नहीं। हम आजकी मानव-जातिके इतिहास में भी ऐसे बहुत से उदाहरण पाते हैं, जिसमें दो-चार व्यक्ति नहीं, बल्कि जातियोंका सम्मिश्रण हुआ। ईसापूर्व द्वितीय शताब्दीके अन्तमें ग्रीक लोग आक्रमण कर भूमध्यसागरके तट पर बस गये। थ्रोस (बलकान) वासी क्षुद्र-एसिया में चले गये, इसी तरह केल्ट भी इताली तक फैलते क्षुद्र-एसिया में पहुँच गये। रोमन उपनिवेशिक युरोपके बहुत से भागों में जा बसे। जर्मन कवीले कालासागर के उत्तरी तट से चलकर पश्चिम और दक्षिणी युरोप तथा उत्तरी अफ्रीका में जा बसे। स्लावोंने फिनोको हटाकर रूसमें उनका स्थान ले लिया। बुलगार कालासागर-

^१ Gen. Anth. p. 102 शैशवके बाद नाक स्पष्ट होती है, Gen. Anth. p. 101, वही और p 106.

तट छोड़ बल्कानमें चले गये। कितने ही हूण कबीले वर्तमान मंगोलियासे चलकर हूंगरीमें जा मगियार के रूप में बस गये। युरोप-निवासी तब तक बराबर चलते-फिरते ही दिखाई देने रहे, जब तक कि खेतों में वैयक्तिक संपत्ति का अधिकार स्थापित नहीं हो गया। जो बात युरोपके लिये हुई, एसिया उसका अपवाद नहीं रहा। इन्दोनेसिया के निवासी मलयू लोग पश्चिम की ओर प्रयाण करते-करते युरोपियन तुर्की तक चले गये। इस प्रकार किसी भी जाति का शुद्धताका दावा बिल्कुल झूठा है। हाँ, कभी-कभी आदिम मानव ऐसे स्थान पर भी पहुँच गया, जहाँ प्राकृतिक बाधाओं के कारण वह बाहरसे सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सका। उदाहरणार्थ, ग्रीनलैण्ड के स्मि-सोड इलाके के एस्किमो और तस्मानिया के मूल निवासी। सहस्राब्दियोंसे दूसरी जातियोंके सम्पर्कसे वंचित होनेके कारण इन जातियों ने अपने विशेष शरीर-लक्षण विकसित कर लिये। एक समयकी सकरित या मिश्रित जातियाँ भी अधिक समय तक एक जगह अलग-अलग रहकर विशेष लक्षण विकसित करने में समर्थ होती हैं। अधिक देशोंमें बिखरी होनेपर भी प्रायः अपनी जातिमें ही सन्तानोत्पत्ति करनेके कारण युरोपीय यहूदी लोगों की शुकाकृति नाक उनका साफ परिचय देती है।

३ रक्त-भेद*

वर्तमान शताब्दीमें चिकित्सा शास्त्रकी खोजोंमें रक्त-परीक्षाका भी एक स्थान है। मानव-जातिके रक्तका ओ० ए० बी० और एबी इन चार समूहोंमें वर्गीकरण हुआ है। रक्तको किसी बीमारके शरीरमें डालते वक्त इस वर्गीकरणका ध्यान रखना आवश्यक होता है, क्योंकि जहाँ ओ रक्त किसी भी आदमीको दिया जा सकता है, वहाँ ए रक्तको बी में डालनेसे हानि होती है। शुद्ध अमेरिकन-इंडियन लोगोंमें शुद्ध ओ रक्त पाया जाता है। आस्ट्रेलियन मूलनिवासियोंमें भी ओ रक्त ही अधिक मिलता है और बाकीके ए रक्तवाले होते हैं। सारे एसियाको लेनेपर २० से ३५ सैकड़ा ही ओ रक्त मिलता है। पश्चिमी युरोपमें बीकी अपेक्षा ए रक्तवाले ज्यादा मिलते हैं, किन्तु पूर्वी और दक्षिणी युरोपमें बी की प्रधानता देखी जाती है। सीमान्त पर रहनेवाले कितने ही लोगोंमें ए बहुत कम मिलते हैं और बी रक्तवाले ही अधिक होते हैं। विद्वानोंका कहना है, कि ओ रक्त, चूँकि सर्वत्र मिलता है, इसलिए शायद यही मूल और सबसे प्राचीन रक्त हो। बीकी अपेक्षा ए रक्तको आदिम जातियोंमें ज्यादा पाया जाता है, इसलिये ए अधिक पुराना है। इस प्रकार रक्तकी आनुवशिकतासे हम पीछेकी ओर बढ़ते-बढ़ते पुरा-पाषाणके मानवों तक पहुँच सकते हैं किन्तु तुलनात्मक परीक्षाके लिए हमारे पास साधन नहीं है। एक विद्वानका कहना है, कि यूरेसियाई जातियोंका चौड़े सिरवाला होना बी रक्तकी उत्पत्ति और प्रसारके कारण हुआ। राइन-लैण्डकी अपेक्षा बर्लिन और लाइपजिगमें एकी अपेक्षा बी रक्त अधिक पाया जाता है। गल्बे नदीके पूरब पश्चिमकी अपेक्षा और भी अधिक बी मिलता है। बी रक्तकी अधिकताका कारण वहाँके लोगोंका यूरेसियाई (स्लाव) लोगोंके साथ अधिक सम्मिश्रण है। रक्तका वर्गीकरण का चिकित्सा-शास्त्रसे बाहर नृतत्त्वीय अनुसन्धानमें भी उपयोगी हो चला है, किन्तु उससे हम

*पेर्वोबित्तोये ओबश्चेस्त्वो (प प एफिमैको)

प्राचीनतम मानव-जातियोंके बारे में बहुत अधिक नहीं बतला सकते हैं। मुस्तेर, क्रोमेओ आदि कितनी ही प्राचीन जातियोंकी मगोलायित आकृति शायद उन्हें ए वर्गका बतलाती है।

स्रोत ग्रन्थ

- 1 History of Anthropology, pp 36-37
- 2 L' Humnité Préhistorique (J de Morgan)
- 3 General Anthropology (Boas)
- 4 Our Early Ancestors, (M C Burkitt)
- 5 Progress and Archaeology (V G. Childe)
- 6 Anthropology I, II (E. B Taylor, London 1946)
- 7 In the Beginning (G Elliot Smith, London. 1946)
- 8 Geology in the life of man (Duncan Leith, London 1945)
- 9 Man the verdict of Science (G N Ridley, London. 1946)
- 10 History of Anthrpology (A. C. Haddon)

अध्याय ४

मध्य-एशिया के आदिम मानव

मध्य-एशियाकी अपार बालुकाराशि (प्यासी भूमि, कराकुम, किजिलकुम, तकलामकान और गोबी) का पूरी तौरसे अनुसंधान अभी ही शुरू हुआ है, जब कि ये रेगिस्तान कम्प्युनिस्त शासनमें आये। नृतत्व-विशारदोंको बहुत आशा है, कि मानवके आरम्भिक इतिहासकी कुजी शायद इन्ही रेगिस्तानोंसे मिले, जो कि किसी समय हरे-भरे घासके मैदान अथवा वृक्ष-वनस्पतिसे आच्छादित वनखड थे। पश्चिमी मध्य-एशियामें सबसे प्राचीन मानव मुस्तेरके अवशेष दो जगह मिले हैं। इरतिसके तटपर कुरदाइ में मध्य-पुरापाषाण युगका मानव रहता था, लेकिन सबसे अधिक महत्वपूर्ण है दक्षिणी उज्बेकिस्तान में तेशिकताशका गुहा-मानव।

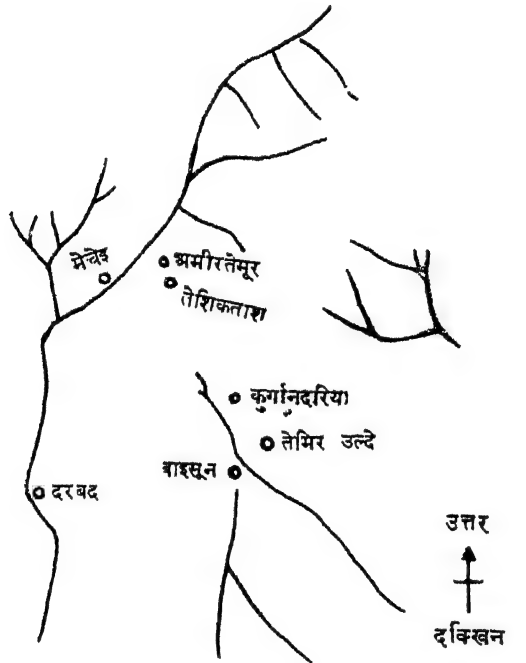
§१ मध्य-पुरापाषाण-युग

१ तेशिकताश मानव

पामीर का ही पश्चिमकी ओर बढ़ा हुआ पर्वतीय भाग उज्बेकिस्तान गणराज्यमें समरकन्दसे लेकर तिरमिजके उत्तर तक फैला हुआ है। इसी पर्वतमालाके दक्षिणी भागमें दरबदका प्रसिद्ध गिरिद्वार हैं, जो स्वेन-चागकी यात्राके समय (६३० ई०) देशकी प्रतिरक्षाका बहुत जबरदस्त साधन समझा जाता था। इस सँकरे गलियारेमें लोहेका फाटक लगा हुआ था। अब उसका वह सैनिक महत्व नहीं रह गया है, और न समरकन्द बुखारासे आनेवाले यात्रीके लिए दरबदसे गुजरना आवश्यक है। लेकिन दरबद होकर जानेवाली शीराबादकी छोटी नदी अपना एक दूसरा महत्व रखती है। दरबदसे कुछ मील उत्तर इसी नदीके दाहिने किनारेपर कत्ताकुर्गनका विशाल गाँव है, जिससे कुछ और ऊपर जानेपर नदीके बाँये तटपर अमीर-तैमूर स्थान है। शायद अमीर-तैमूर यहाँ आया हो, किंतु अमीर-तैमूरके आनेसे पचासो हजार वर्ष पहले एक दूसरी ही मानव-जातिका यहाँ डेरा था, जो तैमूरसे कहीं ज्यादा खूनखार थी। अमीरतैमूरके बिल्कुल पास की पहाड़ीमें तेशिकताशकी गुहा है। यही मुस्तेर मानवके अवशेष जून १९३८में मिले।^१ यह स्थान उज्बेकिस्तानके बाइसून जिलेमें है। अमीर-तैमूरमें भी मध्य-पुरापाषाण युगके अस्त्र मिले हैं, किंतु वहाँ मानव-शरीरावशेष नहीं मिले। एशियामें यहाँसे पूरब मुस्तेर मानवका अवशेष और कहीं नहीं मिला है। यह गुफा १५-१६ सौ मीटर लंबी और १५ से २० मीटर चौड़ी है। सोवियत पुरातत्ववेत्ताओंने इसकी सुव्यवस्थित रीतिसे खुदाई करके बहुत सी ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त की है, जिनमें पाषाण-अस्त्र (नुकलेयस, छुरे) तथा बहुत प्रकारके जानवरोंकी हड्डियाँ हैं। जंगली बकरियोंकी विशाल सींगें काफी परिमाण में प्राप्त हुई हैं। इस गुफाके वर्तमान घरातलके नीचे दस स्तरोंका पता लगा है। ऊपर से तीसरे

^१ नुदी उज्बेकिस्तान्कओ अकदमी नाउक (ताशकद १९४०, पृष्ठ ५४२-४)

तलम ५० मीटर लंबा एक चबूतरा-सा मिला, जिसपर बहुतेरे बड़े-बड़े पत्थर पड़े हुए थे। यहाँ बकरीकी सींगों तथा पत्थरके हथियार बनानेके साधन प्राप्त हुए। नवे स्तरके तीसरे चौथे तथा दसवें स्तरके भी तीसरे चौथे चतुष्कोणोमें सबसे अधिक सामग्री मिली, जिनमें पाषाण-अस्त्रोंके साथ दो बकरीकी सींगे तथा बहुतसे जंगली जानवरोंकी हड्डियाँ मिली। मालूम होता है, पत्थरके हथियारोंका मिस्त्रीखाना यहीं पर था। सबसे महत्वकी चीज जो यहाँ मिली, वह थी आदमीकी

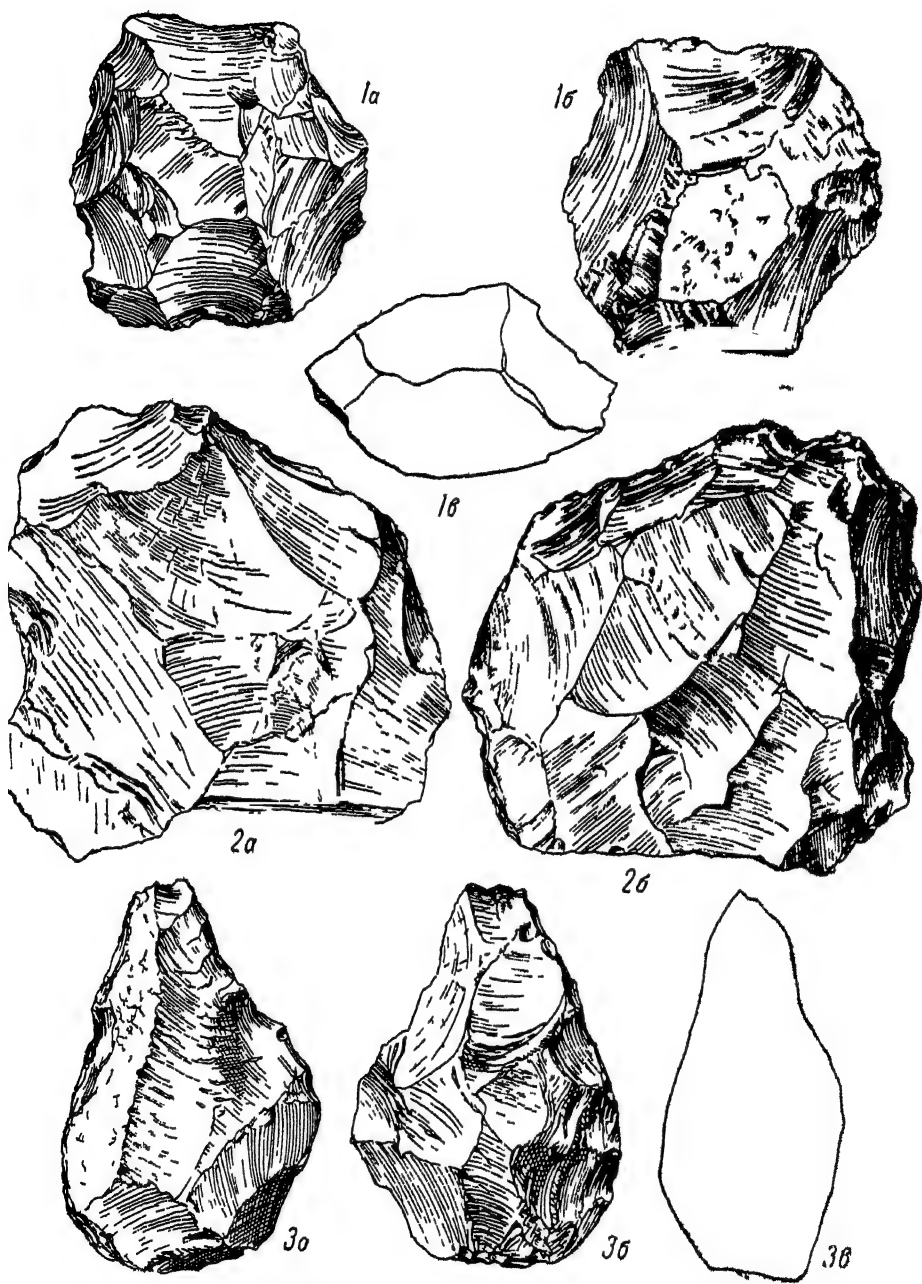


७. तेशिकताश गुहा

हड्डी, खोपड़ी, जिसमें नेयण्डर्थल या मुस्तेर मानवके शरीर-लक्षण स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। खोपड़ी बहुत मोटी थी, इसका ललाट नीचा था, भौकी हड्डी उभड़ी हुई थी, दाँतोमें कुकुरदंत छोटा था यद्यपि और दाँन बहुत बड़े थे। मुँह बहुत बड़ा था, पर टुडुकी अभाव था।

तेशिकताश गुफामें मिली हड्डियोंके देखनेमें पता लगता है, कि वहाँ सबसे ज्यादा सिबेरीय बकरीका इस्तेमाल होता था, जिसकी ६४६ सख्याका पता लगा है। इसके अतिरिक्त ५ पक्षी, २ घोड़े, २ सूअर, १ पार्दसिंग तथा ५, ७ और जानवरोंका पता लगा है। हड्डियोंसे मालूम होता है, कि तेशिकताश मानवका सबसे प्रधान खाद्य सिबेरीय बकरी थी, उसीका शिकार उसकी प्रधान जीविका थी।

इस खोपड़ीका कपालक-क्षेत्र १४६० घन-सेंटीमीटर था, जबकि आजकलके शिशुका ११५० से १५०५ घन-सेंटीमीटर होता है (चिम्पाजीका कपालक-क्षेत्र ३५०, ओराङ्गुतानका ३८० और गुरिल्लाका ४०० घन-सेंटीमीटर होता है)। यह खोपड़ी १५-१६ सालके लड़केकी थी। गुहामें मे बहुत सारे पाषाणास्त्र और हड्डियाँ मिली, इसलिए आशा हो सकती थी,



८ तेशिकताश मानवके पाषाणास्त्र p १८,

कि वहाँ और भी खोपड़ियाँ या शरीरावशेष होंगे। किंतु मुस्तेर मानवके अवशेष उतने सुलभ कही भी नहीं है। नृतत्व-विशारदोंका कहना है, कि तैशिकताश मानव पेकिंग मानव और आधुनिक मानवके बीचका था।

(१) जीवनचर्या

आजसे २५-३० हजार वर्ष पहले चतुर्थ हिमयुगके अतमे लुप्त इस मुस्तेर मानवकी जीवन-यात्रा कैसी थी, इसका कुछ पता उसकी गुफामें मिली हड्डियाँ बतलाती हैं और कुछ का अनुमान हम तस्मानिया के मूल-निवासियोंकी जीवन-यात्रासे कर सकते हैं। तस्मानियाके लोग दक्षिणी उज्बेकिस्तानके बराबर ही शीतोष्ण (प्रायः ४० डिग्री अक्षांश)में रहते थे, यद्यपि एक दूसरेसे भिन्न (दक्षिणी और उत्तरी गोलार्ध) में होनेके कारण उनकी ऋतु एक दूसरेसे उलटे कालमें पड़ती थी। तैशिकताश मानवको जहाँ हिमयुगकी कठोर सर्दियोंमें जीवन-सघर्ष करना पड़ रहा था, वहाँ पिछली शताब्दीमें अँगरेजोंकी कृपासे जीवनसे मुक्त हो जानेवाले तस्मानियन लोगोंको उतनी सर्दीका मुकाबिला नहीं करना पड़ता था, तो भी वह ऐसी जगह पर थे, जहाँ कभी-कभी जाड़ोंमें बर्फ पड़ जाती थी। आबेल तस्मानने १६४२ ई० में आस्ट्रेलियाके दक्षिणमें अवस्थित इस द्वीपका पता लगाया था, जिसके ही नाम पर उसका नाम तस्मानिया^१ पड़ा। १७७७ ई० में कप्तान कूक जब तस्मानिया पहुँचा, तो उसने वहाँके लोगोंको पुरापाषाण-युगमें पाया। जान पड़ता है, तस्मानियन लोग एसियामें मलाया-जावा होते आस्ट्रेलिया पहुँचे थे। उस समय आस्ट्रेलिया शायद एसियासे स्थल द्वारा मिला हुआ था। प्रबल मानव-शत्रुओंके भयके मारे तस्मानियन लोग भागते भागते इस द्वीपमें पहुँच हजारों वर्षोंसे अपना सरल जीवन बिता रहे थे। दूसरे बर्बर मानव-शत्रुओंने उन्हें भागकर जान बचानेका अवसर दिया था, किंतु सभ्य अँगरेज उतनी दया दिखलानेके लिए तैयार नहीं थे। अस्तु, तस्मानिया द्वीपमें पहुँचकर ये मानव सपकसे वंचित हो अपना पुराना जीवन बिता रहे थे, जबकि श्वेतांग नई भूमियोंकी खोज करते उनके पास पहुँचे। उस समय वह लोहा या किसी धातुका हथियार इस्तेमाल नहीं करते थे। पुरापाषाणयुगीन मानवकी तरह उनके हथियार छिने चकमक पत्थरके होते थे। पाषाण कुठारको भी बनाना नहीं जानते थे, जिसे कि शैल मानव बना सकता था। वे आमतौरसे नगरे रहा करते थे, किंतु कभी-कभी चमड़े भी पहनते थे। कागरूके चमड़ेमें बिछौनेका काम लेते थे। वर्षा और गर्मीमें उनके स्वास्थ्य पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता था। उनका घर खाली शाखाओं और घासोंका बनाया हुआ आड होता था, जिसके ऊपर छत डालनेकी आवश्यकता नहीं समझी जाती थी। अँगरेजोंने धीरे धीरे तस्मानियाके सुन्दर द्वीपको निगलकर अधिकांश निवासियोंको अकाल ही काल-कवलित करा दिया। बचे हुए निवासियोंको १८३१ ई० में पासके फिलण्डर द्वीपमें निर्वासित कर दिया दिखते हुए भोपड़ियों में रख दिया गया। खुली जगहमें वर्षामें भीगते और जाड़ोंमें काँपते उन्हें कोई रोग नहीं हुआ था, किंतु अब उन्हें सर्दी और जुकाम होने लगा। अपनी प्राकृतिक अवस्थामें यह लोग शरीर पर चर्बी और गेरू पोता करते थे, जिससे शायद सर्दी-गर्मीका बुरा प्रभाव नहीं पड़ता था।

^१ Everyday Life in the Old Stone Age, pp. 40-44

तस्मानियन लोगोके जीवनसे हमें पता लग सकता है, कि आजमें ५० हजार वर्ष पहले मध्य-एशियाके प्राचीन निवासी कैसे रहते थे। तस्मानिय लोग घोघे-कौड़ी आदिकी मालाके बड़े शौकीन थे और तेज चकमक पत्थरसे काट कर गोदना भी गोदाने थे। आहारकी खोजमें वह बराबर एक जगहसे दूसरी जगह घूमते रहते थे। कितनी ही बार बच्चोंको भी आहारकी कमीके कारण भूखे मरनेके लिए छोड़ दिया जाता था, वही बात विकलांगों और अधिक बूढ़े आदिमियोंकी भी थी। कड़ी लकड़ीके बने हुए सीधे-सादे भालेसे वह कागड़का शिकार करते थे। लकड़ीको काटकर उसे चकमक से छील लेते थे। यदि लकड़ी टेढ़ी होती तो उसे आगमें गर्माकर मीथा करते थे। एक छोरको आगसे जला लेते थे, फिर उसे छीलकर तेज बना लेते। यह छोर उभरी ओर होता था, जिधर लकड़ी ज्यादा मोटी अतएव भारी होती थी। उनके भाले ११-१२ फुट लंबे होते थे। एक ओर भारी होनेकी वजहसे उस ओर सामने करके फेंका हुआ भाला लक्ष्यपर मीधे जाता था। तस्मानिय शिकारी ४०-५० गजके फासलेसे काँगरूको मार सकता था। वह जिस तरह चिर-अभ्यासके कारण भालेका ठीक निशाना लगा सकता था, वैसे ही ढाई फुट लंबे मोटे डंडे या पत्थरोंको भी फेंककर शिकार कर सकता था। उनकी आँख, कान और घ्राणकी शक्ति बड़ी तीव्र थी, जिसमें अपने शिकारका अच्छी तरह पीछाकर सकते थे। जो भी पशु-पक्षी उनके हाथमें आता, उसे लकड़ीकी आगमें डाल अधपका करके बालों और पंखोंको झुलसा कर चकमकके चाकूसे काटकर टुकड़े-टुकड़े कर देते। नमकका काम थोड़ी-सी लकड़ीकी सफेद राख देती थी। वह केवल भुना हुआ मांस खाते थे, उबालनेके लिए उनके पास कोई बर्तन नहीं था।

भोजनके बारेमें तेशिकताश मानवकी भी यही अवस्था रही होगी। तेशिकताश मानव गर्मियोंमें अपनी गुफासे बहुत दूर-दूर तक भटकता रहा होगा। उसको ऐसी नदी, जलाशय भी मिलते होंगे, जिनमें मछलियाँ रहती थी। शायद इनकी स्त्रियाँ भी तस्मानिय स्त्रियोंकी भाँति पानीमें गोता लगाकर या वैसे ही मछलिया पकड़ती रही होगी। बसी या जालका पता तस्मानिय लोगोको नहीं था। पुरुषोंका काम शिकार खेलना था। तस्मानिय स्त्रियाँ दूसरा काम करती थी। वह अपने पुरुषोंके पास खाते वक्त बैठ जाती, वह अपनी आज्ञाकारिणी स्त्रियों को अपने मांसमेंसे काटकर एक टुकड़ा थमा दिया करते थे। तस्मानिय पुरुष लकड़ीके बोटोंको नावकी तरह इस्तेमाल करते थे, तीन चार आदमी उस पर बैठ कर लकड़ीके भालोंसे मछली मारते थे। यही भाले नावकी लग्गीका भी काम देते थे।

वह व्यापार या चीजोंकी अदला-बदलीका ज्ञान नहीं रखते थे, न कृपि जानते थे और न पशुओंका पालन ही। उनके यहाँ न कोई सामन्त-राजा था, न कानून और नहीं कोई नियमित सरकार। अगर बीमारी होती, तो थोड़ा-सा खून निकालकर चिकित्सा कर लेते थे। मुर्दोंको कभी-कभी वह गाड़ देते थे और कभी-कभी किसी पेड़के कोटरमें रख देते थे। यदि जलाते तो अवशेष को गाड़ देते, लेकिन खोपड़ीको या तो सस्मारकके तौरपर रख लिया जाता या पीछेसे कहीं अलग गाड़ दिया जाता था। उनका विश्वास था, कि मनुष्य मरनेके बाद अपने पितरोंके साथ एक आनन्दमय द्वीप में रहता है। झगड़ा खड़ा होने पर उनके न्याय तरीका बड़ा विचित्र था “दोनों पक्ष वाले पास आकर आमने सामने से छातीके ऊपर अपने दोनों हाथोंको रखे अपने सिरको एक दूसरेके चेहरेपर हिलाते बहुत क्रोधपूर्ण चीखनेकी आवाज तब तक करते रहते, जब तक कि उनमेंसे एक थक नहीं जाता या

उसका क्रोध शांत नहीं हो जाता था ।” शायद सहस्राब्दियों के तजर्बे के बाद उन्हें युद्ध की जगह यह तरीका पसंद आया । तस्मानिय जातिका अंतिम पुरुष त्रुगनिनि १८७७ ई० में मरा, जिसके साथ पुरापाषाण युग की इस प्राचीन जातिका ख़ातमा हो गया ।

(२) भाषा^१

प्राचीन मानव ने अपने पत्थर के हथियारों या हड्डियों के रूप में जो अवशेष छोड़े हैं, उनसे उनके इतिहास पर सबसे अधिक प्रकाश पड़ा है । पर, भाषा द्वारा मानव के प्रागैतिहासिक काल पर उससे भी अधिक प्रकाश पड़ा है, जितना कि शरीर के ढाँचे या हथियारों के अध्ययन से । शरीर के ढाँचे में भिन्न-भिन्न जातियों के सभी व्यक्तियों में वह भिन्नता नहीं देखी जाती, जो कि भाषा के अध्ययन से स्पष्ट दिखाई पड़ती है । भाषाने एक दूसरे में बहुत दूर निवास करने वाली जातियों के पुराने संबंध का पता दिया । अफ्रीका के पास के मदगास्कर द्वीप के निवासियों का संबंध मलय लोगों से है, इसका किसको पता लगता, यदि भाषाने इसकी सूचना न दी होती । भारतीय आर्यों का, अंगरेजों, जर्मनों, और रूसियों से वंश-संबंध है, इसका पता नहीं लग सकता था, यदि भाषाने इसका संकेत न किया होता । लेकिन जिह्वा, तालु, ओठ के अतिरिक्त स्वर-यंत्र के काफी विकास होने पर ही मानव ठीक से वर्ण-उच्चारण कर सकता है । स्वर-यंत्र के विकास का पता मस्तिष्क के भीतर के उस क्षेत्र के विकास में लगता है, जहाँ भाषण-यंत्र पर नियंत्रण होता है । निम्न-पुरापाषाण युग के मानव—जावा, पेकिंग और हैडलबर्ग—के स्वर-यंत्र का विकास इतना नहीं हुआ था, कि वह वर्णों का अच्छी तरह उच्चारण कर सकते । मुस्तेर मानव इस विषय में कुछ आगे बढ़ा हुआ था, किंतु वर्तमान भाषा-वंशों में से किसी का उसके साथ संबंध जोड़ना बहुत कठिन है । भाषा भावों के संकेत का साधन है । शब्द, स्पर्श, और गति (अंग-परिचालन) द्वारा प्राणी एक दूसरे को अपने भावों से अवगत कराते हैं । कुत्ता अपने स्पर्श और भिन्न-भिन्न प्रकार की अंग-गति से ही अपने भावों को नहीं व्यक्त करता, बल्कि उसके शब्दों में भी दुःख, रुवाई होने, प्रार्थना, आग्रह, खतरा या आक्रमण के भावों को प्रकट करने वाले भिन्न-भिन्न स्वर होते हैं । तो भी वनमानुष जैसे बहुत ही विकसित प्राणियों में भी किसी प्रकार की भाषा का पता नहीं लगता । मनुष्य अन्य प्राणियों की तरह संकेत द्वारा भी अपने भावों को व्यक्त करता है और वचन द्वारा भी । यह कहना कठिन है, कि इन दोनों में पहले किसका विकास हुआ । आज भी एक दूसरे की भाषा से अपरिचित व्यक्ति अथवा गूंगे-बहरे संकेत द्वारा अपने भावों को प्रकट करते हैं । भाषा के विकास के लिए स्वर-यंत्रों का अधिक विकसित होना अवश्य है । लेकिन स्वर-यंत्र के भी विकसित होने पर भाषा का विकास तब तक नहीं हो सकता, या भाषा तब तक नहीं फूट निकल सकती, जब तक कि मस्तिष्क में उसका नियंत्रक-यंत्र भी विकसित न हो चुका होता । तोता-मैना इसके उदाहरण हैं । अपने स्वर-यंत्रों के विकास के कारण वह मनुष्य-जैसी भाषा बोल तो सकते हैं, किंतु नियंत्रक स्थान के अभाव के कारण केवल मनुष्य के स्वरों की नकल भर है । धीरे-धीरे बोलता आदमी ० ०७ (५००) सेकेंड में एक स्वर बोल सकता है, जल्दी बोलने में और भी कम

^१ Gen. Anth. pp 135-40

समय लगता है। इतनी जल्दी और बारीकी से शब्द को निकालना मनुष्य के उपर्युक्त यत्र की करामात है।^१

भाषा का लिपिबद्ध होना बहुत पीछे हुआ। मिस्र और अर्सरिया की भाषाएँ आज में ४-५ हजार वर्ष पहले लिपिबद्ध हुई। मिस्र में अक्षर-सकेत न हो अर्थ-मकेत रहने के कारण उच्चारण का पता नहीं लग सकता। उच्चारण का पता तो आज की हमारी लिपिबद्ध भाषाओं की पुस्तकों द्वारा न भी पूरा ही हो सकता। एक-एक स्वर के उच्चारण में जहाँ व्यक्ति में अन्तर देखा जाता है, वहाँ स्वरों के उतार-चढ़ाव आदि के सबध में तो आज भी हमारी लिपियाँ में कोई विशेष संकेत नहीं है। देश और काल में दूरस्थ एक वंश की भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से हमें उनका सबध मालूम होता है, तथा यह भी कि उनमें कितना परिवर्तन हुआ है। भाषाओं का इतिहास यह स्पष्ट बतलाता है, कि उनका उच्चारण, अर्थ और व्याकरण-नियम सभी परिवर्तन-शील हैं। सांस्कृतिक स्तर में जब भारी परिवर्तन आता है, तो इस परिवर्तन की गति भी तीव्र हो जाती है। सांस्कृतिक विकास जब एक तल पर रुक सा जाता है, तो भाषा में परिवर्तन भी बहुत कम होता है। हिन्दी-यूरोपीय भाषा-वंश की स्लाव-जैसी भाषाओं का सश्लिष्ट (सेन्थेटिक) रूप अब तक मौजूद रहना यही बतलाता है, कि काफी समय तक वह उसी सांस्कृतिक स्तर पर रह गई। हम जानते हैं कि स्लाव जातियों के पूर्वज (शक) बहुत पीछे तक धूमन्तू पशुपाल रहे और अपने दक्षिण के पड़ोसियों के लौह-युग में चले जाने के बाद भी कुछ शताब्दियों तक पिन्तल-युग में ही रहे। भिन्न-भिन्न भाषा बोलनेवाले लोगों के साथ घनिष्ठ संपर्क होने पर भी भाषा में तेजी से परिवर्तन होता है। यह गलत धारणा है कि लिपिबद्ध भाषा ही में परिवर्तन की गति मंद होती है। ग्रीनलैंड और मेकेंजी नदी के एस्किमो लोग अत्यन्त प्राचीन समय में एक दूसरे से अलग हो गये, किन्तु उनकी आजकल की बोलियों में बहुत कम अन्तर पाया जाता है। अफ्रीका की बन्तू बोलियाँ भी देश और काल के भारी अन्तर के बाद भी बहुत कम परिवर्तित हुईं। यह भी इसी तत्त्व को बतलाती है, कि सांस्कृतिक विकास की गति मंद होने पर भाषा में परिवर्तन की गति भी धीमी हो जाती है। दूसरी तरफ हम हिन्दी-यूरोपीय भाषाओं को देखते हैं, कि यूरोप से लेकर एशिया तक की उनकी भिन्न-भिन्न भाषाओं और बोलियों में कितनी तेजी के साथ परिवर्तन हुआ।

परिवर्तन में स्वर सबसे आगे रहती है, लेकिन व्यंजन भी कम परिवर्तित नहीं होते। भाषा के यह बाहरी कलेवर ही तेजी से परिवर्तित नहीं होते, बल्कि उनके अर्थों में भी भेद हो जाता है और कभी-कभी तो वह बिल्कुल उल्टा अर्थ देने लगते हैं। हिन्दी और बँगला में उपन्यास में हम कथाग्रथ का अर्थ लेते हैं, किन्तु दक्षिण भारत की बोलियों में उसका अर्थ है भाषण।

जिस तरह यह कल्पना अवैज्ञानिक है, कि एक ही जोड़े से दुनिया की सभी मानव जातियाँ पैदा हुईं, उसी तरह एक भाषा से दुनिया की भाषाओं का विकास मानना भी गलत है। यद्यपि आज चार पाँच भाषा-वंश ही पृथ्वी के अधिकांश देशों और लोगों में बोले जाते हैं यूरोप, अमेरिका और एशिया के भी बड़े भाग में हिन्दी-यूरोपीय भाषा-वंश की बोलियाँ चलती हैं। तुर्की चीनी तुर्किस्तान से लेकर तुर्की तक में बोली जाती है। चीनी भाषा भी एशिया के बहुत बड़े भूखण्ड में बोली जाती है। मलय भाषा-वंश फिलिपाइन से मदागास्कर तक फैला हुआ है। अफ्रीका के

^१ Language its Nature, Development and origin (O Jasperson, 1923)

बहुत बड़े भाग में बतू भाषा-वंश का राज्य है। लेकिन एक-एक भाषा का इतना विस्तार नव-पाषाण युग ही नहीं, बल्कि और पीछे की घटना है। यूरोप के बहुत से भागों तथा भूमध्यसागर के निकटवर्ती देशों में बहुत पीछे तक अ-हिन्दूयूरोपीय भाषाएँ बोली जाती थी। दक्षिणी अफ्रीका में बन्तू भाषा का प्रचार हाल के समय में हुआ है। तुर्की भाषा-वंश पाचवी सदी ई० में पश्चिमी मध्य-एशिया में जरा-जरा फैलने लगा और आधुनिक तुर्की विशेषकर उसके यूरोपीय भाग में तो, पंद्रहवी सदी में उसका प्रवेश हुआ। अरबी का मिस्र और मराको की भाषा होना पैगंबर मुहम्मद (मृत्यु ६२२) के बाद की बात है। अनुसंधान से पता लगता है, कि प्राचीन काल में भाषाओं का बहुत अधिक विकेंद्रीकरण था और आज से कहीं अधिक भाषाएँ उस समय बोली जाती थी। उनमें से कुछ सदा के लिए लुप्त हो किसी एक भाषा के अधिक फैलने में सहायक हुईं। सांस्कृतिक इतिहास हमें बतलाना है, कि उच्च संस्कृतियाँ अल्प-विकसित संस्कृतियों को अपने जैसा बनाने में सफल होती हैं। उच्च संस्कृति पर जल्दी पहुँचने के लिए अल्प-विकसित लोगों को जो परिवर्तन करना पड़ता है, उसमें पराई भाषा का स्वीकार भी शामिल है। भाषा वस्तुतः सांस्कृतिक अवस्था के विकास का दर्पण है। सांस्कृतिक विकास के साथ भाषा का विकास अनिवार्य है, और इसी परिवर्तन में जातियों की तरह कितनी ही भाषाओं का नाम शेष हो जाना भी आवश्यक है। भाषा-वंश बतलाता है, कि उनकी भाषाओं को बोलनेवाले खास मानव-वंश रहे होंगे अर्थात् एक मानव-वंश की एक भाषा रही होगी, किंतु भाषा रक्त के संबंध को सर्वदा निश्चित नहीं बतलाती। कितनी ही जातियाँ अपनी भाषा छोड़ दूसरी भाषा स्वीकृत कर लेती हैं। अमेरिका के निग्रो अपनी भाषा भूल गये हैं, और वह अब अँगरेजी बोलते हैं। पूर्वी जर्मनी के अधिकांश निवासी स्लाव-जाति के हैं, लेकिन अब वह जर्मन भाषा बोलते हैं।

५२ मध्यपाषाण-युग (१२००० वर्षपूर्व)

पहले युगों की अपेक्षा इस युग के मानव के अवशेष पश्चिमी मध्य-एशिया में बहुत जगहों पर मिले हैं। निम्न मिरदरिया में तुर्किस्तान-शहर में इसका पता लगा है। कराताउ, और म्यूकम (जबुलिजिला), बेत्पक् दला (अल्माअता) भी मध्य-पाषाण युग के अवशेषों के लिए मशहूर हैं। अराल समुद्र के पाम भी इस युग के मानव के अवशेष पाये गये हैं। किजिलकुम और कराकुमकी विशाल मरुभूमियाँ आज सोवियत पुरातत्ववेत्ताओं की आखेट-भूमि बन गई हैं। कोई आश्चर्य नहीं, यदि वहाँ ऐसे मध्यपाषाण युगीन मानव के अवशेष और भी मिल जायँ, जिनसे उस युग के इतिहास पर काफी प्रकाश पड़े। यह तो हमें मालूम है, कि आज से १०-१२ हजार वर्ष पहले से ही, जब मध्यपाषाण-युग का मानव मध्य-एशिया में रहता था, उस समय का जलवायु वहाँ के मानव के लिए अत्यन्त प्रतिकूल सिद्ध हो रहा था। हिमयुग के पश्चात् समुद्र और नदियों के सूखते जाने से यहाँ की भूमि अत्यन्त सूखी होती। जंगलों और घास के मैदानों को विकराल रेगिस्तान अपने पैरों में हजम करते गये। मध्य-एशिया के मानवों के लिए यह सत्यानाश की घड़ी थी। उसके लिए दो ही रास्ता था, या तो वहाँ रहकर लुप्त हो जायँ अथवा अन्यत्र चले जायँ। यूरोप की अवस्था इस वक्त बड़ी अनुकूल थी, इसलिए

उनका उधर जाना स्वाभाविक था। भारत में इस युग के अवशेष ऊपरी गंगा से कच्छ तक मिले हैं।^१

जैसा कि नाम से ही पता लगता है, मध्यपाषाण युग पुरा पाषाण और नव-पाषाण के बीच का समय है। यह मानव-प्रगति में बहुत शिथिल सा समय था। इस समय प्रवाह रुक सा गया था, उसका खुलना नव-पाषाण युग ही में देखा जाता है (यह वही समय था, जबकि यूरोप में अज़िल मानव रहता था)। मध्यपाषाण-युगीन मानव की जीविका का माधन फल-मत्तय तथा पशु और मछली का शिकार था। अभी केवल कुत्ता मनुष्य का पालतू साथी बन सका था। ग्राम्य पशुओं में यही वह जानवर था, जो मनुष्य के घनिष्ठ संपर्क में सबसे पहले आया और आज भी उसकी स्वामि-भक्ति वैसी ही देखी जाती है।

मध्यपाषाण-युगीन मानव उस समय के प्रतिकूल वातावरण में बेत्पक़दला (अलमाअता) से अराल और कास्पियन तट तक किसी तरह अपना जीवन व्यतीत करता रहा। प्रकृति की निष्ठुरता के कारण उसके लिए जीवन-सघर्ष बहुत कठिन था, जिसी के कारण वह यूरोप की अनुकूल भूमि की ओर गया। हिमयुग के अवसान हुए देर होने के कारण बहुत से पहाड़ हिममुक्त हो गये थे, जिसके कारण यातायात का बहुत सुभीता था। मध्यपाषाण-युग के बाद मध्य-एशिया के अनौ जैसे कितने भागों में, हम जिस मानव को पाते हैं, उसका सबब यदि खोपड़ी में से अल्पाइन जाति से मिलता है, तो सस्कृति में उसकी मसोपोतामिया और सिंध-उपत्यका से अधिक घनिष्ठता दिखाई पड़ती है। ऐसी अवस्था में यह कहना कठिन है, कि यहाँ रहनेवाली जाति मध्यपाषाण-युगीन मानवों की सतान थी, अथवा पश्चिमी मध्य-एशिया के दक्षिणी भाग को अधिक अनुकूल पाकर भूमध्य जातीय मसोपोतामिया और सिंध-उपत्यका के लोगों का यहाँ स्थायी प्रवेश हो गया। सिंध-उपत्यका या मसोपोतामिया से अनौ या अराल तट तक भूमध्य-जातीय लोग और उनकी सस्कृति के अवशेष मिलते हैं। हो सकता है, मध्यपाषाण युग में पश्चिमी मध्य-एशिया के पुराने निवासी यूरोप की ओर प्रवास कर गये हो और पीछे उनकी जगह भूमध्यीय लोग अपनी नवीन सस्कृति के साथ आ गये हो। यदि पहले के निवासियों में कुछ रह गये हो, तो वह भी धीरे-धीरे भूमध्यीय जाति के भीतर मिल गये।

^१ Gen Anth p 252 L' Humentite' Prehistorique p. 594 Our Early Ancesters pp 10, 75 Prehistoric India (S. Paggot) p. 36

स्रोत ग्रन्थः

- 1 श्रुदी उज्जेकिस्तान्स्कओ अकदमी नाउक (ताशकद १९४०)
2. Everyday Life in the Old Stone Age (Quinnell)
- 3 General Anthropolology (Boas)
- 4 Language its Nature, Development and Origin (O. Japelson, 1923)
5. Le' Humentite' Prehistorique (J De Morgan)
- 6 Prehistoric India (S Paggot)
7. Prehistoric India (P Mitra)
8. Language (L. Bloomfield, 1933)
- 9 Les Langues du Monde (A. Meillet and M Cohen, Paris 1924)
- 10 Researches to the Early History of Mankind (E. B. Taylor, London, 1878)

अध्याय ५

नवपाषाण-युग, अ-नवपाषाण-युग

मध्य-एशिया में मानव पाषाण-युग में नवपाषाण युग में ईसा पूर्व ५००० अर्थात् आज से ३००० वर्ष पूर्व आया। मध्य-एशिया की उपत्यका, सोगद (जरफशाँ-उपत्यका), तुपार (मध्य-वक्षु-उपत्यका), सारेज्म (निम्न वक्षु-उपत्यका) और अराल, मेर्व (मुर्गाब, उपत्यका) आदि बहुत से स्थानों में नव पाषाण युग के अवशेष मिले हैं।

§१ नवपाषाण-युग (५००० ई० पू०)

मध्यपाषाण युग में जनबाध के अत्यन्त मूल्य होने के कारण यहाँ के मानव को बहुत कष्ट हुआ। नवपाषाण युग में उसमें थोड़ा परिवर्तन अवश्य हुआ था, जिसके कारण प्रगति का अवरुद्ध मार्ग फिरसे खुला। नवपाषाण-युग की विशेषता है—१ कृषि, २ पशुपालन, ३ मृत्पात्र-निर्माण और ४ पीप-घिम कर बने पाषाणास्त्र। कृषि और पशुरक्षा के कारण अब मानव निरा धुमस्तू नहीं रह सकता था। उसे अब एक जगह बसने की आवश्यकता हुई—इसी समय पहले-पहल ग्राम आबाद हुए। मनुष्य सामाजिक जीवन की उस अवस्था में पहुँचा, जब कि वह एक जगह रहते हुए सामूहिक काम कर सकता था और सामूहिक तौर से अपने शत्रुओं से रक्षा भी कर सकता था। अब शिकार और फल-संचय ही जीविका के साधन नहीं रह गये थे। कृषि और पशुपालन में स्त्री का अब प्रधान भाग नहीं रह गया था, इसलिए सारे पुरापाषाण-युग में चली आई मातृसत्ता का लोप हुआ और उसकी जगह पुरुष-प्रधानता या पितृसत्ता की स्थापना हुई। शिकार (चाहे मछली का हो या प्राणियों का) ही मध्य-एशिया के मानव की पिछले युग में प्रधान जीविका थी। पहाड़ों में जगल था और वहाँ आज जैसे तब भी जगली सेब, नास्पाती, अगूर आदि फल होते थे। मानव को फल-संचय का भी अधिक सुभीता था, किंतु जिन जगहों पर नवपाषाण युग के मानव के अवशेष मिले हैं, वहाँ फल-संचय का सुभीता कम ही रहा।

१. कृषि

गेहूँ और जौ मध्य-एशिया के पहाड़ों में जगली अवस्था में मौजूद थे। आज भी लाहुल की सीमाके पार लदाख के रास्ते में नदी की कछारों के पास जगली गेहूँ और चने मिलते हैं और लदाख जानेवाले अपने घोड़े-खच्चरों को वहाँ दो-चार दिन ठहरकर चराना आवश्यक समझते हैं। गद्दी लोग तो हर साल वहाँ अपनी भेड़ों को मोटी करने के लिए ले जाते हैं। कोई आश्चर्य नहीं, यदि

कृषि के लिए नवपाषाण-युग के मानव ने गेहूँ और जौ को स्वीकार किया। आरम्भिक गेहूँ-जौ जगली गेहूँ जौ की तरह ही पतला होता रहा होगा। जगली अवस्था में पशु, जलवायु अनुकूल होने पर अधिक मोटे होते हैं, किंतु पालतू बनने के बाद उनकी हड्डियाँ पतली, तथा उनके कण सूक्ष्म हो गये। पर अनाज और फल मनुष्य के हाथों में पड़कर अधिक बड़े और स्वादु बने।

कृषि का अविष्कार कैसे हुआ, इसके बारे में विद्वान् कहते हैं शिकारी आदमी ने घास के अभाव में शिकार के पशुओं को दूसरी जगह जाने से रोकने के लिए पहले घास के तौर पर अनाज को बोना शुरू किया, जिसके खाद्य होने का परिचय उसे पीछे मिला। सूखे फल यद्यपि देर तक सुरक्षित रखे जा सकते हैं, किंतु जैसा कि पहले बताया, मध्य-एशिया में उमकी मुलभूता बहुत कम जगहों पर थी। शिकार के मास को जाड़ों में भले ही कुछ महीनों तक रक्खा जा सके, नहीं तो जल्दी न खतम करने पर उसके सड़कर खराब हो जाने का डर रहता है। उस समय के मानव को मास की दुर्गन्ध आज की जितनी नापसन्द नहीं थी, तो भी मास सड़ाकर खाना स्वास्थ्य के लिए हानिकर है, इसका पता तो उसको था ही। अनाज ऐसी चीज थी, जिसको बहुत समय तक रक्खा जा सकता था। करतल-भिक्षा तरतल-वास बिल्कुल अनिश्चितताका जीवन है। कृषि ने मानव को इसके बारे में बहुत-कुछ निश्चित कर दिया। चाहे मास के बराबर स्वाद और शक्ति अनाज में न भी हो, किंतु उसके द्वारा महीनों के लिए आहार की चिंता का दूर हो जाना मानव-प्रगति के लिए हुई बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। शिकारी मानव को प्रायः रोज शिकार की चिंता में दौड़ते रहना पड़ता था। अपने पत्थर के हथियारों द्वारा शिकार करने में सफल होना रोज-रोज नहीं हो सकता था। कितनी ही बार उसे सपरिवार भूखे रहना पड़ता था।

खेती करने के लिए अब उसे विशेष हथियारों की आवश्यकता हुई, जो सभी हथियार पत्थर के होते थे। पुरापाषाण-युग के मानव अपने पत्थर के हथियारों से पेड़ों को काट लेते थे, डालियों को काट छीलकर लकड़ी के भाले या डंडे बना लेते थे। मई १९५१ में (परमाणु-युग के भीतर) मुझे निम्न-पुरापाषाण युग के शिल्पका परिचय मिला। केदारनाथ ४ मील के करीब रह गया था। मेरे भार-वाहक तरुण नेपाली बलबहादुर ने पहिले डंडा रखने की आवश्यकता नहीं समझा था, लेकिन जब ६००० फुट से ऊपर की चढ़ाई में साँस फूलने लगी, तो उसे डंडे की आवश्यकता मालूम हुई। वृक्षों के क्षेत्र से हम लोग ऊपर थे, किंतु झाड़ियाँ अभी खतम नहीं हुई थी। झाड़ियों में डेढ़-दो इंच मोटे डंडे मिलने आसान थे, किंतु हमारे पास फल खाने के छोटे से चाकू के अतिरिक्त यदि कोई दूसरा हथियार था, तो रिवाल्वर, जिसमें डंडा नहीं काटा जा सकता था। बलबहादुर अपने पूर्वजों की तरह चौबीस घण्टे खुकुरी बाँधना धर्म नहीं समझता था। लेकिन, डंडे की भारी आवश्यकता थी। पुरापाषाण-मानव का चकमक का पाम में किसी तरह का छिला हथियार भी नहीं था। उसने नाले में पड़े बहुत से पाषाण-खंडों में से एक धारदार पत्थर उठा लिया, और कुछ ही मिनटों में झाड़ी में से एक अच्छा खासा मोटा डंडा काट लाया। उसी पाषाणास्त्र से उसने डंडे की कमचियाँ काटकर गाँठों को भी चिकना कर दिया, फिर छाल को छीलने लगा। मुझे डर लगा, कहीं वह इसमें अपनी कला न दिखाने लगे। मैं केदारनाथ जल्दी पहुँचना चाहता था। आकाश का कोई ठिकाना नहीं था, न जाने कब धूप छिप जाय और मैं फोटो लेने से वंचित हो जाऊँ। उसने ऊपर के थोड़े से भाग को छीलकर अपना काम खतम कर दिया और हम वहाँ से चल पड़े। मैं अपने पूर्वजों के इस युग से परिचित था,

किंतु बलबहादुर को इतिहास में क्या काम था, उसे तो काला अक्षर भैंस बराबर था। अवश्यकता आविष्कारकी मा होती है, इसका ही यहाँ पता नहीं लगा, बल्कि यह भी मालूम हुआ, कि पाषाण-युग के मिद्धहस्त मानव ने और भी अच्छी तरह से काटने, फाड़ने, छीलने आदि कामों को अपने पत्थर के हथियारों में किया होगा। कृषि-युग के लिए आवश्यक हल को उसने पहले ही बना लिया होगा, इसमें सन्देह है, किन्तु वर्षों से भीगी धरती को पत्थर की कुदाल से वह खोद सकता था। आगे चलकर उसने लकड़ी के किसी तरह के हल में चकमक पत्थर का फाल लगाया होगा। फसल काटने के लिए उसका पत्थर का हसिया मध्य-एसिया और दूसरी जगहों में बहुत मिला है। टेढ़ी लकड़ी में दाँत की तरह तेज धारवाले छोटे छोटे पत्थरों को जड़ दिया जाता था, यही उस समय का हसिया था। उठल काटने के कारण पत्थर के दाँत धीरे-धीरे अधिक चिकने हो जाते हैं, ऐसे दाँत बहुत में मिले हैं। कृषि के साथ तीसरा आवश्यक हथियार था आटा पीसने का ओखल-मूसल। आजकल ओखल-मूसल अधिकतर चावल कूटने या अनाज के छिलके को छुड़ाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। मैदान में लकड़ी और पत्थर दोनों के ओखल होते हैं, किंतु मूसल लकड़ी का ही हाता है। पहाड़ में पत्थर की ही ओखल होती है, जो प्रायः किसी चट्टान में गड़ा खाँदकर बनाई जाती है। आटा पीसने का साधन उस समय ओखल-मूसल नहीं, बल्कि खरन में अधिक समानता रखता था। ११वीं शताब्दी में भी तिब्बत के घुमन्तू लोग किसानों में बदल के लाये अपने अनाज को पत्थर की बड़ी कुडी में मोटे लोहे से पीसा करते थे। भारतीय विद्वान् स्मृतिज्ञान-कीर्ति (१०८० ई०) भेम बदल कर किसी पशुपाल के यहाँ चाकरी करते थे। एक दिन बड़ी रात तक मालकिन के हुक्म से आटा पीसते हुए उनको झपकी लग गई, और शिर लोढ़े में जाकर टकरा गया। सत्तू के लिए भूना जौ कुछ बिखर गया, जिसके लिए मालकिन ने गालियाँ देना जितना आवश्यक समझा, उतना बेचारे स्मृति के शिर में लगी चोट के लिए सान्त्वना देना जरूरी नहीं समझा। नवपाषाण-युग में अभी न हाथ की चक्की का पता था न पनचक्की का। उस समय यही पत्थर की कुडी-लोढ़ा या ओखल-मूसल काम देता था। आज भी तिब्बत आदि देशों में सत्तू खाने का रवाज है। इसमें आदमी रोट्टी बनाने के झण्ट से ही नहीं बच जाता, बल्कि जहाँ रोट्टी बनाने के लिए रोज-रोज लकड़ी जमा करने और चूल्हा फूँकने की तरद्दुद है, वहाँ एक दिन भूतकर सत्तू पीस लेने पर महीनों के लिए छुट्टी हो जाती है। भारतीय आर्य ईसा से डेढ़ हजार वर्ष पहले भारत पहुँचे। उनके प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद में ही नहीं, बल्कि पीछे के भी पुराने मसूरत-ग्रंथों में रोट्टी का पता बहुत कम लगता है। सत्तू (मक्कु) और छालनी तो वैदिक काल में दृष्टान्त रूप में मशहूर हो गये थे। अनाई की खोदाई में^१ तदूर का भी पता लगा है, जिससे मालूम होता है, कि मध्य-एसिया के नवपाषाण-युगीन मानव तदूरी रोट्टी से अपरिचित नहीं थे। शायद मिट्टी या पत्थर के तबों पर भी वह रोट्टी बना लेते थे।

२ पशुपालन

तिब्बत के ऊँची पठारों में गद्दे की जाति का एक जानवर (क्याङ्) पाया जाता है, जो खच्चर के जितना बड़ा होता है। तिब्बती लोगों ने क्याङ् को पालतू बनाने की बहुत कोशिश

^१ Exploration in Turkestan pp. 16-27

की, किंतु वह उसमें सफल नहीं हुए। पालतू बनाने का मतलब केवल साथ रखना ही नहीं, बल्कि जानवर से काम लेना भी है। साक्या के लामा के खच्चरो के साथ मैने एक क्याङ् को देखा था। क्याङ् का छोटा बच्चा कहीं से मिल गया था, जिसे अपने खच्चरो के साथ लामा ने पाल लिया और अब वह बड़ा होने पर भी खच्चरो के साथ रहता था। लेकिन, उस पर भला कौन बोझ लाद सकता था ? वह प्राण देने के लिए तैयार हो जाता, यदि कोई पीठ पर कुछ बाधने की कोशिश करता। नव-पाषाण युग ही में नहीं, बल्कि उससे पहले भी मनुष्य के पाम किसी जगली जानवरों के बच्चे का पाल जाना मुश्किल नहीं था, और ऐसे हरिन, कुत्ते, भेड़ या दूसरी जाति के छोटे बच्चे को कभी किसी ने पाल लिया हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। लेकिन अगली पशुपालन तब कहते हैं, जब कि मनुष्य अपने घर में नर-मादा पशुओं को रखकर उनकी मत्तान बढ़ाना है। मध्य-पाषाण युग में कुत्ता पालतू हो गया था, यह हम बतला आये हैं। विस्तार के साथ पशुपालन का व्यवस्थित प्रबंध नवपाषाण-युग में ही हुआ। यह बतला चुके हैं, कि पालतू जानवरों की हड्डियाँ पतली और सूक्ष्म होती हैं, जब कि उसी जाति के जगली प्राणियों में उसमें उल्टा पाते हैं। यदि भूमि अत्यन्त हरी-भरी हो, तो, जगली जानवर बड़े कहावर होते हैं। बारह-सिंगे तो वनस्पति की कमी के कारण जहाँ शरीर में छोटे होते जाते हैं, वहाँ उनकी सींगें छोटी तथा शाखायें कम होती जाती हैं, तो भी उनकी हड्डियों की बनावट पालतू जानवरों जैसी नहीं होती। भेड़, गाय और सूअर मध्य-एशिया में इस समय पालतू बनाये गये। घांड़े के पालतू बनने में कुछ सदेह है। मध्य-एशिया में ही पालतू बनाई गई भेड़े, यहाँ से गये लोगों के साथ युराग गई। यद्यपि जगली गदहा मध्य-एशिया में भी रहा होगा, किंतु गदहे और बिल्ली को सबने पहले पालतू बनाया मिस्रियों ने। मध्य-एशिया का ऊँट दो कोहानों का होता है, जब कि अरब और दूसरी जगह के ऊँटों के पीठ पर एक ही कोहान होता है। ऊँट नवपाषाण-युग के पीछे मध्य-एशिया में पालतू बनाया गया।

३. मृत्पात्र

मिट्टी के बर्तन बनाना भी नवपाषाण-युग की एक विशेषता है। आग का पता निम्न-पुरापाषाण युग में ही लग गया था। उसी समय (युग के पिछले भाग में) लकड़ी या पत्थर से घिस कर आग पैदा करना भी आदमी को मालूम हो गया था। वह अपने मांस को आग पर भूनकर खाना जानता था। अनाज की उत्पत्ति से उसे मिट्टी के बर्तनों की अधिक आवश्यकता मालूम हुई, इसीलिए इस समय मृत्पात्रों के बनने और उनके उपयोग का विशेष प्रचार हुआ। कई-कई प्रकार और रंग के मिट्टी के बर्तन बनने लगे—पानी रखने के बर्तन, पानी पीने के बर्तन, पकाने के बर्तन आदि नाना प्रकार के भेद इसी समय प्रकट हुए। अभी कुम्हार का चक्का नहीं बन पाया था। श्रम का विभाजन भी उतना नहीं हुआ था और एक ही आदमी या परिवार पीर-बबरची-भिस्ती-खर सबका काम देता था। तिब्बत में आज भी कुम्हार की अलग जाति या पेशा नहीं है, लोग स्वयं मिट्टी के बर्तन बना लेते हैं। कितने ही बर्तन वह आज भी कुम्हार के चक्के की सहायता से नहीं बनते। चाय रखने की छोटी (टोटीदार हँडलदार सँकी) तो बहुधा हाथ से बनाई जाती, और कितने ही हाथ उसमें अद्भुत कला का चमत्कार दिखाते हैं। नवपाषाण-युग के मानव भी अपने हाथों से ही मिट्टी के बर्तनों बनाया करते थे। गोलाई लाने के

लिए वह मिट्टी की गोल-गोल मेखलाएँ बना कर एक के उपर एक रख देते और फिर गीले हाथों से भीतर-बाहर उसमें चिकना देते। यदि मिट्टी के बर्तनों को खुले आवे में पकाया जाय, तो हवा का प्रवेश निर्बाध हो जाता है। मिट्टी में लौह-कण मौजूद रहते हैं, पकते वक्त हवा के साथ इनके सीधे सव्य से बर्तन लाल हो जाते हैं। यदि बन्द हवा के साथ भट्ठी के भीतर बर्तन को पकाया जाय, तो हवा के सम्पर्क से बहुत-कुछ वंचित रहने के कारण बर्तन लाल न हों, भूरा या राखके रंग का हो जाता है। यदि मिट्टी में कुछ कोयला पीसकर मिला दिया जाय, तो बर्तन का रंग काला हो जाता है। यह बातें नव पाषाण-युग के मानव को मालूम थी ?

४ पाषाणास्त्र^१

पुरापाषाण-युग के मानव के हथियार बहुत कुछ फ्लिन्ट (चकमक) पत्थर के होते थे, जो मामूली पत्थर से ज्यादा कड़ा होता है, इसीलिए उसकी मांग बहुत अधिक थी, और वह हर जगह सुलभ नहीं था। खडिया की खानों के खडिया के स्तर में हड्डी की तरह यह मिला करते हैं। नवपाषाण-युग का मानव अपने पत्थर के हथियार से खोदकर कुआँ मा बनाते हुए चकमक के स्तर पर पहुँचता था। कभी-कभी इसके लिए उसे २०-२० फुट गहरी खुदाई करनी पड़ती थी। चकमक को निकाल लेने के बाद कुएँ फिर उसी गड्ढे में कभी-कभी ढह जाते थे। बेल्जियम में स्पीनेस की चकमक खान में पुरापाषाण-युग के दो पिता-पुत्र खनक खान के नीचे उतरकर अपना काम कर रहे थे, इसी समय उनपर से छत गिर गई और दोनों दबकर मर गये। आज भी उनका शरीर ब्रुसेल्स के राष्ट्रीय म्यूजियम में रखा हुआ है। चकमक पत्थर की दुर्लभता ही कारण थी, जिसमें कि नयी तरहके हथियारों के बनानेका दिशा-निर्देश किया। खतरा शायद कभी ही कभी होता था। खडिया की खानों में चकमक की रीढ़ ढूँढ़ना और निकालना इतना समय और श्रमसाध्य था, कि आदमी ने उसकी जगह साधारण पत्थरों को भी इस्तेमाल किया। उमने देखा कि रगड़कर पालिश करने में दूसरे पत्थरों में भी धार आ जाती है। रगड़कर पालिश करके पत्थर के हथियार बनाना नवपाषाण-युग के मानव के हथियार की सबसे बड़ी विशेषता थी। १८६६ ई० में डेनमार्क के कुछ प्रागैतिहासिकों ने नवपाषाण युग की कुल्हाड़ी की परीक्षा ली। उन्हें मालूम हुआ, कि केवल इन्हीं हथियारों से जंगल के कैंल और दयार जैसे दरख्तों को काटा जा सकता है और इनके सहारे पेड़ के तने को खोदकर नाव बनाई जा सकती। नवपाषाण-युग के मानव ने घिसे पालिश किये हथियारों के बनाने के साथ-साथ पुराने ढग के चकमकवाले पाषाण-अस्त्रों को, जो कि छाट और चैली निकालकर बनाये जाते थे, छोड़ा नहीं। पाषाण-अस्त्रों के अतिरिक्त उस समय लकड़ी और सींग के हथियार भी इस्तेमाल किये जाने थे।

५. जलवायु

पुरापाषाण-युग के मानव के लिए तापमान की अनुकूलता-प्रतिकूलता सब से अधिक ध्यान देने की बात थी। तापमान गिरने से सरदी बढ़ती, जिसके कारण शिकारके जानवर दक्षिण

^१ Gen. Anth. pp. 152-62

की ओर अधिक गरम जगहों में चले जाते। इसलिए शिकारी को भी दक्षिणाभिमुख यात्रा करनी पड़ती। इसके अतिरिक्त अपने शरीर के लिए भी उन्हें अधिक चमड़ा पहनने की आवश्यकता होती। नवपाषाण-युग का मानव अब कृपि-जीवी भी था। कृपि म तापमान में भी अधिक नमी अथवा वर्षा के न्यूनताधिक होने पर ध्यान देना पड़ता। मध्य-एशिया में जहाँ मध्य-पाषाण-युग वर्षा और जल के अभाव का समय था, वहाँ नवपाषाण-युग अपेक्षाकृत अधिक आर्द्र था। इसके कारण मानव वहाँ वर्षा के भरोसे खेती कर सकता था। अभी नहरों द्वारा सिंचाई करने का समय नहीं आया था। इस नमी के कारण मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता था, जहाँ यह वनस्पति के लिए अधिक लाभदायक मिट्टि होती थी, वहाँ उमकें कारण मक्खियाँ और मच्छरों को भी बहुत सुभीता था, जिनकी भरमार से तरह-तरह की बीमारियाँ होती थी। मृत्यु का तुलनात्मक अध्ययन भी हमें इसी परिणाम पर पहुँचाना है। भिन्न-भिन्न युगों के भिन्न-भिन्न आयु के लोगों में प्रतिशत मृत्यु-संख्या निम्न प्रकार थी^१—

युग	आयु	०-१४	१५-२०	२१-४०	४१-६०	६० म ऊपर
मध्य-पुरापाषाण		४०	१५	४०	५	
उपरिपुरापाषाण		२४ ५	६ ८	५३.६	११ ८	
मध्य-पाषाण		३० ८	६.२	५८ ५	३	१ ५
नवपाषाण		"	"	"	"	"
प्राचीनपित्तल		७ ६	१७ २	३६ ६	२८ ६	७ ३
(आस्ट्रिया)						
१६वीं सदी (,,)		५० ७	३ ३	१२ १	१२ ८	२१
२०वीं सदी (,,)		१५ ४	२ ७	११ ६	२२ ६	४७.४

यद्यपि यह विवरण मध्य-एशिया नहीं मध्य-यूरोप (आस्ट्रिया) का है, तो भी हम मध्य-एशिया के नवपाषाण युग के बारे में भी कह सकते हैं, कि उसके अधिकांश मानव २१ से ४४ वर्ष की उमर में मर जाते थे, उसके बाद १४ वर्ष से नीचे के लड़के ज्यादा मरते थे। ४० वर्ष से ऊपर जीनेवाले बहुत थोड़े ही आदमी होते थे।

६. अनौमें नवपाषाण-युग^२

पश्चिमी मध्य-एशिया के दक्षिण-पश्चिम कोण पर तुर्कमानिया सोवियत गणराज्य की राजधानी अश्काबाद से थोड़ी दूर पश्चिम अनौ के प्राचीन ध्वसावशेष है, जिनकी खुदाई १९०३ में अमेरिकन पुरातत्त्ववेत्ता राफेल पम्पेलीने की थी। यह स्थान ईरान और सोवियत की सीमा पर अवस्थित कोपेत दाग पर्वतमाला से थोड़ा उत्तर में है। पम्पेलीने यहाँ ध्वसावशेषों की खुदाई के अतिरिक्त अश्काबाद के एक पाताल-कूप के भिन्न-भिन्न स्तरों की भूसंस्थिति का भी परिचय दिया है। इस कुएँ में २२ सौ फुट तक नल धँसाया गया था, तो भी चट्टान का पता नहीं लगा

^१ Progress and Archaeology p. 111

^२ Exploration in Turkistan vol I p. 16

था। २१सौ फुट पर भूरे रंग की चिकनी मिट्टी मिली थी। उसके ऊपर कभी पत्थर के ढोके, कभी भूरी मिट्टी, १८ सौ फुट पर बालू, १७ सौ फुट पर गोल-गोल पत्थर इसी तरह आगे इन्ही चीजों को पाया गया। ६०० से ८०० फुट की गहराई में हिमयुग का प्रभाव दिखाई पड़ा। इन स्तरों से पता लगा, कि मध्य-एशिया के जलवायु में समय-समय पर परिवर्तन होता रहा। अनौ में खुदाई तीन जगहों पर हुई थी, जिनमें उत्तरी कुर्गान (उत्तरी डीह) की खुदाई वर्तमान तलसे २० फुट नीचे तक की गई। यह कुर्गान आस-पास के घरातल से २० फुट ऊंचा है। उत्तरी कुर्गान में नवपाषाण-युग और अनव-पाषाण युग के अवशेष मिले थे। अनौ के नवपाषाण-युगीन लोग कच्ची ईंटों के आयताकार मकानों में रहते थे। घरों की छतें आज की तरह मिट्टी की नहीं, बल्कि फूस की होती थी। आजकल वर्षा के अत्यन्त कम होने के कारण सारे मध्य-एशिया में मिट्टी की छतें होती हैं। यह मिट्टी की छतें कौशाबी और रायबरेली से पच्छिम उराल पर्वतमाला तक चली जाती हैं। पूरब में मिट्टी की छतों का स्थान फूस की झोपड़ियाँ या खपडैल के मकान लेते हैं। यही अवस्था प्रागैतिहासिक कालसे चली आ रही है। पूरब में मिट्टी की छतों का रवाज नहीं है, उसका कारण मिट्टी का कमजोर होना नहीं, बल्कि वर्षा का अधिक्य है। अनौ में फूस की झोपड़ियाँ यही बतलाती हैं, कि ६ हजार वर्ष पूर्व वहाँ आज की अपेक्षा वर्षा अधिक होती थी। तो भी वह बहुत अधिक नहीं होती थी, नहीं तो कच्ची ईंटों का स्थान मिट्टी की रट्टेवाली दीवारें लेती। पक्की ईंटों का बनाना तभी सुकर था, जब कि आस-पास में जंगल काफी होता। करीब-करीब उसी समयसे थोड़ा पीछे मोहनजोदड़ो में पक्की ईंटों का उपयोग होता था।

अनौ के मानव हाथसे मिट्टी के बर्तन भी बनाते थे, जो पतले किंतु देखने में भड़े होते थे। अपने बर्तनों पर वह भिन्न-भिन्न ज्यामितीय आकृतियाँ बनाते थे। मिट्टी की तकली पर वह उन कातते थे, लोढ़े और कुडीसे अनाज पीसते थे। उनकी खेती गेहूँ और जौ की थी, जिसकी भूसी को मोटे बर्तनों के बनाने की मिट्टी में सान लेते थे। उनके शिकार के जन्तुओं में सूअर, लोमड़ी, भेड़िया, हरिन आदि थे। मीने के लिये हड्डी का सूआ इस्तेमाल करते थे। इनके हथियार छिंले हुए चकमक पत्थर के होते थे। लकड़ी के डंडे और पत्थर की मुंडी की गदा इनका युद्ध का हथियार था। तीर और भाले के फल या गोफन (ढेलवाँस) के पत्थर का भी उपयोग इन्हें मालूम नहीं था। इनके शिकार किये हुए पशु ऐसी आयु और आकार के थे, जिन्हें आसानी से मारा जा सकता। घर के भीतर मिट्टी के फर्श के नीचे यह अपने बच्चों को दफना देते थे, साधारण मुर्दों को बाहर फर्श के नीचे दबाते थे। शव के साथ गुरिया अन्य उपभोग की चीजें और खान-पान की वस्तुएँ भी दफनाते थे। शायद बच्चे देवता को प्रसन्न करने के लिए घर की फर्श के भीतर बलि रूप में दबाये जाते हों। अन्दमन के आदि-निवासी भी बच्चों को घर के भीतर और बड़ों को बाहर दफनाते हैं। दौत न निकले बच्चे रोम में भी दफनाये जाते थे, जबकि सयानो को आग में जलाना होता था। भारत के हिंदुओं में यह प्रथा आज भी देखी जाती है। सबसे नीचे १० फुट मोटाई वाले प्राचीनतम स्तर में पालतू पशुओं का पता नहीं लगता, बल्कि हाँ, शिकार किये हुए जंगली पशुओं की हड्डियाँ मिलती हैं। पम्पेलीने नवपाषाण-युगीन स्तर में निम्न चीजों का भाव और अभाव उल्लिखित किया है^१—

^१ Exploration in Turkistan p. 60

भाव	अभाव
हस्तनिर्मित रेखा-रजित मृत्पात्र	पालिश किया पात्र या गृनिया
गेहूँ-जौकी खेती	पक्की ईंट
कच्ची ईंटके आयताकार गृह	बर्तनकी मुठिया
हड्डीका सूआ	उत्कीर्ण पात्र
चकमकके सीधी धारवाले हथियार	मोना-रूपा
मिट्टीकी तकली	रांगा
ताबे-सीसेका हलका-सा ज्ञान	लोहा
पीसनेका पत्थर	धातुके फल
फीरोजेकी मणियाँ	पशु, मनुष्य का बर्तन, गाय
दीर्घश्रृंग गाय, सूअर, घोड़े	कुत्ता
घरमें सिकुड़े शिशुकी समाधि	ऊँट
गौ, भेड़, हरिन, बारहसिंगा, घोडा,	बकरी
भेड़िया और सूअरका शिकार	

इस स्तरमें जिन चीजोंका अभाव था, उनमेंसे किननी ही आरम्भ मनुष्य मिली ।

५२. अनवपाषाण-युग^१ (३००० ई० पू०)

जैसा कि नामसे प्रकट है, यह एक अवान्तर युग था, जब कि पाषाण युगका अन्त हुआ, किन्तु धातु-युगका आरम्भ नहीं हो पाया । अनौ की खुदाई में हम देख आये हैं, कि उम्रग पहलेके युगमें भी ताबे-सीसेका हलका-सा परिचय था, किन्तु असली धातु-युगके आरम्भ होने लिये आवश्यक है, कि आदमी धून (धातुपाषाण) को गलाकर धातु बना सके । यह भी गार रखना चाहिए, कि पाषाण-युगका अन्त दुनिया के सभी देशोंमें एक समय नहीं हुआ । जहाँ मेसोपोटामियामें पाषाण-युगका अन्त ३५०० ई० पू० में होता है, वहाँ डेन्मार्कमें १६०० ई० पू० में और न्यूजीलैण्डमें उसका अन्त सन् १५०० ई० में ही जाकर होता है, जबकि वहाँके आदिम निवासियोंका युरोपियन जातिसे सम्पर्क होता है । अनौमें इस स्तरको पम्पेलीने द्वितीय-संस्कृति कहा है, जो कि ऊपरके तलसे २५ फुट नीचे है । पम्पेलीने इसका काल ६०००-५००० ई० पू० माना है, लेकिन अधिकांश विद्वानोंके मतसे यह समय ४००० ई० पू० से अधिक पुराना नहीं हो सकता । उस कालमें निम्न वस्तुओंका भाव और अभाव देखा जाता है—

भाव	अभाव
मृत्पात्र पूर्ववत्	कुम्हारका चक्का
तन्दूर पात्र	पक्की ईंटें
घर पूर्ववत्	बर्तनकी मुठिया
चकमक का हँसिया, सूआ, गदा और गोफन	उत्कीर्ण पात्र

^१ L.c. 'Humanite' Prehistorique, 590-95

भाव	अभाव
मिट्टीकी तकली	मोना-रूपा
ताबे और सीमेका थोडा-सा ज्ञान	राँगा-पीतल
पीमनेका पत्थर	लोहा
छोटो-बनी सीगवाली गाये, सूअर, घोड़े,	वातुके फल
वकरी, ऊँट, कुत्ता और मटिया भेड़	पशु और मनुष्यके चित्र
घरमें शिशु-समाधि	

अनवपाषाण-युगमें खेतीके अतिरिक्त पशुओंको पालतू बनानेका भी प्रयास देखा जाता है, यद्यपि हथियारोंमें अभी कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। हथियारोंके बिना मिट्टीके बर्तन अब भी बनते थे, लेकिन उनको लाल और दूसरे रंगकी रेखाओंसे अलंकृत किया जाता था। ताबेके छुरे का होना मदिग्ध-सा मालूम होता है। कुत्ता, वकरी, ऊँट और बिना सीगकी भेड़को इस सगप्र पालतू बना लिया गया था। अतीमें इसमें पहलेके स्तरमें भी फीरोजेकी मणियाँ मिली हैं। तरह-तरहके आभूषणोंमें शरीरको मजाना और पहलेमें चला आना था। फीरोजाकी खाने अतीमें थोडा ही दक्खिन ईरानके भीतर मिलती है। ऊँट शायद पूरबसे लाकर पालतू किये गये।

§३ मानव-जाति

मुस्तेर मानव आजके सपियन मानवमें बहुत भेद रखता था। उसको आजकी किसी जातिसे मिलाना संभव नहीं है। यद्यपि प्रकृतिके और स्थानोंकी तरह प्राणियोंमें भी विकास सर्पकी गतिमें ही नहीं होता, बल्कि कभी-कभी मेढ़क-मुदानकी तरह एकाएक जाति-परिवर्तन भी हो जाता है। इस नियमके अनुसार हजारों वर्षोंमें एक मानव-जातिसे विलक्षण शरीर-लक्षणवाली दूसरी मानव-जाति पैदा हो सकती है। उस प्रकार तेजिकताय-मानव ३०-३५ हजार वर्ष बाद मध्यपाषाण-युगके मानवके रूपमें परिणत हो सकता है, किंतु तो भी इसका कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता। मध्यपाषाण-युगके अन्तमें जो मानव अपने पालतू कुत्तोंके साथ मध्य-एशियासे पहले-पहल युरोपकी ओर गया, वह हिंदू-युरोपीय जातियोंका पूर्वज था। इसका यह अर्थ नहीं समझना चाहिए, कि हिंदू-युरोपीय जातियोंके निर्माणमें किसी और रक्तका समिश्रण नहीं हुआ है। अनौमें मिली नवपाषाणयुगकी खोपड़ियाँ दीर्घकपाल थीं। विशेषज्ञ बतलाते हैं, कि उन खोपड़ियोंमें वही सारे लक्षण मिलते हैं, जिन्हें कि भूमध्यीय जातिकी विशेषता माना जाता है। उनमें मगोलायित खोपड़ीमें काई गमानता नहीं है। यह खोपड़ियाँ बतलाती हैं, 'भूमध्यीय मानव-जातिकी एक शाखा मध्य-एशियाके भीतर घुम गई थी।'।

मध्य-एशियाके भिन्न-भिन्न भागोंमें जिन जातियोंके अवशेष मिले हैं, उनपर एक विहगम दृष्टि डालनेसे मालूम होगा, कि अन्तिम हिमयुगके बीच तथा उनके कई सहस्राब्दियों पीछे तक मुस्तेर (नेयडर्थन) मानव यहाँ रहता था। जीवन-निर्वाहका जब तक स्थायी साधन नहीं प्राप्त हो, और जब तक प्रकृति और प्राणि शत्रुओंमें अपनी रक्षा करनेमें सफल नहीं हो जाये, तब तक प्रजननकी अपार क्षमता रहने पर भी मानव-वश तेजीसे नहीं बढ़ सकता। अपने घातक शत्रुओं पर कुछ हद तक विजय करके ही मानव फल-फूल सकता है। गुहाओंमें रहनेवाला मुस्तेर-मानव मध्य-एशियामें बहुत ही कम संख्यामें रहा होगा, यद्यपि, इसका यह अर्थ नहीं कि उसके अवशेष

अभी जिन दो-चार जगहों में मिले हैं, उन्हें छोड़ और स्थानों में वह नहीं मिल सकते। मध्यपाषाण-युगीन मानव भी बहुसंख्यक नहीं हो पाया होगा, तो भी मुस्तेरसे उसकी मर्यादा अवश्य बड़ी होगी। मध्यपाषाण-युगका मानव आधुनिक सपियन-मानव-वंशसे संबन्ध रखता था और वही शायद हिंदू-यूरोपीय जातियोंका पूर्वज था। यह भी बतलाया जा चुका है, कि इसी मानवने नवपाषाण-युगीन संस्कृतियों अपने साथ ले जाकर यूरोप में इसकी नींव डाली। यूरोप में जो खोजें हुई हैं, उनमें यह बात मान ली गई है, कि मध्य-एशिया से आया यही मानव यूरोप की पुरानी जातियोंको अपनी संस्कृति और शस्त्रोंसे पराजित करने में सफल हुआ, जिसके परिणामस्वरूप पुराने निवासियोंमें किनारे ही या तो मर-हूँ गये, या अपने पुराने निवासस्थानको छोड़कर एस्किमो लोगोंके रूप में दूर किगागों पर भाग गये, अथवा विजेताओंमें घुल-मिल गये। मध्य-एशियामें मध्यपाषाण-युगीन मानवों (हिंदू-यूरोपीय जातियोंके पूर्वजों)के कुछ भाग रह गये या नहीं? अभी तक जो अनुमान हुआ है, उससे यही पता लगता है, कि अगले नवपाषाण-युगमें अनौ या ख्वारेज्मके नवपाषाण-युगीन ध्वसावशेषोंसे जिस मानवका पता लगता है, वह भूमध्यीय जातिका था। साथ ही यह भी स्वीकार किया जाता है, कि मध्य-एशिया से जानेवाले हिंदू-यूरोपीय जातिके पूर्वज यूरोप में जाकर नवपाषाण-युगीन संस्कृतिका प्रचार करते हैं, अर्थात् नवपाषाणाश्रितोंके साथ जौ-गेहूँकी खेती और गाय-भेड़के पालन करनेका काम इन्हीं के द्वारा वहाँ आरंभ होता है, इससे निम्न होता है, कि नवपाषाण-युगमें पुरातन हिंदू-यूरोपीय मानवका संबंध मध्य-एशिया से था। भूमध्यीय जातिका ख्वारेज्म तक घुस जाना क्या यह नहीं बतलाता, कि पुरातन हिंदू-यूरोपीय लोग केवल जलवायुकी प्रतिकूलताके कारण ही पश्चिमकी ओर भागनेके लिए मजबूर नहीं हुए, बल्कि भूमध्यीय जातिके यह मानव-शत्रु भी उनके पीछे पड़े हुए थे ?

मुस्तेर, प्राग्-हिंदू-यूरोपीय और दीर्घकपाल भूमध्यीय इन्हीं तीन जातियोंका इस समय तक मध्य-एशियामें होना सिद्ध होता है। इन तीनोंका संबंध किस तरहका रहा, यह अभी अधिकारमें है। नवपाषाण-युगसे भी पहलेसे मध्य-एशियाकी भूमि की अपनी विशेषता चली आती है, जिसके कारण उसके गर्भसे ऐसे प्रकाशके निकलनेकी सम्भावना है, जो मानवके भूले हुए इतिहासको अँधेरे से उजाले में लादे। अतीतकालमें प्यासी-भूमि, किजिलकुम और कराकुमके विशाल रेगिस्तान मानवके लिए सबसे बड़े शत्रु रहे। इन रेगिस्तानोंके भीतर भूलकर हजारेने अपने प्राण गँवाये। इतना ही नहीं रेगिस्तान हमेशा मानवकी भूमि पर आक्रमण करता रहा, साल-साल वह खेतीकी भूमि ही नहीं, गाँव और नगरोंको उदरसात् करता रहा। आज केवल ख्वारेज्मके रेगिस्तानोंमें ही २०० नगरों और बस्तियोंके ध्वसावशेषोंका पता लगा है। सोवियत इतिहास और पुरातत्त्ववेत्ता इन ध्वसावशेषोंके महत्त्वको समझते हैं। वह जानते हैं, कि जिस तरह बालूने अपनी ध्वस-लीला दिखलानेमें कोई कसर उठा नहीं रखी, उसी तरह उसने बहुत सी अमोल ऐतिहासिक सामग्रीको अपने नीचे सुरक्षित रक्खा है। सोवियत सरकार दूसरे सांस्कृतिक कार्योंकी तरह पुरातत्त्वके अनुसंधानों पर भी बड़ी उदारतासे पैसों खर्च करती है। पिछले १४-१५ वर्षोंमें ख्वारेज्मके रेगिस्तानमें यह अनुसंधान जारी है। १९४९ ई० में इसके लिए हवाई जहाजोंने १० हजार मीलकी उड़ान की। मोटोरो, लारियोंका बड़े व्यापक रूपमें उपयोग किया गया। उस साल ७ दर्जनके करीब चर्मपत्र पर लिखे अभिलेख इस मरुभूमिने दिये। यह अभिलेख उस भाषामें लिखे हुए हैं, जो लुप्त हो चुकी है। १७०० वर्ष पुरानी भाषाका नमूना प्राप्त करना पुरातत्त्ववेत्ताओंके

लिए कम प्रसन्नताकी बात नहीं है। पुरातात्विक अभियानोंके अतिरिक्त रेगिस्तानकी भूमिमेंसे करोड़ों एकड़ जमीनको खेत और बगीचेके रूपमें परिणत करनेके लिए वक्षु नदीको कास्पियन सागरमें मिलानेवाली महानहरकी खुदाई हो रही है। इससे जहाँ निर्जन मरुभूमि पर मानव बस्तिया बसेगी, वहाँ पुराने ध्वसावशेषोंके भीतरसे मानव-इतिहासके रहस्यको ढूँढ निकालना आसान होगा।

अनव पाषाण-युगके बाद हम धातु-युगमें प्रवेश करते हैं। कृषि और धातुशिल्प मिलकर ग्रामों और नगरोंको स्थायित्व प्रदान करते हैं, किंतु मध्य-एसियामें धुमन्तू जीवनका सर्वथा उच्छेद हाल तक नहीं हो पाया था। नवपाषाण-युगमें भी धुमन्तू और स्थायी निवासियोंका सघर्ष रहा, जो सघर्ष सोवियत क्रान्तिके बाद ही खत्म हुआ। बीचका सारा मध्य-एसियाका इतिहास धुमन्तूओं और अधुमन्तूओंके सघर्षका इतिहास है। अधुमन्तू दासता, अर्धदासतासे होते समान्तवाद तक पहुँच गये थे, जबकि धुमन्तू जातियाँ बहुते-कुछ जनयुग अथवा जन-सामन्त युग तक ही अपने जीवनको सीमित रखती रही।

स्रोत-ग्रन्थ •

- 1 General Anthropology (Boas)
- 2 Exploration in Turkistan (R. Pumpelly) vols I, II
- 3 Progress and Archaeology (V G Childe)
- 4 Le' Humanité' Préhistorique (J de Moigai)
5. Our Early Ancesters (M C Burkitt)
- 6 Geology in the Life of Man (Duncan Leith)
- 7 The Evolution of Man (G Elliot Smith, London 1927)
- 8 The Skeletal Remains of Early Man (G E Smith)
- 9 Antiquity of Man, 2 vols (Arthur Keith 1925)
- 10 New Discoveries relating to the Antiquity of Man (A Keith, 1931)



भाग २

धातु-युग (३०००-७०० ई० पू०)

अध्याय १

ताम्र-युग (२५००-१५०० ई० पू०)

१ युगकी विशेषता

पाषाण-युग मानवका प्रथम युग है, जो भिन्न-भिन्न विद्वानोंके मतानुसार ३ लाख या १ लाख वर्ष तक रहा। ताम्र-युगके साथ मानव धातु-युगमें प्रवेश करता है, जो आजसे पहिले ७००० से ४५०० वर्ष तक भिन्न-भिन्न देशोंमें चला आया। सभी देशोंमें ताम्रयुग एक साथ नहीं शुरू हुआ। मिस्र और मेसोपोतामियामें उसका आरम्भ सबसे पहले (३५०० ई० पू०) हुआ। हो सकता है, भूमध्यीय जाति से मध्य-एसियामें घुस आनेके समय हिंदी-यूरोपीय-पूर्वजोंने धातुकी कला सीखी। किसी देशमें ताम्रयुग और पित्तलयुगमें अन्तर रहा है, जैसा कि मध्य-एसियामें २५०० से १५०० ई० पू० तक ताम्रयुग रहा और १५०० से ७०० ई० पू० तक पित्तलयुग, परन्तु कई देशोंमें दोनोंका अन्तर इतना कम रहा, कि पाषाणयुगसे सीधे पित्तलयुगमें मानवका प्रवेश माना जा सकता है।^१ पाषाणयुगके अन्तमें भी कहीं-कहीं प्राकृतिक रूपमें ताबेके कठोर डले (ओहायो भाँति) आदमीको मिल जाते थे, जिन्हें बिना आगमें गरम किये वह ठोक-पीटकर तेज बना लेता था, किंतु ऐसे बनाये हुए हथियारोंके कारण इसे हम ताम्रयुग नहीं मानते। ताम्रयुग तब शुरू होता है, जब कि आदमी ताबेकी धून (धातु-पाषाण) को लेकर उसे कोयलेकी आगमें पिघले द्रव्यको अपने भिन्न-भिन्न उपयोगके हथियारोंके रूपमें ढालने लगा। यह विद्या आदमीको बहुत पीछे मालूम हुई। प्राचीन मानव धक्कते लकड़ीके कोयलेको एक गढेकी पेदीमें रख देता, और उसके ऊपर एकतह धून और एक तह कोयलेको रखता ऊपर तक भर देता। फिर फूँकनेकी फोफियाँ लगाकर कई आदमी हवा देने लगते, जैसा कि आज भी कहीं-कहीं सोनार करते देखे जाते हैं। पीछे आदमीको मालूम हुआ, कि मुँहसे फूँकने की जगह चमड़ेकी भाथीसे हवा देना ज्यादा अच्छा है। इस प्रक्रियासे वह धूनसे धातु अलग करने लगा। १९ वीं शताब्दीके मध्य तक कुमाऊँ-गढवालमें और मध्य-प्रदेशमें आज भी कहीं-कहीं जनजातियोंने धूनसे धातु निकालनेकी यही विधि अपना रखी है। भाथीमें अवश्य इन लोगोंने कुछ विकास किया, और कहीं-कहीं आदमी हाथकी जगह पैरसे चलनेवाली बड़ी-बड़ी भाथियोंका इस्तेमाल करने लगे।^२

^१ किसी-किसीका कहना है कि भारतमें नवपाषाणके बाद सीधे लौहयुग आया (Gen Anth. pp 199, 201) पर ताँबेके हथियार मोहनजोदरो और बहादुरगढ़ (हरद्वार) में मिले हैं।

^२ Our Early Ancestors, pp 185-94

२ ताम्र-उद्योग

ताँबा बनाना पत्थर, हड्डी या लकड़ीको छीलकर हथियार बनाने जैसा नहीं था। ताँबेकी धूनमें ओषिद्, सलफिद् और सिलिकेट (कार्बोनेट) मिला रहता है। उनसे बहुत तेज तापमानमें पिघला कर ही ताँबेको अलग किया जा सकता है। ताँबा पिघलानेके लिए भारी गर्मीकी अवश्यकता होती है। १०८३° सेटीग्रेट के तापमानमें ताँबा पिघलकर पानीहो जाता है और अपने अन्य साधियोंकी अपेक्षा अधिक भारी होनेके कारण उसका पानी नीचे चला जाता है, जिसे नीचेके छेद से अलग करते हुए भिन्न-भिन्न प्रकार के साँचों में ढाल लिया जाता है। ताँबे के इस प्रकार के निर्माण के साथ-साथ मानव पाषण-युग से धातु-युग में ही नहीं आया, बल्कि वह अब वैज्ञानिक युग का मानव बन गया। ताँबा बनाना रसायन-शास्त्र का बाकायदा प्रयोग है। इसके साथ मानव के शिल्प में विशेष परिवर्तन हुआ। सस्कृत और पाली के पुराने ग्रंथों में लोह का अर्थ ताँबा होता है सिंहलद्वीप (लका) में अशोक के पुत्र भिक्षु महेन्द्र के लिये जो महाविहार बनाया गया था, उसमें एक निवास का लोह-महाप्रसाद (लोहे का महल) नाम इसलिए पड़ा था, कि उसकी छतें ताँबे की थीं। इससे पता लगता है, कि आज से २१-२२ सौ वर्ष पहले भी ताँबे के लिए लोह शब्द प्रयुक्त होता था। आजकल लोहार लोहे के काम करनेवाले को कहा जाता है। पहाड़ में ताँबे के बर्तन बनानेवालों को तमोटा या टमटा कहते हैं। नीचे मैदान में ताम्रकार नाम की कोई जाति नहीं मिलती, उनके स्थान पर वहाँ कसेरे हैं, जो काँसे, पीतल के बर्तनों को बनाते हैं। ताम्र-युग में लोहार या लोहकार जैसे शब्द का प्रयोग ताम्रकार के लिए होता था।^१

इस प्राचीनतम धातु के लिए भारतीय आर्यों की भाषा में अयस् शब्द का भी प्रयोग होता था, जो कि पीछे केवल लोहे के लिए बर्ता जाने लगा। फिर ताँबे और लोहे में भेद करने के लिए ताँबे को लोह-अयस् और ताम्र-अयस् तथा लोहे के लिए कृष्णायस् (काला-अयस्) शब्द का प्रयोग होने लगा। भारत में आने के कई शताब्दियों बाद हिंदी-आर्य असली लोहे से परिचित हुए।

ताम्र के आविष्कार के साथ-साथ हम एक नये उद्योग को स्वतंत्र रूप से स्थापित होते देखते हैं। पत्थर, लकड़ी या हड्डी के हथियार के लिए कच्चे माल को विशेष प्रयत्न से तैयार करने की आवश्यकता नहीं होती, उनको छील-घिसकर किसी हथियार का रूप देना, उस युग का हर एक आदमी थोड़ा-बहुत कर सकता था। हाँ, अधिक कुशल और अभ्यस्त शिल्पी की बनाई चीजें अधिक सुन्दर और उपयोगी होती थीं। इसके कारण भले ही लोग उसकी खुशामद करते रहे हों। लेकिन, वह ऐसी स्थिति में नहीं था, कि शिकार और पीछे कृषि और पशुपालन की जीविका को छोड़कर पत्थर छीलने का ही व्यवसाय करने लगता। यह भी स्मरण रखने की बात है, कि जिस तक्ष (छेदने, छीलने) धातु का प्रयोग सस्कृत में केवल लकड़ी के छीलने-छेदने के लिये ही होता है, वह वही भाषा में केवल पत्थर छीलने-छेदने के लिए इस्तेमाल होता है। आरम्भिक ताम्रयुग में हिंदी-यूरोपीय जाति की वह शाखा पूर्वी-यूरोप से मध्य-एशिया में लौट आई थी, जिसके वंशज

^१ ४००० और ३००० ई० पू० के बीच नियरएसिया में ताँबा पिघलाकर ढालने का आविष्कार हुआ। Progress and Archaeology p. 32)

आज आर्य और शक के नाम से प्रसिद्ध हुए, यह सदिग्ध-सा है। किंतु, ताम्रयुग के मध्य या पित्तल-युग के आरम्भ में (२००० ई० पू० के करीब) वह अवश्य वहाँ पहुँच गये थे।

३. व्यापार^१

ताम्रयुग के साथ लोहारे का स्वतंत्र पेशा स्थापित हुआ। गाँवों में अलग लोहारशाला कायम हुई और कुछ आदमी नियमित रूप से ताम्र-उत्पादन के व्यवसाय में लग गये। इसके साथ ही ताँबे की मांग बहुत बढ़ गई। पत्थर के हथियारों के सामने ताँबे के हथियार उतने ही शक्तिशाली थे, जितने तलवार के सामने वारूद से चलनेवाले हथियार। ताँबे के हथियार केवल यत्र और शिकार के लिए ही उपयोगी नहीं थे, बल्कि कृषि में भी उनका अधिक और अधिक उपयोग होने लगा। जंगलों और झाड़ियों को साफ करके खेत बनाना पाषाण-युग में भूमिकल काम था, लेकिन ताँबे के कुल्हाड़े उसको बहुत आसानी से कर सकते थे। यदि मनुष्य को आवश्यकता होती, तो जंगलों और झाड़ियों के लिए उस समय खैरियत नहीं थी। हल के फाल और हँसिया में भी ताँबे का उपयोग अधिक होने लगा। उनकी माँग होने के कारण अगर ताँबे ने व्यापार का स्थायी रास्ता निकाला, तो इसमें आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं। ताँबा उस वक्त की बहुत दुर्लभ चीज थी, और उसमें बनाने की विद्या तथा आवश्यक कच्चे माल सब जगह सुलभ नहीं थे। ऐसे मँहगे उद्योग का सब जगह जल्दी फैलना आसान काम नहीं था। इसीलिए दुनिया के भिन्न-भिन्न भागों में ताम्रयुग के फैलने में २५०० ई० पू० से १५०० ई० तक का समय लगा। इससे पहले खाने-पीने की चीजों का आदान-प्रदान भले ही होता रहा हो, किंतु वह बाकायदा व्यापार नहीं था। शिकारी अवस्था में जहाँ आदमी को कभी-कभी शिकार के न प्राप्त होने के कारण भूखे रहना पड़ता, वहाँ शिकार मिल जाने पर मांस को खतम करने की जल्दी भी पड़ जाती थी, जिसमें कि वह सड़ने न पाये। कमीर (फिशर) तथा कितने ही दूगरे प्रदेशों में आज भी यह प्रथा देखी जाती है शिकार को मार लेने पर शिकारी जोर से चिल्लाकर पुकारता है—‘है कोई यहाँ है तो आके अपना हिस्सा ले।’ आज यद्यपि शिकारी अपनी पत्नीनेवाली बन्दूक को इस्तेमाल करते हुए वैयक्तिक रूप से शिकार करना है, लेकिन तब भी उसके पुराने मुस्कार उसे सामूहिक शिकार के युग का स्मरण दिलाने है, दर्शाने वर आसपास में खड़े किमी आदमी को भी उसमें भागीदार बनाना चाहता। शिकारी समझता था, कि यदि उसका शिकार बड़ा जानवर है, तो वह और उसका परिवार अकेले जल्दी मांस को खा नहीं सकता, वह गड़ जायगा। ऐसे मांस के साथ क्रय-विक्रय क्या बदला-बदली करने का भी कहीं सुभीता हो सकता था? इसीलिए व्यापार करने की जगह पर, हमारी पुरानी विवाह आदि प्रथाओं के अध्ययन पर न्यौता के रूप में चीजों के भेजने जैसा रवाज था, जिसका यही अर्थ था, कि इस वक्त आपके कार्य-प्रयोजन में हम सहायता करते हैं, हमारे कार्य-प्रयोजन में यदि क्षमता हो, तो आप भी इसी तरह सहायता करें।

तृतीययुग और पशुपालन के साथ वैयक्तिक सम्पत्ति की स्थापना हुई। सम्पत्ति भी रोज-रोज के खाने से अधिक जमा होने लगी, इसीलिये उधार देने या बदला-बदली करने का रवाज

चला। लेकिन, अदला-बदली से, विशेषकर जब कि उतनी ही चीजे मिलती हो, बाकायदा व्यापार-प्रथा स्थापित नहीं हो सकती और न सारे समय व्यापार करनेवाला वणिग्वर्ग स्थापित हो सकता था। ताम्रयुगने व्यापारके लिए सबसे अधिक सुभीता प्रदान किया, क्योंकि ताँबेके हथियार केवल विलास की चीज नहीं थे। वह युद्ध और जीविका दोनों के सबसे उपयोगी साधन थे, उनकी हर जगह माग थी और माँगके अनुसारही उनका मूल्य भी अधिक था। अब अनाज, मास या पशुओं का मूल्यांकन ताँबे के टुकड़ों या हथियारों में किया जाने लगा और बराबर के भार के खाद्य को ढोने की जगह छोटे से ताँबे के टुकड़े को ले जा बहुत सी खाद्य-सामग्री लाई जा सकती थी। ताम्रयुग ने देशों की छोटी-छोटी सीमाओं को व्यापार के लिए तोड़ दिया। व्यापार के लिए अब यातायात का सुभीता ढूँढा जाने लगा। मानव-दिमाग सोचने लगा, कि कैसे थोड़े समय में अधिक से अधिक चीजों को दूर से दूर जगहों में पहुँचाया जा सकता है। इसीका परिणाम हुआ, नदियों और समुद्रों का में नौका संचालन और घरती पर गाड़ी या रथ का संचार।

४ हथियार

ताँबे के हथियारों के बनने के पहले पाषाण-युग में भी बहुत तरह के पत्थर, हड्डी या लकड़ी के हथियार बनने लगे थे। काटने के लिए जहाँ कुल्हाड़े बनते थे, वहाँ मास काटने या छीलने आदि के लिये पत्थर की छुरियाँ भी बनती थी। तीर और भाले के फल भी बहुत बना करते थे। ताँबे के हाथ में आने पर आदमी पाषाण-युग के हथियारों की नकल करने लगा। ताँबे के कुठारों की शकल वही थी, जो कि पत्थर के कुल्हाड़ों की। हाँ, समय बीतने के साथ उसमें और कितने ही भेद शुरू किये गये। भाले और तीर के फल भी पाषाण-युग की नकल पर ही बने। पत्थर का हथियार छुरे या कटारी बनानेके लिए नमूना हो सकता था, लेकिन ताँबेके हथियार को काफी लम्बा बनाया जा सकता था, इसलिए इसी युग में पहले-पहल लम्बी सीधी तलवारें बनने लगी। पाषाण-युग के मानव को अस्तुरे की आवश्यकता नहीं थी। उसको अपनी दाढ़ी-मूँछ बढ़ानेमें कोई शौक का खयाल नहीं था, बल्कि वह उसे सहजात समझकर बुरा नहीं समझता था। लेकिन, ताम्रयुग में आकर अब इच्छानुसार दाढ़ी-मूँछ बनाने के लिये अस्तुरा भी आन उपस्थित हुआ। हँसिया, फरसा, दोहरा फरसा, बसूला आदि बहुत तरह के हथियार बनने लगे।

मानव को आदिकाल से ही शरीर को सजाने का शौक था। वह पहले फूलो-पत्तों, दाँतों, कौड़ियों, हड्डियों आदि से शृंगार किया करता था। नवपाषाण-युग में मध्य-एशिया का मानव फीरोजा और दूसरे कितनी ही तरह के रंग-विरंगे पत्थरों के आभूषण बनाता था। ताम्रयुग में अब ताँबे के बहुत तरह के आभूषण बनने लगे। लौहयुग में लोह के आभूषण उतने नहीं बने, जितने कि ताम्रयुग में ताँबे और पित्तलयुग में काँसे-पीतल के। इसमें एक कारण यह भी था, कि ताँबा लोहे की तरह मोर्चा खानेवाली धातु नहीं थी। ताम्रयुग के बहुत तरह के कंकण, कुडल, हँसली आदि आभूषण मिले हैं।

५. राज-व्यवस्था

लाखों वर्षों से मनुष्य प्रकृति का स्वतंत्र पुत्र था। उसका सामाजिक सगठन पहले परिवार के रूप में हुआ। परिवार जहाँ अपने व्यक्तियों के आहार को एकत्रित करने के लिए मिलकर

प्रयत्न करता रहा, वहाँ उनके झगड़ों को भी शांत करता था, साथ ही बाहर से आक्रमण होने पर सारे नर-नारी अपनी रक्षा के लिए लड़ने जाते थे। उसी युग में मानव मातृसत्ताके आदिम साम्यवाद से निकल कर जन-युग में पहुँचा, जबकि सामाजिक संगठन कई परिवारों से मिलकर बने जन के रूप में हुआ। नवपाषाण-युग में कृषि और पशुपालनने मातृ-सत्ता हटाकर पुरुष-सत्ता स्थापित करते हुए जनके प्रधान नेता महापितर की सृष्टि हुई। यद्यपि वह आगे आने-वाले राजा का अकुर था, तो भी वह अभी उनसे ऊपर नहीं समझा जाता था, और उसकी प्रतिष्ठा इसीलिए अधिक थी, कि वह योग्य सैनिक नेता और जनके भीतर शांति रखनेवाला योग्य पच था। ताम्र-युग में अब महत्वाकांक्षी व्यक्तियों को आगे बढ़कर सर्वेसर्वा बनने का अच्छा मौका मिला। कृषि और पशुपालन द्वारा कुछ व्यक्तियों के पास अधिक सम्पत्ति जमा होने लगी। इन्हीं व्यक्तियों ने आरंभिक जनयुग के दासताहीन समाज में दासता का आरंभ किया। पहले यदि जनो में युद्ध होता, तो वह बहुत क्रूर होता था (क्रूरता तो आज भी पूँजीवादी युद्ध की एक विशेषता है, कोरिया में सैनिकों से अधिक गाँव के निरीह नर-नारी बच्चे-बूढ़े अमेरिकन बमों के शिकार हो रहे हैं)। आदिम जनो के युद्ध में हारे हुए जन को या तो निःशेषनष्ट हो जाना पड़ता, या अपनी शिकार-भूमि को छोड़ बचे-खुचे आदिमियों को लेकर दूर भाग जाना पड़ता था। उस वक्त पराजित को दास बनाने की प्रथा नहीं थी, बहुत हुआ तो उनकी कितनी ही स्त्रियों को पकड़कर अपनी स्त्री बना लिया। मातृ-सत्ता-युग में विवाह की प्रथा नहीं थी, इसलिए पिता का पता लगना आसान नहीं था, प माता को पहचानने में कोई कठिनाई नहीं थी, इससे भी माता का नाम और शासन चल पड़ा, यद्यपि शरीर में उस वक्त की स्त्री पुरुष से अधिक बलवान नहीं होती थी। आदिम जनयुग में भी विवाह की प्रथा यही तक पहुँच सकी थी, कि पुरुषों का एक झुंड पति माना जाय और स्त्रियों का एक झुंड पत्नी। कृषि और पशुपालन के साथ सम्पत्ति का उत्पादन बढ़ चला अधिक हाथों के का होने पर अधिक काम तथा उससे अधिक सम्पत्ति के उत्पादन का रास्ता निकल आया था, इसलिए वैयक्तिक सम्पत्ति के उत्पादन और स्वामित्व के बलपर जहाँ पुरुष समाज का नेता बन गया, वहाँ इस पितृसत्तायुग के युद्धों में पकड़े गये शत्रुओं को मारने की जगह दास बनाकर जीवित रहने का अधिकार दिया गया। युद्ध की पहले की क्रूरता में इसके द्वारा कुछ कमी हुई, इसमें सदेह नहीं। दासों का श्रम अधिक धन उत्पादन करने लगा।

ताम्रयुग में दासता-प्रथा ज्यादा बढ़ चली—दासों की संख्या अधिक बढ़ने लगी, क्योंकि खेती और दूसरे व्यवसायों में उनके श्रम की बड़ी माँग थी। दास वहीं लोग रख सकते थे, जिनके पास काफी सम्पत्ति थी, जिनके पास काफी काम था। युद्ध रोज-रोज नहीं हुआ करता, कि दास बिना मूल्य के मिलते रहे। इसलिए फुसला-बहका, डरा-धमका, प्रलोभन देकर दास-दासियाँ बनाई जाने लगी। दासों के श्रमने धनिकों के हाथ में और भी सम्पत्ति एकत्रित कर दी, वह धन के बलपर और भी लोगों को हाथ में करने लगे। इस प्रकार ताम्र-युग के साथ एक और बड़ी सामाजिक क्रान्ति यह हुई, कि जनयुग के स्वतन्त्र मानव-समाज के स्थान पर सामन्तयुग की घोर विषमता का समाज स्थापित हुआ। ताँबे के हथियार, उस समय ऐसे ही महँगे थे, जैसे कि आजकल के लड़ाई के बारूदी हथियार। जहाँ सामन्त अपनी सम्पत्ति से महँगे हथियारों को खरीद या बनवाकर, उनके चलानेवाले आदिमियों को भाड़े पर रखकर शक्तिशाली हो सकता था, वहाँ

साधारण आदमी इसकी क्षमता नहीं रखता था। ताम्रयुग के सामन्तो के सामने उनके पिछड़े हुए स्वच्छन्द जन (कबीले) टिक नहीं सकते थे, क्योंकि उनके हथियार निकम्मे थे, चाहे लड़ने में वह अधिक वीर थे। शस्त्र-बल के अतिरिक्त सख्या-बल भी सामन्तो के पक्ष में था, क्योंकि उनके पास सम्पत्ति-बल अधिक था।

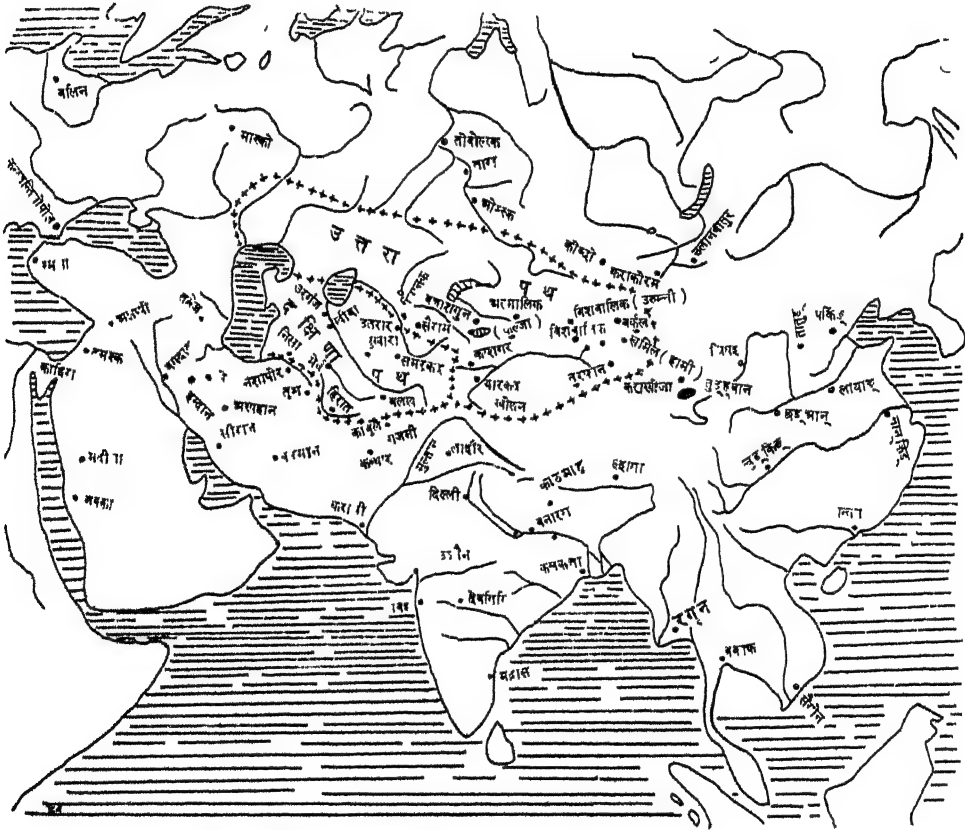
ताम्रयुग ने व्यापार के लिए छोटी-छोटी जन-सीमाओं को तोड़ फेंका और अपने क्षेत्र को व्यापक बनाया। मिस्र कहाँ, मेसोपोतामिया कहाँ, सिन्धु-उपत्यका कहाँ, अनौ और स्वारेज्म कहाँ? आजकल नक्शे में देखने से भले ही वह नजदीक-नजदीक मालूम हो, और विमान द्वारा पहुँचने में भी दूर न मालूम होते हो, लेकिन आज से साढ़े चार हजार वर्ष पहले वह दुनिया के छोर पर अवस्थित थे। लेकिन, ताम्रयुग में हम एक जगह की बनी हुई चीजों को समुद्रों, पहाड़ों और रेगिस्तानों को पारकर दूसरी जगह पहुँचते देखते हैं। व्यापारिक एकता की तरह देशों के एकीकरण में भी इस युग ने बड़ा काम किया। अपने ताम्र के हथियारों के बल पर सामन्त दूसरों को अपने अधीन करते जन-सीमाओं को मिटा राज्यों और महाराज्यों की स्थापना करने में सफल हुए। ताम्रयुग ने मनुष्य को बतला दिया, कि अब छोटे-छोटे जन अपनी रक्षा नहीं कर सकते। मध्य-एशिया का दक्षिणापथ इस समय नवपाषाण युग से ताम्रयुग में आकर ग्राम-नगरों में बसे स्थायी निवासियों का देश था, किंतु इसका उत्तरापथ वर्तमान (कजाकस्तान) अब भी पूर्णतया घुमन्तुओं की निवास-भूमि था। जैसे पिछली शताब्दियों में हम उत्तरापथिक घुमन्तुओं का दक्षिणापथिक निवासियों के साथ बराबर संघर्ष देखेंगे, वही अवस्था ताम्रयुग में भी थी। उत्तर के घुमन्तु जन (कबीले) अपने सरदारों के नेतृत्व में दक्षिण के समृद्ध नगरों और ग्रामों को लूटने के लिए आते, और पीछे उनमें से कितने ही वहाँ बसकर शासन करते, जातियों के सम्मिश्रण और संस्कृतियों के दानादान का काम करते थे।

६ अनौमें

ऐतिहासिक काल में पश्चिमी मध्य-एशिया को दक्षिणापथ और उत्तरापथ इन दो भागों में विभक्त देखा जाता है। दक्षिणापथ से हमारा मतलब है, सिरदरिया और अराल समुद्र से दक्षिण का भाग, जिसमें आजकल तुर्कमानिस्तान, उज्बेकिस्तान और ताजिकिस्तान के गणराज्य मौजूद हैं। उत्तरापथ में किरगिजिस्तान का कुछ भाग और कजाकस्तान सम्मिलित है। दक्षिणापथ में कराकुम और किजिलकुम जैसे दो महान् रेगिस्तान हैं, जिनमें किजिलकुम पुरानी संस्कृतियों की सुरक्षित समाधि-सा है। उत्तरापथ में प्यासी-भूमिका भारी रेगिस्तान है। यही पश्चिम में तलस नदी से पूरब में इली नदी तक, फैला सप्तनद भूभाग है। जो उत्तरापथ का सबसे अधिक आबाद तथा ऐतिहासिक महत्त्व की भूमि है। इसिककुल और बलकाश के दो महासरोवर भी इसीमें हैं। त्यानशान् तथा अल्ताई की पर्वतमालाएँ इसके दक्षिण-पूर्वी तथा पूर्वी छोर पर हैं। सप्तनद उत्तरापथ का एक छोटा भाग है। त्यानशान् पर्वतमाला ही इली नदी से टूटकर उत्तर में अल्ताई का रूप ले लेती है, जो कि अपने ताँबे और सोने की खानों के लिए सदा से प्रसिद्ध है। एक समय सारा एशिया इसी के सोने के ऊपर निर्भर करता था—तुर्की और मंगोल भाषा का अल्ताई (सुवर्णगिरि) नाम यथार्थ ही है।

६. अनौमे ताम्रयुग^१

दक्षिणी कुर्गान की स्थापना के साथ ईसा पूर्व तृतीय सहस्राब्दी के मध्य में यहाँ ताम्रयुग की स्थापना होती देखी जाती है। यह समय मध्य-एशिया के लिए जलवायु के अनुकूल था। अनौके दक्षिण खुरासान में ताँबा मौजूद था, पामीर तथा अल्ताई तो अपने ताँबे की महान् निधियों के लिए प्रसिद्ध हैं ही। अनौ में इस युग में कुम्हार के चक्के का उपयोग दिखाई देता है। मृत्पात्र भी



११ मध्यशिया (उत्तर, दक्षिण व च)

नाना रूप के बनने लगे थे। पात्रों पर मनुष्य, प्राणी और वृक्ष-लता आदि के चित्र होते थे। यद्यपि, आभूषणों में बहुत भेद नहीं हुआ, किंतु अब वह अधिक सुन्दर बनते थे। बहुमूल्य पत्थरों का उपयोग बड़ी कला मकता के साथ किया जाता था। पता लगता है, इस युग में अनौवालों का सिन्धु-उपत्यका, और ममोपोतामिया से संबंध था। काल्दिया, असीरिया और सिन्धु-उपत्यका में बहु-पूजित माता-माई का सम्मान यहाँ भी बहुत अधिक था। घर के भीतर अब भी मृत शिशुओं को दफनाया जाता था। इस युग में निम्न चीजों का भाव और अभाव देखा जाता है

^१ Exploration in Turkistan, pp 18-19

भाव	अभाव
कुम्हार का चक्का	कलई वाला मृत्पात्र
ताबा और मामूली चित्र	पक्की ईंटे
घर (पूर्ववत्)	बर्तन की मुठिया
किवाड की चूल के नीचे पथरी (पूर्ववत्)	धातु या पाषाण का कुल्हाड़ा
गाय, बैल, देवी की मिट्टी की मूर्तियाँ	लोहा
हड्डी के शर-फल	धातु में सीसा का मिश्रण
ताँबे का हँसिया, माला और बाण के फल	लेख
जानकर ताँबे में सीसे की मिलावट	
करवट शव-समाधि	

७. ख्वारेज्म में ताम्रयुग

ख्वारेज्म की किजिलकुम की मरुभूमि में नवपाषाण युग से लेकर १२वीं-१३वीं सदी ईस्वी तक के बहुत से ध्वसावशेष मिलते हैं, जिनमें ई० पू० चौथी सहस्राब्दी से तीसरी सहस्राब्दी के आरंभ तक केल्ट मीनार संस्कृति का अस्तित्व पाया जाता है। यह संस्कृति मुख्यतया मत्स्यजीवी तथा शिकारी मानवों की थी। इसके अतिरिक्त यह लोग खेती भी किया करते थे। कई बातों में यह अनौके नवपाषाण-युग से समानता रखते थे। ईसापूर्व तृतीय सहस्राब्दी के मध्य में ख्वारेज्म ताम्रयुग में अथवा स्थानीय पित्तलयुग में चला गया। वस्तुतः सारे मध्य-एशिया में ताम्रयुग और पित्तलयुग का भेद स्पष्ट नहीं पाया जाता।

ख्वारेज्म में पित्तलयुग का परिचय ताजाबागयाब (ई० पू० दूसरी सहस्राब्दी) और अमीराबाद (१०००-६००० ई० पू०) की संस्कृतियों में मिलता है।^१

अनौ और ख्वारेज्म के रहनेवाले एक ही जाति के मालूम होते हैं, जो उस समय अराल से लेकर सिड्कियाड (पूर्वी तुर्किस्तान) तक फैले हुई थी। रूसी विद्वान् स प ताल्सतोफका मत है, कि यह जाति मुण्डा-द्रविड जाति से संबन्ध रखती थी। ख्वारेज्म की इस संस्कृति का मिन्धु-उपत्यका (मोहनजोदरो) की संस्कृति से इतना सादृश्य है, कि दोनों को आकस्मिक न समझ एक मानना ही अधिक युक्तियुक्त है।

८ लिपि आदि

ताम्रयुग सभी देशों में लिपि के प्रचार का युग है। व्यापार और राज्य के विचार के कारण लिखित संकेतों द्वारा सूचना देना अत्यावश्यक था। हम मोहनजोदरो में इस युग में लिपि का उपयोग देखते हैं, यद्यपि वह अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी है। मेसोपोतामिया और मिस्र में तो हजारों अभिलेख मिले हैं। ख्वारेज्म में भी कुछ चिह्न मिले हैं, लेकिन कहा नहीं जा सकता, कि

^१ क्रत्किये सोओबश्चेनिया vol 13 pp 46-50, देखो आगे ४।२

वह लिपि है या शिल्पियों के संकेत मात्र । कुछ भी हो, धातु-युग में प्रवेश करने के बाद किसी तरह की लिपिका होना आवश्यक हो जाता है । उसके साथ ही गणित और नाप-तौल भी राज्य और व्यापार के संचालन के लिए आवश्यक होते हैं, इसीलिए यह कल्पना करना गलत नहीं होगा, कि ताम्र-पित्तलयुग में मध्य-एशिया में उन चीजों का उपयोग होने लगा था ।

स्रोत-ग्रंथ

- 1 General Anthropology (Franz Boas)
- 2 Our Early Ancesters (M C Burkitt)
- 3 Exploration in Turkistan 2 vols (R Pumpelly)
- 4 कर्कश सोओबश्चेनिया vol XIII (लेनिनग्राद)
- 5 अखेंओलोगिचेस्किये रस्कूप्कि व् त्रिअलोति (गुर्जी, त्बिलिसि १९४१)
- 6 The Most Ancient East (V G Childe, London 1928)
- 7, The Primitive Society (R H Lowie, 1920)

अध्याय २

पित्तल-युग (७०० ई० पू०)

१ युग की विशेषता

- ताँबे में दशाश राँगा (टिन) मिला देने से पीतल बन जाता है। ईसा पूर्व २००० ई० पू० में मानव को यह सूत्र मालूम हो गया था। राँगा मिला देने से जहाँ धातु का रंग बदल जाता है, वहाँ वह अधिक कड़ी भी हो जाती है। ताँबे में राँगा संभवतः अकस्मात् ही मिला। आजकल टिन पैदा करनेवाले देश मलाया, दक्षिणी अफ्रीका, खुरासान (ईरान), टस्कनी (जर्मनी), चेकोस्लोवाकिया, स्पेन, दक्षिणी-फ्रान्स, कार्नवाल (इंग्लैंड) आदि हैं। काकेशस, शाम में भी राँगा मिलता है। काकेशस, चेकोस्लोवाकिया, स्पेन और कार्नवाल में पास ही पास राँगे और ताँबे दोनों की खानें हैं। जान पड़ता है, ताम्रकारों ने कभी गलती से राँगे की धूल भी ताम्र-धूल के साथ मिला दी, जिससे चमत्कारपूर्ण एक नई धातु तैयार हो गई और फिर काफी तजर्बे के बाद मालूम हुआ, कि दशाश राँगा मिलने से अच्छा पीतल बनता है। शायद राँगे का सुलभ न होना ही मिस्र और मेसोपोतामिया में ताम्र युग के देर तक रहने का कारण हुआ। सिन्धु-उपत्यका और सुमेरिया (मेसोपोतामिया) में जो ताँबे की चीजे मिली हैं, उनमें निकल का भी अंश है। उसे जान-बूझकर मिलाया नहीं कह सकते, बल्कि उसका कारण इन देशों में उम्माँ की ताम्र-धूलों का उपयोग होना था, जिनमें कि काफी निकल होता है।

पीतल के आविष्कार के साथ धातु-विज्ञान और आगे बढ़ा। यह उस महान् धातु-युग का आरम्भ था, जिसका विकास आधुनिक धातु-युग में हजारों तरह के मिश्रित धातुओं के रूप में देखा जा रहा है। काकेशस दक्षिणापथ से कास्पियन समुद्र के परले पार है, जहाँ पहुँचने के लिए उसके दक्षिण से सुगम स्थल-मार्ग भी था। काकेशस में पीतल बनाने के लिये राँगे की जगह सुर्मे का इस्तेमाल होता था। सुमेरियन लोग सीसा मिलाकर पीतल बनाते थे। यह स्मरण खना चाहिए, कि जस्ता (ज़िंक) और ताँबे के मिश्रण से तैयार हुआ काँसा बहुत पीछे बनने लगा, जब कि मानव लौह-युगमें पहुँच चुका था। नवपाषाण-युग और ताम्र-पित्तल-युगकी बस्तियोंमें एक और महत्त्वपूर्ण भेद देखा जाता था नवपाषाण-युगीन बस्तियाँ हर बात में स्वावलम्बी देखी जाती थी, किन्तु ताम्र-पित्तल-युग के आरम्भ होते ही वह स्वावलम्ब खतम हो गया, क्योंकि अब धातुओं के हथियारों या उसके कच्चे माल के लिए दूसरे देशों पर निर्भर रहना पड़ता था।

^१The Bronze Age (V G Childe) p. 2 (मिस्र, मेसोपोतामिया और सिन्धु-उपत्यकाएँ ३६००-६००० ई० पू० तक)

२. ख्वारेज्ममे पित्तल-युग*

ताजाबागयाब-संस्कृति पित्तलयुग की संस्कृति मानी जाती है, जो कि ईसापूर्व दूसरी सहस्राब्दी में मौजूद थी। अड़का-कला, तेशिककला आदि के ध्वसावशेष इस संस्कृति से सबंध रखते हैं। इस युग का मानव कृषक और पशुपाल था। उसका समाज मातृसत्ताक जन था। गाँव किस तरह के होते थे, इसका अच्छी तरह पता नहीं लगा, जिसका कारण निर्माण-सामग्री का स्थायित्व-हीन होना हो सकता है। इस समय के मृत्पात्र बिना मुठिया के होते थे, लेकिन काले-लाल रंगों के सजाने के अतिरिक्त कच्चे बर्तन पर खोदकर भी उन्हें अलंकृत किया जाता था।

इसी युग में अमीराबाद की संस्कृति (ई० पू० प्रथम सहस्राब्दी का पूर्वार्ध) भी है, जिसे प्राग्-लीह संस्कृति भी कहा जाता है। यह मानव भी मातृसत्ताक जन-समाज में पहुँचा था। कृषि, पशुपालन इसकी मुख्य जीविका थी। जानबासकला आदि के ध्वसावशेष इसीके हैं।

३ सप्तनदमें

ईसा-पूर्व द्वितीय सहस्राब्दीके अन्तमें उत्तरापथका सप्तनद प्रदेश भी पित्तल-युगमें पहुँचा। तलम्, चू, इली आदि सात नदियोंके कारण इस प्रदेश का यह नाम पड़ा। हो सकता है सप्त-सिन्धु जैसा ही कोई इसका मूल नाम रहा हो, जिसे कि तुर्की और मँगोल भाषाओं से रूसी में अनुवादित होकर आजकल सेमी-रेच्ये (सात नदी) कहा जाता है। इस प्रदेशको यह भी बड़ा लाभ था, कि अल्ताईकी ताबेके खाने इसके पास थी। आजकल भी बल्काश सरोवरके उत्तरमें अवस्थित करागदा के कारखाने सोवियत-रूसके ताँबा बनानेके सबसे बड़े कारखाने हैं। हालमें सप्तनदके किनारे ही पुराने नगरोंके ध्वसावशेषोंकी खोदाई हुई है, जिनमें तरज (जम्बूल), सरिग तथा बालासगून (दोनों किर्गिजस्तान की चू उपत्यकामें), कोइलूक (इली-उपत्यका) खास महत्त्व रखते हैं। १९४१ में महान-चूनहर तैयार हुई, जो प्राचीनकालकी परित्यक्त वस्तियोंके भीतर होकर गुजरी। यहाँ खोदने समय हजारों पुरातत्त्व-सामग्री प्राप्त हुई। चू और इलीके द्वाबे में पित्तलयुग का केन्द्र था। यहाँके लोग कृषि, मछुवाई और शिकारीका जीवन बिताते थे।

१ अद्रोनीय—पित्तलयुगमें उत्तरापथमें अद्रोनी, करासुक और मिनूसून लोगोंकी जिन संस्कृतियोंका पता लगा है, वह भी शिकारी, मछुवाई और कृषिसे जीविका करते थे। अद्रोनीय संस्कृति का समय १७००-१२०० ई० पू० माना जाता है। यह उत्तरापथके उत्तरी भागमें येनेसेइ नदीमें उराल तक फैली थी। उस्त-गुरबाके पास अद्रोनीय संस्कृतिमें सबंध रखनेवाली कितनी ही चीजें मिली हैं। इनके मृत्पात्रोंमें ज्यामितीय आकृतियोंका अलंकरण देखा जाता है।

२. करासुक—१२००-८०० ई० पू० में उत्तरापथमें हम करासुक संस्कृतिका पता पाते हैं। अल्ताई पर्वतमालाके पश्चिमोत्तरमें इसकी कितनी ही कब्रें मिली हैं, जिनकी चीजें अद्रोनीय जैसी हैं।

३ मिनूसून—पित्तलयुगमें उत्तरापथमें एक और संस्कृतिका पता लगा है, जिसे मिनूसून कहते हैं। इसकी भी बहुत सी कब्रें मिली हैं, जिनमें मुर्दोंके साथ पीतलके आभूषण, छुरे,

* क्रत्किये सोओब्श्चेनिया, XIII, 110-18

तलवार, कुल्हाड़े आदि रखे प्राप्त हुए हैं। येनेसेइ नदीके किनारे तक इसका पता लगता है। शायद इस जाति का केन्द्र उत्तरापथके पूर्वोत्तर था और बेकालके पास तक फले खकामी लोगोंके साथ इसका सबध था।^१

उत्तरापथकी उपरोक्त तीन सस्कृतियां जिस समय समाप्त होती हैं, उसके अनंतर ही शक लोगोंका उत्तरापथमें स्पष्ट पता लगता है। इससे अनुमान होता है, कि यही शकोके पूर्वज थे। नवपाषाण-युग और अनवपाषाण-युगमें दक्षिणापथ ही नहीं उत्तरापथ और सिङ्क्याङ्क (तरिम-उपत्यका) तकमें हम मुडा-द्रविड जातिका पता पाते हैं। ईसा-पूर्व ७वीं-८वीं शताब्दीसे देखने हैं, कि सारे मध्य-एशियामें हिन्दू-युरोपीय वंशकी शक-आर्य शाखाका ही पर प्राधान्य है। कोई आश्चर्य नहीं, यदि मुडा-द्रविड और हिन्दू-युरोपीय कालके बीचमें उत्तरापथमें रहनेवाली पित्तलयुगकी उक्त तीनो जातियां वही हों, जिन्होंने मध्य-एशियासे मुडा-द्रविड-वंशके प्राधान्यको खतम किया, और स्वयं उनका स्थान लेकर आगे उत्तरापथ और सिङ्क्याङ्कमें शक और दक्षिणापथमें आर्यके रूपमें अपनेको प्रकट किया। इससे यह भी मालूम होता है, कि मध्य-एशियामें हिन्दू-युरोपीय जन ईसा पूर्व तीसरी सहस्राब्दीके मध्यमें पहले नहीं थे। ऐसा होने पर उनकी एक शाखा हिन्दू-आर्योंका भारतमें पहुंचना ईसा-पूर्व दूसरी सहस्राब्दी के मध्यमें अधिक युक्तियुक्त मालूम होता है।

४ अनौमें

अनौमें दक्षिणी कुर्गान ताम्र-पित्तल-युगका अवशेष है, तो भी इस स्तरमें हम पित्तलकी जगह ताम्रकी ही प्रधानता देखते हैं। लोगोंके बारेमें भी हम निश्चित नहीं बतला सकते, कि वह नवपाषाण-युगकी तरह मुडा-द्रविड जातिके थे अथवा हिन्दू-युरोपीय आर्य।

५ जातियाँ

मध्यपाषाण-युगसे पित्तल-युगके अन्त तक हमें मध्य-एशियामें चार मानव जातियोंका पता लगता है। मध्य-पुरापाषाण युगमें उत्तरापथकी प्यासी-भूमि, और अल्ताईमें मुस्तेर मानवके अवशेष मिले हैं, इसी तरह दक्षिणापथमें सोगद और तुखार (मध्य-वक्षु उपत्यका) में भी मुस्तेर मानवका पता लगता है। १२ हजार वर्ष पूर्व मध्य-पाषाण युगीन मानवके अवशेष उत्तरापथमें किपचक (प्यासी-भूमि) और सप्तनदमें तथा दक्षिणापथमें सिर उपत्यका, सोगद और ख्वारेज्ममें मिलते हैं।

ताम्रयुगमें अनौ, ख्वारेज्मसे सप्तनद तक मुडा-द्रविड जातिकी प्रधानता थी। पित्तल युगमें आर्यों और शकोके पूर्वज सारे उत्तरापथ और दक्षिणापथमें फैले। मुस्तेर और मध्य-पाषाण युगीन मानवके सबधमें हम निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकते। मध्य-पाषाण युगीन मानव, हो सकता है, नवपाषाण युगके मुडा-द्रविडका ही पूर्वज हो, और यह भी हो सकता है, कि

^१ “नेकतोरिये इतगी आखेंआलोगिचेस्किख रवोत् व् सेमिरेच्चे” (अन० बेर्नेस्तम) “क्रत्किये सोओब्” XIII, 110-18

^२ Expl in Turk. p 18-19

वे ही, उन हिंदू-यूरोपीयोंके पूर्वज हो, जो कि नवपाषाण-युगके आरम्भमें यूरोपकी ओर भागनेके लिये मजबूर हुए। ऐसी अवस्थामें मुंडा-द्रविड-वंशके लोग भूमध्यीय वंशके होनेके कारण दक्षिण या दक्षिणपूर्वसे मध्य-एसियामें घुसे होंगे। पित्तलयुगमें मध्य-एसिया खाली करके जानेवाले हिंदू-यूरोपीय वंशकी एक शाखाको फिर हम उनके पूर्वजोंकी भूमिमें लौटते देखते हैं। ये ही शको और आर्योंके जनक थे। इनके आनेके बाद मुंडा-द्रविड लोगोंका क्या हुआ, शायद वहां भी वही इतिहास पहिले ही दोहरा दिया गया, जो कि भारतमें पीछे हुआ—अर्थात् कुछ मुंडा-द्रविड पराधीन होकर वही रह गये और धीरे-धीरे विजेताओंने उन्हें आत्मसात् कर लिया, कुछ लोग पराधीनता न स्वीकार कर खाली पडी हुई भूमिमें आगे खिसक गये। अल्ताईसे सिड कयाड तक फैले मुंडा-द्रविड जातियोंके इन्ही भागे हुए अवशेषोंको हम आज बोलगाके उत्तरके बन्खडोमें रहनेवाली कोमी, बाल्तिकके पूर्वी तट पर बसनेवाली एस्तोनी और फिनलैण्डमें बसनेवाली फिन जातिके रूपमें पाते हैं। किसी समय मास्को और लेनिनग्रादका सारा भूभाग उसी जातिका था, जिसकी शाखायें वर्तमान कोमी, एस्तोनी और फिन हैं। फिन भाषाका द्रविड भाषासे सबंध भी इसी बातकी पुष्टि करता है, कि शकार्यों और द्रविडोंके संघर्षके ही परिणामस्वरूप उनका एक भाग जो उत्तरकी ओर भागा, वही फिन जाति है। इस प्रकार मुंडा-द्रविड कहनेकी जगह हम नवपाषाण-युगकी मध्य-एसियायी प्राचीन जातिको फिनो-द्रविड कह सकते हैं। उत्तरकी उक्त तीनों जातियोंमें कोमी दूसरोंके सम्पर्कमें सबसे कम आई। यद्यपि आज इन फिनो-द्रविड जातियोंका रंग यूरोपियनों जैसा गोरा ही नहीं होता, बल्कि इनके बाल पिगल होते हैं—काले केशोंका तो उनमें कहीं पता नहीं लगता। लेकिन, यदि कोमी नर-नारियोंका फोटो देखें, तो मालूम होता है, कि हम दक्षिणके किमी शुद्ध द्रविड व्यक्तिका फोटो देख रहे हैं। कदमें भी यह लोग नाटे और शरीरमें एकहरे होते हैं।

फिनो-द्रविड नृत्वके अध्ययनके लिये उपयोगी सामग्री भारतमें ही नहीं सोवियत रूसमें भी बहुत है, जिसकी ओर हमारे देशके विद्वानोंका ध्यान ना चाहिये।

स्रोत-ग्रन्थ

- 1 The Bronze Age (V G Childe, Cambridge 1930)
- 2 ऋत्तिके मोओब्रश्चेनिया Vol XIII (लेनिनग्राड) 1946
- 3 Exploration in Turkistan (R. Pumpelly)
- 4 General Anthropology (F. Boas)
- 5 In the Beginning (G Elliot Smith) (London 1946)
- 6 Le' Humanité' Prehistorique (J de Morgan)

अध्याय ३

लौहयुग (७०० ई० पू०)

ईसापूर्व द्वितीय सहस्राब्दीमें पित्तलयुगमें पहुँचने पर भौगोलिक तौरमें हम शको और आर्योंका भेद स्पष्ट दिखाई पड़ता है। इस समय शक यक्सर्त नदी (सिर-दरिया), अरालसमुद्रसे उत्तर रहते थे, उनके दक्षिणमें आर्योंका निवास था। सुग्ध (जरफशा-उपत्यका), ह्वारज्म (ख्वारज्म) से लेकर पहले हिंदूकुश और खुरासानके पर्वतों तक और थोड़े ही समय बाद फारसकी खाड़ी और सिन्धु तथा गंगाकी कछारों तक आर्य पहुँच गये। ग्रीक इतिहासकारोंके अनुसार हम यह भी जानते हैं कि दुनाई (डेन्यूब) से त्यानशान तक फैली घुमन्तू जातिको शक, स्कुथ अथवा सिथ कहते थे।^१ ग्रीक और उसका अनुसरण करनेवाली अग्रेजी भाषामें उसका चाहे कितना ही बुरा अर्थ हो, किन्तु शक शब्दमें ऐसा कोई बुरा भाव नहीं है। ग्रीक लेखकोंके अनुसार शक लोग अपनेको स्कोल या सकोल कहते थे। दार्योशने अपने बहिस्तूतके अभिलेखमें, उन्हें शक नामसे पुकारा है। भारत भी ईरानकी इस रायसे सहमत है। बहुतसे लेखक कालासागरके उत्तरमें रहनेवाले सिथियों और सिरदरियाके उत्तरमें घूमनेवाले शकोमें अन्तर करना चाहते हैं। इतने दूर तक फैले हुये घुमन्तू जनमें कुछ स्थनीय भेद हो सकता है, लेकिन इससे उन्हें हम अलग नहीं मान सकते। ग्रीक इतिहासकार ई० पू० ५वीं शताब्दीमें भी यह माननेके लिये तैयार थे, कि कालासागरसे सिरदरिया तकके घुमन्तूओंमें रीति-रिवाज, खान-पान और वस्त्र-भूषण में अन्तर नहीं था। उनके हथियार भी एक तरहके होते थे। दोन नदीको पूर्वी और पाश्चिमी शकोकी सीमा माना जाता था।

१ शकद्वीप

युरेसिया द्वीपमें एक समय दुनाइ (डेन्यूब) से त्यानशान-अल्ताई (पर्वत-श्रेणी) तक फैली शक जातिकी भूमिको हम पित्तलयुगके आरम्भमें भारतीय परिभाषाके अनुसार शक द्वीप कह सकते हैं, पुराने ईरानी शब्दानुसार शकानवेइजा या पीछेकी भाषाके अनुसार शकस्तान भी कह सकते हैं। लेकिन ई० पू० द्वितीय शताब्दीमें शकोके बस जानेके कारण ईरानके पूर्वी भागको शकस्तान या सीस्तान कहा जाने लगा। इस भागको हम आदि-शकस्तान कह सकते हैं, इसी परिभाषाके अनुसार हम अराल और सिरदरियाके दक्षिणकी भूमिको आर्यद्वीप, आर्यान-

^१ “अल्ताइ व् स्किफ्स्कोये त्रेमिया” (स० ब० किसेलेफ), वेस्लिक ड्रेव्नेइ इस्तोरिड १९४७ पृ० १५७-७२, क्लकये सोओबश्चेनिया XIII, p 112 में वेर्नश्ताम का लेख भी इसी विषय पर। इसका समर्थन पुन वेर्नश्तामने किया है “इस्तोरिको-कुलतुर्नोये प्रोश्लोये सेवेर्नोइ किर्गिजि पो मतेरिलियाम् वोल्शवो चुइस्कओ कनाला” में (फ्रुन्जे १९४३)

वेइजा या आर्यस्थान कह सकत है। पीछे अवेस्तामे आर्यानवेइजा एक छोटा सा प्रदेश था, जिसे आधुनिक इतिहासकार कभी खुरासान कभी बाह्लीक (बाख्तर), आजुर्बाइजान या, कभी ख्वारेज्म मानते हैं। इसलिये भ्रमसे बचनेके लिये हम इसे आर्यद्वीप ही कहे, तो अच्छा।

शकद्वीप और आर्यद्वीपका यह भेद बहुत दिनो तक नहीं चला। हूणोंके प्रहारसे १७४ ई० पू० से ही शक पूरबके शकद्वीपको छोड़नेके लिये मजबूर हुए, और अगली पौने ६ शताब्दियोंमे शकोको छिन्न-भिन्न करते हुए हूण ओर उनके वंशज डेन्यूबके तट तक पहुच गये। उनके इस महाभियानके कारण ईसाकी चौथी शताब्दी मे पूर्वी शकद्वीप हूणद्वीपके रूपमे परिणत हो गया, और दोन नदीसे पश्चिमके शकद्वीपमे भी कालासगरके करीब बसनेवाली गाथ, सरमात (शक-वंशज) जातियोंको अपने पुराने स्थानोको छोडकर उत्तर या पश्चिम मे भागना पडा। हम यह भी जानते हैं, कि पूर्वी शकद्वीपको पूर्णतया खाली करनेका ही परिणाम हुआ—ग्रीक-बाख्तर राज्यका ध्वंस, भारतमे ग्रीक (यवन) राज्यका विनाश और भारतके राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन पर शकोकी स्थायी छाप।

शको और आर्योंका भेद आपसमे चाहे कितना ही हो, किन्तु विशाल हिंदू-युरोपीय वंश पर विचार करनेसे वह भेद बहुत नगण्य सा है। मध्य-पाषाण-युगके अन्त अथवा नवपाषाणयुगके आरम्भ मे, जब प्रकृतिके प्रकोप तथा फिनो-ब्रिड (मोहनजोडरो) जातिके प्रहारके कारण हिंदू-



युरोपीय जनगण मध्य-एशिया छोडकर युरोपकी ओर जानेके लिये मजबूर हुआ, उस समय अभी उनके भीतर केल्ट और शनमुका न भाषा-भेद हुआ था और न शकार्य तथा पश्चिमी हिंदू-युरोपीयका ही भेद। ग्रीक, रोमक, गाथ, केल्ट आदिके सम्मिलित जनगणका कोई एक नाम निश्चित

न होनेसे हम उसे पश्चिमी हिंदू-यूरोपीय जनगण कहते हैं। मध्य-एशियासे हिंदू-यूरोपीय जनोका युरोपमें जाना सभी स्वीकार करते हैं, और इसमें भी सहमत हैं, कि वह नवपाषाण-युगमें हुआ। नवपाषाण-युगकी एक विशेषता है कृषि, लेकिन कृषिके हथियारों और धान्योंके लिये एक प्रकारकी शब्दावली हम केन्तम् और शतम् भाषाओमें नहीं पाते। केन्तम् की बात तो दूर शतम् भाषाओमें भी कृषि-संबंधी एक तरहके शब्द नहीं मिलते, इसमें यह कहना उचित नहीं जचता, कि नवपाषाण-युगमें हिंदू-यूरोपीय मध्य-एशियासे पश्चिममें गये, शतम् और केन्तम् का भेद हुआ, शक और आर्य दो स्वतन्त्र जनोमें विभक्त हुए। यदि हम नव पाषाण-युगमें पहले इन विभाजनको मानें तो भाषाशास्त्रके अनुसार इसमें कोई हरज नहीं पड़ता, किन्तु कालके अनुसार बहुत लम्बा समय भाषाओके परिवर्तनके लिये देना पड़ता है। इस शतम्-केन्तम् और शक-आर्य भेदके समयको निर्धारित करनेके लिये शायद मध्य-एशियाकी मरुभूमि इतिहास-वैज्ञानिकोंकी सहायता करे।

ऊपर कहे आर्यद्वीपमें भूमध्यीय जाति चली आई, यह अनौ (दक्षिणी तुर्कमानिया) और ख्वारेज्मकी पुरातात्विक खोजोंसे सिद्ध है, किंतु शकद्वीपमें भूमध्यीय जातिका कोई इस तरहका हस्तक्षेप दिखाई नहीं पड़ता। मध्यपाषाण युग हो या नवपाषाण-युग, इसी समय पश्चिमकी ओर भागे हिंदू-यूरोपीय जनगणकी शाखा शकार्य मध्य-एशियामें पहुँचकर फिरसे अपना द्वीप कायम करनेमें सफल हुई। यहाँ आर्योंका सम्पर्क उसी भूमध्यीय जातिसे हुआ, जिसकी समुन्नत संस्कृतिके अवशेष सिन्धु-उपत्यका और मसोपोतामियामें मिलते हैं। इस सम्पर्कके कारण आगे बढ़नेमें बहुत सहायता मिली और आर्य जल्दी जल्दी पित्तलयुगको पार हो लौहयुगमें पहुँच गये। ऐसे सम्पर्क के अभावके कारण शकद्वीपके शक सामाजिक विकासमें उतने नहीं बढ़ सके। ई० पू० ६ठी ५वीं शताब्दीमें, जब कि आर्योंके स्थानोंमें लोहेका खूब प्रचार था, शकलोंग अभी पीतलकी ही तलवारों, बाण और भालेके फलोंको इस्तेमाल करते थे। दार्योशकी सेनामें सम्मिलित ग्रीक लोगोंसे लड़ते इन शक सैनिकोंके बारेमें लिखते हुए ग्रीक इतिहासकार कहते हैं, कि उनके देशमें चादी और लोहा नहीं होता, इसीलिए इन धातुओंका प्रचार उनमें नहीं है; साथ ही सोने और तांबेकी बहुतायत है, इसीलिए वह हथियारोंके लिये पीतल और सौंदर्यके लिये सोनेका मुक्तहस्त हो उपयोग करते हैं। इस समयके पीछे तथा हूणोंके प्रहारसे पहले ही काला-सागरके तट पर रहनेवाले शक भी पशुपाल-धूमन्तू-जीवनको पूर्णतया या अशत छोड़कर कृषिजीवी ग्रामवासी बन गये। शकद्वीपका सारा पूर्वी भाग तब तक अपने पशुपाल-धूमन्तू-जीवनको छोड़नेके लिये तैयार नहीं हुआ, जब तक कि हूण उनको इस भूमिसे भगानेमें समर्थ नहीं हुये। १२८ ई० पू० में चीनी सैनिक-पर्यटक चाङ्क्यान जब उनके केन्द्र बाख्तरमें पहुँचता, तो एक विशाल वैभवशाली राज्यके स्वामी होनेके बाद भी अभी शकोंको उसने तम्बुओंमें रहते अपने घोड़ों और भेड़ोंके जगह जगह चराते-धूमते देखा—अर्थात् अब भी वह अपने पुराने जीवनसे चिपके रहना चाहते थे। स्थायी निवासियोंको लडाकू धूमन्तू जातियाँ आमतौरमें डरपोक कह कर धृणाकी दृष्टिसे देखती हैं। डरपोक न होने देनेके लिये तैमूर विश्वविजेता बननेके बाद तथा नवीन समरकन्द जैसी बड़े बड़े प्रासादोंकी नगरीका संस्थापक होते हुए भी धूमन्तू जीवनका अभिनय करता था। यह अभिनय बिल्कुल बेकारकी चीज नहीं थी। वस्तुतः धूमन्तू जीवन युद्धके लिये सदा तैयार सैनिक जीवन जैसा है। अन्तर इतना ही है, कि सैनिक जहाँ धूमनेके लिये स्वतन्त्र

होने पर भी स्त्री और बाल-बच्चोंके सबधसे वंचित रहता है, वहाँ घुमन्तूका सारा परिवार (नर-नारियो और बच्चे-बूढ़ों सहित सारा जन) सेनाका अभिन्न अंग होता है। वह जैसे आक्रमणके लिये एक क्षणकी सूचनामे तैयार हो सकता है, वैसे ही सैनिक अवश्यकता पडने पर भागनेके लिये भी तैयार हो सकता है। घुमन्तू विजेताको जहाँ शत्रुके समस्त नगर और गाँव लूटपाटके लिये खुले मिलते हैं, वहाँ उनपर विजय प्राप्त करनेवाले नागरिकोंको कुछ भी हाथ नहीं आता। यही कारण है, जो घुमन्तू लोग सहस्राब्दियों तक अजेय साबित हुए। चीनने हूणोंको बार बार मार भगाते जब सफलता नहीं पाई, तो अपनी प्रतिरक्षाके लिये महा दीवार खड़ी की। कुरव महान् मसागेत घुमन्तूओंके साथ लड़ते लड़ते मारा गया। उसके उत्तराधिकारी दारयोशको भी ५१३ ई० पू० में पश्चिमी शको पर आक्रमण करके पछताना पड़ा। ग्रीक लोगोंका तजर्बा इससे बेहतर नहीं था।

२. शक लोग

घुमन्तू जीवनमें जहाँ सैनिक और राजनीतिक दृष्टिसे कितने ही सुभीते हैं, वहाँ सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिमें यह घाटेका सौदा है। दूसरी जातियोंके लौहयुगमें चले जानेके बाद भी शकोंका पित्तलयुगमें पड़ा रहना सामाजिक गतिरोध ही था। हम जानते हैं, सामाजिक विकासके अनुसार भाषाका विकास होता है। शक भाषाके बहुत कम ही नमूने हमारे पास तक पहुँचे हैं, और जो पहुँचे भी हैं, वह ईसवी सन्के आरम्भ होनेके बादके हैं। लेकिन शकोंके उत्तराधिकारियोंकी भाषा देखनेमें मालूम होता है, कि उनकी भाषा जो विश्लेषात्मक न हो, सश्लेषात्मक ही रह गयी, उसका कारण पूर्वजोंका यही सामाजिक गतिरोध था। भारतीय आर्योंकी भाषामें परिवर्तन भारतमें आते ही होने लगा, जब कि अपने सारे शतम् वशमें अपरिचित टवर्गका ऋग्वेद तकमें प्रयोग होने लगा। हमारी भाषामें मौलिक परिवर्तन (सश्लेषात्मकसे विश्लेषात्मक होना) जहाँ ईसाकी छठी-सातवीं शताब्दीमें हो चुका, वहाँ शकोंके आधुनिक वंशज स्लावो (रूसी आदि जातियों) की भाषा आज भी सश्लेषात्मक है—उसमें क्रिया तथा शब्दके रूपोंमें प्रत्यय संस्कृत की भाँति अभिन्न अंगके तौर पर प्रयुक्त होते हैं और सहायक क्रियाओंका उपयोग आज भी नहीं देखा जाता। इससे उनमें यह विशेषता देखी जाती है, कि भाषाके ढाँचेकी दृष्टिसे स्लाव भाषाये संस्कृतसे जितनी नजदीक हैं, उतनी हमारे यहाँ की कोई भी जीवित भाषा नहीं है।

दारयोश एक आर्य राजा था। उसने ५१३ ई० पू० में युरोपके भीतरसे कालासागरके किनारे किनारे उत्तर में बढ़कर शकोंके ऊपर असफल आक्रमण किया था। ग्रीक इतिहासकारों द्वारा उद्धृत शक परम्पराके अनुसार इस आक्रमणसे १००० वर्षपूर्व शकोंका प्रथम राजा हुआ था। इसमें सन्देह है, कि जब तक शकोंकी भूमिमें शक रहे, तब तक कोई उनका वास्तविक राजा हुआ होगा। शक घुमन्तूओंके सरदार या नेताओं को भी दूसरोंकी देखादेखी राजा माना गया होगा। शकोंमें स्त्रियोंका विशेष स्थान था, बल्कि ई० पू० चौथी-पाँचवीं शताब्दीमें दोनसे पूर्व रहनेवाले शक जनगणका नाम सरमात या सर्वमात इसीलिए पड़ा था, कि उनमें माता (स्त्री) सर्व-सर्वा होती थी। स्त्रियाँ मृत जन-पतिका स्थानापन्न ही नहीं होती थी, बल्कि वह सेना-संचालन भी करती थी।

इतिहासके आरम्भमें शकोंमें जो रीति-रवाज, वेष-भूषा देखी जाती थी, वह बहुत पुराने कालमें चली आई थी। चीनी और ग्रीक दोनों लेखक इस बातमें सहमत हैं, कि शकोंका मुख्य

भोजन मास और मुख्य पान दूध था। मासके साथ ताजा खून पीना भी उनमें प्रचलित रहा होगा, तभी तो युद्धमें प्रथम गिरे शत्रुका गरम-गरम खून वह पाण्डव भीमकी तरह पीते थे, शत्रु सरदारकी खोपडीका कटोरा बनाकर बड़ी सावधानीसे रखते थे। यह दोनों प्रथायें हूणोंमें भी देखी जाती हैं, यद्यपि वह मगोलायित थे। चंगेज खां के मंगोल सैनिकोंके इतने सफल होनेमें एक कारण उनका घोड़ा था, जिसपर चढ़कर वाण चलाते हुए जहाँ वह युद्ध कर सकते थे, वहाँ अवश्यकता पड़ने पर घोड़ेकी नसमें छेदकर उसके खूनसे भूखको शान्तकर फिर लड़नेकेलिये ताजा हों जाते थे। विवाह-प्रथा शकोमें बहुत प्रारम्भिक रूपमें थी। कई भाइयोंकी एक स्त्री हो सकती थी और स्त्रियोंके एक समूहका पुरुषोंका एक समूह पति समझा जाता था, अर्थात् यथ-विव।ह उनमें प्रचलित था। किसी सरदारके मरने पर उसकी एक पत्नीको अवश्य कब्रमें अपने पतिका साथ देना पड़ता था। मिस्री सामन्तोंकी तरह शकोमें भी शव-क्रिया बड़ी गानसे सम्पन्न होती थी। मृत सरदारके साथ उन सभी चीजोंको कब्रमें रख दिया जाता था, जिनकी कि उसे जीवनमें जरूरत पड़ती थी। सभी तरहके हथियार, आभूषण, खान-पानकी चीजे और घोड़ोंको ही कब्रमें नहीं रखा जाता था, बल्कि दास-दासियोंको भी स्वामीके साथ जाना पड़ता था। पुराने शकोमें मुर्दे (विशेष कर सामन्तके मुर्दे) को दफनानेका रवाज था। उनकी कब्रे काकेशसके उत्तरमें मिली हैं, और अल्ताई भी उनसे खाली नहीं है। साधारण कब्रोंमें भी खान-पान-सहित बर्तनोंका रक्खा जाना आवश्यक समझा जाता था। यह प्रथा शकोकी एक शाखा खसोमें ईसवी सन्के आरम्भसे पीछे तक भी पाई जाती थी, यह लदाखसे कुमाऊँ तक मिलने वाली खस-समाधियोंमें सिद्ध है। दफनानेके अतिरिक्त शक मुर्दोंको पेड़के ऊपर टाँग देते थे, जिसमें पक्षी मांस खा जाये। उसके बाद हड्डीको इकट्ठा करके गाड़ दिया जाता था। पारसियों में अब भी इसी प्रथा का अनुसरण किया जाता है, और वृक्ष की जगह दख्खा में शव को गिद्धों द्वारा खाने के लिये छोड़ दिया जाता है। यूनानी लेखकों से यह भी मालूम होता है, कि पक्षियों के लिये छोड़ देने की जगह कभी कभी मनुष्य अपने हाथों से हड्डी से मांस को अलग कर देता और इस तरह बिना चिरप्रतीक्षा के ही हड्डी को दफनाने का मौका मिल जाता था। मुर्दा दफनाने के साथ-साथ शको में मुर्दा जलाने का भी रवाज था। उस समय पत्नी को साथ भेजने के लिये जिदा जलाने की जरूरत पड़ती। ६वीं शताब्दी में, जब कि रूसी लोग अभी ईसाई नहीं हुये थे, उनमें सती प्रथा मौजूद थी, जिसे एक अरब पर्यटक ने अपनी आखों देखा था। भारत में सती-प्रथा का रवाज शको के आने के साथ हुआ।

शको की पोषाक सारे युरेशिया द्वीप में एक सी थी। उनके सिर पर एक नुकीली टोपी होती थी, जो शक-सिक्को से लेकर मथुरा और अमरावती की २री-३री शताब्दियों की मूर्तियों में भी पाई जाती है। पैरों में पायजामा और देह पर लबा चोला, साथ ही घुटने या उसके पास तक पहुँचनेवाला चमड़े या नम्दे का बूट उनकी विशेष पोशाक थी। कमर में कमरबन्द के साथ सीधी लम्बी तलवार लटका करती थी। उनकी लम्बी नाक और भूरेवालो का चीनी लेखकों ने विशेष तौर से उल्लेख किया है। सस्कृत के लेखकों ने शको, यवनो, पल्हवो और बाहलिको को रक्तमुख कहा है। शक सुंदरिया अपने सौन्दर्य के लिये भारत में अधिक विख्यात थी। हूणों के वैद्यों ने उनके सौंदर्य का कारण प्याज अधिक खाना बतलाया है। बागभट्टने अपन "अष्टांगहृदय" (उत्तरतत्र) में लिखा है—

“यस्योपयोगेन शकांगनानां लावण्यसंरादि-विनिर्मितानाम्।”

शकों के परम देवता सूर्य थे, इसका पता ग्रीक पुस्तकों में ही नहीं मिलता है, बल्कि भारत में शकों जैसी बृद्धाग्री सूर्य-प्रतिमाओं का व्यापक प्रसार तथा ईसाई धर्म स्वीकार करने से पहले रूसियों की सूर्य में एकान्त-भक्ति भी इसी बात को बतलाती है। सूर्य के अतिरिक्त “दिवु” शकों का पूज्य देवता था, जो कि वैदिक द्यौ और ग्रीक जेउस है। “अपिया” (आप्या) के नाम से पृथ्वी



माता पूजी जाती थी। सूर्य को वह “स्वलियु” कहते थे, जिसमें रके स्थान में लके साथ शकों के अत्यन्त प्रेम को हटा देने पर सूर्य शब्द साफ दिखाई पड़ेगा। स्वलयु देवता दिवू पिता और अपिया माता का (द्यावापृथिवी) पुत्र था। ‘पक’ भी एक प्रधान देवता था, जो वेद में भग, ईरानी में बग (बगदाद=भगदत्त) और रूसी में बोग के रूप में मौजूद है। राजा या बड़े सरदार को शक लोग पकपूर कहते थे, जो कि भगपूर (भगपुत्र) का ही रूपान्तर है। फारसी और अरबी में चीन के सम्राट् को फगफूर कहा जाता है, जो कि इसी पकपूर से निकला है। चीनी सम्राट् देवपुत्र (स्वर्गपुत्र) कहे जाते थे, यह हमें मालूम ही है। चन्द्रमा देवता को शक लोग अरतिम्पत (अर्थी-पति) कहते थे। वृन्दू भी उनकी एक देवी थी और थमी-मसद तथा विरोपत (वीरपति) उनके देवता थे। शक भाषा के पुराने नमूने बहुत ही कम मिले हैं। उनमें से कुछ हैं—

¹ Les Scythes p. 539

तविती=अग्नि

शक=शक

जरिना=हरिना

महकनग=महाराजा

तमूरी=समुद्रीय (रानी)

स्वलियु=सूर्य

पर्थ=पृथक्कृत

कनग=राजा (रूसी कन्याग)

तवितवरू=जनपाल

स्परोत्र=स्वरएथ्र

 स्रोतग्रन्थ

1 Les Scythes (F G Bergmanss, Halles 1860)

2 वेस्लिक ब्रेन्नेइ इस्तोरिड 1947

3 क्रत्कि० सोओब० XIII

भाग ३

उत्तराखण्ड (६०० ई० पू०-७०० ई०)

अध्याय १

शक (६००-१७४ ई० पू०)

§१ शक-जातियाँ^१

हम देख चुके हैं, ई० पू० ३री सहस्राब्दी से प्रथम सहस्राब्दी के प्रायः मध्य तक सप्तनद और अरताई में क्रमशः अफनास (२५००-१७०० ई० पू०), अन्द्रोन (१७००-१२०० ई० पू०), करासुक (१७००-८०० ई० पू०) और अन्तिम के समकालीन मिनिसुन जातियाँ रहती थी। कोई प्रमाण नहीं है, कि यह लोग शको के पूर्वज छोड़ किमी दूसरी जातिके थे। ईसा पूर्व ७वीं शताब्दी में हम उत्तरी मध्य-एशिया में शक जातियों का प्रसार निम्न प्रकार पाते हैं। (१) दोन में पूरब कास्पियन के उत्तर होते अराल समुद्र और यक्सर्त (सिरदरिया) के मध्य तक मसागित जाति का विस्तार था, अराल समुद्र के पाम यह जाति निम्न वक्पु-उपत्यका में अर्थात् ख्वारेज्म में भी फैली हुई थी। उसके दक्षिण में कास्पियन के किनारे दहा घुमन्तू शक जाति थी, जिसने पीछे पार्थ जातियों को जन्म दिया। मसागित् से पूरब यक्सर्त की ऊपरी उपत्यका के उत्तरी भाग, नर्मि नदी और टर्मिजुन तक मकरगैका (प्राग्-मदवड) जाति रहती थी। मदवड जन पीछे इसीसे निकला। अन्तार्ई में उस समय प्राग्-टर्मिजुन जाति थी, जिससे पीछे वूसून जन पैदा हुआ। इससे पूरब ह्वाङ्गहो नदी के पाम कानमु तक यूची जन के पूर्वज रहते थे। तरिम-उपत्यका या मिडक्रियाड में शका की ही एक शाखा खश रहते थे, जो ई० पू० ७ वीं सदी से पहिले ही कराकुरम गिरिमाता को पारकर गिर्गित और कश्मीर में फैल गये थे। फिर आगे चलकर उन्होंने नेपाल तक सारे हिमालय को खशभूमि बना दिया। यह मारी शक-खश जाति ई० पू० ५ वीं सदी तक पित्तल-युग में थी। दार्योश के अभिलेख में निग्राबोदा, होमवर्क, त्याई नाम के तीन शक जनो का पता लगता है, किन्तु उनके स्थान के बारे में कुछ कहना मुश्किल है। मसागित् के पूरब में शकरौका का विचरण स्थान सप्तनद का पश्चिमी भाग था। यह जातियाँ अभी प्रागैतिहासिक काल में विचर रही थी। इन ५ बागों में ग्रीक और ईरानी लोगों ने जो कुछ वर्णन किया है, उसके अतिरिक्त और पता नहीं लगता। इनमें से कुछ जातियों के बारे में निम्न बातें मालूम होनी हैं—

(१) मसागित्^२—मसागित् शब्द मसाग या महाशक से निकला है। सचमुच ही उस समय यह शक जनो में सबसे बड़ा जन था। दोन में लेकर यक्सर्त नदी के मध्य तक तथा ख्वारेज्म में फैला यह महाजन महाशक कहें जाने का अधिकारी था। इनका

^१ Les Scythes,

^२ वही p. 540

सबसे प्रिय हथियार कुल्हाड़ा था। दूसरे शकोकी तरह यह घोड़े पर चढ़कर तीरका निशाना लगा सकते थे। तीर और भाले के फल ही नहीं इनके कुल्हाड़े और लम्बी सीधी तलवारे भी पीतलकी होती थी। पशुओं का मांस और दूध इनका मुख्य भोजन था। तम्बू के डेरो को छोड़कर कोई इनका स्थायी निवास नहीं होता था। यह पक्के यायावर थे। इनकी स्त्रिया पुरुषों की भाँति युद्ध में लड़ती थी, और कितनी ही बार सेना का नेतृत्व भी करती थी। यद्यपि महाशक पुरुष अलग अलग व्याह करते थे, किन्तु तो भी दूसरी स्त्रियों के साथ सम्बन्ध रखने की स्वतन्त्रता थी। इससे मालूम होता है, कि अभी यह यूथ-विवाह से आगे नहीं बढ़े थे। वृद्ध-वृद्धाओं को मार डालने की प्रथा इनमें प्रचलित थी। एस्किमो लोगों में अभी हाल तक वृद्धा-वस्था में पहुँचने पर बुजुर्गों को मार डालनेका आम रवाज था, जिसका कारण उनका परिवार के ऊपर भारस्वरूप होना था। मसगित् या महाशक जन के साथ अखामनशी (ईरानी) शासकों का बराबर संघर्ष रहा, जिसके बारे में हम आगे कहेंगे। मसगित् के पश्चिमी कबीलों को सरमात भी कहते थे। बल्कि कभी कभी इस सारे कबीले का नाम मसगित्-सरमात बतलाया जाता है। यह बतला चुके हैं, कि स्त्रियों की प्रधानता के कारण ही इस कबीले का सर-मात या सर्व-मात नाम पड़ा। शायद यह यूनानियों का दिया हुआ नाम हो।

(२) सकरौका—महाशक जन से पूरब किन्तु यक्सर्त नदी के उत्तर-उत्तर मप्तनद भूमि के पश्चिमी भाग में यह घुमन्तु जन पशुचारण करता था। सकरौका वस्तुतः शक-ओक (शकस्थान) का ही परिचायक है। इनकी भूमि सोगद के उत्तर में थी। यह एक समय दारयोश प्रथम की प्रजा थी। इनके दक्षिण में सोगद लोग सोगद (जरफशा) नदी से वक्पु नदी तक रहते थे। इनकी टोपी लम्बी तुकीली होती थी। कुछ विद्वानों का मत है, कि शकरौका और शक-हौमवर्क एक ही थे। दारयोश के समय यह यक्सर्त नदी के दाहिने किनारे पर बसते थे, किन्तु ई० पू० द्वितीय सदी में इनके ओर्दू खोजन्द की पश्चिमी पहाड़ियों में रहते थे। यह भी सन्देह किया जाता है, कि चीनियों ने जिन्हे सइवाङ्ग लिखा है, वह वस्तुतः यही सकरौका थे।

(३) दाहै—यह संभवतः शकरौका और महाशक के बीच में यक्सर्त नदी के पहाड़ियों के निवासी थे, जो पीछे कास्पियन के किनारे ईरान की सीमा तक पहुँच गये। चीनियों ने इनका नाम अनसी बतलाया है। यह अच्छे घोड़सवार धनुर्धर होते थे। इन्हींके एक कबीले पारथी ने २४८-४७ ई० पू० में मामूली राज्य स्थापित करके अन्त में ईरानी-ग्रीकों के सारे राज्य को अपने कब्जे में कर लिया।

(४) खस—इस जनका ग्रीक या ईरानी स्रोतों से पता नहीं लगता। तालमी और दूसरे लेखकों ने हिमालय के खसों का वर्णन किया है, और हमारे लिये जो आज भी यह एक जीवित जाति है। गिलगित-चित्राल में कसकर, कश्मीर में कश, काशगर में खशगिरि, और कश्मीर में पूरब नेपाल तक खस या खसिया जाति तथा नेपाली भाषा का दूसरा नाम खसकुरा (खस भाषा) यही बतलाते हैं। पित्तल युग में तरिम उपत्यका इनका निवास थी। हूणों से भगाये जाने के बाद जब तक कि लुघुयूची इनकी भूमि में छा गये, तब तक सारी तरिम-उपत्यका खसभूमि थी।

(५-६) वूसुन्, यूची—यह दोनों शक जातियाँ जो आगे हम त्यानशान से झाड़हों तक देखेंगे। जिस काल के बारे में हम यहाँ लिख रहे हैं, उस समय चाहे जिस नाम से हो, इन्हीं के पूर्वज इस भूमि के स्वामी थे।

सारे उत्तरापथ के शक धुमन्तू पशुपाल थे, इसीलिये उनके अवशेषों में गाँवों, गडों और मकानों का पता मिलना संभव नहीं है। लेकिन धुमन्तू होने पर भी शक सरदारों की कब्रें बहुत शान-शोकेत में बनाई जाती थी, जिनमें उनके उपयोग की कितनी ही सामग्री दफना दी जाती थी। ऐसी कब्रों से उनके बारे में बनलानेवाली कितनी ही सामग्री प्राप्त हो सकती है।

१२ अल्ताई के शक'

सोवियत पुरातत्त्व-वेत्ताओं की खोजों से अल्ताई के शकों के इतिहास पर बड़ी रोशनी पड़ रही है। क. मोइसेवा ने अपने एक लेख में^१ लिखा है —

“साफ-सुथरी और बल खाती हुई सड़क अधिकाधिक ऊँचाई पर चढ़ती चली गई है। चट्टानी कगारों को पाकर मोटरों का एक दल इस सड़क पर से आगे बढ़ रहा है। सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी और देश के एक सबसे बड़ी म्युजियम लेनिनग्राद एर्मीतेज ने पाञ्जीरिक घाटी में पुरातत्त्व-सम्बन्धी खोज का संगठन किया है। पश्चिमी साइबेरिया में अल्ताई पहाड़ों के बीच स्थित यह स्तरीय घाटी चालू पथों और बस्तियों से बहुत दूर है।

ऐसा मालूम होता है, मानो अल्ताई पहाड़ों का सारा सौन्दर्य पाञ्जीरिक घाटी के इस रास्ते में केन्द्रित हो गया है। सदा मौजूद रहने वाली बर्फ से ढँकी पहाड़ी चोटियाँ नीले आसमान की पृष्ठ-भूमि में बहुत भली लगती हैं। निस्तब्ध जंगलों के बाद चरागाहों की ताज़ा हरियाली आँखों के सामने आती है। कातूना नदी का हरा पानी धीमी गति से घाटी में से बहता पहाड़ के कगार पर पहुँचता है। वहाँ से वह जब नीचे गिरता है, तो फुहारों के सिवा और कुछ नहीं दिखाई देता। नदी के किनारे भेड़ों के गेवड़, ढोर तथा घोड़ों के दल चरते रहते हैं।

यह एक समृद्ध और सुन्दर प्रदेश है।

मोटरों इस समय चिबित दर्रे से गुज़र रही हैं, फिर पाञ्जीरिक घाटी से जानेवाली धूमती हुई सड़क पर मुड़ जाती है। शोध-दल के मुखिया प्रोफेसर रुदेन्को और उनके सभी साथी खुदाई-स्थल पर पहुँचने और अपना काम शुरू करने के लिए उत्सुक हैं। उन्हें पाँच बड़े पाञ्जीरिक टीलों की खुदाई का काम पूरा करना है। दो की खुदाई और पुरातत्त्वविदों द्वारा उनका अध्ययन हो चुका है। प्राचीन शकों के जीवन और रीति-रिवाजों के बारे में यहाँ से अत्यधिक मूल्यवान् सामग्री मिली है।

आखिर महा उलगान नदी के पानी पर सूरज की किरनों की चमक दिखाई देती है। इसके एक बाजू भीमाकार कगारों के समूह से घिरी एक तलहटी है। यही पाञ्जीरिक घाटी है। इसके रहस्यमय दिखाई पड़ने का कारण शायद यह है, कि यहाँ कोई नहीं रहता। यहाँ इस लिए कोई नहीं रहता, कि घाटी में पानी का एकदम अभाव है। यहाँ पानी कई किलोमीटर दूर से लाना पड़ता है।

पुरातत्त्वविदों के कैम्प के साथ निस्तब्ध घाटी में मानवीय आवाज़ों तथा हथौड़ियों, कुदालों और लट्ठों की ध्वनियाँ गूँजने लगती हैं। टीलों की बगल में तम्बू लग जाते हैं, और अलावों का धुआँ उठने लगता है। खनक मुर्दों के प्राचीन टीलों पर से पत्थरों को हटाने लगते हैं।

^१ “सोवियत् भूमि” (दिल्ली १९५३)

टीलो पर छाई मिट्टी और लट्ठों के साफ हो जाने पर सामने बड़ी चतुराई से बने लकड़ी के तहखाने का दृश्य आ जाता है। यह तहखाना एक बड़े घर के समान मालूम होता है, सिवा इसके कि उसमें दरवाजे या खिड़किया नहीं हैं।

तहखाने को खोला जाता है, लेकिन कुछ दिखाई नहीं देता। हर चीज पर बर्फ की मोटी तह जमी है। टीले पर से कुछ भी हटाना कठिन है। चिर-आच्छादक बर्फ तहखाने और उसके भीतर की चीजों को हजारों सालों से सुरक्षित रखे है।

क्यों टीलो की प्रत्येक चीज बर्फ-बन्द दिखाई देती है? विद्वान् एक मुद्दत से इस सवाल में दिलचस्पी ले रहे हैं। अल्ताई पहाड़ों की भूमि सदा बर्फ से जमी नहीं रहती। फिर भी चट्टानी टीलो के नीचे उसे अक्सर वैसा देखा गया है। पूरी खोजबीन के बाद विद्वान् इस नतीजे पर पहुँचे हैं, कि टीलो में बर्फ का चिर-जमाव कृत्रिम रूप से पैदा किया गया है। उनका कहना है, कि टीलो का पतझड़ में निर्माण किया गया होगा, ताकि नमी और पाला टीलो में प्रवेश कर प्रत्येक चीज को बर्फ से ढँक दे। गर्मी के दिनों में तहखानों पर स्थित चट्टानों के कारण धूप उनमें प्रवेश नहीं कर पाती और बर्फ के पिघलने की नौबत नहीं आती। इस प्रकार बर्फ दीर्घकालीन युगों तक—पुरातत्त्वविदों द्वारा टीलो की निस्तब्धता के भग होने तक—जैसी-की-तैसी बनी रही।

अब समस्या यह थी, कि टीलो से चीजों को कैसे हटाया जाय। इसका एक ही तरीका था, कि बर्फ को गर्म पानी से धीरे-धीरे पिघलाया जाय। बर्फ के पिघलने पर पुरातत्त्वविदों की आँखों में चमक दौड़ गई। कितनी अप्रत्याशित निधि यहाँ जमा थी? कारु कार्य युक्त चमड़े की चीजे, रेशम और फर से बने महिलाओं के समूचे कपड़े, और प्राचीन योद्धाओं के सिर पर पहनने के कवच। शोध-दल की कलाकार बेरा सुत्सोवा ने तुरन्त इन चीजों के चित्र बनाने शुरू कर दिए, ताकि चमड़े, फर और फैल्ट से बनी इन चीजों के सजीव रंगों का रिकार्ड रह सके। बर्फ के चिर-जमाव ने अब तक उन्हें अपने असली रूप में पूर्णतया सुरक्षित रखा था। लेकिन कौन जाने अब, प्रकाश में आने के बाद भी, उनकी पहले वाली शोभा बाकी रह सकेगी?

पुरातत्त्व के इतिहास में ऐसी एक भी मिसाल नहीं मिलती, जहाँ हजारों साल पुरानी चमड़े, फर, कपड़े या फैल्ट की चीजे सही-सलामत अवस्था में उपलब्ध हुई हों। मिस्र के शाहों के समाधि-स्थलों में अनेक सुन्दर चीजे मिली थी। लेकिन, वहाँ के महीन कपड़ों और चमड़े तथा लकड़ी की चीजों को जैसे ही बाहर निकाला गया, वे पुरातत्त्वविदों के हाथ का स्पर्श पाते ही राख का ढेर हो गई और उनके चित्र तक नहीं लिए जा सके। लेकिन यहाँ सभी चीजे इतने अच्छे ढंग से सुरक्षित थी, कि वे आज भी उतनी ही मजबूत और सुन्दर दिखती थी, जितनी कि पहले,—लगता था जैसे उन्हें अभी अभी बनाया गया है।

दृढ़ देवदार से बनी शव-पेटिका इतनी भारी थी, कि उसे बिना अलग अलग किए बाहर निकालना असम्भव था। सबसे पहले मजबूती से फिट किए हुए ऊपर के ढक्कन को हटाया गया। पुरातत्त्वविदों की नजर अल्ताई के प्राचीन निवासियों के शरीरों पर टिक गई। वे इतनी अच्छी हालत में थे, कि लगता था मानो उन्हें अभी कुछ ही दिन पहले शव-पेटिका में रखा गया हो। उनकी सख्या दो थी,—एक शक सैनिक शरीर दूसरा उसकी पत्नी।

सैनिक का रंग मावला था और गालों पर हड्डिया अपेक्षाकृत ऊंची थी। स्त्री का चेहरा सफेद और छोटा तथा हाथ कमनीय था। दोनों शरीर मसाले से सुरक्षित थे।

पुरुष की छाती और कंधों पर गोदना गुदा हुआ था, इसकी ओर ध्यान गया। बिल्ली की भांति मालूम होता परदार गिद्ध, और एक हिरन बाज जैसी चोच वाला और बिल्ली की एक लम्बी दुम का चित्र गोदा हुआ था। यह कल्पनानीन पेचीदा डिजाइन मावली चमड़ी पर साफ नजर आता था। प्राचीन शकों का स्थान था, कि इस तरह के गोदने क्रूर पिशाचों से उनकी रक्षा करने हैं और साहस तथा ऊँचे वंश के सूचक हैं।

उपलब्ध चीजों की पूर्णतया जाच करने, उनका वर्णन करने तथा चित्र बनाने में कई दिन लग गए। इस बीच तहखाने में भी काम होता रहा। प्रतिदिन अधिकाधिक आश्चर्यकर चीजों का पता लगता था। फैंट का एक बहुत बड़ा कालीन मिला। इस पर सम्पन्नता और समृद्धि की देवी का रंगीन चित्र बना था, जो अपने हाथों में जीवन के वृक्ष को लिए थी। उसके सामने काले घुघराते बालों में युक्त एक घोड़मवार खड़ा था। कालीन के चारों ओर तेज रंग के फूलों की किनारी थी। प्राचीन प्रथा के अनुसार घर की सबसे बढिया चीजों को भी मृत व्यक्ति के साथ दफना दिया जाता था।

तम्बे के बराबर में ही एक मखमली कालीन भी मिला, जो बहुत ही मूल्यवान कालीन मिद्ध हुआ। इस पर घोड़मवारों, शेर के शरीर और बाज की चोच वाले विचित्र जन्तुओं और हिरन के चित्र बने थे। कालीन के डिजाइन से पुरातत्वविदों को शक योद्धा के दफनाने की तिथि का पता लगाने में मदद मिली। अल्टाई के मखमली कालीन पर अंकित घोड़मवार की छवि ईरान की प्राचीन राजधानी के खण्डहरो में से मिली छवियों और मुहरों के डिजाइन से मिलती है। यह खण्डहर ईसवी गनू में पूर्व छठी या पाचवी शती के हैं, अर्थात् आज से २४०० या २५०० साल पुराने हैं।

टीलों में चीनी कपड़े भी निकले। एक प्राचीन चीनी आईना तथा अन्य कितनी ही चीजें मिली, जिनसे पता चलता है, कि टीलों का निर्माण करने वाले अल्टाई के प्राचीन लोग ईसा से पहिले पाचवी शती के निवासी थे।

अब तक हुई खुदाई में पुरातत्वविदों को यह मालूम हो गया, कि कबर की दीवार के पीछे उन्हें घोंडे मिलेंगे। मचमूच उन्होंने एक लकड़ी की दीवार देखी, जिसके पीछे चौदह सुन्दर घोंडे दफनाए हुए थे। ये सब-के-सब, अपने शानदार साज-सामान के साथ बहुत बढिया स्थिति में सुरक्षित थे। लकड़ी पर नक्काशी के काम और सोने के पत्तर से सुसज्जित जीन, विविध रंगों में युक्त घोंडे के लबादे और चीनी रेशम की बनी ओहारे सभी बहुत सुन्दर थी।

घोंडों के विशेषज्ञों को ऐसा मौका शायद ही मिलता है, जबकि उन्हें दो हजार साल से भी ज्यादा पहले मारे गए घोंडों के सुनहरी ताम-साम को अपने हाथ से स्पर्श करने का सौभाग्य प्राप्त हो। हा मारे गए, क्योंकि ये घोंडे युद्ध या किसी दुर्घटना में पडकर नहीं, बल्कि योद्धा की कब्र में दफनाने के लिए मरे थे।

प्राचीन टीलों की अन्तिम निधियों को बक्सों में पैक करने के बाद शोध-दल घाटी से विदा हो गया। प्राचीन शकों के मृत शरीरों को लेनिनग्राद के एर्मीताज म्यूजियम के लिए रवाना कर दिया गया।

सोवियत विज्ञान ने अल्टाई के टीलो के रहस्यों का उद्घाटन कर लिया । सुदूर अतीत को उन्होंने फिर से हमारे लिए मूर्त कर दिया । पाज़ीरिक घाटी से मिली चीजे उन लोगों के जीवन, धार्मिक विश्वासों और कला की कहानी हमें बताती हैं, जो किसी जमाने में अल्टाई पहाड़ों में रहते थे । इन्हें देखने से पता चलता है, कि ये लोग चिरकाल से ही सस्कृति में हीन तथा अविकसित नहीं थे । इन चीजों से पता चलता है, कि शक जाति के लोगों की सस्कृति ऊँची थी । ये चीजे प्राचीन शकों के इतिहास में एक नया पृष्ठ जोड़ने में मदद देती हैं ।”

स्रोत-ग्रन्थ :

- १ Les Scythes (F G Bergmann)
- २ आखेंआलेगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोइ किर्गिज़िइ (अ न वेर्नूस्ताम्, फुन्जे १९४१ ई०)
- ३ इस्तोरिको-कुलतुनोये प्रोश्लोये सेवेर्नोइ किर्गिज़िइ पो मतेरियलाम् वोल्दावो चुइस्काओ कनाला (वेर्नूस्ताम्, फुन्जे १९४३)
- ४ अल्टाई व् स्किफस्कोये ब्रेमिया (स ब किसेलेफ), “वेस्लिक् द्रेव्नेइ इस्तोरिइ” 1947 II pp 157-72
५. ऋत्क० सोओब्० XIII, p112
६. “सोवियत् भूमि” (दिल्ली १९५३ ई०)

अध्याय २

हूण (३०० ई० पू०—३०० ई०)

शको के उनके मूलस्थान से निकाल कर उसपर अपना अधिकार जमाना हूणों का काम था। यही नहीं, बल्कि मध्य एशिया के उत्तरापथ और दक्षिणपथ दोनों में जो आज सभी जगह मंगोलायित चेहरे देखे जाते हैं, यह भी हूणों की ही देन है। तुर्क हूणों ही से निकले और मंगोल भी हूणों ही की सन्तान हैं।

१ प्राचीन हूण

शको की तरह हूण भी घुमन्तु पशुपाल थे। मध्य-एशिया में दोनों एक दूसरे के पड़ोसी थे। यूची के निकाले जाने में पहिले शक-भूमि त्यानशान् और अल्ताई से पूरब हूणों की गोचर-भूमि में मिल जाती थी। इसलिये अन्तिम सघर्ष के पहिले भी इनका कभी कभी आपस में युद्ध या वस्तुविनिमय के लिये सबध हो जाया करता था। चीन के इतिहास से पता लगता है, कि वहाँ पर भी धातुयुगीन सांस्कृतिक विकास में पश्चिम से जानेवाली जाति का विशेष हाथ रहा। यह जाति शको से सबध रखनेवाली थी, इसमें सन्देह नहीं। चीनियों के उत्तर में रहनेवाले हूणों का भी यदि शको के साथ सबध रहा और उनके द्वारा वह धातुयुग में आये, तो कोई आश्चर्य नहीं है। तातार और तुर्क यह दोनों शब्द हूणों के वंशजों के लिये इस्तेमाल हुये हैं, लेकिन चीनी इतिहास में ईसा की दूसरी सदी के पूर्व तातार शब्द का पता नहीं है, और ५वीं सदी में पहिले तुर्क शब्द भी उनके लिये अज्ञात था। ग्रीक और ईरानी स्रोत जब सूखने लगते हैं, इसी समय से चीनी स्रोत हमारे लिये खुल जाते हैं। शको के बारे में चीनी इतिहासकारों ने बहुत कुछ लिखा है। लेकिन अभी तक उसमें से थोड़ा ही यूरोप की भाषाओं में आ सका है। रूसी विद्वानों का इस सामग्री को प्रकाश में लाने तथा व्यवस्थित रूप से छानबीन करने का काम बहुत सराहनीय है। किन्तु वह रूसी भाषा में बद्ध होने से हमारे लिये बहुत उपयोगी नहीं हुआ। नवीन चीन और सोवियत-रूस आज सारी शकभूमिका स्वामी है। वहाँ इतिहास के अनुमन्धान में जितनी दिलचस्पी दिखाई जाती है, उससे आशा है, कि उनके बारे में पुरातत्व-सामग्री तथा लिखित सामग्री से बहुत सी बातें मालूम होगी। त्यानशान् (किरगिजिया) में नरीन् की खुदाई में शको के विशेष तरह के बाण के फल तथा मट्टी के गोल कटोरे और दूसरी चीजें भी मिली हैं। इस्सि कुल सरोवर के किनारे त्यूप स्थान में भी इस काल की कुछ चीजें मिली हैं, जोकि मास्को के राजकीय ऐतिहासिक म्यूजियम में रखी हुई हैं। कजाक गणराज्य के बेरकारिन स्थान में निकली कब्र में भी कुछ चीजें मिली हैं, जो ५वीं-४वीं सदी ई० पू० की मानी जाती हैं। वही कराचोको (इलीपत्यका) में खुदाई करने पर शको के पीतल के बाणफल मिले।

मिनूसीन और उनके उत्तराधिकारियों से सबध रखनेवाले हैं। शक-जनो के पीतल के हथियार पूर्वी युरोप (चेरतोम लिक्) से बेकाल और मन्चूरिया की सीमा तक हैं, इनकी गोचर भूमि समय-समय पर बहुत दूर तक फैली हुयी थी। डाक्टर बेर्नश्ताम—सप्तनद, अल्ताई और त्यानशान के प्राचीन इतिहास और पुरातत्व के बड़े विद्वान—का कहना है, कि ई० पू० ६वीं शताब्दी में इस सारे इलाके में घुमन्तू शक जनो का निवास था। यह भी पता लगा है, कि शको ने कुछ खेती का भी काम सीखा था, तब भी वह प्रधानतया पशुपाल थे^१।

चीन में भी अपने इतिहास को बहुत अधिक प्राचीन दिखलानेका आग्रह रहा है, किन्तु चीनका यथार्थ इतिहास ई० पू० छठी सदीसे शुरू होता है। उसके पहिलेकी सारी बातें पौराणिक जनश्रुतियोंसे अधिक महत्व नहीं रखती। चीनका प्रथम ऐतिहासिक राजवंश चिन (२५५-२०६ ई० पू०) है। इस वंशके संस्थापक चिन-शी-ह्वाङ्-त्सी (२५५-२५० ई० पू०) ने बहुत सी छोटी-छोटी सामन्तियोंमें बटे चीन को एक राज्यमें संगठित किया। उससे पहिले उत्तरके घुमन्तू हूण चीनको अपने लूटपाटका क्षेत्र बनाये हुए थे। यह अश्वारूढ़, मामभक्षक, कृमिशपायी लडाके बराबर अपने दक्षिणके चीनी गावों और नगरोपर आक्रमण किया करते थे। उनकी संपत्ति घोडा, ढोर और भेडे थी, और कभी कभी ऊट, गदहे, खच्चर भी इनके पास देखे जाते थे। वर्तमान मंगोलिया, मन्चूरिया तथा इनके उत्तरके साईबेरियाके भूभाग इनकी चरभूमि थे। हूण कबीलोको चीनी ह्युङ्-नू कहते थे। तुर्क, किरिगिज, मंगयार (हुंगर) आदि पीछे इनके ही उत्तराधिकारी हुए। ह्युङ्-नूके अतिरिक्त चीनी इतिहास एक और भी घुमन्तू मंगोलायित जनका पता देता है, जिसको तुङ्-नू कहते थे। इन्हीके उत्तराधिकारी पीछे कित्तन (खिताई), मन्चू आदि हुए। विशाल हूण जनके बहुत छोटे छोटे उपजन थे, जिनके अपने अपने सरदार हुआ करते थे। हमारे यहा तथा दूसरे देशोमें भी ओर्दू (उर्दू) शब्द मेनाका पर्याय माना जाता है। इन घुमन्तुओमें एक पूरे जन—जिसमें उसके सभी नरनारी बाल-वृद्ध सम्मिलित थे—को ओर्दू कहा जाता था। इनका शासन जनतात्रिक था, और सरदारको जनके ऊपर अपना स्वतंत्र दर्जा कायम करनेका अधिकार नहीं था। हूण बच्चे जहा बचपन हीसे पशुओं का चराना सीखते थे, वहा उससे भी पहिले वह छोटी छोटी धनु ही से पहिले चूहेका शिकार करते, फिर सियार और खरगोशका। नगी पीठ पर घोडसवारी करना भी बचपन ही से इन्हे सिखाया जाता था और अधिक क्षमता प्राप्त करनेपर वह घोडे पर बैठे-बैठे धनुष चलाने लगते थे। दूध और मासका भोजन तथा चमडेकी पोशाक इन्हे अपने पशुओके ऊपर निर्भर करती थी। उनके नम्दे भी यह बना लेते थे। जवानो अर्थात् योद्धाओका इनके यहा बहुत मान था, और खानपानमें सबमें पहिले उनकी ओर ध्यान दिया जाता था। बूढे और निर्बल सिर्फ जूठ-काठ पानेके अधिकारी थे। मरे पिताकी रखी या छोडी हुई स्त्रियोंके पति बेटे हुआ करते थे। छोटे भाईकी विधवा भी दूसरे भाईकी पत्नी बनती थी। शको या इनकी स्थितिमें रहनेवाले दूसरे जनोकी तरह लडाईमें पीठ दिखाकर भागना इनके यहा बुरा नहीं समझा जाता था, बल्कि वह युद्ध-कौशलका एक अंग था। दया-मायाकी इनके यहा कम गुजाइश थी। इनके हथियार धनुष-वाण, तलवार और छुरे थे। सालमें तीन बार इनकी जन-सभा होती थी, जबकि सारा ओर्दू एकत्रित होकर जहा

^१ आर्खे० ओर्बेक० पृष्ठ २४-२५

धार्मिक और सामाजिक प्रयोगों का पूरा करना, वहाँ साथ ही राजनीतिक और दूसरे झगड़े भी मिटाता। बहुत से मन्दारों के उपाय निर्वाचित राजा का शान्य कहा जाता था।

अन्दाज लगाया जाता है, कि १४००-५०० ई० पू० तक चीनमें उत्तरके इन घुमन्तुओंकी लूटपाट बराबर जारी रहती थी। ईसा-पूर्व तीसरी शताब्दीमें सान्-शी, शेन्-शी, ची-ह्वी में इनके ओर्दू बिचरा करने थे। इर्शा समय हुआ कि नदीके मुँहावे पर भी इनका ओर्दू रहा करता था, जिसके कारण आज भी उस प्रदेशका आर्द्र रहन है। चिन-शी-ह्वीज ती (२५५-२०६ ई० पू०) ने चीनके बड़े भागका एक रास्ता परिष्कार कर साक्षात् कि हूणोंकी लूटमारसे कैसे चीनकी रक्षा की जाय। इसके लिये गल नदीकी मगान् दीवारके कितने ही भागको एक रक्षाप्राकारके तौर पर निर्मित कराया, और आर्द्र तथा शान्शी आदि प्रदेशोंमें घुम आये हूणोंको निकाल कर उत्तरकी ओर भगा दिया। समुद्र तटमें पश्चिममें चन्चाउ तक की इस दीवारको बनानेमें ५ लाख आदमी भर-भर कर खर्च तथा काशक नीबें काम करते रहे। निर्माण-कालसे लेकर हजार वर्षों तक उत्तरके घुमन्तुओं और चीनका शास्त्रों मध्यमें होता रहा, उसके प्रमाण स्वरूप लाखों खोपडिया दीवारके किनारे जमा होनी गई। चीनके उत्तरमें जहाँ हूणोंसे मुकाबिला करना पड़ता था, वहाँ पश्चिममें यही प्रयत्न भी कम चतुर्-स्वगरी नहीं करते थे।

२. हूण-राजावलि

१. तूमन शान्-यू	२५० ई० पू०
२. माउडुन्, तन्गुन	१८३ "
३. ची-यू, तन्गुन	१७२ "
४. च्चु-चेन्, तन्गुन	१७२-१२७ "
५. इचिमे, तद्भात	१२७-११७ "
६. अच्ची	११७-१०७ "
७. शान् मौन्	१०७-१०४ "
८. शूली-हू	१०४-१०३ "
९. शूनी-हू	१०३-९८ "
१०. हूलू-हू	९८-८७ "

(१) तूमन शान्-यू (२५० ई० पू०) — जिस समय चिन-वशाके नेतृत्वमें चीन एकता बढ हो रहा था, उसी समय (२५० ई० पू०) हूणोंमें भी एकता पैदा हुई। चीन सम्राटकी मृत्युके बाद जो अराजकता पैदा हुई, उसमें हूणोंके प्रथम शान्-यू तूमन ने लाभ उठाया और डेढ़ हजार बरस पीछे होनेवाले अपने योग्य उत्तराधिकारी चिंगिज खानकी तरह ओर्दू तथा दूसरे प्रदेशोंपर लूटमार की, और आर्द्रोंको फिरमें अपने जनकी गोचर-भूमि बना लिया। उससे हूण आकर अब फिर पश्चिमी कान्-तूके निवासी यूचियोंके पड़ोसी बन गये। तूमनका प्रभाव अपने जनपर बहुत था, किन्तु हूणोंका सबसे बड़ा शान्-यू उसका पुत्र माउडुन हुआ। बुढ़ापेमें पिताने अपनी

* A thousand years of Tatars (E. H. Parker, Shanghai 1895)

तरुणी पत्नीके फेरमे पडकर ज्येष्ठ पुत्र माउ-दुनको वचित करके छोटेको राज देना चाहा। माउ-दुनको रास्तेसे अलग करनेके लिये उसने अपने पश्चिमी पडोसी (यूची लोगोंके) पास अमानत रखा और फिर उनपर आक्रमण कर दिया। जिसका अर्थ यही था, कि यूची माउदूनको मार डाले। लेकिन, माउदून एक तेज घोड़ेपर चढकर भाग निकला। पिताने प्रसन्नता प्रकट करनेके लिये उसे दस हजारी सरदार बना दिया, किन्तु, माउदून अपने पिताकी करनीको भूलनेवाला नहीं था। कहते हैं, माउदूनने मिङ्गली (गानेवाले वाण) का आविष्कार किया। वह शब्दवैधी वाणम अभ्यस्त था, एक दिन उसने बूढ़ पिताको वाणका लक्ष्य बनाकर बदला लिया।

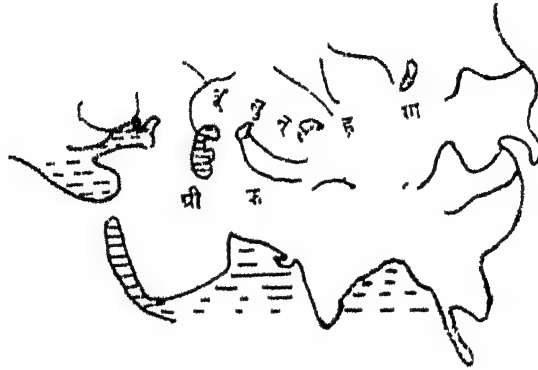
(२) माउदून (१८३ ई० पू०)^१—शान्-यू बनते ही माउदूनने अपने पिताके परिवारको कत्ल कर डाला और केवल पिताकी एक स्त्रीको अपने लिये जीवन रहने दिया। इस समय तक चीन और यूची ही नहीं, बल्कि पुराने तुगुस (तुङ्ग हू, ह्वान) भी अपने जनका एक बड़ा सगठन कर चुके थे। हूणोकी उनके साथ भी लड़ाई होने लगी। गोबीकी बालुका भूमिके बीचम दोनों जनोका एक भीषण संघर्ष हुआ। वह माउदूनका मुकाबला कर बुरी तौरसे हारे। बहुतने तुगुसोको हूणोने अपना दास बनाया। उनमेंसे कुछ भागकर मंगोलियाके उत्तर-पूर्वम जानेमें सफल हुए, जो आगे धीरे धीरे शक्ति-सचय करके फिर हूणोके प्रतिद्वन्दी बन गये। माउदून एक चतुर सेनानायक था। जनके सगठन और शासनमें भी उसने वैसी ही प्रतिभा दिखलाई। उसने अपने तीन प्रतिद्वन्दी जनोको परास्त कर हूणोकी शक्तको बढ़ाया। उसे कोरोम, दारयोश्, सिकन्दरकी श्रेणीका विजेता माना जा सकता है। तुगुसोको उसने परास्त करके उत्तरमें अपने को सुरक्षित कर पश्चिमी पडोसी यूचियोंकी खबर लेनेकी ठानी। यूची भी बड़े वीर योद्धा थे, हूणोकी तरह ही वह घुमन्तू पशुपाल तथा घोडसवारीके साथ धनुष चलाना जानते थे। यह बहुत संभव है, हथियार और युद्धकी शिक्षामें हूणोके गुरु इन्ही शकोके पूर्वज थे। यूची माउ-दूनकी सेनासे कितने ही समय तक मुकाबिला करते रहे, किन्तु अतमें (१७६ या १७४ ई० पू०) उन्हें हूणोके सामने पराजय स्वीकार कर कोकोनोर और लोबनोरकी अपनी पितृभूमिको छोड़नेके लिये मजबूर होना पडा। माउदूनने चीन-सम्राट् वेन्-त्सी (१६६-५६ ई० पू०) को लिखा था—“जितनी जातिया (तातार) घोड़ेपर चढे धनुषको झुका सकती हैं, उन्हें एकताबद्ध कर मैंने एक राज्य कायम कर लिया। यूचियोंको और तरबगताइयोंको भी मैंने नष्ट कर दिया। लोबनोर तथा आसपासके २६ राज्य, अब मेरे हाथमें हैं। अगर तुम नहीं चाहते, कि ह्युङ्गन् महादीवारको पार करे, तो तुम्हें चीनियोंको महादीवारके पास हर्गिज नहीं आने देना चाहिये। साथ ही मेरे दूतको नजरबन्द न कर तुरन्त मेरे पास लौटा देना चाहिये।”

(क) शासन आदि—

माउदूनका राज्य पूरबमें कोरियासे लेकर पश्चिममें बल्काश तक और उत्तरमें बैकालसे दक्षिणमें क्विन्लन् पर्वतमाला तक फैला हुआ था। उसके पिताके समय हूण राज्य केवल अपने कबीले तक सीमित था और दक्षिणमें चीनके भीतर हूण जब तब लूटमार भर कर लिया करते थे। इतने बड़े राज्यके संचालनके लिये पुरानी व्यवस्था उपयुक्त नहीं हो सकती थी, इसलिये माउदूनको

^१ वही p 347, वेनंशताम् (आखें० ओचेर्क० पृ० ४२)

नई व्यवस्था कायम करनी पड़ी। यह स्मरण रहना चाहिये, कि हूणोंका समाज पितृसत्ताक था, अभी वहा सामन्तशाही नहीं फैली थी। चीनमें किमान अर्धदास और दास जैसे थे। उनके बाल-बच्चे सामन्तोंकी चल सम्पत्ति थे। हूण-शासनयन्त्र निम्न प्रकार था—



१२. शासनका हूणसाम्राज्य (५५२ ई०)

(१) शान्-यू—राजावाची चीनी शब्द शान्-यूका हूण भाषाका रूप जेगी कहा जाता है। शायद टमीका रूपान्तर चगीज हुआ। राजाकी पूरी उपाधि थी तेग्री-कुहू शान्-यू (देव-पुत्र महान्)। आज भी मंगोल और तुर्की भाषामें देवताका वाचक तेग्री शब्द मौजूद है। शान्-यू प्रभावशाली योद्धा और नेता होता, लेकिन उसके ऊपर हूण-ओर्दूका नियंत्रण रहता था।

(२) दूगी—इसका अर्थ है धर्मात्मा या न्यायी। शान्-यूके नीचे दो दूगी हुआ करते थे, जिनमें एकको पूर्व-दूगी और दूसरेको पश्चिम-दूगी कहते थे। पूर्व-दूगीका दर्जा ऊँचा समझा जाता था, और आमतौरमें वह युवराज माना जाता था। हूण साम्राज्यके पूर्व भाग पर पूर्व-दूगीका शासन था और पश्चिम पर पश्चिम-दूगीका। राज्यके मध्य-भाग अर्थात् हूण-जनक्षेत्र पर स्वयं शान्-यू सीधे शासन करता था।

(३) रुक-ले (कुनलू)—यह भी दक्षिण और वाम दो होते थे, जिनमें वामका दर्जा ऊँचा था।

(४) इनके नीचे वाम और दक्षिणके दो सेनापति होते थे।

(५) इनके नीचे वाम दक्षिण के दो दीवान होते थे। आगे भी दो वाम दक्षिण कुतलू जैसे दसहजारी और हजारी तकके चौबीस सैनिक अधिकारी होते थे। हूण-शासनमें सैनिक-असैनिक अधिकारका भेद नहीं था।

इनके अतिरिक्त हूण-शासकों की उपाधि, शृगोमें समझी जाती थी, जो शायद समय समय पर उनके शृगार होते हों। दोनों दूगी और दोनों रुकले चतु शृग कह जाते थे। उनके नीचे पट्-शृग अधिकारी थे। दोनों कुतलू शासन-प्रबन्धको देखते थे। दूगी आदि २४ श्रेष्ठ अधिकारियोंके अपने क्षेत्र थे, जिनके भीतर ही वह अपने ओर्दू तथा पशुओंको लेकर विचरण कर सकते थे। उनको अपने हजारी शक्ति और दक्षिण आदि अफसरोंके नियुक्त करनेका अधिकार था।

शान्-यूकी रानीकी पदवी इन्-ची (येड-ची) थी। हूणोंके तीन-चार ऊँचे कुल में से उसे लिया जाता था। शान्-यूका अपना कुल बहुत ही सम्मानित समझा जाता था। हूणोंने जो श्रेणियाँ और पदवियाँ स्थापित की थी, वह तुर्कों और मंगोलोंके समय तक मानी जाती रही। तैमूरने भी हजारि, पच-हजारि, दस-हजारि दर्जे स्वीकार किये थे, जो कि उसके वंशज बाबरके साथ पीछे भारतमें आये।

(ख) नववर्षोत्सव—

यह उत्सव हूणोका सबसे बड़ा राष्ट्रीय मेला था, जिसे शान्-यू बड़ी शान-शौकतमें मनाता था। पितरो, तिब्बरी (देव), पृथिवी और भूत-प्रेतोंके लिये बलि इत्यादि समय दी जाती थी। शरदमें दूसरा महोत्सव मनाया जाता था, जिसमें ओर्दूकी जनगणना, सम्पत्ति और पशुओं पर कर लगानेका काम किया जाता था। हूण-जनोमें अपराध कम था और उसके दण्ड देनेमें देरी नहीं की जाती थी। वह दोनों महोत्सवोंके समय किया जाता था। महोत्सवमें घुड़-दौड़, ऊटोकी लड़ाई तथा दूसरे कितने ही सैनिक और नागरिक मनोरंजनके खेल होते थे। उनके अपराध दण्डमें मृत्यु-दण्ड तथा घुटना तोड़ देना भी शामिल था। सम्पत्तिके विरुद्ध अपराधका दण्ड था सारे परिवारका दास बना दिया जाना।

नववर्षोत्सव और शरदोत्सव दोनों सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक महा-सम्मेलन थे। इनके अतिरिक्त भी शान्-यूको कुछ धार्मिक कृत्य रोज करने पड़ते थे। दिनमें शान्-यू सूर्यको नमस्कार करता और सन्ध्याको चन्द्रमाकी पूजा और नमस्कार। चीनियोंकी भाँति हूण भी पूर्व और वाम दिशाको श्रेष्ठ मानते थे। शान्-यू सभामें उत्तरकी ओर मुह करके बैठता, जब कि चीन सम्राट का बैठना दक्षिणाभिमुख होता था। चांद्रमासकी तिथियोंको प्रधानता दी जाती थी। सेना अभियानके लिये शुक्लपक्ष और वहासे लौटनेके लिये कृष्ण-पक्ष प्रशस्त माना जाता था। लूट में सम्पत्ति और बंदी हुए दासोका स्वामी वही होता था, जिसने दुश्मनसे उन्हें छीना। दुश्मन का सिर काट लेना, बहुत वीरता मानी जाती थी।

जान पड़ता है, शकोका प्रभाव हूणों पर भी पड़ा था। शकोकी भाँति ही हूणोंमें भी मृत सरदारकी बहुत सी मूल्यवान सम्पत्ति कब्रमें गाड़ दी जाती थी, समाधिके ऊपर कोई स्तूप या वृक्ष आदि चिन्ह नहीं लगाया जाता और न मरेके लिये बहुत रोना-धोना किया जाता था।

(ग) युद्ध—

हूण पशुजीवी ही नहीं आयुध-जीवी भी थे। लूटमार उनका पेशा था। उनकी लड़ाईकी एक बड़ी चाल थी, दुश्मनके सामने पराजित होनेका अभिनय करके भाग पड़ना। जब दुश्मन उनका पीछा करते कुछ दूर निकल जाता, तो सुशिक्षित सुसंगठित जहा-तहा छिपे हूण दस्ते शत्रुकी पीठ पर आक्रमण कर देते। माउदूनने चीनके युद्धमें एकबार इस तरह ३ लाख २० हजार चीनी सैनिकोंको अपने जालमें फसा लिया था। चीन सम्राट् अपनी सेनाके साथ आधुनिक ता-तुङ-फू (शेनसी) से एक मील दूर एक दृढ़ दुर्गबद्ध स्थान पर पहुँच चुका था, लेकिन उसकी अधिकांश सेना पीछे रह गई थी। माउदून अपने ३ लाख चुने हुए सैनिकोंके साथ चीनियों पर दूट पड़ा और सम्राट् घिर गया। सेना ७ दिन तक घिरी रही। बड़ी मुश्किलसे चीनी अपने सम्राट्को घेरेसे निकाल पाये। समझौतेमें उन्हें कितनी ही अपमानजनक बातें करनी पड़ी। माउदूनके घेरेका

एक कोरा डोना था। उपासित होने के साथ-साथ भागनम समर्थ हुआ। माउटूनने पीछा नहीं किया। चीनको अपनी एक राजकुमारी भेजकर शासन करने के लिये भेजकर आना पड़ा। इस तरह चीनी राजकुमारियोंका शक्तिशाली घुमन्तू राजाओं का एक सैनिक प्रथा बननी। समझा गया, राजकुमारीका लडका मातृकुलका पक्षपाती होगा।

चीन सम्राट् हुइतीफ मरने के बाद उसकी शिष्या रानी कौ-तू अपने पुत्र (वेन्-ती) को गद्दी पर बैठा बारह साल (१०७३ ई० पू०) तक राज्य राज करनी रही। हुणोमें पितृ-सत्ताक समाज होनेके कारण कुछ मुर्बा हो गई। कारण कि राने ही चीनी भाग कर उनके राज्यमें चले जाने थे। ऐसे ही किमी दरबारियों का नाम पड़ा। माउटूनने रानीको सदेश-पत्र भेजकर अपने हाथ और हृदयको देने का प्रस्ताव किया। दरबारियोंने युद्धकी आग भड़कानेकी कोशिश की, लेकिन किमी समझदारों ने राने का समझाया—“अभी भी लडके हमारी सड़को पर सम्राट्के भागनेकी गीत गाने किन्ते हैं।” रानीन बहुत नरम हो पत्र लिखा—“मेरे दात और केश परम-भट्टारक (आप) के प्रेमका प्राप्त करने का योग्य नहीं है।” साथ ही उसने दो राजकीय रथ, बहुत से अच्छे अच्छे घोड़े तथा दूसरे भेंट भेजे। माउटून ने कुछ लज्जित सा हुआ और उसने बहुत से हुणो घोड़े भेजकर क्षमा माँगी। माउटून ने १४ साल (३० साल) तक राज्य किया।

(३) चान्-यू (कूबू, १०७ ई० पू०) यह माउटूनका पुत्र था, जिसे चीनी लेखक लाऊशान् शान्-यू (महान् ब्रह्म जेण्) का नामसे याद करने है। सम्राट्ने शान्-यूके लिये नई राजकुमारी भेजी, जिसका नाम यन्नामे एक हिजड़ा (स्वाजासरा) भी आया, जो जन्मी ही शान्-यूका विधवागता भत्री बन गया। चीनी भेटो, राजकुमारियों के प्रभावमें आकर हुण उपादा दिव्यार्थों का ज्ञान प्राप्त कर रहे थे। स्वाजासरा इमे पसंद नहीं करता था। उसने हुणोको समझाया—“तुम्हारे ओईसी गारी जनमका मुश्किलमें चीनके कुछ परगनोंके बराबर होगी, किन्तु तब भी तुम चीनका दरबारमें समर्थ होते रहे। इसका रहस्य है, तुम्हारा अपनी वास्तविक अवस्थाका भ्रम लिये चीनमें स्वनम होना। मैं देखता हूँ, कि तुम दिन पर दिन अधिक और अधिक चीनी बीजाके प्रेमी बन जा रहे हो। सोच लो, चीनी सम्पत्तिका ५वा भाग तुम्हारे गारे नागाका पूर्ण तौरमें खरीद लेनेके लिये काफी है। तुम्हारी भूमिके कठोर जीवनके लिये रेशम और मांस उनमें उपयुक्त नहीं है, जितना कि ऊनी नमदा। चीनके तुरन्त नष्ट हो जाने वाले ध्वजन उनमें उपयोगी नहीं हो सकते, जितनी तुम्हारी कूमिश और पनीर।” वह बराबर हुणों का इस तरह मजग करना रहा। चीनके जवाबमें शान्-यूकी ओरसे जो चिट्ठी उसने लिखवाई थी, वह चर्मपत्रकी लम्बाई चौडाईमें ही अधिक बड़ी नहीं थी, बल्कि उसमें शान्-यूकी अधिक लम्बी उपाधि भी लिखी गयी थी—“हुणोके महान् शान् यू जेंगी, और पृथिवीके पुत्र, सूर्य-चन्द्र-समान आदि” आदि।

चीनी राजदूतने एक बार हुणोंमें खुदो का सम्मान नहीं होता कहकर ताना मारा था, इसपर उसने जवाब दिया—“जब चीन, रेना नडाईके लिये निकलती है, तो मैं नहीं देखता, कि उनके सबकी अपनी सेनाके लिये किनती है, अच्छी चीनोमें अपनेको बचित न करते हो। हुणोका व्यवसाय

है युद्ध। बूढ़े और निर्बल युद्ध नहीं कर सकते, इसीलिए सबसे अच्छा आहार लडनेवालोंको दिया जाता है।” “लेकिन पिता और पुत्र एक ही तम्बूको इस्तेमाल करते हैं, पुत्र अपनी मौतैली मांसे व्याह करता है। भाई अपनी भ्रातृ-बधुओंके साथ कोई विशेष विचार नहीं रखता।” यह कहने पर उसने कहा—“हूणोंका रवाज है, अपनी भेड़ों और ढोरोके मांमको खाना और दूधको पीना। वह ऋतुके अनुसार अपने पशुओंको लेकर भिन्न-भिन्न चरभूमियोंमें घूमा करते हैं। हर एक हूण पुरुष दक्ष धनुर्धर होता है, शांतिके समय भी उसका जीवन सरल और सुखी होता है। उनके शासनके नियम बिल्कुल सरल हैं। शासक और जनताका सबंध उचित और चिरस्थायी है। यद्यपि पुत्र या भाई अपने पिता या भाइयोंकी स्त्रियोंको रख लेते हैं, किंतु उसका कारण यही है, कि अपने खानदानको सुरक्षित रख सकें। चीनी विचारानुसार यह पाप हो सकता है, लेकिन इससे कुल और वंशकी रक्षा होती है।” यह कहते हुए यह भी कहा—“लेकिन चीनमें दिखावाके लिये चाहे पुत्र या भाई ऐसे पापके भागी न होते हो, किंतु इसका परिणाम होता है विद्रोह, शत्रुता और परिवारका ध्वंस। तुम्हारे यहां आचार और अधिकारकी ऐसी गद्दी व्यवस्था है, जिसने एक वर्गको दूसरे वर्गके खिलाफ खड़ा कर दिया है, एक आदमी दूसरे आदमीके विलासके लिए दास बननेके लिये मजबूर है। आहार और कपड़ा केवल खेतके जोतने और रेशम-कीट पालनेसे मिलता है। वैयक्तिक सुरक्षाके लिये प्राकार-बद्ध नगर बनाना पड़ता है। मकड़के समय तुम्हारे यहां कोई नहीं जानता, कि कैसे लडना चाहिये, और शांतिके समय तुम्हारा हर एक आदमी ऐंडीसे चोटी तक खून पसीनेको एक करते जीता है। अपने ढकोसलोंकी बढ-बढकर बात मेरे सामने मत करो।” फिर उसने कहा—“चीनी दूत, तुम्हें बोलना कम चाहिये और अपनेको इतने ही तक सीमित रखना चाहिये, जिसमें अच्छे किसम और अच्छे नापका रेशम, चावल, शराब आदि हमारी वार्षिक भेठे भेजी जाये। यदि भेठकी चीजे सतोपजनक हो, तो बात करना बेकार है। हम लोग बात बिल्कुल नहीं करेंगे। यदि हमें सतुष्ट नहीं करोगे, तो हम तुम्हारी सीमाओं पर आक्रमण करेंगे।”

७ साल राज करनेके बाद चीयूको चीनके ऊपर आक्रमण करनेकी अवश्यता पड़ी। वह १ लाख ४० हजार हूण सेनाके साथ लूटपाट करता वर्तमान सियान्-फू तक चला आया और बड़ी भारी सख्यामें लोगो, पशुओं और धन-सम्पत्तिको अपने साथ ले गया। चीनी बड़ी तैयारी करनेमें लगे थे, किंतु तब तक चीयू अपना काम करके लौट चुका था। कई साल तक यह आतंक छाया रहा, फिर इस बात पर सुलह हुई—“महा-दीवारसे उत्तरकी सारी भूमि धनुर्धरों (हूणों) की है, और उससे दक्षिणकी भूमि टोपी और कमरबन्द वालोंकी।”

यूची-पलायन—चीयूकी सबसे बड़ी विजय थी, कान्सू यूची शकोंको भगाना। माउदुन उन्हें सिर्फ परास्तभरकर पाया था। उस समय लोबनोरसे ह्वाङ्गहोके मुडाव तक यूचियोंकी विचरण-भूमि थी। लोबनोरसे उत्तर-पूरब सइवाङ्ग (शक) रहते थे। चीयूने अपनी सुसंगठित सेनासे यूचियों पर लगातार ऐसे जबर्दस्त आक्रमण किये, जिसके कारण यूचियोंकी भारी क्षति हुई और १७६ या १७४ ई० पू० में वह अपनी भूमि छोडकर पश्चिमकी ओर भागनेके लिये मजबूर हुए। सइवाङ्गकी भूमिमें थोडा जानेके बाद उनका एक भाग तरिम-उपत्यकाकी ओर चला गया और दूसरा इली-उपत्यकाके रास्ते आगे बढ़ा—पहले भागको लघु-यूची कहते हैं और दूसरेको महायूची। लघु यूचियोंके आनेसे पहले तरिम-उपत्यका उन्ही खसो (कशो) की थी, जो कि उस समय भी कश्मीर

और पश्चिमी हिमालय तक फैले हुए थे। अब कुछ शताब्दियों के लिये तरिम-उपत्यका लघु-यूनि यो की हो गई। महायूचियोने सड़वडको खदेड़ कर उनकी जगह अपने हाथ में ले ली। सड़ वाङ्ग अपने पश्चिमी पड़ोसी तथा त्यानशान और सप्तनद के निवासी मुन पर पड़े। महायू चियोको हूणोंने यहा भी चैन में नहीं रहने दिया और वह बराबर पश्चिम की ओर बढ़ते हुए, भित दरिया और अराल समुद्र तक फैल गये। फिर वहासे दक्षिण की ओर घूमे। कुछ समय तक उनका केन्द्र वक्षु नदी के उत्तर में था। इसी समय ग्रीको-बाख्त्री राजा हेलियोको मरा था। कास्पियन तटवासी पार्थियों और सोगद उपत्यका में पहुँचे यूचियोने उसके राज्य को आपस में बाँटकर यवन-राजवंश को खतम कर दिया। आगे १२८ ई० पू० में, जब चाङ्क्यान बाख्तरम पहुँचा, तो उस समय वह यूचियोका केन्द्र बन चुका था। आगे हम बतलायेंगे, कि कैसे यूची अपनी शक्तियों आगे बढ़ाने हुए, भारत तक पहुँचे।

५३ पीछे के हूण शासक

(४) चूचैन्=चीयू (१७२-१२७ ई० पू०) —अपने बाप के स्थान पर शान्-यू बना। चीनी हिजडा अब भी प्रभावशाली मंत्री था। चीयू के पास भी चीन से नई राजकुमारी आई। तत्कालीन चीन सम्राट् वू-तीने उसे धोखे में पकड़ना चाहा, भारी युद्ध हुआ, अन्त में शान् जाल में एक बार आकर भी निकल भागने में समर्थ हुआ। अब चीन और हूणों के निरन्तर संघर्ष होने लगे और चीनी सीमा त हूणों की आक्रमण-भूमि बना रहा।

(५) ईचिमे^१ (१२७-११७ ई० पू०) —यह था शान्-यू चौथे का भाई था। इसने भी चीन सीमा पर लूटमार जारी रखी, लेकिन वह बहुत दिनों तक चल नहीं सकी। वूती बड़ा शक्तिशाली सम्राट् था। उसने हूणों का बल तोड़ने के लिये बहुत भारी तैयारी की। इसकी बड़ी बड़ी सेनाओं ने एक के बाद एक हूण-भूमि पर लगातार आक्रमण किये, लाखों हूणों को वेदों से मारा और उनकी भेड़ों को बड़ी संख्या में पकड़ लिया। इस प्रकार हूण उत्तर की ओर भगाये जा रहे। यूचियों की भूमि (कान्शू) हूणों से खाली करा ली गई। कान्शू में ही एक नगर चाङ्ग-ये था, जहाँ कोई हूण सरदार रहता था। इस नगर के विजय के समय चीनी सेना को एक सोने की मूर्ति मिली, जिसकी हूण पूजा किया करते थे। अदाज लगाया जाता है, कि यह “सुवर्ण-पुरुष” बुद्ध की प्रतिमा थी। तरिम-उपत्यका में बुद्ध-धर्म अशोक के समय में पहुँचा बतलाया जाता है, हो सकता है, वहासे यूचियों में होते वह हूणों में पहुँचा हो। यूचियों की पुरानी भूमि के विजय के बाद चीन को भारत का परिचय वहा प्रचलित बौद्ध-धर्म के कारण ही मिला। लेकिन बौद्ध-धर्म के चीन में पहुँचने का प्रमाण अभी और पीछे मिलता है।

यद्यपि चीनी सेना हूणों को उत्तर में ढकेलने में सफल हुई थी, किंतु वह उसे सदा की विजय नहीं समझती थी। इसीलिए सम्राट् वूतीने अपने सेनापति चाङ्क-क्यान को अपने शत्रु हूणों के शत्रु यूचियों के पास भेजा, कि पश्चिम में यूची भी उनके ऊपर आक्रमण करे। सम्राट् ने यूचियों को उनकी पुरानी भूमि में आकर बसने का निमन्त्रण दिया। चाङ्क-क्यान १३८ ई० पू० में अपनी यात्रा पर चला। यह चीन का प्रथम महान् यात्री है, जिसका यात्रा-विवरण

^१ A thousand years of Tatar, p. 349

बड़ा ज्ञानवर्धक है। चाङ्क-क्यान् दस साल हूणोंका बदी रहा। जब बू-यूनोंने अपनेको हूणोंसे स्वतंत्र कर लिया, तो यह वह हूणोंकी नजरबन्दीसे भागकर ब्रूसन भूमिमें होते हुए खोकन्द पहुँचा। वहाँके निवासी घुमटू नहीं, बल्कि नगरी और ग्रामोके निवासी थे। वहाँसे समरकन्द होते वह यूचियोंके केन्द्र बाख्तरमें पहुँचा। चाङ्क-क्यान्ने यूचियोंको बहुत समझाने की कोशिश की, कि सम्राट् बू-तीने तुम्हारी जन्मभूमि खाली करा ली है, वह चाहते हैं कि तुम लौटकर उसे सम्हाल लो। लेकिन यूची भली प्रकार जानते थे, कि घुमन्तुओका जीतना वैसा ही अचिरस्थायी है, जैसा कि डेला फेंकने पर काँइका फटना। वह बाख्तरके विशाल राज्यके स्वामी हो आनन्दसे जीवन बिता रहे थे, इसलिये हूणोंसे झगडा मोल लेनेके लिये तैयार नहीं थे। चाङ्क क्यान्को बदरूसा, पामीर और सिङ्ग-क्रियाङ्ग होकर लौटना था, जहाँ वह हूणोंकी पहुँचसे बाहर नहीं रह सकता था। उमे फिर उनकी कैदमें रहना पडा और बारह वर्ष (१३८-१२६ ई० पू०) के बाद चीन लौटनेका मौका मिल। ११५ ई० पू० में फिर उमे बूसुनोंके पास भेजा गया, जो इस्तिक्कुल महासरोवरके पास त्यान्शान्में रहा करते थे। चीन पश्चिम जानेवाले रेशम पथको सुरक्षित तौरसे अपने हाथमें रखना चाहता था, इस लिये चाङ्कक्यान्को दूसरी बार भेजा गया था। उसने पार्थिया आदि दूसरे देशोंमें पना लगानेके लिये अपने दूत भेजे। लौटकर उसने सम्राट्को पश्चिमी देशोंके बारेमें रिपोर्ट दी। मूल रिपोर्ट प्राप्य नहीं है, लेकिन सूमा-व्याङ्गने ६६ ई० पू० में अपनी पुस्तक “शी-की” और पाङ्गकीने ६२ ई० में “क्यान्-शान्-शूकी”में (अपूर्ण पुस्तक जिसे पीछे उसकी बहिनने पूरा किया) उपयोग किया है। पिछली पुस्तकमें २०६ ई० पू०—२४ ई० तकका वर्णन है। चाङ्क क्यान् पश्चिमसे लौटनेके बाद ११४ ई० पू० में मर गया। उसके विवरणके जो अंश मिलते हैं, उससे बहुत सी बातोंका पता लगता है। पार्थियन लोग चर्मपत्र पर आडी लाइनमें लिखते थे। फर्गानासे पार्थिया तक शक-भाषा बोली जाती थी।

इशी-ज्या (१२७-११७ ई० पू०), अच्ची (११७-१०७ ई० पू०), चान्-सी-लू (१०७-१०४ ई० पू०), शूली-हू (१०४-१०३ ई० पू०), शू-ती-हू (१०३-६८ ई० पू०), हू-लू-हू (६८-८७ ई० पू०) ये हूणोंके श्वेके बादके शान्-यू हैं, जिनका समकालीन हान्-वशी सम्राट् बू-ती (१४०-८६ ई० पू०) था। चिन्-वशन हूणोंकी शक्तिको तोड़नेके लिये जो प्रयत्न किया था, उसकी समाप्ति हान्-वश ने की।

(क) बूती और हूण

बू-तीका ५४ वर्ष का शासन हूणों के पराजय, चीन के शक्ति के चरम उत्कर्ष और रेशम-पथ को सुरक्षित करने के लिये बहुत महत्त्व रखता है। १२६ ई० पू०, ११६ ई० पू० और ६६ ई० पू० में चीन ने हूणों के ऊपर तीन जबर्दस्त आक्रमण करके उनके उर्दू को छिन्न-भिन्न कर दिया। जेनरल बेइ-सिन् के आक्रमण १२६ और ११६ ई० पू० में हुये थे। इन आक्रमणों के फलस्वरूप हूणों की सैनिक शक्ति ही नहीं तोड़ दी गई, बल्कि तीन सालों के भीतर चीन को १६ हजार, ७० हजार और १० हजार हूण बदी मिल गये, जिन्होंने दास बनकर चीन के आर्थिक विकास में भारी काम किया। इधर फर्गाना तकका वणिक्-पथ भी चीन के हाथ में आ गया, इसलिये रोम के साथ खूब व्यापार होने लगा। इससे पहले ही

अल्ताई के उत्तर-पूरब के घुमन्तू तिङली और सप्तनद तथा त्यानशान के व-सुन हूणो के अधीन थे। वह समय पड़ने पर सैनिक सहायता भी देते थे।

वूती की सफलता का एक कारण यह भी था, कि धीरे धीरे हूण सरदार विलासी होते जा रहे थे और उनमें शक्ति हथियाने के लिये आपस में घोर वैमनस्य था। चीयूने १७६ या १७४ ई० पू० में यूचियों को देश छोड़ने के लिये मजबूर किया। यह हूण-शक्ति के चरम उत्कर्ष का समय था। अब जबकि वू-तीकी शक्तिसे मुकाबला करना था, तो हूणोंका सगठन बहुत खोखला था। चीनके भीतर घुसकर लूटपाट करना हूणों की आजीविका का एक प्रधान साधन था और इसी वजह से कितने ही समय भिन्न-भिन्न सामन्तों के ओर्दू एक हो जाया करते थे। यह एकता स्थायी नहीं होती थी। इसीसे लाभ उठाकर ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी के अन्त तक फर्गाना तक का सारा मध्यएशिया चीन के हाथ में चला गया। १० वे शान्-यू हू-लू-कू (६८-८७ ई० पू०) के समय इस वैमनस्य ने हूणों में गृह-युद्ध का रूप ले लिया। ६० ई० पू० में चीन ने हूणों पर एक बहुत बड़ा सैनिक अभियान भेजा। इस समय सिङ्कयाङ्ग के कराखोजा और पीजाम् के इलाके चीनियों के हाथ में थे। इतिहास के आरम्भ से ही तरिम-उपत्यका में कराशर से काशगर और काशगर से खोतन तक बहुत से समृद्ध नगर बसे हुये थे, जिनमें खस और शक जातीय लोग रहा करते थे। चीनियों ने हूणों को बहुत दूर उत्तर भगा दिया था, किंतु इतने पर भी हूणों की शक्ति बिल्कुल खतम नहीं हुई थी। यह उस जवाब से मालूम होता है, जिसे कि सधि करने के लिये भेजे गये दूत को उन्होंने दिया था—“दक्षिण हान के महान् वश का है और उत्तर हूणों का। हूण प्रकृति के स्वच्छन्द पुत्र हैं। वह कठिनाइयों तथा छोटी मोटी बातों की परवाह नहीं करते। चीन के साथ एक बड़े पैमाने पर सीमान्ती व्यापार करने के लिये हमारा प्रस्ताव है, कि एक चीन राजकुमारी व्याह करने के लिये आये, प्रति वर्ष १० हजार समूरी चमड़े, उच्च श्रेणी के केशम के १० हजार थान और इनके अतिरिक्त पहले सधि-पत्रों से मिलने वाली भेंट भी, हमारे पास भेजी जाय। यदि यह कर दिया जाय, तो हम फिर सीमात पर लूट पाट नहीं करेंगे।”

शान्-यू की मा बीमार थी। शकुन-शास्त्रियों ने बतलाया, कि देवता बलि चाहते हैं। खोकन्द के विजेता तथा चीन का सर्वश्रेष्ठ सेनापति स्यन्-बी दरबारी षड्यन्त्र के कारण भाग कर हूणों की शरण में चला आया था, उसी की बलि देवता को दी गई। जान पड़ता है, देवता इससे और रुष्ट हो गये। कई महीने तक लगातार हिम-वर्षा हुई। पशु और उनके बच्चे मर गये, लोगों में महामारी फैल गई। अन्न की फसल जहा होती थी, वहा पकने नहीं पाई। इसके साथ युद्ध-क्षेत्र में भारी पराजय हुई, जिसमें बड़े-बड़े सेनापति मारे गये। इससे हूणों की कमर क्यों न टूट जाती ?

(ख) हूण-पराभव

खूखन, हू-हून्-ये या खू-गन्-जा (५६-३१ ई० पू०) १४ वा शान्-यू था। इस समय मचूरिया से लेकर इसीकुल तक की हूण-भूमि में प्रचंड गृह-कलह चल रहा था। एक नहीं पाच-पाच शान्-यू बन गये थे, जिनमें हू-हून्-ये का अपना बड़ा भाई ची-ची उसका जबर्दस्त प्रतिद्वंद्वी था। आपसी सघर्ष तथा चीन के प्रहार के कारण कितने ही हूण सरदार चीन की अधीनता स्वीकार करने में ही कल्याण समझते थे। कराकोरम (मंगोलिया) प्रदेश में हू-हान्-ये ने ची-ची को जबर्दस्त हार दी। हू-हान्-ये का दूसरा प्रतिद्वन्द्वी बो-यान था, जिस पर उसने ५० हजार सेना के साथ आक्रम-

मण किया। अन्त में बो-यान को निराश होकर आत्महत्या कर लेनी पड़ी। हू-हान्-ये का शासन बहुत मजबूत हो चला। इतने प्रतिद्वन्द्वियों के खिलाफ हू-हान्-ये के विजय का एक कारण यह भी था, कि सरदारों के प्रभाव के बढ़ने के बाद भी हूणों में अभी सामरिक जनतन्त्रता का लोप नहीं हुआ था और वह जननिर्वाचित था। किंतु, भोग और सम्पत्ति ने हूणों में भेद अवश्य प्रकट कर दिया था।

हू-हान्-येने परिषदों के सामने चीन की अधीनता स्वीकार करने का प्रस्ताव रक्खा। बहुत से सरदारों ने असहमति प्रकट की। उनका कहना था—“हमारा प्राकृतिक जीवन है केवल पशुबल और क्रियापरायणता। अपमानपूर्ण अधीनता तथा सुखी जीवन हमारे लिये उपयुक्त नहीं है, बल्कि उसके प्रति हम घृणा करते हैं। घोड़े की पीठ पर चढ़कर लड़ना यही हमारी राजनीतिक शक्ति का मूलमंत्र है। यही वह चीज है, जिससे कि हम सदा बर्बर जातियों में अपनी प्रधानता कायम रखते आये हैं। युद्ध में मरना हमारे हरेक वीर योद्धा की कामना रहती है। चाहे हम आपस में कभी लड़ भी पड़े, तो भी कोई परवाह नहीं, क्योंकि यदि एक भाई सफल नहीं होगा, तो दूसरा सफल होगा और इस प्रकार राज्य सदा अपने वश में रहेगा। असफल भाई भी कमसे कम बहुत सम्मानजनक मृत्यु को प्राप्त करेगा। चाहे चीनी साम्राज्य बहुत मजबूत है, किंतु वह न हमको जीतने की और न अपने में पचा लेने की शक्ति रखता है। हम लोग क्यों अपने पुराने रास्ते को छोड़कर चीनियों के सामने नतमस्तक हो, और अपने पूर्वज शान्-युओं के नाम पर बट्टा लगाये, अपने को दास बनाये और दूसरे लोगों के सामने उपहासास्पद बनें। चाहे ऐसा करने से हमें शान्ति मिल जाय, किंतु दूसरों पर प्रभुत्व करने का हमारा हक सदा के लिये खतम हो जायगा।”

समर्पण के पक्षपाती एक राजकुमार ने कहा—“ऐसा नहीं है। सभी जातियों के सामने कुअवसर और सुअवसर आते रहते हैं। चीन की शक्ति इस समय बहुत उत्कर्ष पर है। कुलजा को लेकर उन्होंने दुर्गबद्ध कर लिया है। उधर के सभी राज्य चीन के विनम्र सेवक हैं। शून्ती-हू (१०३-६८ ई० पू०) के समय से ही हम जो खो रहे हैं, उसे फिर प्राप्त नहीं कर सके। इस सारे समय में हम पिटे हैं। निश्चय ही इस समय हमारे लिये यही इच्छा है, कि थोड़ा सा अपने अभिमान को कम करे, न कि बराबर लड़ते जायें। यदि चीन की अधीनता स्वीकार करते हैं, तो शांतिपूर्वक हम अपने प्राणों की रक्षा कर सकते हैं। यदि हम ऐसा नहीं करते, तो बहुत भयकर तौर से नष्ट होते जायेंगे। ऐसी अवस्था में हमारे लिये कौन रास्ता अच्छा है यह स्पष्ट है।”

चीन ने संधि की शर्तों में यह भी रखी थी, कि शान्-यू का एक पुत्र प्रतिभूति (अमानत) के तौर पर भेजा जाये। हू-हान्-ये ने इसे स्वीकार किया। उसके जेठे भाई ची-ची ने भी वैसा ही किया।

अगले साल (५१ ई० पू० में) हू-हान्-ये ने चीनी दरबार में आने के लिये प्रार्थना की। हूण पराजित होते भी चीनकी जितनी क्षति कर बैठते थे, उससे यह सौदा सस्ता मालूम हुआ। सम्राट् स्वेन्-त्ती (७३-४८ ई० पू०) ने उसकी अगवानी के लिये एक मजबूत और बड़ा शानदार दस्ता भेजा, हू-हान्-ये के आने पर स्वयं बड़े सम्मान के साथ उसका स्वागत किया। सम्राट् के सभी राजकुमारों तथा दूसरे सामन्तों के ऊपर शान्-यू को माना गया और उसे घरती में सिर छुवा कर कोरनिश करने को नहीं कहा गया। सम्बोधन में भी शान्-यू का नाम लिये बिना “आप मित्र” कहा गया। उसे बहुत मूल्यवान् भेंट दी गई, जिसमें एक सोने की मोहर, एक राजकीय

खड्ग और कितने ही राजकीय रथ, घोड़े, जीन और दूसरी चीजे थी। सम्राट् से मुलाकात करने के बाद विशेष दूत ने ले जाकर शान्-यू को निवास-स्थान पर पहुँचाया। कुछ समय बाद शान्-यू को लौटने की अनुमति मिली।^१

ची-ची ने भी अधीनता स्वीकार करते हुये प्रार्थना की थी, कि उसे महादीवार के बाहर ओर्दुस प्रदेश में रहने की आज्ञा दी जाये, जिसमें कि खतरे के समय वह उधर के दुर्गबद्ध नगरों की रक्षा कर सके। ची-ची के दूत की भी सम्राट् ने बड़ी खातिर की। अगले साल फिर दोनों भाई शान्-यूओं को पास दूत आये, जिनमें हू-हान्-ये के दूत की ज्यादा आवभगत की गई। उससे अगले साल (४६ ई० पू० में) हू-हान्-ये जब दरबार में गया, तो उसका पहले ही की तरह सम्मान हुआ, और ज्यादा भेंट भी प्राप्त हुई। इससे ची-ची की ईर्ष्या और भडक उठी। उसने हू-हान्-ये को निर्बल समझा और अपने सारे ओर्दू को लेकर पश्चिम की विजय पर चल पड़ा। कुलजा के घुमन्तू वू-सूनों को अपनी ओर करने के लिये उसने दूत भेजा। वू-सून राजा ने दूत का सिर काटकर युद्ध घोषित कर दिया। वह जानता था, कि चीन उसकी पीठ पर है। ची-ची ने उसे हराया, फिर उत्तर में तरबगतई, वू-चे, च्याङ्-कुन्, तिङ्-ली आदि घुमन्तूओं को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिये मजबूर किया। चाङ्-कुन् से ७ हजार ली दक्षिण-पूरब इस समय ची-ची के ओर्दू का केन्द्र था। उस समय तक वू-सूनों की प्रमुखता में यहाँ के घुमन्तू बहुत कुछ स्वायत्त शासन कर रहे थे। ची-ची शान्-यू या उत्तरी हूण-ओर्दू का मुख्य-स्थान कराकोरम (उलान्वातोर) के पास था, जहाँ से किरगिजों का केन्द्र २३०० मील और आज का तुर्फान तथा पीजाम २००० मील थे। ४८ ई० पू० में सम्राट् ध्वेनती गद्दी पर बैठा। उसने हू-हान्-ये की प्रार्थना पर २० हजार नाप अनाज भेजा। ची-ची इस पर जल मरा। उसका लडका सम्राट् का प्रतिहार था। उसे उसने बुला भेजा और पहुँचाने के लिये आये हुए दूत को भी मार डाला। दरबार को सूचना मिली थी, कि हू-हान्-ये का ओर्दू बहुत शक्तिशाली और समृद्ध है, वह ची-ची का मुकाबला अच्छी तरह कर सकता है।

४८ ई० पू० से हूण ओर्दू दो भागों में बंट गया—हू-हान्-ये का दक्षिणी ओर्दू अब चीन के अधीन था और ची-ची का उत्तरी ओर्दू बिलकुल स्वतंत्र था। हू-हान्-ये और चीन में जो संधि हुई थी, उसकी कुछ पक्तियाँ इस प्रकार हैं—“चीन और हूण में सदा के लिये शांति रहेगी। उनमें एक परिवार जैसा मेल रहेगा। दोनों में से कोई पक्ष एक दूसरे पर न आक्रमण करेगा न धोखा देगा। अगर कोई लूटपाट करे, तो उसकी दूसरे पक्ष के सामने शिकायत की जाय। वह दोषियों को दण्ड दे और क्षति-पूर्ति दिलवाये। अगर कोई चढाई हो, तो प्रत्येक पक्ष उसे अच्छी तरह दबाने का प्रयत्न करेगा। जो पक्ष इस संधि को तोड़े, उसके और उत्तराधिकारियों के साथ दैव वैसा ही करे, जैसा कि उसने इस संधि पत्र के साथ किया।”

संधि हो जाने के बाद शान्-यू और चीनी राजदूत एक पहाड़ के ऊपर गये, जहाँ अपनी रत्नजटित तलवार से शान्-यू ने एक सफेद घोड़े की बलि दी, और यूचियों के राजा की खोपड़ी में—जिसे कि विजय के चिन्ह के तौर पर हूणों ने अपने पास रख रखा था—घोड़े के खून में सोना मिला कर चीनी राजदूत के साथ एक एक घूंट पिया।

चीनी दरबारी ऐसी शपथ से बहुत नाराज थे। उन्होंने जोर डाला, कि शपथ को लौटा लिया जाय, लेकिन सम्राट् ने इसे पसन्द नहीं किया।

उधर ची-ची चीन के दूत को मार डालने के लिये परेशान था। समरकन्द का (शक) राजा कुलजा के वूसूनो के अत्याचार से उत्पीडित था। उसने किरगिज-प्रान्त में स्थित ची-ची को मदद के लिये बुलाया, और हूणों की अधीनता को फिर से स्वीकार किया। ची-ची उनकी मदद के लिये चला, लेकिन वूसूनो की मदद के लिये चीनी सेना भी आ पहुची। शान्-यू ची-ची तलस् (तुलाई) नदी के किनारे लडते हुये मारा गया, जिसके कारण उत्तर की बर्बर जानियों की एकता खतम हो गई।

३ उत्तरी और दक्षिणी शान्-यू^१

ची-ची और हू-हान्-येके द्वारा ईसापूर्व प्रथम शतब्दी में हूण जन दो भागों में विभक्त हो गया, जिसमें दक्षिणी हूण चीन के साथ रहना चाहते थे। महादीवार से दूर उत्तर गोबी के रेगिस्तान से परे वर्तमान मंगोलिया और बाइकाल के पास घूमने वाले हूण चीन की पहुच से अपने को दूर समझने परवाह नहीं करते थे, कि चीन रुष्ट होगा, तो हमारी हानि होगी। चीन की अधीनता स्वीकार करने की मनोवृत्ति ५२ ई० पू० में हू-हान्-ये ने जो प्रकट की थी, जान पडता है, वह ची-ची के मरने के बाद बिल्कुल लुप्त नहीं हुई। हू-हान्-ये बराबर अपने को चीन का अनन्य-भक्त साबित करना चाहता था, यद्यपि चीन-सम्राट् उसपर पूर्णतया विश्वास नहीं कर सकता था। वह समझता था, ये घुमन्तू हूण—जिनका न किसी खेत से नाता है और न घर से—बे-नकेल के ऊट है। लेकिन साथ ही उसको विश्वास था, कि जबतक उनकी अच्छी तरह भेट-पूजा होती रहेगी, तब तक वह विरोधी नहीं बनेंगे। उसे यह पता लग गया था, कि हूणों को “आदमी” बनाने के लिये सबसे अच्छा तरीका यही है, कि उनके पास सामन्ती भोग की वस्तुये पहुचाई जाय और उनके अन्त पुर में सुन्दर-सुन्दर चीनी राजकुमारिया प्रवेश करे। ३३ ई० पू० में (मरने से दो साल पहले) हू-हान्-ये फिर दरबार में आया। अबकी भी ४९ ई० पू० की तरह ही उसका स्वागत हुआ। शान्यूको सम्राट् यून्-ती (४८-३२ ई० पू०) ने अपने अन्त पुर की सबसे सुन्दरी तरुणी चाउ-चुन् (प्रभावती) प्रदान की। सम्राट् के हरम में हजारों सुन्दरिया रहती थी, जिनमें से चाउ-चुन् की तरह कितनी ही ऐसी भी थी, जिन्हें सम्राट् ने कभी देखा भी नहीं था। कायदा था दरबारी चित्रकार सुन्दरियों का चित्र अकित करता। सम्राट् चित्र देखकर उनमें से किसी को पसन्द कर अपने पास बुलाता। चित्रकारों को इसके लिये खूब रिश्वत मिलती थी। उस समय माउ नामक एक दरबारी चित्रकार था, जो इस काम पर नियुक्त था। अन्त - पुरिकाये अपने सौन्दर्य को बढा-चढाकर चित्रित कराने के लिये खूब रैसा देती थी। चाउ-चुन् सर्व-सुन्दरी थी, किन्तु वह इस बात के लिये राजी नहीं हुई। माउ ने नाराज होकर उसका बहुत भद्दा चित्र बनाया, इसीलिये सम्राट् ने उसे कभी नहीं बुलाया। चीन के विशाल प्रासाद के एकात कोने में उसका जीवन बीतने लगा। शरद आता, पत्ते पीले होकर गिरने लगते। वह सोचती मेरा तारुण्य और सौन्दर्य भी इसी तरह खतम हो जायगा। इसी समय हू-हान्-ये ने सम्राट्

से एक राजकुमारी मागी। राजकुमारिया अपने प्रासाद को छोड़कर बर्बर हूणों के तम्बू में जानेके लिये तैयार नहीं हो रही थी। लेकिन हूण राजा को एक राजकुमारी अवश्य देनी थी, यदि चीन के जन-धन की रक्षा करनी थी। चाउ-चुनने जाना पसंद किया। सम्राट् ने समझा, कि वह कोई साधारण सी तरुणी होगी, और प्रसन्नतापूर्वक देना स्वीकार किया। लेकिन, जब वह शान्-यू के साथ भेजने के लिये सम्राट् के सामने लायी गई और उसकी दृष्टि इस निसर्ग सुन्दरी पर पड़ी, तो वह अपनी बातसे उलट तो नहीं सकता था, लेकिन उसने उसी वक्त चित्रकार माउ को प्राण-दण्ड का हुकुम दिया। चीन के बहुत से कवियों और नाट्यकारों ने चाउ-चुन के स्वदेश छोड़ने के कष्टपूर्ण दृश्य और रेगिस्तान तथा जंगली पश्चिमी देश के भयानक चित्र अंकित किये हैं। हूण-प्रतिहारिया सितार के साथ मधुर संगीत द्वारा उसके मन को बहलाने का बेकार प्रयत्न करती थी। निर्जन रेगिस्तान में सदाहरित समाधि को खड़ी देख चाउ-चुन सोचती, एक दिन मुझे भी यही दफन कर दिया जायगा। कहते हैं इसी समय हूणों का संगीत यत्र चीन में प्रचलित हुआ।

हू-हान्-ये चीन सम्राट् का बहुत कृतज्ञ हुआ। इसको प्रकट करने के लिये उसने सम्राट् से प्रार्थना की, कि हू डहो से लोबनोर तक की सारी सीमा की रक्षा का भार मैं लेंने के लिये तैयार हूँ, वहाँ छावनी रखकर व्यर्थ धन खर्च करने की आवश्यकता नहीं। लेकिन एक बूढ़े मन्त्री ने सम्राट् को सावधान किया—“शासी से कोरिया तक जंगलों से आच्छादित पर्वत-श्रेणियाँ खड़ी थी, तो भी विजेता माउडुन और उसके उत्तराधिकारी भीतर घुसने में सफल होते रहे। वह जहाँ चाहते थे, वहाँ से अपनी इच्छानुसार चीन पर आक्रमण करते थे। वह तब तक ऐसा करते रहे, जब तक कि वू-ती (१४०-८६ ई० पू०) ने उन्हें रेगिस्तान के उत्तर में भगा नहीं दिया और सारी महादीवारको दुर्गबद्ध नहीं कर दिया। सीमात की छावनियाँ इसीलिये हैं, कि देशद्रोही चीनी भागकर हूणों के देश में न चले जायँ, साथ ही यह भी कि हूण चीन के ऊपर आक्रमण न कर सकें। यह कहने की आवश्यकता नहीं, कि हमारे सीमात के निवासियों में भारी सख्या हूण-वशियों की है, जिन्हें कि हम धीरे धीरे हजम कर रहे हैं। हाल में हमने च्याङ्ग (तिब्बत-वशियों) से सबध जोड़ना शुरू किया है, जो कि हमारे अफसरों की लोलुपता और लूट-खसूट से बहुत रुष्ट हैं। यदि च्याङ्ग और हूण दोनों घुमन्तू आपस में मिल गये, तो हमारे लिये भारी खतरा पैदा हो जायगा। एक शताब्दी से थोड़ा अधिक हुआ, जबकि महादीवार बनाई गई। यह केवल मिट्टी का ढूह नहीं है। पहाड़ के ऊपर और नीचे पृथिवी के स्वाभाविक उतार-चढ़ाव पर यह बनाई गई है। इसमें मधु-छत्र की तरह बहुत से गुप्त मार्ग और तहखाने तैयार किये गये हैं, स्थान-स्थान पर दुर्ग बनाये गये हैं। क्या यह सारा विशाल श्रम नष्ट होने के लिये छोड़ दिया जायगा।”

सम्राट् के दूत ने मीठी मीठी बातें करके शान्-यू को समझाने की कोशिश की। क्या रहस्य है, इसे वह भली भाँति समझता था। इसके एक ही साल बाद सम्राट् यून्-ती और दूसरे साल शान्-यू हू-हान्-ये भी मर गये।

चाहे उत्तर और दक्षिण का मत भेद भीतर-भीतर रहा हो, लेकिन वह बीसवें शान्-यू हू-तू-एल-शी-ताउ-कू (१८-४६ ई०) की मृत्यु तक प्रकट नहीं हो सका। हूणों में यह नियम नहीं था, कि शान्-यू का बड़ा बेटा उसका उत्तराधिकारी हो। कभी कभी बड़े बेटे की तो बात अलग सारे बेटों को छोड़ कोई सगा या चचेरा भाई शान्-यू बना

दिया जाता था। हू-हान्-येके के बाद उसके पांच बेटे एक के बाद एक शान्-यू बने। २०वे शान्-यू का भतीजा द्वितीय हू-हान्-ये उत्तराधिकारी समझा जाता था, लेकिन सैनिक जनतन्त्रता उसमें बाधक हुई। बहुत सवर्ष के बाद हू-हान्-ये द्वितीय (४८ ५७ ईस्वी) यद्यपि शान्-यू चुन लिया गया, किंतु २०वे शान्-यू के पुत्र ने भी अपने को शान्-यू घोषित कर दिया। वह एक तरह अपने चचा ची-ची के अपूर्ण काम को पूरा करना चाहता था।

अब दोनों हूण ओर्दुओ में सवर्ष शुरू हो गया। ४९ ईस्वी में दक्षिणी शान्-यू के भाई ने उत्तरी शान्-यू के भाई को हराकर बदी बनाया। उत्तरी शान्-यू जानता था, कि चीन के कृपा-मात्र अपने प्रतिद्वंद्वी से मैं सीधे मुकाबला नहीं कर सकता, इसलिये दक्षिण की अपनी चरभूमि से ३०० मील दूर चला गया। भविष्यवाणी थी, कि घुमन्तुओं को अपनी नवी पुस्त में ३०० मील दूर भागना पड़ेगा। थोड़े समय बाद पाँच असन्तुष्ट सरदारों तथा ३० हजार परिवारों को लिये उत्तरी शान्-यू का भाई बागी हो निकल भागा। सारे दल ने उत्तरी हूण-केन्द्र से ७५ मील पर डेरा डाला, जहाँ दोनोंमें लड़ाई हुई। पाचों सरदार मारे गये। उनके पुत्रों ने अपने बचे-खुचे आदमियों के साथ दक्षिणी हूणों के पास जाना चाहा, किंतु उत्तरियों ने उन्हें पकड़ लिया और उनके बचाने के लिये आये दक्षिणियोंको हराकर खदेड़ दिया। सम्राट् ने दक्षिणी शान्-यू को और दक्षिण जानेके लिये कहा और वह लिन्-चाऊ (ल्यू-यूवेन) के इलाके में चला गया। यही के रहने वाले हूणों ने तीन शताब्दी बाद चीन के एक राजवंश की स्थापना की।

उत्तरी शान्-यू चीन से झगडा मोल नहीं लेना चाहता था। उसने बहुत से चीनी युद्ध-बंदियों को लौटा दिया। लूट-पाट करने के लिये उसका बहाना था : “हम चीन की भूमि पर लूट पाट नहीं करते, हम तो अपने विश्वासघाती सरदारों का पीछा कर रहे हैं।” ५२ ईस्वी में उत्तरी शान्-यू ने संधि के लिये अपना दूत भेजा, लेकिन उस समय दरबार में इस पर मतभेद रहा। अगले साल घोड़ों और समूरी खालों की भेंट भेजकर फिर उसने सुलह करने का प्रयत्न किया, और गायकों की एक मंडली मांगी तथा अपने शी-यू (तुकिस्तान) के अनुगामी राजाओं को साथ ले आकर अधीनता तथा सम्मान प्रदर्शित करने के लिये आज्ञा माँगी। चीन चाहता था, कि दोनों में से कोई नाराज न हो। बहुत नरमी के साथ स्वीकृति देते हुये चीन दरबार ने उसे लिखा “ अतीत-काल में हू-हान्-ये और ची-ची गृह-कलह में लगे हुए थे। उस समय देवपुत्र ने अपना कृपापूर्ण संरक्षण दोनों को दिया और उनके पुत्रों को राजमेवा में स्वीकार किया। हाल के वर्षों में दक्षिणी शान्-यू ने दक्षिण की ओर मुँह फेर कर हमारी अधीनता स्वीकार की। चूँकि वह हू-हान्-ये की अविच्छिन्न सतान में सर्वज्येष्ठ है, इसलिये हमने उसको उचित उत्तराधिकारी माना। लेकिन जब वह अपने अधिकार से बाहर जा हमारी मदद से उत्तरी ओर्दु को नष्ट करना चाहता है, तो हमारे लिये आवश्यक हो जाता है, कि उत्तरी शान्-यू की उचित अभिलाषा पर भी ध्यान रखे, क्योंकि उसने भी कई बार हमारे प्रति अपने कर्तव्य का पालन किया है। इसलिये कोई कारण नहीं है, कि क्यों न उत्तरी शान्-यू सी-यू राजाओं को उनका कर्तव्य-पथ दिखलाने के लिये उनके साथ आकर अपनी स्वामि-भक्ति का प्रमाण हमारे सामने दे। ”

प्रथम उत्तरी शान्-यू ५२ ईस्वी के बाद किसी समय मर गया। उसका उत्तराधिकारी द्वितीय शान्-यू ५९ ईस्वी में स्वयं महादीवार के पास अधीनता स्वीकार करने के लिये आया।

तो भी वह ३ साल तक बराबर चीन में लूटपाट करता रहा, जिसको हटाने के लिये दक्षिणी ओर्दू ने बड़ा काम किया। ६३ ईस्वी में उत्तरियो ने चीन से व्यापारिक सुविधा प्राप्त करने के लिये प्रार्थना की। दरबार ने अनुमति दे दी, समझा, लूटपाट बंद हो जायगी। दो साल बाद ६६ ईस्वी में उत्तरी शान्-यू के पास चीन का दूतमंडल गया। दक्षिण ओर्दू को यह पसंद नहीं आया और उनमें से कुछ उत्तरियो में जा मिले। चीन बराबर भेंट भेजता रहा, लेकिन हूण अतिरिक्त लाभ के बिना सतुष्ट नहीं रह सकते थे, इसलिये उनकी लूटपाट नहीं बंद होती थी। सम्राट् मिङ्-त्ती (५८-७६ ई०) ने मजबूर होकर उत्तरियो के ऊपर ७३ ईस्वी में बहुत भारी सेना भेजी, लेकिन हूण अपनी सनातन युद्ध-नीति के अनुसार गोबी रेगिस्तान के पार भाग गये। ८४ ईस्वी में फिर उत्तरी शान्-यू को हम व्यापारी सुविधा पाते देखते हैं, जिस पर दक्षिणियो ने उनके कुछ आदमियों और पशुओं को पकड़ कर अपना असतोष प्रकट किया।

ईसवी प्रथम शताब्दी का अन्त होते होते उत्तरी हूणों में आपस का वैमनस्य ज्यादा हो गया। साथ ही उनके प्रतिद्वन्द्वियों की शक्ति और सख्या भी बढ़ गई। उनके पूरब (मचूरिया) के घुमन्तू स्यान्-पी (हू-ह्वान्), जो तुगूसों की एक शाखा थे, तेजी से शक्ति सचय कर रहे थे और वह समय दूर नहीं था, जब कि वह चीन को एक राजवश देनेवाले थे। शक्तिशाली स्यान्-पी पूर्व से उत्तरी ओर्दू पर आक्रमण कर रहे थे। दक्षिण में उनके दक्षिणी भाई-बंद जान छोड़ने के लिये तैयार नहीं थे, पश्चिम में सी-यू तुर्कीस्तानी कबीले चोट-पर-चोट कर रहे थे, उत्तर में तिङ्-लिङ् (ककाली) भी अपना प्रभुत्व दिखला रहे थे। चारों ओरों के प्रहारों से छिन्न-भिन्न होकर उत्तरी हूण ओर्दू विलुप्त होने लगा। उनमें से कुछ उत्तर की ओर भागे, और कुछ सेलगा के उपरी धार से होते इतिश नदी, इस्सीकुल (सरोवर) की तरफ बढ़कर वूसुनो की भूमि को हथियाने लगे। इतने ही तक सतोष न कर वह कगों की भूमि अराल-समुद्र से उत्तर-उत्तर शक-वशीय सर्मातों के उत्तराधिकारी अलानों को कास्पियन के उत्तर से हटाते कालासागर और दुनाइ (डैन्यूब) के किनारे पहुँच गये। अतिला (एत्-जेल) बड़े अभिमान से कहता था : मैं शान्-यूओं का वंशज हूँ। मातृभूमि से भगाने के लिये उत्तरी हूणों पर अन्तिम प्रहार स्यान्-पी ने ७७ ईस्वी में किया। उन्होंने शान्-यू को पकड़ लिया और उसके चमड़े को विजय-स्मारक के तौर पर अपने पास सुरक्षित रखा। उत्तरियो के बचे-खुचे आदमियों में से २ लाख ने कई टुकड़ियों में हो महा-प्राकार के भिन्न-भिन्न स्थानों में आकर चीन की अधीनता स्वीकार की। तब से स्वतन्त्र हूण जाति का नाम समाप्त हो गया।

दक्षिणी शान्-यू ४८-१९० ईस्वी तक चीन के सामन्त के तौर पर चीनी जन-समुद्र के कोने में रहे। वह अधिक और अधिक चीनी बनते गये, और अब भी चीन के लिये काफी सैनिक सहायता देते थे। कभी कभी उनमें अपने पूर्वजों का खून जोग मारता, लेकिन उसका परिणाम हजारों के प्राणहानि के सिवा और कुछ नहीं होता था। १७७ ईस्वी में तत्कालीन शान्-यू ने चीन के लिये स्यान्-पी विजेता दर्जे-न्वेसे लड़ाई की। चीनी हारे। मरने वालों में हूणों का शान्-यू भी था। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र हुआ, जिसे मारकर एक चीनी जेनरल शान्-यू बना। पीछे हूण राजवश का नाम भी लुप्त हो गया। तुङ्-हू (सुअरवाले आदमी) स्यान्-पी के रूप में आगे आये और उनके नेता दर्जे-न्वेने १६५ ईस्वी के आसपास स्यान्-पी वंश की स्थापना की। हूणों की तरह ये भी सैनिक जनतन्त्रता और घुमन्तू जीवन के अनुगामी थे। इस वंश ने

उत्तरी चीन पर ४ थी शताब्दी के अन्त तक अपने शासन को कायम रखता। स्यान्-पी के उत्तराधिकारी उन्हीके वंश के तोबा थे, जिनका तृतीय राजा ताउ-वू-ती (३८६-४०६ ई०) बहुत बड़ा विजेता तथा उत्तरी वेई वंश का संस्थापक था। तोबा की एक शाखा उनकुरन ने ज्वेन्-ज्वेन् साम्राज्य को ३५४ ईस्वी के आसपास स्थापित कर उसका विस्तार त्यानशान् से कोरिया तक किया। इन्हीके लौह कमकर तथा उत्तराधिकारी तुर्कों ने तुर्क-वंश और तुर्क-संसार की स्थापना की, जिसका वर्णन आगे आयेगा।

स्रोत ग्रंथ

- 1 A Thousand years of Tatars (E H Parker, Shanghai 1895)
- २ आर्खेआलोगिचेस्किड ओचेर्क सेवेनौड किर्गिजिड (अ न वेन्डताम्, फ्रुन्जे १९४१)
- ३ हुशु इ गुन्नी (क इनस्त्रान्सेफ, लेनिनग्राद १९२६)
- ४ इज इस्तोरिड गुन्नोफ १ वेका दो नाशे एरा (अ न वेन्डताम्), सोव्येत् वोस्तोक वेदे-निये II (1941) पृष्ठ ५१-५७
- ५ सिरिडस्किये इस्तोचिन्कि पो इस्तोरिड नरोदोफ (न पिगुलेन्स्कया, लेनिनग्राद १९४१)
- 6 Histoire des Huns (Desquigue, Paris 1756)
- ७ पेर्वोनचाल्निख कपोफ केव्रा इज नोइन-उला (लेनिनग्राद १९४७)
- 8 Excavation in Northern Mongolia (C Trever, Leningrad)
- 9 The Story of Chang Kien (J of American Oriental Society, Sep 1917 p. 77)
- १० ओचेर्क इस्तोरिड सेमिरेच्य (वरतोल्द, १८६८)
- 11 Histoire d' Attila et de ses successeurs (Am. Thierry, Paris 1856)
- 12 History of the Hing-nu in their Relations with China (Wylie, Journal of Anthropological institute, London, vol III 1892, 3)
- 13 Sur l'origine des Hiung-nu (Shuratori, Journal Asiaticus CC II no I, 1923)

अध्याय ३

१. वू-सुन (३००-१०० ई० पू०) अवार

१. वू-सुन्

हम शको के इतिहास के बारे में कह चुके हैं। वू-सुनो के इतिहास के विशेषज्ञ डाक्टर अ० न० बेर्नस्तामका कहना है^१ “वू-सुनो की सस्कृति वही है, जो कि शको की, अन्तर है केवल उसमें पीतल का अभाव”। इससे साफ है, कि कारपेथियन से कोकोनोर तक फैली हुई पित्तल-युग के आरम्भ से चली आती, महार् शक-जाति की बहुत सी शाखाओं में वू-सुन् भी एक थे। वू-सुनो के शरीर-लक्षण के बारे में चीनी कहते हैं “नीली आखें, लाल दाढ़ी और बानर जैसा साधारण चेहरा।” कू-चा (सिडकियाड) के पीछे के निवासी भी नीली आखों और लाल बालवाले थे। ओरेल स्ट्राइन् तथा लेकाक को तरिम उपत्यका में नीली आखों और लाल बालों वाले नर-नारियों के चित्रपट भी मिले हैं, जिससे मालूम होता है, ईसा की ४थी ५वीं शताब्दी में अब भी तरिम-उपत्यका में इस तरह के लोग निवास करते थे।



१: वूसुन्भूमि (१ ई०)

ईसापूर्व तीसरी और दूसरी शताब्दी में वू-सुन जाति बहुत शक्तिशाली थी, यद्यपि यही समय था, जब कि हूण एक विजेता के तौर पर प्रकट हुये थे, जिनका शिकार कभी कभी वू-सुनो को भी होना पड़ता था। इन शताब्दियों में भी चीन के रेशम को पश्चिम देशों की

^१ आखें० ओचेर्क० (बेर्नस्ताम) पृष्ठ ३७

और पहुँचानेवाला मध्य-एशिया का वाणिज्य-मार्ग वू-सुनो की भूमि में इस्सीकुल के किनारे से जाता था। यही उनका केन्द्र चीन-नू था। हूण और चीन दोनों वू-सुनो को अपनी अपनी ओर खींचना चाहते थे। इली-उपत्यका, चू-उपत्यका और त्यानशान् पर्वतस्थली वू-सुन भूमि थी, जो कि उन्हें अपने शक-पूर्वजों से मिली थी। उनके दक्षिण में पहाड़ों से उतरते हैं। तरिम-उपत्यका थी, जहाँ बसनेवाली हू-मा जाति से उनका व्यापारिक संबंध था। पश्चिम में तलस्-उपत्यका में कंग जाति का सीमांत उनके साथ आ मिलता था। पश्चिम और दक्षिण में फर्गाना (तावान) की सुन्दर उपत्यका का राज्य उनका पड़ोसी था, जो कि रेशम-मार्ग के कारण बहुत समृद्ध तथा अपनी उत्तम जाति के घोड़ों के लिये अति प्रसिद्ध था। १२६ ई० पू० में चाङ्ग क्यान् ने लौटकर जब तावान के घोड़ों की प्रशंसा की, तो राजा खुशी से काम न निकलते देख सम्राट् वू-ती को वहाँ सैनिक अभियान भेजना पड़ा, जिसके कारण चीनी साम्राज्य की सीमा वहाँ तक पहुँच गई। वू-सुन लोग घुमन्तू पशुपाल थे। चीनी लेखक उनके बारे में कहते हैं—“वू-सुन् न खेती जानते हैं न बागबानी। वह अपने पशुओं के साथ तृणजल सुलभ एक स्थान से दूसरे स्थान में घूमते रहते हैं। धनी वू-सुनो के पास चार-चार पाँच-पाँच हजार घोड़े रहते हैं।”

१. सस्कृति

वू-सुन यद्यपि अपने पूर्वज शकों की तरह अब पीतल नहीं लौह युग में आ गये थे, किन्तु अभी उनकी अवस्था आदिम समाज जैसी थी। १६२६ ईस्वी में किर्गिजिस्तान में जो पुरातात्विक खुदाई हुई थी, उससे पता लगता है, कि मृत्पात्र कला में वह बड़े चतुर थे। धातु, काष्ठ, चर्म और मृत्पात्र का हस्तशिल्प उनके यहाँ अच्छा विकसित था। उनके काष्ठ या मिट्टी के बर्तन तीन प्रकार के मिले हैं—अन्न रखने के, खाने के और भोजन पकाने के। सोने का आभूषण भी उनके यहाँ प्रचलित था। हथियारों में भारी वजन का धनुष, बाण, लम्बी तथा सीधी तलवार प्रधान थी। वाण तीन धारा होता था। चाङ्ग-क्यान् अपनी यात्रा (१३८-१२६ ई० पू०) में दो बार आकर वू-सुनो के देश में रहा था। उसीने इस घुमन्तू जाति को चीन की ओर खींचा। आगे बहुत से वू-सुन सामन्तों ने चीन की राजकुमारियाँ व्याही। एक चीनी राजकुमारी के मुँह से किमी जन-कवि ने घुमन्तूओं के नीरस जीवन का गीत गवाया है—

बन्धुओं ने मुझे दिया, दूर देश में,
वू-सुन के राजा को देकर, भेजा पराये राज्य में।
रहते नमदा ढँकी गोल कुटिया में,
खाते मास और पीते दूध।

२. इतिहास

वू-सुनो के तीन विभाग थे, जिनके अवशेष निम्न स्थानों में मिले हैं—(१) चू उपत्यका में कराबलती, (२) त्यानशान् में कराकोल, त्युप और कोचकोर तथा (३) इली-उपत्यका में अल्माअता जिले के कई स्थान। २०६ और २०१ ईसा पूर्व में हूणों ने वू-सुनोको बुरी तरह से

^१ कृत्तिक० सोओब्० xIII, 112 (बेनुश्तमका लेख)

ध्वस्त किया था । माउदुन और ची-उच्चु ने जब (१७४ ई० पू०) यूचियों को बुरी तरह नष्ट-भ्रष्ट करके उन्हें मातृभूमि छोड़ने के लिये मजबूर किया, तो तरिम-उपत्यका में आकर लघु-यूची वसुनो के पड़ोसी बन गये और महा-यूची इली और चू-उपत्यकाओं के वसुनो का भारी नुकसान करते एसिया, वक्षु-उपत्यकाकी ओर गये । इस समय वसुनोने हूणोकी अधीनता स्वीकार की, जिसका अन्त चाङ्-क्यान् के आनेके बाद चीनका पक्षपाती होनेके साथ हुआ ।

वसुन् के पश्चिममें कक (कग) और फार्गानाके शासक थे, दक्षिणमें उनके नये पड़ोसी लघु-यूची (तुषार) थे, किंतु इनसे उनको डर नहीं था । इनकी अपेक्षा वसुन् कहीं सबल थे । उनके भयका कारण पूर्व और पूर्वोत्तरमें था । वहां पूर्वसे आते अन्तर्राष्ट्रीय वणिक्-पथको हाथमें रखनेके लिये चीन अपनी सारी शक्ति लगा रहा था, और पूर्वोत्तरमें हूणोका शान्-यू यह देखनेके लिये तैयार नहीं था, कि उसकी अधीनता स्वीकार करनेवाले वसुन् चीन को अपना स्वामी माने । वसुन् समझते थे, कि उनकी भलाई चीनके साथ रहनेमें है । हूणोका जीवन वसुनो जैसा ही था । दोनों ही घुमन्तु पशुपाल थे, और कृषि-जीवनसे उनको कोई मतलब नहीं था । हूणोंके आनेका मतलब था, उनकी चरभूमियोंका छिन जाना और हूणोकी गुलामी स्वीकार करना । चीनकी कूटनीतिक चालोंमें अपनी राजकुमारियोंसे दूसरे शासकोंके साथ व्याह करना भी सम्मिलित था । माउदुनके समयसे ही हूण शान्-यू राजकुमारियां पाते रहे । तिब्बती शासक ८वीं-९वीं शताब्दी तक चीन-राजवंशके दामाद होते थे । राजकुमारीका यह मतलब नहीं, कि वह सम्राट् की अपनी लड़की या बहिन हो । मालूम होता है, जैसे भेंट-इनाम देनेके लिये और बहुत सी चीजे राजकीय भंडारमें रक्खी जाती थी, वैसे ही अन्तःपुरमें जहां तहासे जमा की हुई सुन्दरियां भी रहती थी । चाऊ-चुन्की घटना हम कह चुके हैं । इससे कितने ही वर्षों पहले ७३ ई० पू० में चीनी राजकुमारीका बहाना लेकर हूणोंने वसुनोके ऊपर आक्रमण किया । एक चीन राजकुमारी वसुन् सरदारसे व्याही थी । उत्तरी शान्-यू देख रहा था, कि चीनके साथ मिलकर ये नीली आखों, लाल दाढ़ी वाले वानर हमारे जूयोंको उठा फेंकना चाहते हैं । शान्-यूने क्रोधव होकर मागकी “अपनी हान-राजकुमारीको हमारे पास भेज दो, नहीं तो हम तुमसे लड़ाई करेंगे ।” वसुनोने हान सम्राट् स्वेन्-त्ती (७३-४८ ई० पू०)से सहायता मागी और तुरन्त एक बड़ी चीनी सेना आ भी गई । चीनियों और वसुनोने मिलकर हूणोको बहुत बुरी तरहसे हराया । कितने ही राजकुमारों और मशहूर सेना-पतियोंके साथ ४० हजार हूण मारे गये, ७ लाख घोड़े, गाये, भेड़े, खच्चर और ऊट विजेताओंके हाथ लगे । ११वां शान्-यू हू-यन्-त्ती (७७-६८ ई० पू०) उस समय उत्तरी और दक्षिणी ओर्दूका भेद न होनेके कारण सभी हूणोका संयुक्त शासक था । यह सघर्ष इली-उपत्यकामें हुआ था । चीन की एक लाख सेना ६०० मील पश्चिम चलकर मददके लिये आई थी । कुलजाके वसुन् राजाने ५० हजार सेना लेकर पश्चिमसे आक्रमण किया था । चीनी सेना हामी और बर्कुल तक पहुंची, लेकिन घुमन्तु हूणोको पहले ही से पता लग गया था, इसलिये उन्होंने अपने परिवारों तथा बहुतसे पशुओंको उत्तरमें दूर भेज दिया था । पराजयके साथ शान्-यूका चचा, दामाद आदि विजेताओंके बंदी बने थे । जैसा कि अभी हमने कहा, उसी जाड़ेमें हूणोंने वसुनोमें बदला लेना चाहा, लेकिन उस साल बर्फ इतनी पड़ी, कि आक्रमण करनेवाली हूण सेनामेंसे दशांश ही मरनेसे बच पाये । इसी समय हूणोंके उत्तरी पड़ोसी तिङ्-लिङ् (किरगिज या प्राग्-उङ्गुर) ने भी उनकी कमजोरीसे फायदा उठाना चाहा और उन पर धावा बोल दिया । मचूरियाके वसुन् भी चुप नहीं

बैठे रहे। इस प्रकार हूण चीन राजकुमारीको वू-सुनोसे कहा छीनते, स्वयं उनके शक्ति अत्यन्त क्षीण हो गई। चीनी इतिहासकार लिखते हैं, कि इस मानवीय और प्राकृतिक सघर्षमें एक तिहाई हूण जन मारा गया, जिनमें युद्धमें भूखसे मरे भी शामिल थे, उनके पशुओंमेंसे भी आधे खतम हो गये।

१६२९ में वू-सुनोकी भूमिसे एक बड़ा महत्वपूर्ण आविष्कार हुआ था। अल्ताई के ध्वसा-वशेषकी खुदाईमें भी एक वूसुन् राजाकी कब्र निकल आई, जिसको ईसा पूर्व ३री शताब्दीका बतलाया जाता है। हूण सरदारोंकी जैसी कब्रें उत्तरी काकेशसमें मिली हैं, वैसी ही यह कब्र भी बड़ी वैभवपूर्ण थी। लेकिन जान पड़ता है, कब्र बननेके थोड़े ही समय बाद कबर-चोरोको पता लग गया, इसलिये इसका बहुमूल्य सामान उसी समय निकाल लिया गया। यह स्थान अल्ताईके ऐसे भागमें है, जहा नीचे धरती सदा हिमीभूत रहती है। जिस छेदके द्वारा चोर भीतर घुसे, उसी छेदसे पीछे पानी भी भीतर घुस कर बर्फ बन गया। इसलिये २२ शताब्दियों तक हिमके नीचे सभी चीजे दबकर सुरक्षित रह गईं। १० हाथ (४ मीटर) गहरे गड्ढे में पुराने चमड़े, लकड़ी और १० घोड़े सुरक्षित मिले। घोड़े बड़ी जातिके और सुन्दर थे। जान पड़ता है, वह मृत सरदारकी अपनी सवारीके घोड़े थे। घोड़ोंके सजानेके कुछ जेवर और दूसरी चीजे भी मिली। भरसक चोरोने किसी मूल्यवान् चीजको न छोड़ना चाहा, लेकिन तब भी पुरातत्वकी कितनी ही महत्वपूर्ण चीजे प्राप्त हुईं। उरसुला नदीके किनारे शिवेमें भी दो शव मिले, जिनमें १४ घोड़े, ५०० भिन्न-भिन्न प्रकारके सोने और दूसरी तरहके आभूषण, घोड़ों और आदमियोंके ओढ़ने, पहननेकी कितनी ही चीजे मिली। अल्ताईका अर्थ ही है सुवर्णगिरि, जिस समयकी यह कब्र है, उस समयका सारा गमिया अल्ताईके सोनेसे सोनेवाला बनता था। पाजिरेक्सकी कब्र के बारे में हम लिख चुके हैं।

३. वू-सुनोके पड़ोसी

उत्तरापथमें वू-सुन् अल्ताईसे त्यान्शान और तलस-नदी तकके स्वामी थे, जिनके भीतर धीरे धीरे हूण प्रवेश करने लगे और ईसवी प्रथम सदीमें केवल त्यान्शान (इस्सीकुल) का पहाड़ी इलाका वू-सुनोका रह गया। इली और चूकी उपत्यकाये जब हूणोंकी चरभूमि हो गई, तब भी वहा कोई कोई शक-वशीय कबीला उनकी कृपा से रहने पाता था। ४३६ ई० में वू-सुन राजाने चीनको भेट भेजी थी, जिससे उस समय तक वू-सुन जातिके बने रहनेका पता लगता है। उत्तरके यह घुमन्तू हिम-कन्दुककी तरह दूसरे कबीलोंको अपनेमें हजम कर बढने जानेकी क्षमता रखते थे। हूणोंकी प्रभुताके दिनोमें हू-ह्वान्, तिङ-लिङ, तुङ-गुस् आदि कबीले उनमें हजम हो गये। यह सभी मंगोलायित जातिके थे, इसलिये चेहरेमोहरमें कोई अन्तर नहीं था, हा भाषा-भेदको वह भूलते गये। दक्षिणी हूण ओर्दू किस तरह अन्तमें चीनियोंमें हजम हुआ, इसे हम अभी कह चुके हैं। वू-सुन भाषा ही नहीं आकृतिमें भी दूसरी जातिके थे, उनके हजम होने में कुछ अधिक समय जरूर लगा, किंतु वह अन्तमें हजम होकर ही रहे। आज भी इस भूमिके निवासी कज्जाकोमें सरी-उइ-शुन् नामका एक वंश मिलता है, जो शायद वूसुन् वंशका परिचायक है।

वू-सुनोके पश्चिम उत्तरापथ (सिरदरिया और अराल समुद्रके उत्तर) में कग जाति रहती थी, जिसका नाम महाभारत और सस्कृतके और कितने ही ग्रंथोंमें मिलता है। इनको

पुराने शको का ही वंशज होना चाहिये, किंतु कितने ही ऐतिहासिक इनका सबध सोगदोसे बतलाते हैं। कगोको कङ्ग-ली (गाडीवाले) मगोलायित जातिसे मिला नहीं देना चाहिये। दोनों का एक समय पता लगता है और आगे चलकर कगोका स्थान कङ्गली और उनके दूसरे हूण-वंशज साथी कबीले लेते हैं, इसलिये इस तरहका भ्रम होना बहुत सम्भव है। कग दक्षिणापथके इतिहासमें काफी पीछे तक पाये जाते हैं और उनका विनाश ५वीं ६ठी सदीमें ही हो पाता है, अथवा यह कहिये, कि अन्तमें वह तुर्कों तथा सोगदियोमें विलीन हो जाते हैं।

कगोके पश्चिममें शकोकी सरमात् जाति दोनके तट तक फैली हुई थी, यह हम बतला चुके हैं। इन्हीके उत्तराधिकारी आगे आलानके नामसे प्रसिद्ध हुए। डाक्टर बेनादस्कीने अलानी और अन्तोको एक बतलाया है। उन्होने पुराने इतिहासकारों का मत देते हुए सिद्ध किया है, कि “स्क्लाव (शकलाव या शकराव) और अन्ती पहले एक ही नामधारी थे तथा यह दोनों बर्बर जातिया प्राचीनकालसे एक ही तरह की जीवन-चर्या और रीतिरवाज रखती थी। दोनों ही जातियोंकी एक ही भाषा थी, जो एक अत्यन्त बर्बर बोली थी। वह शकल-सूरतमें भी एक दूसरेसे भेद नहीं रखते हैं। बिना किसी अपवादके दोनों ही जातियोंके पुरुष दीर्घकाय और हट्टे-कट्टे होते। उनके शरीर और केश बहुत साफ या पाण्डु-रुवेत नहीं बल्कि वह कुछ कुछ मैले रंगके होते थे। उनका जीवन बड़ा कठोर था, मसागेतो (महाशको) की तरह वह भी शारीरिक आरामकी परवाह नहीं करते।”^१ वर्नादस्कीने अन्तोको सरमतियोंसे जोड़ते हुए कहा है, कि सरमात वर्तमान कजाकस्तानसे पश्चिमकी ओर चलकर दक्षिणी रूसमें ईसा-पूर्व दूसरी या प्रथम शताब्दीमें आये। उधरसे आनेवालोंमें यही आलान सरमाती कबीलोंमें अत्यन्त शक्तिशाली थे। इन्होंने ईसाकी प्रथम शताब्दीमें निम्न दोन-उपत्यका और उत्तरी काकेशसको अपना निवास-स्थान बनाया। अन्तके लिखनेमें चीनी लिपिमें जो संकेत हैं, उसका उच्चारण अन्-चै होता है। यह भी बतलाते हैं कि अन्तीसे ही अस् या असी शब्द निकला है। १२४६-४८ ई० में पोपके दूत प्लानो कार्पिनीने भी मगोलोंके द्वारा पराजितोंको “अलानी सिवै अस्सी” बतलाया है, और यह भी कि अलानी और आस् एक ही जाति थी। १२५३-५४ ई० में फ्रेच राजाने रूसको अपना दूत बनाकर मगोल खानके पास भेजा था। वह भी कार्पिनीके शब्दोंको दुहराता है। अन्तमें वर्नादस्की इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं, कि अन्त, अस् या यास् एक ही जाति है, जिसके वंशज काकेशसके आधुनिक ओस्-सेती हैं और पूर्वी स्लावों (आधुनिक रूसियों) के निर्माणमें इस अस् जातिका बहुत हाथ है। घुमन्तू होनेकी वजहसे यदि इनका पता अराल समुद्रसे निम्न दन्यूब (दुनाई) के पास तक मिले, तो कोई आश्चर्य नहीं। कालासागरके उत्तर-पूर्वमें अवस्थित अन्नोफ या असोफ सागरका नाम वस्तुतः इन्हीके नामसे पड़ा, जिसका अर्थ है अस-सागर। जान पड़ता है, पूरबसे हूणोंका जैसे-जैसे धक्का इनपर लगता गया, वैसे वैसे आगे बढ़ते हुए वह या तो काकेशस और रूसमें भगे अथवा उनका बहुत सा भाग हूणों में हजम हो गया।

^१ प्रोकोपियस

वूसुन्-राजा (सेन्-चू)

गुन्-मो	१०५ ई० पू०
ग्युन्-च्युइ-मी-के	
नीमी	
क्वान्-वान्	६० ई० पू०
चुइ-ली-मी	
इ-ची-मी	११ ई० पू०-८ ई०

चीनी अभिलेखोमे उपरोक्त वूसुन् राजाओका पता लगता है। उनके नामका उच्चारण समान चीनी शब्दोके उच्चारणमे लिखा गया है, इसलिये मूल उच्चारण क्या था, इसका समझना आसान नहीं है। सप्तनद उनकी मुख्य भूमि थी, यह उसी समयमे चीनी ग्रन्थोमे लिखा जाने लगा, जबकि ईसापूर्व २री शताब्दीके मध्यमे हूणोके विरुद्ध शकोको उभाड़नेके लिये चाङ्-क्यान् दूत बनाकर भेजा गया। हूणो द्वारा जो वूसुन् राजा मारा गया, उसके पुत्रको हूण राजा पकड़कर अपने साथ ले गया। पीछे उसे वूसुन् जनमे लाकर बापकी जगह पर बैठाया। अपनी मूल भूमिसे भागते हुए महायूची वूसुनोकी सप्तनद भूमिसे गुजरे थे, यह हम बतला आये हैं। हूणोके प्रहारसे त्यानशानमे अपनेको सिकोड लेनेसे पहले वूसुन् जन सप्तनदकी समतल सी भूमिम रहा करता था। ईसापूर्व २री शताब्दीमे वूसुन् जनमे १२००० परिवार या ६३०००० व्यक्ति थे। वह युद्धमे १८८८०० सैनिक जमा कर सकता था। इनकी राजधानी चि-गु इस्सीकुलके दक्षिण-पूर्वी तट पर थी, जो अक्सू (सिङ्ग क्याङ्ग)से ६१० ली उत्तर-पश्चिम, फर्गाना की राजधानी (खोजन्द) से २००० ली उत्तर-पूर्व और कग-भूमि की सीमासे ५००० ली पूर्व, कगोकी राजधानी फर्गाना (तावङ्ग) से २००० ली उत्तर-पश्चिम थी। रूसी इतिहासकार अरिस्तोफके अनुसार चि-गु इस्सीकुलके तट पर नहीं, बल्कि किजिल्-स् (लोहित नदी)के तट पर था। वूसुन राजाओके बारेमे निम्न बातोका पता लगा है —

गुन्-मो—(१०५ ई० पू०)—इसे ही वह चीनी राजकुमारी मिली थी, जिसके नीरस जीवन-नीतको हम पहले उद्धृत कर चुके हैं। फर्गानाके राजाके श्रेष्ठ घोड़ोकी बात सुनकर चीन-सम्राट् ने जब माँग की, तो राजाने देना नहीं चाहा, जिसका परिणाम हुआ १०२ ई० पू० म फर्गाना पर चीनकी चढाई। इस चढाईमे गुन्-मो ने २००० सैनिक सहायताके लिये दिये थे, लेकिन उन्होने युद्धमे भाग नहीं लिया।

ग्युन् च्युइ-मी—गुन्-मो का पोता था। इसके समय चीनी रानीके कारण चीनी अफसरोंका प्रभाव ज्यादा बढ़ा था।

उङ्ग-गुइ—पिछले सेन्-चू के बाद हूण राजकन्यासे उत्पन्न उसका एक छोटा पुत्र नी-मी बच रहा था, जो थोड़े समय तक ही गद्दी पर बैठ सका, और जल्दी ही उसे हटाकर सौतेले भाई उङ्ग-गुइ-मी ने राज्यको अपने हाथमे कर अपने पूर्वके राजाकी रानी (चीनी राजकुमारी) को व्याहा। पूर्व राजाकी पूर्वोक्त विधवा रानी पहले मर गई थी, और यह दूसरी चीन राजकुमारी थी, जिसे उङ्ग-गुइ-मीने अपनी रानी बनाया। उङ्ग-गुइ-मीकी मृत्यु ६० ई० पू० के आसपास हुई थी। वूसुनोका यह बड़ा शक्तिशाली और प्रतिभाशाली राजा था। देशके भीतर और बाहर सभी

जगह इसने अपने प्रतापका प्रदर्शन किया। ७१ ई० पू० में इसने चीनकी सहमतिसे हूणोके खिलाफ अभियान किया, और ४० हजार हूणो को मार कर ७० हजार पशुओको छीना। अपने पूर्वी और पूर्व-दक्षिणी पड़ोसी तरिम-उपत्यकाके लोगोके साथ भी इसने छेड़-छाड़ की और अपने द्वितीय पुत्रको यारकन्दका शासक नियुक्त किया। कूचा के राजा पर भी इसका प्रभाव था, जिससे इसने अपनी बड़ी लड़की व्याही थी। इसके मरने पर गद्दीसे उतारा भाई नीमी, क्वान्-वान् की उपाधिके साथ गद्दी पर बैठा।

क्वान्-वान् (६० ई० पू०)—अपनी रानी (चीनी राजकुमारी) और प्रजासे इसका विवाद खड़ा हो गया। इसने अपने भाईकी विधवा (चीन राजकुमारी) को अपनी रानी बनाया था। चीनी राजदूतने मारनेका षड्यन्त्र किया। राजा घायल होकर बच गया। इसके लिये जब शिकायत की गई, तो चीनने अपने दूतको बुलाकर उसे दण्ड दिया। अन्तमें हूणोने बू-सुनो पर आक्रमण किया, जिसमें क्वान्-वान् मारा गया और चीन उसकी कुछ मदद नहीं कर सका।

चुइ-ली-मी—उसकी जगह बू-च्यू-तूने कनिष्ठ गुन-मो की उपाधि धारण करके राज सम्हालना चाहा। उड्-गुइ-मीके पुत्र य्वान-गुइ-मी भी महागुन्-मो की उपाधिसे अलग राजा बना। ज्येष्ठ गुन्-मो के हाथमें ७०००० बू-सुन परिवार थे, जब कि कनिष्ठ गुन्-मोके पास ४०००० थे। कनिष्ठ गुन्-मो (ऊ-च्यू-तू) ने चीनकी सहायतासे हूणोके साथ लड़ाई की।

(ज्येष्ठ गुन-मो) य्वान-गुइ-मीका पोता था। इसका समय अपेक्षाकृत शांतिका था। पर यह स्वाभाविक मृत्युसे नहीं मरा।

इ-ची-मी—(११ ई० पू० और ८ ई०)—यह पिछले राजाका पोता तथा एक चीन राजकन्या का पुत्र था। ज्येष्ठ और कनिष्ठ गुन्-मो के सघर्षके समय चीनियोने ज्येष्ठ गुन्-मीका पक्ष लिया था। कनिष्ठ गुन्-मो अन्-लि-मी चीनकी शहसे गद्दीसे उतार दिया गया। हूणोने जब उसे मार डाला, तो उसकी जगह इ-ची-मी को चीनने राजा बनाया। ११ ई० पू० में इसका चचा बी-क्वान्-ची ८०००० आदिमियोके साथ उत्तरकी ओर चला गया और वहाँसे दोनो ही गुन्-मोके ऊपर आक्रमण करने लगा। १ ई० पू० में इसने चीनके साथ अच्छा सबंधस्थापित किया। इ-ची-मी चीन दरबारमें गया, राजधानीमें उसका अच्छा स्वागत हुआ। अन्तमें बी-क्वान्-ची चीनियो द्वारा मारा गया।

प्राय ८ ई० में तरिम-उपत्यका हूणोके हाथमें चली गई और चीनसे बू-सुनोका सबंध विच्छिन्न हो गया, जो ७३ ई० में ही पुन स्थापित किया जा सका। इस समय भारत और मध्य-एशियामें कुषाण राजा कनिष्क का शासन था। तरिम-उपत्यका भी कनिष्कके हाथमें थी, लेकिन उसने चीनको अपना अधिराज मान लिया था। ६७ ई० में पश्चिमी वणिक्पथको पूरी तौरसे अपने हाथमें करनेके लिये वाङ्काऊके नेतृत्वमें एक बड़ी सेना पश्चिमकी ओर चली, जो विजय करती कास्पियन समुद्र तक पहुँच गई। इस समय बू-सुन राजा, फर्गानाके राजा और कगोने भी चीनकी अधीनता स्वीकार की थी, यह स्पष्ट ही है। ईसाकी २री शताब्दीके चतुर्थ पादमें उत्तरी चीनमें स्यान्-पी वंशका दृढ शासन था। स्यान्-पी तुगुस् जातिके थे, यह कह आये है। १८१ ई० में स्यान्-पी राजा ता-शी-हईने पश्चिममें बू-सुन भूमि तक अपने राज्यका विस्तार किया। ४थी

शताब्दीके आरम्भमें एक दूसरे स्यान्-पी वंशने पुरानी वू-सुन भूमिके कुछ भागको अपने हाथमें किया। ४थी शताब्दीके अन्तमें से ६ठी शताब्दीके मध्य तक मध्य-एशिया पर तू-तान् वंशकी प्रभुता थी, जिन्हें भी तुगुस् जातिका बतलाया जाता है। इन्हींके आक्रमणके समय वू-सुनोका सप्तनदकी समतल भूमि परसे अधिकार उठ गया और वह त्यान्शान्के पहाड़ोंमें ही रह गये। ४२५ ई० में पश्चिमक बहुतसे शासकोंने अपने अपने दूत स्यान्-पी सम्राट्के दरबार (उत्तरी चीन) में भेजे थे, इस वक्त उत्तर चीनमें य्वान्-वेई और वेई-वेई (उत्तरी वेई और पश्चिमी वेई) दो राज्य थे। इन दूतोंमें एक वू-सुनो का भी था। ४३६ ई० में वू-सुनोके पास चीनका दूत आया। अबतक वू-सुन प्रतिवर्ष भेंट भेजते रहे। इसके बादसे वू-सुनोका नाम चीनी अभिलेखोंमें नहीं मिलता। आज केवल किरगिज-कजक महा-ओर्दूमें ही उइ-सुन् नामका एक कबीला मिलता है।

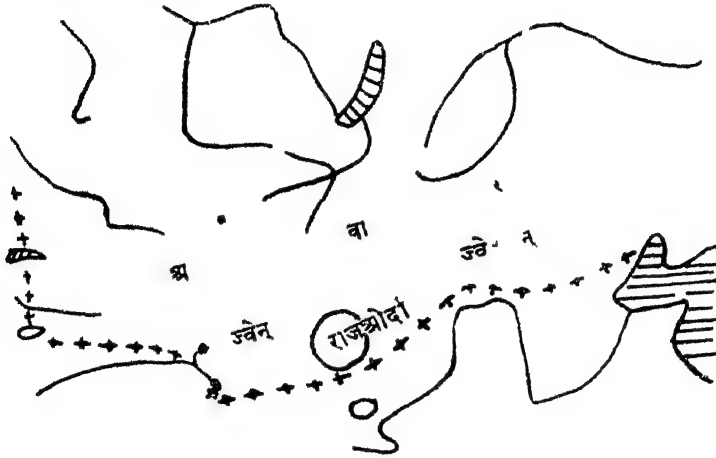
§ २. अवार (४००-५८२ ई०)

हूण फैलते फैलते एक युरेसियाई जाति के रूप में परिणत हो गये। इनके वंशधर हुगरीके मग्यार आज भी मौजूद हैं। प्रागैतिहासिक कालमें हिदी-युरोपीय जाति भी इसी तरहकी एक युरेसियाई जाति बनी थी। ऐतिहासिक कालमें हूणोंके बाद तुर्क युरेसियाई जातिके रूपमें परिणत होकर, एक समय मचुरियासे काकेशस और क्रिमिया तक फैले, बादमें यद्यपि उनके पूर्वी भूभागको दूसरी मगोलायित जातियोंने ले लिया, किंतु तब भी वह पूर्वी युरोप तक छाये रहे। आज भी पूर्वी मध्य-एशिया, पश्चिमी मध्य-एशिया, आजुबाईजान और तुर्कीमें किसी न किसी रूपमें तुर्की-भाषी जाति ही निवास करती है।

१. अवार (जू-जुन्, ज्वान-ज्वान)

तुर्कोंके इतिहासमें पदार्पण करनेसे पहिले अवार हूण देशके अधिकारी थे, जिनका ही स्थान तुर्कों ने लिया है। पहले हमने सकेत किया था, कि हूणोंके ध्वंसके बाद स्यान्-पी (तुङ्ग-हू कबीले) ने मचुरिया, मगोलिया और चीनके कुछ भागों पर अपना साम्राज्य स्थापित किया। इन्हींका एक प्रभुताशाली राजवंश तो-बा था, जिसका स्थापना ३१५ ई० के आसपास और समाप्ति ५वीं सदीमें हुई। इसी तोबा वंशसे अवारोका सबंध था, जिन्हें मुकुरु-तोबा भी कहते हैं। इस हूण-जनका निवासस्थान तिङ्ग-लिङ्ग (ककाली) के निवास बैकाल सरोवरके नजदीक तथा गोबीके रेगिस्तानसे उत्तर था। तातुङ्गके तोबा राजकुमार इलू को एक बच्चा दास मिला, जो अपना नाम भूल गया था और उसके स्वामीने उसे मुकुरु नाम दे दिया। युद्धमें बहादुरीका काम करनेके लिये मुकुरु को दासता से मुक्त हो स्वतंत्र सैनिकका अधिकार प्राप्त हुआ। पर, किसी सैनिक सेवाके समय उपस्थित न हो सकने के कारण उसे मृत्यु-दण्ड मिलनेवाला था, इसलिये वह गोबी के उत्तरकी ओर भाग गया। वहाँ धीरे धीरे लोगोंको जमा करके वह लुट्टेरोका सरदार बन गया। इसके पुत्र शरकने अपने पिताकी जमातको और बढ़ाकर एक छोटा-मोटा ओर्दू कायम कर लिया, जिसका नाम अवार पड़ा। पहले चीनीमें अवार कबीलेका नाम जू-जुन् था, जिसे तोबा सम्राट् ताई-हू-त्सी (४२४-४५२ ई०) ने ४५१ ई० में बदल कर ज्वान-ज्वान कर दिया। मुकुरुकी ७वीं पीढ़ीमें शक्तिशाली नेता शे-लून् हुआ। इसने काउ-शे (ककाली) कबीलेको जीता और अपनी सैनिक शक्तको मजबूत और सुसंगठित करके कगान (खान) की उपाधि धारण की।

कोरियासे अल्ताई तक फैले इसके राज्य में कुछ चीनका भाग भी था। शे लून् मध्य-एशियाके वणिक्पथके कुछ भागका भी स्वामी था। जहाँ तक चीन-साम्राज्यका सबध था, अवारोने अब अपने पूर्वज हूणोका स्थान लिया था। उन्हीकी तरह यह भी कभी चीनको लूटते और कभी अवश्यकता पडने पर उसे सैनिक सहायता देते थे। अवारोकी शक्तिकी समाप्ति ५४६ ई० के आसपास तुर्कोंने की। इनके एक राजाका नाम ब्रामन भी था।



१५ अवार साम्राज्य (४२० ई०)

अवारो पर चीनी सस्कृतिका प्रभाव पडा था, साथ ही बौद्ध धर्म भी उनमे बहुत फैला था। तोबा भी बौद्ध सम्राट् थे। अन्तमे अवारोमें आपसी फूटने भयकर रूप धारण किया, जिसका लाभ उनके अधीनस्थ तुर्क लोहकारोने उठाया। अल्ताईके दक्षिणी सानू पर तुर्क अपनी खुशीसे लोहेका काम नहीं कर रहे थे। वह इस गुलामीमे निकलना चाहते थे और इस वक्त उन्हे ऐसा मौका मिल गया।

स्रोत-ग्रन्थ

- १ क्लि० सोओब० XIIIpp ११२ (वेर्नस्ताम् का लेख)
- २ आर्खेआलोगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेनोई किर्गिजिया (वेर्नस्ताम्, फ्रुन्जे १९४१)
- ३ वोस्तोको वेदेनिये II (१९४१) p 2।

अध्याय ४

तुर्क (५४६-७०४ ई०)

हूण कालमें काउ-शे (ककाली, तिङ्ग-लिङ्ग, तिकालिक) नामकी एक जाति रहती थी। काउ-शे का अर्थ है बड़ी गाड़ी। बहुत बड़ी पहियोवाली गाड़ियोमें अपना सामान लादे यह एक जगहसे दूसरी जगह घूमा करते थे, जिसके कारण उनका यह नाम पड़ा। ऐसी गाड़ियोका रवाज तुर्कों और मंगोलोंके काल तक पाया जाता है। काउ-शे का पता पहले पहल ईसाकी ५वीं सदीमें मिलता है। इनका ज्वान-ज्वानसे बराबर सघर्ष होता रहा। अवार (ज्वान-ज्वान) को पराजित करते समय एक बार तोबा सम्राट् ताइ-वू-ती (४२४-५२ ई०) ने इनके ऊपर भी आक्रमण किया और ५० हजार नरनारियोको बंदी बनाया। लूटके मालमें कई हजार बड़ी गाड़ियाँ तथा १० लाखसे ऊपर पशु उसके हाथ आये। अवारो (ज्वान-ज्वान) की तरह काउ-शे भी चीनको हैरान करते थे। जब सीधे चीन पर आक्रमण नहीं कर पाते, तो उसके अत्यन्त मूल्यवान वणिक्पथको अपना शिकार बनाते। एक समय तोबा सम्राट् ने इन्हें गोबी रेगिस्तानके दक्षिणमें लाकर बसा दिया। वह समझता था, इस प्रकार हम उन पर काबू रख सकेंगे। लेकिन जल्दी ही वह फिर विद्रोह करके उत्तरकी ओर चले गये। तोबा वश घुमन्तूओंके दबानेमें अधिक सफल हुआ था। उसकी कोशिश यही थी, कि ज्वान-ज्वानको दूसरे घुमन्तूओंके साथ सबध जोड़नेका मौका न मिले। तिङ्ग लिङ्ग सरदार पीछे ऊरुमूचीके पास छोटे छोटे राजा या सरदार बनकर रहने लगे। तिङ्ग-लिङ्ग भी अपना बड़ा राज्य कायम करनेमें सफल होते, लेकिन उनमें कभी इस तरहका सगठन नहीं हो पाया। हाँ, खतरेके समय सब एक हो जाते थे। युद्ध करनेकी कोई सुसगठित व्यवस्था नहीं थी, हर एक व्यक्ति अपना हथियार ले जहाँ चाहता, वहाँ आक्रमण कर देता। अपना पल्ला भारी रहने पर तो कोई हरज नहीं था, किंतु इस व्यवस्थाके कारण न वह डट कर लड़ सकते थे, और न पराजयके समय अपनेको अच्छी तरह सम्हाल सकते थे। व्याहमें इनके यहाँ ढोरो और घोडोंका दहेज दिया जाता, अनाजका कोई उपयोग नहीं था और न किसी तरहका नशेवाला पेय ही इस्तेमाल होता था। चमड़ा पहनना, मांस खाना तथा अत्यन्त ठण्डी जगहमें रहना उन्हें और भी गंदा बनाये हुए था। घोडो और ढोरोका पालना यही उनकी जीविका थी। आगे चलकर तिङ्ग-ली तुर्कोंमें हजम हो गये।

१. तुर्क साम्राज्यकी स्थापना

चीनी स्रोतसे^१ पता लगता है, कि तुर्क हूणोंका ही एक कबीला था, जिसका पुराना नाम अस्सेना था। ४३३ ई० में तोबा-सम्राट् ने इनके स्थानको छीनकर इन्हें अपने भीतर हजम

^१A Thousand years of Tatars, pp. 363,

कर लेना चाहा। इसी समय ५०० असेना परिवार भागकर ज्वान-ज्वानके राज्यमें चले गये, जहाँ उन्हें अल्ताई (अल्तुनइश) के दक्षिणी सानू पर लोहा बनानेका काम मिला,^१ इसे हम कह चुके हैं। ये लोग शिरत्राण जैसी नेकीली टोपी पहना करते थे, जिसके कारण इनका नाम दुर्-पो (तू-पू, टोपी) पडा, जिसका ही अपभ्रंश निकू (तुर्कू, तुर्क, त्युरेक या तुर्क) है।^२ इससे पहले तुर्क ल्याङ्ग जैसे चीनके अत्यन्त सुसंस्कृत क्षेत्रमें काफी समय तक रह चुके थे, किंतु जान पड़ता है, उससे इनको बहुत लाभ नहीं हुआ। ज्वान-ज्वानकी शक्तिके निर्बल होते ही अपनी दासताका अन्त कर जल्दी ही इनके मरदार तुमिनने अपनेको स्वतंत्र घोषित किया। ५४६ई० के आसपास तू-मिनने अपनेको इल्-खानान घोषित किया। ज्वा-ज्वानके राजा अनाक्वेने व्याहके लिये कन्या देनेमें इन्कार करने पर इनके हाथी प्राणोंमें हाथ धोया। इल्-खान, एल-खान या एल-खाकानसे बना है। खाकान, खगान, खान, खान वस्तुतः शान्-यूका ही पर्याय है। पहले हम लिख चुके हैं, कि 'शान्-यू' चीनी शब्दानुकरण है। मूल हूण शब्द शायद चिङ्-गिस् या जिङ्-गिस् रहा हो, जिसे किसी किसी ने जगी बना देनेकी भी कोशिश की है। पहले ज्वान-ज्वानने खान या खानकी उपाधि धारण की थी, पीछे तो राजाके लिये तुर्कोंमें यही शब्द बहु प्रचलित हो गया। मंगोल-वशने भी इसी उपाधिको अपनाया और उन्हीका अनुसरण करते मध्य-एशियामें १६१७ ई० तक खानकी उपाधि केवल राजाके लिये ही सुरक्षित थी और माधारण कुलीन परिवारका मुखिया भी अपने नामके साथ खान नहीं लगा सकता था। लेकिन, मुगलोकें समयसे हिन्दुस्तानमें यह पदवी टके सेर हो गई। यद्यपि आरम्भमें इसका मोल इतना नीचे नहीं गिराया गया था, बल्कि खान-खाना (खानोका खान) तो मुगल दरबारकी एक बड़ी उपाधि थी। अकबरका मरक्षक और प्रधान-मंत्री बैरम खा खाने-खाना कहा जाता था। मुगलोंने जब राजाके लिये शाह, शाहशाह या पादशाह की उपाधि स्वीकार कर ली, तो उन्हे खानकी क्या परवाह हो सकती थी? बाबरके पूर्वज तैमूरने इस पदवीको इतना उच्च समझा, कि उसे चगेज-वशज अपने गुडिया राजाके लिये ही सुरक्षित रहने दिया, और अपने लिये 'अमीर' (सामन्त) की उपाधिको पर्याप्त समझा।^३

तू-मुन्को इलि-खान तू-मिन कहा जाता है। इलि या एल जनका परियाय है; इल्-खान, (एल-खान) का अर्थ है, जनोका राजा। पहले पहल इसका ओर्दू हाइ-ह्वाङ्गके उत्तरमें था। अपने को एल्-खान घोषित करनेके साथ इसने और भी कई उपाधिया प्रारम्भ की। हूणोंके समय रानीको येङ्ग-ची कहा जाता था, अब उसे उसने खो-हो-तुन् की उपाधि प्रदानकी, जो पीछे खो-तुन या खा-तुन बन गया। आज भारत और बाहरके मुसलमानोंमें कुलीन महिलाओंके साथ खातूनकी उपाधि आम तौरमें लगायी जाती है। तू-मिनने अपने जीवनमें ही तुर्क-शक्तिको बहुत बढ़ा दिया था। जब मार्च ५५३ ई० में वह मरा, तो उसका शक्तिशाली वंश और कबीला, जिसे चीनी पुस्तकोंमें तू-क्यु या तुइकू कहा जाता है, बहुत प्रसिद्ध हो चुका था। तुर्कोंमें प्रचलित कुछ पद थे—

^१ त्युरोक पृष्ठ ६

^२ वही पृ० ३६५

^३ त्युरोक (वेर्न्सताम) पृ० ८२-८३

दे-ले (ते-ले)-मगोल देरे,	राजकुमार
कुइ-लुइ-चुइ (किलिच या खिलिज)	एक उच्च-पदाधिकारी
अ-पो (अ-पा)	" " "
घे-रे-फा (व्या-लि-फा)	"
तू-तुन्	" " "
जि-गिन् (सू-चिन्)	" " "

नाम रखनेमें तुर्कोंमें वैयक्तिक गुणका ध्यान रक्खा जाता था। जैसे शा-बौ-लि-यो (घा-पो-रो) का अर्थ है विक्रम या पराक्रमी, सन्-द-लो का अर्थ है मोटा, द-लो-बियान = बहुत पीनेवाला। कुछ पुराने तुर्की शब्द हैं—

को-ली (कारी)—वृद्ध
घो-रन्—घोडा (यह भारतमें बहु प्रचलित शब्द तुर्की है)
घो-रन्-सुनी—सैनिक अफसर
करा—काला (कृष्ण) इसे काल या (मृत्यु)से मिलाकर भारतीय बना दिया गया।
करा-शू—अति उच्च अधिकारी
सो-को—केश
तू-दुन्—उच्च अधिकारी, राज्यपाल
सो-को तू-दुन—प्रदेशिक राज्यपाल
जे-खान्—एक उच्च अधिकारी
अन्-जन्—मास
अन्-जन्-कुनी—राज्य-प्रतिहार
लिन्—भेडिया
लिन्-खाकान—उपराज
यब-गू (जे-गू)—राजकुमार
ई-खकान—गृह-राजा (ई = घर)

२ शव-क्रिया^१

बहुत जल्दी ही तुर्क घुमन्तू बौद्ध धर्ममें दीक्षित हो गये, जिसका उनके जीवन पर बहुत प्रभाव पड़ा और मुसलमान होनेसे पहले तक बौद्ध धर्म आजके मंगोलोकी तरह तुर्कोंका भी जातीय धर्म रहा। उनके कितने ही जातीय रीति-रिवाज थे, जिनमें अपनी साधारण नीतिके अनुसार बौद्ध धर्मने हस्तक्षेप करना पसंद नहीं किया। मरनेके बाद आदमीकी लाश उसके तम्बूके सामने रक्खी जाती थी। मृत सरदारके बेटे-पोते तथा उसके दूसरे सबधी एक एक घोडा या भेड़ तम्बूके सामने खड़ा करते थे। परिवारके लोग शोक प्रकट करनेके लिये छुरीसे अपने चेहरेको घायल करते, जिसमें रोते समय आसुओंके साथ रुधिर भी मिश्रित हो जाये। वसत और पतझड़के समय

^१ A Thousand years of Tatars

कब्रमें मुर्दे दफनाये जाते। कब्रके ऊपर पत्थरोंको खड़ाकर उनपर शोक-प्रकाशक चिह्न लगा दिये जाते। मृत योद्धा ने अपने जीवनमें जितने शत्रुओंको मारा, उतने ही पत्थर गिनकर कब्रके ऊपर खड़े किये जाते। उस दिन कुटुम्बके सारे स्त्री-पुरुष सुन्दर-सुन्दर वस्त्राभूषणसे सज्जित हो, उसी तरह कब्रपर एकत्रित होने, जैसे तिङ्ग-लिङ्ग लोगोमें। जमा हुआमे यदि कोई पुरुष वहाँ उपस्थित किसी लड़कीको पसन्द करता, तो घर लौटने पर मागनेके लिये सदेश भेजता, और आमतौरमें लड़कीके माता-पिता उसे स्वीकार करते। यह रवाज स्यान्-पी लोगोमें भी था।

तुर्क घुमन्तू पशुपान थे। हणों की तरह इनकी भी अपनी चरभूमि होती थी। खाकान की चरभूमि तू-चिन पर्वत था। हणों ही की तरह प्रतिवर्ष वहाँ वह अवश्य जाता और देव-पितर के लिये बलि और श्राद्ध करना। चान्द्र पचमी (शुक्ल पक्ष) को देव और प्रेतात्माओं के लिये बलि देने के समय ओर्दू के दूसरे लोगो को भी वहाँ जमा होना पड़ता। तू-चिन् से १५० मील पश्चिम पू-तेडर्को (पृथिवी-आत्मा) नामक वृक्ष-वनस्पतिहीन पहाड़ था। चीनी लेखको के अनुसार तुर्कों की लिपि ह (सुरियानी) थी। उनका अपना कोई पचाग नहीं था। तुर्क पुरुष पाशा खेलने के बड़े प्रेमी थे और म्त्रियाँ पादकदुक (फुटबाल) खेलने की। वह कूम्बिश (घोड़ी के दूध में बनी शराब) पीते और पीने-पीते मस्त होकर गीत गाते।

३ तुर्क-राजावलि—

१. तू-मिन इलिखान	म्. मार्च ५५३ ई०
२ इस्ति-गी, तत्पुत्र	५५३
३ यू-यू	५५३-६४ "
४ तोबा, तत्पुत्र	५६६-८० "
५ शोतू शबोलियो, तत्पुत्र	५८२-८७ "
६ दूलन, तत्पुत्र	५८८-६०० "
७ दातू बुगा	६००- "
८ खेली	
९ तुली, तद्भ्रातृव्य	६२८-३१ "
१०. सिबिली तत्पुत्र	६३१-४७ "
११ चेबी	६४७-८२ "
(१) गुडुलू	६८२-६३ "
(२) मोचो	६९३-७१६ "
(३) मोगिल्यान	७१६-३५ "
(४) ईजान्या	७३५-३६ "
(५) बिग्या गुडुलू	७३६-४२ "
(६) ओज़मिशि	७४२-४४ "
(७) बाइमेइ	७४४-४७ "

(१) इल-खान तू-मिन' (मार्च ५५३ ई०)

(मृ-मार्च ५५३ ई०) — ६ठी शताब्दी में घुमन्तू तुर्कों का नया साम्राज्य अल्ताई से आरंभ होकर थोड़े ही समयमें प्रशान्त महासागर से काला सागर तक पहुँच गया। पश्चिमी तुर्क साम्राज्य का केन्द्र वू-सुनो की पुरानी भूमि सप्तनद थी। उसमें मध्य-एशिया भी शामिल था। चीन से पश्चिमी एशिया और यूरोप की ओर जानेवाला वणिक्पथ इनके राज्य से होकर जाता था। यह वणिक्पथ त.श.कन्द, औलिया-अता होते सप्तनद में चू-नदी के तट पर पहुँच, वहाँ से इस्मिकुल के दक्षिणी तट से होते वेदेल डाँडे को पारकर अकसू (तरिम-उपत्यका) में पहुँचता था। स्वेन्-चाङ्ग अकसू से इसी रास्ते पश्चिमी मध्य-एशिया में पहुँचा। चू-उपत्यका उस समय कृषि-प्रधान थी, जिसके अग्रदूत खोजन्द (फर्गाना राज्य) से आये सोगदी थे। स्वेन्-चाङ्ग के पहले वक्षु से चू-नदी तक की सारी भूमि सस्कृति, वस्त्राभूषण, निवास, लिपि और भाषा में एक थी। इनकी लिपि सुरियानी से निकली हुई ३२ अक्षरों की थी। यह मंगोली की तरह ऊपर से नीचे की ओर लिखी जाती थी। सोगदियों में मानी के धर्म के मानने वाले बहुत थे। निवासियों में आधे कृषक और आधे व्यापारी थे। सुई नदी के तट पर अवस्थित कास्तेक डाँडे से दक्षिण में अवस्थित सुयाब नगर उनका बड़ा वाणिज्य-केन्द्र था। ७ वीं शताब्दी में भी इस नगर में बहुत से विदेशी व्यापारी रहते थे। सुयाब के दक्षिण बहुत से नगर थे, जिनके अपने अपने शासक थे, किंतु सभी तुर्क-कगान को अपना अधिपति मानते थे।

पीछे पश्चिमी कगान का ओर्दू सुयाब के पास ही रहता था।

(२) इसि-गी या इस-ते

वश-स्थापनक तू-मिनका पुत्र था, किंतु तुर्क घुमन्तू जन अपने पूर्वज हूणों और दूसरे घुमन्तूओं की तरह उत्तराधिकारी चुनने में जनतन्त्रता का अधिक ख्याल करता था। इसीलिये इसिगी ज्यादा दिनों तक नहीं रह सका और तू-मिनका छोटा भाई कि-गिन मू-यू-खानके नाम से तुर्कों का खाकान बना। इसि-गी की सत्तान ने आगे चलकर पश्चिमी तुर्क राजवंश को स्थापित करने में सफलता पाई, इसलिये इसिगी खान को तुर्क-इतिहास में भुलाया नहीं जा सकता।

(३) मू-यू-खान (५५३-६४ ई०) —

इसने तुर्क साम्राज्य को काफी मजबूत किया। विशाल राज्य की समृद्धि से लाभ उठानेवाले तुर्क-सामन्तों में अन्न नागरिक विलासिता जड़ पकड़ने लगी। महान् वणिक्पथ इनके राज्य के भीतर से जाता था, और अपने हूण पूर्वजों की तरह यह हरदम चीन के भीतर घुसकर लूटपाट करने के लिये तैयार थे। अपनी पुरानी नीति के अनुसार चीन बराबर भेंट और राजकन्या देकर इन्हें शांत रखना चाहता था।^१

(४) तोबा खान (५६९-८० ई०) —

मू-यु-खान के मरने के बाद इसका पुत्र दालो-व्यान नहीं बल्कि भाई तोबा तुर्कों का खाकान बना। दालोव्यान ने चचा के राज करते समय छेड़छाड़ नहीं की। तोबा के मरने के बाद ५८० ई० में उत्तराधिकार को लेकर जो झगडा हुआ, उसमें तुर्क साम्राज्य पूर्वी और पश्चिमी दो भागों में विभक्त हो गया। पश्चिमी तुर्क-साम्राज्य का संस्थापक दालोव्यान था। हमारे विषय से यद्यपि दालोव्यान और उसके उत्तराधिकारियों का ही विशेष संबंध है, लेकिन हम पूर्वी तुर्कों को छोड़ नहीं सकते, क्योंकि वह भी अप्रत्यक्ष रूप से पश्चिमी मध्य-एशिया की संस्कृति और इतिहास को प्रभावित करते थे।

तोबा पहले साम्राज्य के पूर्वी भाग का लघु-खाकान तथा लाखों सेनाओं का नायक था। वह स्यान्-पी सम्राट की नाक में दम किये रहता था, जो भय के मारे प्रतिवर्ष एक लाख रेशमी थान और दूसरी भेटी भेजता था। चीन की पश्चिमी राजधानी में तुर्कों की बड़ी आवभगत होती थी। कभी कभी तीन-तीन हजार तुर्क रेशम पहने मास की दावत उड़ाते वहाँ डटे रहते थे। लेकिन तोबा इसके लिये चीन का कृतज्ञ न होकर कहता था—“जब तक मेरे दो पुत्र (चीन के राजा) अपने कर्तव्य का पालन करते रहेंगे, तब तक मुझे किसी चीज की कमी नहीं रहेगी।”

(बौद्ध धर्म का प्रवेश) —

चाङ्-यान् की यात्रा के समय (१३८-१२६ ई० पू०) तरिम-उपत्यका में बौद्ध धर्म पहुँच चुका था। उसके बाद उत्तर के घुमन्तू यद्यपि इस भूमि पर विजयी होते रहे, किंतु बौद्ध धर्म उनके ऊपर धर्म-विजयी होता रहता था। कहा जाता है, बौद्ध धर्म पहले ईसापूर्व २ वीं ही शताब्दी में चीन पहुँच चुका था, किंतु इस का ठीक प्रमाण पूर्वी हान वंश के सम्राट मिङ्ग (५८-७५ ई०) के समय में मिलता है। इस सम्राट ने बौद्ध पुस्तकों और बौद्ध भिक्षुओं को लाने के लिये अपने दूत भारत भेजे, जिसके साथ काश्यप मातङ्ग और धर्मरत्न दो भिक्षु बहुत सी धर्म-पुस्तकों और मूर्तियों के साथ चीन-राजधानी लोयाङ पहुँचे। काश्यप मातङ्ग द्वारा अनुवादित “द्वाचत्वारिंशत्-सूत्र” चीनी भाषा में अब भी मौजूद है। हान्-वंश के बाद चीनी राजवंशों तथा उनके पड़ोसी घुमन्तूओं पर बौद्ध धर्म बराबर प्रभाव डालता रहा। जहाँ चीन अपने रेशम और विलास सामग्रियों को देकर घुमन्तू सामन्तों को चाल-व्यवहार में सम्यक् बनाता, वहाँ उनकी अध्यात्मिक भूख को तृप्त करने के लिये बौद्ध धर्म आगे बढ़ता। ५७० ई० में तोबा खाकान ने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। उसके बाद क्रूर घुमन्तूओं को बौद्ध धर्म ने कोमल बनाना शुरू किया। कहते हैं युद्ध-बदियों में एक बौद्ध भिक्षु था, जिसने खाकान को उपदेश करते हुये बतलाया, कि स्यान्-पी राजवंश की समृद्धि का कारण धर्म है। तोबा को बौद्ध धर्म बहुत अच्छा लगा। उसने एक विहार बनवाया। यह स्पष्ट है ही, कि विहार घुमन्तू शिविर नहीं हो सकता था। यह भी याद रखने की बात है, कि इसी समय से कुछ पहले कोरिया के रास्ते बौद्ध धर्म जापान में पहुँचकर फैलने लगा। तोबा ने बौद्ध ग्रंथों को लाने के लिये ची-वंश की राजधानी (वर्तमान होनान्) में

हूत भेजा। तोबा ने अपने को बहुत शीलवान् बौद्ध उपासक बनाने की कोशिश की। उसने कितने ही स्तूप बनवाये, बहुत से धार्मिक अनुष्ठान कराये। उसको इस बात का बहुत अफसोस था, कि मैं चीन जैसे बौद्ध देश में नहीं पैदा हुआ। चि-वश का नाश होने लगा, तो वहाँ का राजा तोबा की शरण में आया। उसकी ओर से तोबा आधुनिक पेकिङ पर आक्रमण करना चाहता था, किंतु चीके प्रतिद्वन्दी चाउ-वश ने जब अपनी कन्या प्रदान की, तोबा ने उसे उसके शत्रु के हाथ में दे देने में भी आनाकानी नहीं की।

तोबा के मरने पर मू-यू खान का पुत्र दालोब्यान अपने को उत्तराधिकारी समझता था, लेकिन पलड़ा तोबा के पुत्र ने-तू (शे-तू) का भारी हुआ, जो शाबो-लियों की उपाधि के साथ तुर्कों का खाकान बना। अबसे संयुक्त तुर्क साम्राज्य नष्ट हो गया और तोबा की सतान ने पूर्वी साम्राज्य को अपने हाथ में ले लिया। तोबा के दूसरे भाइयों तू-मिन और मू-यू खान की सतानों ने दालोब्यान के नेतृत्व में पश्चिमी तुर्क-साम्राज्य स्थापित किया।

तू-मिन् राजा का पुत्र नहीं था। उसने अपने तुर्क ओर्दू और भाइयों की मदद में राज्य कायम किया था। तुर्क ओर्दू अभी जन-जातीय अवस्था में था, इसलिये एकतन्त्रता को पसन्द नहीं कर सकता था। सभी घुमन्तूओं की तरह तुर्क भी नेता या खाकान को चुनने का अधिकार रखते थे। इसीलिये तुर्कों में पहले कितने ही समय तक उत्तराधिकारी पुत्र नहीं बल्कि वह व्यक्ति होता था, जिसे ओर्दू निर्वाचित करता था। यद्यपि इसका यह अर्थ नहीं, कि खाकान की इच्छा का कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। इतनी जनतात्रिकता रखते हुये भी उत्तर के यह घुमन्तू यह मानने के लिये तैयार थे, कि जिस परिवार में उनके खाकान पैदा होते आये हैं, वह कुलीन है। तू-मिन् के कार्य में उसके भाइयों ने सहायता की थी, इसलिये नेपाल के राणा जगबहादुर की तरह एक के बाद एक उसके भाइयों को उत्तराधिकारी माना गया। तू-मिन् का पुत्र इसीगो कुछ महीनों ही के लिये खाकान रहा और अन्त में जन (ओर्दू) की राय सर्व-मान्य हुई और भाई मू-यू को खाकान बनाया गया। उसके बाद भी उसका भाई तोबा उत्तराधिकारी चुना गया। तोबा ने अपने मरने के समय (५८० ई०) से पहले अपने पुत्र यन्-लो को कहा था—“वस्तुतः सबसे नजदीक का संबंध पिता-पुत्र का होता है, किंतु मेरे बड़े भाई ने अपनी सतान को गद्दी नहीं देना चाहा और गद्दी मुझे मिली। मेरे मरने पर तू दालोब्यान की अधीनता स्वीकार करना।” लेकिन तोबा के पुत्र इसे क्यों मानने लगे ?

(५) शेतू शबोलियों' (५८२-८७ ई०)—

अपने मृत खाकान की इच्छा के अनुसार जन (ओर्दू) ने दालोब्यान को खाकान बनाना चाहा, लेकिन आपत्ति उठाई गई, कि उसकी मा उच्च-वश की नहीं है। तो भी तोबा का पुत्र यन्-लो उत्तराधिकारी नहीं माना गया और तोबा का दूसरा पुत्र इलि-गुई-लू से-मोखे शबोलियों के नाम से खाकान हुआ, इसे ही ने-तू या शे-तू शबोलियों भी कहते हैं। इसका शिविर तूकिन् पर्वत के पास रहा करता था। हूणों की तरह तुर्कों में भी राजवंशिक उप-खाकान हुआ करते थे। वह अपने प्रदेश के प्रधान सेनापति और प्रधान शासक माने जाते थे। तोबा का दूसरा

पुत्र अमरो तुला-उपत्यका (मंगोलिया) में द्वितीय खाकान था। दलोबियान यद्यपि खाकान पद से वचित कर दिया गया था, और उसे अ-पो-खाकान बनाके शात रखने की कोशिश की गई, लेकिन इसमें सफलता नहीं हुई। शबोलियो के शासन के आरम्भ के साथ-साथ तुर्क साम्राज्य दो भागों में बँट गया, और शबोलियो पूर्वी तुर्क साम्राज्य का खाकान रह गया। शबोलियो वीर और अपने ओर्दू का बहुत प्रिय नेता था। सुदूर उत्तर के सभी कबीले उसको मानते थे। शबोलियो का अपने सौतेले चचा दातूसे झगडा हो गया। उसे मारकर दातू ने बूगा-खा के नाम से अपने को स्वतंत्र खाकान घोषित किया।

शबोलियो के खून में भी अपने पूर्वजों की स्वातन्त्र्य-प्रियता भरी हुई थी, लेकिन वह मानता था, कि जिस तरह आकाश में दो सूर्य नहीं हो सकते, उसी तरह दुनिया में दो सम्राट् (चक्रवर्ती) नहीं हो सकते। इसीलिये शिष्टाचार के नाते वह चीन के देवपुत्र को अपना सम्राट् मानने के लिये तैयार था। चीन सम्राट् विन्-ती (५८१-६०५ ई०) ने गलती की। उसने यूइ-किङ-जे को अपना दूत बनाकर भेजा, कि खाकान को अधीनता स्वीकार करने के लिये कहे। शबोलियो ने पूछा, अधीन किसे कहते हैं? किसी सरदार ने कह दिया—“जिसे हमारे यहाँ दास कहते हैं।” तुर्क खाकान का खून गरम हो गया। उसने कहा—“क्या जैसा हम अपने दास के साथ करते हैं, वैसा ही सुइ-कुल के देवपुत्र भी मेरे साथ करेंगे?” उसने अधीनता स्वीकार करने में इनकार कर दिया। सुइ-वश ने कुल ३७ वर्ष राज्य किया, किन्तु चीन की शक्ति और समृद्धि बढ़ाने में जितना काम इस वश के पिता-पुत्र दो सम्राटों विन्-ती और याङ्-ती ने किया, वैसा किसी एक वश ने नहीं कर पाया। इसकी बनवाई विशाल नहरों और मार्गों द्वारा देश कृषि और व्यापार में मालामाल होने लगा, जिसका कि पूरा फायदा सुइ के उत्तराधिकारी थाङ्-वश (६१८-६६० ई०) ने उठाया। सुइ जैसे शक्तिशाली राजवश को नाराज करके शबोलियो कैसे सुखसे रह सकता था? उसके विरुद्ध चीनी सेना (६८० ई०) भेजी गई। तुर्क-खाकान को अपनी समृद्ध चर-भूमि को छोड़ कर उत्तर की ओर भागना पडा। इसी वक्त तुर्कों में अकाल पडा। लोग खाकर फेंकी पशुओं की हड्डियों को पीस पीसकर खाने लगे। चीन दलोबियान की सरकशी को सहन नहीं कर सकता था। उसे चढा आते देख दलोबियान भागकर पश्चिमी तुर्कों के स्वनिर्वाचित खाकान दातू-बूगा-खान के पास चला गया। बूगा खान के पक्ष में तुर्कों के अतिरिक्त कितने ही दूसरे घुमन्तू कबीले थे, जिनमें से तिङ्-लिङ् एक था। तिङ्-लिङ् ने शबोलियो के परिवार को पकड कर चीन-सम्राट् के पास भेज दिया था, लेकिन विन्-ती क्षुद्र हृदय नहीं था। वह स्वयं अपनी वीरता से एक राजवश का संस्थापक बना था, और वीरों की कदर करना जानता था। उसने परिवार को सम्मान-सहित शबोलियो के पास भेज दिया। शबोलिया उसके लिये बहुत कृतज्ञ हुआ और उसने मरुभूमि को चीन और तुर्क साम्राज्य की सीमा मान लिया। शबोलियो की पूरी उपाधि थी “महातुर्क के डलिकु-इ-लू ओर्दू के मो-गो खाकान शे-तू शबोलियो।”

मू-यू खान से रोमन-सम्राट् का दूत ५६८ ई० में मिला था। उस समय खाकान का शिविर अल्ताई पहाड में था। यह दलोबियान की फूट से १२ वर्ष पहले की बात है। रोमन इतिहासकार उस समय के तुर्क-साम्राज्य के बारे में लिखते हैं, “अपने शस्त्र-बल तथा हेपताल सरदार कतुल-फुस के विरुद्धासघात के कारण हेपताली महाराज्य को लेते तुर्क नये (सासानी) साम्राज्य की

सीमा की ओर बढ़ रहे हैं। पहले के हेफ्तालो (श्वेत हूणो) के अधीन वक्षु अन्तर्वेद के कबीलो ने तुकों की अधीनता स्वीकार कर ली है।^१

शबोलियो को चीन-सम्राट् विन्-ती कितनी आदर की दृष्टि से देखता था, इसका पता इसीसे मिलेगा, कि उसकी मृत्यु पर सम्राट् ने तीन दिन दरबार बन्द करके मातम मनाया।

६. दूलन खान^१ (५८८-६०० ई०)

शबोलियो के बाद उसका पुत्र दूलन खानके नाम से गद्दी पर बैठा। उसने ५८८ ई० में १० हजार घोड़े, २० हजार भेड़ें, ५०० ऊँट सम्राट् के पास भेंट के रूप में भेजे। घुमन्तू तुकों की पशु ही सम्पत्ति थे। भेंट के बदले चीन-सम्राट् की ओर से लाखों थान रेशम और दूसरी बहु-मूल्य चीजें मिलती थी, इसलिये यह कोई घाटे का सौदा नहीं था। विलासिता की चीजों को भेजकर तुकं सामन्तो को नरम और विलासी बनाने का भी अवसर मिलता था। दूलन खानने भेंट भेजकर सम्राट् से प्रार्थना की, कि सीमात पर हमारी चीजों के बेचने के लिये हाट लगाई जाय। सम्राट् ने इसे स्वीकार किया और पुरानी प्रथा के अनुसार नये खाकान के पास एक राजकन्या भी भेजी। दूलन का शिविर उत्तरी शान्सी से नातिदूर तू-किन् की पहाड़ियों में था। प्रतापी हूण शान्-यू मा-दुन का भी शिविर यही रहा करता था। दूलन के खाकान बनने में शेतू का दूसरा पुत्र अपने अधिकार की हानि समझता था। उसने दातू वूगा खान से मिलकर भाई के ऊपर आक्रमण किया। दूलन को भागकर चीन में आश्रय लेना पड़ा। सम्राट् विन्-ती ने उसके लिये शान्सी में एक नगर बसा दिया और पहली स्त्री के मर जाने पर उसके लिये दूसरी राजकुमारी भेजी। दूलन को यह स्थान पसन्द नहीं आया, तब उसे ओर्दुस् प्रदेश (हवाझो मुडाव) में रहने के लिये स्थान मिला, जहाँ लाखों आदिमियों को बेगार में लगाकर एक बड़ी नहर बनवा दी गई। चीन ने दूलन का पूरा पक्ष लिया और शे-तू शबोलियो के पुत्र के विरुद्ध एक विशाल चीनी सेना भेजी। अपनी सारी विपत्तियों का उसे ही कारण समझ कर शे-तू-पुत्र को उसके अपने कबीलेवालों ने मार डाला। दूलन के दूसरे शत्रु तू-मिन्-पुत्र और शे-तू-भ्राता इन दोनों सामन्तो को चिङ्गलिङ्ग ने बुरी तरह हराया और तिङ्ग-लिङ्ग तथा दूसरे कितने ही स्यान्-पी कबीले दूलन के झंडे के नीचे चले गये। सम्राट् विन्-तीने दूलन को ची-जेन् की उपाधि दी। उसके उत्तराधिकारी सम्राट् याङ्-ती (६०५-१७ ई०) ने दूलन का सम्मान और भी बढ़ाया। उत्तर शान्सी प्रदेश में दूलन ने सम्राट् से भेंट की। उसे सभी सामन्तो के ऊपर स्थान मिला और माउदुनकी बात को स्मरण करके याङ्-ती ने भी दूलन को कोर्निश करने से ही मुक्त नहीं कर दिया, बल्कि जूता पहने तलवार लटकाये दरबार में आने की भी स्वतंत्रता दी। उसका वैयक्तिक नाम भी दरबार में नहीं लिया जाता था। सम्राट् ने दूलन के २५०० सरदारों में २ लाख रेशमी थान बटवाये। यही नहीं, सम्मान-प्रदर्शन में अति करते हुये यह सनकी सम्राट् स्वयं दूलन के शिविर में गया। दूलन ने मद्य चषक हाथ में ले घुटने टेककर सम्राट्-भक्ति की शपथ ली। दूसरे साल जब दूलन दरबार में आया, तो उसका स्वागत पहले साल से भी अधिक हुआ। दूलन ६०० ई० में मरा।

^१ वही ३६७

७ दातू बुगा खान (६००-)-

दातू के खान बनने के साथ तुर्कों में जनतन्त्रता का अन्त हो गया। दातू को जनने निर्वाचित करके खाकान नहीं बनाया था। यही परिपाटी आगे भी चल पड़ी। तुर्क अब जनशाही से सामन्तशाही जीवन में प्रविष्ट हो गये। शबोलियो का एक पुत्र दातूसे विद्रोह करके ७ वर्ष (६००-६०७ ई०) तक लड़ता रहा। इस खान के शासन में कई महत्वपूर्ण घटनाएँ घटी। इसीके समय (६१८-१६ ई०) सुइ-वश को हटाकर ६१८-१६ ई० में चीन का सबसे प्रतापी थाङ्ग-वश (६१८-६०७ ई०) स्थापित हुआ, जिसका सस्थापक काउ-चू एक बड़ा दूरदर्शी पुरुष था। थाङ्ग सम्राटों के समय चीनी साहित्य और कला की बड़ी उन्नति हुई। इन सम्राटों में कितने ही स्वयं लेखक और कवियों के सरक्षक थे। साथ ही उनकी राजनीतिक शक्ति भी खूब बढ़ी। थाङ्ग-वश की राजधानी छाङ्गअन् (सियान्) अपने समय की दुनिया की सबसे समृद्ध नगरी थी। थाङ्ग-वश ने सुइ-वश के निर्माण-कार्य तथा चीन की एकता को सुरक्षित रखा। बूगा खानने कतलूक-देले (आनद कुमार) को दूत बनाकर चीन दरबार में भेजा।

अंतिम ७५ वर्षों में खे-ली खान दू-बी, तूली खान, इमी-नीश सि-बु-ली खान सुक-मो (६४१ ई०) और चे-बी खान (६४७-८२ ई०) पूर्वी तुर्कों के शासक हुये। यद्यपि इनके समय में चीन थाङ्ग-वश के नेतृत्व में बहुत शक्तिशाली था, किंतु तुर्क घुमन्तू लडाकू थे, इसलिये उन्हें दानसे सतुष्ट रखने की कोशिश की जाती थी। खे-ली से पहले के चूलो खान की एक घटना है। चू-लोने थाङ्ग सम्राट् ताइ-सुङ्ग (६२७-५० ई०) की सहायता के लिये २००० सैनिक भेजे थे। वह किसी प्रतिद्वंदी से उस समय लड़ रहा था। चू-लो सीमांत नगर पर गया, तो सम्राट् की ओर से उसकी बड़ी आवभगत हुई, जिसका प्रतिदान उसने सड़क पर मिलने वाली सभी सुन्दरियों का अपहरण करके किया।

८ खे-ली खान

यह पिछले सम्राट् का भाई था, जिसकी पटरानी चीन राजकन्या थी। पटरानी ने स्वयं अपने पुत्र को अत्यन्त दुर्बल और कुरूप कहकर गद्दी से वंचित कर दिया और उसके समर्थन तथा प्रभाव से देवर खे-ली खान के नाम से गद्दी पर बैठा। भाभी नये खान की भी पटरानी बनी। पहले खे-लीने कुछ स्वतन्त्र नीति बरतनी चाही, किंतु जल्दी ही उसे थाङ्ग-वश के फौलादी पजे का पता लग गया। उसकी भूलों को माफ करके खे-ली को बहुत सत्कृत किया गया। बड़ी बड़ी भेट और सम्मान को तुर्क खाकान अपना हक समझते थे। वह इसके लिये क्यों कृतज्ञ होने लगे? थाङ्ग के प्रतिद्वंद्वियों की कमी नहीं थी। एक प्रतिद्वंदी के ६००० सैनिकों के साथ अपने १० हजार सवारों का लेकर खे-लीने उत्तरी शात्शी में लूटपाट मचानी चाही। थाङ्ग सेनाने उसे बुरी तरह हराया और “नई मित्रता को दृढतापूर्वक जोड़ने” के संकेत के रूप में खान ने गोद का एक टुकड़ा भेंट कर शांति की प्रार्थना की। लेकिन चीनी तुर्कों की बात पर इतनी जल्दी विश्वास करने के लिये तैयार नहीं थे। कभी न कभी छोटी बड़ी छेड़-छाड़ होती रहती। ६२२ ई० में तुर्क जनोभ अकाल पड़ा हुआ था। इसी समय चीनियों ने धोके से उनपर आक्रमण कर दिया, किंतु वह हार गये। अब खे-ली तु-ली खान को ले कई सालों तक चीन के सीमांत-प्रदेश पर लूटपाट मचाता रहा।

एक बार थाइ राजकुमार ताइ-सुङ ने तुर्क सेना के सामने जाकर खे-ली को ललकारा और कहा, कि लूटपाट करके लोगो को सताने की जगह आओ हम द्रुन्द-युद्ध या डटकर युद्ध करके फैसला करले। खे-ली मुस्करा कर चुप रह गया। ताइ-सुङ (थाइ-युवराज) ने अपने सामन्तको भेजकर तुली खान (उपखाकान) को भी ललकारा, किन्तु वह भी चुप रहा। इस तरह काम बनते न देख उसने भेद-नीतिसे काम लेना चाहा और तुलीको फोड़ लिया। इसकी वजहसे खे-ली कुछ झुका, किन्तु फिर दो साल (६२३-२४ ई०) तक कितनी ही बार चीनमें घुसकर लूटपाट मचाता रहा, जिससे राजधानी छाङ-आन् खतरेमें पड़ गई। खे-लीके दूतने चीन दरबारमें जाकर अपने खानकी शेखी बघाडते हुए खरी-खोटी कहनी शुरू की। थाइ कुमारने डाटकर कहा—“शायद मुझे सबसे पहले तुझे मारना पड़ेगा” इसपर वह ठंडा हो गया। राजकुमार घोड़े पर सवार हो बिना अधिक शरीर-रक्षकके चल पड़ा। राजधानीके पास छोटी सी छिछिली नदी वेई बहती है, वही थाइ राजा और तुर्क सेनाके बीचमें व्यवधान थी। राजकुमारने खे-लीसे सीधे बात की। तुर्क सेनापति राज-कुमारकी हिम्मत से इतना रोबमें आ गये, कि उन्होंने घोड़ेसे उतर कर उसका अभिवादन किया। इसी बीच चीनी सेना आगे बढ़ आई। खे-ली घबड़ाया। लोगोंके मना करने पर भी राजकुमारने आगे बढ़कर खे-लीसे बातचीत की। दोनों सेनाये देखती रही। इस प्रकार ६२६ ई० में खे-लीने सधिका प्रस्ताव किया। अब राजकुमार ताइ-सुङके नामसे सम्राट् बन चुका था। सम्राट्ने तुर्कोंकी हिम्मत बढ़नेका कारण बतलाते हुए कहा था—“तुर्क जो अपनी सारी सेना के साथ वेईके तटपर बढते चले आये, उसका कारण यही था, कि वह जानते थे, हमारा वग भीतरी कलहके कारण इस समय कठिनाइयोंमें है, और मैं अभी अभी मुकुटका अधिकारी हुआ था। प्रश्न था, आजकी परिस्थिति पर कैसे काबू पाया जाय। मैंने सोचा, मेरा अकेले आगे जाना उन्हें आश्चर्यमें डाल देगा, और यह सोचकर उन्हें बड़ी परेशानी होगी, कि वह अपने अड्डेसे बहुत दूर हैं। यदि हमको अवश्य लड़ना ही है, तो अवश्य जीतना भी चाहिये। यदि हमारी घुड़की काम कर गई, तो हमारी स्थिति बहुत मजबूत हो जायेगी।”

हूण शान्-यूके समयका अनुकरण करते कुछ दिनों बाद सम्राट् खे-लीको लिये नगरके पश्चिम वाले एक पुल पर गया, जहा एक सफेद घोड़ेकी बलि दी गई। खे-ली और सम्राट्ने मध्दि न तोड़नेके लिये शपथ ली। छाङ-आन् बाल-बाल बच गया, खे-लीकी सेना लौट गई। कुछ सप्ताह बाद खे-लीने बहुत से घोड़ो और भेड़ोकी भेंट भेजी। सम्राट् ताइ-सुङने उसे न स्वीकार कर राजाज्ञा निकालकर लौट जानेका हुक्म दिया।

६२७ ई० में खे-लीको उत्तरमें भी हानि उठानी पड़ी। तिङ-लिङ कबीलो—से-यन्-दा, बैकाल और उइगुर—ने खे-लीके अत्याचारसे तग आकर तुर्क अफसरोंको मार भगाया। हूणोंके पतनके बाद ईसाकी २री शताब्दीसे ही यह कबीले दूसरे कितने ही हूण-कबीलोंके साथ बैकाल-सरोवर, बल्काश-सरोवरसे कास्पियन तक फैल कर शको और उनके उत्तराधिकारियोंका स्थान ले चुके थे। उइगुर और बैकाल तुला नदीके उत्तरमें रहते थे, और से-यन्-दा केरुलोन नदीके दक्षिणमें। उक्त तीनों कबीलोंके विद्रोहको दबानेके लिये खे-लीने अपने उप-खाकान तुलीको भेजा। तुलीकी सेना पूर्णतया पराजित हुई और उसने किसी तरह घोड़े पर भागकर जान बचाई। खे-ली ने उसकी कायरतासे नाराज होकर उसे गिरफ्तार कराया। तुलीने सम्राट्के पास सदेश भेजा।

वह तो ऐसे अवसरमें फायदा उठानेके लिये तुला बैठा ही था। चीनी सेना खे-लीके विरुद्ध भेज दी गई। मरुभूमिके उत्तरमें से-येन्-दाने बिगा खाकानको अपना खाकान बनाया। इसके बाद उसके पुत्र और भतीजोंने खान-पद मभाला। उन तीनोंने कुछ साल तक खे-लीको बहुत दिक किया। बैकाल समुद्रके पूर्वके ८ तिङ्ग-गिङ्ग कबीलो—बैकाल, उरगुर, ची-का-ज (किर्गिज) आदि—ने से-येन्-दाके इस कामको पसन्द नहीं किया और उन्होंने ६२८ ई० में चीन सम्राट्की अधीनता स्वीकार की।

खे-ली ६ राज्यका एक और अंग-भंग हो रहा था, दूसरी ओर वह तडक-भडकमें चीनी और ईरानी सम्राटोंका कान काटना चाहता था। उसके कितने ही मंत्री और राज्यपाल हू (अ-तुर्क) थे, जो अपनी स्वच्छाचारिता और विलासितामें तुर्क जनको नाराज कर बैठे थे। यही समय था, जब कि पश्चिमी तुर्क साम्राज्य अपने यौवन पर था। कई सालसे देशमें हिमवर्षा अधिक हुई थी, जिसके कारण भोजनका अभाव सा हो गया था, ऊपरमें विलासी शासकोने करको दुगुना-तिगुना बढ़ा दिया था। तुर्क प्रजामें आम विद्रोह हो रहा था। इसी वकत हान् सिंहासनके किमी दावेदारको उमने सहायता भी करनी चाही। तू-ली और कितने ही दूसरे टै-ले (राजकुमार) हान्की ओर थे ही। जेनरल ली-चिङ्गकी अधीनतामें एक बड़ी सेना चढ़ी और उसने अचानक ही तिङ्ग-स्यान् पर आक्रमण करके खे-लीको घेरना चाहा। वह किसी तरह मरुभूमिको पार कर केरुलोन-उपत्यकामें लोह-पर्वतकी ओर भागा और वहाँसे अपना सारा राज्य सम्राट् को भेंट करना चाहा। सम्राट्ने अपने जेनरलको २० दिनकी रमद ले खे-लीका पीछा करनेके लिये हुकुम दिया, और खे-लीको भी दिलाशा देता रहा। अन्तमें खे-ली करीब-करीब अकेले ही एक तेज घोड़े पर सवार हो, अपने भतीजे शबोलियो मू-नी-मिर की ओर भागा, लेकिन उसे पहले ही पकड़ लिया गया। हान् (चीन) सम्राट्ने उसे क्षमा करके साम्राज्यीय महलमें रक्खा—यह ६२८ ई० की बात है। खे-लीको यह राजसी जीवन पसन्द नहीं आया, इस पर उसे एक प्रदेशका राज्यपाल बना दिया गया, जिसे भी नापसन्द करने पर उसे प्रतिहारोंका सेनापति बना दिया गया। वही ६२४ ई० में खे-ली मरा। राजधानीके पास वेई-नदीके किनारे उसका शव जलाया गया। खे-लीकी माके दहेजमें आये एक दा-कवान्ने अपना गला काटकर स्वामीका अनुगमन किया, जिसको सम्राट्की आज्ञामें खे-लीकी समाधिके पास ही दफनाया गया और दोनोंकी प्रशंसामें स्मारक वाक्य पत्थर पर खुदवा दिये गये।

९. तु-ली खान' (६२८-३१ ई०)

खे-लीकी हारके बाद ६२८ ई० में उसका भतीजा तू-ली अथवा शबोलियो सिरा गद्दी पर बैठा। पहले वह सिंग-मूरेन् नदीमें उत्तरका शासक और खे-लीके चीन पर आक्रमणोंके समय उसका दाहिना हाथ था। मिरा-मूरेनसे दक्षिण अतुर्क-जातीय खिताई जनका स्वतंत्र राज्य था। इन्ही खिताइयोंने आगे चलकर चीन विजय किया, जिसके कारण चीनका दूसरा प्रसिद्ध नाम खिताई पडा, जिसे कि हम नान-खिताई (चीनी रोटी) के रूपमें आज भी स्मरण करते हैं। तु-लीके अधीन उस समय स्यान्-पीके दो कबीले कुमुक् खे-ली और सिब् भी थे। इनमेंसे कुमुक् खे-ली जु-जोन् (अवारो) की पूर्वी शाखाकी सतान थे। सिब् शायद पीछे अपनी सतानको सिबो-मगोलके रूपमें छोड़ गये। मु-जुङ्ग वशने कुमुक् खे-ली और खिताइयोको जुङ्गारिया और

गोबीके बीच भगा दिया था। प्रथम तोबा सम्राट् अपनी विजय-यात्रा (३८८ ई०) में आमूर नदी तक पहुँचा था, जिसके विजयोपहारके लाख जानवरोंमें सुअरोंका भी वर्णन आता है। अगली दो शताब्दियों तक शिन्-ची और मत्स्य-चर्म जातियोंके साथ कुमुक् खे-ली (कुमुक् घेई) चीन दरबारमें अपनी भेंट लाते थे। चीनी लेखानुसार उस समय यह सभी जातियाँ “गंदे सूअर पालने-वाले शिकारी जंगली” थी और उनका सांस्कृतिक तल तुर्कों और खिताइयोंसे बहुत नीचा था। ५वीं सदीके बाद कुमुक्-खेलियोंने अपने नामसे कुमुक् शब्द हटा दिया और हर बातमें वह तुर्कों जैसे हो गये, लेकिन वे अपने मुर्दोंको लपेटकर पेड़ोंके ऊपर खिताइयोंके भाँति अब भी टांगते थे। खे-ली और खिताई सरदार खाकान उपाधि धारण करनेसे पहिले तुलीके अधीन थे। तुलीको एक सैनिक राज्यपालका दर्जा मिला था। वह आधुनिक पेकिङ्गके पास सुन्-चान् में रहता था, जहाँ उसकी मृत्यु २६ सालकी उम्रमें ६३१ ई० में हुई। चीन-सम्राट्ने उसे अपना रक्तभाई बनाया था, और उसपर बहुत स्नेह रखता था। सम्राट्ने उसकी समाधि पर स्मृति-वाक्य लगवाये। सिब् और खे-ली (घेई) कबीले अब खिताइयोंके साथ जुट गये और उन्हींके साथ चीन दरबारमें अपना कर भेजा करते थे।

१०. सि-बु-ली खान (६३१-४७)

इ-बिन्नी-शू (तुलीका पुत्र) सु-बिन्नी खान^१ सीमा (हो-लो-डू) के नाममें पूर्वी तुर्कोंका खाकान बना। ६३४ ई० में अपने छोटे चचा और दूसरे सरदारोंके साथ पञ्चत्र करके सम्राट्के शिविर पर धावा बोलकर वह स्वतंत्र खाकान बननेमें करीब-करीब सफल हो गया था। किंतु इसी समय चीनी सेना आ गई और सब पकड़े गये। चीनसे स्वतंत्र होनेका प्रयास विफल हुआ। चचा और दूसरोंको प्राण दण्ड हुआ और सि-बिन्नी खानको ह्वाङ्गहोके उत्तर निर्वासित कर दिया गया।

चीनसे महापराजयके बाद खानके कुछ आदमी तुर्किस्तान भाग गये, कुछ से-येन्-दाके पास चले गये और कितने ही चीनमें ही रह गये। चीनके लिये तुर्क एक बड़ी समस्या थे। नष्ट कर दिये जानेपर भी कुछ सालोंमें ही वह लाख-दो-लाख हो जाते। उन पर नियंत्रण नहीं रक्खा जा सकता था। विश्वासघातको वह नीति समझते थे। वह धुडकी देने तथा पूछ हिलाने दोनोंके लिये तैयार रहते थे। चीनके उस समयके अत्यन्त प्रभावशाली राजनीतिज्ञ वेङ्-चाङ् ने इस समस्याको हल करनेके लिये सलाह दी, कि उन्हें ह्वाङ्गहोके उत्तर भेज दिया जाय। बहुतोंने इसका समर्थन किया। लेकिन ताइ-सुङ्ग चीनका असाधारण सम्राट् था। इतिहासकार उसके बारेमें कहते हैं, कि सभी त्रुटियोंके रहते हुए भी वह चीनके सभी सम्राटोंमें सबसे अधिक उदार और न्यायप्रेमी था। उसने इस सलाहको नहीं स्वीकार किया और कहा^२, “तुर्क चाहे जैसे भी हो, किंतु मानव-अधिकार और सत्यके सिद्धांत सार्वदेशिक हैं, उनमें जाति और वर्णका भेद नहीं डाला जा सकता। एक पराजित जातिके अवशेष यह बेचारे अभाग्य अपनी चरम विपदावस्थामें हमारे पास प्रार्थना कर रहे हैं। अगर हम उन्हें शरण दे और उचित तथा उपयुक्त मानसिक स्थिति रखनेकी शिक्षा देनेका प्रयत्न करें, तो वे कभी हमारे लिये खतरनाक नहीं हो सकते। ५० ई० में चीनके सीमात पर हमने हूणोंको स्थान दिया, किंतु उससे हमें कोई हानि नहीं हुई। इसी तरह यदि हम

^१ वही पृ० ३६६,

^२ वही पृ० ३६८

उन्हे अपने रीति-रवाजोको कायम रखनेकी इजाजत दे और उनकी सैनिक सेवाओका उपयोग करे, तो कोई हरज नहीं होगा। इसके विरुद्ध यदि हम तुर्कोंको वास्तविक चीनी पुरुष बनादे या बनाने की कोशिश करे, तो यह भूल होगी, क्योंकि इस तरहका दबाव उनके मन में सदेह पैदा करेगा।”

११ चे-बी खान (६४७-८२ ई०)

खेलीके बाद तुर्क साम्राज्य उच्छिन्न हो गया। उस समय चे-बी इतिश-उपत्यकाका एक स्थानीय खाकान था। इसके राज्यमें इतिश नदीके उत्तर और दक्षिणके किरगिज सम्मिलित थे। चे-बीने अपने पुत्र दे-ले (कुमार) शबोलियोको चीन दरबारमें भेजा और स्वयं भी सलामी देनेके लिये आनेकी बात कही, लेकिन वह खुद नहीं गया। इसपर चीनने नाराज होकर ६४९ ई० में उसके विरुद्ध सेना भेजी। वह पकड़कर दरबारमें लाया गया। तीनो करलोक कबीलोने तर्बगताई प्रदेश पर अधिकार कर लिया। कभी वह पूर्वी तुर्कोंको अपना अधिराज मानते थे और कभी उत्तरी तुर्कोंको। अब उन्होंने चीन की अधीनता स्वीकार कर ली थी। इसी साल ताइ-सुङ मर गया और उसके स्थान पर कौ-सुङ थाङ सम्राट् हुआ। कौ-सुङ नाबालिग था, इसलिये राज्यकी बागडोर भूतपूर्व भिक्षुणी तथा ताइ-सुङ की प्रेयसी वूके हाथमें चली गई। २० साल तक चीनमें शांति रही। ६७९ ई० में तुर्कोंने चीनके विरुद्ध जबर्दस्त विद्रोह किये।

तुर्क राजकुमार हू-पेइ ने अपनेको सि-बि-ली खानका उत्तराधिकारी घोषित किया। यद्यपि वह खेले खानके रक्तका था, मगर उसका रंग और तुर्कोंकी भाँति साफ न होकर श्याम था, इसीलिए ओर्दू (उर्त) ने उसे सच्चा असेना न स्वीकार कर हू (सुरियानी, ईरानी या हिंदू) जातिका माना। उसे ह्वाङ-हो नदीके उत्तरी मुड़ाव और गोबीके बीचकी जगह मिली। हू-पेइके उर्तकी सख्या एक लाख बतलाई जाती है, जिसमें ४० हजार सैनिकोंका काम कर सकते थे। भीतरी विद्रोह अब भी दबा नहीं था। थाङ वंश कोरियाको जीतनेकी कोशिश कर रहा था। उसके प्रति अपनी भक्ति दिखलानेके लिये हू-पेइ स्वयं युद्धमें शामिल हुआ। कोरिया पर यह चीनकी पहली विजय थी। हू-पेइ वायल हुआ। ताइ-सुङने स्वयं उसके धावसे खून चूसकर फेंका, लेकिन तुर्क सरदारके प्राण बच नहीं सके। सम्राट्ने अपने बापकी समाधिके पास उसकी समाधि बनवाई और उसके पहलेके राज्यमें पे-ताउ नदीके किनारे एक स्मारक निर्मित कराया। हू-पेइ तोबा खाकानके वंशजोंका अंतिम खाकान था।

यह सारे पूर्वी तुर्कोंका खाकान नहीं माना जाता था, बल्कि जैसा कि ऊपर बतलाया, इतिश उपत्यकाका एक स्थानीय खाकान था।^१

४. अशेना-निशी

इस समय तुर्कोंकी हालत कहाँ तक पहुँच गई थी, इसका कुछ पता हमें अशिना वंशकी नई शाखा अशेना-निशीके तृतीय खाकान मो-गि-ल्यान् और उसके भाई क्युल-तेगिनके शिलालेखसे लगता है, जिसमें तुर्क जातिकी हीनावस्थाका चित्र खींचा गया है—

^१वही पृ० ३७०

“उस (तुमिन)के बाद उसके छोटे भाई (मू-यू और तोबा) कगान हुए, फिर उसके पुत्र। (तुर्कोंमें) चूक हरेक छोटा भाई बड़ेको पसंद नहीं था, पुत्र पिताके अनुकूल नहीं था और सभी कगान बेसमझ थे, सभी कगान भीरु थे, उनके सभी बू-यू-रुख बेसमझ थे, भीरु थे, जिसका परिणाम हुआ बेगो और जनताका कगान पर अविश्वास। परिणाम हुआ चीनी लोगोंको भडकाने और भेद लगानेका सुभीता, तथा परिणाम हुआ सदेहमें पड़ना, तथा उसका परिणाम यह हुआ, कि उन्हो(चीनियों)ने छोटे भाइयोंको बड़ेसे लड़वाया और जनता तथा बेगो से एक दूसरेके खिलाफ हथियार उठवाया। तुर्क जनताने अपने जन-जातीय सघकी वर्तमान अव्यवस्थाका स्वागत किया, जिसके द्वारा अपने ऊपर तथा तत्कालीन कगानोंके राज्यके ऊपर महानाशको बुलाया। वे (तुर्क) अपने सुदृढ़ पुत्रों और विशुद्ध पुत्रियोंके साथ चीनियोंके दास हो गये। तुर्क बेगोंने अपना तुर्क नाम छोड़ चीनी बेगोका नाम अपनाया, तथा चीनी कगान (सम्राट्) की अधीनता स्वीकार की। ७५ वर्षों तक उन्होने चीनियोंको अपना श्रम और बल प्रदान किया।

“ऐसा हो गया था हमारा जनजातीय सघ और ऐसी दिखाई देती थी हमारी शक्ति। ओ तुर्की बेगो और जनता! सुनो तुम्हें ऊपरके आकाशने क्यो दाब नहीं दिया, नीचेकी भूमि तुम्हारे लिये फट क्यो नहीं गई? ओ तुर्क लोगो, किसने तुम्हारे शासन और कानूनको नष्ट किया? तुमने स्वयं अपराध किया। ऊपर उठानेवाले गुणो और कामोमें अपने मनीषी कगानोंके साथ तुमने मूर्खता की। कहाँसे आये वे शस्त्रधारी, जिन्होंने तुम्हें छिन्न-भिन्न किया? कहाँसे आये भालादार, जिन्होंने तुम्हारा अपहरण किया? हे जनता तू पूर्व गई, पश्चिम गई और ऐसे देशोंमें जहाँ भी गई, तेरा भला क्या हुआ? तेरा खून पानीकी तरह बहा, तेरी हड्डियाँ पहाड़की तरह पड़कर खड़ी दिखाई पड़ी, तेरे बेगो सामन्तोंके पुरुष-सतान दास बने, तेरी कुलीन स्त्री-सताने दासियाँ बनी। तेरी बेसमझी और तेरी नीचतासे मेरा चचा (मो-चो) खाकान उड़ (मर) गया।”

१२ गु-दु-लू कगान (६८२-९३ ई०)

इलतेरेस अशेना वशी राजकुमार था। खाकानो (कगानो)के वश अशेनाका होनेके कारण उसकी कुलीनतामें क्या सदेह हो सकता था? वह खेलीका दूरका सबधी और एक बहुत बड़ा सरदार था। तुर्कोंके असतोषसे उसने फायदा उठाया। चीनके प्रति जहा रोप था, वहा तोबा-वशके खाकानोके प्रति भी लोगोंकी आस्था नहीं रह गई थी, जैसा कि ऊपर उद्धृत अभिलेखके वाक्योंसे मालूम होता है। इलतेरेस गरम दलका नेता बन कर, रिश्वत और अपनी राजनीतिक चालोके कारण कई तुर्क कबीलोंको अपने साथ मिलानेमें सफल हुआ। तुर्क घुमन्तू दुनियाके अन्य लड़ाकू घुमन्तूओंकी तरह लूटको अपना उचित पेशा समझते थे। इलतेरेसने अपने उर्तके साथ कई सफल अभियान किये। तुर्कोंके तम्बूओमें लक्ष्मी आकर फिर वास करने लगी। जल्दी ही उसने अपनेको कगान घोषित कर एक भाईको शाह, दूसरेको जेब्-नूकी उपाधि दे उप-कगान बना दिया। इलतेरेसका नाम अब गु-दु-लू (कुतुलुक) कगान हुआ। गु-दु-लूकी बढती हुई शक्ति खतरेकी बात थी। सम्राज्ञी वूने उसके विरुद्ध १३ हजारकी सेना भेजी, गुदुलूने सबको नष्ट कर दिया। फिर पश्चिमी तुर्कोंकी एक शाखा तुर्गिसकी ओर उसने मुह किया, जो कि सूजिया, इली और इससिकुलमें रहती थी। इन्हींके साथ लड़ते हुए वह मारा गया। उस समय पश्चिमी तुर्कोंकी राजधानी चू नदीके किनारे जू-जी थी। गुदुलू कगानका विश्वस्त सलाहकार तोन्-यू-कुक्

तुर्कोंके पुराने दिनके लौटा लानेका स्वप्न देख रहा था। चीनियोंने शर्तके साथ उसे जेलसे मुक्त करके आशा रक्खी थी, कि अब वह तुर्कोंके खिलाफ जाकर अपना पराक्रम दिखलायेगा। लेकिन तोन्-यू-कुक्ने वहा जाकर चीनको छोड़ गुडुलूका साथ दिया। तोन्-यू-कुक्का प्रभाव गुडुलूके उत्तराधिकारीके समय नहीं रहा।

(१) मो-चो (६९३-७१६ ई०)

गुडुलूके भाई मो-चोके शासनमे तुर्क-साम्राज्य फिर एक बार उन्नतिके शिखर पर पहुँचा। गुडुलूने तुर्कोंकी सैनिक जनतन्त्रताके सहारे सफलता प्राप्त की थी, लेकिन मो-चोको जनतन्त्रता नहीं तानाशाही पसंद थी। नये कगानने उसी साल शान्सीमे घुसकर लूटपाट की। सम्राज्ञी बूने मो-चोके खिलाफ एक, बौद्ध भिक्षुको सेनापति और उसके अधीन १८ सेनापतियोंको भेजा। अभियान असफल रहा। बहुतसे सैनिक और सेनापति पकड़े गये, मो-चोने भिक्षुको कोड़े मरवाते मरवाते मौतके घाट उतारा। चीनियोंको बहुत आश्चर्य हुआ, जब ६९४ ई० मे मो-चो स्वयं दरबारमे पहुँचा। सम्राज्ञी बहुत प्रसन्न हुई। उसने कुछ (ड्यूक) बना, उसे ५ हजार बहु-मूल्य रेशमी थान देकर विदा किया। इसके बाद मो-चोने संधि करनेके लिये अपने दूत भेजे। इस प्रकार अब थाङ्गवशको एक सबल सहायक मिला। ६९६ ई० मे खिताई शासकने विद्रोह कर अपनेको “सर्वोपरि कगान” घोषित किया। उसके विरुद्ध भेजी गई चीनी सेनाये हार कर लौट आई। मो-चोने बीड़ा उठाया। उसने चीनके शत्रु खिताइयोको पूरी तौरसे नष्ट-भ्रष्ट कर दिया और उनके राज्यको—जो कि भयकर बनता जा रहा था—अपने राज्यमे मिला लिया। उइगुरोके अधिकांश कबीले मो-चोके अधीन थे। जिन्हें यह स्वीकार नहीं था, वह उससे बचनेके लिये गोबीके दक्षिणमे चले गये। मो-चोके प्रहारसे पश्चिमी तुर्क साम्राज्य खतम हो गया। उनका अंतिम खाकान असिन्-सिन् ७०८ ई० मे कुलान (आधुनिक तर्मी स्टेशन के पास) मारा गया। आगे उनका स्थान तुरगिस् शाखाने लिया। चीन मे मोचोका बड़ा सम्मान और श्रेष्ठता था। दरबारमे उसके दूतको सबसे ऊपर स्थान मिलता था। उसके उत्तराधिकारी मोगिल्यानके दूतने झगड़ा किया, जब तुरगिस् कगानके दूतको उससे प्रथम रखनेकी कोशिशकी गई। मो-चोको सम्राज्ञीने “महा शान्-यू, धार्मिक कगान” की उपाधि दी थी*।

७९८ ई० मे राजमाताके पास मोचोने प्रार्थनाकी, कि मुझे अपनी कन्या प्रदान कर अपना दत्तक पुत्र स्वीकृत करे, चीनमे जितने तुर्क रह गये हैं, उन्हें मेरे पास भेज दे और खेती करनेके लिये बीज और हथियार देनेकी कृपा करे। तुर्क अभी तक घुमन्तू जीवन ही पसन्द करते थे। मोचोकी दूरदर्शिता उसे बतला रही थी, कि बिना खेतसे चिपकाये इन बेनकेलके ऊटोको काबूमे नहीं रक्खा जा सकता। राजमाताने अपना दूत भेजा। हिचकिचाहटकी बात जानकर मो-चो आग-बगूला हो गया और चीनी दूतको मारनेकी भी धमकी देने लगा। सम्राज्ञीको मजबूर होकर मो-चोकी बाते माननी पड़ी। उसके पास कई हजार तुर्की परिवारोको जबर्दस्ती भेजा गया और बीजके लिये एक लाख मन अनाज तथा तीन हजार खेतीके हथियार भेजे गये; जिनके कारण मो-चोकी शक्ति और संपत्ति और बढ़ गई। मो-चोने अपनी कन्या किसी थाङ्ग-राजकुमारसे व्याहनेकी

इच्छा प्रकट की। साम्राज्यीने अपने सौतेले भतीजेको व्याह करनेके लिये भेजा। मोचो उसे देखकर जल भुन गया और साथ आये महासेनापतिसे कहा—“मैंने ली-कुलके थाङ्ग-सम्राट् वंशज राज-कुमारसे अपनी कन्याका व्याह करनेका प्रस्ताव किया था, और तुम मेरे पास लाये हो वू-परिवारकी पौधको। हम तुकोने कुछ पीढियोसे ली-कुलकी श्रेष्ठताको स्वीकार किया है और मुझे मालूम है, कि ली सम्राट्का कोई पुत्र अब भी जीवित है। इसलिये मैं अब अपनी सेनाके साथ कूच करके ऐसे राजकुमारको ढूढनेमें सहायता कर उसके उचित मिहासन पर बैठऊँगा।” उसने वू-कुमारको गिरफ्तार करा लिया और कलगन तथा पेकिङ्ग प्रदेश पर चढाई कर दी। उसके विरुद्ध साढ़े ४ लाख चीनी सेना भेजी गई, लेकिन सब बेकार। मो-चोने शान्सीको कितने ही नगरोंको जला डाला और बिना दया-मायाके अपने रास्तेमें आर्त हरेक वस्तु हरेक जीवित प्राणीको नष्ट किया या लूटा। साम्राज्यीने धार्मिक खाकानकी जगह उसका नाम चन्-चुच (कसाई, रक्त-चूषक) रख दिया। लेकिन इससे मो-चोकी आधी थोड़े ही रुक सकती थी ? उसने और भी नगर लूटे, और भी अफसर मारे। राजमाताने अपने बकलोल सौतेले पुत्रको—जिसे राजकुमारका दर्जा देकर नीचे गिरा दिया गया था—सेना देकर लडनेके लिये भेजा, किंतु नये प्रधानसेनापतिके अभियानके पूर्व ही मो-चो ६० हजार बूढ़े जवान, नर-नारियोंको मौतके घाट उतार चुका था। वह सेनाके सामनेसे साफ निकल गया। जाते वक्त भी रास्तेमें सभी लोगोंको बड़ी निर्दयतापूर्वक मारता गया। अगले साल मो-चोने अपने दो पुत्रों तथा गुडुलूके एक पुत्रको उच्च सेनापति बना ८० हजार सेना दे लगातार चीनमें लूटपाट करनेका हुक्म दिया। वह पूर्वी कान्चूकी अश्वपालनभूमिसे १० घोड़े नूटकर ले गया। तुर्गिसोके भीतर घुसकर मो-चोने पश्चिममें भी अपने राज्यको बढ़ाया।

७३० ई० में मो-चोने दूत भेजकर राजमातासे अपनी लडकीसे व्याह करनेके लिये फिर एक थाङ्ग राजपुत्र मागा। राजमाता भीगी बिल्ली बन गई। उसने दोनों राजकुमारोंको दूतके सामने खड़ा कर दिया, जिनमेंसे एक मो-चोका दामाद बना। राजमाताके दिन अब खतम हो रहे थे। उसके विरुद्ध षडयंत्र हुआ, जिसके फलस्वरूप सम्राट् कौउ-चुङ (६५०-८४ ई०) ने सीधे राजशासन सभाला। मो-चो इसी समय चीनी सेनाको हराकर लिङ्-चाउ (आधुनिक निङ्-ह्या) को लूटता, शाही चरभूमिसे १० हजार घोड़े छीन ले गया। ७११ ई० में तुर्गिसोको हराकर उसके कगान सकाको उसने मारा। अब उसका राज्य कोरियासे मध्य-एशिया तक ३००० मील लम्बा था। उनके पूर्वज स्यान्-पी जिस तरह तुर्कोंके पूर्वज हूणोंको कर देते थे, उसी तरह खिताई और घेई (खे-ली) मो-चोको कर देने लगे। ८वीं शताब्दीके आरम्भमें मो-चोकी शक्ति अद्वितीय थी, चीन उसकी दयाका पात्र था। अरबोंकी शक्ति अवश्य इसी वक्त बड़ी तेजीसे बढ़ी थी, जिन साल मो-चोने सकाको मारा, उसी समय अरब साम्राज्य सिंधसे स्पेन तक एशिया, अफ्रीका और यूरोपके तीन महाद्वीपोंमें फैला हुआ था। लेकिन इन दोनों महाशक्तियोंको कभी बल-परीक्षाकी अवश्यता नहीं पड़ी। दोनोंके अतिरिक्त इस समय कोई उतनी बड़ी राज्यशक्ति यूरोप और एशियामें नहीं थी। मो-चोकी सेनामें ४ लाख घोडसवार धनुर्धर सदा तैयार रहते थे। ७१४ ई० में उसे उरुम्-ची (सिङ्क्याङ्ग) पर सेना भेजनी पड़ी थी। आजकी तरह उरुम्ची (पी-तिङ्ग) उस समय भी सिङ्क्याङ्गका शासन-केन्द्र था, जहा चीनी महा-आयुक्तक रहता था। उरुम्ची उत्तरके बुमन्तुओके केन्द्रमें पड़ती थी, जिनपर नियंत्रण रखने और रेशम-पथको सुरक्षित करनेके लिये

चीनने उसे शासन-केन्द्र बनाया था। यहासे तुर्गिस् राजधानी सू-जि-या ७०० मील पश्चिम थी, किरगिज ओर्दू १२०० मील उत्तर, उइगुर ओर्दू १००० (४० दिन ऊटकी यात्रा) उत्तर-पूरब था। हामी यहासे ३०० मील दक्षिण-पूरब और कराशर ४०० मील दक्षिण-पश्चिम था।

मो-चो अत तक अपराजित रहा। घर और बाहर सब जगह वह पहले ही सा उद्गुण्ड था। लगातारकी विजयोंने उसके दिमागको फिरा दिया, जिसे पहलेके कई हित-मित्र उसे छोड़कर भाग गये, जिनमे स्वयं उसका एक दामाद भी था। चीन ऐसे भगोडोको अपनी शरणमे लेके ओर्दुस्-प्रदेशमे बसाता रहा। ७१५ ई० मे मो-चोका सफल अभियान गोबीके उत्तर नौ-भाई (नौ कबीले) तिब्ब लिङ्गके विरुद्ध हुआ था। साइबेरियाके पास रहनेवाले यह दुर्धर्ष कबीले मो-चोके लिये भी समस्या थे। ७१६ ई० मे बैकाल घुमन्तूओके साथ लड़नेके लिये उसने उत्तरकी यात्राकी और उन्हे करारी हार दी। विजयके नशेमे मत्त उसे आत्मरक्षाकी भी परवाह नहीं रहती थी। कुछ ऐतिहासिकोका कहना है, कि जब उन पर विजय प्राप्त करके मो-चो लौट रहा था, तो एक जगलमे बैकालोने उसे घेर लिया और उसका शिर काटकर चीन-राजधानीमे भेज दिया। दूसरे स्रोतोसे पता लगता है, कि उसके भतीजे बैगूने उसे मारा। मोगिल्यानके अभिलेखम चचाके मारे जानेका कारण तुर्क जनकी पारस्परिक इर्ष्या मालूम होती है। शायद बैकालोने ही मारा हो, और उसमे मो-चोके भतीजे बै-गूका भी हाथ रहा हो। मो-चोके पुत्र वो-गू (वी-गा) के गद्दी न पानेकी बात भी कही जाती है और कोई कोई इतिहासकार मो-चोके बाद वी-गाको तुर्कोंका कगान मानते हैं।

क्युल-तेगिन्ने चचाको मार या मरवाकर अपने बड़े भाई गुदुलूके पुत्र को मोगिल्यानके नामसे ७१६ ई० मे तुर्कोंका कगान बनाया। गु-दु-लूकेकालमे सैनिक जनतत्रताका मान था। बल्कि, इसीका जो अभिमान तुर्कोंमे पाया जाता था, उसको उभाड़कर गुदुलूने सफलता पाई थी। मो-चो इस तरहकी जन-तत्रताके साथ सहानुभूति नहीं रखता था। वस्तुतः तुर्क समाज जनयुगसे सामन्त-युगकी ओर बढ़नेके लिये परिपक्व हो गया था और मो-चोके महान् साम्राज्यकी स्थापनाके बाद तो शासन-सबधी कठिनाइया और बढ़ गई, जब कि हर एक तुर्क जनतत्रताकी दुहाई देनेके लिये तैयार हो जाता था। सेनामे भले ही तुर्कोंका प्राधान्य हो, किन्तु शासनमें समुन्नत शासित जातियोमेसे योग्य व्यक्तियोंको आगे बढ़ानेके लिये मो-चो मजबूर था। उनपर वह जितना विश्वास कर सकता था, उतना स्वच्छन्दता-प्रेमी तुर्कोंपर नहीं कर सकता था। तुर्क जनका घुमन्तू जीवन बिताना खतरे का कारण था, इसीलिए मो चो उन्हे कृपिजीवी बनाकर बसा देना चाहता था। लेकिन सैनिक जीवन सैनिक लूटके सामने कृषि जीवन कैसे किसी तुर्कको पसन्द आता? साधारण लोगोमेसे कितने ही इसे पसन्द भी करते, किन्तु वेगो (सरदारो) को क्यों यह पसन्द आने लगा? इन सैनिक लूटोमे लाखोकी तादादमे दास-दासी भी हाथ आते थे, जो जहा तुर्कोंके पशुपालन और दूसरे कामोमे सहायता देते, वहा खेती मे भी काम करते थे। तुर्कोंकी सुख और समृद्धिके बड़े स्रोत ये युद्ध-बन्दी दास थे। मो-चोके २३ सालके तूफानी शासनमे फिर सैनिक जनतत्रता दब गई, फिर तुर्क वेग अपनेको खुशामदी दरबारीके रूपमे परिणत होते देख रहे थे। मो-चोके भतीजे गुदुलू-पुत्र, क्युल-तेगिन् ने फिर उसी हथियारको अपने चचाके विरुद्ध उठाया, जिसे की उसके पिताने तोबा-कुलके विरुद्ध उठाया था।

(२) मो-गि-ल्यान्* (७१६-३५ ई०)

मो-चोकी हत्याके बाद राज-विधाता क्युल्-तगिन्ने तुर्क ओर्दू (तुर्क सरदारों की सभा) बुलाया, उसमें मो-चोके सभी अपराधों को बड़ा चढाकर कहते हुए लोगों को उसके खानदानके विरुद्ध कर दिया। इस प्रकार वह मो-चोके पुत्रों, उसकी पुत्र-वधुओं, बहुतमें सबधियों तथा अनुचरों-को मरवानेमें सफल हुआ। क्युल्-तगिन्का बड़ा भाई मोगिल्यान (मेरकिन) “छोटा शाह” के नामसे एक प्रदेश-शासक था। वह बहुत नरम स्वभावका आदमी था। वह अपने भाईके पक्षमें कगान-पदको छोड़ उप-कगान ही रहना चाहता था, लेकिन परिस्थितिया ऐसी थी, जिनके कारण क्युल्-तगिन् स्वयं गद्दी सभालना नहीं चाहता था। लाचार हो मोगिल्यानको खान बनना पड़ा। इसी समय पश्चिमी तुर्कों की गाखा तुरगिंसके सुलू कगानने अपनेको मो-चोके कुलसे स्वतंत्र घोषित किया। मो-चोका सबल हस्त न रहनेके कारण पूरब (मचूरिया) के खिताइयो और घेरियोने भी तुर्कों की अधीनता छोड़ चीनको कर देना शुरू किया। यही नहीं तुरगिंसकी शक्ति इतनी आगे बढ़ गई थी, कि उसके दूतको चीन दरबारमें प्रथम स्थान दिया गया, मोगिल्यानके दूतने जिसका विरोध किया। इसके बाद तुर्क फिर कभी पूर्वकी जातियोंके ऊपर अपना आधिपत्य नहीं जमा सके।

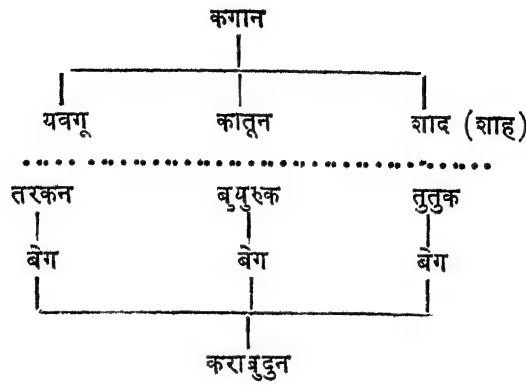
गुडुलूके पहले तुर्कों की भारी हत्या चीनियों की थी, उस समय एक तुर्क राजकुमार तोन्-यू-कुक् (तुर्गू) बच गया, किंतु वह चीनका बंदी बना। चीनने उसे गुडुलूमें लटनेके नित्ये जेलमें निकालकर भेजा था, और उसने पक्ष परिवर्तनकर गुडुलूका प्रभावशाली सलाहकार बननेमें सफलता पाई थी, यह बात हम कह आये हैं और यह भी, कि मो-चोके जमानेमें उसकी पूछ नहीं रह गई थी। मोगिल्यानके शासनारम्भके समय वह ७० वर्षका बूढ़ा था। वह नये कगानका ससुर भी था। मोचोके समय भागकर उसने चीनमें शरण ली थी। लोगोंने उसे बुलानेकी माग की। भागे हुए तुर्कों को ओर्दूस् प्रदेशमें बसाया गया था। अब चीनने हथियार छीनकर उन्हें ह्वाङ्गहो (वुहु हुइ) पार भेज दिया। हथियार बिना वह बेचारे न शिकार करके जीविका पैदा कर सकते थे, न आत्मरक्षा ही। जब उन्होंने विरोध प्रदर्शित करना चाहा, तो चीनी सैनिकोंने उनमेंमें बहुतोंको मार डाला। उनमेंसे कुछ मोगिल्यानके राज्यमें भाग जानेमें सफल हुए। मोगिल्यान (छोटे शाह) ने इस अत्याचारका बदला चीनमें लूट मार मचाकर लेना चाहा, लेकिन बूढ़े तोन्-यू-कुकने उसे समझाया “फसल इस साल अच्छी है। चीन महाबलशाली राज्य है। हमारे नये एकत्रित हुए ओर्दूको विश्रामकी अवश्यकता है।” वह मोगिल्यानको रोकनेमें सफल हुआ। मोगिल्यान (बुद्धके प्रधान शिष्य) नाम ही बतलाता है, कि नये कगान पर बौद्ध धर्मका बहुत प्रभाव था। शायद उसी कारण उसका स्वभाव इतना नरम था। कगानने कुछ दुर्गबद्ध नगर और बौद्ध विहार बनानेकी इच्छा प्रकट की, तो तोन्-यू-कुकने कहा—“नहीं, तुर्कों की जनसंख्या बहुत कम है, वह चीनकी जन-संख्याकी शतांश भी नहीं है। हम चीनके मुकाबिले जो अभी तक अपनेको दृढ़ साबित कर सके, उसका एक ही कारण है, कि हम सब घुमन्तू हैं, हम अपनी रसदको अपने साथ अपने पैरोपर ले जा सकते हैं, और हमारे सभी लोग युद्धकलामे निपुण हैं। जब हम अपनेमें क्षमता

देखते हैं, तो लूट मार मचाते हैं, जब नहीं देखते, तो ऐसी जगह भागकर छिप जाते हैं, जहाँ चीन हमें पकड़ नहीं सकता। यदि हम नगर बसाने लगे और जीवनके पुराने ढर्रको हमने बदल दिया, तो एक समय हम अपनेको बिलकुल पराधीन पायेगे। विशेष कर इन बौद्ध विहारों और मंदिरोंका मुख्य सार है आदमीके स्वभावको नरम बनाना। लेकिन मनुष्य जातिपर वही आधिपत्य कर सकता है, जो भयकर और लडाकू है।” तोन्-यू-कुके इस भाषणकी सारी तुर्क राजमना और स्वयं छोटे शाहने बहुत तारीफ की। तोन्-यू-कु तुर्कोंकी सनातन रीति—सैनिक जननयता और बर्बरता—का परम पक्षपाती था।

मोगिल्यान चाहे कितना ही शांति-प्रेमी हो, लेकिन वह उन तुर्कोंका कगान (राजा) था, जिनके खूनमें युद्धकी भावना बसी हुई थी। उनके कारण चीनको नींद हराम हो गई थी। ओर्दूसके चीनी महाआयुक्तकने ७२० ई० म सलाह दी, कि हमी नगरके नजदीक केरा नदी (चीला हो) के तटपर अवस्थित तुर्क ओर्दूपर आक्रमण किया जाय। इस अभियानमें पूरबके खिताई और घेई तथा पश्चिमके बसिमिर (पशिमी) ने भी सहयोग दिया। बसिमिर नजदीक थे, इसलिये वह पहले पहुँचे। उधर उहमचीसे ७५ मील पर पहुँच कर तुर्कोंने अपनी सेनाके एक भागको शहर पर अधिकार करनेके लिये भेजा और दूसरेको बसिमिर पर आक्रमण करनेके लिये। लेकिन परिणाम प्रतिकूल निकला। शत्रुके ओर्दूके नर-नारी बदी बने। उन्होंने ल्याङ्ग चौको भी लूटा। इस सफलतामें मोगिल्यान मो-चोके राज्यके बहुतसे भागको लौटानेमें सफल हुआ। उसने थाङ्ग दरबारमें दूत भेजा, कि मुझे सम्राट् अपना पुत्र स्वीकार करे तथा ग्याहके लिये एक राजकन्या दे। दरबारने पहली बात स्वीकार की, दूसरी बातका कोई जवाब नहीं दिया।

स्वेन्-चाङ्गकी भारत-यात्रा इससे प्रायः एक शताब्दी पहले हुई थी, जब कि खे-ली खकान (मृत्यु ६२८ ई०) पदच्युत हो चुका था और उसके साथ ही पूर्वी तुर्कोंकी शक्ति छिन्न-भिन्न हो गई थी। पश्चिमी तुर्कोंके सबध में कहते हुए हम स्वेन्-चाङ्गकी यात्राके बारेमें आगे लिखेंगे। स्वेन्-चाङ्गकी यात्राकी भूमिका चीनके एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और लेखकने लिखी थी। उसने ७५५ ई० में सलाह दी, कि तुर्कोंसे खबरदार रहनेके लिये सेना बढानी चाहिये और यह भी कि गुडुलुका स्वार्थहीन लडाकू ज्येष्ठ पुत्र, बुद्धिमान तोन-यू-कु और उदाराणय छोटा शाह, इन तीनोंकी गुट चीनके लिये बड़े खतराकी बीज हैं। ऐसे समय सम्राट् स्वेन्-चुङ्ग (७१३-५६ ई०) को थाई-शान् शिखरपर बलि-भूजाके लिये पूरवकी ओर जाना अच्छा नहीं है। दूसरे मन्त्रियोंने सलाह दी, कि प्रमुख तुर्क नेताओंको भी इस यात्रामें सम्मिलित करके उन्हें फसा लिया जाय, तो सब ठीक होगा। चीनी राजदूत उनके पास सदेश लेके गया। उसके साथ बातचीत करते छोटे शाह मोगिल्यान, उसकी खातून (रानी), ससुर, गुडुनू-पुत्र सब तम्बूमें बैठे थे। उन्होंने चीनको उलाहना देते हुए कहा शुरु किया—“चीनने उन दुष्ट तिब्बतियोंके साथ विवाह सबध किया है। घेई और खिताई एक समय तुर्कोंके आज्ञाकारी सेवक थे, उन्हें भी चीनी राजकुमारीयें से व्याह करने दिया जाता है। क्या बात है, कि बारबार प्रार्थना करने पर भी हमारे साथ व्याह सबध नहीं करने दिया जाता।” चीनी दूतने जवाब दिया—“खाकानने सम्राट्से पुत्र बननेकी प्रार्थना की थी। भला पिता और पुत्र कैसे एक दूसरेके परिवारमें शादी कर सकते हैं?” इसका उत्तर था “घेइयो और खिताइयोंके लिये भी तो यही बात है। फिर हम यह भी जानते हैं, कि व्याह में सम्राट्की अपनी पुत्रिया नहीं दी जाती।”

तुर्क एल (कबीले) का संगठन निम्न प्रकार था—



स्रोत-ग्रन्थ :

१ सोल्मजल्नो एकोनोमिचेस्किउ स्त्रोट ओखॉनो-येनिसेइविख् त्युरोक VI-VIII वेकोफ (अ बेर्नस्ताम्, लेनिनग्राद १९६४)

२ A Thousand years of Tatars (Parker)

३. Inscription de l'Orkhon recueillies par l' expedition Finnoise. 1890. S F O., Helsingfors 1892.

४ Dechiifrement des inscription de l' Orkhon et de l'lenissei Bull. de l' Acad. Royal des sciences et de lettre de Dannemark, No 3, Copenhagen, 18, pp. 285-299 (V. Thomsen)

५ पाम्यात्निक व् चेस्त् क्कुल्-तेगिना, जावाजो, XII, 2-4

६ Die Kokturkischen Grabins chriften aus dem Tale des Talas in Turkistan. Zf FFuVGKCsA, B1 II, Lief. 12, Budapest, 1926(J. Nemeth)

७ ब्रेङ्ने तुरत्स्किये नाद्गोबिया म् नाद्पिस्थामि बास्सेइना र तलस् (स० ये० मालोफ इ० अ० न० १९२९)

८ किर्गिजी (व० बर्तोल्द, फ्रुन्जे १९२७)

९ Histoire générale des Huns, des Turcs, des Mongoles et de Autre Tartares Occidentaux (J De. Guignes, Paris 1756-1758)

१०. Migration des Peuples et Particulièrement celles Touraniens (Ujfaly, Paris 1873)

अध्याय ५

पश्चिमी तुर्क (५८०-७०४ ई०)

पश्चिमी मध्य-एशिया (उत्तरापथ और दक्षिणापथ दोनों) का सीधा मवध पश्चिमी तुर्कोंसे रहा। दक्षिणापथमें शकोंकी शक्तिको खतम करनेवाले श्वेतहूण (हेफ्ताल) थे, जो अराल समुद्रके उत्तरसे आये थे। इन्होंने प्रायः एक शताब्दी तक पश्चिमी अरालसे नर्मदा तट तक शासन किया। मध्य-एशिया और अफगानिस्तानमें श्वेत-हूणोंकी शक्तिको तुर्कोंने खतम किया, तो भी भारतमें वह श्वेत-हूणोंके उत्तराधिकारी नहीं हो सके। इस्लाम (अरबों) से लोहा लेनेवाले यही पश्चिमी तुर्क थे। इन्होंने ईरानकी तरह जल्दी हथियार नहीं रख उनके छक्के ही नहीं छुड़ाये, बल्कि अरबोंके अधीन हो जाने पर इस्लाम धर्म स्वीकार करके वह फिर तुर्क शासकोंके रूपमें प्रकट हुए। महमूद गजनवी तुर्क था। भारतके प्रथम मुस्लिम राजवंश (गुलाम, खलजी और तुगलक) भी पश्चिमी तुर्क थे, इस प्रकार पश्चिमी तुर्कोंका महत्व मध्य-एशियाके ही नहीं भारतके इतिहासके लिये भी बहुत है। कगान पदके लिये शबोलियो और दालोब्यानका जो झगडा हुआ, उसमें दालोब्यानको एक स्थानीय कगानका पद देकर फुसलानेका प्रयत्न किया गया, पर दालोब्यानने पश्चिमी तुर्क साम्राज्यकी नींव डाली।

१ दालोब्यान (५८०-...ई०)

दालोब्यान निम्न-कुलीन माताका पुत्र होनेके कारण कगान निर्वाचित नहीं हो सका, यह बतला चुके हैं। वह अन्तमें उस प्रदेशमें चला गया, जहाँ पहले बू-सुन् रहा करते थे। वहाँ उमने एक राज्यकी नींव डाली, जिसे पश्चिमी तुर्कोंका साम्राज्य कहा जाता है। दालोब्यानके शासन-कालमें उसकी पश्चिमी या पश्चिमोत्तरी सीमा बल्काश सरोवर था। उत्तरमें अल्ताईके परेका रेगिस्तान सीमापर पड़ता था। हराशर (कराशर)से उत्तर-पश्चिम सात दिनके रास्तेपर कुल्जाके आसपास उसका दक्षिणी ओर्दू रहता था और उत्तरी ओर्दू आगे आठ दिनके रास्तेपर एमिलके पास था। काशगर उसके राज्यमें था और सभवतः चाच (आधुनिक ताशकन्द) का इलाका उसीका था। उसके अधीन तिङ-लिङ, करलोक, तुर्किस कबीले थे। हमीके उत्तर-पश्चिमके रेगिस्तानी तुर्क भी उसकी अधीनता स्वीकार करते थे। इनके अतिरिक्त कू-चा (तरिम-उपत्यका) के तुखार और चू, तलम आदिके उपत्यकाओंके सोगदी भी इसके राज्यमें थे। कूचा और सोगदीकी जातियोंको छोड़ बाकी सभी जातियाँ भाषामें थोड़े भेदके साथ रीति-रवाज और समाजमें तुर्कों जैसी थी।

तुर्क कगान—

१ दालोव्यान	५८० . ई०
२. नीली	
३. चुलो कगान	-६०५-१८ "
४ शोगुह	६१८-१० "
५ तुन् शेखू, तद्भ्रात	६१० "
६ क्युली, नन्पुन	
७ मि शेखू, तुलशेखू-पुत्र	
८ निशू दुलू	
९. शबोलो खलिश, तद्भ्रात	६३४-३८ "
१० इबी दुलू	—६४१ "
११. इबी शबोलो शेखू	६५१—
१२ अशिका शिन्	७०८ "
१३ शोगे	७०८-९ "
१४. सुलू	७१६-३८

कगानके नीचे जेङ्गू (यन्गू, मेखू, उप-कगान या उपराज) होता था। राजपुत्रोको "देरे" और "शाह"की उपाधियाँ भी दी जाती थी। बाकी उपाधियाँ उस समय प्रचलित पूर्वी तुर्कों जैसी ही थी। चूना खेऊ (शबोलियो कगानका भाई तथा प्रथम दूलन का बाप) दलोव्यानके विरुद्ध भेजा गया था। युद्धम दलोव्यान बन्दी बनाया गया।

२. नीली

प्रथम तुर्क कगान तू-मिन्का पुत्र इस्तिगी थोडे ही समय कगान रह सका था। उसका पुत्र यान्-मो दे-ले अब दालोव्यानकी जगह नीली नामसे पश्चिमी तुर्कोंका कगान बना। नीलीके समय पश्चिमी तुर्कोंकी अवस्थामें कोई भेद नहीं हुआ। उसके मरनेपर उसका पुत्र दामो (धर्म) कगान बना।

३ चुलो कगान' (६०५ ई०)

पहले इसका नाम दमन नेग्यू था, लेकिन कगान बननेपर चुलो खानके नामसे प्रसिद्ध हुआ। चुलो कगानके शासनारम्भके समय ही उसकी विधवा माँ (जो चीनी राजकुमारी थी) अपने देवरकी पत्नी बन उसके साथ चीन राजधानी छाङ्गान्मे रहने लगी। उस समय चुलो कगान अधिकतर इलि-उपत्यका में कुल्जाके आसपास रहता था। उसके कितने ही और उप-कगान या यन्गू थे, जैसे (१) चाच (ताशकन्द) का यन्गू हू (मोगद) लोगों पर शासन करता था। (२) दूसरा कूचामें रहता था। तुकू-हुन (पश्चिमी तुर्कों) पर सम्राट् यद्धती आक्रमण करना चाहता

^१ A Thousand Years of Tatars पृ० ३७५

था, जिसमें तिब्ब लिङ्ग सहायता देनेके लिये आये, किंतु चूलो तैयार नहीं हुआ। यही कारण था, जो याङ्गतीने ६०५ ई० में चूलोको परास्त करनेकी कोशिश की। तलसमें तुर्कोंकी भारी पराजय हुई। चूलो कगानने चीनकी अधीनता स्वीकार की और आगेका अपना जीवन चीनमें बिताया, जहाँ कोरियाके साथ चीनकी ओरसे लड़ते हुए मारा गया। उसकी अनुपस्थितिमें शे-गुइ (शे-क्वी) स्थानापन्न कगान था। शेगुइने यन्गू रहते चीनसे राजकन्या माँगी थी। कहते हैं, चीनने इस शर्तपर इसे स्वीकार किया, कि वह चूलोको दबाये। शेगुइने अचानक उस पर आक्रमण कर दिया और उसे अपने परिवारके साथ कराहोजाकी ओर भागना पड़ा। सेनापति जूमेनके साथ जो तीन लाख सेना भेजी गई थी, उसमें चूलोने भी शामिल होकर अच्छा काम किया। वही पूर्वी तुर्कोंके सिविर (सूबिली) कगानके भेजे हुए हत्यारे ने चूलोको मार डाला। चूलोके साथ चीन दरबारमें देरे दमो और होस्सना उप-कगान भी आये थे। इन दोनोंने भी कोरियामें चीनकी सैनिक सेवा की। सुई वंशके समाप्तिके बाद सेनापति कौ-सू द्वारा थाङ्ग-वंशकी स्थापनामें भी इन दोनोंका काफी हाथ था। देरे दमो ६३८ ई० में मरा, लेकिन होस्सनाको सनकी सम्राट् याङ्गतीने जाने नहीं दिया, इसलिये पश्चिमी तुर्कोंने शेगुइको अपना कगान चुना।

४ शे-गुइ (. . ६१८-१९ ई०)

शे-गुइ पश्चिमी तुर्कोंका पहला कगान था, जिसने साम्राज्यके विस्तारमें भारी काम किया। इसके समयमें राज्यकी उत्तरी सीमा अल्ताई-ताग और पश्चिमी सीमा कास्पियन समुद्रसे मिलने लगी। पूरबमें चीनकी महादीवारके पश्चिमी छोरपर अवस्थित प्रसिद्ध सीहाउ-घाटी तक उसका साम्राज्य फैल गया। पश्चिमकी सारी घुमन्तू जातियाँ उसकी अधीनता स्वीकार करती थी। शे-गुइका ओर्दू कूचासे उत्तर शायद कुल्जा प्रदेश की सन्मी पर्वतमालामें रहता था। वह अधिक समय तक राज नहीं कर पाया।

५ तुन्-शे-खू (६१९- . . ई०)

शे-गुइका छोटा भाई तथा पहले का एक महा-यन्गू अपने बड़े भाईकी जगह गद्दीपर बैठा। इसने पश्चिमी तुर्क-साम्राज्यके विस्तारमें अपने बड़े भाईसे भी ज्यादा काम किया। ६१९ ई० में सुइ-वंश खतम होकर थाङ्ग-वंशकी स्थापना हुई, जिससे यह कभी सुलह और कभी लड़ाई करता रहा। इसके बारेमें इतिहासकारोंने लिखा है, कि वह बड़ा बहादुर महान् सेनासंचालक था। इसका शिर बहुत लम्बा था। उसने उत्तरमें तिब्ब-लिङ्गोको अधीनता स्वीकार करनेके लिये मजबूर किया, पश्चिममें ईरानियोंको मार भगाया और श्वेत-हूणों (हेफ्तालो) के विस्तृत राज्यको लेकर अपने राज्यकी सीमा काबुल (अफगानिस्तान) तक पहुँचा दी। ईरानमें इसका समकालीन शाह खुसरो द्वितीय था, जो अवरोके कगानसे मेल करके पतनोन्मुख सासानी साम्राज्यकी रक्षाका जबर्दस्त प्रयत्न कर रहा था। ईरानके प्रतिद्वन्दी विजन्तीय (ग्रीको-रोमक) सम्राट् हेराक्लियस खजारोके शक्तिशाली कगानसे साठ-गाठ करके ईरानको परास्त करनेकी कोशिश कर रहा था। हूणोंके वंशज अबार और खजार उस वक्त बोल्गा और कास्पियनके पश्चिम तटके शक्तिशाली शासक थे। तुन्-शे-खूसे पहले ही ५८९-५९९ ई० में बलख और हिरातके कुषाण और श्वेत-हूण शासकों ने तुर्कोंकी अधीनता स्वीकार कर ली थी और वह तुर्कोंकी सहायतासे अर्मनियो और

ईरानियों पर आक्रमण करते थे। ६४२ ई० में ईरानका अरबोंके हाथों पतन अब नजदीक था। पहिले शेखू कुलजामे रहकर पश्चिमी प्रदेशका शासन करता था। पीछे उसने शी-कू (ताश कद) से ३०० मील उत्तर (तरस नदी पर) अपना केन्द्र बनाया। तुर्किस्तानके सारे राजा उसके अधीन थे। पश्चिमी तुर्कोंका इतना उत्कर्ष कभी नहीं हुआ। थाङ्ग वंशकी स्थापना होने पर उसने मसोपोतामिया (ताउ-ची) से शुतुरमुर्गका अडा मगवाकर चीनके पास भेटके रूपमें भेजा था, जैसा कि उससे ८०० साल पहले पार्थियोंने किया था। सम्राट्ने खेली खाकानके विरुद्ध उसकी सहायता चाही। तुन् शेखूने ६२२ ई० के जाडोमें सेना तैयार करनेका बचन दिया। खेलीने घबडाकर तुन्शेखूको अनुनय विनय करके तटस्थ रखा। पूर्वी तुर्कोंके कगान खेली और थाङ्ग-सम्राट् सुङ्गसे जिस वक्त घोर संघर्ष हो रहा था, उस समय तुन्शेखूका संबध चीनसे टूट गया था। ६२७ ई० में थाङ्ग-सुङ्गके अभिषेकका निमन्त्रण देनेके लिये आये चीनी दूतके साथ तुन्-शेखूका अधिकारी महाजिगिन सम्राट्के लिये १० हजार सुवर्ण मेखोसे जटित कटिबध और ५ हजार घोडे ले गया। खेली नहीं चाहता था, कि पश्चिमी तुर्क कगानका चीनी राजवंशसे विवाह-संबध हो। उसने रास्ता काट देनेकी धमकी दी।

स्वेन्-चाङ्ग^१ (६००-६४ ई०) — इस महान् पर्यटकने अपनी यात्रा ६२९ ई० में आरम्भ की थी और ६४५ ई० में १६ वर्ष बाद वह चीन लौटा। अपने यात्रा-विवरणका पहला मसौदा उसने ६४६ ई० में लिखा, ६४८ ई० में वह तैयार हुआ। संभवत इस सारे समयमें तुन्शेखू जीवित रहा। स्वेन्-चाङ्ग अपनी यात्रामें उसके राज्यसे गुजरा था। कराशर (अफ़िनी) में वह ६३० ई० के आसपास पहुँचा था। अभी वह चीनके हाथमें नहीं था और ६४३-४४ ई० में ही चीनका उसपर अधिकार हो सका। कराशरसे २०० ली दक्षिण-पश्चिम कूचा (कूची) का प्रसिद्ध नगर था, जो कि तुन्शेखूके राज्यमें था। स्वेन्-चाङ्ग लिखता है वहा गेहूँ, चावल, अगूर और अनार बहुत होते हैं। नास्पाती और ख़ूबानी भी काफी होती है। इस प्रदेशमें सोने, तांबे, लोहे, सीसे और रागेकी खाने हैं। कुछ परिवर्तनके साथ भारतीय (गुप्त-ब्राह्मी) लिपि यहा प्रचलित थी। कूचाके लोग वीणा, वेणु जैसे वाद्य-यन्त्रोंमें बड़े चतुर थे। उनके चोगे ऊनी कपडोंके होते थे। शिरपर वह पगड़ी बाधते थे। वहा सोने, चादी और तांबेके सिक्के चलते थे। कूचाके लोगोंने अपने बच्चोंके शिरको चिपटा करनेका रवाज था। स्वेन्-चाङ्गके समय कूचा प्रदेशके सौ बौद्ध बिहारोंमें ५ हजार सर्वास्तिवादी भिक्षु रहते थे, जो त्रिकोटि-परिशुद्ध मास खानेमें परहेज नहीं करते थे। तुन्शेखू शासित कूचाके बारे में बतलाते हुए स्वेन्-चाङ्गने लिखा है—“राजधानीके पश्चिमी द्वारके बाहर ९० फुट ऊंची दो खड़ी बुद्ध-मूर्तिया सड़ककी दोनों बगलमें अवस्थित हैं। यह इसी स्थानपर स्थापित हैं, जहा बौद्ध अपना पंचवर्षीय समागम करते हैं। यही पर भिक्षु और उपासक शरदके अंतमें महाप्रवारणा की वार्षिक सभा किया करते हैं। यह महाप्रवारणाका मेला दस दिनोतक रहता है, जबकि देशके सभी भागोंके भिक्षु उपस्थित होते हैं। जिस वक्त भिक्षु अपना सध-सन्निपात करते हैं, उसी वक्त राजा-प्रजा उत्सव मनाते हैं। इस समय वह काम नहीं करते, उपोसथ रखकर धर्मोपदेश श्रवण करते हैं। उत्सवके समय सभी बिहार अपनी अपनी बुद्ध-मूर्तियोंको मोती और

^१ वही पृ० ३७५

^२ On Yuan Chwang's Travel in India (Thomes Watters,)

रेशमी कमखाबसे सजाकर जलूस निकालते हैं। मूर्तियाँ रथोंपर रखी रहती हैं। पहले जो जलूस हजारसे शुरू होता है, वह मिलन स्थानपर पहुँच कर भारी मेलेमें बदल जाता है। इस मिलनस्थानसे उत्तर पश्चिम तथा नदीके दूसरी पार 'अद्भुत विहार' है। इस विहारमें कई विशाल शालाये और बहुत ही कलापूर्ण बुद्ध मूर्तियाँ हैं। यहाके भिक्षु विनय-नियमोंको बड़ी दृढताके साथ पालन करते तथा शिक्षा और बौद्धिक योग्यतामें बहुत बढ-चढकर होते हैं। इस विहारमें दूर-दूर देशोंके प्रसिद्ध विद्वान् आकर रहते हैं, जिनका राजा उसके अधिकारी तथा जनता बहुत स्वागत-सत्कार करते हैं।"

स्वेन्-चाङ्ग यहासे पामीर (चुङलिङ, पलाण्डुगिर) की ओर चला। वह लिखता है "पो-लू-का (अक्सू) से ३०० ली उत्तर-पश्चिम लिङ्शान् (हिमगिरि) है। यहाँसे चुङलिङ (पामीर) का उत्तरी भाग आरम्भ होता है। यहाँकी अधिकांश नदियाँ पूरबकी ओर बहती हैं। मार्ग खतरनाक है। बड़े जोरकी ठंडी हवा बहती है। ४०० ली जानेपर महासरोवर तप्तसागर (इस्सिकुल) मिला, जिसका घिरावा १००० ली है। यह पूरबसे पश्चिम लम्बा है और इसके चारों ओर पहाड़ खड़े हैं। सरोवरका पानी खारा है। इसमें मछलियाँ बहुत हैं।"

यहाँसे स्वेन्-चाङ्ग सभवत चू-नदी (शू-न्ते) की उपत्यकासे होकर आगे बढ़ा। ५०० ली उत्तर-पश्चिम जाने पर उसे शू-से नगर मिला (शू-से नगर ६७६ ई० से पहले नहीं था, जान पड़ता है, यात्राके सम्पादनके इसे पीछेसे जोड़ दिया)। यहाके निवासी अधिकांश भिन्न-भिन्न देशोंके व्यापारी थे। पैदावार गेहूँ, अगूर आदि होती है। वृक्ष कम और हवा सर्द है। लोगोंकी पोशाक ऊनी होती है। इससे पश्चिम दसियों नगरियाँ हैं, जिनके अपने-अपने राजा हैं, किंतु सभी तुर्कोंके आधीन हैं।

"शू-से (चू नदी) तट से कासन्ना देश तकके लोग सूली (सोग्दी) कहे जाते हैं। इनकी लिपिमें २० अक्षर होते हैं, और वह ऊपरसे नीचेकी ओर पढ़ी जाती है। इनके चोगे पट्टू या जमाऊ ऊनी कपड़ोंके होते हैं, जिसके भीतरकी ओर चमड़ा या कपास रहता है। (सोग्दी लोग) बाल कटाकर शिरके ऊपरी भागको नगाकर देते हैं, कोई कोई सारे बाल मुड़ा लेते हैं। अपने ललाटपर वह एक रेशमी पट्टी बाँधते हैं। कदमें लम्बे होते हैं, किंतु वह कायर, विस्वासघाती, धोखेबाज होते हैं। वह बड़े झगडालू बड़े लोभी होते हैं। लोभके पीछे पिता और पुत्र एक दूसरेको ठगनेकी कोशिश करते हैं।" धन ही यहाँ बढप्पनका चिह्न है, इनमें कुलीन और नीच-वशिकका कोई भेद नहीं। इन लोगोंने आधे व्यापारी और आधे खेतीपर गुजारा करते हैं। अत्यन्त धनी होनेपर भी वह बिल्कुल साधारण भोजन खाते तथा मोटे-झोटे कपड़े पहनते हैं।

वहाँसे ४०० ली पश्चिम जानेपर पिङ्ग-यू (बिङ्गुल) सरोवर मिला। यहाँ केवल दक्षिण की ओर हिम-पर्वतमाला (अलेक्-सान्दरगिरि) है, बाकी तरफ मैदानी भूमि है। वसतमें यहाँ तरह-तरहके फूल खिले हुए थे। "यहाँकी भूमि बड़ी उर्वर है, चारों तरफ वृक्ष ही वृक्ष दिखाई देते हैं। वसतके अंतिम भागमें यह स्थान, मालूम होता था, जैसे फूलोंका कसीदा काढा हुआ है। यहाँ १००० चरमें और पुष्करिणियाँ हैं, इसीलिए इसका नाम लिङ्ग-यू (सहस्रधारा) पड़ा।" तुर्कोंका खाकान गर्मी से बचनेके लिये हर साल गर्मियोंमें यहाँ आया करता था। घण्टी और छल्ला पहने पालतू हिरन कगानको बहुत प्रिय थे, जिनको मारनेवाले अपराधी को प्राणदण्ड मिलता था।

गद्दीपर बैठते ही तुन्शेखू अपना शासन-केन्द्र यहाँ लाया। स्वेन्-चाङ्ग उससे ६३१-३२ ई० में मिला था। मुलाकातके बारेमें चीनी पर्यटकोंने अपने यात्रा-वर्णनमें लिखा है—“शेहू-कगान

उस समय शिकारमें जा रहा था। उसके सैनिक मामान बहुत ही विशाल थे। कगान हरे शाटनका चोगा पहने हुए था। उसके बाल खुले हुए थे। उसके ललाटपर चारो ओर बँधी सफेद रेशमकी पट्टी पीछेकी ओर लटकी हुई थी। उसके २०० से अधिक अमात्य वहाँ उपस्थित थे। सबके ही चोगे कसीदेदार और बाल पट्टेदार थे। वह कगानके दाहिने बाये खड़े थे। बाकी सैनिक अनुचर सभूर, पट्टू या बारीक ऊनी कपड़े पहने हुए हाथोंमें भाले, ध्वजा और धनुष लिये ऊटो या घोड़ो पर सवार हो वह बहुत दूर तक फैले हुए थे। कगान चाइसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसे अपनी अनुपस्थितिमें—जो कि दो तीन दिन ही की थी—अपने शिविरमें रहनेको निमन्त्रित किया। उसने अपने हजुरी-मन्त्री हा-मी-सी-चीको स्वेन्-चाइकी सेवाका काम सौंपा। तीन दिन बाद खाकान लौटा और स्वेन्-चाइ उसके तम्बूमें ले जाया गया। विशाल तम्बूपर कढ़े सोनेके कमीदेको देखकर आँखें चकाचौंध हो जाती थी। दरबारी दोनो बगल दो लम्बी पातियोमें कालीनपर बैठे हुए थे। सबके चोगे बड़े सुन्दर कमखौबके थे। बाकी परिचारक पीछेकी ओर अपने काममें मुस्तैद खड़े थे। खाकान अपने तम्बूसे निकल ३० कदम आगे बढ़कर स्वेन्-चाइ से मिलने आया। (पर्यटक) लगातार प्रणाम करते हुए तम्बूके भीतर गया। चूकि तुर्क अग्निपूजक (जर्थुस्त्री या मानी धर्मी) थे, इसलिए काष्ठका आसन नहीं इस्तेमाल करते, क्योंकि काष्ठ अग्निका आधार है। उनकी जगह वह दोहरे कालीन या दरीको आसनके तौरपर इस्तेमाल करते हैं। लेकिन तीर्थटिकके लिये कगानने लोहेके ढाँचेवाले बेचपर कालीन बिछवा रक्खा था। उसने अपने लिये मद्य और सगीतकी आज्ञा दी और यात्रीके लिये द्राक्षारस मँगवाया। इसके बाद सभी परस्पर मद्य चपक भरने, आगे बढ़ाने और उडेलनेमें व्यस्त हो कोलाहल मचाने लगे। इसी समय भिन्न-भिन्न यंत्रोंके स्वरमें मिश्रित मगीत ध्वनि होने लगा। दूसरोके लिये भुना हुआ ढेरका ढेर गोमास और मेपमास परोसा जा रहा था, और यात्रीके सामने रोटी, दूध, मिश्री, मधु और अंगूर परोसे गये।” कगानकी भारतके प्रति अच्छी धारणा नहीं थी। उसने स्वेन्-चाइ को काले असम्य घृणास्पद लोगोंके देशमें जानेसे मना किया। उसकी सेनामें घोडसवार ही नहीं बल्कि हाथीसवार सैनिक भी थे।

कुछ इतिहासकारोंने शेह्र खानको तुली खानका सबधी बतलाया है, जिसकी मृत्यु ६३५ ई० में हुई थी, लेकिन शेह्र तुनशेखूका ही नाम मानूम होता है।

अन्तमें तुनशेखू भी प्रभुता पाकर बौराये बिना नहीं रहा, इसपर करलोक जैसे कितने ही धुमन्तू कबीले उसके विद्रोही हो गये। स्वयं उसके अपने चचा मो-खे-दूने ही उसे मार डाला।

६. क्यू-ली सि-बि खान^१

चचाको तुर्क ओर्दू कगान माननेके लिये तैयार नहीं हुआ और जिसको वह कगान बनाना चाहता था, वह काटोका ताज लेनेके लिये तैयार नहीं था, इसलिये तुनशेखूके पुत्रको कगान बनाया गया, जिसने कि समरकन्द में भागकर शरण ली थी। उसे बुलाकर क्यू-ली सि-बि-खान (अथवा इल्वी शापोरो चतुर्थ जेबगू खकान) के नामसे गद्दीपर बैठाया गया। फिर भी गृह-युद्ध नहीं सका।

^१ A Thousand years of Tatars p. 376

तिब्बतियों और तुर्किस्तानकी रियासतोंने विद्रोह किया। सेयेन्द्रा और तिब्ब लिङ्गो (ककालियो) से हार खानी पड़ी। इसीके समय किप्चक (अराल समुद्रमे उत्तरका प्रदेश), अफगानिस्तान तथा ईरानी इलाके पश्चिमी तुर्कोंके हाथसे निकल गये। निशूमोखे खान (शाद)? और तुनशेखूका पुत्र शिली देले (तेगिन्) कगोमे जाकर सि-बुका विरोध करने लगे, जिसमे उसके प्रतिद्वंद्वी सिशेखूको सफलता मिली और क्रोधी, क्रूर, हठी सि-बु खानको फिर समरकन्द भागना पडा।

७ सि शे-खू

सि शेखू तुन् शे-खूका पुत्र था। इसके समय तलसके सेयन्दोसे युद्ध हुआ। इसके घरू प्रतिद्वंद्वियोंकी कमी नहीं थी, जिनमे सेनि-शूके साथ जबर्दस्त सघर्ष हुआ। उसने कराशरकी हरितावलीमे जाकर पनाह ली थी, लेकिन अन्तमे उसीकी विजय हुई।

८ निशू दुलू-खान, ९ शबोलो खिलिश खान (६३४-३७ ई०)

निशू दुलू खानके राज्यशासन-कालका निश्चय नहीं है। ६३४ ई०के आसपास यह रहा होगा। इसका छोटा भाई तुन्-बो-शे उसके बाद (६३४-३८ ई० मे) शबोलो खिलिश खानके नामसे गद्दीपर बैठा। उसने अपने शासित प्रदेशमे कुछ शासन सबधी सुधार किये, और चू-नदीसे पूर्वमे पाच और पश्चिममे पाच—दस ऐमकोमे अपने राज्यको विभक्त किया। इसे ही “दस शे और दस वाण” कहते हैं। चीनी लेखकोंके अनुसार दुलू-खान जनप्रिय नहीं था, उसके शासनमे बहुत गड़बड़ी रही। पारस्परिक कलहके कारण अवस्था अनिश्चित थी। दुलू खानके अनंतर एकके बाद एक तीन कगान हुए।

१० इबी दुलू-खान (६४१ ई०)

इसे अराल समुद्रके पासके कगोसे कई लडाइया लडनी पड़ी, पर यह उनकी शक्तिको छिन्न-भिन्न करनेमे सफल हुआ। पराजित कग बहुत भारी सख्यामे दास बने। दास जगम संपत्ति थे। घरमे रखकर उनसे काम लिया जा सकता था, बाहर या घरके खरीदारोके हाथ उन्हे अच्छे दामोमे बेचा जा सकता था। दुलूने सभी दासोको अपने लिये रखना चाहा, जिससे उसका सेनापति निशू-चो नाराज हो गया और उसने अपना हिस्सा ले लिया। इसपर इबीने सबके सामने उसका शिर कटवाकर लोगोके देखनेके लिये टाग दिया। इबीका सारा समय भीतरी कलहमे बीता।

११. इबी शबोलो शे-खू (६५१- ई०)

शायद इसे ही खे-लू शबोलियो या अशिना खे-लू (शे-गुइ) कहते हैं। चीनकी सहायतासे यह खान बना था, इसलिये चीनकी हर एक मागको पूरा किये बिना कैसे रह सकता था? पहिले ही ६४६ ई० मे इसने कूचा, काशगर, खोतन, चू-जुई-बो और चुङ-लिङ्ग (पामीर) को चीनको दे दिया था। ६५१ ई० मे बाइ-सुन्-खू सहित दुली खानकी सारी भूमिको हस्तगत कर यह

बाकायदा शबोलो नाम से तुर्कोंका कगान बना। थाङ्क-सम्राट्की राज्यविस्तार लिप्सा कम नहीं हो रही थी। वह चाहता था, कि शबोलो एक छोटा सा सामन्त होकर रहे, लेकिन तुर्क अभी भी घुमन्तू थे, अतः सैनिक जीवनको छोड़ नहीं सकते थे। उनका कगान कितने दिनों तक दबता रहता? शबोलोका चीनसे सघर्ष छिड़ गया, जिसका परिणाम चीनके अनुकूल हुआ और कुछ समयके लिए तुर्कोंका राज्य चीनका प्रदेश बन गया। जो प्रदेश अवशिष्ट रहा, वह भी गरलोक (गेलोलू), खुबू और सुनिशी इन तीन वशोमे विभक्त हो गया।

१२ अशिना-शिन् (७०७ ई०)

यही तुमिन वशका अंतिम कगान था। यह मालूम ही है कि पश्चिमी और पूर्वी दोनों तुर्क राजवंशोका मूल कुल अशिना था। इस वशके कगानोंने इधर अपनेको बिल्कुल अयोग्य साबित किया था, इसलिये वश अन्तमे देर नहीं हो सकती थी। ७०८ ई० में कुलान (तर्ती स्टेशन) में अशिना-शिन् मारा गया और उसके प्रतिद्वंद्वी सोगेने तुर्गिस शाखा की स्थापना की।

१३ सोगे (७०८-७०९ ई०)

एक तरफ तुर्कोंकी शक्ति इस तरह क्षीण हो रही थी, दूसरी तरफ अरबोंकी शक्ति बढ़ती जा रही थी। कुछ ही समय पहले पश्चिमी तुर्कोंके राज्यमें सारा अफगानिस्तान और ईरानके कितने ही भाग सम्मिलित थे, जिनमें अब अरब घुस रहे थे। ६८६ ई० में बक्षु (आमू-दरिया) से उत्तर बढ़कर अरब सेनापति मूसा बिन-अब्दुला बिन-हाजिम्ने तिरमिजको अपना शासन-केंद्र बनाया, जहाँ ७०४ ई० तक वह सर्वेसर्वा रहा। ७०५ ई० में पामीरके पहाड़ोंसे आनेवाली सुर्खान नदीकी उपत्यका पर भी अरबोंका अधिकार हो गया। ७१२ ई० में उसके पासके प्रदेश शगानियानको ही अरबों ने नहीं ले लिया, बल्कि ख्वारेज़्मके प्राचीन देश पर भी इस्लामकी ध्वजा फहराने लगी। ७१२ ई० में समरकन्दपर तुर्गिस वशका अधिकार था, किंतु अगले साल सोगू देश छोड़कर वह चले गये। अरब सेनापति कुतैबने और आगे बढ़ उनके प्रदेश शाश (ताशकद) और फर्गाना पर आक्रमण किया। इसी साल बुखारामें उसने पहली मस्जिद बनवाई।

तुर्गिस् (त्युरगेम्) पूर्वी तुर्कोंका ही एक कबीला था, जो पहले दुलूके ओर्दू (उर्त) में शामिल था। इसकी चरभूमि चू और इली नदियोंके बीचमें थी—बड़ा कबीला सुयाबमें और छोटा इलीके किनारे रहता था। पहले इसका सरदार बू-चिन्-पुत्र था, जिसके अत्याचारोंसे तग आकर इन्होंने उसे छोड़ दिया। बूचिन्-पुत्र अपने पुत्र सोगाके साथ चीन दरबारमें चला गया। बीचमें कबीलेने अपना एक और सरदार बना लिया। इनके उत्तर-पूरबमें उत्तरी तुर्क, पश्चिममें दूसरे बहुतसे तुर्क-कबीले और उत्तरमें किर्गिज रहते थे। पश्चिमी प्रदेशका चीनी राज्यपाल उरूम्चीमें रहता था, सोगाने चीन दरबारमें रहकर अपनी शक्तिको बिल्कुल खो नहीं दिया था। उसने काश्गर प्रदेशको लौटा देनेके लिये कहा। चीन दरबार शायद इसे मान लेता, लेकिन तुर्गिसोके भाईबद ओचिर् कबीलेवालोंने चीनके युद्ध मंत्रीको १७०० तोला सोना रिश्वत देकर सोगाको काश्गरसे बर्चित करना चाहा। सोगाको जब यह भनक लगी, तो उसने ओचिर्के आदमीको मरवा दिया। सोगाने अशिना-शिन्को पराजित कर अब पश्चिमी तुर्कोंका स्थान लिया। लेकिन अधिक

दिनो तक शासन नहीं कर पाया, और अगले ही साल ७०६ ई० में पूर्वी कगान मो-चो द्वारा मारा गया, जिसमें उसके भाईका भी हाथ था।

१४ सुलू (७१६-३८ ई०)

इसे तुर्कोंका अंतिम तथा बहुत शक्तिशाली कगान कहना चाहिये। अरबोंने इसे अबू-मुजाहिम् (झगडेका बाबा) नाम दिया था। सुलूको अपनी शक्तिके अतिरिक्त एक और अच्छा मौका यह मिला था, कि ईरान और मध्य-एशियाके स्वामी अरब उत्तरी-दक्षिणी दो दलोंमें विभक्त होकर आपसमें लड़ने लगे थे। ७२४ ई० में बरूकानमें उनका घोर संघर्ष हुआ। उमैया वंश (६७३-७५८ ई०) की शक्ति पहले जैसी मजबूत नहीं थी। वह अपने अनुयायियोंको खुलकर लड़नेसे मना न कर सका। इतना अच्छा मौका सुलूको कब मिल सकता था? लेकिन उससे जितना फायदा उठाना चाहिये, उतना उसने नहीं उठाया।

सुलू जानता था, कि उसके पूरबमें चीनकी प्रबल शक्ति है और दक्षिणमें अरब कालको तरह बढ़ते चले आ रहे हैं। उसके पूर्वके भाईबघ मो-चो और बगू खानके नेतृत्वमें अपने पुराने प्रतिद्वंद्वी पश्चिमी तुर्कोंको फूटी आखो भी देखना नहीं चाहते। ऐसी अवस्थामें उसे बड़ी सावधानीसे कदम रखना था। उसने चीनके साथ मित्रताका हाथ बढ़ाया। सम्राट् स्वेन्-चुङ्ग (७१३-५६ ई०) ने प्रसन्न होकर उसे “चुङ्ग-सुङ्ग”की उपाधि (राजकुमारका पद) दे बू-चिन्की प्रपौत्रीको वधूके लिये भेजा। वधू चीन राजवंशका अभिमान रखती थी और साथ ही अपने पतिके बलका भी उसे कम गर्व नहीं था। उसने अपने एक अफसरके साथ हजार घोड़े दूसरी चीजोंसे बदलनेके लिये कूचाके वार्षिक मेलेमें भेजे। किसी बातमें बिगड़कर चीनी महाआयुक्तको “संबोधित करते समय अशिना स्त्रीने जो भाव दिखलाया” उसे वह बर्दाश्त नहीं कर सका। उसने अफसरको बहुतसे कोड़े लगावा राजकुमारीके घोड़ोको भूखे रखवाया। जब यह समाचार सुलूको मिला, तो वह अपनी सेना ले आ धमका और चतुरहट्ट नगर (शू-चेन्)—काश्गर, खोतन, कूचा और सू-ज्या (शायद कराशर)—में जो भी आदमी या वस्तु हाथ लगी, सबको लूटकर ले गया। ये चारों शहर पिछले कगान अशिना खेलने चीनको दे दिये थे। चीनमें इतनी ताकत नहीं थी, कि सुलूसे बदला लेता। सुलू अपने लोगमें बड़ा प्रिय था। उसे चीजोंका लोभ नहीं था। युद्धकी लूटमें जो कुछ मिलता, उसे ठीक तौरसे लोगोंमें बांट देता। जनतासे बहुत अच्छा संबंध होनेके कारण वह पूरी तौरसे उसकी सहायता करती थी। अरबोंके खतरेको समझता था। तिब्बतियों और पूर्वी तुर्कोंसे मिलकर उसने अरबोंके विरुद्ध समरकन्द पर आक्रमण किया। तिब्बत, पूर्वी तुर्क और चीनकी राजकुमारियोंसे उसने व्याह किया था। यह बड़ा महंगा सौदा था, क्योंकि तीन रनि-वासोंके ठाटबाटोका कायम रखनेके लिये बहुत धनकी आवश्यकता थी। सुलू कितने दिनो तक उदारता दिखलाता? उधर उसका एक हाथ भी बेकार हो गया था, जिससे युद्धमें पहले जैसी क्षमता नहीं रखता था। हूण जाति कमजोरोके लिये दया नहीं दिखलाती, इसलिये धीरे-धीरे वह अपनी जनप्रियता खोता गया। तो भी ७३० ई० में अभी उसका प्रताप सूर्य ढला नहीं था, जब कि उसका दूत चीन दरबारमें प्रथम स्थान पानेके लिये झगड पड़ा। दरबारने पूर्वी तुर्कोंके प्रतिनिधिको पूर्वी महलमें और तुर्गिस दूतको पश्चिमी महलमें स्थान दे कर झगडा निपटाया। पीत (तुर्क) और कृष्ण (किर्गिज) कबीलोंकी लड़ाईमें सुलू (७३८ ई० में) मारा गया।

उसके पुत्रों (१५) तुखो-सुन-गेचो और (१६) मोखे दगानके साथ तुर्गिस (अशिना) वंशकी ७६६ ई० में समाप्ति होगई।

७४२ ई० में फिर तुर्गिस् और किर्गिज ओर्दू उरुम्चीके क्षेत्रपके आधीन हो गये, तो भी कृष्णो (किर्गिजो) और पीतो (तुर्को) का झगडा रुका नहीं। चीन इस वक्त एक विशाल साम्राज्य था, जिसकी सीमा दक्षिणमें इन्दोचीन और पश्चिममें पामीर तक फैली हुई थी। लेकिन उसके सीमातोपर तिब्बत और शान (प्राचीन स्यामी) जैसी शक्तिशाली जातियाँ रहती थीं, जिन्होंने खास चीनकी शातिको खतरेमें डालकर उसे परेशान कर रक्खा था। ऐसी अवस्थामें चीन कहाँ तक अपने पश्चिमी सीमातकी जातियोंमें शांति स्थापित करनेका प्रयत्न करता ?

७८० ई० तक किर्गिजो और तुर्कोको पीछे छोड़कर कर्लोक आगे बढ़ गये और उन्होंने तुर्कोको अपने अधीन बना लिया। बूकिन् (सुलूक पूर्वज) के ओर्दूके अवशेषको उइगुरोने हजम कर लिया। उइगुर राज्यके छिन्न-भिन्न होनेपर बूकिन्के अवशेषोंने हराशरको दखल किया और थाङ्क-वंश को अंतिम समय (६०७ ई०) तक आराम नहीं लेने दिया।

(तुर्क जातियाँ) —

७६६ ई० में पश्चिमी तुर्काका स्थान कर्लोक और ७४७ ई० में पूर्वी तुर्काका स्थान उइगुरोने लिया, इस प्रकार ८वीं सदीके उत्तरार्धमें सारा तुर्क-साम्राज्य लुप्त हो गया। वैसे पश्चिमी तुर्क साम्राज्यकी स्वतंत्र सत्ता ७५७ ई० में ही खतम हो गई, जब कि उन्होंने चीनकी अधीनता स्वीकार कर ली।

बुक्कू, पुक्, तरङ्कल (तोलङ्को), तुङलो, बैकाल, गुसेर, अदिर, किबिर (चिपियू), कुक (चू), उगड (यूबी), सिबू, घेइ, खिताई कबीलो तुर्किसोसे सबंध रखते थे, जिनका अस्तित्व पीछे भी रहा। इनके बारेमें निम्न बातें मालूम हैं—

बुक्कू—यह सबसे उत्तरमें रहते थे। एक समय ये १० हजार सैनिक प्रस्तुत कर सकते थे। सामाजिक स्थितिमें बहुत पिछड़े हुए थे। पहले घेरीके अधीन रहे, फिर सेयेन्दाके, अन्तमें ७२५ ई० के करीब चीन राज्यमें मिल गये।

तरङ्कल—बुक्कूसे पश्चिममें रहते थे। इनके पास भी १० हजार जवान तैयार रहते थे। ६४८ ई० से पहिले ये चीन दरबारमें कभी नहीं आये थे।

थुङलो—सेयेन्दाके उत्तर पूरबमें रहते तथा १५००० भटोकी शक्ति रखते थे। पहले घेरीके आधीन थे, अन्तमें उइगुरोने इन्हें अपनेमें मिला लिया। तुला-उपत्यका इनकी विचरण भूमि थी।

बैकाल—इन्हीके नामपर साइबेरियाका प्रसिद्ध महासरोवर है, किंतु उस समय वह बुक्कूसे पूरब शायद अगारा नदीके आसपास रहते थे। इनकी ३०० मील लम्बी भूमिके बारेमें यह चमत्कार देखा जाता था, कि वहाँ लकड़ी दो वर्षमें पथरा जाती थी। इनकी भाषा दूसरे तिब्बलियोंसे बहुत कम अन्तर रखती थी।

गुसेर और अदिर तरङ्कलमें उत्तरमें रहते थे और किबिर तरङ्कलके दक्षिणमें। कुक

बैकालोसे १७० मील उत्तर-पूरबमें रहते बारहसिंगे पालते तथा कोई-सेवार खाते थे। इनके मकान लकड़ीके बे सूलसाल बनाये जाते थे।

उ-गइ कुकोसे १५ दिनके रास्तेपर पूरबमें रहते थे।

सिबू, घेई और खिताई इनसे और भी पूरब (आधुनिक मचूरिया) में रहते थे।

उपसंहार—

उत्तरापथके ऐतिहासिक रगमचपर किस तरह शक, हूण और चीन इन तीन जातियोंके सघर्ष द्वारा इतिहासने प्रगतिकी, इसे हमने इस भागमें बतलाया। जहाँ तक उत्तरापथ और सिङ्ग-कियाङ्का सबंध है, आरम्भमें वहाँ शक जाति रहती थी। उन्हींके वंशज यूची, तुखार, सइवङ्ग और बू-सुन् थे। कग, अलान या उनके पूर्वज सरमात और मसागेत सभी शक-वंशी थे। ई० पू० द्वितीय शताब्दीमें शकोकी भूमिपर हूण फैलने लगे और जैसे जैसे शताब्दिया बीतती गईं, उनके वंशजों—अवारो, जूजुनो और तुर्कों—के अनेक कबीले शक-वंशजोंका स्थान ले इस विशाल भूमिको तुर्क-भूमिमें परिणत करने लगे। तो भी अभी उसे शुद्ध तुर्क-भूमि नहीं कह सकते थे। तरिम-उपत्यका अब भी शकवंशी तुखारो और भारतीय उपनिवेशिकोंकी भूमि थी। इस समयके बहुतसे अभिलेख तकला मकानकी मरुभूमिमें मिले हैं, जिनसे पता लगता है, कि अभी वहाँ तुखारी, प्राकृत भाषा तथा भारतीय लिपिकी प्रधानता थी। शताब्दियोंसे चला आया बौद्ध धर्म अब भी प्रधानता रखता था, यद्यपि वहाँ आकर बसे सोगिंदियों तथा दूसरे व्यापारियोंमें नेस्तोरी ईसाई और मानीके जर्थुस्ती धर्मोंका भी प्रचार था। ये तीनों धर्म मतभेद रखते हुए भी आपसमें बड़े प्रेमसे रहते थे, इसे लेकाक और ओरेल स्टाइनकी खोजोंने सिद्ध कर दिया है। इस्लामी तलवारके सामने इन भिन्न-भिन्न धर्मवाले साधुओंने एक जगह प्राण दिये, और जब तरिम-उपत्यकाका छोड़ना अनिवार्य हो गया, तो वहाँके बौद्ध अपने साथ नेस्तोरी साधुओंको भी लिये लड़ाख पट्टेचे।

लेकिन यह काफी पीछेकी बात है। तरिम-उपत्यकाके नगरोंको पहिले तुर्कोंके आधीन रहना पडा। ६२२ ई० में वह तिब्बतके आधीन हो गये। काश्गर, खोतन, अक्सू तक तरिम-उपत्यकाके सारे ही अष्ट नगरों पर तिब्बतका शासन था। इस समय अक्सू और काश्गरसे नेपाल और कश्मीर तक तिब्बतकी विजयध्वजा फहरा रही थी। आज जो तरिम-उपत्यकामें मगोलायित मुख-मुद्राकी प्रधानता है, उसका आरम्भ इसी कालमें हुआ।

सप्तनद—जो किसी समय शको और उनकी सतानोंकी विचरण भूमि थी, अब पूरी तरह तुर्कोंके हाथमें चला आया था, यद्यपि वहाँकी जनतामें कृषि और व्यापारसे जीविका करनेवाले अब भी शको-सोगिंदियोंकी सताने थी। ७वीं शताब्दीके अन्त तक शक वहाँ वस्तुतः नामशेष हो गये थे। स्वेन्-चाङ्ग ७वीं शताब्दीके मध्यमें सप्तनद और चू-उपत्यकासे आमू-उपत्यका तक एक ही सोगदी भाषा और लिपिके प्रचारका उल्लेख करता है, जिसका यही अर्थ है, कि शक कोई अपना अलग अस्तित्व नहीं रखते थे। सप्तनदमें बौद्ध धर्म भी इस समय प्रचलित था और कुछ नेस्तोरी ईसाई भी रहे होंगे, किंतु जर्थुस्ती धर्म, उसमें भी मानी धर्मका प्रचार सबसे अधिक था। पश्चिमी तुर्क कगान भी अग्निपूजक थे। स्थिर-निवासवाले लोगोंमें शक-मिश्रित सोगद जातिही अधिक थी, किंतु तुर्कोंके घुमन्तू ओर्दू भी नगण्य नहीं थे, जोकि आगे चलकर इस भूमिको पूरी तौरसे मगोलायित बनाकर वहाँके लोगोंको आधुनिक कजाक और किर्गिज जातियोंमें परिणत करनेमें सफल हुए।

सप्तनदसे पश्चिमके उत्तरापथका भाग (पीछे किपचक भूमि) पहले मसागतो-सर मातोकी भूमि थी, जहाँ उनके वंशज कग और अलान रहते थे। आधुनिक पश्चिमी कजाक-स्तान (किपचक) भूमि भी हूणो तथा उनके वंशजों (अवारों और तुर्कों) के हाथमें चली गई। धीरे-धीरे वहाँके प्राचीन निवासी तुर्क जातियोंमें विलीन होने लगे। कग और अलान हूणों और तुर्कोंकी तरह ही घुमन्तू थे, इसलिये उनमेंसे कितने ही चोट खा कर अन्यत्र भागनेके लिये भी तैयार हो गये। किपचक-भूमि के निवासी तुर्कोंके साम्राज्यके अन्त होते समय बहुत कुछ मगोलायित हो गये थे। तुर्क यहाँ इतने प्रबल हो गये, कि पहले के चले हूणिक ओर्दू और पश्चिम भागनेके लिये मजबूर हुये। किपचककी पड़ोसी भूमिमें बुल्गार, अवार और खज़ार तीन हूण-जातियाँ रहती थी। खज़ारोंने कास्पियन समुद्रको अपना नाम दिया, जिसे मुसलमान लेखकोंने पीछे खज़ार समुद्रकी जगह खिज़िर समुद्र (बहीरा खिज़्र) बना दिया। बुल्गारोका नाम रूस की बड़ी नदी वोल्गासे जुड़ गया। प्रथम हूण लहर दन्यूब (डन्यूब) के किनारे ४थी सदी ही में पहुँच गई थी, जिसने सरमाती कबीलो (स्लावों) और गाथोंको कालासागर तटसे उत्तरकी ओर भागनेके लिये मजबूर किया। पीछे अवार भी अपने बवुओंके पास हुगरीमें जा पहुँचे।

इस प्रकार हम देखते हैं, कि ७वीं सदीके मध्यमें तुर्क-साम्राज्यके अन्त होते समय तक सारा ऐसियाई शक द्वीप (प्राचीन शकस्तान) तुर्क द्विपी या तुर्किस्तान बनने के लिये तैयार हो गया।

स्रोत-ग्रन्थ

1. A Thousand Years of Tatars (Parker)
2. Histoire générale des Huns, des Turcs , (J De-Guignes)
3. Altürkische Studien, IV S 310 (W Radloff)
4. Introduction à l' Histoire de l'Asie. Turcs et Mongols des origines à 1405 (L. Cahun, Paris 1896)
5. The Turks of Central Asia in History and at the Present Day (M Czaplicka, Oxford 1918)
6. Oughous-Name (Rıza Nour, Alexandrie, 1928)
7. Westturken, "Turcica" p 9 (V. Thomsen)
8. Manuscripts in türkisch 'runic' Script from Miran and Tunhuang, J RAS, 1912 January (Dr M A. Stein)
9. Documents sur les Tou-Kiue (Turcs) Occidentaux सबतओए, सपब, १९०३
10. A Study on the titles Kaghan and Katun (Shiratori Kurakichi, Memoirs of the research department, Tokyo 1926,)

भाग ४

दक्षिणापथ (५५०ई० पू०—६७३ ई०)

अध्याय १

अखमनी (ई० पू० ५५०-३२६)

ई० पू० छठी शताब्दीमें हम मध्य-एशियाके दक्षिणापथ (हिंदुकुश पर्वतमालासे सिर-दरिया तथा पामीरसे कास्पियन समुद्र तकके भूभाग) के ऐतिहासिक कालमें आ जाते हैं, यद्यपि इसका यह अर्थ नहीं कि हमें उस समयकी ऐतिहासिक सामग्री काफी परिमाणमें मिलती है। इतना अवश्य है, कि जहाँ हम भारतके इतिहासपर प्रकाश डालनेवाले शिलालेख को ई० पू० ३री शताब्दी में अशोककी धर्मलिपियोंके रूपमें पाते हैं, वहाँ मध्य-एशिया के दक्षिणापथका प्रथम स्मरण बुद्धके समकालीन दारयवहुके शिलालेखोंमें मिलता है। इस प्रकार यद्यपि जनश्रुति तथा समय-समयपर परिवर्तित परिबर्धित ग्रंथोंके आधारपर भारतके इतिहासको और पहिले ले जा सकते हैं, किंतु उसकी ठीक पुरातात्त्विक सामग्री ई० पू० तृतीय शताब्दी से ही निश्चित रूपसे मिलने लगती है, जबकि यहाँ उससे ढाई शताब्दी पूर्वके दक्षिणापथसे सबंध रखनेवाले अभिलेख मिलते हैं। दक्षिणापथ भारतकी तरह ही बराबर बाहरसे आनेवाले जातियोंका रणक्षेत्र और क्रीडाक्षेत्र रहा है। दोनोंमें फर्क इतना ही है, कि जहाँ भारतमें पुरानी सस्कृतिया तहपर तह जमनेके बाद भी ऐसी स्थितिमें पड़ी है, कि उनको पहचाना जा सकता, वहाँ मध्य-एशियाके इस भागमें सस्कृतियाँ इतनी मिल-जुल गई हैं, कि उनका अलग-अलग परिचय मिलना मुश्किल है। और स्पष्ट करते हुए कहना पड़ेगा, भारतमें पिछले ५००० वर्षों की सस्कृतिया, तिल-तडुलकी तरह मिली-जुली मौजूद है, जब कि मध्य-एशिया में वह नीर-क्षीरकी तरह घुल-मिल गई। जातियोंका सम्मिश्रण भी वहाँ इसी तरह हुआ।

धातुयुगके आरम्भसे हम देखते हैं: पहले सिर और वक्षु (आमू) दरिया के द्वाबामें भूमध्यीय जातिका आर्योंके साथ समागम हुआ। दोनों जातियोंकी सस्कृतियाँ मिल गईं, पीछे उस समयकी भूमध्यीय जाति और उसकी सस्कृतिका वहाँ पता मुश्किलसे मिलता है। आर्योंने दो सहस्राब्दियों तक वहाँ अपनी प्रधानता रक्खी। आखामनी कालमें जिस सोगद जातिकी यहाँ प्रधानता थी, वह ईरानी आर्योंकी ही एक शाखा थी। आगे ग्रीक और शक आये, किंतु अब पुरानी ईरानी जातिने अपने अस्तित्वको खो नहीं दिया, बल्कि इन दोनों हिन्दू-यूरोपीय जातियोंको वह अपनेमें हजम कर गई। ईसाकी ५वी-६वी शताब्दीमें हूण वंशज तुर्क आये। उन्होंने अपने मंगोलायित रक्तको देकर वंश-परिवर्तन करना शुरू किया, जो समयके साथ बढ़ता ही गया। यद्यपि द्वाबेकी तुर्क जातिने ईरानी सस्कृतिको स्वीकार किया, किंतु उसने साथ ही स्थायी तौरसे लोगोकी मुख-मुद्राको बदलना भी शुरू किया। तुर्कोंके दो शताब्दी बाद इस्लाम आया। उसने प्रयत्न किया, कि पुरानी सस्कृतिका चिह्न भी न रह जाये। हाँ, तुर्कोंके साथ उसने यह समझौता अवश्य किया, कि राजनीतिक शक्ति वह अपने हाथमें रख सकते हैं। आज मध्य-एशियामें इस्लामिक सस्कृति और मंगोलायित जाति ही देखनेमें आती है। पुराने अवशेषोंको ढूँढ़नेके लिये धरातलके भीतर

घुसनेकी अवश्यता है। साम्यवादी होनेसे पहले मध्य-ऐशियाकी सभी तुर्क-जातिया (तुर्कमान, उज्बेक, किरगिज, कजाक) प्राग्-इस्लामिक जगतसे अगर कोई अपना सबंध स्वीकृत करती थी, तो वह था तुर्की खून। सोवियतकालमें बड़े व्यापक परिमाणमें मध्य-ऐशियामें पुरातात्विक अनुसंधान हुए हैं। इसके कारण प्राग्-इस्लामिक कालके पुराने नगर, हस्तलेख तथा कलाके नमूने प्राप्त हुए हैं। अब वहाँकी जातिया अपने सारे लंबे इतिहासके लिये अभिमान करती हैं।

यहाँ ई० पू० छठी शताब्दीमें पड़ोसी जातियोंके सांस्कृतिक विकासपर एक दृष्टि डाल लेना अच्छा होगा। भारत और ईरानमें आर्योंकी दो शाखायें करीब-करीब एक ही समय (ई० पू० २री सहस्राब्दीके मध्यमें) पहुँची थी। घुमन्तू होते हुए भी कृषिका थोड़ा सा ज्ञान उनके पास था। भारतमें सिंधु-उपत्यकाकी पुरानी सस्कृति के घनिष्ठ सपर्क में आकर आर्योंका सांस्कृतिक विकास तेजीसे हुआ। १२०० ई० पू० के आसपास की सप्त सिंधु उपत्यकाओं (पंजाब) में पहुँचकर एक समृद्ध जातिके रूपमें परिणत होते हुए उसने अपने जनयुगके अवशेषोंको छोड़कर सामन्त युगमें प्रवेश किया, गणतन्त्रकी जगह राजतन्त्रको अपना लिया। इसी समय राजा दिवोदास और सुदासके समयमें वेदोंके प्राचीनतम ऋषियों (भरद्वाज, वसिष्ठ, विश्वामित्र,) ने वेदकी ऋचायें रचीं। आगे विकास होते-होते ई० पू० ७वीं-८वीं शताब्दीमें हम प्राचीन उपनिषद्के तत्त्वज्ञानियों (प्रवाहण, यज्ञवल्क्य आदि) को होते पाते हैं। इतने समयमें भारतीय आर्य प्राकृतिक शक्तियों तथा मृतपितरोंको देवता मानकर पूजनेकी अवस्थासे सर्वतयारीमें एक ब्रह्मकी ओर बढ़ते हैं, उसीके अनुसार गणोंकी बहुतन्त्रतासे वह राजाकी एक-तन्त्रताको भी स्वीकार करते हैं—वस्तुतः बाहरके राजनीतिक परिवर्तनका ही प्रतिबिम्ब हम उनके धर्म और दर्शनमें पाते हैं।

कुरव^१ (कौरोश)ने जिस समय (ई० पू० ५५० ई० में) गद्दीपर बैठकर ससारके सर्वप्रथम महान् साम्राज्यकी स्थापना की, उस समय १३ वर्षके सिद्धार्थ गौतम (बुद्ध) शाक्योंके गणमें वाल्य बिता रहे थे। उस समय वर्तमान उत्तर-प्रदेश और बिहारकी सीमाओं और पंजाबमें गणराज्योंकी प्रधानता थी। मध्य-ऐशियाके द्वाबोंमें किस तरहका शासन था, इसके बारेमें इतना ही कह सकते हैं, कि कुरवके शासन-कालमें वह बहुत कुछ राजतन्त्रके प्रभावमें था। हो सकता है, तत्कालीन शकोंकी अथवा भारतीय गणोंकी भाँति वहाँ भी गण-शासन रहा हो। अगली दो शताब्दियोंमें मध्य-ऐशियाका जो इतिहास हमें मिलता है, वह अखामनी इतिहासके एक अंगके तौरपर ही। मध्य-ऐशियाई और ईरानी जातिके रूपमें उत्तरके विशाल शकद्वीपके मुकाबले हम भूमिको आर्यद्वीप कह सकते हैं। अवस्थामें आर्योंकी प्रथम भूमिको ऐरयानम्वैजा कहा गया है। इसके बारेमें ऐतिहासिकों के भिन्न-भिन्न मत हैं। कोई उसे वक्षु और यक्ष्मर्तके बीचकी भूमि मानते हैं, कितने ही पामीरको और कुछ ख्वारेज्मको ही ऐरयानम्वैजा कहते हैं। ईरानमें जो आर्योंकी शाखा गई थी, भारतकी तरह धीरे-धीरे उसके कई जन हो गये, जिनके नामपर उनके अनेक जनपद बने। मद्र या मिद जाति काकेशसके पहाड़ोंसे दक्षिणकी ओर गई पर्वत श्रेणियोंमें बसी, जिससे उसका नाम मिदिया पड़ा। इस जातिका सीधा सबंध ववेह (बाबुल) की सस्कृति और

^१ Histoire Ancienne (G. Maspero) pp. 649-95), इस्तोरिया द्रेव्नेओ बोस्तोका (व० व० स्त्रूवे, लेनिन ग्राद १९४१) पृ० ३६८-७५

साम्राज्यमें हुआ, जिसके कारण ईरानी आर्यों को जन-अवस्थासे सामन्तवादी अवस्थाकी ओर बढ़नेका अवसर मिला। अभी भी यह जाति पहाड़ी लडाकुओकी थी। अपनी बिखरी हुई स्थितिमें यद्यपि उसने बबेरुके जुयेको मान लिया, किंतु धीरे-धीरे उसे पता लगने लगा, कि जब तक भिन्न-भिन्न जनोमें विभक्त भद्र लोग एक सूत्रमें सबद्ध नहीं हों जाने, तब तक हम स्वतंत्र नहीं हो सकते। अपनी एकताका परिचय उन्होंने ७८८ ई० पू० में बबेरु की राजधानी निनवेको पराजित करके दिया। इसी समय मद्र-राज्यकी स्थापना हुई। ७०८ ई० पू० में मिदिया और भी एकताबद्ध हो गई और जब कि फरवर्न-पुत्र देऽशोक (देवक) मिदियाका राजा हुआ। उसने अपनी जाति को बबेरुओ से बिलकुल स्वतंत्र ही नहीं कर लिया, बल्कि सभी ईरानी जनो को मिलाकर एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना करने में सफलता पाई। देवकने अखवतन (वर्तमान हमदान) मिदियाकी राजधानी को विशाल प्रामादों और सुदृढ़ दुर्ग से सुसज्जित कर निनवे का प्रतिद्वन्दी बना दिया। देवक का शासन सोगद (आमू और मिरदरिया के द्वाबे) तक था, इसका कोई प्रमाण नहीं है। ६५५ ई० पू० में उसके मरने के बाद फरवर्न उसका उत्तराधिकारी हुआ। मिदिया का राज्य ५५० ई० पू० तक कायम रहा, लेकिन आगे उसने कोई विशेष प्रगति नहीं की। इसी मिदियाका स्थान अखामनी (अखामनशी) वंश ने लिया।

१. कुरव (५५०-५२९ ई० पू०)

अखामन दक्षिणी ईरान (पारम) के कबीलोमेंसे एक का मुखिया था, जिसके कारण उसका जन अखामनी या अखामनशी कहा जाने लगा। इसीकी ७वीं या ८वीं पीढ़ी में कुरव पैदा हुआ। कुरव पिता की ओर से पारसीक था, किंतु माता की ओर से मद्रों का खून उसकी नसों में बह रहा था। देवक के उत्तराधिकारी धीरे-धीरे विलासप्रिय होकर कमजोर होते गये। कुरव को अच्छा मौका मिला और उसने अंतिम मद्र राजा को हराकर ५५० ई० पू० में अपने को सारे मिदिया का राजा घोषित किया। इससे पहले कुरव अनशन का शासक था। यद्यपि अब मद्रों के स्थान पर पारसीको की प्रधानता हो गई, किंतु कुरवने मद्रकुल को नीचे करना नहीं चाहा। कुरवके विशाल साम्राज्य में शासक जाति के तौर पर पारसीको और मद्रों दोनों का स्थान था—मद्र पारसीको से कुछ ही कम समझे जाते थे, दूसरी जातियों के मामले मद्रों और पारसीको में कोई अंतर नहीं था। कुरवने अखवतन को ही अपनी राजधानी रखा। मिदिया के राज्य को हस्तगत करके कुरवने सतोपन कर ५४६ ई० में लिदिया (क्षुद्र-एसिया) को जीत अपनी पश्चिमी सीमा भूमध्यसागर तक पहुँचा दी। लिदिया बहुत ही समृद्ध देश था। वहाँ पर रहनेवाली जाति ईरानियों से कुछ समानता रखती थी। उसके मिल जाने पर कुरवकी शक्ति और बढ़ गई और उसने बबेरु पर हाथ फेरना चाहा। वह जानता था, कि बबेरु का जीतना उतना आसान नहीं होगा, इसलिये उसने बड़ी तैयारी के साथ आक्रमण का श्रीगणेश किया और तिक्रा तथा हुफात की विशाल नदियों के वणिकपथ को छेक दिया। सघर्ष जबर्दस्त हुआ, लेकिन ५३८ ई० पू० में कुरवने बबेरु पर पूर्ण विजय प्राप्त की। कुरव और दारयबहु दोनों महान् विजेतों की नीति थी, कि हर एक विजित जाति की सहानुभूति प्राप्त करने के लिये उसके धर्म, रीति-रिवाज, संस्कृति को छेडा न जाय। यही नहीं, बल्कि कुरव अहुरमज्द का परमभक्त था, पर बबेरु जीतने के बाद वह वहाँ के देवता मर्दुक का भी पूजा सम्मान किये बिना नहीं रहा। उसके अभिलेख में लिखा

है^१—“देवातिदेव मर्दुक ने मुझे यह राज्य प्रदान किया।” अपने दिग्विजय के बारे में वह लिखता है “मैं कुरव विश्वराज, बृहत् राज, महाराज, ववेरु, शुमेर, अक्कदका राजा, चतुर्दिशाओ का राजा हूँ। जब मैं शांति-पूर्वक ववेरु नगरी में पहुँचा, तो . वहाँ के राज्य-निवास पर अधिकार किया। उस समय महान् प्रभु मर्दुक ने मेरे हाथ में बवेरु निवासियों को समर्पित कर दिया।” बवेरु जीतने के बाद कुरव का अगला कदम मिस्स (मुद्रिक) था। फिर उसने पूरब में अपनी सीमा बढ़ाते हुये सिधु तट तक पहुँचायी। इसी समय सबसे पहले सप्तसिधु (हफ्त-हिद्) का उल्लेख मिलता है। अब नील और भूमध्यसागर से सिधु-तट तक कुरवका साम्राज्य विस्तृत हो चुका था, इसी समय सोग्द भी उसके हाथ में आ गया, लेकिन दन्यूब (दुनाई) से लेकर ह्वाङ्गहो तक फैले उत्तर के घुमन्तू पशुपाल शक कुरवका रोब मानने के लिये तैयार नहीं थे। वह पशुपालन के साथ साथ पड़ोसी बस्तियों की लूट-पाट करना अपना अधिकार समझते थे। कुरवको शको से लड़ने के लिये मजबूर होना पड़ा, और इसी लड़ाई में महान् विजेता को अपना प्राण देना पड़ा। काकेशस के उत्तर के शकोसे भी छेड़छाड़ होती रही। काकेशस पर्वतमाला जहाँ कास्पियन समुद्र के अति नजदीक पहुँच जाती है, उस जगह दरबद (द्वारबध) को दुर्गबद्ध करना पड़ा था, किंतु मुख्य सघर्ष अराल समुद्र से कास्पियन समुद्र तक के घुमन्तू मसागेत (महाशक) जातिसे हुआ। इसमें पहले ही कुरवने एक्सर्त तट पर कुरेखत नगर और दुर्ग बसाया। शको के राजा अर्मोग ने जबर्दस्त मुकाबला किया, लेकिन अंत में वह मारा गया। उसकी रानी ने अधीनता नहीं स्वीकार की। शको में स्त्रियोंका स्थान उतना नीचा नहीं था, यह हम कह आये हैं। शकरानीने हथियार नहीं रखा। ५२६ ई० में कुरवने मसागेत की रानी तोमुरी से व्याह करने की मांग की। उसने बनावटी स्वीकृति देदी। कुरव एक्सर्तकी ओर बढ़ा। सघर्ष आरंभ हुआ। रानीका लड़का बंदी बनाया गया, जिसे किसीकी असावधानी के कारण मार डाला गया। इसपर उसकी मा तोमुरीने अपने सारे कबीले के योद्धाओ को जमा कर कुरवकी सेना पर आक्रमण कर दिया। माँ बेटेका बदला लेनेके लिये तुली हुई थी, उसने अंत तक लड़ने का निश्चय कर लिया था। शको और हूणों की एक पुरानी युद्ध नीति थी, हार का बहाना करके भाग पड़ना और जब दुश्मन असावधानी के साथ पीछा करे, तो चुनी हुई सेना के साथ उसपर आक्रमण कर देना। तोमुरी की सेना ने ऐसा ही किया। ईरानी सेना ने पीछा किया और मसागेतो के हाथों बुरी तरह पराजित हुई। कुरव मारा गया।^२ रानी ने उसकी लाश को खूजवाया, लेकिन ईरानी सेना उसे पहले ही हटा चुकी थी।

इस प्रकार मिस्स और भारत तक विजय-पताका फहरानेवाले कुरव का अन्त हम मध्य-एशिया की इसी भूमि में होते देखते हैं। तो भी इसमें शक नहीं, कि ख्वारेज्म और कास्पियन तट के शक घुमन्तूओ को छोड़कर बाकी प्रदेश के निवासी सोग्दियों पर कुरव की विजय ने स्थायी प्रभाव डाला। वह उसी नागरिक सस्कृति में आगे बढ़े और उसी कला-कौशल की वहाँ दृढ़ नींव पड़ी, जो महान् कुरवके विशाल साम्राज्य की देन थी। इस प्रभाव को पीछे तुर्क और अरब विजेता भी मिटा नहीं सके।

^१ इस्तोरिया देबूनओ बोस्तोका पृ० ३७१

^२ Historic Ancienne (G. Maspero) p 672)

२ दारयबहु (५२९-४८५ ई० पू०)

कुरव का पुत्र कम्बुज (५२६-२१ ई० पू०) उसके विशाल साम्राज्य का उत्तराधिकारी हुआ। मिस्र में विद्रोह हो गया, जिसको दबाकर उसने फिर से मिस्र-विजय किया। उसने अपने पिता के विजयफल को कायम रखने का प्रयत्न किया। उसके मरने के बाद विरोधी शक्तियों ने जोर पकड़ा। मद्र अपने पुराने जमाने को भूलें नहीं थे। उनके जातीय-धर्म के पुरोहित मग पसद नहीं करते थे, कि उनका शाहशाह दूसरी जातियों के धर्मों का सम्मान करे, और उनके देवताओं को अहुर-मज्द के तरावर माने। सबसे जबर्दस्त विरोध मद्रों की ओर से हुआ। उनका नेता गौमाता छ महीने तक कुरव के सिंहासन का स्वामी रहा। अखामनी खानदान के भी कितने ही राजकुमार झगड़ रहे थे, लेकिन अंत में सफलता हुर्कनिया के क्षत्रप तथा विस्तास्प के पुत्र दारयबहु को मिली। १० रगयादिम (मार्च-अप्रैल) ५२१ ई० पू० में अखबतन के सिंखावती राजप्रासाद के भीतर उसने गौमाता को मारा। दारयबहु ने अपने बहिस्तून के शिलालेख में इसी घटना की ओर इशारा करते हुये लिखा है।

“अहुरमज्द ने मुझे शाह बनाया। हमारे वश के हाथ से राज निकल गया था। मैंने लौटाकर उसे जैसा पहलें था, वैसा स्थापित कर दिया। मगो द्वारा ध्वस्त पूजा-स्थानों को मैंने पुनः स्थापित किया। गौमाता द्वारा उत्पीड़ित जनता . . को मैंने पूर्ववत् बनाया। उन्हें उसी पहली परिस्थिति में लौटाया, जिसमें कि वह पारस में थी, जिसमें मिदिया में थी, जो मेरे दूसरे देशों में थी। . . मैंने अहुरमज्द की इच्छापर चलने का इस तरह प्रयत्न किया, मानो गौमाता ने हमारे कुल को ध्वस्त ही नहीं किया हो।”

गौमाता के अतिरिक्त उसे और भी कितने ही प्रादेशिक क्षत्रपों से लड़ना पड़ा। मिदिया और अरमेनिया शामक फावार्तम ने क्षत्रिय उपाधि धारण कर अपने को राजा घोषित किया। मरगिया (मर्ग या मेर्व) का फ्राद स्वतंत्र शासक बन गया। हुर्कनिया में भी स्वतंत्र शासन घोषित किया गया था। दारयबहु के पिता विस्तास्प ने जुलाई ५१६ ई० पू० में हुर्कनिया को अपने पुत्र की ओर से जीता। उसने अगले नाल दारयबहु के क्षत्रप दादर्शिश (जो कि बाख्तरी का क्षत्रप था) ने फ्राद को परास्त कर मर्गपर अधिकार किया। ५१२ ई० पू० तक दारयबहु के साम्राज्य की सीमा थी—उत्तर में कालासागर, काकेशस, कास्पियन और चीन की सीमा तक फैला शक प्रदेश, पूर्व में हप्त-हिद्द (संत-मिधु), पश्चिम में भूमध्यसागर और मिस्र की पश्चिमी सीमा, दक्षिण में अरब और अफ्रीका का सहारा।

एसिया और अफ्रीका में अपने राज्य का विस्तार करके दारयबहु को यूरोप में ग्रीस की ओर ध्यान देने की लिये मजबूर होना पड़ा। शायद उसे डर ध्यान देने की आवश्यकता न पड़ती किंतु यूनानी राजनीति इसके लिये मजबूर कर रही थी। एसिया के तटपर बसे यूनानी उपनिवेश ईरान के अधीन थे। आपसी झगड़ों के कारण अथेंस गणराज्य के भगोड़े इन बस्तियों में आकर शरण लेते थे। ईरान को उनके कारण एकका समर्थन करना था। उधर ईरानियों के विरोधी एसिया से भागे यूनानियों की अथेंस में पीठ ठोकी जा रही थी। ईरानी क्षत्रप इसे यूनान के क्षुद्र गणराज्य की भारी गुस्ताखी और अपमान समझता था। वस्तुतः यूनान के साथ युद्ध की जिम्मेवारी शाह-शाह की अपेक्षा उसके क्षत्रप पर अधिक थी। दारयबहु थ्रेस (यूरोप) को अवश्य अपने हाथ में

करना चाहता था। उसने थ्रेस पर आक्रमण किया। थ्रेसकी रक्षा के लिये उत्तर के लडाकू शको को दबाना आवश्यक था, जिसके लिये वह उनकी ओर बढ़ा। ५०८ ई० पू० में उसने दन्यूब नदी को पार कर शको के इलाके पर आक्रमण किया। ईरान की भारी सेना का वह डटकर मुकाबला नहीं कर सकते थे, इसलिये अपनी जिन चीजों को वह साथ नहीं ले जा सकते थे, उन्हें फूक-जलाकर भीतर की ओर भागते गये। दारयबहु को इन भागते शको के ऊपर आक्रमण करके कोई लाभ नहीं हुआ। यह वही प्रदेश है, जिसे बहुत पीछे रूस कहा जाने लगा। घर-फूक युद्ध नीति रूसियों ने अपने पूर्वज इन्हीं शको से सीखी। रूस की दुर्दम्य प्रकृति ने दारयोश के विजय को ही पराजय में नहीं परिणत कर दिया, बल्कि उसीने नवे चार्ल्स तथा नेपोलियन के विजय को भी घोर पराजय में परिणत किया। हिटलर की पराजय का आरम्भ भी उसी भूमि में हुआ, यद्यपि उसमें केवल-घर-फूक नीति ही नहीं, बल्कि रूसियों की अद्वितीय वीरता और युद्ध-कौशल का भी हाथ था। ५०६ ई० पू० में थ्रेस और मकदूनिया दारयबहु के करद राज्य थे।^१

जैसा कि पहले बतलाया, यूनानियों की छेड़-छाड़ के कारण दारयबहु को उनकी ओर ध्यान देना पड़ा। पहले ईरान को कुछ सफलता मिली। ४९४ ई० पू० में लेदके सामुद्रिक युद्ध में यूनानी बुरी तरह से हारे। एशिया तट के यूनानी उपनिवेशों ने जो विद्रोह किया था, उसे भी दबा दिया गया। लेकिन मुख्य ग्रीस भूमि अपने पड़ोसी मकदूनिया की हालत को देखकर भी ईरान के सामने झुकने के लिये तैयार नहीं थी। ४९० ई० पू० में दारयबहु को उस ओर मुह फेरने के लिये मजबूर होना पड़ा। छोटी-मोटी लड़ाइयों का कोई निर्णयात्मक फल नहीं मिला। अतः में सबसे बड़ी लड़ाई मराथोन में हुई, जिसमें ईरानी सेना हार गई। दारयबहु ने ४९० ई० पू० के बाद के अपने अंतिम पांच वर्षों को शासन और सुव्यवस्था में लगाया और ३६ साल के सुदीर्घ शासन के बाद अपने मरने के समय (४९५ ई० पू० में) उसने एक सुव्यवस्थित और समृद्ध साम्राज्य छोड़ा, यद्यपि इसका यह अर्थ नहीं, कि उसका सुफल सभी वर्गों और जातियों को समान मिला। दासों की दयनीय दशा के बारे में तो कुछ कहना ही नहीं—यह ऐसा समय था, जब कि विश्व के सभी सभ्य देशों में दासता की क्रूर प्रथा का अकटक राज्य था।

(१) शासन-व्यवस्था

दारयबहु को कुरव का महान् साम्राज्य प्राप्त हुआ था, जिसमें उसने भी वृद्धि की थी। सिंध से लेकर नील तट तक विस्तृत कुरव के साम्राज्य का प्रबन्ध पहले से भी केन्द्रित रूप में होता चला आया था, इसलिये यह कहना मुश्किल है, कि शासन-व्यवस्था में कितनी नई बातें कुरवने की और कितना दारयबहु ने उसमें सुधार किया था। ईरानी साम्राज्य से पहले भी बबेरू और मिस्र के विशाल बहुजातिक राज्य मौजूद थे। इतने बड़े राज्य के प्रबन्ध के लिये कितनी ही नई बातें अवश्य हुई होगी। दारयबहु ने शासन का नये ढंग से केन्द्रीकरण किया। पहले के महाराज्यों में अधीन जातियों के ऊपर प्रायः उन्हीं में से वंश-परंपरा से चला आता कोई राजा (शासक) बना दिया जाता था, जो केन्द्रीय शक्ति के निर्बल होते ही स्वतंत्र हो जाता था। दारयबहु ने खानदानी राजाओं को माडलिक बनाना पसंद नहीं किया। उसने अपने क्षत्रप

^१ वही पृ० ६९७-७१०

नियुक्त किये, जो कि शाही या तत्सबधी खानदानो के होते थे और शाह की इच्छा रहने तक अपने पद पर स्थित रहते थे। क्षत्रप के हाथ में बहुत ज्यादा ताकत न हो जाय, इसलिये हर एक प्रदेश का सेनापति क्षत्रप से अलग होता था, जिसकी नियुक्ति भी शाह करता था। इन दोनों के अतिरिक्त एक राजामात्य शाह की आख था, जो कोश तथा दोनों के कामों को देखता रहता था। एक ही प्रांत में तीन-तीन स्वतंत्र अधिकारियों का रहना क्षत्रप को इस योग नहीं रहने देता था, कि वह केन्द्र के विरुद्ध स्वतंत्र होने की हिम्मत करे। इनके ऊपर भी केन्द्र से समय समय पर शाही महामात्य घूमा करते थे, जिनके अधिकार बहुत अधिक होते थे। शिकायत ही नहीं, बल्कि वह स्वयं प्रांतीय पदाधिकारी को पदच्युत कर सकते थे। शाही हुक्म के आने पर तुरंत क्षत्रप का शिर उतारा जा सकता था, यह पहले कह चुके हैं। भिन्न-भिन्न जातियों के धार्मिक अनुष्ठानों और रीति-रिवाजों में ईरानी शाह कोई दस्तदाजी नहीं करते थे। वह प्रियदर्शी अशोक की तरह हर पाप (धर्म) की मान्यताओं को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। बल्कि अशोक की उदारता से भी ईरानी सम्राट् आगे बढ़ अहुरमज्द के भक्त होते भी बबेरू (बाबुल) वालों को खुश करने के लिये उनके महान् देवता मर्दुकको भी देवातिदेव कहते और अपने अपार वैभव को मर्दुकका का प्रगल्भ बतलाते थे।

दारयबहु के समय मारा राज्य निम्न २३ प्रदेशों में बँटा था, जिनके शासक क्षत्रप कहे जाते थे^१—

- १ पर्शिया—दक्षिणी ईरान अर्थात् आधुनिक फारसका सूबा,
- २ ऊवजा (एलम)—इसीमें दारयबहु की एक राजधानी सूसा थी,
- ३ बबीरू (कलदान)—उत्तरी मसोपोतामिया,
- ४ अथुर (असिरिया)—जिसमें जगरोस पर्वत और खबुर (दजला) थे
- ५ अरबया—मसोपोनामिया का वह भाग जो कि खबुर और हुफरात (फुरात) के बीच में पड़ता है,
- ६ मूद्र (मिस्र)—नील उपत्यका,
- ७ सागरजन—जिसमें सिलिसिया और विशरिओत जैसे द्वीप थे,
- ८ यवुना (यवन)—इनमें युनियन, एवलियन और दोरियन आदि जातियाँ शामिल थी,
- ९ स्पर्दा—लिदिया और मुसिया आदि क्षुद्र-एशिया के प्रदेश,
- १० मिदिया—हमदान के पास का प्रदेश, जो ईरानी जाति का सर्वप्रथम नेता बना,
- ११ अरमेनिया,
- १२ कत्पतूक—क्षुद्र-एशिया का मध्य भाग तौरस आदि,
- १३ पार्थव—पार्थिया और हुर्कानिया,
- १४ जरगिया,
- १५ हरेयव (आर्य),

^१ Historic Ancienne (G Maspero) pp 704-5

- १६ उवरज्मिया—ख्वारेज्म,
 १७ बाख्त्रिया—बाह्लीक (बल्खका प्रदेश),
 १८ सुगदा—जरफशा-उपत्यका,
 १९ गदार—नेशावर और तक्षशिला का प्रदेश,
 २० शक—चीन की सीमा से काकेशस के उत्तर तक फैला शकद्वीप
 २१ सप्तगिद—थतगुस, हेलमन्द उपत्यका का ऊपरी भाग,
 २२ हरउवती—(ग्रीक अखोशिया),
 २३ मक—ओर्मुज्द के पास का प्रदेश

दारयबहु विश्वका पहला शासक है, जिसने राजा की मूर्ति (रूप) के साथ सिक्के चलाये। इससे पहले भिन्न-भिन्न चिन्हों से अंकित धातु के टुकड़े सिक्के की तरह चलते थे। मुद्राकला को पराकाष्ठा तक ग्रीक राजाओं ने पहुँचाया—चाहे सिकंदर के सिक्के को ले लीजिये या ग्रीक-बाख्त्री राजाओं के सिक्के को, सबसे ही बड़ी भावपूर्ण, सुन्दर वास्तविक आकृति मिलती है। मिनादर आदि ग्रीक राजाओं ने भी अपने भारतीय राज्य के लिये रूपलाञ्छित सुन्दर मुद्राये चलाई। शकों और पार्थियों ने ग्रीक-सिक्के की नकल की। शकों की नकल हमारा यहाँ गुप्तों और पीछे के राजवंशों ने की। गुप्तकालीन मूर्तिकला और चित्रकला बहुत उन्नत थी, लेकिन जब हम उस समय के सिक्के को ग्रीक सिक्के से तुलना करते हैं, तो वह बहुत दरिद्र मालूम होते हैं। इसका कारण हमारे यहाँ पोर्त्रैट चित्रकलाका अभाव है। दारयबहुका सोनेका सिक्का दरिद्र कहा जाता था, जिसपर हाथ में हथियार लिये राजाकी मूर्ति होती थी। दरिद्रका सोना बिल्कुल खरा होता था। शुल्क या भूमिकरका हिसाब जहाँ दरिकमे होनेसे आसानी होती थी, वहाँ व्यापारमे भी इसके कारण बहुत सुभीता हुआ।

दारयबहुकी शासन-व्यवस्था इतनी अच्छी साबित हुई, कि उसकी बहुत सी बातोंको सिकंदर और उसके उत्तराधिकारियोंने अपनाया। पश्चिमी एसियामे तो वह आदर्श व्यवस्था मानी गई। भारतका मौर्य साम्राज्य उसके बाद स्थापित हुआ, जिसके पहले नदोका विशाल साम्राज्य स्थापित हो चुका था। उसने अपने केन्द्रीकृत शासनके लिये कितनी ही नई बातें बनाई होगी। ईरानी साम्राज्यके उत्तराधिकारी ग्रीक-राज्योंसे सीधे सबध रखनेवाले मौर्य साम्राज्य ने यदि दारयबहुकी शासन-प्रणालीसे कुछ बातें ली हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। शासनकी व्यवस्थाके लिए संचार और यातायातका अच्छा प्रबन्ध अनिवार्य है। मौर्यकालमे पटनासे तक्षशिला, उज्जयिनी और दूसरे शासन या व्यापार-केन्द्रोंको राजपथ गये थे, जिनपर पाथशालाये तथा छायादार वृक्ष भी लगे हुए थे। सबसे पहले यह व्यवस्था बड़े विस्तृत रूपमें दारयबहुने की। उसके राजपथ राजधानी पर्शुपुरी (पर्सैपोलि) से मकदूनिया, मिस्र, भारत और मध्य-एशिया तक गये हुए थे, जिनमे डाकके घोड़े बराबर तैनात रहते थे। साधारण जनताको चाहे इस डाक-व्यवस्थासे लाभ न हो, किंतु केन्द्रको राज्यके भिन्न-भिन्न भागोंमे क्या हो रहा है, इसका समाचार बहुत जल्द लग जाता था। ग्रीक लेखक बतलाते हैं, कि राजपथमे यातायातका बहुत सुभीता था, २५ किलोमीटर (चार योजन) पर अतिथिशालायें थी, जहाँ ठहरनेका इतिजाम था।

२. धर्म'

ईरानी शाह मज्दयस्नी अर्थात् भगवान् अहुरमज्दको माननेवाले थे। ज़र्युस्त्रको कोई-कोई विद्वान् ६६० ई० पू० अर्थात् बुद्धमे प्राय १०० वर्षपूर्व काकेशसके आजुरवाइजान प्रदेशमे पैदा हुआ मानते हैं और कुछ विद्वानोंका मत है कि दारयबहुका पिता विस्तास्प ज़र्युस्त्रका सरक्षक और अनुयायी था। ऐसा होनेपर वह और बुद्ध समकालीन हो जाते हैं। ज़र्युस्त्रसे पहलेके ईरानी धर्ममे क्या-क्या विशेषताय थी और उनमेंसे किन-किन बातोंको ज़र्युस्त्रने छोड़ दिया, इसे बतलाना मुश्किल है। इतना तो कहा जा सकता है कि ज़र्युस्त्रके सुधारके पहले का ईरानी धर्म, और उसके क्रियाकलाप ऋग्वेदिक धर्मके बहुत समीप थे। सारे शतम्-वशमे ही नहीं, बल्कि हिन्दू-यूरोपीय वाङ्मयमे 'देव' शब्द अच्छे अर्थोंमे प्रयुक्त होता रहा। उसको राक्षसका पर्यायवाची बनाना ज़र्युस्त्रका काम था। किन्तुने ही अशोमे फर्क रखते हुए भी यज्ञ, सोम आदि कर्मकांडोमे मज्दयस्नी और वैदिक धर्ममे समानता थी। अहुरमज्द और अग्रमेन्यू (अह्मेमान) के नामसे येहोवा और शैतानीकी तरहके भलाई और बुराईके दो नौतोकी कल्पना शायद ज़र्युस्त्रने यहूदियोंसे ली। ज़र्युस्त्रके उपदेश पहले बहुत रहे होंगे, लेकिन उनमेंमे थोड़ी सी गाथाये ही आजकल अवेस्तामे मिलती हैं। सामीय पैगबरांकी तरह ज़र्युस्त्रका भी दावा था, कि अहुरमज्दाने मुझे लोगोका पथ-प्रदर्शक बनाकर भेजा है। जहा ज़र्युस्त्रके (पार्सी) धर्मकी कुछ बातें सामीय धर्मसे मिलती हैं, वहा उसकी मुख्य शिक्षा हुमन (मुमन), हुस्न (सूवन) और हूस्त (सुकृत) सम्यग ज्ञान, सम्यग्-वचन और सम्यक् कर्म अथवा मनमावाचा, कर्मणा सत्य पर कायम रहना पुरानी परंपराको ही बतलाती है। कहते हैं, ज़र्युस्त्र का अपनी जन्मभूमि (आजुरबाइजान) मे धर्मप्रचारमे सफलता नहीं मिली, तब वह पूर्वी ईरानके खुरामान प्रदेशमे चले गये, जहाँका राजा य. क्षत्रप उस समय विस्तास्प (शाहनामाका गुस्तास्प) नये धर्ममें दीक्षित हुआ।

शाह, क्षत्रप, राजकर्मचारी और पुंगहित ये सब आरामका जीवन बिताते थे। साहित्य और कलाका आनंद वही ले सकते थे। माधारण जनता दास और कर्मकरके तौरपर पशुवत् जीनेका अधिकार रखती थी। दामनाका तो उम वक्त मारे सम्य जगत्मे अखंड राज्य था।

३. क्षयार्श' (४८५-४६६ ई० पू०)

दारयबहुकी मृत्युके बाद उसका पुत्र क्षयार्श प्रथमने १६ वर्षों तक राज्य किया। वह अपने सुंदर रूप और सुपुष्ट शरीरके लिये बहुत प्रसिद्ध और प्रशंसित था, किंतु उसमे अपने पिता जैसी प्रतिभा और योग्यता न थी। तो भी उसकी महत्वाकांक्षा पितासे कम न थी। पिताने ग्रीक लोगोसे पराजय प्राप्त की थी। क्षयार्श चाहता था कि उस कलकको धो दिया जाय। वह उसके लिये तैयारी करने लगा। ग्रीसपर आक्रमण करनेसे पहले मिस्रमे बगावत हो गई और क्षयार्श उसे दबानेके लिये स्वयं वहाँ गया। उसको दबा देनेके बाद ४८१ ई० पू० मे उसने ग्रीसपर अभियान किया। कहते हैं, इस अभियानमे १२०० जमी जहाज तथा २३,१०,००० सैनिक (१७,००,००० पैदल १,००,

'इस्तोरिया (स्त्रूबे) पृ० ३८४-४५

'Historic Ancienne (G. Maspero) pp. 721

००० सवार बाकी नौसैनिक) थे। युरोप के भिन्न-भिन्न भागों से जो सहायता मिली थी, उसे शामिल कर लेने पर सेना-संख्या ५० लाख पहुँच जाती है। उस समय तक दुनिया में इतनी बड़ी सेना किसी अभियान में नहीं शामिल हुई। इतनी बड़ी सेना को रसद-पानी पहुँचाना और संचालन करना आसान काम नहीं था। जरूरत से अधिक सेना भी अपनी कर्मण्यता को खो देती है, यह इस युद्ध में पता लगा। ग्रीस जाति ने भी ईरान के आक्रमण को अपने जन्म-मरण का सवाल समझा और मुकाबला करने के लिये सारी हेलेनिक (ग्रीक) जाति एक हो गई। अथेंस वालों ने जाना, हम अपने नगर की रक्षा नहीं कर सकते, इसलिये उन्होंने अपने बाल-बच्चों को दूसरी जगह भेज दिया और वह स्वयं भी नगर को खाली कर गये। शाही सेना को मकदूनिया और थेसेली होकर गुजरने में कड़ी बाधा नहीं हुई। उत्तर और मध्य ग्रीस के सभी हेलेनिक राज्यों ने पहली ही मुठभेड़ में ईरान की अधीनता स्वीकार कर ली। थर्मोपोली में पहला जबर्दस्त संघर्ष हुआ, जिसमें ग्रीक योद्धाओं ने अपनी वीरता का अद्भुत परिचय दिया। ईरानी इस रास्ते पहाड़ी घाटी को पार कर नहीं बढ़ सके। लेकिन उन्हें दूसरे रास्ते का पता लग गया और वह उधर से आगे बढ़ गये। कितने ही छोटे मोटे युद्धों में यूनानियों को परास्त करते हुए ईरानी सेना ने अतम अथेंस को विजय कर लिया। अथेंस के काँठ प्राकार और उसकी मुट्ठी भर सेना ईरानियों का क्या मुकाबला कर सकती थी? अतिका और अथेंस के विजय से शाह ने समझ लिया कि अंतिम विजय उसके हाथ में आना ही चाहती है, किंतु अथेंस वालों ने हथियार नहीं रखा। वह सलामी द्वीप में लड़ने के लिये तैयार बैठे थे। अंतिम निर्णय सामुद्रिक युद्ध में होने वाला था। सलामी की तग खाड़ी में दोनों पक्षों का युद्ध हुआ। यहाँ जगह बहुत कम थी, जिसमें ईरान के भारी भरकम सैनिक पोत फुर्ती से काम नहीं कर सकते थे। यूनानी युद्धपोत हल्के और फुर्तीले थे। दिन भर की लड़ाई में ईरान के २०० जहाज डुबा दिये गये। ईरानियों को विजय की आशा नहीं रह गई। यूनानी शक्ति हृदय से सबेरे के वक्त आक्रमण की प्रतीक्षा कर रहे थे, किंतु देखा, समुद्र में शत्रु का एक भी पोत नहीं है। क्षयांश खुद विजय का मुख देखे बिना लौट गया। लेकिन अभी उसने आशा नहीं छोड़ी थी, और अपने सेनापति मर्दोनियस को ग्रीस-विजय का भार सौंपा था। मर्दोनियस को एक दो सफलताये मिली, जिनमें अथेंस पर फिर एक बार ईरानी ध्वजा का गडना था, किंतु वह स्थायी नहीं रही। अतम पलातिया के मैदान में ग्रीक सेना ने ईरानी सेना को बहुत बुरी तरह परास्त किया। मर्दोनियस को मरा देखकर शाही सेना में भगदड़ मच गई।

इस असफलता के बाद १३ वर्ष और क्षयांश जीता रहा, किंतु उसका वह जीवन बहुत ही जघन्य और विलासितापूर्ण था। अतम अपने महाप्रतिहार (शरीर-रक्षक अफसर) के हाथों उसे अपना प्राण खोना पड़ा। क्षयांश के बाद और आठ अखामनी शाहशाह हुए, जिन्होंने जैसे-तैसे नील तट तक फैले साम्राज्य को कायम रखने की कोशिश की। अखामनी शाहशाहों के नाम और काल निम्न प्रकार हैं —



१७. भारवबुका धारसीक सान्नाज्य (४८५ ई० पू०)

- १ कुरव ५५०-५२६ ई० पू०
- २ कम्बुज ५२६-५२१ ई० पू०
- ३ गौमाता ५२१
- ४ दारयबहु (१) ५२१-४८५ ई० पू०
- ५ क्षयार्श (१) ४८५-४६६ ई० पू०
- ६ अर्तक्षत्र (१) ४६६-४२५ ई० पू०
- ७ क्षयार्श (२) ४२५-४२४ ई० पू०
- ८
- ९ दारयबहु (२) ४२४-४०५ ई० पू०
- १० अर्तक्षत्र (२) ४०५-३५६ ई० पू०
- ११ अर्तक्षत्र (३) ३५६-३३३ ई० पू०
- १२
- १३ दारयबहु (३) ३३३-३३० ई० पू०

यद्यपि क्षयार्श (१) के बाद ही से आखामनी साम्राज्यकी वृद्धि रुक गई, किंतु अलिक-सुन्दर से पहले उसका कोई सबल प्रतिद्वंदी नहीं हुआ। अर्तक्षत्र (२) के समय (४०५-३५६ ई० पू०) मिस्रमें विद्रोह हुआ। ईरानके प्रतिद्वंदी ग्रीक मिस्रका समर्थन कर रहे थे, किंतु आपसी विरोधके कारण उतनी मदद नहीं कर सकते थे। मिस्रको दबना पड़ा, अर्तक्षत्र (३) (३५६-३३३ ई० पू०) ने राजवशके सभी राजकुमारोंको मरवा डाला। इसके समय फिर मिस्रने स्पार्टा और अथेसकी मददसे ईरानी ज्यूको उतार फेकना चाहा, किंतु फिर उसे दबना पड़ा। ईरानी शासन-केन्द्रके एक छोरपर अवस्थित इस प्राचीन देशको यदि अभी भी ईरान दबा सकता था, तो सोगदके भी ईरानी शासनसे स्वतंत्र होने की आशा नहीं करनी चाहिये, क्योंकि वह जाति ईरानी था। समर्बत गंधार भी ईरानकी परतत्रता किसी न किसी रूपमें स्वीकार करता रहा। ख्वारेज्म के लडाके अर्ध-धुमन्तू कग ईरानकी शक्ति क्षीण होते ही स्वतंत्र हो गये—यही मसागेतोके वंशज अब ख्वारेज्मके निवासी थे।

४ दारयबहु (३) (३३३-३३० ई० पू०)

यह आखामनी वंशका अंतिम और १३ वां शाह था। कुलबध होते होते कुलोच्छेद सा हो गया था, जब कि इसे गद्दीपर बैठाया गया। इसे वीर और उदार बतलाया जाता है, लेकिन सवा दो सौ वर्षोंके पुराने राजवंशमें बहुत सी खराबियां आ गई थीं। शासनयंत्रमें ताजगी नहीं रह गई थी, उसके पुर्जे इतने निकम्मे हो गये थे, कि दारयबहुकी वीरता और उदारता बहुत मदद नहीं कर सकती थी और उसका मुकालिबा भी हुआ विजयी अलिकसुंदर से।

५ अलिकसुंदर (३३६-३२३ ई० पू०)

दारयबहु (१) ने अश्वेस और मकदूनिया जीत लिया था, यह हम पहले कह आये हैं। मकदूनिया कुछ समय पीछे तक ईरानी साम्राज्यका अंग रहा, किंतु ग्रीक के अभियानमें जो करारी

हार खानी पडी, उससे मकदूनियाको हाथमे रखना सम्भव नहीं हो सका । ३५६ ई० पू० मे जब कि अर्तक्षत्र (३) भारी कुलबधके बाद गद्दीपर बैठा, मकदूनियाका राजमुकुट फिलिपके शिरपर रक्खा गया । बडे ही योग्य सेनानायक और अच्छा शासक होने के साथ ही वह बहुत महत्वाकांक्षी भी था । उसने राज्यशासन और सेना-संगठनमे ग्रीस और ईरान दोनोंसे बहुत सी बातें सीखी । यद्यपि मकदूनिय भी ग्रीस जाति ही के थे, लेकिन अथेस और स्पार्टावाले अपने इन उत्तरी भाइयोको बर्बर और असभ्य समझते थे । फिलिपका २३ वर्षका शासन भारी तैयारीका था । ३३६ ई० मे घरेलू झगडेके कारण उसे प्राणोसे हाथ धोना पडा, नहीं तो दो वर्ष बाद उसके पुत्रका ईरानपर महाभियान शायद पिता ही द्वारा होता । अथेसको जीतते समय उसने ऐसे राजनीतिक कौशलका परिचय दिया, कि अभिमानी अथेनीय उसे हेलेनिक वीर मान उसके सहायक बन गये । अथेस के महान विचारक अरिस्तातलको अपने साथ ला उसे उसने अपने पुत्र अलिकसुन्दरका शिक्षक बना दिया । ३३६ ई० पू० मे पिताके मरनेके बाद २० वर्षकी उम्रमे अलिकसुन्दर मकदूनियाकी गद्दीपर बैठा । इस छोटी उम्रमे भी वह दो युद्धोमे वीरता दिखा चुका था । ईरानी ढगपर शिक्षित घुडसवार सेना और अथेसके ढगपर शिक्षित पैदल सेना बापके दायभागमे उसे मिली थी ।

पिताके बाद उसके उत्तर और दक्षिणके पडोसी शिर उठाने लगे, जिसके कारण अलिकसुन्दरको दो वर्ष तक उन्हें दबानेमे लगा रहना पडा और ३३४ ई० पू० मे ही वह अपने महान् दिग्विजयके लिये प्रस्थान कर सका^१ । उसका लक्ष्य ईरानी साम्राज्य था, जो सिध तक फैला हुआ था । अलिकसुन्दरकी सारी विजितभूमिको देखनेसे मालूम होगा, कि पजाबमे थोडासा आगे बढ़ने की बात छोडकर, उसने कँवल ईरानी साम्राज्यको ही ग्रीक-साम्राज्यमे परिणत किया, इसलिये उसे कुरव और दारयबहुसे भारी विजेता नहीं कहा जा सकता । हा, यदि ईरानी साम्राज्यके जन-धनसे मुकाबिला किया जाय, तो प्रस्थानके समय वह ईरानके सामने कुछ नहीं था । एसियाके सारे यूनानी ईरानके साथ थे । ईरानका समुद्री बेडा भी बहुत विशाल और सुदृढ था । यद्यपि भीतरी कमजोरियोंके कारण ईरानको हारना पडा, किंतु ईरानी सेना जिस बहादुरीके साथ लडी, उससे उसकी प्रशंसा उसके शत्रु भी करते थे । ईरानकी सबसे बडी गलती यह थी, कि उसने अलिकसुन्दरके एसियामे घुसनेके समय ही मुकाबला नहीं किया । वह बिना रोकटोक समुद्र पार हो एसियाकी भूमिमे आ गया । प्रस्थानके समय अलिकसुन्दरके पास ३०,००० पैदल और ५००० सवार सेना थी । ईरानने पहली लडाईं ग्रनिकुसके तटपर की । ईरानी सेनाका सेनापति तथा शाहका दामाद मिथ्रदात अलिकसुन्दरके हाथो मारा गया । ईरानी सेनामे भगदड मच गई । पहली ही हारसे शाही सेनाकी हिम्मत इतनी टूट गई, कि सारे क्षुद्र-एसियामे अलिकसुन्दरको सगठित सघर्षका मुकाबला नहीं करना पडा । देशको उसके कायर क्षत्रपने बिना विरोधके अर्पण कर दिया । दारयबहुने जो तीन तीन प्रकारके अधिकारी क्षत्रप, सेनापति और राजामात्य हर प्रदेश मे नियुक्त किये थे, केद्रीय शासनके निर्बल होते ही वाकियोंको हटाकर क्षत्रपोंने दूसरे दोनो पद भी अपने हाथमे कर लिये । क्षत्रपके निर्बल होनेपर कोई दूसरा बचावका सहारा नहीं रह गया था । ईरानी साम्राज्यके प्रदेशोको जीतनेके साथ अलिकसुन्दरके सामने भी शासनकी समस्या आई । उसने तीनकी जगह हर प्रदेशमे सैनिक और नागरिक दो प्रधानअधिकारी नियुक्त किये, साथ ही हर जगह सैनिकछावनियाँ

^१ वही पृ० ७५६-६१

कायम की, जिनमेसे कितने ही उसीके नामपर अलिकसुन्दरिया (अलमन्दा) नामसे विख्यात हुई। दिग्विजयका पहला साल अलिकसुन्दरने भूमध्यसागर-तटवर्ती प्रदेशोको जीतने तथा क्षुद्र-एसियाको अकटक बनानेमे लगाया। वह जानता था, अभी ईरानकी असली शक्तिसे मुकाबला नहीं हुआ है, इसलिये पृष्ठभूमिको मजबूत करके ही आगे बढ़ना उचित है। ३३३ ई० पू० मे वह फिर आगे चला। दारयबहु (३) छ लाख सेनाके साथ इसुसमे उससे लडनेके लिये तैयार था। युद्ध-क्षेत्र छ लाख सेनाके लडनेके लिये पर्याप्त नहीं था, जिसके कारण ईरानी अपने सख्या बलका लाभ न उठा घाटेमे रहे। इसुसका युद्ध अलिकसुन्दरके लिये निर्णायक साबित हुआ। दोनो ओरकी सेनाओमे भीषण सघर्ष हो रहा था। अभी यह नहीं कहा जा सकता था कि जीत किसकी होगी, इसी समय दारयबहु भयभीत हो युद्ध-क्षेत्रसे भगा। उसे भागते देख सेनाकी हिम्मत टूट गई और चारो तरफ भगदड मच गई। ग्रीक सेनाने भगोडोके साथ जरा भी दया-माया नहीं दिखलाई। इस लडाईमे एक लाख ईरानी सैनिक काम आये। युद्ध-क्षेत्रमे भी अपनी शानके साथ ही ईरानका शाह जा सकता था। उसके साथ रनिवास और नौकर-चाकरोको भारी पलटन रहती थी। भागत वक्त शाहको इतना होश-हवास कहाँ था, कि अपने रनिवासको साथ ले जाता। यद्मनोको दारयबहुके सारे हरमके साथ शाही खजाना भी हाथ लगा। अलिकसुन्दरने रनिवासके साथ बडा ही सहानुभूतिपूर्ण बर्ताव किया।

अलिकसुन्दरने इस विजयके बाद मिस्र और पश्चिमी एसियाके दूसरे प्रदेशोको विजय करके आगे कदम बढ़ाया। अरबेला (मसोपोतामिया) मे दारयबहुने फिर एकबार मुकाबला करना चाहा। यहाँ उसके साथ दस लाखसे ऊपर सेना थी। यहाँ भी निपटारा होनेसे पहले ही दारयबहु भाग खड़ा हुआ। उसे जमकर लडनेकी फिर कभी हिम्मत नहीं हुई। अलिकसुन्दरने दो दिन उसका पीछा किया, किंतु उसे पकड नहीं सका। स्थान-स्थानपर अच्छी तरह नागरिक और सैनिक व्यवस्था करते वह राजधानी सूसामे दाखिल हुआ, जहा उसे शाही खजाना हाथ लगा। आगे अब ईरानके गर्भमे उसने प्रवेश किया। पहाडी इलाके के दरौं और सकरे मार्गोमे ईरानियोने थोडा बहुत मुकाबिला किया, किंतु अब ग्रीकोकी चारो ओर धाक जम गई थी। अपने दिग्विजयके चौथे साल (३३० ई० पू०) अलिकसुन्दर मुख्य राजधानी पर्शुपुरी (परसेपोलि) मे दाखिल हुआ। यहाँ उसे अकूत खजाना हाथ लगा, जिसके ढोनेके लिये दस हजार खच्चर-गाडियो और पांच हजार जँटोकी जरूरत पडी। विजय मदनोन्मत्त अलिक-सुन्दरने राजधानीमे कल्लआम जारी कर दिया। दारयबहु (१) के बनाये विशाल स्तम्भोवाले भव्य प्रासाद तथा दूसरी इमारते जलने लगी। क्षणभरमे वह वैभवपुरी अपनी अद्भुत कला-कृतियोके साथ भस्मावशेष रह गई। पर्शुपुरीका यह निष्ठुर ध्वस बतलाता है कि मकदूनिया सच-मुच ही अभी बर्बर युगसे आगे नहीं बढी थी। इस नृशंसताके ऊपर टिप्पणी करते हुए एक पश्चिमी इतिहासकारने लिखा है : “जो कलाके विरुद्ध युद्ध करता है, वह कुछ राष्ट्रोंके विरुद्ध ही नहीं, बल्कि सारी मानवताके विरुद्ध युद्ध करता है।”

अलिकसुन्दरको मालूम हुआ, कि दारयबहु हयतान (हम्दान) मे युद्धकी तैयारी कर रहा है। वह तुरत उधर दौड पडा। दारयबहु अपनी जान बचाता इधरसे उधर भागने लगा। अलिकसुन्दर जानता था, कि जब तक अखामनी शाह जिन्दा है, तब तक खतरा दूर नहीं होगा। शाह के मध्य-एसियाकी ओर भागनेका पता पाकर वह उस ओर बढ़ा। दमगानके पास रास्तेमे।

दारयबहुकी परित्यक्त ताजी लाश मिली । अलिकसुन्दरने शवको बड़े सत्कारके साथ पर्शुपुरीमे दफनाया, दारयबहुकी कन्या रोकसानासे विवाह किया, जिससे एक पुत्र भी हुआ, किंतु जीते हुए देशोको भोगनेका भाग्य उसके सेनापतियोंके सतानोको प्राप्त हुआ ।

स्रोत ग्रन्थ :

- 1 Persia (P M Sykes, 2 vols)
- 2 Histoire ancienne de peuples de l' Orient 3 vols (G Maspero Paris 1905)
- 3 The Ancient History of Near East (H Hall, 1936)
- 4 Cambridge Ancient History (1928)
- 5 Histoire de l' Orient, 2 vols (A Moret)
- ६ इस्तोरिया व् द्रेव्यानि किनगाख हेरोदोतस, अनुवादक फ० मिश्रेको I, II (1885-1856), G Rawlinson: Herodotus,
- 7 Ancient Empires of the East (P M Syckes)
- 8 The Five great Monarchies (G Rawlinson)
- 9 Eranische Alterthumskunde (Spiegel on the rock at Behistun)
- 10 Inscription of Darius, (H Rawlinson,)
- 11 Le Peuple et la langue de Medes (Oppert)

अध्याय २

कंग (ई० पू० ५वीं शती—ई० १ली शती)

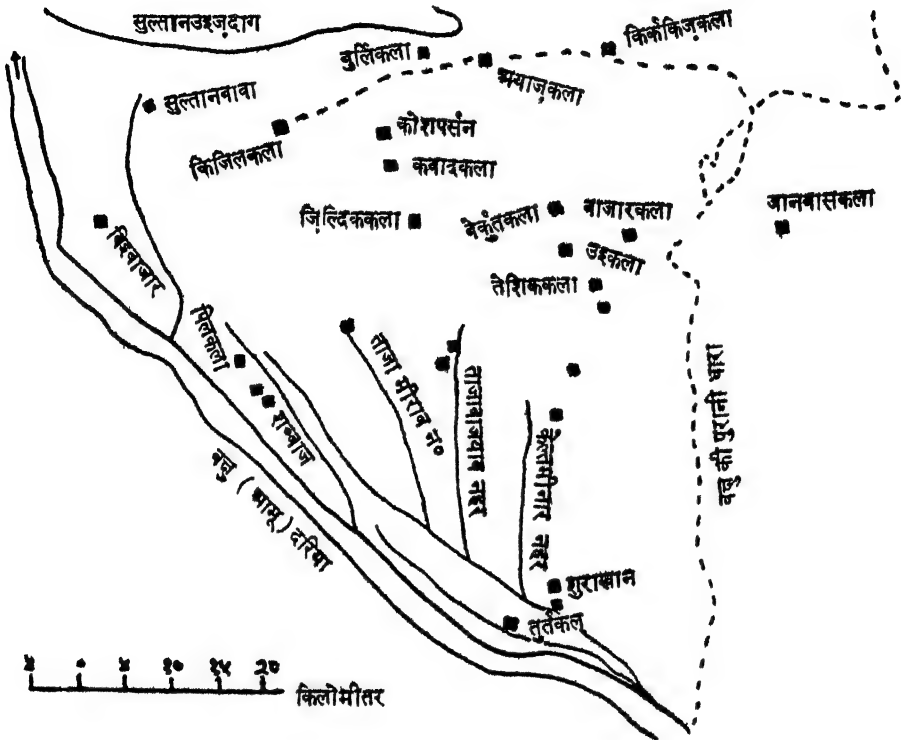
अलिकसुन्दरके मध्य-एशिया विजय और वहाँके ग्रीक शासनके बारेमें कहनेके पहले ख्वारेज्म पर एक दृष्टि डालनेकी आवश्यकता होगी। कुरव और दारयबहुके समय (५५०-४८५ ई० पू०) वहाँ मसागेत (महाशक) रहते थे, यह हम पहले कह आये हैं। यद्यपि सिर(एक्सर्त) दरिया, अराल समुद्र और कास्पियन समुद्र एक स्वाभाविक सीमा है, जिसके दक्षिण मध्य-एशियाका दक्षिणपथ है। लेकिन इस दक्षिणपथके पश्चिमी भागको भी रेगिस्तान ने स्वतंत्र प्राकृतिक प्रदेशका रूप दे दिया है। ख्वारेज्मके उत्तर तरफ सिरदरिया और अराल समुद्र प्राकृतिक सीमा है। उसके पूरबमें किजिलकुम (रक्तमरु) का महान् रेगिस्तान है, जो शत्रुके लिये किसी दुरारोह पर्वत-श्रृंखलासे कम कठिन नहीं है। ख्वारेज्मको दक्षिणमें कराकुम (कृष्ण मरु) मार्ग (मेर्व) प्रदेशसे अलग करता है। यद्यपि दक्षिणकी ओरसे वक्षु (आमूदरिया) ख्वारेज्ममें प्रवेश करती है, और जोही इसकी समृद्धिका कारण भी है, किंतु एक जगह नदीके दोनों किनारोपर पहाड़ और रेगिस्तानके कारण मार्ग इतना सकरा हो जाता है, कि वहाँ शत्रुको आसानीसे रोका जा सकता है। इस प्रकार ख्वारेज्म राजनीतिक तौरसे ही नहीं बल्कि प्राकृतिक तौरसे भी एक अलग इकाई है, जिसे हम इसी रूपमें कुरवके राज्याभसे पहले भी पाते हैं। बहुत कम अपवादोंके साथ वह सोवियत क्रांतिके समय (१९१७ ई०) तक अपनी अलग सत्ता को कायम रखे रहा। आज वह उज्बेकिस्तान गणराज्यका एक भाग है।

१ केल्टमीनार सस्कृति (ई० पू० ४-३ सहस्राब्दी)

यदि हम ख्वारेज्मके पुराने इतिहासपर एक बार फिर दृष्टि डालें, तो नवपाषाण और अनवपाषाण युग (ई० पू० चौथी और तृतीय सहस्राब्दी) में यहाँ एक सस्कृतिको पाते हैं, जिसे सोवियत इतिहासवेत्ताओंने 'केल्ट मीनार' सस्कृति नाम दिया है। केल्ट मीनार निम्न वक्षु नदीसे उत्तरकी ओर जानेवाली पुरानी नहरोंमेंसे एक है, जिसके नाम पर इस सस्कृतिका नाम पड़ा। आजकल किजिलकुम (लाल रेगिस्तान) में इसी परित्यक्त नहरके उत्तरमें 'जॉबासकला' का ध्वसावशेष है, जहाँ नवपाषाणयुगीन पाषाणास्त्र और मिट्टीके बर्तन मिले हैं। पुरातात्विक वस्तुओंसे तुलना करने के बाद सोवियत पुरातत्त्वज्ञ इस परिणामपर पहुँचे हैं, कि उस काल में जो सस्कृति यहाँ पर थी, उसके अन्दर दक्षिणी उराल, सिरदरियासे पूर्वी तुर्किस्तान से लेकर

१ "नोविये मतेरिअली पो इस्तोरिइ कुलतुरि द्रेन्नओ खोरेज्मा" (स० प० तास्तोफ) वेस्तुनिक द्रेन्नेइ इस्तोरिइ १९४६ (१) पृ० ६०-१००

दक्षिण में हिन्द महासागरके तट तक एक ही प्रकारकी सस्कृति मौजूद थी। भाषाके विचारसे मुण्डा-द्रविड भाषा जहाँ एक ओर इस सस्कृतिवाले लोगोकी भाषा रही, वहाँ दूसरी ओर उइगुर भाषाकी मातृस्थानीया प्राचीन बोली बोली जाती रही।



१८. ख्वारेज्म मरुभूमि की पुरानी संस्कृतिथों

२ ताजाबागयाब सस्कृति (ई० पू० २ सहस्राब्दी)

द्रविड या केल्टमीनार सस्कृतिके बाद ई० पू० दूसरी सहस्राब्दी में ख्वारेज्ममें उसका स्थान एक दूसरी सस्कृति लेती है, जो उसी नामकी एक परित्यक्त नहरके पास होनेके कारण ताजाबागयाब सस्कृति कही जाती है। यह सस्कृति उसी तरह अपने पहलेकी द्रविड सस्कृतिका स्थान लेती है, जैसे सिंधु-उपत्यकामें पुरानी सस्कृतिवालों का स्थान आर्य लेते हैं। एक तरह कहा जा सकता है, कि द्रविड सस्कृतिका स्थान-विनिमय पहलेपहल ख्वारेज्मकी भूमिमें आर्यों ने किया था। केवल हिंदू-आर्य और ईरानी-आर्य यही दो जातियाँ अपनेको आर्य कहती हैं, शक अपने लिये आर्य शब्द का प्रयोग करते थे, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। हो सकता है, ख्वारेज्ममें शक नहीं उनके भाईबंध आर्य ही द्रविडोका स्थान लेनेमें सफल हुए हों। पुरातात्त्विक अवशेषों की तुलना करनेसे पता लगा है, कि ताजाबागयाब सस्कृति ताम्रयुगकी अद्रोनोफ सस्कृतिसे घनिष्ठ संबंध रखती थी, जो कि सिबेरियाके दक्षिणमें वोल्गासे अल्ताई तक फैली हुई थी। इस सस्कृतिके लोग

कुछकुछ आदिम कृषि भी जानते तथा, अधिकतर नदीके किनारे रहते और ताबे के हथियारो का प्रयोग करते थे। मध्य-एशियामे आया यह पहला हिंदू-यूरोपियन जन था। जिस वक्त यह लोग ख्वारेज्ममे रहते थे, उस वक्त कराकुम रेगिस्तानके पार दक्षिणम अनौकी सस्कृति मौजूद थी। इसके लोग शिकारी, मछुवाही और कुछ आदिम ढग की खेती करते थे। शायद उनका सबध ताजाबा गयाब सस्कृतिके लोगोसे न होकर भूमध्यसागरीय जातियो अर्थात् केल्टमीनारसे अधिक था, जब कि ताजाबागयाब सस्कृतिके लोगोका सबध पूर्वी यूरोप मे थ्रेस और किमेरी तथा क्षुद्रएशियामें हिताइत जातिसे था।

३ ताजामीराबाद सस्कृति (ई० पू० १ सहस्राब्दी)

ताजामीराबादकी परित्यक्त नहरके उत्तरमे जाबास-कला मे इस सस्कृतिके अवशेष मिले हैं। पहले लोगोके बारेमे हम नही कह सकते, कि वह शकोसे सबध रखते थे या आयों से, किनु ताजामीराबाद सस्कृतिके लोगोका सबध शकोसे था। इनकी सताने आगे आलान और फिर ओसेतीके नामसे प्रसिद्ध हुई। ओसेती जाति आज भी अपनी भाषाके साथ काकेशसकी एक घाटीमे मौजूद है। ताजामीराबाद सस्कृति भी ताम्रयुगकी सस्कृति थी। यह लोग मिट्टीकी दीवारोवाले लबे घरोमे रहते और आजीविकामे ताजाबागयाब सस्कृतिसे बहुत ज्यादा आगे नही बढे थे।

४ आदिम कग (७००-५५० ई० पू०)

ई० पू० प्रथम सहस्राब्दीके प्रथम पादसे जब द्वितीय पादमे हम बढते हैं, तो ख्वारेज्मकी भूमिमे नहरोका एक जाल सा बिछा देखते हैं—यह नहरोका युग था। छोटी-छोटी इकाइयोमे बँटे कबीले ऐसी प्रगति नही कर सकते थे। ५५० ई० पू० मे कुरव अखामनी साम्राज्य कायम करने मे सफल हुआ, लेकिन दो दशान्दियो बाद उसे यहाके मसागेतोको पराजित करने मे आशिक ही सफलता मिली और आगे भी शताब्दीसे अधिक अखामनी शासनको कगोने नही मँना। नहरोके युगके प्रवर्तक कगोके पूर्वज मसागत (प्राचीन कग) ही रहे होंगे। ई० पू० ७वीं सदीमे उनका केद्रीय शासन स्थापित हो चुका था। नहरोके युगमे बहुत से नगर बसे थे, जो कि आजकल किज़िलकुमकी मरुभूमिके पेटमे पड़े हुए हैं। केल्टमीनारसे उत्तर कुमवसनकला, तेशककिला, बेकुंतकला और उइकला, तथा ताजाबागयाब के उत्तरमे उल्लीगुलदरसुन, किचिकगुलदरसुन, नारीजानबाबा भी उसी कालके नगरोके घ्वस हैं। जान पडता है, ताजाबागयाब नहरका पानी जिल्दिकला तक जाके खतम होता था।

पिछले १३-१४ वर्षोंसे लगातार सोवियतके पुरातात्विक अभियान हर साल किज़िलकुमके ध्वसावशेषोकी जाँच-पडताल कर रहे हैं। वहा बहुत सी महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त हुई हैं, लेकिन इसे अभी खोजका आरम्भ ही समझना चाहिए।

५ कंग (५-१ सदी ई० पू०)

कुरबकी विजय ख्वारेज्मपर स्थायी नही हुई थी। वह यदि राजनीतिक विजय न भी हो, तो भी अखामनी युगकी ईरानी सस्कृतिकी विजय तो अवश्य हुई। यदि सोगद किसी न किसी

रूपमे अलिकसुन्दरके मध्यऐसिया-विजय तक अखामनी साम्राज्यका अग था, तो ख्वारेज्म ईरानके सांस्कृतिक साम्राज्यका भी अग अवश्य रहा। ई० पू० चौथी सदीके आरम्भमे उवारेज्म (ख्वारेज्म) के कग स्वतंत्र हो गए, और कितने ही समय तक दुर्बल अखामनी साम्राज्यके प्रदेश पार्थिया (मेर्वसे कास्पियन तक), आरियन (हिरात प्रदेश) और सोगद कगोके लूटमारके क्षेत्र बने रहे। आगे जब अखामनी साम्राज्यको अलिकसुन्दरने नष्ट करके विशाल यवन-राज्यकी स्थापना की, और बाख्त्रियाको लेते हुए सोगदपर अपनी विजय-ध्वजा गाडनी चाही, तो अपने वीर नेता स्पिता-माके नेतृत्वमे मोगिदियोने ग्रीकोके साथ संघर्ष किया। उस समय कग उनके सहायक थे। ख्वारेज्म यवन-साम्राज्यके विरोधियोंका केन्द्र अलिकसुन्दरके समय ही नहीं रहा, बल्कि उसके उत्तराधिकारियों सेलूकियों और ग्रीक-बाख्त्रियोंके साथ भी कगोका संघर्ष बराबर जारी रहा। इन्हींके नेतृत्व और सहायतासे ई० पू० तृतीय शताब्दीके मध्यमे शकोके एक जन पार्थियोंको आगे बढ़नेका मौका मिला। ई० पू० के आसपास तो कग इतने दृढ़ हो गये थे, कि उन्होंने सोगदसे बाख्त्रियाका प्रभाव हटा दिया। लेकिन उनकी सफलता देर तक नहीं रही, क्योंकि थोड़े ही समय बाद यूची शक अपनी जन्मभूमिसे भागते हुए इस ओर आये। यूची मैलाबमे सोगद और बाख्त्रिया बह गये और १३० ई० पू० के बाद हम ग्रीको-बाख्त्री राज्यका पता नहीं पाते। इस कालमे ख्वारेज्म स्वतंत्र रहा। कग भी उसी तरह शकोकी एक शाखा थे, जैसे कि यूची और पार्थिय। साथ ही उनपर विजय प्राप्त करना आसान काम नहीं था, इसलिए ई० पू० प्रथम शताब्दीके अन्त तक वह स्वच्छन्द बने रहे।

कग-कुषाण (ई० १-३ सदी)

ईसाकी प्रथम शताब्दीके आरम्भमे कुषाणोने अपने भाई-बंधु यूचियोंके राज्यको ले जहाँ पूरबमे पजाबसे पूर्वी भारत तक अपना राज्य विस्तार किया, वहाँ पश्चिममे वह कगोको लेते हुए अराल समुद्र तक पहुँच गये। इस समय ख्वारेज्मकी समृद्धि अक्षुण्ण रही, यह उस कालकी नहरो और बड़े हुए नगरोसे पता लगता है। कुषाण समय मे शकवशी होनेके कारण, जान पड़ता है, अधीन करनेके बाद भी कगोके साथ कुषाणोका वर्ताव बहुत कुछ समानताका था। अखामनी साम्राज्यके कायम होनेपर मिदियावालोके साथ जैसा वर्ताव अखामनियोंने किया, वही बात यहाँ भी मालूम होती है। कोई आश्चर्य नहीं, यदि भारत के लोग भारतमे आये कगोको कुषाण-शासकोमे ही गिनते हो। पोशाक, रीति-रवाज और खान-पान मे सभी शक जातियाँ समानता रखती थी। गौरा गरूप भी कगोका कुषाणो जैसा ही था, जिसे कि हमारे वैद्य उनके अधिक पलाडु-भक्षणके कारण बतलाते थे।

ईसा की ३-४ थी शताब्दीमे कग फिर स्वतंत्रमे हुए दीख पड़ते हैं। इस समय वह कुषाण और सासानी साम्राज्योंके मध्यवर्ती तटस्थ राज्यका पार्ट अदा करते हैं। पाचवी शताब्दीमे हेफताल (एफताल, श्वेत हूण) कुषाण-राज्यको मध्य-ऐसिया और पजाबसे खत्म करते हैं। इसी समय एफताल-राजा पेइकद कगोको दबानेमे सफल होता है। एफतालोके लिये लडाकू कग बड़े सहायक साबित हुए, इसलिए एफताल घुमन्तुओका—जिन्हें लोग शकोका वंशज न समझ हूण कहनेकी गलती करते हैं—वर्ताव कगोके साथ अच्छा था। जान पड़ता है, कुषाणो और दूसरे शक

शासकोका जब नेतृत्व बदला, तो एफतालो (हेफ्तालो) ने उनका स्थान लिया। तभी उनको कुषाणो, कगो और दूसरे शकोकी भारी घुमन्तू सेना अनायास मिल सकी।

जानबासकला, कोई-किुनगानकला, लघुकिर्किज, क्यूनेली-कला, अकतेपे कगोके ई० पू० ४-५ सदी और प्रथम शताब्दीके बीचके ध्वसावशेष हैं, जिनसे उनकी सस्कृतिका पता लगता है। कललीगिरके ध्वसावशेषोमे बहुतसी मूर्तियाँ, सिक्के और तरह-तरहके मिट्टीके बर्तन मिले हैं। मिट्टीके बर्तनोमे सिंहमुख वाले हथ्ये लगे हुए हैं। जानबास-कलाके ध्वसावशेषसे पता लगता है, कि ई० पू० चौथी सदीमे कग सस्कृति बहुत उन्नत थी। ई० पू० तृतीय शताब्दीमे तो उनके सिक्कोमे ग्रीक सिक्कोकी नकल करनेकी कोशिश की गई और उनपर ग्रीक अक्षर अंकित किये गए। कुपाण-कालीन अयाजकला, जिल्दिक, तोप्रककला जैसे ध्वसावशेष और भी अधिक समृद्ध हैं। कुपाणोका शासन भारतमे भी था, और वहाँ उनके लेख तथा मूर्तियाँ भी मिली हैं, लेकिन कुषाण वास्तुकलाके अच्छे नमूने हमे हालकी ख्वारेज्मकी खुदाइयोमे मिले हैं। ग्युरकला (चैमेनपाब नहरके ऊपर) और बाजारकला इस समयके बड़े सुन्दर नमूने हैं। अभी भी, जान पड़ता है, पीतलके तिकोने शर-फल कग लोग इस्तेमाल करते थे। ई० पू० छठी शताब्दीमे अखामनी सेनामे होकर लड़नेवाले शक पीतलके हथियारोको इस्तेमाल करते थे, यह हमे मालूम है।

६ कुषाण-अफ्रीग (ई० ३—५ सदी)

ईसाकी ३री से ५वी शताब्दीकी ख्वारेज्मकी सस्कृति कुपाण-अफ्रीग सस्कृति कही जाती है। इस सस्कृतिके आरम्भके साथ कगोका वैभव नष्ट हो जाता है। एक तरहसे इसे प्राचीन तथा अर्वाचीन ख्वारेज्मका संधिकाल कह सकते हैं। इस समय नहरे टूटने लगती हैं, नगरोको रेगिस्तान निगलने लगता है और धीरे धीरे बालूमे अन्तर्धान होती सी उनकी मिट्टीकी मोटी दीवारें बनी रहती हैं। वर्षाके नाममात्र होनेके कारण डेढ़ हजार साल बाद भी किज़िलकुमकी मरुभूमिने इन नगरोकी ऐतिहासिक महत्वकी बहुत सी चीजोको सुरक्षित रक्खा, जिनसे उस समयके मानव-जीवनपर बहुत प्रकाश पड़ता है। इन पुराने नगरोकी पिछली १३-१४ सालोकी खुदाईमे बहुतसे सिक्के और मूर्तिया ही नहीं, बल्कि चर्मपत्रपर लिखे कग-भाषा के अभिलेख मिले हैं। अफ्रीग कालके आरम्भिक समयके ध्वसावशेषो—तोप्रककला, यक्केपर्सन और लघु-कवादकला—ने कितनी ही ऐतिहासिक महत्वकी चीजे दी हैं। कवादकलाके ध्वसावशेषकी खुदाईसे ताल्स्तोफ के सहायक पावलोफने उसकी असली आकृतिका जो चित्र अंकित किया है,^१ उससे मालूम होता है, कि इस समय के ख्वारेज्मकी सस्कृति पिछड़ी नहीं कही जा सकती। यक्के-पर्सन^२ मे एक पुराने अग्नि मंदिरका ध्वसावशेष मिला है, जिससे प्राचीनकालकी जर्मुस्त्री अग्निशालाका परिचय मिलता है। तोप्रककलाके नगर को देखनेसे कुषाणकालीन नगरो का अच्छा ज्ञान होता है।

७. अफ्रीग सस्कृति (६—५ सदी)

अफ्रीग सस्कृतिके अवशेष बेकुंत-कला तथा तैशिक-कलामे मिले हैं। ख्वारेज्मकी सस्कृति

^१ वेस्त० ट्रे० १९४६ पृष्ठ० ८३,

^२ वही पृष्ठ ७७,

^३ वही ७३

अपने इसी रूपमें सबसे पहिले अरब विजेताओंके संपर्कमें आती है, लेकिन स्वारेज्मका दुर्गम मार्ग मोहद-विजयके बाद भी कितने ही समय तक अरबोंको अपने भीतर धुमने नहीं देता। इस्लामिक प्रभाव अतत सामानी कालमें ही स्वारेज्ममें पहुँच पाता है। दसवीं सदीके अतमें स्वारेज्मका प्रसिद्ध द्विद्वान् अबूरेह्मा अग्वेस्नी पैदा हुआ। यह भारतकी विद्या और सस्कृतिका इतना सम्मान क्यों करता है? उमीलित कि वह कग और अफ्रीग सस्कृतिका उत्तराधिकारी था। अरबों और बादमें गजनवियोंके हाथमें पराधीन होनेके बाद भी उगे स्वारेज्मके पाचीन वैभवका स्मरण था। ११वीं शताब्दीके आरम्भ में भारतके नगर और वैभवपूर्ण देवालयोंको ब्रह्म होले देखकर उसे प्राग्-इस्लामिक स्वारेज्म याद आता था।

स्रोत ग्रन्थ :

- १ खारेज्मक्या एक्स्त्रिन्मिया १९३९ (म० प० तालस्तोफ)
२. नोविये मतेरिअली पो उस्नोरिइ कुलतुरि द्रेन्तओ स्वारेज्मा (म० प० तालस्तोफ,
- ३ वेस्त० द्रे० उस्नारि, १९४६ (१) पृ० ६०-१००
- ४ उस्नोरिया द्रेव्न्तओ वॉस्नौका (व० व० स्पृवे, १९४१)
- 5 Greeks in Bactria and India (W. W Tarn, Cambridge 1938)
- 6 Les Scythes (F G Bergmann)

अध्याय ३

ग्रीक-बाख्त्री (३३०-१३० ई० पू०)

यद्यपि अलिकसुदर ने गगमेला (अरबेला) के युद्ध में ईरानियों की कमर तोड़ दी, तो भी अखामनी साम्राज्य को पूर्णतया विजय करने में उसे तीन साल (३३४-३३१ ई० पू०) लगाने पड़े। वह पर्शुपुरी और पसरगदै के भव्य नगरों की होली जलाकर अखबतन की ओर होते दारयवहु (३) को पकड़ने के लिये उसका पीछा कर रहा था। इसी समय बाख्त्रिया का क्षेत्रप-सेनापति वेस्सुस नामक एक राजवंशी पुरुष था। अभाग्य दारयवहु अपने भाईवद के पास शरण लेने जा रहा था। वेस्सुस ने उसे भेट दे अलिकसुदर का कृपापात्र बनना चाहा। वह शाह को बाधकर एक ढके रथ पर बैठा अखबतन की ओर चला। उस समय अलिकसुदर कास्पियन के किनारे पहुँचा था। जब उसे खबर लगी, तो वह इस कारवा की ओर दौड़ पड़ा। रथ धीरे-धीरे चल रहा था, इसलिये वेस्सुस ने दारयवहु को घोड़े पर चढ़ाकर जल्दी ले जाना चाहा। शाह ने उसकी बात मानने से इन्कार कर दिया। वेस्सुस ने आखिर में उसे घायल करके मरता छोड़ दिया। मरने से कुछ ही क्षण पहले अलिकसुदर वहाँ पहुँचा। उसने अपने शत्रु के दुर्भाग्य पर आसू बहाया, और उसके शरीर को मोमियायी बना बड़े सम्मान-प्रदर्शन के साथ पर्शुपुरी में दफनाया। वेस्सुस ने बाख्त्रिया लौट कर अर्तक्षत्र चतुर्थ के नाम से अपने को प्राची का शाह घोषित कर चार वर्षों तक (३३३-३२९ ई० पू०) शासन किया।

१ अलिकसुदर (३३४-२३ ई० पू०)

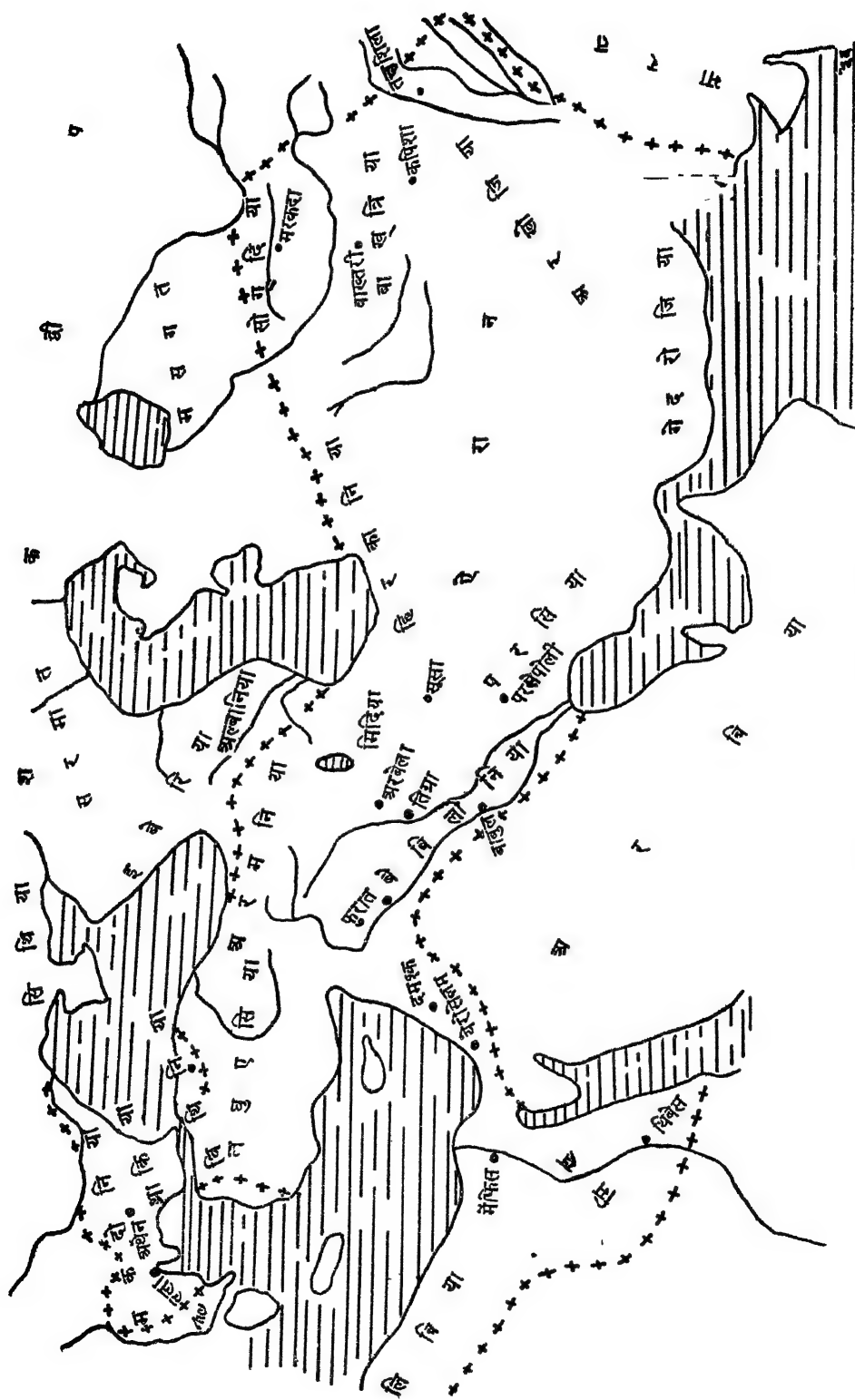
अलिकसुदर ने क्रमशः आजकल के खुरासान, सीस्तान, बिलोचिस्तान, कंधार और काबुलिस्तान को जीता। काबुल से ३२९ ई० पू० में वह अन्दराप पर चढ़ा। फिर २५०० सवारों के साथ जा उसने ओरतो (गोरी या खुल्म) और बाख्तर (बलख) को ले लिया। वेस्सुस के विश्वासघात में बाख्त्री लोग इतने चिढ़े हुए थे, कि उन्होंने उसका साथ छोड़ दिया। उन्होंने बंधु पार भागकर नदी की नौकायें नष्ट कर दी, कि अलिकसुदर पार न हो सके, लेकिन यवनोंने चमड़े की मशकों और बोरों में पुवाल भर कर उन्हें नावों की तरह इस्तेमाल किया और फिर अपने शत्रु का पीछा किया। वेस्सुस ने अपने को बिल्कुल कायर साबित किया। पहले सोगदीय नेता रिपतामा उसका प्रधान सहायक था, लेकिन जब उसकी कायरता देखी, तो उसे बाधकर

^१Histoire Ancienne des Peuples de l'orient (G. Maspero) pp 759-61
इस्तोरिया ड्रेन्नेओ वोस्तोका (व० व० स्त्रूबे) पृ० ३८७-३८८

अलिकसुन्दर के पास ले गया। अलिकसुन्दर ने इस विश्वासघाती को दड देने के लिये ईरानियों के पास अखबतन भेज दिया, जहाँ उसे कतल कर दिया गया।

अलिकसुन्दर की विजयिनी सेना वक्षु के दाहिने तट से आगे बढ़ती गई। स्पितामा के भक्ति दिखलाने पर भी जब सोग्दो को यवनो की बुरी नीयत का पता लगा, तो उन्होंने भी तलवार म्यान से निकाल ली। अलिकसुन्दर ने अपने घोर पशुरूपका परिचय दिया और आसपास के इलाको को लूटमार कर बर्बाद कर दिया। ग्रीक सेना मरकदा (समरकद) को जीतती यक्सर्त (सिरदरिया) के किनारे पहुँची। उन्हें यूरोप से ही मालूम था, कि शको के देश में तनाई (दोन) नामक बड़ी नदी है। यहाँ उन्हें सोग्द से उत्तर शको की भूमि का पता लगा, तो उन्होंने यक्सर्तको भी तनाई समझ लिया। सिरदरिया के तट पर शायद खोजन्द (वर्तमान लेनिनाबाद) के पास उमने अलिकसुन्दरिया के नामसे नगर बसाना चाहा। सोग्दियों ने इसे अपनी चिर-दासताकी बेड़ी समझकर भीषण विद्रोह कर दिया, जिसमें बाख्तरी (बाख्तरी) भी उनके सहायक हुए। थोड़े ही दिनोंमें लोगोंने कुरवपुरी (किरोपोलिस) और दूसरी जगहकी ग्रीक छावनियोंपर अधिकार कर लिया, लेकिन अलिकसुन्दरने बड़ी क्रूरता दिखलाते हुए कुछ ही दिनोंमें विद्रोहको दबा दिया। इसी समय उसने सुना, कि यक्सर्तके पार शक लोग आक्रमण करनेके लिये इकट्ठा हो रहे हैं और मरकदाकी ग्रीक छावनीको स्पितामाने घेर लिया है। उसने एक बड़ी सेना मरकदाके उद्धारके लिये भेजी और स्वयं यक्सर्त नदीके तटपर जा १७ दिनोंमें अलिकसुन्दरिया नगरी बसाई। नगरीका घेरा ६० स्तदिया (१२००० या ६८२ मील) था। उस समय अलिकसुन्दर शत्रुओमें घिरा था बीमारीने उसे दुर्बल बना दिया था, लेकिन तो भी उसने हिम्मत नहीं छोड़ी और नदी पार होकर शकोसे लड़ना चाहा, किंतु ग्रीक सेना नदी पार जानेके लिये तैयार नहीं हुई। इसीलिये नदीके बाये तटपर अलिकसुन्दरिया नामक नये नगरको बसानेकी अवश्यकता पड़ी। नगरके बस जानेपर बेडेसे नदी पार हो ग्रीक सेनाने शकोको पूर्ण पराजय दी और उन्होंने दूत भेजकर अधीनता स्वीकार की। ये शक कग और वूसुन रहे होंगे—इस समय फर्गाना और ताशकन्द इलाकेमें शकोकी आबादी थी।

मरकदाके उद्धारके लिये जो सेना भेजी गई थी, उसे स्पितामाने पोलितिमेतस् (बहुरत्न) उपत्यकामें नष्ट कर दिया। खबर मिलते ही अलिकसुन्दर दौड़ा और चार दिनमें मरकदा (समरकद) पहुँच गया। स्पितामा बाख्तरकी ओर भगा। अलिकसुन्दरने खिसियानी बिल्ली की तरह सारे सोग्द देशको बर्बाद कर दिया। स्पितामाका पीछा करते हुए जारिअस्पा (हजारास्प, ब्रकद) में उसने ई० पू० ३२६-३२८ का जाड़ा बिताया। स्पितामा के रक्षक ख्वारेज्मके शक्तिशाली कग थे, इसलिये उसको परास्त करना आसान नहीं था। वसतमें १६००० नई ग्रीक सेनाकी कुमक अलिकसुन्दरके पास पहुँच गई, जिसकी मददसे उसने ३२८ ई० पू० के वसतमें मर्गियाना (मेर्व) प्रदेशको जीता। मध्यएशियामें अलिकसुन्दरको दुर्धर्ष शत्रुओसे मुकाबला पड़ा था। पेत्रा-ओक्सियाना (मशहदसे उत्तर-पूरब कलानादरी,) इतना सुदृढ़ साबित हुआ कि उसे अलिकसुन्दर दो साल तक सर नहीं कर सका। यहाँका सोग्दीय सेनापति अरिमज उसके लिये लोहेका चना साबित हुआ। अतमें इस वीर दुर्गपालने आत्मसमर्पण किया। अलिकसुन्दर वीरोका कितना सम्मान करता था, इसका पता उसने अरिमजको नहीं बल्कि उसके सबधियो तथा दूसरे प्रधान सरदारोको दारपर खिचवा करके दिया। अलिकसुन्दरकी रानी रोक्सानाको कोई कोई



२०. अलिकसु दर का सामाज्य (३२३ ई० पू०)

इतिहासकार दारयबड़की कन्या बतलाते हैं और किसी किसीका कहना है कि वह सोग्दीय सामन्त ओक्सार्तकी दुहिता थी, जिसे यहीपर अलिकसुदरने पाया। मरग्याना (मेर्व) नगरके दक्षिणमें उसने दो छावनिया या दुर्ग बनाकर वहाँ अपनी सेना रक्खी। शायद यह छावनिया सरक्स (हर्गि-रुदके किनारे) और मेरुचक (मुर्गाब तटपर) में थी।

इस विजयके बाद अलिकसुदर बाख्त्रिया पहुँचा। वहाँ उसने चार यवन छावनिया स्थापित की, जो सम्भवत मेमना, अदकुई, शाबूरगान और सरीपुलमें थी। वहाँसे वह फिर मरकदा लौट आया। स्पितामा अब भी बहादुरीसे लड़ रहा था, लेकिन धीरे धीरे यवनोका पल्ला भारी हो रहा था। अलिकसुदर भी अपने शत्रुको न पाकर देशवासियोंसे बदला ले रहा था, इसलिए घुमन्तुओने स्पितामाका सिर काटकर अलिकसुदरके पास भेज दिया। ३२८-३२७ ई० पू० के जाडोको अलिकसुदर नौतकामे बिता रहा था। इसी समय उसे अपने वीर तथा विश्वासपात्र सेनापति क्लेइतकी हत्याकी खबर मिली। ख्वारेज्मके सिवाय अलिकसुदर सारे पश्चिम मध्य-एशिया (दक्षिणके दक्षिण) को जीत चुका था। अब उसका ख्याल भारत-विजयके लिये हुआ। ३२७ ई० के वसन्तमें भारतकी ओर प्रयाण करते समय उसके साथ १०००० पैदल और ३००० सवार सेना थी। गंधार-विजय करते व्यास तटपर वह नदसाम्राज्यके पास पहुँच रहा था, जब कि उसकी सेनाने आगे बढ़नेसे इन्कार कर दिया और ३२६ ई० पू० में उसे वहाँसे लौटना पडा। उसने सेनाके एक भागको समूद्रपथसे बाबुल भेजा, और दूसरेको साथ लिये स्थल मार्गसे लौटा। ३२४ ई० पू० में वह ओपिस (बगदादके पास) पहुँचा। यूनानी वैसे भी अलिकसुदरके शाहाना ठाटको पसंद नहीं करते थे,। पूर्वी लोगोको यूनानियोंके बराबरका स्थान देनेसे वह और असन्तुष्ट हो गये। यहाँ सभी यूनानियोंने पचायत कर घर जानेकी माग पेश की। अलिकसुदर सरगनोको उसी समय प्राणदंड दिलवा सेनाको खूब फटकार कर महलमें चला गया। अब उसने खुलकर ईरानियोंको शरीररक्षक, दरबारी तथा दूसरे बड़े बड़े पद देने शुरू किये। यूनानियोंने अन्तमें उमसे क्षमा मागी। अलिकसुदर फिर विजययात्रा की धुनमें लगा, किंतु ३२३ ई० पू० में जब वह बबेर (बाबुल) में पहुँचा, तो बीमारीने धर दबाया और ३३ वर्षकी उमरमें उसका देहात हो गया।

अलिकसुदरकी मृत्युके समय बाख्तर और सोग्दका यवन राज्यपाल (स्त्रतेगोस) अमिन्तस था। मृत्युकी खबर बाख्तर पहुँची, तो यवन-सेनाने विद्रोह कर दिया, मगर उसे जल्दी दबा दिया गया। अमिन्तस्की जगह फिलिप (एलिमेयमीय) साल भर राज्यपाल रहा। फिर उसे पर्थियाका राज्यपाल बनाकर भेज दिया गया और उसकी जगह स्तपनोर आया, जिसने २१ साल (३२१-३०१ ई० पू०) तक बाख्तर-सोग्दका शासन किया।

२ सेल्युक १ (३१२-२८१ ई० पू०)

अलिकसुदरकी मृत्यु (३२३ ई० पू०) के होते ही विशाल ग्रीक साम्राज्यके बटवारेके लिये उसके सेनापतियोंमें ४२ वर्ष (३२३-२८१ ई० पू०) व्यापी सघर्ष छिड़ गया। अलिकसुदरने अपने सेनापति सेल्युकत्सलूकको सिरिया (शाम), बबेर और पूर्वी देशोका शासक बनाया था, जो अलिकसुदरके मरनेके बाद उसीके हाथमें रहे। अलिकसुदरके स्थानपर उसके भाई अलिकसुदर (२) को सिंहासनपर बैठाया गया। वह ३२३ ई० पू० से ३१२ ई० पू० तक सेनापतियोंकी प्रति-

द्वन्द्वितामे नाममात्रका शासक रहा। ३१२ ई० पू० के बाद तो दूसरोकी तरह सेल्युक बिल्कुल स्वतंत्र शासक हो गया। अन्तिगोनकी सहायतासे उसने अपने पहलेके शासित प्रदेशमे सूसियानाको भी मिला लिया। अन्तिगोनसे झगडा होनेपर सेल्युकसको ३१६ ई० पू० में मिस्र भाग जाना पडा, लेकिन चार वर्ष बाद (३१२ ई० पू० में) वह फिर बाबुलका स्वामी बन गया। इस सफलताके उपलक्ष्यमे तभी (३१२ ई० पू०) उसने सेल्युकीय सवत चलाया। तो भी अभी तक उसने सेनापतिकी उपाधि हीं रक्खी और राजा (वसीलेउस्) की उपाधि ३०६ ई० पू० में हीं धारण की। बख्त्रिया और सोगदको उसने फिरसे जीतकर अपने राज्यमें मिलाया। अलिकसुदरकी मृत्युके बाद जो अव्यवस्था हुई, उसमें पंजाब और काबुल स्वतंत्र हो गये। सेल्युकसने फिरसे इस भागको जीतना चाहा, जिसके कारण ३०५ ई० पू० में चद्रगुप्त मौर्यसे उसकी मूठभेड हो गई जिसमे “विजेता, राजा, सेल्युकस” को बुरी तरहसे हारना पडा। सिंधु और परोपनिसद (हिंदूकुश) के बीचका सारा प्रदेश चद्रगुप्तने ले लिया और सेल्युकसको अपनी लडकी देकर भीषण पराजयपर मोहर लगानी पडी। यवन विजेताओ की यह पहली भीषण पराजय थी। २८० ई० पू० में सेल्युकस अपने एक अफसरके हाथ मारा गया और उसका उत्तराधिकारी अतियोक प्रथम (२८१-६२ ई० पू०) हुआ। सेल्युकसका तीसरा उत्तराधिकारी उसका पौत्र अतियोक द्वितीय (२६२-३४७ ई० पू०) था। सेल्युकी वंशकी राजधानी दजला (तिग्रा)नदीके किनारे थी, जिसे सेल्युकसने अपने नामपर बसाया था। यह पीछे सासानी (२२६-६४२ ई०) राजधानी तम्पोन का एक भाग रही।

३ ग्रीको-बाख्तरी (२४५-१३० ई० पू०)

अतियोक (२) के शासनकाल (२६२-२४७ ई० पू०) में बाख्तर सहस्रनगरीका राज्यपाल दियोदोत था, जिसने केंद्रीय शक्तिको क्षीण देखते हुए २५६ ई० पू० में धीरे धीरे स्वतंत्र होना चाहा। मगर उसके सिक्कोसे साबित नहीं होता, कि उसने वसेलियुसकी पदवी धारण की। उसको नामके सिक्के वस्तुतः उसके पुत्र दिवोदोत (२) (२३०-२२५ ई० पू०) ने चलाये।

तुलनात्मक बाख्तरी ग्रीक वंश

ई० पू०	भारत	चीन	दक्षिणापथ	उत्तरापथ
	(मौर्य)			
२५०	अशोक २७२-२३२	स्याउवेन् वेङ्ग्	दिवोदात I २४५-२३०	१ तूमन २५०
२३०	दशरथ २२४		दिवोदात II २३०-२२५	
			एउथुदिम २२५-१८९	
२१०		(हान् वंश)		
		काउ-त्ती २०६		
१९०	वृहद्रथ १९१-१८५	हुइ-ति १९४	देमित्रि १८९-१६७	
	(शुग) पुष्य मित्र			
	१८५-१४८			
		वेङ्ग्-त्ती १७९		२ माउदुन १८३
१७०		एउक्रतिद १६७-१५९		३ चीयू १६२
		(मेनान्दर १६६-१४५)		४ चुनचेन १६२-१२७
		चिङ्ग्-त्ती १५६	हेलियोकल १५९-१३०	
१५०	अग्निमित्र १४८-१४०			
	बूती १४०			
१३०	वसुमित्र १२३-११३	अतियालिकद १३०		५ इशीज्या १२७-१७
				६ अच्ची ११७-१०७
११०				७ चान्सीलू १०७-१०४
				८ शूतीहू १०४-१०३
				९ शूलीहू १०३-९८
				१० हूलीहू ९८-८७
९०	देवभूति ८२-८७	चाउनी ८६	(मोग ७७-५८)	हूहान् ये ८२-५२
	(कण्व)			
७०	वसुदेव ७२—	स्वेन्-त्ती ७३	(मोग ७७-५८)	

१. दिवोदोत^१ प्रथम (२४५-२३० ई० पू०)

इसीको ग्रीको-बाख्तरी राज्यका संस्थापक माना जाता है, लेकिन इसमें सदेह है, कि दिवोदोतने अपनेको राजा सेल्युक (२) (२४७-८० ई० पू०) से स्वतंत्र राजा (बसीलेउस्) घोषित किया। इसका सिक्का मिलता है, लेकिन कुछ विद्वानोंका मत है, कि उसे इसके पुत्र दिवोदोत (२) ने बापके नामसे ढलवाया। दिवोदोत केवल सेल्युकीय राज्यपाल (स्त्रतेगो) ही नहीं था, बल्कि अन्तियोक (२) (२६२-४७ ई० पू०) की पुत्री भी इमे व्याही थी, जिससे हुई पुत्रीको एउथुदिमने व्याहा था। पीछे बेटा-दामादका जो संघर्ष हुआ, उसमें दामादको सफलता मिली। अन्तियोक (२) के मरनेके बाद उसका पुत्र सेल्युक (२) राजा बना। उसने अपनी बेटी दिवोदोत (१) के पुत्र दिवोदोत (२) को दी। बहन-बेटी देकर शक्तिशाली सामन्तोंको अपने पक्षमें करना कोई नई नीति नहीं है।

जिस वक्त यह ग्रीको-बाख्तरी नया वंश स्थापित हो रहा था, उसी समय शकोकी एक शाखा दहै (ता-हि-या) भी अपना राज्य स्थापित करनेके प्रयत्नमें थी, जिसमें कगोका पूरा सहयोग था, यह हम कह आये हैं। मूलतः दहै यक्सर्त नदी (सिरदरिया) के पासके रहनेवाले थे। पीछे इन्होंने कास्पियन समुद्रके पास तक फैली दार्यबहुकी पुरानी क्षत्रपी पार्थिया पर अधिकार कर लिया, इसीलिए आगे चलकर यह पार्थिव (पार्थियन) नामसे प्रसिद्ध हुए। २५९ ई० पू० में एक प्रदेशके शासक होनेके बाद धीरे धीरे १४१ ई० पू० में मिथ्रदात (१) ने सेल्युकीय वंशको खतम कर दिया। पार्थियोने प्रायः ४०० वर्षों (२४९ ई० पू०-२२६ ई०) तक ईरान पर शासन किया। इस वंशका स्थापक अर्शक (१) (२४९-२४७ ई० पू०) दिवोदोत (१) (२४५-२३० ई० पू०) का समकालीन था। उसके बाद अर्शक (२) तीरदात (२४७-२१४ ई० पू०) शासक हुआ, जो कि दिवोदोत (२) (२३०-२२५ ई० पू०) और एउथुदिम (२२५-१८९ ई० पू०) का समकालीन था। सेल्युकीय सम्राट् यह आशा रखता था, कि दिवोदोत (१) तीरदातके पक्षमें नहीं जायेगा। दिवोदोत (१) ने ऐसा ही किया भी। पार्थिव वंशमें आगे अर्शक (३), अर्तवान (२१४-१८१ ई० पू०), फ्रात (१) (१८१-१७० ई० पू०) के बाद ५वा राजा मिथ्रदात (१) (१७०-१३८ ई० पू०) बड़ा मनस्वी शासक था, इसीने सेल्युकीय वंशका उच्छेद किया। तबसे पार्थिव वंश ईरान और मसोपोतामियाका शासक तथा रोम और शक साम्राज्यका प्रतिद्वंद्वी बना।

२ दिवोदोत^२ द्वितीय (२३०-२२५ ई० पू०)

प्रथम दिवोदोतका पुत्र दिवोदोत (२) पिताका प्रतिनिधि बनकर सेल्युकीय दरबारमें गया। सेल्युक (२) उससे इतना प्रभावित हुआ, कि उसने अपनी लड़की उसे व्याह दी। लेकिन दिवोदोत (२) अपने पिताके राज्यको अधिक दिनों तक नहीं सभाल सका। उसका बहनोई एउथुदिम उसका भारी प्रतिद्वंद्वी था। सेल्युक (२) ने अपनी स्थिति मजबूत करनेके लिये जहा

^१ Greeks in Bactria and India (W W Tarn)

^२ वही; पाम्प्यालिकि ग्रीको बाक्त्रिइस्कओ इस्कुस्त्वा (क० व त्रेवर) पृ० ५-७

एक लडकी दिवोदोत (२) को दी थी, वहा दूसरी दो लडकिया पोन्त और कपादोकियाके राजाओको दे रखी थी। इन दोनो दामादोसे वह आशा करता था, कि वह पश्चिमके सीमातकी रक्षामे सहायता करेगे। अलिकसुन्दरके साम्राज्यके भिन्न-भिन्न भागोके उत्तराधिकारी एक दूसरेके राज्यकी छीना-झपटी करते ही रहते थे। मिस्रके राजा तालमी (तुरमाय) (३) ने २४६ ई० पू० मे राजधानी सेलूकियाको छीन लिया और सेल्युक (२) को भाग जाना पडा। ऐसी डावाडोल स्थितिमे बडे सावधान रहनेकी अवश्यता थी। दिवोदोत (१)ने उत्तरके दहै को मदद नही दी, लेकिन उसके पुत्रने इस नीतिको छोड दिया और सेल्युकीय साम्राज्यपर आक्रमण करनेवाले तीर-दातके साथ मेल कर लिया। सेल्युकीय विधवा रानीने अपने पक्षको मजबूत करनेके लिये अपने प्रभावशाली स्वतेगस (क्षत्रप) एउथुदिमको अपनी कन्या व्याह दी। एउथुदिमने दिवोदोत (२) को मार डाला, जिसपर अन्तियोक (३) उससे बहुत प्रसन्न हुआ।

३ एउथुदिम^१ (२२५-१८९ ई० पू०)

एउथुदिम और उसके पुत्र दिमित्रियका शासन ग्रीको-बाख्तर राजवशके बडे वैभवका समय है। उस समय राज्यमे बाख्त्रिया, सोग्डियाना, मर्गियाना, फर्गाना, द्रगियाना, अरखोसिया, परोपनिसदैके प्रदेश तथा भारतके कितने ही भाग थे। आजकल ये प्रदेश ताजिकिस्तान, उज्बेकिस्तान, तुर्कमनिस्तान, किर्गिजिस्तान और कजाकस्तानके सोवियत गणराज्यो, सीस्तान (पूर्वी ईरान), अफगानिस्तान, पाकिस्तान और भारतमे है। एउथुदिम मैन्दर नदीके तटपर अवस्थित मग्नेसिया महानगरीके युद्धमे १८९ ई० पू० मे मारा गया। उसके मारे जानेके बाद बाख्त्रियाका राज्य दिवोदोत (२) के हाथमे आया। उसने भी अपने सरक्षक सेल्युकीय वशके साथ वही बर्ताव किया, जो कि उसके मृत प्रतिपक्षीने किया था। उत्तरके घुमन्तू दाहै से सेल्युकीय राज्यको बडा खतरा था, जिससे रक्षा पानेके लिये एउथुदिमको प्रसन्न रखना आवश्यक था, लेकिन एउथुदिम अपने प्राप्त राज्यमे सतुष्ट रहनेवाला नही था। उसकी इस महत्वाकाक्षामे अन्तियोक (३) भी अपरिचित नही था। उसने इमे रोकनेके लिए २०८ ई० पू० मे एउथुदिमपर आक्रमण किया। इस समय बाख्त्रिया राज्यकी सीमा पूर्वमे हिंदूकुश और पश्चिममे निम्न आर्य (हरीरूद)नदी तक थी। अन्तियोकके आक्रमणको रोकनेके लिए एउथुदिम १०००० सवारोके साथ आर्य नदीपर गया, किंतु उसे हार खाकर लौट आना पडा। इसके बाद अन्तियोकसे एकके बाद एक हार खाते अतमे उसे बाख्तर (बलख) की अपनी दुर्गबद्ध राजधानीमे शरण लेनी पडी। अन्तियोक (३) ने उसे दो साल तक घेरे रक्खा। दुर्ग बहुत दृढ था, तो भी अधिक काल तक डटे रहना संभव नही था। एउथुदिमने जब उत्तरके घुमन्तुओ (कगो) को बुलानेकी धमकी दी, तब अन्तियोक उससे सधि करके लौट गया। एउथुदिमने कुछ हाथी प्रदान किये। अन्तियोकने अपने प्रतिद्वन्द्वीके पुत्र दिमित्रियको अपनी कन्या देनेका वचन दिया। अन्तियोकके लौट जानेपर एउथुदिमने सेना और कोश बढाते अपने राज्यको शक्तिशाली बनाना चाहा। पश्चिममे अन्तियोक (३) के होनेसे वह उधर बढ़ नही सकता था। उत्तरमे उसका राज्य मोग्द

^१ Greeks in Bactria

और फर्गाना तक था। (यही फर्गानाकी उपत्यका पीछे बाबरकी जन्मभूमि हुई, जिसने १५वीं सदीके अन्तमें वहाँ की जो समृद्धि देखी थी, उसे भारतका सम्राट् होनेके बाद भी वह भूल नहीं सकता था।) फर्गाना उपत्यका फलो और खेतीके लिए बहुत प्रसिद्ध थी, लेकिन इससे भी अधिक उसकी समृद्धिका कारण चीनका रेशमपथ था, जो कि इसके भीतरसे गुजरता था।

बाख्त्रिया (वाह्लीक) आजकी तरहका मरुकातार जैसा देश नहीं था। अपनी उर्वरताके कारण इसे "पोलिमिमेतस" (बहुमूल्यवान्) कहा जाता था। अपनी हजारों नहरों में सहस्रभुज और हजारों नगरोंके कारण सहस्र नगर भी इसका नाम था। राज्यके भीतर बदख्शाकी लाल (पद्मराग)की खाने, खुरासानमें फीरोजेकी खाने और यमगानमें वैडूर्य जैसी मूल्यवान् खाने थी। बदख्शामें ताबा और लोहा भी निकलता था।

चीनसे पश्चिमकी ओर आनेवाला रेशमपथ इसी राज्यसे होकर गुजरता था, इसके कारण भी एउथुदिम बहुत संपत्तिशाली था। रेशमपथ तरिम-उपत्यकासे पामीर पार करनेके बाद ईर्किस्तामसे एक रास्ता तेरक डाडा पार हो फर्गाना पहुँचता, और दूसरा अलई उपत्यका होते बाख्त्रिया में। फर्गाना और बाख्त्रियाका स्वामी तरिम-उपत्यकाकी ओर जानेवाले रास्तेका भी स्वामी था। हा, तब भी एक रास्ता तरिम-इस्सिकुल (सरोवर) रह जाता था, जिसके स्वामी वू-सुन (सेरेस) थे।

एउथुदिमके समय अभी हूण अपनी पुरानी भूमिमें थे, यूची शक भी कन्सूकी अपनी जन्मभूमिमें चीनके पड़ोसी थे। इस रास्ते होने वाला चीनका व्यापार आयका भारी स्रोत था। अफगानिस्तान (कपिशा-उपत्यका) होकर भारतका व्यापार भी बाख्तरसे बहुत होता था। चीनी दूतने १२८ ई० पू० में जहाँ भारतकी बहुत सी पण्य वस्तुये वहाँ देखी, वहाँ भारतके रास्ते आई चीनकी भी कितनी ही चीजे पाईं।

व्यापारके इतने विकाससे एउथुदिम सोनेके महत्वको समझता था। सोना प्राप्त करनेकी ओर उसका ध्यान गया। उसके राज्यके उत्तर-पूरबमें वूसुन (शक) रहते थे, जिनका प्रदेश अल्ताई तक फैला हुआ था। अल्ताई स्वयं अपने नामके अनुसार सुवर्णगिरि है। उसके उत्तरमें पुरानी सोनेकी खानोंमें आज भी काम होता है। उनके और उत्तरमें कई खाने हैं, जिनमें साइबेरियामें लेनाकी सोनेकी खाने दुनियामें अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। पहले अल्ताई और साइबेरियाकी खानोंका सोना ही मध्य-एशिया, भारत और ईरानमें जाता था। लेकिन, दारयबहु (५२१-४८५ ई० पू०) के समय और उसके बादसे वहाँसे सोना आना बंद हो गया। एउथुदिमने चाहा, कि तीन शताब्दियोंसे रुके इस सुवर्णपथको फिरसे खोला जाय, जिसमें रेशमपथकी तरह सुवर्णपथ भी बाख्त्रियाकी समृद्धिको और बढ़ा सके। सिबेरियाके सुवर्णपथके ऊपर आकर किसी घुमन्तू जातिने रास्तेको काट दिया। ऐसी जाति हूणोंके कबीले ही हो सकते थे, जिनका सबंध चीनसे अधिक घनिष्ठ था। उन्होंने सिबेरियाके सोनेकी धाराको उधर फेर दिया। ई० पू० द्वितीय सहस्राब्दीमें लेना नहीं भी हो, तो भी अल्ताई और कजाकस्तानकी दूसरी सोनेकी खानोंमें शकोंके पूर्वज काम करते थे, लेकिन, अब शक-वंशज वूसुन—जो बिचवाई होकर सोनेको मध्य-एशिया पहुँचा सकते थे—हूणोंके हस्तक्षेपके कारण असमर्थ थे। एउथुदिमने सोचा, यदि अपने इन उत्तर-पूर्वी पड़ोसियोंको अधीन कर लिया जाय, तो सोनेका रास्ता खुल जायेगा। रोमन इतिहासकार प्लीनीने

सिंहलवालोसे सुनकर सेरेस (वूसुन) लोगोके बारेमे लिखा है—“यह बड़ी कद्दावर जाति है। इनके बाल लाल और आखे नीली होती है। यह हेमोदो (हिमवान्) पर्वतके उत्तरमे रहते है।” पीछे चीनियोने भी इन्हें रक्त-केश और नील-नेत्र लिखा है। एउथूदिम फार्नासासे त्यानशान्की पहाडियोमे घुसकर इस्सिकुल सरोवर तक गया, किंतु स्वर्णपथको खोल नहीं सका।

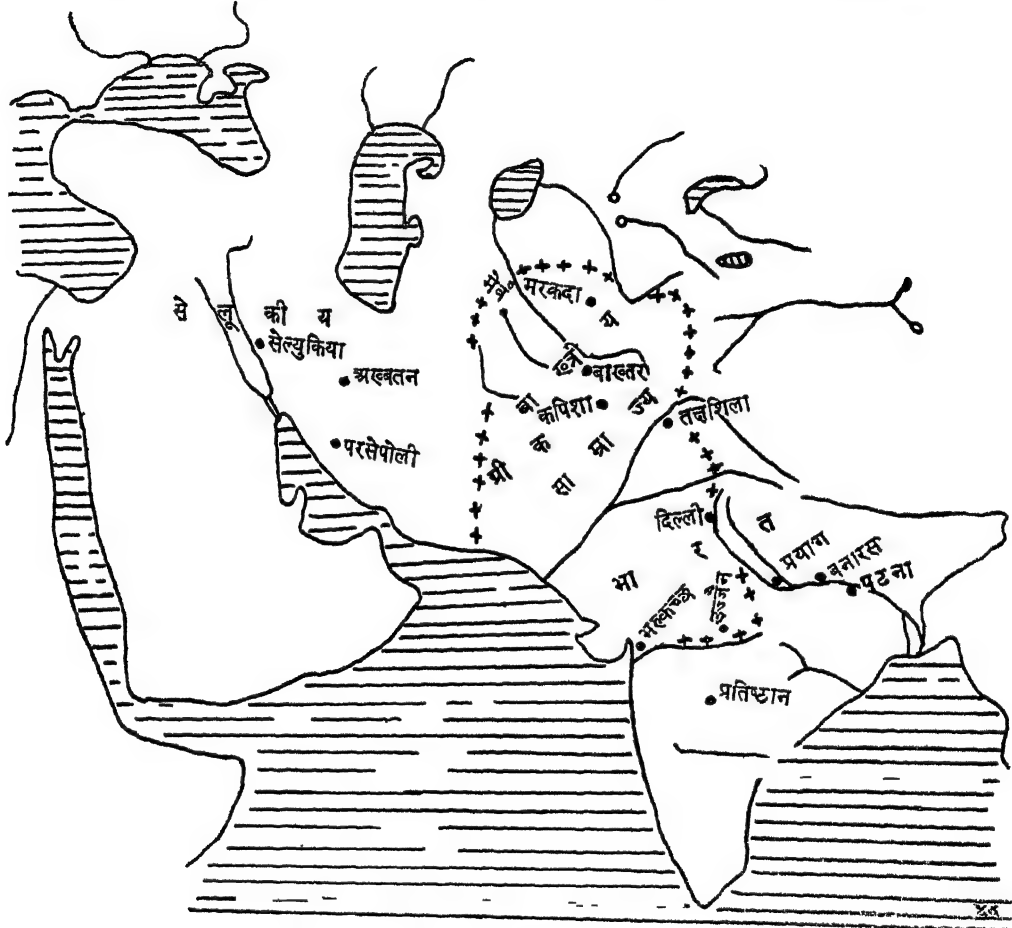
सेरेस् (वूसुन) स्वयं सुवर्णके उद्गमके साथ सबध नहीं रखते थे। येनीसेईके ऊपरी भाग तथा दूसरी जगहोकी सोनेकी खानोके स्वामी हूण थे। उत्तरके घुमन्तुओका विजय करना सदा टेढ़ी खीर थी, इसलिए एउथूदिमको खाली हाथ लौटना पडा। यह अभियान २०६ ई० पू० मे हुआ था। यह याद रखनेकी बात है, कि ग्रीको-बास्तरी राजाओके सिक्के सोनेके नहीं थे। उनके बडे ही सुन्दर तेत्राद्राख्म चादीके होते थे। मुद्रामे सुदर रूप अंकित करना एउथूदिमके समय जहा पहुचा, वहा फिर नहीं पहुच सका। २०६ ई० पू० के बाद उत्तरसे लौटकर उसने पार्थियोको परास्त कर उनके कुछ प्रदेश छीन लिये। मर्गियाना और निम्न आर्यू (हरी रुद) उपत्यकाका उपराज उसने अपने द्वितीय पुत्र अन्तिमाखूको बनाया, मर्ग (मेर्व) उसकी राजधानी बनी। अन्तिमाखू जिस तरह बापका उपराज रहा, उसी तरह अपने बडे भाई दिमित्रिका भी था। सेल्युकियोमे गद्दीके उत्तराधिकारीको उपराज कहते थे। उपराज बनानेकी यह प्रथा ग्रीको-बास्त्रियोने भी स्वीकार की। हमे मालूम है, कि हूणो और दूसरे घुमन्तू कबीलोमे भी प्रदेशोके राज्यपालोको उपराजकी अधिक सम्मानित उपाधि दी जाती थी। दाहै (पार्थियो)में भी यह प्रथा थी। शायद उनसे ही एउथूदिमने इस को लिया। उपराज अपने सिक्के भी चलाते थे। बहुधा उनकी साधारण प्रजाको यह मालूम नहीं होता था, कि हमारे राजाके ऊपर और भी कोई राजा है। इस तरहका भ्रम ग्रीको-बास्त्री राजाओके ही सबधमे नहीं, बल्कि यूची, कुषाण, एफ़ताल (श्वेतहूण) और तुर्कोके बारेमे भी देखा जाता है। हम यह निश्चित तौरसे नहीं बतला सकते, कि तोरमान अधिराज था, या उपराज। अन्तिमाखूने अपने सिक्कोपर ‘थेव’ खुदवाया। थेव या देव राजाको कहते हैं, यह हमे सस्कृत साहित्यमे मालूम है। पार्थिव राजा अर्तबानु (२१४-२८१ ई० पू०) अपनेको थेव-पातुर (देवपुत्र) लिखता था।

इस कालमे उत्तरी घुमन्तू फिर जोर पकडने लगे। अलिकसुन्दरके समय बास्त्रिया और सोगदके गाव-नगर खुले होते थे, लेकिन ग्रीको-बास्त्रिय शासनके अतमे, जब चाडक्यान् (१२८ ई० पू०) इस प्रदेशमे आया तो उसे समरकंद और बास्तर जैसे महानगर ही-दुर्गबद्ध नहीं मिले, बल्कि वहाके गाव भी प्राकार-बद्ध थे। उत्तरके घुमन्तूओका बहुत डर जो था।

४ दिमित्रि (१८९-१६७ ई० पू०)

यह एउथूदिमका ज्येष्ठ पुत्र था। इसके दूसरे भाई अन्तिमाखूके बारेमे कह चुके हैं। शायद अपोलोदोत भी इसका छोटा भाई था। बापके अपूर्ण कामको इसने पूरा करना चाहा। इसकी भारत मे विजय-यात्रा हमारे इतिहासके लिए विशेष महत्व रखती है। समकालीन व्याकारणकार पतजलिने “अरुणद् यवन साकेत” (यवनने अयोध्याको घेर लिया) कहते हुए दिमित्रिकी ओर ही इशारा किया। बास्त्रियाके ग्रीक शासकोका भारतसे घनिष्ठ सबध था। सेल्युक (१) (३२३-२८१ ई० पू०) ने चद्रगुप्तको पुत्री देकर जो सबध स्थापित किया था, उसे उसके वंशजोने भी

कायम रक्खा। सेल्युक (१) का राजदूत मेगस्थनी मौर्य-राजधानी (पाटलिपुत्र) में वर्षों रहा, और उसने भारतका जो वर्णन छोड़ा, [उसका उपलब्ध भाग आज भी हमारे इतिहासकी ठोस सामग्री है। सेल्युक (१) के पाचवें उत्तराधिकारी अन्तियोक (३)—ने एउथूदिमको



२१. देमित्रिका ग्रीक साम्राज्य (१६७ ई० पू०)

दो साल (२०८-२०६ ई० पू०) तक बलखमें घेरे रक्खा, और स्वयं मौर्य राजा सुभगसेन से परोपनिसदै कपिशा-उपत्यकामें आकर मिला तथा अपनी वशागत मित्रताको फिरसे बृद्ध किया।

(भारत-विजय^१ १७३-१६७ ई० पू०)

कुरव और दारयबहु (१) के सिंधु-विजयकी बात हम कह चुके हैं। जान पड़ता है, अर्तक्षेत्र (२) (४०४-३५८ ई० पू०) के समय सिंध और गंधार अखामनी राज्यसे निकल गये।

^१ Greeks in Bactria, पाभ्यास्तिकि० पृ० ६

इसके बाद पजाबमें छोटे-छोटे गणराज्य तबतक मौजूद रहे, जबतक कि अलिकसुन्दर कपिशा से पजाबकी ओर बढ़ते व्यासके तट तक नहीं पहुँचा। अलिकसुन्दरकी विजययात्राका फल स्थायी नहीं हुआ। इसमें चद्रगुप्त मौर्य (३२१-२९७ ई० पू०) भारी वाधक हुआ। अब मौर्यवंश खतम हो रहा था। अंतिम मौर्य राजा को मारकर सेनापति पुष्यमित्रने राज्य अपने हाथ में कर लिया। दिमित्रि उसी सेल्यूक के नाती का दामाद होने का अभिमान रखता था, जिसका सबध मौर्य वंशसे भी था। अभी तक ग्रीक शासक स्थानीय लोगों से अलग रहकर अपना शासन करना चाहते थे। दिमित्रि ने स्थानीय सामन्तों को भी सहभागी बनाना चाहा। मौर्य वंश के उच्छेत्ता पुष्यमित्र के विरुद्ध जो भाव देश में फैला हुआ था, उसने उससे लाभ उठाना चाहा और १८३—१८२ ई० पू० में हिन्दूकुश को पार किया। अन्तिमाख अपने प्रदेश का उपराज था, दिमित्रिने अपने ज्येष्ठ पुत्र अेउथुदिम (२) को बास्तर और सोगदका शासन सौंपा, और अपने द्वितीय पुत्र दिमित्रि (२) छोटे भाई अपोलोदोत तथा सेनापति मेनान्दर के साथ भारत-विजय के लिये प्रस्थान किया। संभवतः परोपनिसर्दै (कपिशा) बाप के समय से ही उसके हाथ में था।

आगे बढ़ते गंधार (पेशावर और तक्षशिला) प्रदेश को विजय करना था। मौर्य साम्राज्य के उत्तराधिकारी पुष्यमित्र को अकटक राज्य नहीं मिला था। कलिगराज खार्वेल उसके विरुद्ध पाटलि-पुत्र तक चढ़ आया और पुष्यमित्र को राजधानी छोड़कर मथुराकी ओर भागना पड़ा था। दक्षिण में शातवाहन भी उसके प्रतिद्वंद्वी थे। मौर्य साम्राज्य के पश्चिमी भाग को वह कभी अपने हाथ में नहीं कर सका। उस समय अभी दर्रा खैबर का रास्ता खुला नहीं था। इसके खोलनेवाले कुषाण थे, जिनके आने में अभी प्रायः दो शताब्दियों की देर थी। दिमित्रि को अलिकसुन्दरवाला रास्ता लेना पड़ा, जो कि कुनार-उपत्यका से होकर बाजौर, स्वात, बुनेर, युसुफजई और पेशावर होकर सिंधु तटपर पहुँचता था। सिंधु नदीके पश्चिम पुष्कलावती (आधुनिक चारसदा) एक प्रसिद्ध नगर था, जिसे ग्रीक राजाओंकी राजधानी बननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। कश्मीर और गंधार अब तक बौद्ध देश बन चुके थे। तक्षशिलाका व्यापारिक और सांस्कृतिक गौरव अभी नष्ट नहीं हुआ था, बल्कि मौर्य उपराजकी राजधानी रहनेसे उसका महत्व और भी बढ़ गया था। दिमित्रिने तक्षशिला में एक नये नगर की स्थापना की, जिसे आजकल सिरकपका ध्वसावशेष कहते हैं। कपिशाका शासन उसने अपने पुत्र दिमित्रि (२) को दिया, शायद गंधार को भी उसीके हाथमें दिया। इसकी राजधानी अलक-सन्दारिया-कपिशा थी, जिसके ध्वसावशेष आज भी काबुलसे थोड़ा पश्चिम कोहदामन-उपत्यकामें वेग्रामके नामसे मौजूद हैं। दिमित्रि के सिक्केपर उसका जो रूप अंकित है, उसमें शिरके ऊपर हाथीके सूड और दात जैसा मुकुट उसके भारत-विजेता होनेका सूचक है। उसने ही अपने सिक्के पर पहली बार ग्रीक भाषाके साथ प्राकृत भाषा और पश्चिमी भारतमें चालू खरोष्ठी लिपिको अपनाया। दिमित्रिने वर्तमान सिंध को जीता और वहापर अपने नामकी नगरी बसाई, जिसे हमारे संस्कृत लेखकोंने दत्तामित्रि बना दिया। शायद इससे पहले वह वक्षुके किनारे भी अपने नामका नगर बसा चुका था, जो दिमित्रिसे तेरमिज बनकर आज भी मौजूद है। यवन सेना मेनान्दरके नेतृत्वमें गंधारसे सागल (स्यालकोट) लेते व्यास और सतलुज पार हो मथुरा पहुँची, वहासे पंचालको लेते उसमें साकेतको जा घेरा (अरुणद् यवन साकेत)। फिर जाकर राजधानी

पाटलिपुत्रपर भी आक्रमण किया। उधर दिमित्रिके भाई अपोलोदोतने सिधके डेल्टा पाटलाको ले सौराष्ट्र-विजय किया, फिर भरुकक्षको अपनी राजधानी बना चित्तौड़के पास माध्यमिका नगरी को जा घेरा (अरुणद् यवन माध्यमिका)। शायद अपोलोदोतने उज्जैनको भी ले लिया। इस प्रकार दिमित्रिके दो सेनापतियोंमें मेनादर पाटलिपुत्र तक विजय करनेमें सफल हुआ और अपोलोदोत अपनी विजय यात्रामें उज्जैन तक पहुंचा। दिमित्रि स्वयं तक्षशिलामें था। वह समझ रहा था, अब मैं फिर मौर्य साम्राज्यके वैभवको पुनर्जीवित कर सकता हूँ। अलिकसुन्दरके लिये—और वही बात अखामनी राजाओंके बारेमें भी है—वह इन्दु या हिंदु का अर्थ सिधु-उपत्यकावाला देश समझते थे। ग्रीक राजाओंने उसे मौर्य साम्राज्यका पर्याय माना था। दिमित्रि जिस इन्दु या इन्दियाका राजा था, वह यक्सर्त नदी (सिरदरिया) से सौराष्ट्रके तट तक और ईरानी मरुभूमिसे पाटलिपुत्र तक फैली हुई थी। भारतमें दक्षिणी कश्मीर, पंजाब, उत्तर-प्रदेश, बिहार, मालवा, राजस्थान, उत्तरी गुजरात, काठियावाह, कच्छ और सिध उसके अधीन थे।

दिमित्रि केवल आक्रमण द्वारा धन जमा करनेके लिये नहीं आया था, बल्कि उसकी मनसा इस देशका स्थायी शासक बननेकी थी। मध्य-एशिया और मगध के बीचमें होनेसे तक्षशिलाको उसने अपनी राजधानी बनाया। प्रदेशोंमें उसके उपराज (राज्यपाल) शासन करते थे। उसका पुत्र अगथोकल परोपमिसदै (कपिशा) का उपराज था। इसने भारतके पुराने चौकोर (पंचमार्क) सिक्कोंकी नकलपर अपना सिक्का चलाया था, जिसमें ग्रीक लिपि और भाषाको बिल्कुल हटाकर केवल भारतीय (ब्राह्मी) लिपि और भारतीय भाषा (पाली) का प्रयोग किया। यही एकमात्र ग्रीक राजा है, जिसने अपने सिक्कोंका पूर्णतया भारतीयकरण किया। उसके चौकोर सिक्कोंकी एक ओर मौर्य सिक्कोंकी तरह पर्वत बना रहता और दूसरी ओर पापाण बधनीके बीचमें खड़ा वृक्ष है, जो सभवतः बोधि वृक्षका संकेत है। साथ ही उसने अपने सिक्कों पर “दिकडओम्” (धार्मिक) लिखा है। “धम्मिको धम्मराजा” पालीमें एक प्राचीन प्रशंसावाचक शब्द है। कपिशा (परोपमिसदै) उस वक्त बौद्ध प्रधान तेश था। अगथोकलके बड़े भाई तथा अपने तृतीय पुत्र पन्तलेओनको दिमित्रिने सीस्तान और अरखोसिया (बलोचिस्तान) का उपराज बनाया था, और अपने छोटे भाई अपोलोदोतको गंधारका, जो साथ ही अपोलोदोत भरुकच्छ (गुजरात) का भी शासक था। जान पड़ता है, पेशावर-तक्षशिलासे सिध डेल्टा (पाटला) होत गुजरात तक इसके हाथमें था। एक समय इसने उज्जैनको भी ले लिया था, लेकिन जल्दी ही पुष्यमित्रने उसे खाली करवा लिया। झेलम (बितस्ता) नदीके पूरबमें मिनान्दरका शासन था। गर्गसहितामें दिमित्रिके विजयका वर्णन करते हुए लिखा है—

तत संकेतमाक्रम्य पचालान् कुसुमध्वजम्।

यवना दुष्ट-विक्राता प्राप्स्यन्ति कुसुमध्वजम्॥

ग्रीक राजाओंके सुन्दर सिक्कोंमें दिमित्रिके पिताका सिक्का और भी सुन्दर माना जाता है।^१ अनुमान किया जाता है, कि इसके पिताके समयका कलाकार इस वक्त भी मौजूद था। इसके तेजान्द्रास्त्र चादी के सिक्कोंमें एक ओर गजमुख-मुकुट धारण किये गभीर-आकृति दिमित्रिका

^१ पम्पातिकि ग्रीको-बाक्त्रिइ इस्कओ इस्कुस्त्वा, फलक ३६

अधदेह है, और दूसरी ओर बाये हाथमे दण्ड और सिंह चर्म लिये दाहिने हाथ को कानके पास रखकर हेरकल खड़ा है। मूर्तिकी दाहिनी ओर “बसिलेउस्” अंकित है और दाहिनी तरफ पैरोके पास “कै” तथा “दिमित्रिओस्” अंकित है। उसके भारत-विजयके उपलक्षमे निकाले सिक्कोमे अंकित है “बसिलेउस् अनिकितोस् दिमित्रिओस्” (राजा अजेय दिमित्रि)। उसके ताबेके सिक्को पर भारतका प्रतीक गजमुण्ड बना रहता है, और दूसरी तरफ “बसिलेउस् दिमित्रिओस्”। यह उल्लेखनीय बात है, कि यद्यपि ग्रीक राजाओका शासन ईरान, बबेक और मिश्रमे रहा, किंतु उन्होंने कहीं भी स्थानीय लिपि और भाषाका प्रयोग अपने सिक्कोपर नहीं किया। भारतका संपर्क होते ही मुद्रा-नीतिमे यह परिवर्तन विशेष महत्व रखता है। दिमित्रि (२) ने अपने पिता दिमित्रि (१) के सिक्कोपर ग्रीक अभिलेखके साथ खरोष्ट्री लिपिमे पाली भी लिखवाया।

ग्रीक और भारतीय दोनों उल्लिखित परंपराओसे पता लगता है, कि पाटलिपुत्र और उज्जैन तक एक बार पहुंचकर, मथुरा और भरोच तक अपनी स्थिति को मजबूत करके भी स्वदेश पर सकट उपस्थित होनेके कारण दिमित्रिको भारतसे जाना पड़ा। जिस शत्रुके कारण दिमित्रि (धर्ममित्र) को भारत छोड़कर बाख्त्रियाकी ओर दौड़ना पड़ा, वह था सेल्यूकीय जेनरल एउकतिद। इसकी मा लओदिका सेल्यूक (२) (२४७ ई० पू०) और सेल्यूक (३) (२२६-२२३ ई० पू०) की भी पुत्री थी। दिमित्रि और सेल्यूकियोका झगड़ा चला जा रहा था। सेल्यूकीय राजा अन्तियोक (४) बाख्त्रियाको अपनी क्षत्रपी मानता था, और बाख्त्रिया शासक अपनेको स्वतंत्र। परिणाम सैनिक सघर्ष के रूपमे होना आवश्यक था। अन्तियोक (४) (१७५-६३ ई० पू०) का सघर्ष अपने पश्चिमी पड़ोसियोंके साथ भी था। उसके सेनापित अउकतिदने मिस्रको जीता था। अब युरोप मे एकऔर भी नई दुर्घर्ष शक्ति पैदा हो गई थी—रोमन साम्राज्यका विस्तार हो रहा था। १८६ ई० पू० मे रोमने धमकी दी, जिसपर सेल्यूकियो को जीते हुए मिस्रको छोड़कर चला आना पड़ा। उत्तरमे पार्थिव मिथ्रदात (१) (१७०-१३८ ई० पू०) भी बड़ा ही प्रबल और महत्वाकांक्षी शासक था। तो भी उसने अन्तियोक (४) की मृत्यु तक अपनेको रोके रक्खा। सेल्यूकीय राजपरिवारमे आपसी सघर्ष भी चल रहा था। अन्तियोक (४) के मरने के समय (१६३ ई० पू०) उसके पूर्वाधिकारी अन्तियोक (३) (मृत्यु १५३ ई० पू०) का तृतीय पुत्र रोम-दर्बारमे जामिन के तौरपर रह रहा था। जब उसका भाई सेल्यूक (४) १७५ ई० पू० मे मरा, तो उसने अन्तियोक (४) के नामसे प्रतिद्वन्द्वियोंको हराकर स्वयं शासनसूत्र अपने हाथमे सभाला और अपने भतीजे बालक राजाकी मा अन्तियोक (३) की पत्नी लओदिका से ब्याह किया। लओदिकाने क्रमशः अपने तीनो भाइयोसे शादी की थी—पहले ज्येष्ठ अन्तियोक (३) (मृत्यु १६३ ई० पू०) से, फिर द्वितीय भाई सेल्यूक (४) से, फिर तीसरे भाई अन्तियोक (४) से। उस समय बहिन भाईका ब्याह ईरानियोंकी तरह ग्रीक राजाओमे भी होता था। शायद यह अंतिम ब्याह उसने अपने पुत्रको गद्दीका हकदार बनाये रखनेके लिए किया। १७०-१६६ ई० पू० मे उसके लड़केकी हत्या हो गई। अब तक अन्तियोक (४) राज का साझीदार भर था, अब वह अपने भतीजेके हत्यारेको प्राणदंड दे स्वयं एकाधिप राजा बन गया। १८६ ई० पू० मे अन्तियोक (३) और रोमका मगनेसियामे भीषण युद्ध हुआ, जिसमे रोमकी विजय हुई और क्षुद्र-एसियाके सभी राजा रोमके करद हो गए।

अन्तियोक (४) ने अपने आरम्भिक जीवनके बहुत से वर्ष रोममें बिताये थे, इसलिए रोमकी शक्तिसे वह अच्छी तरह परिचित था और बड़े भाईकी गलतीको दोहराना नहीं चाहता था। उसके राज्यके उत्तरमें मिथ्रुदात (१) (१७०-१३८ ई० पू०) था, जिसे छोड़ा नहीं जा सकता था। ईरानी रेगिस्तानके पूर्वके भाग (सीस्तान और बलोचिस्तान) को दिमित्रिने ले लिया था। यदि अन्तियोक (४) राज्यविस्तार कर सकता था, तो इसी ओर। इस समय दिमित्रि भारत-विजयमें लगा अपने पश्चिमी सीमातसे दूर था। यह मौका बड़ा अच्छा था। अन्तियोकने मिस्र-विजय करके १६६ ई० पू० में उसकी राजधानी मेम्फीमें अपना अभिषेक कराया था, लेकिन रोमकी लाल-लाल आखोंको देखते ही (१६८ ई० पू०) उसे मिस्रको छोड़ देना पड़ा।

५ एउक्रतिद (१६६-१५९ ई० पू०)

एउक्रतिद^१ अन्तियोक (४) (१७५-१६३ ई० पू०) का फुफेरा भाई था। उसके जन्ममें अन्तियोकने दिमित्रिके राज्यको जीतने का काम सौपा और स्वयं पश्चिमके विजयके लिये प्रस्थान किया। पश्चिममें उतनी सफलता नहीं मिली, लेकिन एउक्रतिदने १६७ ई० पू० तक हिंदूकुशके पश्चिमके प्रदेशको जीत लिया। सीस्तान, अरखोसिया (बलोचिस्तान), अरिया (हिंरात), बाख्त्रिया और सोगद एउक्रतिदके हाथमें चले गये। अब दिमित्रि कैसे तक्षशिलामें चैन के साथ बैठ सकता था? वह फौरन भारतसे अपनी सेना ले बाख्त्रियाकी ओर दौड़ा। उसने अपने सेनापति मिनान्दरको भी ऐसा करनेके लिये हुक्म दिया, जिसे उसने नहीं माना। एक जगह दिमित्रिने एउक्रतिदको घेर लिया था, लेकिन वह निकल भागनेमें सफल हुआ। हिंदूकुशके पास ही एक युद्ध में दिमित्रि मारा गया। अलिकसुन्दरकी तरह दिमित्रिने भी ग्रीक और अग्रीक के भेदको अपने शासन और सेनासे मिटाना चाहा था। शायद इसीके कारण ग्रीक सैनिक उससे प्रसन्न नहीं थे। उबर सेल्यूकीय राजा शुल्लसे ही ग्रीक रक्त के पक्षपाती थे।

१६६ ई० पू० में एउक्रतिदका कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं रह गया था। अन्तियोक (४) उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकता था। १६६ ई० पू० में एउक्रतिदने अपनेको राजा (बसीलेउस्) ही नहीं, “महाराज” (बसीलेउस् मेगलोस्) घोषित किया। एउक्रतिदने बाख्त्रिया में अपने नामकी एक नगरी (एउक्रतिदेइया) बसाई। उसके पुत्र हेलिओकलने अपनी राजधानी बाख्त्रिया ही रखी। एक चादीके सिक्केमें एउक्रतिदका एक तरफ हैट पहने चेहरा है। ग्रीक बाख्त्री राजाओंमें इसे और उपराज अन्तिमाखूको छोड़ किसीने हैट सहित चित्र नहीं बनवाया। उसके सिक्केकी दूसरी ओर ग्रीक लिपिमें दो दौड़ते घोड़ों पर हाथमें लंबे भाले और पत्तेवालीशाखा लिये दो सवार दौड़ रहे हैं। इसके ऊपरकी ओर अर्धगोलाकार पांतीमें लिखा है—“बसीलेउस् मेगलोस्” और नीचे “एउक्रतिदोस्”। एक दूसरे सिक्के (चादी के तेत्राद्राक्मा) पर एक ओर उसका फीता बघा नग्नशिर है और दूसरी ओर ग्रीक देवता अपोलोन दाहिने हाथमें धनुष और बायेंमें वाण लिये खड़ा है। उसके तीन तरफ गोल पक्किमें लिखा है “बसीलेउस् सुतिरोस् एउक्रतिदोस्” (राजा त्राता एउक्रतिद)।

^१ Greeks in Bactria

एउकतिदने १६६ ई० पू० को बास्त्रियामे बिताया, फिर १६५ या १६४ ई० पू० मे उसने भारतकी ओर अभियान किया। एउकतिद जिस समय बास्त्रियामे अपनी दिग्विजय कर रहा था, उसी समय ग्रीको-बास्तरी शासनके उच्छेता यू०ची० हूणोके प्रहारके कारण अपनी मूल भूमि कान्सू को छोड़ बालबच्चो, घोडो-भेडो और तम्बुओको लिये चल पडे, शायद फर्गानामे वह तब तक पहुच भी चुके थे। एउकतिद हिदूकुश पारकर पहले कपिशा पहुचा, जहा दिमित्रिके पुत्र अगथोकलसे उसकी भिडन्त हुई। अगथोकल युद्धमे मारा गया और कपिशा नये ग्रीक शासकके हाथमे आई। अगथोकलके गिलट के मिक्केपर एक ओर राजाका शिर है और दूसरी ओर सामने वृक्षकी ओर मुह किये एक सिंह खडा है। सिंहके ऊपरकी पातीमे “वसीलेउस्” लिखा है और नीचे “अगथोकलेओउस्”। जिस समय एउकतिद भारतकी दिग्विजयमे लगा था, उसी समय (१६३ ई० पू० मे) अन्तियोक (४) अपने पश्चिमके अभियानमे क्षयरोगसे मर गया। अब एउकतिद सर्वस्वतत्र था। एउकतिदकी विजयके बारेमे अनुमान किया जाता है, कि उसने गंधार जीता। उसी युद्धमे वहाका राजा अपलोदोत (१६३ या १६२ ई० पू० मे) मारा गया। झेलम तक उसे बढनेमे रुकावट नही हुई। शायद अपलोदोतके प्रदेश सिंधको भी उसने ले लिया। झेलमसे मिनान्दरकी सीमा शुरू होती थी। मिनादरने उसे आगे बढने नही दिया। अपने भारतीय सिक्को-पर एउकतिदने “रजतिरज” लिखवाया है। १६० ई० पू० मे दिमित्रिकी तरह एउकतिदको भी घरपर सकट आनेकी खबर पाकर भारत छोडना पडा।

अन्तियोक (४) के मरने (१६३ ई० पू०) के बाद उसका बडा भाई देमित्रि (१), जो रोममे जामिनके तौरपर रहता था, भागकर स्वदेश लौटा। इस बीच अन्तियोक (१) का पुत्र अन्तियोक (५) गद्दीपर बैठ गया था। चचाने उसे हटाकर स्वयं राजगद्दी सभाली। एउकतिदने उसे राजा स्वीकार नही किया। अब सेल्यूकीय साम्राज्यके नाशका समय आ गया। मिदियाका स्त्रतेगोस (राज्यपाल) तिमार्षुशने (१६२ ई० पू० मे) अपनेको “वसीलेउस् मेगलोस्” (महाराज) घोषित कर दिया, लेकिन पार्थिव राजा मिथूदात (१) ने १६१-१६० ई० पू० मे उसे हराकर सारी मिदियाको अपने राज्यमे मिला लिया। इसके बाद मिथूदातने एउकतिदके राज्यके हिरान नदीके पश्चिमके भागको छीन लिया। यही खबर सुन कर एउकतिद भारतको छोडकर लौटनेके लिये मजबूर हुआ। १५९ ई० पू० मे मिथूदात तथा तत्सहायक दिमित्रि (२) से लडने हुए एउकतिद मारा गया। दिमित्रि (१) के पुत्र दिमित्रि (२) ने अपने पिताके शत्रुको मारकर बदला लिया, लेकिन इससे वह अपने वंशकी राजलक्ष्मीको लौटा नही सका। अब पार्थिवोका सितारा ओज पर था।

६ हेलियोकल (१५९-१३० ई० पू०)

प्रतापी विजेता एउकतिदका पुत्र हेलियोकल अपने ही नही ग्रीको-बास्तरीय राजवंशके भाग्यसूर्यको डूबनेसे बचानेके लिए बास्त्रियाका शासक बना। इस समय तक सोगदका ऊपरी भाग यूचियोंके हाथ मे चला जा चुका था। शायद उसका निचला भाग और मेर्व भी अभी हेलियोकलके हाथमे था। मिथूदातने सीस्तान, अरखोसिया और गेदरोसियाको यवनोसे छीन लिया था। फ्रात

सीस्तानका गवर्नर था। पार्थिव शक-वंशी थे, इसलिए उन्होंने सीस्तानमें हेलमन्द नदीके निम्न भागमें शक घुमन्तुओको ले जाकर बसा दिया। इसीके कारण इस प्रदेशका नाम ११५ ई० पू० के आसपास से शकस्तान (सीस्तान) पड़ गया। पीछे शकोके भारतकी ओर बढ़नेके समय सीस्तान उनके अड़ुका काम करने लगा। थोड़े समय बाद ये शक पार्थिवोंसे स्वतंत्र हो गए। मिथ्रदात (२) (१२४-८८ ई० पू०) ने अपने सेनापति सुरेनको इन्हें दबानेके लिये भेजा। वह ११५ ई० पू० के आसपास सीस्तानको पार्थिव साम्राज्यमें मिलानेमें सफल हुआ। ११५ ई० पू० में पार्थिवोंसे स्वतंत्र होकर अपना राज्य स्थापित करनेके उपलक्ष्यमें शकोने अपना एक (पुराना) शक-संवत् चलाया और प्रथम शक राजा ने “रजतिराज” (राजाधिराज) की पदवी धारण की।

हेलियोकल बाख्त्रियाका अंतिम ग्रीक राजा था। उसने भी पिताका अनुकरण करते हुए दिग्विजय करना चाहा। उसके राज्यमें शायद परोपमिसदै (कपिशा) थी। पिताको मिनादरके सामने जिस तरह असफल होना पड़ा था, उसके कारण वह मिनादरकी मृत्यु तक चुप रहा। इसके बाद उसने गंधार पर चढ़ाई की। मिनादर-पुत्र स्वात (१) से संघर्ष हुआ। हेलियोकलने झेलम तक ले लिया और अब स्वातके पास सागल (स्यालकोट) से मथुरा तकका राज्य बच रहा। हेलियोकलने अपने भाई एउकतिद (२) को अपने स्थानपर शासक नियुक्त किया था। उसने अपने सिक्केपर “वसीलेउस् सूतिरोस एउकतिदोस्” (राजा त्राता एउकतिद) उत्कीर्ण करवाया। जिस समय हेलियोकल भारतकी ओर दिग्विजयमें लगा हुआ था, इसी समय मिथ्रदात (१) ने अपना राज्य कास्पियन तटसे फारसकी खाड़ी तक फैला दिया। १४२ ई० पू० में वह बाबुलका स्वामी था। १४१ ई० पू० में सेल्यूकीय राजा देमित्रि (२) हेलियोकलसे मिलकर मिथ्रदातपर चढ़ाई करना चाहता था। शायद वह अभी भी हेलियोकलको अपना सामन्त समझता था। दोनोंका प्रयत्न विफल गया। मिथ्रदात ने दोनों पार्श्वोंपर लड़नेकी नीतिको अच्छा नहीं समझा और दिमित्रिके सेनापति को बवेरु ले लेने दिया, फिर भारतसे लौटकर पार्थिवोंपर आक्रमण करने-वाले हेलियोकलकी ओर बढ़ा और दिसंबर १४१ ई० पू० में हुकानियामे उसे पराजित कर बवेरुकी ओर लौटा। १४०-१३९ ई० पू० में दिमित्रि पराजित होकर बन्दी बना और उसके ही साथ ईरान और मसोपोतामियामे सेल्यूकी वंश का स्थान पार्थिव वंशने लिया। हेलियोकल राजा वाख्तरका अंतिम ग्रीक राजा था। उसके सिक्केकी नकल यूची-शकोने की, इससे मालूम होता है, कि इसीसे यूचियोंने बाख्त्रियाको छीना था।

हेलियोकलका चतुष्कोण ताबेका सिक्का मिलता है, जिसकी एक तरफ ग्रीकमें “वसीलेउस दिकइओस एलिओक्लेओस” (राजा धार्मिक हेलियोकल) और, दूसरी तरफ हाथी है जिसके तीन पार्श्वों में खरोष्ठी लिपिमें “महरजस धमिकस हेलियक्रेयस” लिखा हुआ है।

७ अन्तियलिकिद

यह कहना मुश्किल है, कि इसका हेलियोकेलसे क्या संबंध था। मालूम होता है, यह कपिशा और गंधार (हिंदु कुश)से झेलम तकका राजा था। शायद बाख्त्रियासे भी इसका कुछ संबंध रहा। इसके सिक्केपर लिखा रहता है “वसीलेउस, निकितोरस अन्तिअलूकिदोस्” (राजा विजयी अन्तियलिकिद)।

१४१ ई०पू० मे बाख्त्रियाके इतिहास पर जो अधिकार छा जाता है, वह १२८ ई०पू० में ही हटता है, जब कि चीनी जेनरल और पर्यटक चाङ्कयान् बाख्त्रिमे पहुच वहा यूचियोंको सर्वप्रभुत्वसपन्न पाता है।

४ भारतमे

१ मेनान्दर (१६६-१४५ ई० पू०)

अच्छा होगा यदि मेनान्दर और उसके उत्तराधिकारियोंके बारे में भी कुछ कह दिया जाय, क्योंकि वस्तुतः यह बाख्त्री राज्यके ही भारत-दिग्विजयके अवशेष थे। भिक्षु नागसेन और राजा मिलिन्दका जो प्रश्नोत्तर, "मिलिन्दप्रश्न" में मिलता है, वह यही राजा मेनान्दर है। इस ग्रन्थ से पता लगता है, कि उस समय मेनान्दर की राजधानी सागला (स्यालकोट) थी। उससे यह भी मालूम होता है, कि मिलिन्दका जन्म अलसन्दा में हुआ था। अलसन्दा या अलेक-मन्दरिया बहुत सी थी, इसका जन्म कौन सी अलकसन्दरियामें हुआ था, यह नहीं कहा जा सकता। यह तो निश्चित है, कि वह अलकसन्दरिया कपिशा नहीं हो सकती, क्योंकि सागल से उसकी जो दूरी बतलाई गई है, उतनी दूर कपिशा (कोहदामन-उपत्यका) नहीं है। मेनान्दर किसी प्रभावशाली कुलमें पैदा हुआ था, या अपने सैनिक कौशलसे ऊपर उठा, इसे भी जानने के लिये हमारे पास साधन नहीं है। उसने देमित्रि की पुत्री अगथोक्लेइयाको व्याहा था और इस प्रकार राजजामाता था। पहिले वह झेलमसे पूरबके ग्रीक-राज्यका शासक बनाया गया था, लेकिन एउक-तिदके देशकी ओर भागनेपर यह गांधार, सिंध और गुजरात तकका भी शासक बन गया। इसकी राजधानी सागला थी, लेकिन मथुरा और भरौच में भी उसके स्त्रेत्तोगोस (राज्यपाल) रहते थे। मेनान्दरने "सोतेरोस (त्राता)" और "दकिइओस्" (धार्मिक) की उपाधि धारण की थी।

२ स्वात (१)

मेनान्दरकी मृत्यु (१४५ ई०पू०) के बाद स्वात हिंसासनपर बैठा, लेकिन जैसा कि ऊपर कहा, उसे हेलियोकलसे मुकाबला करना पडा, जिसके कारण गांधार (खैबर से झेलम) उसके हाथसे निकल गया। तो भी स्यालकोटसे मथुरा तक की भूमि अब भी उसकी थी। उसके आरम्भिक शासनकालमें उसकी मा अगथोक्लेइया अभिभाविका रही, जिसका नाम सिक्को पर भी मिलता है। स्वातका शासन दीर्घकाल-व्यापी था।

३. स्वात (२)

पौत्र सिहामनपर बैठा। सिक्केपर यह एक दाढ़ीवाला मध्यवयस्क पुरुष दिखलाई पड़ता है। आगेके अपोलोदोत, फिलोपातोर, दियोनिमिलोउस्, जोइलुस् (२), सोतेर, और लिक्सेनुस् इन पांच यूनानी राजाओंके सिक्के मिलते हैं, जिन के शासन काल, शासित भूभाग या राजधानीके बारेमें कहना मुश्किल है। यह ग्रीकराजा भारतीय हो गये थे, और शकोसे भी इनका वैवाहिक संबंध था। उन्होंने अपोलोदोत (२) के सिक्कोकी नकल की है, शक

राजा अजेसूने भी अपोलोदोत (२) के सिक्केपर अपना ठप्पा लगाया, जिससे अपोलोदोत (२) के तुरन्त बाद ही उसका होना मालूम होता है। अपोलोदोत (२) ३० ई०पू० के आसपास मौजूद था। हमें मालूम है, कि मिथ्रदात (२) (१२४-८८ ई०पू०) के सेनापति सोरेनने गकोको सीस्तानसे भगाया था, जिसके कारण उनमेंसे कितने ही बोलन (मुल्ला) दर्रेसे भारतकी ओर आये। इन्होंने सिंध, कच्छ और सौराष्ट्र ले लिया। सिंधका वह भाग अभीरिया कहा जाता था, जिसे शकों ने पहले लिया। अभीर भी यवन विजेताओंके साथ आये मध्य-एशियाके घुमन्तू शकोकी ही एक शाखा थी। प्रथम शक सिंध, गुजरातमें ११०-८० ई०पू० के बीच शासन करते थे।

५ राज्य-व्यवस्था^१

बाख्त्रियाके ग्रीक शासनका ढांचा वही था, जो कि अलिकसुन्दरने दारयबहु (१) द्वारा निर्धारित ईरानी शासन व्यवस्थासे कुछ सुधार करके लिया था। दारयबहुने क्षत्रप, सेनापतिके अनिर्विक्त उन्हींके समान राजामात्यका एक तीसरा पद भी क्षत्रपियोमें स्थापित किया था, किंतु अलिकसुन्दरने राजामात्यका पद हटा दिया था। क्षत्रपीका शासक अब स्वतंत्र कहलाता था। दारयबहुकी क्षत्रपिया बहुत बड़ी थी। सेल्यूकीय साम्राज्यसे कहीं बड़ा होनेपर भी दाराके साम्राज्य में वह तैतीसी ही थी, जबकि सेल्यूकीय राज्यमें उनकी संख्या ७२ हो गई। क्षत्रपीके नीचे एपारची थी और उसके नीचे हिपारची। एपारचीको जिला और हिपारचीको तहसील या सब-डिवीजन कह सकते हैं। बाख्त्रियाने एपारची ही को उपराज द्वारा शासित प्रदेश बना दिया। एपारचिया प्रायः प्राकृतिक विभाजनके आधारपर बनी थी। इनके अनिर्विक्त कितनी ही ग्रीक बस्तिया (पुरिया) थी, जिनमें ग्रीस की पोलियोके अनुकरण करनेकी कोशिश की जाती थी। अलिकसुन्दरने ७० के करीब पोलिस (पुरिया) बसाई थी। सेल्यूकीय पोलिस सैनिक उपनिवेश जैसी थी। ग्रीक पोलिका प्रबंध एक परिषद् और एक सभा द्वारा होता था। तिग्रा तटपर अवस्थित सेलूकियाकी परिषद्के ३०० सदस्य होते थे, सभामें और भी अधिक सदस्य होते थे। इनकी मासिक और वार्षिक बैठकें हुआ करती थी। नगर सभाका काम केवल नगरकी व्यवस्था ही करना नहीं बल्कि नागरिकोंके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्यके विकासको भी देखना था। इसके लिए क्रीडा-क्षेत्र, अखाड़े, नाट्यशालाये हुआ करती थी। पोलियो तथा देशकी राजकीय भाषा ग्रीक थी। नगरके देवता भी ग्रीक देवावलीसे लिये गये होते थे। पोलिके मजिस्ट्रेटको एपसितल कहते थे। एपसितलका नाम परिषद् पेश करती थी। नगरका एक जननिर्वाचित कोषाध्यक्ष भी होता था। निर्वहण प्रायः तीन सालों बाद होता था। बाख्त्रिया (वलख) और पुष्पकलावती (गधार) की गणना प्रधान ग्रीक पोलियोमें थी। सेल्यूकीय साम्राज्य में ग्रीक और अग्रीकका बहुत भेदभाव रखा जाता था, इसलिए वहाँकी पोलियोमें शासितों और शासकोंका संबंध कुछ कुछ वैसा ही था, जैसा कि अग्रेजी शासनकालमें हमारी छावनियोंमें गोरों और कालोंका। इसका यह अर्थ नहीं, कि दोनों जातियोंमें विवाह-संबंध नहीं होता था। दिमित्रि (१) जैसे राजाओंने अनुभव किया, कि इस तरहका भेद-भाव अच्छा नहीं है। उसके समय

^१Greeks in Bactria

पोलियोके भेदभावमे कुछ कमी अवश्य हुई। दिमित्रिने अपने उच्च पदोके लिये भी स्थानीय लोगो को लिया था और पार्थिवो (पल्लवो) और शकोके लिये भी क्षत्रप बननेका रास्ता खोल दिया था। मौर्योंने विदेशियोको अपना राज्यपाल तक बनाया था, जैसा कि सौराष्ट्रके मौर्य गवर्नर के उदाहरणसे मालूम होता है। सौराष्ट्र, अवन्ती, मथुरा और तक्षशिलाके शक (पल्लव) क्षत्रपोकी परंपराका आरंभ ग्रीक राजाओके समयमे हुआ। ग्रीक शासनके अवशेष के तौरपर दशपुर और दूसरे भारतीय नगरमे ग्रीकोका होना ईसाकी पहली-दूसरी शताब्दियोंके उनके अभिलेखोसे मालूम होता है, वही अवस्था बाख्त्रिया और सोगदमे भी रही होगी। संभव है, ग्रीक लोगोका भारतीकरण हमारे यहां जितनी तेजीसे हुआ, उतना मध्य-ऐसियामे न हुआ हो। वहाके घुमन्तु शक भी अपनी मूलभूमिके सभी समाजिक रीति-रवाजोको कायम रखना चाहते थे। कुछ पश्चिमी विद्वानोका विचार है, कि यवन (ग्रीक) के नामसे जिन दाताओके अभिलेख नासिक, काला आदिकी गुफाओमे मिलते हैं, वह वस्तुतः यवन जातिक नहीं, बल्कि यवन-नागरिक हो सकते हैं। हम देख चुके हैं, कि अपोलोदोत जैसे ग्रीक राजाने अपने सिक्कोका इतना भारतीकरण किया, कि उनसे ग्रीक लिपि और भाषा तकको हटा केवल भारतीय लिपि और भारतीय भाषा ही को रहने दिया। ई० पू० द्वितीय शताब्दी मे भारतीय ग्रीक राजाओने भारतीय देवताओको अपने सिक्कोमे स्थान दिया। मिनान्दरने खुलकर भारतीय (बौद्ध) धर्मको अपनाया, दिमित्रि (१) (१८६-१६७ ई० पू०) से ही बहुतसे ग्रीक राजाओने “धार्मिक धर्मराजा” बननेका प्रयत्न किया, इसलिए जहां तक भारतका संबंध है, यहां यवन-जातिक और यवन-नागरिककी कल्पना निराधार मालूम होती है। वहाके यवन कहे जानेवाले नागरिक वस्तुतः यवन-जातीय थे। भारतमे भेदभाव हो भी नहीं सकता था, क्योंकि अलिकसुन्दरके मरनेके थोड़े ही दिनो बाद ग्रीक छावनिया नहीं रह गई थी, और उसके बाद जब दिमित्रि (१) भारत मे शासन करनेके लिये आया, तो उसकी नीति बदल चुकी थी।

ग्रीको-बाख्त्रीय राजाओके सिक्कोसे मालूम होता है, कि वहाकी पोलियोके प्रधान देवता ग्रीक देवावलीमेसे ही लिये गये थे। जिस तरह ग्रीस देशमे नगर देवता होते थे, वैसे ही ऐसियाई पोलियोमे भी उन्होने देवता स्थापित किये थे। ये ग्रीक देवता भारतमे भी आये थे, जिनकी कितनी ही मूर्तिया हमें गंधार कलाके सुन्दर नमूनोंके रूपमे मिली हैं। हेरेकल एक प्रधान ग्रीक देवता था। पौरुषको प्रकट करनेके लिये इस देवसेनानीका बहुत सम्मान था। एउतिदिमके सिक्को पर इसकी सुंदर मूर्ति मिलती है। दूसरे ग्रीक देवताओमे जेउस् दिवोदात (१) और दिवोदात (२), हेलियाकेल के सिक्को पर मिलता है। यह देवताओका पिता (जेउस्पितर) माना जाता था, लेकिन सैनिक प्रभुत्वपर अधिक श्रद्धा रखनेवाले ग्रीक शासकोके सिक्कोपर उसकी उतनी प्रधानता नहीं देखी जाती। पोलियोमे इसकी पूजाका विशेष स्थान रहा होगा, इसमे सदेह नहीं। अपोलोन तीसरा ग्रीक देवता था, जिसका चित्र एउकतिदके सिक्के पर मिलता है। इस सगीत-प्रिय देवता की मिट्टीकी भी मूर्तिया मिली हैं। अथिना अथेन्सकी महान् देवी दिवोदात (२) के सिक्केपर मिलती है। दिमित्रि, अपोलोदोत, मेनान्दर और दूसरे ग्रीक राजाओने भी अपने सिक्कोपर स्थान देकर अथिना का सम्मान किया है। ग्रीस देशकी सबसे सम्माननीय पुरीकी अधिष्ठात्री का ज्यादा सत्कार होना ही चाहिये। पल्लदा अथिना ही का दूसरा नाम है।

विजय की देवी निका अन्तिमाख, एउक्रतिद, मिनान्दर और दूसरे राजाओं के सिक्कोपर मिलती है। दिवोनिस देवताकी भी पूजा होती थी। बाख्त्रिया, फार्गाना और कपिशकी द्राक्षावलय भूमिमें इस द्राक्षाके देवताको कैसे भूला जा सकता था ? कपिशामें दिवोनिसका विशेष सम्मान था, यह अगथोकलके सिक्केसे मालूम होता है। मेगस्थेनके कथनानुसार भारतमें पहाड़ोंमें दिवोनिस और मैदानोंमें हेरेकलकी पूजा होती थी, किंतु जान पड़ता है, मेगस्थेनने शिव और वासुदेवको दिवोनिस और हेरेकल समझ लिया। ई० पू० द्वितीय शताब्दीके आरम्भमें भारतमें इतने ग्रीक लोग कहा थे, कि पहाड़ों और मैदानोंमें देवानिस और हेरेकलकी पूजा होती ?

ग्रीक देवताओंके अतिरिक्त ईरानी देवी अनाहिता भी ग्रीक पूजामें स्थान पा चुकी थी। कहा जाता है, मूलतः जिस तरह सोगद (जरफशा) नदीकी अधिदेवता दइतई, यक्सर्त (सिर दरिया) की अधिदेवता तनइस् थी, उसी तरह वक्षुकी अनाहिता। अखामनी कालमें भी अनाहिता की महिमा थी। कुछ विद्वानोंका मत है, कि यह मूलतः बाबुली देवी थी, जिसे ईरानियोंने स्वीकार कर लिया। सासानी कालमें तो अनाहिता परमेश्वरी बन गई। रोमन इतिहासकार क्लेमेन्त अलेक्सन्द्रीय (ईसाकी दूसरी-तीसरी शताब्दी) से पता लगता है, कि उसके समय बाख्त्रिया नगरीमें अफ्रोदिता तनइस्की पूजा होती थी। रॉल्लिन्सनने तनइका ईरानी नामोच्चारण तनना बतलाया है। मित्रके नामसे सूर्यदेव ग्रीक भक्तोंको अपनी ओर ज्यादा खींचनेमें सफल हुए थे। कहा जाता है, ईसाकी आरम्भिक सदियोंमें मित्र-सम्प्रदायने ग्रीसदेशपर इतना प्रभाव डाला था, कि वहां यह सवाल पैदा हो गया था कि ग्रीस और रोमका धर्म मित्रवाद होगा, या ईसाइयत। मित्र जान पड़ता है, शतम्-परिवारका एक जातीय देवता था। ईरानी-आर्य भी मित्रके नामसे सूर्यकी पूजा करते थे। यद्यपि जर्थुस्त्र के सुधारने अहुरमज्दको प्रथम स्थान दिया, लेकिन मिश्र को वह पदच्युत नहीं कर पाया। भारतीय आर्य भी मित्र नामसे सूर्यकी पूजा-प्रार्थना करते थे। वह ऋग्वेदके प्रधान देवताओंमें है। आरम्भिक समयमें ईरानी या भारतीय आर्य मूर्ति बनानेकी आवश्यकता न समझ प्रत्यक्ष सूर्यकी ही पूजा करते थे, लेकिन पीछे सूर्यकी मूर्तिया भी बनने लगी। बाख्त्रियामें ई० पू० तृतीय और द्वितीय शताब्दीमें मिथू और अनाहिताका बहुत ऊँचा स्थान था। इसी समय उसकी मूर्ति बनी, जो सिक्कोपर मिलती है। शकोंके समयसे मिथू (मिहिर) की पूजा भारतमें भी बहुत बढ़ी। शकोंने जल्दी ही भारतके धर्म और सस्कृतिको अपना लिया। एक दो शताब्दियों तक ही वेषभूषा, खानपान आदिमें अपने पृथक् अस्तित्वको कायम रखते पीछे भारतीय जनसमुद्रमें इतना घुल-मिल गये, कि उनका पता लगना तक मुश्किल हो गया, किंतु, अपनी सूर्यकी मूर्तियोंके रूपमें उन्होंने भारतमें अपना स्थायी चिन्ह छोड़ा। इनके सूर्य देवता द्विभुज और शकोंकी तरह ही घुटने तक बूट पहनते थे। वही बूट, जिसे आज भी रूसी लोग जाड़ोंमें पहनते हैं, और जिसे हम कनिष्ककी मूर्तिमें भी देख सकते हैं। ई० पू० ५वीं ६ठी शताब्दीमें भी इसी तरहके बूट अल्ताईसे लेकर कार्पेथीय पर्वतमाला तकके शक पहना करते थे।

भारतीय देवताओंमें धिषणा देवीको बाख्त्रिय-ग्रीक राजाओंके पूज्य देवताओंमें बतलाया जाता है। लेकिन धिषणा देवी भारतमें उतनी प्रसिद्ध नहीं थी। वैदिक देवी होते वह केवल किसी प्राकृतिक शक्तिकी प्रतिनिधित्व करती होगी, इसलिए उसकी मूर्तिका यहाँ पता नहीं लगता। धिषणा देवीकी द्विभुज तथा अर्धनग्न मूर्ति एक धातुके कटोरेपर मिली है। इसके दोनों

तरफ दो पुरुष (अश्विनी कुमार द्वय) दिखलाये गये हैं। बुद्धकी मूर्ति गंधार-कलासे ही शुरू होती है, जिसका उद्गम ग्रीक और भारतीय कलाका समिश्रण है। ई० पू० द्वितीय शताब्दीमें अभी बुद्धकी मूर्तियां बन नहीं पाई थी, इसलिए भरहुतकी तरह ग्रीक और मिनान्दर, अगथोकलके सिक्को पर बौद्ध चिह्न, स्तूप या बोधिवृक्षको ही रखकर सन्तोष कर लिया गया। शिवको भी नादियाके सकेतसे चित्रोपर प्रकट किया गया है। ग्रीक लोग अपने उत्तराधिकारी शकोकी तरह धर्मके बारेमें बड़े उदार थे। वह ईरानी अहुर-मज्दको भी पूज सकते थे, और उसके विरोधी भारतीय इन्द्रको भी। जेउस, बुद्ध, अनाहिता, पल्ला, वृत्रेन, हेरेकल सभीसे वह वरदान माँगनेके लिए तैयार थे।

६ कला

ग्रीको-बास्त्रीय कलाका एसियाकी कलामें बहुत ऊँचा स्थान है। ग्रीक कला सेल्यूकीय पोलियोमें भी बहुत आदृत थी, किंतु वह वहाँ बँव्या ही रह गई। बास्त्रियामें पहुँचकर उसने भारत, अफगानिस्तान और उभय मध्य-एसियाकी कलापर बहुत महत्वपूर्ण प्रभाव छोड़ा। भारतके सपकमें आकर यही कला गंधार कलाके नामसे प्रसिद्ध हुई। हम बतला चुके हैं, कि एउथुदिम, दिमित्रि और एउक्रातिदके सिक्कोके रूपमें पोर्त्रेत कला इतनी ऊँची उठी, जहाँ पीछे उसका प्रतिद्वंद्वी कोई नहीं हुआ। भारतमें उसके बाद मथुराकी कुषाणकला विकसित हुई, जिसकी उत्तराधिकारिणी गुप्त-कला है, जिसके रूपमें भारतीय कला अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँची। यद्यपि मथुराकी कला गंधार कलाकी नकल नहीं है, किंतु उसकी उन्नतिमें उस कलाका हाथ अवश्य रहा है। मथुरा-कलाके पैदा होने और फलने-फूलनेका वही समय है, जब कि मथुरा-ग्रीक और शक क्षत्रपोंकी राजधानी रही। ग्रीक और शक क्षत्रपोंकी छत्रछायामें ही उसकी उन्नति हुई, फिर वह गंधार-कलासे कैसे प्रेरणा लेनेसे रुकती? लेकिन ग्रीक कलाने भारतीय कलाके लिए जो कुछ किया, प्रेरणा देनेमें जितना हाथ बाँटाया, वही बात मध्य-एसियाके बारेमें नहीं कही जा सकती। कग लोगोके सिक्को और कलापर उसका कुछ प्रभाव ख्वारेज्ममें अवश्य देखा जाता है—ख्वारेज्ममें मिले कलाके नमूनोंपर उसका प्रभाव देखा जाता है, यद्यपि जहाँ तक राजनीतिक प्रभावका सबध है, ख्वारेज्म न अलिकसुन्दरके अधीन हुआ, न उसके उत्तराधिकारियों—सेल्यूकीय तथा ग्रीको-बास्त्रीय राजाओंके। मध्य-वक्षु-उपत्यकामें उसके अवशेष तेरमिज आदिकी खुदाइयोंमें मिले हैं, लेकिन उसका प्रसार जल्दी ही खतम हो गया। ७ वीं शताब्दीके अतमें पहुँचते-पहुँचते इस्लामसे इस भूमिका सबध होने लगा, ८ वीं, ९ वीं, १० वीं—इन तीन-शताब्दियोंमें तो मूर्ति-ध्वंसकोका प्राधान्य हो जानेके कारण मूर्तिकलाके पनपनेकी गुंजाइश नहीं रही। अब वहा ही भारतकी गंधार कला और उसकी उत्तरवर्ती कलाओं की तरह मध्य-एसियामें कोई प्रवाह प्रचलित नहीं रह सका। तुर्फान और दूसरे स्थानोंमें मिले नमूनोंसे पता लगता है, कि ग्रीको-बास्त्रीय कलाने पूर्वी मध्य-एसिया और चीनके पश्चिमी भागमें अपना प्रभाव फैलाया था।

^१वही, पाम्याटिगि० फलक १-५०, इस्कुस्सत्त्वो सेद्निइ आज़िइ (ब० व० वेइमार्न, मास्को १९४०) पृ० ९-१४।

स्रोत-ग्रन्थः

- १ पाम्यत्तिकि ग्रेको-बाक्त्रिइइस्कओ इस्कुस्त्वो (क० व० त्रेवर, लेनिनग्राद १९४०)
- २ Greeks in Bactria and India (W W Tarn, Cambridge 1938)
- ३ इस्कुस्त्वो स्नेदनेइ आजिइ (ब० व० वेइमान, मास्को १९४०)
- ४ Memoire Sur l' Asie Centrale (Girard de Rialle, Paris 1875)
- ५ आखेंआलोगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेनोइ किर्गिजिइ (अ० न० बेर्नस्ताम्, फ्रुन्जे, १९४१)
- ६ L'Asie Ancienne Centrale et Sud-Orientale d'apre's Ptolome'e (A Berthelot, Paris 1930)
- ७ Catalogue of Coins in the British Museum (P Gardner 1886)
- Greek and Scythian Kings of Bactria and India
- ८ Coins of Ancient India (J Allen, 1936)
- ९ The Story of Chang Kien (Fr Hirth, J A O S 1917 xxxvii) pp 89
- १० Hellenistic Civilisation (W W Tarn, 1930)
- ११ Selucid-Parthian Studies (W W Tarn 1937 Proc Brit Acad 1930)
- १२ Heart of Asia (E D Ross, London 1899)

अध्याय ४

शक (ईसा पूर्व १३०-४२५ ईसवी)

१ यूची

१७६ (या १७४) ई० पू० में चीनके प्रहारके कारण भगे हुएने अपने पश्चिमी पड़ोसी यूचियोंके स्थानको छीननेके लिये उनपर आक्रमण किया^१, जिससे उन्हें अपनी भूमि छोड़ पश्चिमकी ओर भागना पड़ा। सड़वाड़ शकोकी भूमिमें प्रवेश करनेपर उनका एक भाग—लघु-यूची—तरिम-उपत्यकामें जाके बस गया, और दूसरा—महायूची—सप्तनद और त्यानशानके वू-सुनोको पीटता-पाटता पश्चिमकी ओर बढ़ते यक्सर्त (सिरदरिया) की उपत्यकामें पहुँचा। इस महाप्रवाममें उन्होंने अपने रास्तेमें पड़नेवाली सभी बाधाओंको कठोरतापूर्वक हटाया, यह वू-सुनोके साथके उनके सघर्षसे मालूम होता है। त्यानशानके पहाड़ोंसे हो कर वह फर्गाना की भूमिमें पहुँचे, जहाँ उस समय ग्रीको-बाख्त्री राजा क्रमशः एउक्रितिद (१६६-१५६ ई० पू०) और हेलियोकल (१५६-२३० ई० पू०) का शासन रहा। संभव है, हेलियोकलके आरम्भिक शासनमें उन्हें फर्गानाको हड़पनेका मौका मिला। १४१ ई० पू० में ग्रीको-बाख्त्री इतिहासपर परदा पड़ जाता है। १७४ ई० पू० के आसपास अपनी मूलभूमि कन्सूको छोड़नेके बाद वू-सुनोके साथके सघर्षकी थोड़ी सी भनक मिलनेके सिवा यूची शकोका अतमें पता १२४ ई० पू० में ही लगता है जबकि चाङ्ग क्यान् उन्हें यक्सर्त और वक्षु नदीकी उपत्यकाओंकी भूमिका स्वामी पाता है। चाङ्ग-क्यान्को हान् सम्राट् वू-तीने १३८ ई० पू० में यूचियोंको इस बातके लिए राजी करनेको भेजा था, कि वह हूणोंको ध्वस्त करनेमें पश्चिमकी ओरसे आक्रमण करके चीनका हाथ बँटाये। चाङ्ग-क्यान्की यात्राके बारेमें हम पहले बतला चुके हैं। जब वह फर्गाना (तावान) पहुँचा, तो वहाँ शकोका शासन था। उन्होंने चाङ्ग-क्यान्को अच्छी तरह यूची शासकोंके पास पहुँचा दिया, जो कि उस समय सोग्द (जरफशाँ) और वक्षु (आमूदरिया) के बीचमें रहते थे। चाङ्ग-क्यान्के लेखसे मालूम होता है, कि काङ्ग-किन् (यक्सर्त, सिरदरिया) के उत्तरमें हूणोंका राज्य था और दक्षिणमें यूचियोंका। चाङ्ग-क्यान्ने यूचियोंको उर्वर और समृद्ध ग्राम-नगरोंकी भूमिमें घुमन्तू जीवन बिताते देखा। यूची कृषि और वाणिज्यको धृणाकी दृष्टिसे देखते थे और सैनिक तथा तदनु रूप घुमन्तू जीवनको ज्यादा पसंद करते थे। चाङ्ग-क्यान्के पहुँचने तक वह बाख्त्रियाकी जीत चुके थे। अपने पशुओं और तम्बूओंको लिए हुए यूची लोग ता-वान (फर्गाना), ताहिया (बाख्तर) और अन्-सी (पार्थिया) में घूमा करते थे।

^१ Greeks in Bactria and India (W W Tarn), Memoire sur l'Asie Centrale (Girard de Rialle, Paris 1875)

अपोलोदोतके बाख्त्रीय राज्यके विजेता यूचियोंके चार कबीलोमे एक था अमि-ई (यूची, अर्सी), जो किसी किसीके मतमे तोखारी (थोगुरोई) है। इनका केंद्रीय स्थान थोगोरा नगर रेशम-पथपर था। चीनी लेखकोंके अनुसार ई० पू० द्वितीय शताब्दीमे यूचियोंकी मूलभूमिमे तोगारा का अवशेष मौजूद था। बाख्त्रिया-विजयके समय चारो कबीलोमे असिई अधिक शक्तिशाली थे। कुषाण इन्हींका एक प्रभुताशाली भाग बतलाया जाता है, यद्यपि इसकी भी सभावना है, कि कुषाण लघु-यूचीसे सबध रखते हो। तरिम-उपत्यका का कूचा नगर उन्नी कुषाण नाम को बतलाता है। तोखारी भाषाके नमूने हमें मध्य-एशियाकी मरूभूमिसे मिले हैं, यद्यपि वह उस समयके नहीं है, जब कि यूची बाख्त्रियाके स्वामी थे। बाख्त्रियाका नाम पीछे जो तोखार पड़ा, वह इन्हीं तोखारियोंके प्रभुत्वके कारण ही। स्वेन्-चाङ्गने भी दरबदसे हिंदुकुश पर्वत-मालातक वक्षुके दोनो तरफकी भूमिको तुखार (तुषार) कहा। अरब इसके कितने ही भागको तुखारिस्तान कहते थे। पीछे तुर्कोंकी प्रधानताके कारण अफगानिस्तान और ईरानवाले इसे तुर्किस्तानका एक अंग मानने लगे। तोखारी भाषा, जो मध्य-एशियाके हस्तलेखोमे मिली है, कुषाणोंकी भाषा थी, जिसका सबध शक-भाषासे था। इसमे हिंदी-यूरोपीय भाषाके केन्तम पिरवारकी (पश्चिमी यूरोपीय) भाषाका कुछ कुछ रूप मिलता है, जब कि ईरानी, संस्कृत और पुरानी शक भाषा शतम-परिवारसे सबध रखती थी। कुछ यूरोपीय पुरातत्ववेत्ताओने तो कूचाकी स्त्रियोंमे अपनी पुरानी नारियोंकी वेष-भूषा और चित्रोमे उनकी नीली आँखोको देखकर यह निर्णय कर डाला, कि यह यूरोपसे आई कोई जाति थी, जो एसियाटिक शक समुद्र के भीतर एक द्वीपकी तरह कूचा और उसके आसपासमे बस गई। केतम भाषाके लक्षण कितनी मात्रामे है, यह एक विचारणीय बात है, नहीं तो नीली आँखें और भूरे बाल शकोमे ही नहीं, बल्कि वैदिक आयोंमे भी पाये जाते थे। बुद्धकी आँखें अतिसी (अलसी) के फूलकी तरह नीली थी। महाकवि अश्व-घोषकी माँ सुवर्णाक्षी (पीली आँखोवाली) थी। मेनान्दरके समकालीन पतजलि ब्राह्मणके शरीर लक्षण कपिल वर्ण और पिगल केश बतलाते हैं। कूचाकी स्त्रियोंसे कुछ मिलता-जुलता कोट हिमालयमे जौनसार और जौनपुरकी स्त्रियोंमे आज भी देखा जाता है (यहाँ जौन शब्दका ग्रीक यवनोसे कोई सबध नहीं है, यह यमुनाकी उपत्यकाका परिचायक है)।

१२८ ई० पू० मे चाङ्ग-क्यान^१ने यूचियोंको समरकंद और वक्षु नदीके बीचमे डेरा लगाये देखा था। ता-वान् (फर्गाना) मे उस समय शकोका शासन था। संभव है, पहिलेसे ही यहाँ शक-शासन रहा हो, और उन्होने यूचियोंको अपना अधिराज स्वीकृत कर लिया हो। यह हमें मालूम ही है, कि उनके पूरब और उत्तरके पर्वतोमे वू-सुनोका निवास था। हेलियोकल जिस समय भारत-विजयमे लगा हुआ था, उसी समय यूचियोंको मौका मिला और उन्होने ग्रीको-बाख्त्रीय शासनका खातमा कर दिया। यूची शक-भाषा-भाषी थे। वू-सुन्, सङ्-वाङ्, कग और पार्थिव (पार्थियन या पल्लव) यह सभी भाषाये शक-भाषाकी ही भिन्न-भिन्न बोलिया थी। इसीलिए चाङ्ग-क्यान लिखता है,^१ कि फर्गानासे पार्थिया तक एक सी ही भाषा बोली जाती है। रोमन इतिहासकार स्ट्राबो जब शकोके बाख्तर जीतनेकी बात करता है, तो उसका अभि-प्राय यूचियोंसे है। ग्रीक लेखकोने बाख्तर-विजेता चार घुमन्तू जातियोंका नाम लिया है—(१)

^१The story of Chang Kien (Fr, Hirth, J A O S!1917, pp 89)

असिई, (२) पसिउनी, (३) तोखारी और (४) सकरौली। इनमें असिई या असीं यूची मालूम होते हैं। कुछ लोग तोखारियोंको यूची बतलाते हैं। कुषाण-वंश तोखारी था, इसलिए लघु-यूचीके अन्तर्गत था। पीछे कदफिस् (१) के रूपमें पाच शक-जातियोंके सघर्षमें हम कुषाणोंको सफलता प्राप्त करते देखते हैं। हो सकता है, रोमन इतिहासकारोंकी चार शक जातियाँ भी इन्हींके अन्तर्गत हों। पूर्वी मध्य-एसियामें तुखारी भाषाकी ए और बी दो बोलियोंके अभिलेख मिले हैं, जिनमें ए बोली कराशर (तुर्फान) की थी और बी बोली कूचाकी। बी बोली के साथ कुषाणोंका सबंध स्थापित किया जा सकता है, लेकिन इन दोनों बोलियोंके कराशर और कूचाके जो नमूने मिले हैं, वह शकोंके बाख्तर-विजयके कई शताब्दी पीछेके हैं। कूचाकी भाषामें केन्तमका प्रभाव देख कर यहाके लोगोंको यूरोपसे आई जाति साबित करनेकी जो कोशिश की गई है, वह विचारणीय अवश्य है, किंतु हम यह भी जानते हैं, कि भाषा सर्वत्र रक्तकी परिचायिका नहीं होती।

यूची लोगोंमें शकोंकी परंपराके अनुसार स्त्रियोंका स्थान काफी ऊँचा था, पति घरसे बाहरके काम-काजमें भी पत्नीकी राय लिया करता था। हमें मालूम है, कि कुरव जिस लड़ाईमें मरा, उसकी सचालिका एक शक-स्त्री थी। ऐसे दुर्धर्ष शत्रुके सामने, जिसके घोड़सवार-धनुर्धरोंकी सख्या एक लाख बतलाई जाती है, यवनोके लिये ठहरना मुश्किल था। तब भी उनमें दिग्विजयकी एक सनक सवार थी। अपनी शक्तिको छिन्न-भिन्न होते देखकर भी हेलियोकल हिंदुकुश पार दिग्विजयके लिये जानेसे अपनेको नहीं रोक सका। उसके सामने जहाँ यूची उत्तरसे सैलाब की तरह बढ़ते चले आ रहे थे, वहाँ उत्तर-पूर्वमें पार्थिव शक्तिशाली हो गये थे। पार्थिव जैसी एक छोटी सी शक जाति सेल्यूकीय और बाख्त्रीय प्रतिद्वन्द्विता तथा कंगोंकी सहायतासे ईरानके उत्तरमें कास्पियन तटवर्ती (पार्थिया) प्रदेशको हाथमें करके अब एक विशाल राज्यका रूप ले चुकी थी। उसने सेल्यूकियोंको दबाते हुए एक और काम यह किया, कि यूची शकोंमेंसे कुछको ले जाकर पूर्वी ईरान (सीस्तान) में बसा दिया। लेकिन स्वच्छन्दता-प्रिय घुमन्तू शक भला किसके होते? छठे पार्थिव राजा फ्रात (२) (१३८-१२४ ई० पू०)—जो कि प्रतापी मिथ्रदात (१) (१७०-१३८ ई० पू०)का उत्तराधिकारी था—इन्हीं शकोंकी एक बड़ी सेना लेकर अन्तियोक (सेल्यूकी) से लड़ने गया था। किसी बात पर शकोंमें पार्थियोंका झगडा हो गया और युद्ध क्षेत्र हीमें शक बिगड उठे। फ्रात इसी लड़ाई में मारा गया और तब (१२६ ई० पू०) में शको (यूचियों) और पार्थियों (पल्लवियों या पल्लवों) का झगडा स्थायी हो गया। फ्रातका उत्तराधिकारी अर्तवान मिथ्रदात (२) (१२४-८८ ई० पू०) भी इन्हींके कारण युद्धमें मारा गया। मिथ्रदात (२) ने अंतमें समझ लिया, कि शकोंसे मध्य-एसियाको छीना नहीं जा सकता, इसलिए मसोपोतामियासे बाख्त्रिया तक एक पार्थिव साम्राज्यको स्थापित करनेके स्वप्नको उसे छोड देना पडा। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि पार्थिवोंने अपने दो शाहोंकी मृत्युका बदला यूचियोंसे नहीं लिया। बाख्त्रियाके यूचियोंका वह बहुत बिगाड नहीं सके, किंतु सीस्तान के शको पर मिथ्रदात (२) के सेनापति सोरेन ने १२४ ई० पू० से ११५ ई० पू० तक लगातार जबर्दस्त प्रहार किये और ११५ ई० पू० के आसपास अर्थात् जब कि यूची बाख्त्रिया पर अपने शासन को मजबूत कर चुके थे, शको को शकस्तान छोडकर भागने के लिये मजबूर किया। शक ११५ ई० पू० के आसपास वह बलोचिस्तान और सिंध की ओर भागे। वहाँ उन्होंने अपना शासन स्थापित किया। उनके पश्चिमी भाइयों की समृद्धि जिस समय बढ़ रही थी, उसी समय

इन शको ने सिंध को लेकर सौराष्ट्र, अवन्ती और मथुरा तक अपने राज्य का विस्तार किया और इन्होंने क्षह्रात वशी अपने नेता मोग के नेतृत्व में ७७ ई०पू० के आसपास गंधार से कपिशा तक को भी विजय करने में सफलता पाई।

(१) क्षह्रात वश

यूची बाख्त्रिया के शासक थे, और मोग तथा उनका कबीला धीरे धीरे बलोचिस्तान, सिंध, सौराष्ट्र, अवन्ती, मथुरा, कपिशा और गंधार तक का शासक बन गया। इन दोनों का आपस में क्या संबंध था, इसका स्पष्ट पता नहीं लगता। बहुत से कबीले होने के कारण, हो सकता है, वह अलग अलग शासन करते हों। हूणों के समय से ही हम जानते हैं, इन कबीलों का सघ उतना मजबूत नहीं होता था। इनके उपराजों को यदि साधारण शासित प्रजा स्वतंत्र राजा समझती हो, तो इसमें आश्चर्य की बात नहीं। बाख्त्रिया के यूची के शासकों के बारे में भी हमें मालूम नहीं है। पहिले आनेवाले यूचियों का पता उनके सिक्कों से कुछ स्पष्ट हो जाता है। तक्षशिला मोग की राजधानी थी और बाख्त्रिया की राजधानी शायद बामियान में थी। मोग क्षह्रात वश का था। अवन्ती सौराष्ट्र का शासक इपान भी क्षह्रात-वशी था। मथुरा का शक रजुबुल भी क्षह्रात वशी था, इसलिये हम कह सकते हैं, कि यूचियों की जो शाखा भारत की ओर आई, उनके सामन्तों का वश क्षह्रात था।

(२) मोग (७७-५८ ई० पू०—)

भारत में आये शकों (क्षह्रातों), बल्कि सारे यूचियों में भी मोग प्रथम शक राजा था, जिसका हमें पता है। और जगहों में भी इसके उपराज रहते थे, मथुरा और उज्जैन में क्षह्रात वशी क्षत्रपों का होना इसी बात को साबित करता है। शायद मोग उनका प्रधान था। मोग ने सिंध से उत्तर की ओर बढ़कर गंधार (तक्षशिला) को जीत उसे अपनी राजधानी बनाया। इसके सिक्कों पर पहले राजा मोग लिखा रहता था, किंतु पीछे अधिक राज्यवृद्धि के कारण “रजति-रजस महतस मोअस” (‘राजाधिराज महान् मोग’) लिखा जाने लगा। “महत्” का अलग प्रयोग केवल ग्रीक राजाओं के सिक्कों के ‘मेगोलस’ का ही अनुकरण जान पड़ता है। मोग झेलम तक ही ले सका। इसके आगे मिनान्दर के वंशज अब भी शासन करते रहे। मिनान्दर-पुत्र स्वात (१) उसका पौत्र स्वात (२) और तद्वंशी दूसरे राजा भी पंजाब की कुछ भूमि पर अपने अस्तित्व को कायम रखते रहे। हा, पश्चिमी सीमात पर मोग जैसे प्रबल शत्रु को देखकर रावी से यमुना तक के भाग पर कुणीद्र, आर्जुनायन, यौधेय आदि जातियों ने स्वतंत्र हो गणराज्य कायम कर लिये। यवनों के शासन से पहले भी यहाँ की जातियों के अपने गणराज्य थे, जो कि मिनान्दर और उसके पुत्र के शासन में दब से गये थे। मथुरा ६० ई०पू० के आसपास शकों की हो गई। सौराष्ट्र और अवन्ती के विजय के बाद मोग ने मथुरा को जीता होगा। यहाँ के क्षत्रप पहले हगाम और हगान थे, जिनके बाद महाक्षत्रप रजुबुल (राजुल) हुआ। मोग के मर जाने

^१ Greeks in Bactria; प्राचीन भारत का इतिहास (भगवत शरण उपाध्याय) पृ० २०५।

के कारण शकराज्य छिन्न-भिन्न हो गया, इसी समय रजुबुलने महाक्षत्रप बनकर अपने को स्वतंत्र घोषित किया। शहरातवशज हगाम का शासन ५८ ई०पू० अर्थात् विक्रम संवत् का आरंभ समय था। हगाम ४० ई० पू० और रजुबुल ४० ई०पू० के बाद शासन करता रहा। उसके उत्तराधिकारी सोडास का शासन १० ई०पू० आसपास खतम हुआ।

मोग के सिक्को पर ग्रीक लिपि में पहले "वसीलेउस् मउओस्" लिखा रहता था। जिस सिक्के पर मोगका नाम है, उसी पर हरमेयस का भी नाम मिला है। हरमेयस् शायद ग्रीको-बाख्त्रीय राजा कपिशा (काबुल) का भी राजा था, जो कि गंधार (मोग के राज्य) के पश्चिम में था। शायद गंधार लेने के बाद मोग ने इसे भी ले लिया। मोग की मृत्यु (५८ ई०पू०) के बाद भारत में शक राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। मध्य एशिया में स्थिति क्या थी, इसका पता नहीं लगता। भारत में विशेष कर कपिशा और गंधार में उनका स्थान पल्लवों ने ले लिया। बाख्त्रिया में संभवतः पल्लवों (पार्थिवों) का बल उतना नहीं बढ़ा। यह हमें मालूम है, कि पल्लवों के साथ के संघर्ष के कारण सोरेन पल्लव ने शकी को सीस्तान से भगाया था। पल्लवों के बारे में याद रखना चाहिये कि ईसा की ३री से ७वीं सदी तक यद्यपि शाही वंश ईरानी (सासानी) था, किन्तु कई शताब्दियों तक शासन करने में पल्लव (पार्थिव) इतने स्वदेशी और सम्मानित हो गये थे, कि सासानियों ने पार्थिवों के जिन सामन्त-वंशों की शक्ति और सम्मान को बनाये रखा। उनमें सोरेन पल्लव वंश प्रमुख था। सोरेन पल्लवों की भूमि रे (वर्तमान तेहरान) के आसपास थी। पल्लवों ने सीस्तान से शकों को भगाने में सफलता पाकर ही संतोष नहीं किया, बल्कि उन्होंने अपने प्रतिद्वन्द्वियों को भारत में आके फूलते-फलते देख उनपर बराबर आँख रक्खी। घुमन्तू यूची अपने कितने ही वर्षों के पार्थिव संबंध तथा सीस्तान के निवास से पार्थिवों अर्थात् ईरानी संस्कृति और शासन व्यवस्था से इतने प्रभावित थे, कि उन्होंने अपने शासन में बहुत सी बातें ईरानियों से ले लीं, जिनमें क्षत्रप और महाक्षत्रप की उपाधि भी है। मोग के मरने के बाद क्षत्रप उपाधि के ही नहीं, बल्कि स्वयं पल्लवों को भारत में आने का मौका मिला और आगे करीब पौन शताब्दी (५८ ई०पू०-२५ ई०) तक हम पश्चिमोत्तर भारत पर पल्लवों का शासन देखते हैं।

(३) पल्लव^१ (४८ ई०पू०-२५ ई०) —

मोग और दूसरे शक राजाओं के शासन का पता जिस तरह उनके सिक्कों से ही लगता है, उसी तरह पल्लवों का पता भी हमें उनके सिक्के ही देते हैं। पल्लव, पल्लव, पार्थिव और पार्थियन एक ही जाति के वाचक शब्द हैं। पल्लव वंशने ईरान पर २४६ ई० पू० से २२६ ई० तक शासन किया, इसके राजाओं की संख्या २६ थी। ईरान में इन्होंने सेलूकीय (ग्रीक) राज्य का स्थान बड़े संघर्ष के बाद लिया। ईरानी संस्कृति के बाद जिस संस्कृति का सबसे अधिक प्रभाव पल्लवों पर पड़ा था, वह थी ग्रीक संस्कृति। शक, पल्लव, ग्रीक (यवन) आरंभिक काल में भारत और बाहर आपस में राजशक्ति के लिये चाहे कितने ही लड़ें हो, किंतु वह शान्ति के समय अपने को भाई-भाई समझते रहे। ई० सन् के बाद इन्होंने भारत के बहुत से राजवंशों को

^१ यही हिन्दू-पार्थिव, श्री भा० शा० उपाध्याय के अनुसार (प्राचीनभारत का इतिहास पटना १९४६)

दिया, यहाँ के राजाओं के साथ विवाह सबध किया, बड़े बड़े नागरिक और सैनिक पदों को प्राप्त किया और अंत में राजपूत बनकर भारत की पुरानी क्षत्रिय जाति में मिल गये। विवाह-सबध के कारण पल्लव सातवाहनो के सबधी बने। सातवाहनो की एक शाखा (इक्ष्वाकु) जो धान्य कटक ((जि गुन्तूर) से शासन कर रही थी, जिसके बनवाये (ईसा की २री-३री शताब्दी के) स्तूप और विहार श्रीपर्वत (नागार्जुनी कोण्डा) और दूसरे स्थानों में अब भी मिलते हैं। इनके शिला-लेखों और मूर्तियों से पता लगता है, कि उज्जैन के शकों के साथ इनका वैवाहिक सबध था। इन्हींके उत्तराधिकारी दक्खिन के पल्लव राजा थे, जो ३री शताब्दी में काची में अपना एक शक्तिशाली राज्य स्थापित करने में सफल हुये हैं। काचीके पल्लव राज्यने चार शताब्दियों तक दक्षिण में एक सबल और समृद्ध शासन का ही रूप नहीं लिया, बल्कि भारतीय कला और साहित्य के विकास में उसने बड़ी पार्ट अदा किया, जो कि उत्तर में गुप्तों ने किया। यही नहीं, जावा, कम्बोज आदि में भारतीय सस्कृति और कला के विस्तार में सबसे अधिक हाथ पल्लव सस्कृति का है। इस प्रकार हम जान सकते हैं, कि पौन शताब्दी का पल्लव शासन भारत के लिये कोई नगण्य घटना नहीं है। स्वतंत्र पल्लव शासकों की राजधानी तक्षशिला थी। इनके सिक्कों से हमें निम्न पल्लव राजाओं का पता लगता है ^१—

बोनान ७-१६ ई०

स्पलहोर

स्पलरिश १५ ई०

स्पलगदम

अय १६-१७ ई० ~

अयिलिस १७-१८ ई०

गुदफर २५ ई०

दूसरा और कोई साधन न होने के कारण हमें सिक्कों की सूचना पर निर्भर रहना पड़ता है, किंतु उससे वश-परंपरा साफ तौर से नहीं जानी जा सकती। एक बात तो स्पष्ट मालूम होती है, कि हमारे इतिहासकार बोनान को जो प्रथम पल्लव शासक मानते हैं, उसमें वह ईरान के पार्थिव राजवंश के इतिहास को देखने का प्रयत्न नहीं करते। बोनान या बनाना १६ वा पार्थिव राजा था, जिसने ७ ई० से १६ ई० तक शासन किया था। जान पड़ता है, उसीके समय में पल्लवों का शासन एक स्वतंत्र राज्य के तौर पर स्थापित हुआ। स्पलहोर बोनान का पुत्र था। बोनान के सिक्के, मालूम होते हैं, भारत के लिये नहीं, बल्कि सारे पार्थिव-राज्य के लिये ढाले गये थे। स्पलहोर के सिक्के की एक तरफ लिखा रहता है “वसीलेउस् वसीलेउन” और दूसरी ओर “महाराज आतस ध्रमिस स्पलहोरस। इससे मालूम होता है, कि स्पलहोर बोनान का भाई था। “धार्मिक” का अर्थ है, बौद्ध धर्म का अनुयायी। लेकिन मोग के मरने (५८ ई० पू०) और बोनान (१) के राज्यालूत (७ई० होने के बीच में ६५ वर्षों का अन्तर है। यदि हम बोनान को पार्थिव सम्राट् मानें, तो मोग की मृत्यु के बाद ही इसको हम शकों का उत्तराधिकारी मान सकते हैं। बोनान के सिक्के में एक ओर ग्रीक

^१ भारतीय सिक्के (श्रीवासुदेवशरण उपाध्याय, प्रयाग १९४८ पृ० ११६-२५)

लिपि में “राजाओ का राजा बोनान” लिखना सारे पार्थिव साम्राज्य की दृष्टि से है, और दूसरी ओर उसके भाई स्पलहोर का केवल महाराज-भ्रात लिखा जाना यही बतलाता है, कि वह पार्थिव सम्राट् का उपराज मात्र था। भारतीय पल्लवों ने अपने सिक्कों में उसी तरह ग्रीक-लिपि, देवताओं और पदवियों का अनुकरण किया, जैसा कि मोग ने किया था। इनके कुछ सिक्के चौकोर भी हैं, जिनमें एक ओर ग्रीक देवता हेरकल की मूर्ति और ग्रीक लेख होता है, और दूसरी ओर ग्रीक देवी पल्लस की मूर्ति। कुछ सिक्कों में स्पलहोर और उसके पुत्र स्पलगदम का भी नाम प्राकृत भाषामें अंकित मिलता है। स्पलगदम को भी “ध्रमिज” लिखना उसके बौद्ध होने का परिचायक है। इन सिक्कों में प्राकृत भाषा खरोष्ठी लिपि में लिखी हुई है, जो कि पश्चिमोत्तरीय भारत में अशोक के समय से ही प्रचलित लिपि चली आती थी। पल्लवों और शकों का पश्चिमोत्तर भारत से सबंध और ग्रीकों के अनुकरण की प्रवृत्ति इतनी प्रबल थी, कि उन्होंने सौराष्ट्र और अवन्ती जैसे ब्राह्मी-लिपि के क्षेत्र में पहुँच कर भी ग्रीक लिपि का उपयोग अपने सिक्कों में किया। बोनान का एक दूसरा भाई स्पलरिश था, जो शायद स्पलहोर के बाद शासक बना। इसके एक सिक्के में अयका नाम भी मिलता है, जिससे मालूम होता है, कि जिस तरह बोनान और स्पलहोर, स्पलगदम, और बोनान से स्पलरिश का संबंध था, उसी तरह का संबंध अय से स्पलरिश का भी रहा होगा। स्पलरिश के सिक्के पर त्रिशूलधारी राजा की खड़ी मूर्ति है। सिक्के की एक ओर ग्रीक अक्षरों में राजा की उपाधि और स्पलरिश नाम लिखा हुआ है, दूसरी ओर ग्रीक देवता जेउस की सिंहासन पर बैठी मूर्ति तथा खरोष्ठी लिपि में लेख “महरजस महतस स्पलरिश।” स्पलरिश जान पड़ता है, बोनान की अधीन नहीं बल्कि अब स्वतंत्र शासक बन गया था। इस अकेले नामवाले सिक्के के अतिरिक्त उसका दूसरा भी सिक्का मिलता है, जिसमें एक ओर ग्रीक लिपि में स्पलरिश का नाम खुदा रहता है, और दूसरी ओर खरोष्ठी में अय का नाम। इन सिक्कों में एक ओर राजा घोड़े पर सवार और दूसरी ओर उसकी मूर्ति के साथ अय का नाम रहता है। यह बतलाता है, कि अय अभी स्पलरिश के उपराज या क्षत्रपकी तरह शासन करता था। जब अय स्वतंत्र शासक हो जाता है, तो एक ओर उसकी घोड़सवार मूर्तिके साथ ग्रीक लिपि में उसकी राजोपाधि और नाम रहता है, और दूसरी ओर किसी ग्रीक देवी देवता की मूर्ति के साथ खरोष्ठी लिपि में “महरजस रजरजस महतस अयस” लिखा रहता है। किसी सिक्के पर एक ओर मोअका नाम और दूसरी ओर अय का नाम भी उत्कीर्ण देखा जाता है, जिसमें सदेह होने लगता है, कि अय मोअ के बाद शासना-रूढ़ हुआ। लेकिन साथ ही हम अय की अधिराजी परंपरा अय-स्पलरिश-बोनान को भी जानते हैं, इसलिये इस सिक्के के बारे में कहा जा सकता है, कि अय ने मोअ के सिक्के की एक ओर अपना नाम का ठप्पा लगवा दिया। यदि हम अय को प्रथम मानें, तो स्पलरिश के साथ उसके लघुशासक होने की सगति नहीं स्थापित कर सकते। स्पलहोर बोनान का भाई था और स्पलरिश भी, लेकिन स्पलगदम, स्पलहोर और स्पलरिश का अय के साथ किस प्रकार का रक्त-संबंध था, इसे जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं है।

पल्लव (विशेषकर अय के) सिक्कों पर पीछे कुछ भारतीय देवताओं की भी मूर्तियाँ मिलने लगती हैं। अय के दस प्रकार के चांदी के और कई प्रकार के तांबे के सिक्के मिले हैं। दोनों में यूनानी देवी-देवताओं की प्रधानता पार्थियों के “फिलहेल” (यवन-पुत्र) के भाव को प्रगट करती है। कुछ और सिक्कों के कारण अय का उत्तराधिकारी अयलिश बतलाया जाता है, जिससे ही

एक नये पल्लव राजा द्वितीय अयस का अनुमान किया जाता है। इसके राज्यपाल अस्पवर्मा के सिक्केकी एक ओर घोड़े पर सवार चाबुक लिये राजाकी मूर्ति तथा अत्यन्त भदे यूनानी अक्षरोमें उपाधि के साथ अय का नाम है और दूसरी ओर यूनानी देवी पल्लस की मूर्ति तथा खरोष्ठी लिपि में “इद्रवर्मपुत्रस अस्पवर्मस स्त्रतगस जयतस” लिखा है। हम जानते हैं, कि ग्रीक शासनकाल में क्षत्रपी (प्रदेश) के शासक को “स्त्रतेगोस” कहते थे। सेलूकीय साम्राज्य में ७२ स्त्रतेगोस थे। पल्लव सिक्को के देखने से पता लगता है, कि उनके सिक्के का प्रथम पार्श्व अधिराज की मूर्ति उसके नाम और उपाधि के लिये सुरक्षित था और दूसरा पार्श्व उसके स्त्रतग (उपराज, राज्यपाल) के लिये। अस्पवर्मा में अब भी ईरानी शब्द का रूप “अस्प” मौजूद है, किंतु उसका पिता इन्द्रवर्मा शुद्ध भारतीय नाम रखता है। दक्षिण के पल्लवों में तो आगे चलकर वर्मा सभी राजाओं की साधारण उपाधि हो गई, जो अभी भी त्रिवाकुर और कोचीन के राजाओं के नाम के साथ देखी जाती है।

जिस अंतिम पल्लव राजा को कुषाण कुजुल ने हराकर अपने वश की स्थापना की, उसका नाम पकारे कहा जाता है। ईरानी पार्थिव वश का २२वा राजा पकोर २७७ ई० के आसपास हुआ था, जिसका और अर्दवान (४) का सघर्ष रहा। इसके पहले पकारे (पाकुर) प्रथम हुआ, जो अर्दवान (१६-४२ ई०) का ही दूसरा नाम या प्रतिद्वंद्वी रहा होगा। गुदफर का भी एक विशेष स्थान है। कितने ही लोग गुदफर को गर्दभिल्ल राजा बनाना चाहते हैं। यूनानियों के काल से अब ईरान और भारत इतने दूर हो गये थे, कि उनके सिक्को पर लकीर पीटते हुये यूनानी लिपि और भाषा का उपयोग बहुत ही भदे और अशुद्ध रूप में ही होता था। प्रो० राखालदास बनर्जी का मत है, कि गुन्दरफर कनिष्क और हुविष्क के समय (७८-१५२ ई०) राज करता था। गुन्दरफरके सिक्को की एक तरफ घुडसवार राजा की मूर्ति, ग्रीक लिपि में उपाधि और नाम तथा दूसरी ओर जेउस या पल्लसकी मूर्ति तथा खरोष्ठी अक्षरो में “महरजस रजतिरस त्रतरस देवन्नतस गुदफरस” (महाराज राजाधिराज त्राता देवन्नत गुदफरका) होती है। बाद के सिक्को से यह भी पता लगता है, कि उसके भाई अथग्नि और भाई के पुत्र अवगद ने भी गुन्दरफर के उपराज के तौर पर शासन किया था। गुदफर के एक सिक्के पर जहा एक ओर घोडसवार मूर्ति और ग्रीक लिपि में उत्कीर्ण राजाकी नामोपाधि मिलती है, वहा दूसरी ओर विजय देवी को हाथ में लिये जेउस की मूर्ति तथा खरोष्ठी में “महरजस रजतिरजस गुदफर भ्रतपुत्रस अवगदस” (महाराज राजाधिराज गुदफर के भाई के पुत्र अवगदका) ^१ इनके अतिरिक्त सनवर तथा पकुर आदि पल्लव शासकों के और भी सिक्के मिलते हैं, जो इस वश के अंतिम शासक रहे।^१

२ तुलनात्मक शक-पल्लव-वश

ई०	भारत	चीन	दक्षिणापथ	ईरान
१	(शातवाहन) पिडती १-६		बोनान ७-१६ बोनान ७-१६ अय १६-१७ गुदफर १८-२५	(पार्थिव) उरुद 11 २-६ अर्दवान् १६-४२
२०		क्वाङ् वूती २५-५८	कुजुल 1 २५-५०	
४०	हाल		बीम ५०-७८	वारदान ४२-४६ वल्गश (I) ५१-७७
६०		मिङ् ती ५८-७६ चाङ् ती ७६-८९ होती ८९-१०६	कनिष्क ७८-१०१	पाकुर ७७-१०५
१००	गौतमीपुत्र- १०६-१३०	अन्-ती १०७-१२६	वसिष्क १००-१०६ कनिष्क 11 ११९	खुल्लव १०५-११३
१२०		शुन् ती १२६-१४५	हुविष्क १२०-५२	वल्गश II, 111 १३३-१९१
१४०	पुडुमावि १५५	हान्ती १४७-१६८	वासुदेव १५२-१८६	
१६०	यज्ञश्री १६६-१९६	लिङ् ती १६८-१८९		
१८०		स्यान् ती १८९-२२०		वल्गश १९१-२०८

२ कुषाण (२५-४२५ ई०)

यूची (ऋचीक) जन के मध्य-एसिया पर अधिकार करने की बात हम कह चुके हैं, और यह भी, कि पार्थिवो (पल्लवो) के प्रहार के कारण उनके एक कबीले को सीस्तान प्रदेश में कुछ वर्षों तक रह वहाँ अपना नाम छोड़ भारत की ओर भागने के लिये मजबूर होना पड़ा। इस कबीले का नाम मालूम नहीं। उसे केवल शक कह देने से बात और भी अस्पष्ट हो जाती है, क्योंकि ईसा की प्रथम शताब्दी में बहुत सी शक-शाखाएँ थी—त्यानशान् और सप्तनद में वू-सुन, उनके उत्तर में सङ्वाड, और दक्षिण (तरिम-उपत्याका) में लघु-यूचियों के वशज, तुषारके पश्चिम (वर्तमान ख्वारेज्म कराकल्पकिया और उज्बेकिस्तान) में कग, जिनके पश्चिम में वोल्गा की ओर अलान (ओसेत), जिनके दक्षिण-पश्चिम में पार्थिव (पुराने दहै, जो पारस की खाड़ी तक के स्वामी

थे), बाख्त्रिया के यूची वशज, और शकस्तान (सीस्तान) से निकलकर बिलोचिस्तान, सिंध, पंजाब, सौराष्ट्र और अवन्ती में फैले शक। सीस्तान से आनेवाली पहली शक बाढ़ के सरदारों का वंश क्षहरात था। यह तक्षशिला, सौराष्ट्र, अवन्ती और मथुरा के शक-शासकों के वंश के नाम से सिद्ध होता है। हम इस पहली बाढ़ को उनके सरदारों के कुल के नाम पर क्षहरात कह सकते हैं। घुमन्तू जातियों का नाम अपने शासक के कुल या प्रतापी शासक के नाम पर पड़ जाना अक्सर देखा जाता है। मध्यएशिया के आजकल के उज्बेकों का नाम मंगोल-वंशीय एक पुराने राजा उज्बेक खान^१ के नाम पर पड़ा, जो कि सुवर्ण-ओद्द मंगोलों का खान था, जिसने सबसे पहले इस्लाम को स्वीकार किया। क्षहरात वंश की राजलक्ष्मी को लूटनेवाले उनके पुगने शत्रु पल्लव थे, जिनकी बात हम कह चुके। इसके बाद जो इतिहास में अत्यन्त प्रतापी शक वंश आता है, उसे कुषाण कहा जाता है। कितने ही ऐतिहासिकों का मत है, कि यह मूलतः लघु-यूचियों के वंशज तस्मि उपत्यका के तुखारों की ही एक शाखा थी, जिनका नाम वहाँ के कूचा नगर में अब भी मिलता था। जिस वक्त उनके बड़े महायूची बाख्त्रिया और कपिशा-गंधार-सिंध के शासक बने, उसी समय इन्होंने पामीर और गिलगित की पर्वतमालाओं में अपने पैर फैलाये। यह याद रखने की बात है, कि पहले के हूणों और तुर्कों की भाँति शक घुमन्तू भी तम्बुओं में रहते घुमन्तू जीवन बिताना अपना धर्म समझते थे। गृहवासी लोग उनकी दृष्टि में कायर और दम्बू थे। पाँच शक-कबीलों में शक्ति के लिए प्रतिद्वन्द्विता हुई, जिसमें कुषाण कबीले ने अपने सरदार कुजुल के नेतृत्व में सफलता प्राप्त की। उस समय सभी कबीले गंधार और कपिशा के उत्तर में पहाड़ों में रहते थे। कुजुल ने अपने बाकी चार कबीलों को ही ढकेलकर अपने कबीले को आगे नहीं बढ़ाया, बल्कि उसीने भाग्न में पल्लव वंश का उच्छेद किया।

कुषाण राजा—

१ कुजुल कदफिस	२५-५० ई०
२ विम कदफिस	५०-७४ ई०
३ कनिष्क (१)	७४-१०१ ई०
४. वाशिष्क	१०१-६ ई०
५ कनिष्क (२)	११६ ई०
६ हुविष्क	१२०-५२ ई०
७ वासुदेव	१५२-८६ ई०
पिरो	चौथी सदी का अन्त

(१) कुजुल कदफिस^१ १ (२५-५० ई०)

कुजुल के विजय प्राप्त करने के समय कपिशा (काबुल) में ग्रीक राजा हरमेयस का शासन था, जो संभवतः पल्लव शक्ति के निर्बल होने के समय कपिशा का स्वामी बन गया था। उसने

^१ देखो मध्यएशिया का इतिहास (२) पृष्ठ ३०-३२ (१३०३-४० ई०)

^२ प्राचीन भारत का इतिहास (भ० श० उपाध्याय, पटना १९४८ ई०) पृ० २१३ भारतीय सिक्के (वा० श० उपाध्याय) पृ० १२६, Coins of Ancient India (J Allan 1936), Coins of ancient India (Rapson)

कपिशको जीता, या पुराने यवन-वशकी किसी शाखाने पल्लवोकी निर्बलतासे लाभ उठाया और उसी वशका अंतिम राजा हरमेयस था, यह निश्चित तौरसे नहीं कहा जा सकता। इतना मालूम है, कि हरमेयसके सिक्के में उसके साथ कुजुलका भी नाम मिलता है। कुजुलके एक सिक्केपर जिस ओर ग्रीक अक्षरोमें “वसिलेउस कुषानो कोजोलो कदफिजोयुस” लिखा रहता है, उमी तरफ हरमेयस का आधा शरीर भी चित्रित है, दूसरी ओर ग्रीक देवता हेरकलकी आकृति तथा खरोष्ठी लिपिमें “कुजुलकसस कुषाण यवगस घ्रमठिदस” रहता है। हम पल्लवोके उदाहरणमें जानते हैं, कि उस वक्त सिक्केकी एक तरफ अधिराजका चित्र और नाम होता, और दूसरी ओर शासकका खरोष्ठी लिपि तथा प्राकृत भाषा में नामोपाधि उत्कीर्ण होती। यदि यह बात यहाँ भी ठीक है, तो हो सकता है, हरमेयस अधिराज था और कुजुल उसका क्षत्रप या अधीन-शासक था। कुजुल कुषाण-वश का यवगू था। यवगू या जेब्बू पीछे मध्य-ऐसियाके तुर्कोंमें उपराजकी एक प्रचलित साधारण उपाधि थी। इस उपाधि का सबसे पहला उल्लेख इसी कुजुल कदफिसके सिक्के में मिलता है। धर्मठित (धर्मस्थित) पाली धम्मिय (धार्मिक) का ही पर्याय है और जो आम तौरसे बौद्ध राजा ही अपने लिये इस्तेमाल करते थे। ईसाकी प्रथम शताब्दीमें तरिम-उपत्यकामें निश्चय ही बौद्ध धर्म का प्रचार था। इस प्रदेशके दक्षिणी भाग में उस समय भारतीय लिपि और भारतीय भाषा का प्रयोग होता था। नाम आदिसे मालूम होता है, कि भारतसे जाकर बस गए लोगोका वह प्राधान्य था। तरिम्-उपत्यकाके उत्तरी भागमें शक-जातियो (तुषारो) का निवास था। यद्यपि भाषा, जाति और रीति-रिवाजमें उत्तर दक्षिणका अंतर था, तो भी वहाँ दक्षिण में कराकुरम और क्वेनलन पर्वतमालाके अन्तरमें बड़ा हुआ भारत मान सकते थे। वहाँ से उत्तर शक-तुषारोका देश था। जहाँ तक बौद्ध धर्मका सबंध है, दोनों प्रदेश एकही धर्म और सस्कृतिके माननेवाले थे। इसलिये कुषाणोके यवगू कुजुलका बौद्ध राजा होना कोई अमाधारण बात नहीं थी। आगे सिक्को परसे हरमेयसका नाम हट जाता है, और उसकी जगह शिरस्त्राण पहने राजाका सिर या दूसरे सकेत के साथ ग्रीक भाषा और लिपिमें कुजुलका नाम मिलता है और दूसरी ओर बैठे हुए राजा, ऊट या देवता आदि की मूर्तिके साथ “कुषाण यवगस घ्रमठिदस” या “महरयस रयरयस देवपुत्रस”, अथवा “महरजस महतस कुषाण” के साथ “कुजुल-कुश महरयस रजतिरजस यवगुस घ्रमठिदस” मिलता है। हरमाउसके अधीन शासकके तौरपर कुजुल अपना शासन आरम्भ करता है। यह भी हमें मालूम है, कि यूचियो द्वारा बाख्त्रियासे यवन-शासनके उच्छेद होनेके समय पुराने यवन राजवशके लोग दुर्गम पहाडों की ओर भाग गये, जहाँ उन्होंने अपनी प्रजाकी श्रद्धा और भक्ति का लाभ उठाकर अपने छोटे-छोटे राज्य कायम कर लिये। पामीर (इमाओस), और चित्रालके पहाडों में ऐसे बहुतसे छोटे-छोटे राजवशोका अभी हालतक अस्तित्व था, जो अपनेको सिकन्दर अर्थात् ग्रीक राजाओका वंशज मानते थे। कुजुलको कुछ इतिहासकार मोगका वंशज मानते हैं, किन्तु ऐसा होनेपर फिर वह न तुषारी रहेगा और न क्षह्रात छोडकर कुषाण वंश नाम देनेकी उसे आवश्यकता रहेगी। चीनी ग्रंथोंमें भी कुजुलका नाम आता है। जान पडता है, कुजुलको कुषाण वंशकी नीव डालने के लिये अपने सारे जीवन भर संघर्ष करना पडा। चीनी लेखकोके अनुसार वह ८० वर्षकी आयु में मरा।

(२) विम कदाफिस^१ (५०-७८ ई०)

विमके ओएम और दूसरे उच्चारण भी मिलते हैं। चीनी लेखकों के अनुसार यही भारतका विजेता था। इसने अपने राज्यको कपिशा-गंधारसे और आगे बढ़ाया। संभवतः इसने ही यमुनाके पूरब भी अपनी राज्य सीमा पहुँचाई और बाख्रियाको भी अधीन किया। बिहारसे ख्वारेज्म तक फैले कनिष्कके विशाल राज्यके विस्तारमें उसके पूर्वाधिकारी विमका बहुत हाथ था, इसमें सदेह नहीं। विमके शासनकी एक सबसे महत्वपूर्ण घटना यह है, कि इसीने भारतमें सबसे पहले सोनेका सिक्का चलाया। यवनोके पहले हमारे यहाँ ताबे या चाँदीके चौकोर (पंचमार्क) सिक्के चलते थे यवनोंने अपने सिक्कोको गोल तथा राजाकी मूर्ति या दूसरी आकृतियोंके साथ अलंकृत करके निकाला, जिसका भद्दा अनुकरण क्षहारात और पार्थिव भी करते रहे, किंतु, इनमेंसे किसीने सोनेका सिक्का नहीं चलाया। विमने अपने सोनेके सिक्केमें रोमन सिक्केकी तौल आदि का अनुकरण किया है, और उसीकी तरह यह १२४ ग्रैनका होता है। अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यमें सोनेके सिक्केका बड़ा महत्व है, शायद इसीलिए विमने भारतमें सोनेके सिक्कोका प्रचार किया। भारतका अंतर्राष्ट्रीय व्यापार इससे पहले भी ग्रीस, रोम, अफ्रीका, जावा, चीन और मध्य-एशिया तक था। उस वक्त जल या स्थलका सार्थ (कारवा) अपने साथ भारतीय माल ले जाता और बदलेमें दूसरा माल ले आता था। अब भी इस तरहका व्यापार होता था, किंतु माल ढोकर लेजानेकी जगह व्यापारी थोड़ेसे सोनेके सिक्कोको ले जाकर बहुतसा माल खरीदकर ला सकते थे। विमके सोनेके सिक्के पर एक ओर शिवकी मूर्ति होती है। किसी किसीपर राजाके नामके साथ “महिष्वर” भी लिखा है, जिससे मालूम होता है, कि कुजुल जहाँ धर्मस्थित (बौद्ध) था, वहाँ विम माहेश्वर (शैव) था। इसके सिक्कोपर एक ओर मुकुट-शिरस्त्राणधारी राजा हाथमें गदा और शूल लिए खड़ा है, तथा वही ग्रीक लिपिमें “वसिलेउस विमकदफिसस” उत्कीर्ण होता है, और दूसरी ओर “महरजस राजाधिरजस सर्वलोग इश्वरस महिष्वरस विमकदफिसस”। ‘ईश्वर’ और ‘महीश्वर’ राजा और महाराजाके पर्याय हैं, इसलिए हो सकता है, “महीश्वर” (माहेश्वर) शैवका द्योतक न हो। इसके दूसरे ताबेके सिक्केकी एक ओर लंबी टोपी और लंबा लंबादा पहने राजा खड़ा है। उसकी दाहिनी ओर हवन कुंड है। राजाके बाये हाथमें परशु है। इसी तरफ ग्रीक लिपिमें “वसिलेउस सेतरमेगस विमकदफिस” लिखा हुआ है। सिक्केकी दूसरी ओर नदीके साथ त्रिशूलधारी शिवकी मूर्तिके पास खरोष्ठी लिपिमें लिखा रहता है “ईश्वरस महीश्वरस विमकदफिस”। “ईश्वर महीश्वर” ग्रीक “वसिलेउस वेसिलियोन” (राजाओका राजा) का अनुवाद मालूम होता है। कुषाणोको बौद्ध या शैव आदि धर्मोंके साथ सबद्ध देखकर उन्हें भारतमें आकर हिंदू-संस्कृति और धर्मको ग्रहण करनेवाला समझनेकी गलती इसी कारणकी जाती है, कि हम यह नहीं जानते, कि उनका मूल-स्थान (तुषार-देश, तरिम-उपत्यका) इससे पहिले ही से ही धर्म और संस्कृतिमें हिंदू था।

(३) कनिष्क (७६-१०६ ई०)

विमके उत्तराधिकारीके रूपमें हम भारत ही नहीं एस्तियाके-एक महान् शासक, महान् निर्माता कनिष्कको पाते हैं। जिस तरह विम और कुजुलका पारस्परिक सबंध हमें नहीं मालूम है, उसी तरह कनिष्क और विमका भी सबंध भी अज्ञात है। कुजुल कुषाणोंका यवगू (जवगू) था, इससे वह घुमन्तुओंकी प्रथाके अनुसार विम कुजुलका भाई भी हो सकता है और बेटा भी। वही बात विम और कनिष्कके सबंधमें भी कह सकते हैं। विमने जहाँ गंगासे वक्षु तक फैले अपने राज्यको कनिष्कके लिये छोड़ा, वहाँ सोनेकी मुद्राकी प्रतीकवाली विशाल व्यापार लक्ष्मीका भी उसे स्वामी बना दिया। कनिष्कके सिंहासनारूढ होनेके समयसे वह सन् आरम्भ होता है, जिसे हम आजकल शक-शालिवाहन सवत् कहते हैं। शालिवाहन सातवाहनका रूपांतर है, जो आध्र राजाओंकी पदवी सा बन गया था। सातवाहनोका गकोके साथ सवर्ष और विवाह-सबंध भी बहुत रहा है, शायद इसी कारण पीछे शक-शालिवाहन (शकसातवाहन) जोड़ा शब्द बोला जाने लगा। कनिष्क जहाँ अशोककी तरह एक उदार “धार्मिक धर्मराजा” बौद्ध था, वहाँ दूसरी ओर वह एक बड़ा बहादुर योद्धा और कुशल शासक भी था। सारनाथमें उसके तीसरे राज्यवर्ष (८१ ईस्वी) का एक अभिलेख मिला है, जिससे जान पड़ता है, कि गद्दीपर बैठनेके तीन वर्षके भीतर ही वह सारे उत्तर-प्रदेशका स्वामी बन गया था। ख्वारेज्मकी मरुभूमि (करा-कुम) में कनिष्कके समयके नगर मिले हैं और उसीके कारण ईसाकी आरम्भिक तीन शताब्दियोंकी वहाँकी सस्कृतिको कुषाण-सस्कृति कहा जाता है। अयस-कला, जिल्दिक और तोप्रक-कलाके ध्वसावशेष इसी कालके हैं। वहाँ जो चीजे उस कालकी मिली हैं, उनमें कनिष्कके सिक्के भी हैं। अभी भी वहाँकी खुदाई जारी है। जो चीजे वहाँ मिली हैं, उनके बारेमें अभी ग्रंथ नहीं लिखे गये हैं। कुछ छोटे-मोटे लेख रूसी अनुसंधान-पत्रिकाओंमें ही छपे हैं, जो भापाके कारण ही बाहरवाले विद्वानोंके लिए ज्ञात नहीं है, वल्कि पत्रिकायें बाहर मिलती नहीं। हमारे दूतावास जितनी शान शौकतसे अपने कमरोंको सजाने और टाट-बाटसे रहनेकी फिकर करते हैं, उतना वहाँ साइन्स, कला और इतिहास-सबधी जो खोजे हो रही हैं, उनके बारेमें ध्यान देनेकी आवश्यकता नहीं समझते। १९४६ ई० की खुदाईमें वहाँ तीसरी शताब्दीके महत्वपूर्ण भित्ति-चित्र मिले हैं। एक कमरेमें तो इतने अधिक कुशल कारीगरोंके बनाये हुए धनुष, वाण और दूसरे हथियार मिले हैं, जिसके कारण उसे उस कालका शस्त्रसंग्रहालय कहा जा सकता है। इन पुराने कुषाणकालीन नगर-ध्वसोंमें सभव है उस समयके अभिलेख भी मिले। हाल ही में उससे कुछ ही पीछेके चर्मपत्रपर लिखे पुरानी भाषाके बहुतसे अभिलेख मिले हैं। यदि कनिष्कके मनो सिक्के हमें उत्तर प्रदेशके आजमगढ़ जैसे एक जिलेमें मिल जाते हैं और कनिष्कके लेख पेशावर, रावलपिंडीके जिलों, बहावलपुर रियासत, मथुरा, श्रावस्ती, कौशाम्बी, सारनाथ आदिमें मिले हैं, तो सभव है, कि कराकुम, किज़िलकुम की मरुभूमि कनिष्क कालके बारेमें जाननेके लिये विशेष सहायक हो।

कनिष्कके राज्यकालका निर्णय उसके और उसके उत्तराधिकारियोंके अभिलेखों द्वारा ही

किया गया है। कनिष्कका सबसे अंतिम अभिलेख उसके राज्यके २३वें वर्ष (१०१ ई०) का मिला है। मथुरा और साचीमें शक-संवत् २४ और २८ के दो अभिलेख मिले हैं, जिनमें वसिष्कका नाम आता है, जिसका अर्थ हुआ—१०२ और १०६ ई० में वसिष्क कुषाणोंका राजा था। वैसेपेशावर जिलेके आरा स्थानमें शक-संवत् ४१ (११६ ई०) का भी एक लेख मिला है, जिसमें “वसिष्क पुत्र महाराज राजातिराज देवपुत्र कनिष्कके राज्यका ४१ वर्ष” लिखा हुआ है। जिससे सदेह होता है कि कनिष्कने ४१ वर्ष राज किया। लेकिन वसिष्कका पुत्र कनिष्क था, इसका कोई पता नहीं है।



१६. कनिष्क का कुषाणशासकत्व (१-३० ई०)

और दूसरे २४वें और २८वें शक-संवत्में वसिष्क और ३१वें से ६०वें (१०६, १४८ ई०) में हुविष्कके अभिलेख मिले हैं, जिसके कारण हमें यह मानना पड़ेगा कि वसिष्क और हुविष्क या तो कनिष्कके क्षेत्रप थे, अथवा यह वसिष्क-पुत्र कनिष्क दूसरा कनिष्क था, जिसने वसिष्क और हुविष्कके बीचमें राज्य किया। अस्तु। यह तो निश्चित ही मालूम होता है कि कनिष्कने २३ साल (७८-१०१ ई०) तक अवश्य शासन किया था। ख्वारेज्मकी खुदाईसे मालूम होता है, कि कनिष्कका शासन मध्य-एशियामें आजके सारे उज्बेकिस्तान और ताजिकिस्तानमें फैला हुआ था। साथ ही कनिष्क अपनी पितृ-भूमि पुराने तुषार-देश (तरिम-उपत्यका) को भूला नहीं था। चीनने १११ ई० में तावान (फर्गाना) तकको जीतकर सारी तरिम-उपत्यका लेते हुए फर्गाना तकके रेशमपथको अपने हाथमें कर लिया था। तरिमके उत्तरके वू-सुन चीनके बड़े विश्वासपात्र अधीन शासक थे, जिन्हें विवाह-संबंधसे भी चीनने अपने साथ घनिष्ठ सूत्रमें बांध रक्खा था। हम अन्यत्र देख चुके हैं, किस तरह वू-सुन राजा चीन राजकुमारियोंको ब्याह लाते थे, जो बेचारी

घुमन्तू जीवनके कष्टको बर्दाश्त करते अपने नैहरके सुखोके लिये आसू बहाया करती थी। कनिष्क अपनी अपार अजेय सेनाका नेतृत्व करते हुए चारो ओर अपनी विजय-दुन्दुभी बजा रहा था, उस समय चीनमें लोयाङ्ग के हान-वंश (२५-२२० ई०) का शासन था। वू-त्ती (२५-५८ ई०) चाङ्ग ती (७६-८६ ई०) और हो-त्ती (८६-१०६ ई०) इस वंशके प्रतापी सम्राट् कनिष्कके समकालीन थे। इस वंशका संस्थापक वाई याङ्गवान् (२३-२५) ई० था। पुराने हान-वंशकी राजधानी छाङ्ग-आन्में २०८ ई० पू० से २५ ई० तक शासन किया था। तरिम-उपत्यकाकी ओर बढ़नेमें कनिष्कके लिये सबसे बाधक चीन था, जिसके सेनापति पान्-चाउकी वीरता और रणकुशलताकी बड़ी धाक थी। उसने तरिम-उपत्यकाको ही अपने हाथमें नहीं कर रक्खा था, बल्कि उसके कारण कनिष्कका कश्मीर और उसके उत्तरका प्रदेश भी खतरेमें पड़ गया था।

कनिष्ककी यह कोई गुस्ताखी नहीं थी, यदि उसने चीन सम्राट्से राजकन्या मागी। हम जानते हैं वू-सुन राजा, जो पीढियोसे चीन सम्राट्के दामाद होते आये थे, बल और वेभवमें कनिष्कके मथुराके क्षत्रप खरपल्लान या काशीके क्षत्रप वनस्पर क्या इन क्षत्रपोंके तीसरा श्रेणीके सरदारोंके बराबर भी नहीं थे। लेकिन जब कनिष्कका दूत पान्-चाउके पास अपने राजाके लिये चीनी राजकुमारी माँगने गया, तो उसने कनिष्कके दूतको जेलमें डाल दिया। इस तरह पान्-चाउने कनिष्कको युद्धके लिये आह्वान किया। बगालसे ख्वारेज्म तकके प्रतापी सम्राट्के लिये यह बड़े अपमानकी बात थी। कनिष्क एक बड़ी सेना लेकर पान्-चाउसे बदला लेनेके लिये गया, किंतु उसे पामीर और हिमालय के दुर्गम मार्गोंको पार करके अपनी सेनाको लेजाना था, जब कि चीनी सेना अपने हूण और वू-सुन सहायकोंके साथ वहा पहलेसे मौजूद थी। फलतः कनिष्कको बुरी तौरसे हारकर चीन सम्राट्का करद बनना पड़ा। खूनके घूट पीकर उस वक्त तो वह रह गया, लेकिन कुछ वर्षों बाद उसने फिर उस पराजयके कलकको धोना चाहा। उस समय पान्-चाउ मर चुका था और उसका पुत्र पान्-चाङ्ग चीनकी पश्चिमी सेनाका सेनापति था। कनिष्कने चीनी सेनाको बुरी तरह पराजित किया और तरिम-उपत्यका के अपने पूर्वजोंके देशको प्राप्त करनेमें सफलता पाई। तरिम-उपत्यका और उसके उत्तर तथा उत्तर-पूर्व में बहुतसे चीनके करद राज्य थे। हूण भी अब दो भागोंमें बंट गये थे, और उनका एक शक्तिशाली (दक्षिणी) भाग चीनके साथ था। इसमें सदेह नहीं, कनिष्क की सेनाको इन सबकी सम्मिलित शक्तिसे भुगतना पडा होगा। कनिष्कने चीनको हराकर ही सन्तोष नहीं किया, बल्कि मध्य-एशियाई या चीनी राजकुमारोंको जामिन (युद्धके लाभ) के रूपमें अपने साथ ले आया। इन राजकुमारोंके आराम की ओर उसने बहुत ध्यान दिया। इससे एक बड़ा उपकार यह हुआ, कि उन्होंने भारतमें नासपाती और आङ्गूके फल पहले पहल लगाये। हमारे यहाँ पहले से ही कपिशका अगूर मशहूर था। उनके रहनेके लिये उसी कपिश (कोहदामन) उपत्यकामें स्थान बनवाया गया था, जिसे शे-लो-क-विहार कहते थे। स्वेन्-चाङ्गने अपनी यात्रामें ७वीं शताब्दीके पूर्वार्द्धमें उसे देखा था। पूर्वी पंजाब (जलन्धर)के जिस इलाक़ेमें उन्हें जागीर मिली थी, उसका नाम ही चीनभुक्ति (चीन जिला) पड़ गया था। स्वेन्-चाङ्गके जीवन चरित्रके लेखक हुइ-लीने लिखा है, कि राजकुमारोंने विहार बनवाकर उसकी मरम्मतके लिये इतना रुपया गाड़के रख दिया था, कि उसे प्राप्त कर स्वेन्-चाङ्गने विहारकी फिरसे मरम्मत करवा दी।

कनिष्क बौद्धोंकी परिभाषाके अनुसार सचमच ही “धम्मियधम्मराजा” (धार्मिक धर्म-

राज) था। उसकी राजधानी पुरुषपुर (पेशावर) थी। इसके पहले गंधारके इस नगरको कोई प्रधानता नहीं मिली थी। गंधारकी प्रसिद्ध नगरी और राजधानी तक्षशिला थी, जो कि सिंधु नदीके पूरबमें रावलपिंडी जिले में कालासरायले स्टेशनके पास शाहजीदीढेरीके नामसे मौजूद है। गंधारका प्राचीन देश (पख्तूनिस्तान) पाकिस्तान और स्वतंत्र कबीलोमें बटा हुआ था। लेकिन आजकल पख्तून (ठठानोका देश) रावलपिंडी तक नहीं है। पश्चिमी गंधारमें



चित्र २३—कनिष्क

पुष्कलावती (चारसद्दा) को ग्रीक राजाओने कुछ समय अपनी राजधानी जरूर बनाया था। गंधारके महत्वका बढ़ानेवाला कनिष्क था। उस समय राजधानी पुरुषपुर बहुत समृद्ध रही होगी, यह तो उससे तीन और पांच शताब्दियों पीछे आनेवाले फा-शीन और स्वेन्-चाङ्गके यात्रा-विवरणोंसे मालूम होता है। कनिष्कके समय पाटलिपुत्रका वैभव पुरुषपुरको मिल गया था। बाख्त्रिया भी एक क्षत्रपकी राजधानीसे अधिक महत्व नहीं रखती थी। फगानाकी उर्वर और समृद्ध उपत्यका ही नहीं कनिष्कके हाथमें थी, बल्कि सिङ्कयाङ्गके पूर्वी सीमासे लेकर पार्थिव

(ईरानी) सीमा तक का रेशमपथ कनिष्क के हाथ में था । फर्गाना तथा सोगद के समरकन्द आदि व्यापारिक नगर, उसके हाथ में थे । सोगद नदी के किनारे आज भी कुशानिया कस्बा है, जो बतला रहा है, कि कुषाणोने इस भूमि को और समृद्ध करने की कोशिश की थी । ख्वारेज्म में निम्न-वक्षु की उत्तर तरफ किजिलकुम के रेगिस्तान में तोप्रक-क्लाका नगरध्वस हाल में खोदकर निकाला गया है, जिसके आकार-प्रकार को देखते^१ ही से मालूम होता है, कि घुमन्तु शक अब नागरिकता में आगे बढ़ गये थे । कश्मीर में भी कनिष्क ने कनिष्कपुर नामसे एक नगर बसाया था, जिसका उल्लेख कल्हण ने राजतरंगिणी में किया है । तक्षशिला में उसका बसाया नगर आजका सिरसुख है ।

व्यापार के महत्त्व को, तो जान पड़ता है, कुषाणो ने खास तौर से समझा था, इसीलिये उन्होंने व्यापार-पथों की ओर विशेष तौर से ध्यान दिया था । बड़ी नदियाँ ही नहीं, बल्कि ऐसी नदियों का भी उन्होंने इस्तेमाल किया था, जिनमें वर्षा के दो ढाई महीने ही नावे चल सकती हैं । इसका उदाहरण आजमगढ जिले के दक्षिण में अवस्थित मँगई (मार्गवती) नदी है । छोटी नदी होने पर भी वह गाजीपुर जिले में सीधे गंगामें जाकर मिलती है । इसी छोटी नदी के दाहिने किनारे पर मेरे पितृग्राम (कनैला) से मील भरपर ही सिसवा का विस्तृत ध्वसावशेष है, जहाँ वर्षों से ढेरो कनिष्क के सिक्के मिलते आ रहे हैं, । शिशपा ग्राम कुषाणो के वक्त एक अच्छा व्यापारिक केन्द्र रहा । मगई नदी में वर्षा खतम होते ही इतना कम पानी रह जाता है, कि लोग जगह-जगह बाँध बाँधकर पशुओं के लिये पानी जमा करते हैं । कनिष्क के विशाल साम्राज्य में ऐसी न जाने कितनी मगइयो को व्यापारपथ के रूप में इस्तेमाल किया जाता रहा होगा ।

तोप्रक-क्ला का निर्माण कुषाणो की सुश्रुति और उपयोगिता दोनों को प्रदर्शित करता है । यह चौकोर दुर्गबद्ध बस्ती चारों ओर मजबूत प्रकार से घिरी थी । इसकी एक तरफ दक्षिण में दुर्ग का सुदृढ द्वार था । द्वारके भीतर एक प्रशस्त पथ उत्तरसे दक्षिण चला गया था । दक्षिण के छोर पर जान पड़ता है, शासक का महल (अत पुर) था । प्रधान सड़क से दाहिने और बाये समकोण पर चार और सड़क निकली थी, जिनके किनारे बाजार और घर बसे हुये थे । नगर की लंबाई प्रायः हजार गज और चौड़ाई ६०० गज थी । खुदाई के सचालक प्रोफेसर न त ताल्स्तोफ का कहना है, कि क्लासिकल प्राची की वस्तुकला का यह सुंदर नमूना है । भारत में शको के शासन और कला का स्थान भारशिवो और बाद में गुप्तो ने लिया ।

कुषाणो से पहले बाख्त्रीय ग्रीको ने कला को बहुत प्रोत्साहन दिया, लेकिन वह भारतीय रंग में तब तक रंग न पाई, जब तक कि कनिष्क के सर्वतोमुखीन प्रगति वाले शासन ने उसे वैसा नहीं कर दिया । बुद्ध की प्रथम मूर्ति कनिष्क के समय में बनी, जिसके चीवर के चुन्नत और केश-विन्यास पर ग्रीक प्रभाव दिखाई पड़ता है, यद्यपि बहुत ही सूक्ष्म और मधुर रूपमें ही । बाख्त्रीय ग्रीक कला को गंधार-भारतीय शैली में परिणत करने का काम कनिष्क के शासन में हुआ । ग्रीक और पल्लव शासन काल से ही मथुरा क्षेत्रों की राजधानी चली आई थी । शासन के समय मथुरा समृद्ध रही होगी, इसमें सदेह नहीं । तक्षशिला, पाटलिपुत्र और दक्षिणापथ के

व्यापारपथ भी यही पर मिलते थे। उस समय के राजस्थान का भी मार्ग यही से फूटता था। आज यह सारा-सुभीता आगरा को प्राप्त है। बहुत संभव है, इसीके कारण अकबर अपनी राजधानी दिल्ली से आगरा ले गया। १६४७ ई० के बाद भी बिना पहले से सोचे-समझे ऐसी घटना घटित होती देखी गई। पहले थोड़े से सिंधी या पंजाबी शरणार्थी आगरा में पहुँचे। कितने ही विस्थापित सिंधी राजस्थान के जोधपुर आदि नगरों में बसना चाहते थे, क्योंकि सिंध के वह समीप थे, लेकिन जल्दी उन्हें मालूम हो गया, कि यदि ऐसे स्थान में रहना है, जहाँ जीविका के साधन भी आसानी से प्राप्त हो सके, तो आगरा ही वैसा स्थान है। आज आगरा में बहुत बड़ी संख्या में सिंधी आकर बस गये हैं। आगरा आज जहाँ कानपुर, लखनऊ, प्रयाग, बनारस तथा पूरब के नगरों के साथ रेल द्वारा संबद्ध है, वहाँ बम्बई, दिल्ली, अमृतसर, जयपुर अजमेर आदि से भी वह रेल द्वारा संयुक्त है। अकबर की दूरदर्शिता ने पहले ही आगरा को महत्व दे दिया था, इसलिये अंग्रेजों ने रेल का चतुष्पथ भी वही बनाया। कुषाणों के वक्त ये सारे सुभीते मथुरा को प्राप्त थे। इनके अतिरिक्त मथुरा में बुद्ध जाकर रहे थे, बौद्धों का एक प्रसिद्ध सम्प्रदाय सर्वास्तिवाद—जिसका कि कनिष्क अनुयायी था—का तत्कालीन प्रधान केन्द्र भी यही था। इस धार्मिक सबंध को लेकर मथुरा कुषाण वास्तुकला और मूर्तिकला की अति समृद्ध नगरी बन गई। मथुरा को वासुदेव कृष्ण के जन्मस्थान होने से उतना महत्व नहीं मिला था, यह बुद्धकालीन जनपद और उसकी राजधानी मथुरा के उपेक्षापूर्ण वर्णन से मालूम होता है। बुद्ध के समय सूरसेन जनपद का राजा अवन्तिनाथ चंद्रप्रद्योत का एक दौहित्र सामन्त था।

मथुरा जैसे कितने ही और समृद्ध नगर कनिष्क-शासित उभय मध्य-एशिया और भारत के बहुत से भागों में मौजूद थे।

कनिष्क और बौद्ध धर्म—बौद्ध धर्म के इतिहास में अशोक के बाद ऊँचा स्थान जिस राजा को है, वह कनिष्क है। पाटलिपुत्र जीतने पर वह अपने साथ अश्वघोष को ले गया। अश्वघोष कालिदास के पहले के महान् कवि हैं। इनकी कविताकी कितनी ही समानता कालिदास के काव्य में भी मिलती है। उनके “बुद्धचरित” और “सौंदर्यनन्द” दो महाकाव्य हैं। संस्कृत में “बुद्धचरित” खंडित मिलता है, किंतु उसके चीनी और तिब्बती अनुवाद पूर्ण हैं। “सारिपुत्र प्रकरण” (नाटक) की खंडित संस्कृत प्रति तरिम-उपत्यका के रेगिस्तान से मिली है, और उनके एक दूसरे नाटक “राष्ट्रपाल” का पता भी लगता है, यद्यपि वह अभी तक कहीं अनुवाद या मूलरूप में नहीं मिला है। अश्वघोष हमारे पहले नाटककार हैं, जिन्होंने पदों और दृश्यों के साथ नये ढंग के अभिनय और रंगमंच का सूत्रपात किया। मथुरा की कला के रूप में जैसे गंधार-कला भारतीय रूप धारण कर विकसित हुई, उसी तरह और उसी समय अश्वघोष के नाटकों के रूप में ग्रीक नाटकों का सुन्दर भारतीयकरण हुआ। यह हम बतला चुके हैं, कि एशिया की ग्रीक पुरियो (पोलिस) के नागरिक जीवन और प्रबंध में भी ग्रीस की भाँति नाट्यकला का एक विशेष स्थान था। इसलिये भारत की ग्रीक पुरियो में रंगमंच अवश्य रहे होंगे, जो ग्रीको-बाख्त्री कला की तरह बिल्कुल ग्रीक रूप और ग्रीक भाषा में होंगे।

कनिष्क के सम्माननीय आचार्यों में अश्वघोष से भी प्रमुख स्थान पार्श्व और धसुमित्र का था। धसुमित्र की अध्यक्षता में कनिष्क ने बौद्धों की एक बड़ी सभा (संगीति) बौद्ध पिटक के संशोधन और संग्रह के लिये बुलाई थी। यह संगीति कश्मीर-उपत्यका (कुडलवन विहार) में बैठी

थी, जिसके प्रमुख पार्श्व, वसुमित्र और अश्वघोष थे। इसी समय सर्वास्तिवाद के अंतिम रूप मूल-सर्वास्तिवाद के त्रिपिटकका पाठ-निर्णय और संग्रह हुआ था। इससे भी बढ़कर इस संगीति का काम था, तीनों पिटकों की विभाषाओं (भाष्यों) की रचना। इन विभाषाओं में से एक भी अब मूल संस्कृत में नहीं मिलती। मूल-सर्वास्तिवाद के विनयपिटक का अनुवाद तिब्बती संग्रह (कन्जूर) में मिलता है, चीनी भाषा में मूल तथा उसका भाष्य (विनय-विभाषा) भी प्राप्य है। विनयपिटक भारत के बुद्धकालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक जीवन पर बहुत प्रकाश डालता है। उसके भाष्य के रूप में बनी विनय-विभाषा तो और भी अधिक ज्ञातव्य बातों की खान है। इन्हीं विभाषाओं के कारण सर्वास्तिवादी पीछे वैभाषिक कहे जाने लगे। कश्मीर और गंधार कुषाण-वश की समाप्ति के बाद भी वैभाषिकों के केन्द्र बने रहे, यह हम वसुबधु के लेखों से जानते हैं। कनिष्क की राजधानी पुरुष-पुर को ही चौथी सदी में वसुबधु तथा उनके अग्रज असग को पैदा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह दोनों भाई अद्वितीय बौद्ध दार्शनिक हैं। इस समय काव्य-कला, मूर्तिकला, नाट्यकला में ग्रीक और भारतीय धारा का सुंदर समागम हुआ, इसी तरह ग्रीक और भारतीय विचारों के मिलनका भी यहीं समय है। भारतीय न्याय, वैशेषिक, ज्योतिष आदि अनेक शास्त्रों में ग्रीक विचारों की देन जो हमें स्वीकृत करनी पड़ती है, उसका भी समय कनिष्ककाल है। कनिष्कके समकालीन और सम्मानित आचार्यों में आयुर्वेदशास्त्र के विधाता चरक भी हैं। मातृचेट बौद्धों के एक सुंदर साहित्यकार थे, जिनका “अध्यर्ध-शतक” जहां एक ओर बुद्ध की स्तुति का काम देता था, वहां साथ ही उसके द्वारा तरुण विद्यार्थी को बुद्ध के मुख्य-मुख्य सिद्धान्तों का ज्ञान सरलता से हो जाता था। मातृचेट और अश्वघोष को तिब्बती परंपरा एक बतलाती है। मातृचेट का अर्थ है माता का सेवक। अश्वघोष अपनी कृतियों में हर जगह अपने नाम के साथ “सुवर्णाक्षीपुत्र साकेतक” लगाते हैं। माता सुवर्णाक्षी और मातृनगरी साकेत (अयोध्या) के साथ अश्वघोष का बहुत प्रेम था, यह तो स्पष्ट है। मातृचेट का मुख्य नाम क्या था, यह हमें मालूम नहीं है। पर, अश्वघोष और मातृचेट को एक कहना ठीक नहीं है। कनिष्क ने और आचार्यों को बुलाने के समय मातृचेट को भी बुलाया था, किंतु बुढ़ापे के कारण न आ उन्होंने ‘अध्यर्ध-शतक’ को अपनी सेवा के रूप में भेजा। वस्तुतः उस समय कला और विद्या के नवरत्नों का कनिष्क की राजधानी में जो समागम हुआ था, उसीका अनुकरण तीन शताब्दी बाद चंद्रगुप्त विक्रमादित्य ने किया।^१

सिक्के^२—कनिष्क के सिक्के विहार से लेकर अराल समुद्र तक बहुतायतसे मिलते हैं। भारतीय मुद्रा के विद्वान् तथा पुरातत्व वेत्ता श्री परमेश्वरीलाल गुप्त (आजमगढ़) ने उन्हें घड़ियों जमा किया है। इसके सिक्के के अग्रभाग पर लम्बा चोगा, नुकीली टोपी, घुटनों तक का शकीय जूता पहने भाला, अकुश लिये कनिष्ककी मूर्ति अंकित रहती है, जिसमें ग्रीक लिपि और भाषा में “वेसीलियोस वेसीलियोन शाओननो शाओ कनिष्को कुषाणो” (राजाओं का राजा शाहानुशाह कनिष्क कुषाण) लिखा रहता है। इसके पृष्ठ भाग पर हेरकल, सेरापी आदि ग्रीक देवताओं, अतशो

^१ Coins of Ancient India (J. Allen, Rapson),

^२ भारतीय सिक्के (वा० श० उपाध्याय)

(अग्नि) जैसे ईरानी देवताओं, मीरो (मित्र), सूर्य जैसे शक देवताओं या बोदो (बुद्धकी मूर्ति) के साथ ग्रीक में देवताओं के नाम अंकित होते हैं। हम कह चुके हैं, कि कनिष्क के लिये बौद्ध धर्म या भारतीय सस्कृति कोई नई चीज नहीं थी, क्योंकि उसके पिता-पितामह के समय से ही नहीं, बल्कि कुषाणों के मूल स्थान तरिम-उपत्यका में रहते समय भी बौद्ध धर्म और भारतीय सस्कृति की प्रधानता थी। उसने अपने पूर्वगामी राजाओं का अनुकरण करके खरोष्ठी लिपि और प्राकृत भाषा को यदि सिक्को पर स्थान नहीं दिया, और ग्रीक भाषा और लिपि का ही उपयोग किया, तो उसका कारण ग्रीक सस्कृति के प्रति अध भक्ति नहीं कहा जा सकता, जैसा कि उसके समकालीन ईरान के पार्थिव राजा अपने को “फिलहैन” कहकर करते थे। सिक्को और कनिष्क के पुरुषपुर (पेशावर), तक्षशिला में बनवाये स्तूपों से भी उसकी बौद्ध धर्म में भक्ति स्पष्ट है। चौथी सगीति कश्मीर के कुडलवन-विहार में हुई थी, वहाँ पर उसने विहार और स्तूप बनवाये। विभाषाओं को ताम्रपत्रों पर खुदवाकर वहीं के स्तूप में कनिष्क ने रखवा दिया था, किंतु अभी तक न कुडलवनविहार का पता लगा है, न विभाषा-स्तूप का ही। कनिष्क के समय बौद्ध धर्म में महायान कोई मुख्य स्थान नहीं रखता था। वैपुल्य (वेथुल्ल), रत्नकूट आदि वर्ग के सूत्रों की रचना गांधार में नहीं बल्कि धान्यकटक और श्रीपर्वतके (आध्र) प्रदेश में हुई। उसका प्रभाव गांधार पर तब पड़ा, जबकि ४थी सदी में वसुबधु के अग्रज असग गांधार में उसके प्रबल पक्षपाती हुये और प्लातोन के विज्ञानवाद में क्षणिकवाद की पुट देकर उन्होंने योगाचार दार्शनिक संप्रदायका प्रवर्तन किया। योगाचार से अनुप्राणित हो ८वीं सदी में शकराचार्य ने वेदात का महल खड़ा किया। लेकिन जहाँ तक कनिष्क के काल या राज्य का संबंध है, अभी महायान ने प्रधानता नहीं प्राप्त की थी। तक्षशिला में अपने स्तूप का दान कनिष्क ने सर्वास्तिवाद के आचार्यों को दिया था, यह भी इसी बात को पुष्ट करता है।

कनिष्क के ४१वें राजवर्ष का भी अभिलेख मिला है, इसका हम जिक्र कर आये हैं, लेकिन वह शायद द्वितीय कनिष्क का है, जो उसके उत्तराधिकारी वसिष्क और तदुत्तराधिकारी हुविष्क के बीच में कुछ समय स्वतंत्र शासक रहा। अधिकतर यही ठीक लगता है, कि कनिष्क ने २३ वर्ष तक शासन किया। यह भी कहावत मात्र है, कि बराबर के दिग्विजयों से तंग आकर शक सरदारों ने कनिष्क को मार डाला। कनिष्क के शिर को हम उसके सिक्को पर देख सकते हैं। उसकी खड़ी मूर्ति प्रायः पुरुषमात्र मथुरा जिले के माट नामक स्थान में पाई गई और आज-कल मथुरा-म्यूजियम में रक्खी है (चित्र २३)। इस मूर्ति में कनिष्क अपने दाहिने हाथ को एक सीधे दंड से हथियार पर और बायें हाथ को अनग्न खड्ग की मुट्ठी पर रक्खे हुये हैं। उसके पैरों में वही लंबा शक बूट है, जो भारत की अनगिनत द्विभुज सूर्य-प्रतिमाओं में देखा जाता है और जिसे आज भी शकों के वंशज रूसी लोग जाडो में पहनते हैं। उसके शरीर पर घुटनों से नीचे तक लटकनेवाला एक अगरखा है, जिसके ऊपर उससे भी नीचे तक जानेवाला चोगा है। मूर्ति के पैरों पर कनिष्क का नाम खुदा हुआ है, इसलिये उसके कनिष्क की होने में शदेह नहीं किया जा सकता।

(४) वशिष्क (१०१-१०६ ई०)

वशिष्क या वशुष्कके बारेमें इतना कम मालूम है, कि कितने ही विद्वान् उसे कनिष्क और हुविष्कके बीचमें हुआ राजा नहीं गिनते, किंतु शक-संवत् २४ और २८के उसके दो अभिलेख मथुरा और साची में मिले हैं। इसमें सदेह नहीं, उसने थोड़े ही समय तक राज्य किया, जिसीके कारण उसके सिक्के नहीं मिले। यह भी हो सकता है, कि वह सिंहासनकी विवादास्पदताके समय में शासक बना। कनिष्क का साम्राज्य राजधानी पुरुषपुरसे जितना पूरबमें फैला हुआ था, उससे कम उसका विस्तार पश्चिममें नहीं था। संभव है, हुविष्कका जोर पहले गांधारसे ख्वारेज्म तक रहा, उसी समय कुछ सालों तक वशिष्कने शासन किया, अथवा कनिष्कके उपराज होते हुए भी उसके शासित प्रदेशमें उसे अविराज लिख दिया गया। इस समय करीब करीब सारा मध्य एशियायी दक्षिणापथ कुषाण-राज्यमें था, चाहे उस समय कनिष्कके बाद वशिष्क और कनिष्क, (२) वहा शासन करते रहे या हुविष्क।

(५) कनिष्क (२) (११९ ई०)

पेशावर जिलेमें अर्थात् कुषाण राजधानीसे नातिदूर आरा गाँवमें संवत् ४१ (११६ई०) का निम्न अभिलेख मिला है—

“२, महर्जम रजतिरजस देवपुत्रस क (इ) सरस वक्षेष्कपुत्रस कनिष्कस संवत्शरजे
अकचपर (ई) शई सम २० २० १”

इस लेखसे मालूम होता है, कि कनिष्क (२) वशिष्कका पुत्र तथा स्वयं महाराज राजातिराजदेवपुत्र था। वशिष्कका पुत्र कनिष्क^१ नहीं हो सकता। इसलिये यह शक संवत् ४१ का कनिष्क दूसरा है। इसके बारेमें भी यही कहा जा सकता है, कि या तो हुविष्कके शासनारुढ़ होनेपर राज्यके लिये झगडा चला, उसमें यह स्वतंत्र हो गया था, अथवा हुविष्कका क्षत्रप था।

(६) हुविष्क (१२०-१५२ ई०)

हुविष्क निश्चयही कनिष्कका शक्तिशाली उत्तराधिकारी था। वह कनिष्कके प्रायः सारे साम्राज्यको अपने हाथमें कायम रख सका। इसका एक शिला-लेख शक संवत् २८ (१०६ ई०) का गिरधरपुर (जिला मथुरा) के एक कूये (लाल कुआ) से मिले खम्भे पर उत्कीर्ण है। यह कुआँ ८४ जैन मन्दिर और गिरधरपुरके ढिहके बीचमें पड़ता है। आजकल खम्भा मथुरा म्युजियम में है। अभिलेख इस प्रकार है—

- १ सिद्ध संवत्सरे २०८ गुरुप्पिय दिवसे १ अय पुण्या
- २ शाला प्राचीतीकनस रनकमानपुत्रेण खरासले
- ३ २ पतिन वकनपतिना अक्षयनीवि दिन्न गुतो वृद्धे
- ४ तो मासानुमास क्षुह्ववस्य चातुदिशे पुण्यशाला

- ५ य ब्राह्मणशत परिविषितव्य दिवसे दिवसे
 ६ च पुण्यशालाये द्वारमूले धारिये सर्वं सवसत्त्वना आ
 ७ ढका ३ लवुण प्रस्था १ शक्र प्रस्था १ हरितकलापक
 ८ घटक ३ मल्लक ५ अंत अनाधना कृतेन दत्तव्य
 ९ बुभक्षितान पिवसितान य च तु पुण्य त देवपुत्रस्य
 १० षहिस्य ह्रुविष्कस्य ये च देवपुत्रो प्रिय तेषामपि पुण्य
 ११ भवतु सर्वापि च पृथिवीये पुण्य भवतु आक्षयनिवि दिश
 १२ क श्रेणीये पुराणशत ५०० ५० सस्तिकर श्रेणी
 १३ पुराणशत ५०० ५० ”

इस लेखमें अंक दानका उल्लेख है, जिसमें देवपुत्रशाही ह्रुविष्क तथा जिनके वह प्रिय है, उनके पुण्यके लिये रुक्मानपुत्र खरासलेरपति वकनपतिने ११०० पुराण (सिक्को) की अक्षयनीवि इसलिये स्थापित की, कि प्रतिमास शुक्ल चतुर्दशीके दिन पुण्यशालामें १०० ब्राह्मणों को भोजन कराया जाय। जान पड़ता है, ११०० पुराण (+५६ ग्रेन चादी) के सूदसे प्रतिमास अंक भोजके लिये तीन अड्डिया^१ सत्तू, एक प्रस्थ नमक, एक प्रस्थ शक्कर, तीन घटक और पाच मल्लक हरितकलापक (अरहर) मिल जाता था। इस लेखसे यह पता लगता है, कि २८ वे शक सवत् (१०६ ई०) में ह्रुविष्कका मथुरापर शासन था, और मथुरा की क्षत्रपी (जो कि प्रायः सारे उत्तर प्रदेशकी क्षत्रपी थी) ह्रुविष्कके हाथमें थी। ह्रुविष्कका शासन उत्तर प्रदेश, पंजाब, कश्मीर, गांधार, कपिशा, तक ही नहीं, बल्कि बाल्खिया और ख्वारेज्म तक था। शायद अभी मूल तुखार देशभी कुषाणोंके हाथ से गया नहीं था। ह्रुविष्कने मथुरामें अंक बौद्ध विहार और चैत्य बनवाया था। कश्मीरमें उसने अपने नामसे एक नगर बसाया था, जो हुक्कपुर, या उक्कुर (जुकुर)के नामसे मौजूद है। उसके अभिलेख २८ से लेकर ६० वे शक सवत् तकके मिलते हैं, जिससे जान पड़ता है कि वह ईसवी सन् १०६ से १३६ ई० तक अवश्य शासन करता रहा। ऐसी अवस्थामें कनिष्क (२) स्वतंत्रशासक नहीं रहा होगा। ख्वारेज्ममें कुषाण कालके नगर और बहुतसी चीजे निकली हैं, लेकिन अभी उनका पता रूसी विशेषज्ञों के अतिरिक्त और किसी को नहीं है। ख्वारेज्मपर कनिष्कके भी बहुत समय बाद तक कुषाणोंका प्रभाव रहा, यह रूसी विद्वान् स्वीकार करते, और ईसाकी २री ३री शताब्दीके ख्वारेज्मकी सस्कृतिको “कुशान्स्कया कुलतुर”^१ (कुषाणीय सस्कृति) कहते हैं।^१

ह्रुविष्कके भिन्न-भिन्न प्रकारके ताबे और चादीके सिक्के मिलते हैं, जिसके अग्रभागपर राजाका चित्र, ग्रीक लिपि में नाम और उपाधि सहित अंकित होता है। सिक्केके पृष्ठभाग पर ग्रीक, ईरानी या भारतीय देवी देवताओंकी मूर्तियाँ ग्रीक लिपिमें लिखे नामके साथ होती हैं। केवल ग्रीक लिपि का स्वीकार करना बतलाता है, कि अभी कुषाण राज्य केवल भारत तक ही

^१ अल्बेरूनी (ग्यारहवीं सदी के पूर्वार्द्ध) के अनुसार—४ कर्ष (सुदर्ण, तोला) = १ पल, ४ पल (= १६ तोला) = १ कुडव, ४ कुडव (= १४ तोला) = १ प्रस्थ, ४ प्रस्थ (२५६ तोला, ३ सेर २६ तोला = आढक (अड्डिया) ७३।२ ऋ० सो० XIII पृ० १४८।

सीमित नहीं था। हुविष्कके एक ताबेके सिक्केके अग्रभागपर हाथीपर सवार, शिरपर मुकुट पहने, हाथमें शूल-अकुश लिये देवपुत्रकी तस्वीर है, और पृष्ठभाग पर किसी देवताकी खड़ी मूर्ति। इसके सोनेके सिक्कोमें ताबे के सिक्कोसे कुछ भेद पाया जाता है।

हुविष्कके शासनकालमें साम्राज्यकी समृद्धिमें कोई अंतर नहीं पड़ा। उस समय फार्गाना, सोगद, बाख्त्रिया और ख्वारेज्म बहुत समृद्ध थे। पश्चिममें पार्थिव साम्राज्य भी बहुत विशाल और, शक्तिशाली था। इच्छा होनेपर कुषाण अपने वणिक्पथ को कास्पियनके उत्तरी तट से आलानो और समर्तोक के भीतरसे रोम-साम्राज्य और युरोपमें अपनी वस्तुओंको पहुँचा सकते थे।

(७) वासुदेव (१५२-१८६ ई०)

जैसा कि नाममें प्रकट होता है, अब कुषाण केवल भारतीय सस्कृतिसे प्रभावित नहीं रह गए थे, बल्कि पूरी तौरसे भारतीय हो गए थे। कुजुल, वीम, कनिष्क, वशिष्क, हुविष्क यह सभी शक नाम हैं, और वासुदेव शुद्ध भारतीय तथा ब्राह्मणिक नाम है। इसके पूर्वाधिकारी हुविष्कका कोई ऐसा सिक्का नहीं मिला है, जिसपर बुद्धकी प्रतिमा हो, इसके विरुद्ध शिव विशाख आदि की मूर्तियाँ उसके अनेकों सिक्कोपर मिलती हैं, जिससे यही जान पड़ता है कि उसकी आस्था ब्राह्मण-धर्मपर अधिक थी, इसीमें उसके उत्तराधिकारीका नाम वासुदेव पड़ा। वासुदेवके अभिलेख मवत् ७४ (१५२ ई०) में लेकर ६८ (१७६ ई०) तकके मिले हैं, जिससे मालूम होता है, कि उसने कमसे कम २४ वर्ष तो अवश्य शासन किया। उसके लेख केवल मथुरा जिलेमें और सिक्के पंजाब और उत्तर प्रदेशमें मिले हैं। शायद अब उसका शासन केवल भारतमें ही रह गया था। कपिशा, बाख्त्रिया, सोगद, ख्वारेज्म आदिमें नाना देवी की पूजा होती थी, जिसकी मूर्ति पहलेके सभी कुषाण-सिक्कोपर मिलती है, किन्तु वासुदेवके सिक्कोपर वह बहुत कम मिलती है। इसके सिक्कोपर शिव और नदीकी प्रधानता बतलाती है, कि अब कुषाण-राजवंश ब्राह्मण धर्मों ही चला था। वासुदेवका शासन मध्य-एशियामें नहीं था, लेकिन अब भी मध्य-एशिया कुषाणोंका था। वासुदेवके किमी-किमी सिक्केपर नानाकी मूर्ति मिलती है। उसके सिक्के अधिकतासे नहीं मिलते, जिसमें जान पड़ता है, कि भारतमें भी कुषाण-शक्ति निर्बल होती जा रही थी। मध्यएशियाके कुषाणोंमें मन्ध रबनेवाली सामग्री अभी-अभी मिलने लगी है। यह निश्चित मालूम होता है, कि ३री शताब्दीके अंतमें ख्वारेज्म तक कुषाणोंका शासन था। ३री से ५वीं शताब्दीमें अफ्रीग उनका स्थान लेते हैं, जिनके नगरावशेष तोप्रककला, यक्केपरसान और लघु कबात-कलाके ध्वसावशेषोंके रूपमें शताब्दियों तक किजिलकुमके बालूमें ढके रहकर अब बाहर आये हैं। बाख्त्रिया, सोगद और पामीर (ईमाओस्) में भी कुषाणों ही का शासन था। कुषाण अपने मूल स्थानके नामसे तुखारी भी कहे जाते थे, अब इनका प्रधान स्थान मध्य-वक्षुके दोनों तरफकी विस्तृत भूमि थी, जिसे इसी समय तुखारिस्तानका नाम मिला। इस प्रदेशको आरम्भिक अरब लेखक इसी नामसे याद करते हैं।

भारतमें वासुदेवके बाद द्वितीय वासुदेव, द्वितीय या तृतीय कनिष्क भी हुए, जिनका पता उनके सिक्कोसे मिलता है। अंतिम कुषाण शासक किदारके नामसे पुकारे जाते थे। ये कुषाण शाहके नामसे सासानियोंके में अधीन थे। प्रथम किदार कुषाण शाहकी राजधानी पेशावरमें थी। किदारने कश्मीर तथा मध्य पंजाबको जीतकर अपनेको शक्तिशाली बनाया, और सासानी

जूयेंको अपने ऊपरसे उठा फेका। लड़ाईमें विजयी हो किदारने अपने स्वतंत्र सिक्के चलाये। यह सिक्के सासानी ढगके हैं। इनके अग्र भागपर राजाका आधा शरीर तथा ब्राह्मी अक्षरोमें राजाका नाम खुदा मिलता है। राजाके शिरपर पगड़ी मुकुटकी तरह बँधी रहती है। बाल शिरपर बिखरे तथा मुखपर दाढ़ीका अभाव देखा जाता है। लेख ब्राह्मी अक्षरोमें “किदार कुषाण” होता है। सिक्केके पृष्ठभागपर अग्निकुडके दोनों तरफ दो परिचारक खड़े दिखाई पड़ते हैं।

पिरो (४ थी शताब्दीका अन्त)

किदार अतिम प्रभावशाली कुषाण राजा था। अब समुद्रगुप्त और चद्रगुप्तका समय आ गया था, जिनके विक्रमके कारण कुषाणोंको बहुत धक्का लगा। चद्रगुप्त (२) (३७५-४१४ ई०) ने पिरोको हराया। पश्चिममें शापूर (३) (३८३-८८ ई०) से भी हार खाकर उसे सासानी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। इस प्रकार ५वीं शताब्दीके आते आते कुषाण शक्ति बहुत क्षीण हो गई। मध्य-एशियामें भी उसकी वही हालत हुई। किंतु, जिस प्रकार कुषाणोंका स्थान हेफ़तालो (श्वेत हूणों) ने लिया, इसके जाननेका हमारे पास साधन नहीं है। हमें यह भी मालूम नहीं है कि वह कौन सा श्वेत-हूण सरदार था, जिसने मध्य-एशियासे कुषाण-शासनको उठाया।

स्रोत-ग्रन्थ

- 1 Greeks in Bactria India (W W Tarn)
- २ प्राचीन भारतका इतिहास (भगवतशरण उपाध्याय, पटना, १९४९)
- ३ भारतीय सिक्के (वासुदेव शरण उपाध्याय, प्रयाग, स० २००५)
- 4 Coins of Ancient India (J Allen, London 1936)
- 5 Coins of Ancient India (Rapsor, London)
- 6 Catalogue of Coins in the British Museum, Greek and Scythian kings of Bactria and India, History of Ancient India (V Smith)
- 7 History of Ancient India (v Smith,
- 8 History of Ancient India (R S Tripathi)
- 9 Memoire Sur l' Asie Centrale (Girard de Rialle, Paris 1875)
- 10 The Story of Chang Kien (F Hirth J A O S 1917, p 89)
- 11 Notes on Indo-Scythian chronolgy, (Sten Kono)
- १२ ऋत्वि० सोओब्, XIII पी० १४८,
१३. किताबुल्-हिन्द (अबूरैहाँ अल्बेरूनी, अनुवादक सै० असगरअली, दिल्ली १९४१)

अध्याय ५

हेफताल (४२५-५५७ ई०)

१. राजा

भारत और ईरानमें भी हेफताल हूण कह जाते थे, किंतु वह वस्तुतः हूण नहीं थे। हूणों के साथ उनका इतना ही संबंध था, कि हूण-प्रहारके बाद मध्य-एशियाकी अपनी भूमि को छोड़कर जहाँ यूची और दूसरे शक दक्षिणकी ओर चले आयेथे, वहाँ पश्चिमी छोर पर कुछ शक-सताने अब भी रह गई थी, जो हूण सस्कृतिसँ काफी प्रभावित हुई, इसलिए उन्हें हूणिक शक कहा जा सकता है। उत्तरापथ अब भी घुमन्तुओं और अर्ध-घुमन्तुओंका देश था। घुमन्तू चाहे शक हो या हूण, उनके रहन-सहन और कितनी ही और बातोंमें समानता होती है। फिर देर तक हूणोंके शासनमें रह जाने वालों पर अधिक प्रभाव पड़ना ही चाहिये। जान पड़ता है, जिस सहारके कारण हूण वंशजोंको उत्तरापथ छोड़ धीरे-धीरे पश्चिममें दन्यूबकी-उपत्यका तक भागना पड़ा, उसी तरहके प्रहारसे हेफताल भी दक्षिणकी ओर भागनेके लिये मजबूर हुए। हेफताल (एफताल) पश्चिमी शकोंकी सतान तथा अलानोंके भाई-बंध थे। संभवतः वर्तमान ताशकद प्रदेशके उत्तरमें वही इनका कबीला रहता था, जहाँ पर कि वृ-सुनो और कगोकी सीमाये मिलती थी। ईस्वी ५वीं शताब्दीमें ख्वारेज्ममें अफ्रीगोकी प्रधानता हुई। यह अफ्रीग (अफ्रीग) ५ वींसे ६वीं शताब्दी तक ख्वारेज्ममें अपनी स्वतंत्रता बनाये रखे। अरब विजेता उसी तरह इनकी स्वाधीनताका अपहरण नहीं कर सके, जिस तरह इनसे पहले बाख्त्रीय ग्रीकोंने कगोकी। श्वेत-हूण (हेफताल) अपनी दक्षिणाभिमुख विजय-यात्रा ताशकदके द्वारमें सोगद और बाख्त्रियाकी ओर कर सके। एक बार बाख्त्रिया और सोगदसे कुषाणों के शासनको हटाकर अपनी प्रभुता जमा लेनेपर कपिशा और गाधारके कुषाण राजाओंको वह छोड़ नहीं सकते थे। उस प्रकार हेफताल भारत तक चले आये। हेफतालोंका मूल-निवास वक्षु-उपत्यका नहीं थी। इनके आनेके समय वक्षु तुषारो (कुषाणों)के हाथमें थी। भारतमें वह अवश्य ६० वर्ष पीछे आये, जब कि बाख्त्रिया इनका केंद्र बन गया था। बाख्त्रीय कुषाण सस्कृतिमें दीक्षित होनेके बाद भारतकी ओर आनेमें उनका प्रथम निवास वक्षु-उपत्यका कहा जाता था। सोवियत विद्वानोंकी हालकी खोजोंमें पता लगता है, कि हेफतालों (श्वेत हूणों) का शासन-केंद्र बाख्त्रिया नहीं, सोगद-उपत्यका थी। बुखाराके पास वरखशामे इनकी राजधानीके अवशेष मिले हैं। बालूसे ढँके ध्वसावशेषोंकी दीवारोंपर कितने ही भित्ति चित्र मिले हैं, जिनपर भारतीय चित्रकलाका काफी प्रभाव है।

३ तुलनात्मक हेफताल-अवार वंश

ई०	भारत	चीन	दक्षिणापथ	उत्तरापथ
		(चिन्)		
३००		हुई-ती २९०-३०७	(कुषाण-४२५)	(हूण)
	(गुप्त)	मिन्ती ३०७-१३		

३२०	चद्र १ ३१९-३४०	मिड्-ती ३२३-२६ चेड्-ती ३२६-४३	
३४०	समुद्र ३४०-७५	खड्-ती ५३० मुन्-ती २७५-६२	(आवार)
३६०		ऐन्-ती ३६२-६६ ती-ई ३६६-७१	मुकुरु
३८०	राम गुप्त ३७५ चद्र ११ ३७६-४१४	स्याड्-वून्-ती ३७३-९७ (तोबा) ताड्-वून्-ती ३८६-४०९	चारुक
४००		अन्-ती ३९७-४१९ (तोबा)	
४२०	कुमार १ ४१५-५५	मिड्-यवान ४०९-२४ ताइ-कू ४२४-५२	शे-लुन्-३९४ (हेफताल ४२५) दादर-४२९
४४०			
४६०	स्कन्द ४५५-६७ नरसिंह ४६८ कुमार ११ ४७३	वेन्-चेड् ४५२-६६ स्यान्-वेन् ४६६-७१ स्याड्-वेन् ४७१-५००	तुगोचिर तुगोचिर-पुत्र ४६-७०
४८०			
५००		स्वान्-वू ५००-१६ स्याड्-मिड ५१६-२८	तोरमान ५१० मिहिरकुल-
	भानु ५१०-		चेउनो-५१६-
५२०		स्याड्-च्वाड् ५२८-३० स्याड्-वू ५३०-३५	ब्रह्मन्
५४०	(मौखरी) ईशान वर्मा ५५५		अनक्के-५४६-

ग्रीक और अरमनी लेखक इन्हें हेफताल, अंप्तालित, या अंफथाल कहते हैं^१। साथ ही इन्हें हूण और श्वेतहूण भी कहा जाता रहा। इतिहासकार प्रोकोपने इन्हें “श्वेतपारसीक” भी कहा है। श्वेतहूण कहनेका कारण पुराने इतिहासकार यही बतलाते हैं, कि इनकी संस्कृति हूणोंसे अधिक उन्नत और रंग अधिक सफेद था। ६ठी शताब्दीमें यह चीन और सासानी साम्राज्यके विभाजक थे। हेफताल वशीय राजा तोरमान और मिहिरकुलका शासन भारतमें भी रहा, और यहाँ उनके सिक्के भी मिले हैं। उनके सिक्कोंके देखनेसे ही पता लग जाता है, कि वह हूण जातिके नहीं थे। मगोलायित होने से हूणोंको दाढ़ी और मूछ नहीं-सी होती थी, जब कि सिक्कोपर तोरमान और मिहिरकुलके चेहरे दाढ़ीसे भरे मिलते हैं। तोरमानके सिक्केके अग्रभागमें राजा का शिर तथा गुप्तलिपि में “विजितावनिरवनिपति श्रीतोरमान” लिखा रहता है, और दूसरी ओर पख सहित मोरकी आकृति। तोरमानके सिक्केमें गुप्तमुद्राका पूर्णतया अनुकरण किया गया है, जिससे स्पष्ट है, कि भारतमें वह अपनेको गुप्तोका उत्तराधिकारी मानता था। उसके पुत्र मिहिरकुलके सिक्कोंके अग्रभागपर राजाकी खड़ी मूर्ति तथा “शाही मिहिरकुल” अथवा घोड़ेपर सवार राजाकी मूर्तिके साथ मिहिरकुल अंकित रहता है। पृष्ठभागपर लक्ष्मीकी मूर्ति रहती है।

तोरमान और मिहिरकुल दो ही हेफताल शासकोंके नाम हमें मालूम हैं। जिस वक्त तोरमान का शासन भारतमें था, उसी समय सासानी कबाद (१) (४८७—६६५, ५०१—

^१ सिरिइस्किथे इस्तोचनिकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ सससर (न० पिगुलेन्स्क्या)

कि सारे हेफतालोका प्रधान नेता तोरमान था। हेफतालोका सघर्ष केवल भारतमेही (गुप्तोसे) नहीं हुआ, बल्कि वह सासानियोके भी भयकर शत्रु थे। कवादका पिता पीरोज (४५६—८३ई०) हेफतालोमे लडते मारा गया। इसमे पहले वह अपनी पुत्री हेफताल राजाको देकर सधि कर चुका था। ईरानी राग्यवादी गज्दक के प्रभावमे आनेके कारण कवाद को विस्मृति-दुर्गमे बदी होने और फिर वहाँमे भागनेका जब मौका मिला, तो वह अपने बहनोई श्वेत-हूणोके राजाके पाम गया। इस हेफताल राजाका जो नाम (अखशुनवर) अरबी लिपिसे होकर हमारे पाम पहुँचा है, उमे तोरमान नहीं पढ़ा जा सकता।

वरुणा (बुखारामे नातिदूर) को सोवियतके विद्वान् हेफतालोकी राजधानी बतलाते हैं।^१ इसकी खुदाई १९३७ ई० मे प्रोफेसर व० अ० शिश्किनने कराई थी। वहाँ ५०० घन-किलोमीतरके क्षेत्रमे पुराने नगरके बहुतसे ध्वसावशेष मिले हैं। यह अवशेष उस समयके हैं, जब कि अभी बुखारा को प्रधानता नहीं मिली थी। खुदाईमे एक बड़ा हाल मिला है, जो शायद दरबार-हाल या मंदिर रहा हो। इसकी दीवारोमे मनुष्य, पशु आदिके बहुतसे चित्र (शिकारके दृश्य, भारतीय वेषभूषामे किमी भारतीय राजाका चित्र आदि) मिले हैं। प्रोफेसर शिश्किनका ख्याल है, कि इन हेफतालो पर भारतीयताका बहुत प्रभाव पड़ा था, जो तोरमानके ग्वालियरमे बनवाये सूर्य मंदिरके अभिलेखमे भी मालूम होता है।

२. ईरानी और हेफताल^२

मध्य-एशियाके रगमचपर आरभ ही से बराबर एकके बाद एक घुमन्तू जातियाँ लूट मार करती राजा बन जानी रहीं, फिर कुछ दिनों तक पास-पड़ोसमे उथल-पुथल मचाती कभी कभी हिंदूकुशके पार हो भारत तक चली आती, यह हम अनेक बार देख चुके हैं। हेफतालोकी शक्ति इतनी बढी चढी थी, कि ईरानके सासानी शाह कितनीही बार उनके दयाके भिखारी बने। बहराम गोर (४२१-४३८ ई०) के समय कुपाणोको हटाकर वह ईरानके पड़ोसी बने। बाख्रिया लेकर उन्होंने खुरामानमे लूटमार मचाई। बहराम ७००० सवारोको लेकर उनके ऊपर चढा और उसने युद्धमे हेफताल राजाको अपने हाथो मार वध पार जा शत्रुको अपनी शतों पर सधि करनेके लिये मजबूर किया। लेकिन हेफताल घुमन्तुओपर इसका स्थायी प्रभाव नहीं पड़ा। बहरामके पुत्र यज्दगर्द (२) (४३८-४५७ ई०) के १६ सालके शासनमे भी सघर्ष जारी रहा। उसके उत्तराधिकारी होरमुज्द (३) (४५७-४५८ ई०) और उसके भाई पीरोज (४५६-४८४ ई०) गद्दीके लिए झगड पडे। पीरोज भागकर हेफतालोके राजा अखशुनवरके पास वधु पार गया और हेफताल सेना लेकर नौटा। होरमुज्दने राज्य और प्राण दोनो खोये। हेफताल पीरोजको अपने हाथमे रखना चाहते थे। उनसे मुक्ति पानेके लिये पीरोजने ४८० ई० मे हेफतालोसे युद्ध ठाना। हेफतालोको अपने पड़ोसी अवारो (जुनजुन) और सासानियोसे बराबर सघर्ष करनेके लिए तैयार रहना पड़ता था। उसी तरह ईरानके भी दोनो ओर हेफताल (येथा) और रोमन

^१ क्रतिकये सोओबश्चेनिया x p 3

^२ ईरान दर जमान सामानियान (अर्थर क्रिस्तियान्सन, फारसी अनुवादक रशीद यासमी तेहरान १३१७) पृ० २०४, ४८, २६२, २६२

५३१ ई०) ईरानपर शासन करता था। हेफ्तालोकी शक्ति दुर्धर्ष थी। यह नहीं कहा जा सकता, शो शक्तियाँ थीं। रोमन सम्राट् हेफ्तालोको प्रेरित करते रहते और हेफ्ताल भी ईरानको लालच भरी दृष्टिसे देखते रहते थे। पीरोजने अख़शुनवरके पुत्रपर आक्रमण किया, जो कि शायद बाख़्त्रियाका उपराज था। पीरोजको कई बार बुरी तरह हारना पड़ा और अन्तमें बड़ी अपमानपूर्ण शर्तों के साथ संधि करनी पड़ी—अपने पुत्र कवादको हेफ्ताल दरबारमें जामिनके तौरपर रखना और राजाको अपनी कन्या दे, वार्षिक रुपया स्वीकार कर हेफ्तालोका करद बनना पड़ा। रुपयोको पीरोज अदा नहीं कर सका, इसपर हेफ्तालोने ४८० ई० में पीरोजपर आक्रमण किया। इसी लड़ाईमें वह मारा गया। अब सासानी साम्राज्य पूरी तौरसे हेफ्तालोकी दया पर निर्भर था। राजधानी तस्पोन (मसोपोतामिया) तक को खतरा हो गया।

आर्मेनिया राजनीतिक ही तौरसे नहीं, बल्कि धार्मिक और सांस्कृतिक तौरसे भी ईरानका भाग चला आता था, लेकिन पड़ोसी रोमन उसे उकसाया करते थे, जिसके कारण ईरानको आर्मेनिया के लिए बराबर संघर्ष करना पड़ता था। इस राजनीतिक संघर्ष का एक यह भी कारण हुआ, कि आर्मेनियाने जर्थुस्त्री धर्म छोड़कर ईसाई धर्म स्वीकार कर रोमके साथ और भी घनिष्ठता स्थापित की। जिस समय पीरोज मारा गया, उस समय ईरानी सेनापति जेरमेहर (सुखरा) आर्मेनियाके ऊपर अभियानके लिये गया हुआ था। हेफ्ताली खतरेको सुनकर वहासे जल्दी जल्दी राजधानीमें लौट उसने पीरोजके भाई बलाश (४८४-४८७ ई०) को गद्दीपर बैठाया। तीन ही सालके शासनके बाद उसे उतारकर पीरोज-पुत्र कवाद (४८७ ई०) गद्दीपर बैठाया गया। कवाद हेफ्ताल राजाका साला और दामाद दोनों ही था। मज्दकके साम्यवादी तथा कुछ-कुछ धर्म-विरोधी विचारको स्वीकार करनेके लिये पीरोजको गद्दीसे उतार दिया गया (४९८ ई०)। अपने बहनोई के पास जा हेफ्ताल सेनाकी मदद ले वह फिर (५०० ई०) सिंहासनपर बैठा। इससे स्पष्ट है, कि हेफ्तालोका ईरान पर भारी प्रभाव था। कवादके उत्तराधिकारी खुसरो अनौशिरवान (५३१—५७९ ई०) को भी हेफ्तालोसे कम संघर्ष नहीं करना पड़ा। लेकिन छठी शताब्दीके मध्यतक पहुँचते-पहुँचते अपने सवासौ वर्षोंके राजत्वकालमें हेफ्ताल अधिक सम्य और नागरिक बन गये, जिसमें भारत और ईरान दोनोंने सहायता की। मध्य-एशियाके सनातन नियमके अनुसार अब उन्हें किसी दूसरे घुमन्तू बशके लिये अपना स्थान खाली करना था। अवारो (ज्वेज्वेन) को हटाकर ५४० के आसपास तुमिन इलीखान (मृत्यु ५५३ ई०) ने अवार साम्राज्यकी जगह तुर्क साम्राज्यकी स्थापना की। उसने पूरबमें चीनके कारण आगे बढ़नेका स्थान न पा, पश्चिमकी ओर विजय-यात्रा आरम्भ की। उसका उत्तराधिकारी इस्सिगी थोड़े ही समय तक शासन कर सका, फिर इलीखानका भाई मुयूखान गद्दीपर बैठा, जिसने अपने ज्येष्ठ भाई के अपूर्ण कामको पूर्ण करना चाहा। मुयूखानने सिर और सोगदी उपत्यकाओंसे हेफ्तालोको खदेड़नेके लिये ईरानी शाह अनौशेरवान के साथ संधि स्थापित किया। अनौशेरवान और मुयूखानने मिलकर हेफ्तालोंको खतम करनेका निश्चय किया। दोनोंने हेफ्तालोपर आक्रमण कर दिया। इस लड़ाई का परिणाम था हेफ्तालोके राज्यकी समाप्ति और ५५७ ई० के आसपास उनके राज्यका तुर्कों और सासानियों द्वारा बाट लिया जाना—बलख (बाख़्त्रिया), तुखारिस्तान ईरानियोंके हाथ आये और वक्षुपारका हिस्सा तुर्कोंने ले लिया। अनौशिरवानने मुयूखानकी लड़कीसे ब्याह किया। रोमन नहीं

चाहते थे, कि तुर्क और सासानी मिल जाये, इसलिये उन्होंने तुर्क खाकानके पास दूत भेजकर उसे सासानियोंके खिलाफ भड़काना चाहा ।



२५. हेफताल (खेतद्वय) साम्राज्य (५१० ई०)

स्रोतग्रन्थ :

- 1 Heart of Asia (E D Ross)
- २ सिरिडस्किये इस्तोचनिकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ सससर (न० पिगुलेव्सक्या, मास्को १९४१)
- 3 Memorie Sur l' Asie Centrale (G de Rialle, Paris 1875)
- 4 Sur les Huns Blanc ou Ephtalites (Vivien de Saint-Martin)
- 5 Histoire generale des Huns, des Tuics, des Mongols et des autres occidentaux (J Degingnes')
- ६ ऋत्कि० सोओव्० VII
- 7 Terracottas From Afrasiab (C Trever, Leningrad 1936)
- ८ ईरान दर ज़मान सासानियान (अर्थर क्रिस्तियान्सन, अनुवादक रशीद यासमी, तेहरान १३१७)

अध्याय ६

तुर्क (५५७-७०४ ई०)

तुर्कोंका तृतीय खान मुयू (मृत्यु ५५३ ई०) जिस समय दक्षिणापथका स्वामी बना, उस समय तुर्क साम्राज्य अभी पूर्व और पश्चिम दो राज्योमे नहीं विभक्त हुआ था। उसके भाई तथा उत्तराधिकारी तोबाखान (५६९-५८० ई०) के राजगद्दी सभालनेके समय मुयू खानके पुत्र दलोबियानने उत्तराधिकारके लिये झगडा किया, जिसमे उसे सफलता नहीं हुई। उसने चचाके मरनेके बाद (५८० ई० में) तुर्क-साम्राज्यको दो भागोमे विभक्त कर पश्चिमी तुर्क-साम्राज्यकी नींव डाली, यह हम कह आये हैं। तोबा कगानके समय तुर्कोंपर बौद्ध धर्मकी छाप पड़ी, जो आगे बढ़ती ही गई। इसके पहलेके ह्फतालोपर बौद्ध धर्मका कितना प्रभाव पडा, यह नहीं कहा जा सकता। जहाँ तक तोरमानका सबध है, ग्वालियरमे सूर्य मंदिरके बनवानेसे जान पड़ता है, वह शकोके पुराने देवता सूर्यका भक्त था। उसके पुत्र मिहिरकुलको बौद्धोका शत्रु बतलाया जाता है। अपने पूर्वगामी कुषाणोकी तरह ह्फतालोका बौद्ध धर्मसे विशेष अनुराग नहीं था, किंतु तुर्कोंके समय फिर बौद्ध धर्मकी प्रतिष्ठा बढ़ी।

(१) दालोबियान (५८०-)

तोबाके समय तक अविभाजित तुर्क साम्राज्यका ही अग दक्षिणापथ भी था, किंतु उसके भतीजे दालोबियानने पश्चिमी तुर्क साम्राज्यकी नींव डाली। इसीके राज्यमे पश्चिमी मध्य-एशिया था, किंतु इसके समयमे साम्राज्यकी सीमा और आगे नहीं बढ़ी। उसके उत्तराधिकारी नीलीने थोड़े ही समय तक शासन किया।

(३) चुलोकगान (६०५ ई०)

नीलीके पुत्र दामो (धर्मा) का नाम ही बतलाता है, कि उसका वंश बौद्ध धर्मसे कितना प्रभावित था। वह अधिकतर कुल्जा (इली-उपत्यका)मे रहा करता था। प्रदेशोका शासन यवगू (उपकगान) करते थे। कुषाणोके सिक्कोपर भी इस उपाधिको हम देख चुके हैं। चुलो कगानका एक यवगू शाश (ताशकद) के पास रहता था, जो दक्षिणमे वक्षु तट (सासानी सीमात) तकका शासक था। नौशेरवानका पुत्र और उत्तराधिकारी होर्मुज्द (४) (५७९-९० ई०) मुयू खानका नाती था। लेकिन इससे क्या सघर्ष मिट सकता था? कभी उसे रोमसे लोहा लेना पड़ता था और कभी तुर्कोंके दबावसे छुटकारा पानेके लिये उनसे भिडना पड़ता था। चुलो कगानका यवगू शाव (शबोलियो) तीन लाख सेना लेकर सासानी साम्राज्यके भीतर घुसकर हिरात तक पहुँच गया। उधर रोमन सम्राट्ने ८० हजार सेनाके साथ सिरियापर चढ़ाई कर दी। कास्पियनके पश्चिम ईरानी साम्राज्यकी सीमा पर हूणोके वंशज खजार उत्तरसे प्रहार कर रहे थे, जिसके

१ तुलनात्मक तुर्क वंश

ई० पू०	भारत (कन्नौज) यशोवर्मा-५३२-	चीन (ल्याङ्ग) वैत्ती ५०३-४९	प० तुर्क तूमिन-५५३	प० तुर्क तूमिन-५५३	ईरान (सासानी) खुन्नो नौशेर्वॉ ५३१-७८
५६	हरिवर्मा	च्यान्वेन् ५४९-५५१ वेङ्ती ५६०-६७ स्वेन् ती ५६९-८३ (मुङ्ग)	इसिगी ५५३ मयू-५५३-६९ तोबा ५६९-८० शेत्तू ५८२-८७ दूलन ५८७-६०० दालू वगा ६००-६०५ खेली-६२८	इसिगी ५५३ मयू तोबा दालोव्यान ६८०-	होर्मुज्द ५७८-५९० खुन्नो पर्वज ५९०-६२८
५८०		वेङ्ग ती ५८१-६०५ याङ् ती ६०५-१७ कुङ ती ६१७-१८ (याङ्ग)	तुली ६२८-६३१ सिक्विली ६३१-६४७	चुलो-६०५ शेङ्गुइ ६१८-६१९ तुनशेबू ६१९-	
६००	हर्ष ६०६-६४८	काउचु ६१८-२७ ताइचुङ् ६२७-५०		निशिटुलू-६५१	कवाद II ६२८-२९२ यज्दगर्द III ६३४-४ (अरब)
६२०	अर्जुन ६४९	काउचुङ् ६५०-८४	चेबी ६४७-८२	इबीशबोलो ६५१	उमर ६४२-४४ उस्मान ६४४-५६ अली ६५६-६१ म्वाबिया ६६१-८० यजीद I ६८०-७१७
६६०		वूहू (रानी) ६८४-७०५	गुदलू ६८२-६९३ माचौ ६९३-७१३	अशिनशिन्-७०८ सोगे ७०८-७०९ सुलू ७०९-७३८	
६८०		चुङ्, चुङ् ७०५-१० स्वेन् चुङ् ७१३-५६	मोगिल्यान ७१६-७३३		उमर II ७१७-२०
७००					
७२०	यशोवर्मा ७२५-५२				

कारण वहाके दरबन्दपर खतरा हो गया था। खुद राजधानीके पास दक्षिणकी ओर से अरब सरदारोंने फुरात-उपत्यका (इराक) पर चढाई कर दी थी। तुर्क सेनापति शावने होरमुज्दके पास धृष्टतापूर्ण सदेश भेजा "देखना पुल और सडके ठीक-ठाक रहे। मैं रोमनोसे मिलनेके लिये ईरानको पार करना चाहता हूँ"। होरमुज्दने अपने प्रसिद्ध सेनापति (तेहरान के) सामन्त बहराम चोबी को १२००० चुने हुए योद्धाओके साथ तुर्कोंका मुकालिबा करनेके लिये भेजा। बहरामने तुर्कोंको बुरी तरह हराया और उसीके वाणसे शाव मारा गया। शावका पुत्र बदी हुआ। बहरामको तुर्क-ओद्से अपार सपत्ति मिली, जिसे ढाई लाख ऊटोके साथ उसने शाहके पास भेज दिया। वहासे बहराम रोमनोके विरुद्ध भेजा गया, लेकिन वहा उसकी पूर्ण पराजय हुई। होरमुज्दने गुस्सेमे आकर बहरामको पदच्युत कर दिया, जिसके कारण उसे विद्रोही बनना और होरमुज्द को तख्तसे हाथ धोना पडा। उसके उत्तराधिकारी खुसरो II परवेज (५९०-६२८ ई०) के समय भी तुर्कोंसे सघर्ष चलता ही रहा, जिसमे उसका विद्रोही चचा छ साल तक तुर्कों (चुलो कगान) की मददसे लडता रहा। लेकिन खुसरोको रोमके विरुद्ध कुछ सफलताये प्राप्त हुई। ६१३ ई० मे उसने दमस्क ले लिया। ६१४ ई० मे येरुशलम उसके हाथमे था, जिसे १६ वर्ष बाद ६२९ ई० मे ही हिराक्लियस लौटा पाया।

४ शे-गुइ (६१८-६१९ ई०) और ५ तुन-शे-खू (६१९ ई०)।

इन दोनो भाइयोके कगान होनेके समय तुर्क साम्राज्यका विस्तार अधिक हुआ, यद्यपि उनका समकालीन खुस्रो परवेज (५९०-६२८ ई०) भी निर्बल शासक नही था। शे-गुइने अपनी पश्चिमी सीमाको कास्पियन समुद्रतक पहुँचा दिया, पूरबमे वह चीनकी महादीवारके पश्चिमी छोरपर अवस्थित प्रसिद्ध सीहै घाटा तक थी। उसके छोटे भाई तुन-शे-खूने भी अपने सैनिक कौशलका परिचय देते सासानियोको मार भगा तथा अफगानिस्तान तक अपनी सीमा पहुँचा दी। इस समय ईरानके तीन शक्तिशाली प्रतिद्वन्द्वी थे पूरबमे तुन-शे-खू कगान, काकेशसके उत्तरमे खजार कगान और पश्चिममे विजन्तीय सम्राट् हिराक्लियस्। ये चारो शक्तियाँ जिस वक्त आपसमे गुत्थम-गुत्था कर रही थी, इसी समय अरबके रेगिस्तानमे एक नई शक्ति पैदा हो रही थी। जिस समय (६२९-६४५ ई०) स्वेन्-चाङ भारत यात्रा करते तुन्-शे-खूसे ६३१-६३२ ई० मे मिलकर नालदा निवास और सम्राट् हर्षवर्धनका स्वागत प्राप्त कर रहा था, उसी समय खुस्रोके तृतीय उत्तराधिकारी यज्दगर्द III (६३४-६४२ ई०) को खतम कर अरबोंने विशाल सासानी साम्राज्यको अपने हाथमे कर लिया, और तुन्-शे-खू के शासनकालमे ही अरब उसके पडोसी हो गये।

तुन्-शे-खूके उत्तराधिकारियो मे उसका पुत्र तुन-वो-शे (६३४-६३८ ई०) शबोलो खिलिश खान के नाम से गद्दी पर बैठा। इसके नाममे खिलिश शब्द बही है, जो कि भारत के खिलजी सुलतानो के वंश के साथ सवद्ध है। अभी तुर्कों की शक्ति उतनी क्षीण नही हुई थी, और न अरब अपने को उतना मजबूत देखते थे, कि वह तुर्कों से छेड-छाड करते। ११वे पश्चिमी तुर्क कगान इबी शबोलो शेखू (६५१-) या असिना खेलू चीन के सामने बराबर दबनेवाला कगान था। उसके उत्तराधिकारी असिनासिन (मृत्यु ७०८ ई०) के समय भी तुर्क साम्राज्य पतनोन्मुख

होने से बचाया नहीं जा सका। इसका एक सबूत यही है, कि इसीके शासनकाल (७०४ ई०) में सिर, जरफशा और आमूदरिया की उपत्यकाये तुर्कों के हाथ से निकलने लगी।

तुर्कों में हूणो, अवारो, कुषाणो, हेप्तालो की तरह ही घुमन्तू कबीलाशाही शासन-प्रथा चली आती थी, जिसके कारण कगान के भाई-भतीजे यवगू होकर अपने प्रदेश में बहुत कुछ स्वतन्त्रता-पूर्वक शासन करते थे। जिस वक्त कगान कमजोर होता, उस वक्त प्रदेशों में यवगुओ और तेगिनो (राजकुमारो) का शासन इतना स्वच्छन्द होता, कि वहा की साधारण जनता उनके सिवा कगान को जानती ही नहीं थी। श्वोलो शेखू और असिनासिनकी कगानता ऐसी ही थी। अरबों से इनके यवगुओ का सघर्ष था, इसीलिये अरब लेखक कगानको नहीं, बल्कि उसके प्रादेशिक शासक (तेगिन) को अपना प्रतिद्वन्द्वी समझते थे।

(स्वेन्-चाङ का देश-वर्णन)

स्वेन्-चाङ ६३१-६३२ ई० में तुर्कों द्वारा शासित दक्षिणापथ से गुजरा था। इस भूमि में प्रविष्ट होने से पहले ही वह तुर्क कगान तुन्-शे-खू से मिल चुका था। तुर्क कगान ने उसकी बड़ी आवभगत की थी। मिलन-स्थान से आगे (तरस से वामियान तक) का उसका वर्णन तत्कालीन दक्षिणापथ के परिचय के लिये विशेष महत्त्व रखता है, इसलिये हम यहाँ उसके वर्णन का संक्षेप देते हैं।

तरस्—यह बिङ-गुल (सहस्रधारा) से पश्चिम १४० या १५० ली (आजकल औलिआता से दक्षिण-पश्चिम में कुछ दूर) पर है। तरस से १० ली दक्षिण चीनी बंदियों का एक गाँव था। इनका वेष तुर्कों जैसा था, किंतु भाषा अब भी वह चीनी बोलते थे।

मनकन्द—आधुनिक चिमकेत से १५ मील उत्तर-पूरब, जिसे स्वेन् चाङ ने पाइ-शुङ-शेङ (फारसी इस्फिद-याब = श्वेत जल) है। यह चीनी बंदियों के नगर से २०० ली दक्षिण-पश्चिम था। स्वेन्-चाङ ने इसकी भूमि को तरस से अधिक उर्वर बतलाया है।

नूजकद—मनकद से ४० या ५० ली दक्षिण नू-ची-कान की अत्यन्त उर्वर भूमि थी। यहाँ बहुत प्रकार के फल फूल होते थे। अगूर बहुत ही अधिक थे। यहाँ का एक अलग शासक था, जिसके अधीन सौ से ऊपर ग्राम-नगर थे।

ताशकद—नूजकद में २०० ली पश्चिम चेसी (ताशकद) का इलाका पड़ा। (तुर्की भाषा में ताश पत्थर को कहते हैं।) यहाँ भी एक अलग तुर्क शासक था।

फर्गाना—ताशकद से हजार ली दक्षिण-पूरब फङ-हान का प्रदेश था, जहाँ स्वेन्-चाङ स्वयं नहीं गया। लोगो से पूछने पर उसे मालूम हुआ “वह चारो ओर पहाड़ों से घिरा है। भूमि बड़ी ही उपजाऊ है। वहा बहुत तरह के फल-फूल पैदा होते हैं। लोग भेडे और घोडे पालते हैं। सर्दों और हवा का बहुत जोर है। लोग दिल के मजबूत होते हैं। इन की भाषा दूसरे देशों से भिन्न है। दस साल से इसका कोई राजा नहीं है। स्थानीय सरदार प्रधान बनने के लिये आपस में लड़ रहे हैं। इस जिले और नगरों की प्रतिरक्षा और सीमा नदिया तथा प्राकृतिक वस्तुये हैं।”

¹ On Yuan chwang's Travel (Thomas Watters,) vol I p. p 71-122)

चीनियों ने चाङ्ग क्यान् के समय (ई० पू० १३६-१२४) में ही फर्गाना के बारे में परिचय प्राप्त कर लिया था, लेकिन उस समय चीनी भाषा में इसका नाम शा-वाङ्ग और राजधानी उइ-शान् (कुषाण) थी। ७७४ ई० में चीनी इसे निङ्ग्वान कहते थे, और आजकल हुवो-हान् (फोक्-हान्)

सुतुलिसे—ओश्रूशानाका यह चीनी नामांतर है। आजकल इसे उरात्यूवे कहते हैं। फर्गाना से एक हजार ली पूरब शे (सिर)नदी के पूर्व में यह स्थान अवस्थित है। शे नदी को स्वेन्-चाङ्ग सुङ्ग-लिङ्ग (पामीर) से निकली बतलाता है। उस समय इसकी धारा मटमैली थी। इसीलिये स्वेन् चङ्गाने इसे मटमैली द्रुतगामी महान् धारा लिखा है। यहाँ का राजा भी तुर्क-कगान के अधीन था।

समरकन्द—सम-जी-कान के उत्तर-पश्चिम में जल-वनस्पतिहीन एक रेगिस्तान (किज़िल-कुम) का होना स्वेन्-चाङ्ग ने बतलाया है। वह लिखता है “यह बिल्कुल निर्जन भूमि है, जहाँ केवल पहाड़ों का अनुगमन करते तथा ककालों को देखते चला जा सकता है।” इस प्रदेश का पुराना नाम सू-ही (सोग्द) था। स्वेन्-चाङ्ग के समय भी यह प्रदेश बड़ा उर्वर था। वृक्ष और फूल बहुतायत से होते थे। यहाँ बड़े सुन्दर घोड़े पाये जाते थे। यह बहुत बड़ा व्यापारिक नगर था। लोग शिल्प-चतुर, उद्योगपरायण और चुस्त थे। सारा तुर्क-राज्य इसे अपने देश का केन्द्र मानता था और सभी लोग यहाँ के सामाजिक रीति-रवाजों को आदर्श मानते थे। यहाँ का राजा बड़ा हिम्मती और उदार था। पड़ोसी राजा इसके आज्ञाकारी थे। इसके पास बड़ी अच्छी सेना थी। यहाँ के योद्धा इतने बहादुर थे, कि मृत्यु को बघुओं के पास जाने से बढकर नहीं समझते थे। युद्ध में शत्रु इनके सामने खड़ा नहीं हो सकते। यह अवस्था दक्षिणापथ की उस समय थी, जब कि अरब ईरान की ओर बढ़ने की तैयारी कर रहे थे। धर्म के बारे में स्वेन्-चाङ्ग ने लिखा है, कि समरकन्द के लोग अग्निपूजक हैं। ६वीं ७वीं सदी में हमें मालूम है, कि बौद्ध दूसरे स्थानीय देवताओं को भी पूजते थे। स्वेन्-चाङ्ग के समय समरकन्द में बौद्धों के साथ विद्वेष और अत्याचार भी होता था। स्वेन्-चाङ्ग के समय दो विहार थे। स्वेन्-चाङ्ग के साथी तरुण भिक्षु पूजा करने के लिये गये, तो लोगो ने उन्हें मार भगाया और विहार में आग लगा दी। समरकन्द के राजा ने उन्हें दंड दिया और स्वेन्-चाङ्ग को बुलाकर धर्मोपदेश सुना। स्वेन्-चाङ्ग लिखता है, कि यहाँ का राजा शौ-बू खानदान की वेन् शाखा का है। रानी एक तुर्क राजकुमारी है। ६३१ ई० में यहाँ के राजा ने चीन सम्राट् ताइ-सुङ्ग (६२७-६५० ई०) के पास अधीनता स्वीकार करने के लिये अपना दूत भेजा था, लेकिन जान पड़ता है, वैमनस्य मोल न लेने के ख्याल से उसने स्वीकार नहीं किया।

मेमेगु—समरकन्द से दक्षिण-पूर्व यह इलाका था, जिसे स्वेन्-चाङ्ग ने मि-मो-हा लिखा है। यहाँ के लोग समरकन्द जैसे ही थे।

मी-तान् (कि-पू-ताना)—मी-मो-हा से उत्तर यह स्थान मिला। रमीतान् वस्तुतः समरकन्द से ३० मील उत्तर-पश्चिम है।

कुशानिया (कुशोडहिका)—कुषाण शासकों का यह चिह्न आज भी मौजूद है। इसे स्वेन्-चाङ्ग ने मितान् से ३०० ली (६० मील) पर बतलाया है।

हो-हान् (कर्मीना)—कुशानिया से २०० ली (४० मील) है।

पू-हो (बुखारा)—४०० ली (८० मील) पश्चिम।

फा-ती (पैकद?)—बुखारा से ४०० ली (८० मील) पश्चिम।

ह्वी-ली-सी-मी-का (ख्वारेजमिया) —फा-ती से ५०० ली (१०० मील) दक्षिण- (? उत्तर) पश्चिम, वधु नदी के दोनों किनारों पर यह प्रदेश २० या ३० ली (४ या ६ मील) चौड़ा तथा उत्तर से दक्षिण ५०० ली (१०० मील) लम्बा है।

समरकंद से ख्वारेजम तक की बाते स्वेन्-चाङ ने सुनकर लिखी हैं। वह सीधा समरकंद से केश (शहरशब्ज) गया था।

का-श्वाङ-ना (केश) —समरकंद से ३०० ली (६० मील) दक्षिण-पश्चिम यह प्रदेश है। यहाँ की भूमि बड़ी उपजाऊ और निवासी समरकंद जैसे (सोग्दी) हैं। (शहरशब्ज जिस नदी के किनारे है, उसका नाम आज भी कश्क-दरिया है।

दरबन्द (लौहद्वार) —केश से २०० ली (४० मील) दक्षिण-पश्चिम जाने पर स्वेन्-चाङ पहाड़ियों में घुसा। “पगडडी बहुत सकरी तथा खतरनाक है। वस्ती नहीं है। घास पानी भी बहुत कम है। पहाड़ों के भीतर दक्षिण-पश्चिम की ओर ३०० ली (६० मील) से अधिक जाकर आदमी लोहघाटे में प्रविष्ट होता है। लोहघाटे की दोनों तरफ बिल्कुल सीधे खड़े ऊँचे पर्वत हैं। चट्टानें लोहे के रंग की हैं। यहाँ फाटक लगाये गये हैं, जो लोहे से मजबूत किये गये और उनके ऊपर बहुत सी छोटी छोटी लोहे की घटियाँ लटकाई गई हैं। अपनी दुर्घर्षता के कारण ही इस घाटे का यह नाम (लौहद्वार) पड़ा।” यह आजकल का बुजगल्ला (अजगृह) है जिसकी चौड़ाई प्रायः दो मील तक ४० से ६० फुट तक है। इसके बीच से एक नदी (सुलाख) बहती है। इसमें एक गाँव है।

तारीख रशीदी में लिखा है “प्रसिद्ध लौहद्वार की नदी ऊँचे पहाड़ों के बीच से टेढ़ी-मेढ़ी होकर दर्बन्द से पश्चिम प्रायः १२ फर्सख जाती है। यह सकरा मार्ग ५ से ३६ कदम तक चौड़ा और दो फर्सख लंबा है।” बुजगल्ला खाना के इस दर्रे का पूर्वी छोर समुद्र तल से ३५४० फुट और पश्चिमी छोर ३७४० फुट ऊँचा है।

तुखार (तु-हु ओ-लो) —लोहद्वार के बाहर आते ही तुखार देश आ जाता है। इसकी सीमा पूर्व में चुङ-लिङ (पामीर) पर्वत, पश्चिम में ईरान, दक्षिण में महाहिमवत (हिंदूकुश) पर्वत और उत्तर में लोहद्वार है। तुखार देश के बीच में पूरब से पश्चिम की ओर वधु नदी बहती है। यह देश २७ सामतो में बँटा है, जो सभी तुर्कों के अधीन हैं। गर्मियों में यहाँ बहुत बीमारी (मलेरिया) होती है। जाड़े के अन्त और बसंत के आरम्भ में लगातार वर्षा होती रहती है। यहाँ के भिक्षु लोग बारहवें मास की सोलहवीं तिथि से तीसरे मास की पन्द्रवीं तिथि तक वर्षावास मनाते हैं। इस प्रकार वह अपने धार्मिक नियमों को ऋतु के अनुकूल मानते हैं। यहाँ के लोग विश्वास-पात्र होते हैं, धोखेबाज नहीं। यहाँ की एक विशेष भाषा और २५ अक्षरों की वर्णमाला है, जो कि ऊपर से नीचे तथा बाँयें से दाहिने लिखी जाती है। ऊनी कपड़ों की अपेक्षा यहाँ सूती अधिक पहने जाते हैं। यहाँ के सोने चादी और दूसरी धातु के सिक्के दूसरे देश से भेद रखते हैं। यह देश गर्मी में गरम होता है, लेकिन गर्मियों के इस्तेमाल के लिये जाड़ों में बर्फ को जमा कर लेते हैं।

तेस्मिज (ता-मी) —“तुखार देश की यह राजधानी चौड़ी की अपेक्षा अधिक लंबी, २० ली (४ मील) के घेरे में बसी है। यहाँ दो विहार हैं, जिनमें हजारों से अधिक भिक्षु रहते हैं। यहाँ के स्तूप और मूर्तियाँ बहुत सुन्दर हैं।

शुगनान (शी-गा-येन्-ना) — यह तेरूमिज से पूरब है, जहा पाच विहार है, किन्तु भिक्षु बहुत कम हैं।

हू-लू-मो (खुल्म ?) — यह प्रदेश शुगनान से पूरब में है। यहां का राजा एक हि-सू तुर्क है। यहां दो विहार और सौ से ऊपर भिक्षु रहते हैं।

सू-मान () — हू-लू-मो से पूरब में है, जहा दो विहार और थोड़े से भिक्षु रहते हैं।

कू-येन्-ना () — यह प्रदेश वक्षु से दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है, जहा तीन विहार और सौ से अधिक भिक्षु रहते हैं।

हू-शा () — पूर्वोक्त से पूर्व में अवस्थित है।

को-तू-लो (खुत्तल) — पूर्वोक्त से पूरब में है, जो पूरब में चुङ-लिङ (पामीर) के भीतर कु-मि-ते प्रदेश तक पहुंचता है।

कु-मि-ते () — यह चुङ-लिङ (पामीर) पर्वत-माला में उसके दक्षिण-पूर्व में वक्षु के पास अवस्थित है। इसका दक्षिणी पड़ोसी देश शि-कि-नी है।

वक्षु के दक्षिण में निम्न प्रदेश है — त-मो-मि-तिये-ति, पो-तो-च्वाङ-ना, यिन्-पो-कान्, कु-लङ-ना, हि-मो-त-ला, पो-लि-हो, कि-लि-सो-मो, को-लो-हू, अलि-नि, मेङ-कान्।

हु-ओ (कुदुज) से दक्षिण-पूर्व में कु-ओ-सि-तो, और अन्त-ल-फो (अदराब) है। हु-ओ से दक्षिण-पश्चिम फो-क-रङ्ग देश है। इससे दक्षिण कि-लु-सि-मिन्-किन् है, जिसके उत्तर-पश्चिम हू-लिन् देश है, जहा दस विहार और ५०० भिक्षु रहते हैं।

हु-ओ (कुदुज) — यहां शे-हू खान का ज्येष्ठ पुत्र तथा सेनापति (क्षत्रप) तात् (तर्दुश, तर्दू) रहता है, जो कि काङ-शाङ्ग (कुषाण) राजा का साला भी है। सेनापति को उसकी स्त्री ने जहर दे दिया। उसका पुत्र ते-मिन् (ते-किन्) और सौतेली मा राज्य के मालिक है।

फो-हो (बलख) — हू-लिन् से पश्चिम “लघु राजगृह” नामक प्रसिद्ध राजधानी प्राय २० ली (५ मील) के घेरे में बिखरी हुई बस्तियों का नगर है। यहां १०० विहार तथा ३००० हीनयानी भिक्षु रहते हैं। “राजधानी के बाहर दक्षिण-पश्चिम में नव (नफो) विहार है, जिसे इस देश के एक पुराने राजा ने बनवाया था। महाहिम (हिंदूकुश) पर्वत के उत्तर यही एक बौद्ध विहार है, जहा लगातार अविच्छिन्न परंपरा से ऐसे आचार्य चले आते हैं, जो कि निपिटक के व्याख्याकार होते हैं। विहार के सधाराम में एक बड़ी कलापूर्ण रत्नजटित बुद्ध-मूर्ति है। इसकी शालाये बड़ी मूल्यवान् वस्तुओं से सजाई हुई है, इसलिये भिन्न-भिन्न राजाओं ने बार-बार इसे लूटा। तुर्क शे-हू (शे-खू) या एक राज्यपाल के पुत्र स्वयं राज्यपाल स्तू-जो ने सधारामको लूटनेकी कोशिश की। बिहारकी बुद्धशालाके दक्षिणमें बुद्धका प्रसालनपात्र है, जिसमें प्राय २८ मन (एक टन) की जगह है। यह बड़ा ही चमकीला है। नहीं कहा जा सकता, कि वह धातुका है या पत्थरका। ८/१० इंच लंबी सवा अगुल चौड़ी बुद्धकी दाढ़ (दात) और दो फुट लंबा तथा ७ इंच मोटा भूरे रंगका काशा (दंड) भी यहां है, जिसकी मूठ मुक्ता-जटित है। इन वस्तुओंकी दर्शन-पूजा उत्सवके दिनोमें होती है।

नवविहारके उत्तर २०० फुट ऊंचा एक स्तूप है, जो वज्रलेपसे गंच किया तथा बहुमूल्य वस्तुओंसे सजाया है। नवविहारसे दक्षिणमें एक सधाराम है, जिसे बहुत पुराने समयमें

अर्हत् और आर्य भिक्षुओंके लिये बनाया गया था। यहाँ रहते हुए जितने भिक्षु अर्हत् पदको प्राप्त हुए, उनकी सख्या (गिनी) नहीं जा सकती। सौसे ऊपर अर्हत्को यहाँ स्तूप बने हुए हैं। इस स्थानमें जो भिक्षु रहते हैं, कहा नहीं जा सकता, इनमें कौन अर्हत् है कौन नहीं।

यु-मेइते (युमेद) — बलखसे दक्षिण-पश्चिम हिमपर्वतके एक कोनेमें यह प्रदेश है।

हु-शि-कान (अशगान्) — यूमेधइसे दक्षिण-पश्चिम यह पर्वतीय प्रदेश है, जहाँ बहुत-सी उपत्यकायें हैं। यहाँके घोड़े अच्छे होते हैं।

तलकान (त-ल-कान्) — अशगानसे उत्तर-पश्चिममें तलकान है, जिसके पश्चिममें पो-ल-सू (पर्शु, ईरान) है।

का-शी (गज) — बलखमें सो ली (२० मील) दक्षिण यह देश है। यह बहुत पहाड़ी इलाका है। फल-फूल कम होता है, लेकिन गेहूँ और मटर बहुत होती है। बहुत गर्म जगह है। लोग कठोर ओर रूखे हैं। यहाँके दस विहारोंमें ३०० सर्वास्तिवादी भिक्षु रहते हैं।

बामियान (फान्-सेन्-ना) — महाहिमगिरि (हिंदुकुश) में गजसे दक्षिण-पश्चिम यह ऊँचे तथा गहरे खड्डोंका प्रदेश है। यहाँ आधी और बरफ एकके बाद एक आती रहती है। गर्मीके मध्यमें भी सर्दी रहती है। लुटोरोके दल यहाँ बने रहते हैं, जिनका पेशा है नर-हत्या। (गजसे) ६०० ली (१२० मील) चलनेपर तुखार देश पार हो बामियान देशमें पहुँचा जाता है। यह महाहिमगिरिके भीतर है। राजधानी एक खड्डके पार सीधे खडे पहाड़ोंके घेरेमें है, जिसके उत्तर ओर एक ऊँची चट्टान है। देश बहुत सर्द है। यहाँकी उपज गेहूँ और थोड़ा सा फल-फूल है। यहाँ भेड़ों और घोड़ोंके लिये अच्छी चरागाहें हैं। लोग कठोर और रूखे होते हैं। वह घरके बने ऊनी पट्टू ओर पोस्तीन पहनते हैं। यहाँके रीति-रवाज और सिक्के तुखार जैसे हैं। लोगों की आकृति भी वैसे ही है, किंतु भाषामें कुछ अन्तर है। अपने पड़ोसियोंसे ये कहीं अधिक ईमानदार हैं। इनमें त्रिरत्नके उपासक (बौद्ध) ओर देवताओंके पूजक (हिंदू) भी हैं। यहाँका राजा शक वशी है। यहाँके दस विहारोंमें हजारों लोकोत्तरवादी भिक्षु रहते हैं।

अरब भूगोलवेत्ता इब्नहौकल (दसवीं सदी) ने लिखा है “बामियान शहर बलखसे आधा एक पहाड़पर अवस्थित है। इसके पहले एक नदी मिलती है, जो बहकर गुर्जिस्तान प्रदेश में जाती है। यहाँ कोई बाग-बगीचा नहीं है।”

राजधानीके उत्तर-पूर्वमें सुनहले रंगकी खड़ी बुद्धमूर्ति (सुर्खबुत) है, जो १७३ फुट ऊँची है, जिसके पूरबमें एक बौद्ध विहार है। इसके पूरबमें शाक्यमुनि बुद्धका १२० फुट ऊँची खड़ी मूर्ति (सफेद बुत) है। यह मूर्ति पहलीसे सवा मील दूर है। इससे १२ या १३ ली (दो ढाई मील) पूरब एक हजार फुट लंबी निर्वाण बुद्धमूर्ति (अज्दहा) है, जो कि एक अकेली सी शिलाके चौरस तलपर बनी है। इसी विहारमें बुद्ध-शिष्य आनंदके प्रशिष्य शाणवासकी सघाटी रखी है।

स्वेन्-चाङ बामियानसे अन्-त-लो-फो (अदराब) होते अफगानिस्तान और भारतकी ओर आया। हिंदुकुशके उत्तरके कुछ और स्थानोंके बारेमें उसने लिखा है—

कुओ-सि-तो (खोश्त) — अदराबसे ३०० ली (६० मील) उत्तर-पश्चिम यह स्थान है, जो पहले तुखारदेशमें था, किंतु अब तुर्कोंके हाथमें है। यहाँ की भूमि समतल है, जहाँ खेती बाकायदा होती है। फल-फूल बहुत होते हैं। जलवायु नरम है। यहाँ के लोग ईमानदार हैं, लेकिन

जल्दी उत्तेजित हो जाते हैं। इनकी पोशाक ऊनी कपड़ोंकी होती है। अधिकांश निवासी बौद्ध हैं। यहाँ दस विहार हैं, जिनमें महायान और हीनयान दोनों यानों के भिक्षु रहते हैं। राजा तुर्क है, जोकि लोहद्वारके दक्षिणके छोटे-छोटे राज्योपर शासन करता है। उसके स्थायी निवासका कोई नगर नहीं है। वह एक जगहसे दूसरी जगह घूमता रहता (घुमन्तू) है। इससे पूर्वमें चुङ-लिङ (पामीर) है, जो कि जबूद्वीपके केन्द्रमें है। दक्षिणकी ओर इसकी पर्वतश्रेणी महाहिमगिरि (हिंदुकुश) से मिली हुई है। उत्तर में यह तप्तसागर (इस्सिकुल) और सहस्रधारा (बिङ-गुल) तक पहुँचती है। पश्चिममें यह हु-ओ (कुदूज) देश तक तथा पूरबमें बू-शा (बोलोरताग) तक फैली है। यहाँकी भूमिमें प्याज बहुत पैदा होती है, इसीलिये चुङ-लिङ (प्याजका पहाड़) नाम पड़ा, अथवा इसकी चट्टानोंके प्याजी रंग होने के कारण यह नाम दिया गया।

मेन-कान् (मेङ-कान्, मुन्-जान्) — खोशतसे १०० ली (२० मील) पूरब है। यहाँके लोग हु-ओ (कुदुज) जैसे हैं।

अ-लि-नी () मेङ-कान् से उत्तरमें यह प्रदेश वक्षु नदीके दोनों तरफ अवस्थित है, लोग कुदुज जैसे हैं।

हो-लि-हू () वक्षुके उत्तर तरफ अलि-नि से पूरबमें यह प्रदेश है, जहाँके लोग कुदुज जैसे हैं।

कि-लो-शे-मे- (कृष्णनिम्न, वखान) — मेन्-कानसे ३०० ली (६० मील) पूरबमें यह प्रदेश है, जो पहिले तुखार देश में था। लोग मेन्-कान जैसे हैं।

पो-लि-हो — उपरोक्तसे उत्तर-पूरब है, जहाँ के लोग भी पहले ही देश जैसे हैं।

हि-मो-तो-लो (तुखार) — कि-ली-शे-मोसे ३०० ली (६० मील) पूरबमें यह प्रदेश है, जहाँ लगातार पहाड़ और उपत्यकाएँ चली गई हैं। भूमि उपजाऊ है। गेहूँ पैदा होता है, वनस्पति बहुत देखी जाती है, फल प्रचुर परिमाणमें पैदा होते हैं, जलवायु बहुत ठंडा है। लोग बड़े क्रोधी तथा चंचल होते हैं, आचार-विचारका ख्याल नहीं रखते। वह कदमे छोटे तथा कुरूप होते हैं। इनका परिधान तुर्कोंकी तरह मोटाझोटा ऊनी कपड़ा, नम्रदा, पोस्तीन और पट्टू का होता है। इनमें विवाहिता स्त्रियाँ शिरपर तीन फुटसे अधिक ऊँची लकड़ी की सींग टोपीके तौरपर पहनती हैं, जिसकी दो शाखायें एकके ऊपर एक सामनेकी ओर होती हैं। ऊपरी की ओर निकली शाखा सासकी मानी जाती है। उसके मर जानेपर शाखा हटा दी जाती है। सास ससुर दोनों के मर जानेपर सींगकी टोपी नहीं पहिनी जाती। पहले यहाँ शक-वंशी राजा थे, जिनके हाथमें चुङ-लिङ (पामीर) के पश्चिमके अधिकांश भाग थे। पीछे यह तुर्कोंके हाथमें चले गए। लोगों पर तुर्कोंके रीति-रिवाजका प्रभाव बहुत है। लूटपाट सदा होती रहती है, इसलिए लोग जाकर दूसरे देशोंमें घुमक्कड़ी करने लगे। यह लोग नम्रदेके तम्बुओमें रहते हैं, और एक जगहसे दूसरी जगह घूमते पश्चिममें कि-लि-शेमो (कृष्ण) देश तक जाते हैं।

पो-तो-शङ्ना (बदख्शा) — २०० ली (४० मील) और पूरब जानेपर यह प्रदेश मिलता है, जो कि पूर्वी तुषार देश है। पहाड़ियों और घाटियोंवाला यह प्रदेश अधिकतर बालू और पत्थरीला है। मटर, गेहूँ, अगूर, अखरोट, नास्पाती, खूबानी जैसे मेवे यहाँ पैदा होते हैं। देश बहुत ठंडा है। लोग शिष्टाचारहीन और शिक्षाहीन होनेपर भी बहादुर होते हैं। नम्रदा

या पट्टका कपडा पहनते हैं। यहा तीन-चार बौद्ध विहार हैं, जिनमे थोडेसे भिक्षु रहते हैं। राजा बौद्ध है।

यिन्-पो-क्यान् (इन्वकान्, वखान) —बदल्शासे २०० ली (४० मील) दक्षिण-पश्चिम प्राचीन तुखार देशमे यह इलाका है। इसके पहाडोकी उपत्यकाये सकरी है, जिनमे खेतीकी भूमि है। जलवायु तथा लोग बदल्शाकी तरह है, लेकिन भाषा भिन्न है। यहाका राजा दुष्ट और क्रूर है।

कु-लङ्गना (कोरन, कोक्चा उपत्यकाका उपरी भाग) —३००० ली (६० मील) दक्षिण-पूरबमे प्राचीन तुखार देशका यह भाग है। थोडेसे बौद्ध भी हैं। यहा पत्थरोको तोडकर मोना निकाला जाता है। थोडेसे विहार और भिक्षु हैं। राजा भी यहाका त्रिरत्न-भक्त (बौद्ध) है।

त-मो-सी-ती (धर्मस्थिति, वखान) —कुलङ्गनासे ६०० ली (१०० मील) उत्तर-पूरब यह प्रदेश प्राचीन तुखारका ही एक भाग पो-शू (वक्षु) पर अवस्थित है। पहाडी जगह है। वर्षीली ठडी हवा चलती रहती है। मटर और गेहू पैदा होता है। वनस्पति नाममात्र है। यहाके घोडे अच्छे होते हैं। लोग नाटे और झगडालू होते हैं। पोशाक नमदा और पट्टकी है। “इनकी आखे दूसरे लोगोसे भिन्न फीरोजेकी तरह नीली होती है।” यहा दस विहार हैं, जिनमे थोडेसे भिक्षु रहते हैं। राजधानी हुन्-ते-तोमे एक विहार है, जिसमे एक पत्थरकी बुद्ध-मूर्ति है। मूर्तिके ऊपर स्वत धूमनेवाला छत्र है।

शि-किन (शगनान) —उत्तरी पहाडोको पार करन पर यह प्रदेश मिलता है। यहा मटर और गेहू बहुत होता है, दूसरी फसले बहुत कम होती हैं। वृक्ष दुर्लभ हैं, और फल-फूल भी बहुत कम होते हैं। जलवायु बहुत ठडा है। लोग लुटेरे और हत्यारे हैं, सामाजिक या आचारिक भेदभाव नहीं मानते। इनकी पोशाक पोस्तीन और पट्टकी होती है। भाषा भिन्न है, लेकिन लिपि तुखार जैसी है।

शाडमीर () —शगनानसे दक्षिणमे है, यहा मटर, गेहू ओर अगूर बहुत होता है। जलवायु ठडा है। लिपि तुखारी, किंतु भाषा भिन्न है। यहाका राजा बौद्ध तथा शकवशी है।

पो-मी-लो (पामीर) —शडमीसे ७०० ली (१४० मील) उत्तर-पूरब, दो हिमपर्वत-मालाओके बीचमे यह उपत्यका अवस्थित है। वसत और गर्मियोमे यहा हाड चीरनेवाली भयकर हवा तथा बफानी तूफान आते हैं। मिट्टी नमकीन तथा बहुत ककरीली है। खेती नहीं होती, मुश्किलसे कहीं वनस्पति देखनेको मिलती है। बिलकुल निर्जन तथा केवल बेकार पडी भूमि है। यहा एक बडा नाग सरोवर है, जो पूरबसे पश्चिम ३०० ली (६० मील) लंबा और उत्तरमे दक्षिण ५० ली (१० मील) चौडा है। सरोवर चुङ्ग-लिङ्ग (पामीर) के भीतर एक बडे ऊँचे स्थानपर है। इसका जल बहुत ही निर्मल और शुद्ध है। पानी अथाह और नीले रंगका है, स्वाद भी अच्छा है। जलतलपर बहुत जातिके जलपक्षी रहते हैं। इस सरोवरसे एक धारा पश्चिमकी ओर जाती है, जो धर्मस्थितिमे जा पूरबमे वक्षुसे मिलती है। सभी धाराये यहासे पश्चिमकी ओर बहती हैं।

क्या-पान्ते (सरिम्-गोल) —ताग कुर्गानके पास है।

पो-लु-लो () पामीर-उपत्यकाके दक्षिणमें यह इलाका है, जहा बहुत सोना-चादी निकलता है।

६ अंतिम तुर्क

जब ६३१-६३२ ई० में स्वेन्-चाङ इस प्रदेशमें घूम रहा था, बलख, बामियान, महाहिमगिरि (हिंदुकुश), बदख्शा और बखान ही नहीं बल्कि मेर्व भी तुर्कोंके हाथमें था। इस समय पश्चिमी तुर्क कगान तुन्-शे-खूका शासन था, तो भी हूण पूर्वजोंकी तरह तुर्क राजवंशी अपने अपने शासित प्रदेशमें स्वतंत्रसे थे। तुन्-शे-खूके बाद केंद्रकी शक्ति क्षीण हो गई, और सामन्त स्वतंत्र हो गये। सोगो (७०४-७१७ ई०) और सूलू (७१७-७५७ ई०) ने तुर्क राज्यको पुन दृढ़ अवश्य किया, किंतु मध्य-एशियाका दक्षिणपथ अब उनके हाथसे निकल गया। अरब शक्ति वहा प्रबल होती जा रही थी। तुखारिस्तानमें तुर्कोंने अरबोंसे बहुत जबर्दस्त मुकाबिला किया, उसी तरह बुखारा और सोगदमें भी मुकाबिला हुआ। तुर्कोंके ही समय उनकी बौद्ध-धर्म-भक्तिका प्रतीक एक विशाल विहार सोगद (जरफशा) नदीके किनारे बना। विहारको तुर्कों और मंगोल भाषामें बुखार कहते हैं। उक्त बौद्ध बिहारके कारण वहा बना नगर बुखारा कहा जाने लगा। इससे पहले हेफतालोके समय बरख्शा प्रधान केंद्र था, लेकिन अरबोंके आक्रमणके समय बुखारा प्रसिद्ध नगर बन चुका था। यहा का शासक बुखारा (वर्दन)-खुदान कहा जाता था। तुर्कोंके कुछ सामन्त इससे पहले तर्कमरूद, बेर्वाने, अस्वाने और नूरमें बस गये थे। केंद्रसे स्वतंत्र होनेके बाद इन सरदारोंने अवेरजी को अपना राजा चुना, जो कि वेइकन्द (राज्य-नगर) में रहता था। उस समय अभी बुखारा नहीं बसा था। अवेरजी बहुत ही अत्याचारी शासक था, विशेषकर धनी व्यापारियों और देहकानों (ग्रामपतियों) को बहुत लूटता था। इसके कारण बहुतसे धनी व्यापारी वहासे तुर्कोंके प्रदेशोंमें चले गये, जहा उन्होंने जेमकेत (चिमकद ?) नगर बसाया। राजा कराजुरिन गरीबोंका पक्षपाती था। मदद मागनेपर उसने अपने पुत्र शोरे-किश्वरको भेजकर अवेरजी को बंदी बना काटोसे भरे बोरेमें बंद करके बुरी तरहसे मरवाया शोरेकिश्वर ने राजा बनकर देश छोड़कर भागे लोगोंको बुलवा मगाया।

(१) शोरेकिश्वर, सेकेजकेत

शोरेकिश्वर (देशसिंह) ३० साल तक राज्य करता रहा। उसके उत्तराधिकारी सेके जकेतने समीतन और दूसरे नगर बसाये। फेरख्शा (बरख्शा) पहिले ही श्वेत-हूणोंकी राजधानी थी। सेकेजकेत उस तुर्क खानवंशका था, जिसको चीन राजकुमारिया ब्याहके लिये मिला करती थी। कहते हैं एक चीन राजकुमारी ब्याह करके आई, जो अपने साथ बुद्ध-मूर्ति लाई थी। इसी मूर्तिके लिये विहार (बुखार) बनाया गया, वही बुखारा नगरके नामका कारण हुआ। शायद यह घटना स्वेन्-चाङकी यात्राके पहिलेकी है, अर्थात् ६३० ई० से पहिले विहार बना।

(२) बेनदून

यह मुस्लिम सवत्के आरंभ (६२२ ई०) के आसपास था। इसके समय बुखाराकी और उन्नति हुई। इसने लोहेकी तख्तीपर अपना नाम लिखवाकर अपने बनवाये महलके द्वारपर लटकवा

दिया था, जो पाच शताब्दियों बाद तक भी वहाँ मौजूद रहे जबकि ११ वीं शताब्दीके अरब ऐतिहासिकोंने उसका जिक्र किया ।

(३) तुगशादे^१

यह बुखाराका अंतिम तुर्क राजा था । नाबालिक होनेके कारण राज्यका कारबार उसकी माँ करती थी, जिसे अरब इतिहासकार खातून कहते हैं—तुर्कीमें खातूनका अर्थ रानी है, इसलिये यह वैयक्तिक नाम नहीं हो सकता । खातूनने ५० सालतक शासन किया । जान पड़ता है, पुत्रके वयस्क हो जानेके बाद भी माँ का प्रभाव बहुत अधिक रहा । प्रतिदिन सूर्योदयके समय उठकर वह घोड़ेपर चढ़ अपने महलसे निकल रेगिस्तान (बुखाराके एक मैदान) के फ़ाटकपर आ सिंहासनपर बैठती । नगरके व्यापारी, सार्थवाह और छोटे-मोटे दूकानदार दरबारमें हाजिर होते । उसके अफसर और सामन्त चारों ओर घेरे रहते । खातून यही राजकाज तथा न्याय करती । जिस वक्त वह दरबारमें रहती, सुनहले कमरबंद, कीमती चोगा पहने तलवार लिये २०० तरुण शरीर-रक्षक सेवामें तैयार रहते । उन्हें एक दिन ही ड्यूटी देनी पड़ती, दूसरे दिन दूसरे २०० जवान आ जाते । हर एक तुर्की कबीला एक-एक दिनके लिये अपने तरुणोंको इस कामके लिये भेजता । कबीलोंकी सख्या इतनी अधिक थी, कि सालमें प्रत्येक कबीलेकी बारी एक बार पड़ती थी । इन कबीलोंमें ६० परिवार ऊँचे समझे जाते थे ।

अंतमें तुगशादेको अरबोंकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी और वह मुसलमान होकर ३० साल तक बुखाराका शासक बन अपने पड़ोसी वर्दनके राजासे अरबोंके लिये लड़ता रहा ।

सोगद (समरकंद) और भी अधिक महत्व रखता था । वहाँका तख्मून आखिरी समयतक लड़ता रहा । जबतक उसे परास्त नहीं कर दिया, अरबोंको चैनसे शासन करनेका मौका नहीं मिला । तरखूनने चीनसे मदद मांगी थी, अपने जाति-भाई तुर्कोंसे भी सहायता पाई थी, किंतु आखिरमें उसे देश छोड़कर भागना पड़ा । समरकंदसे पूरबमें अपने दुर्ग मग पर्वत में उसने अपने बहुतसे चर्मपत्रपर लिखे अभिलेखोंको छोड़ा, जिनमेंसे अधिकांश (७वीं सदीकी) सोगदी भाषामें तथा कुछ अरबी और चीनीमें भी है । सोवियत पुरातत्त्ववेत्ताओंने इन्हें हाल में खोद निकाला ।

^१ History of Bokhara (A Vambery, 1973)

स्रोत ग्रन्थ

1 Heart of Asia (E D Ross, (London 1899)

२ सिरिइस्किये इस्तोचनिकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ सससर (न पिगुलेस्कया, मास्को १९४१)

3 Turkistan down to the Mongol Invasion (W Barthold), 1928

4 On yuan Chwangs Travel in India (Thomes Watters, 1904)

5. Memoir Sur les Contre'es Occidentales (Huen Tsang, अनुवादक Julien)

6 The Turko-Scythien Tribes (E Parkar in China Review, XX 1892, 3, pp 125)

7. History of Bokhara (Arminus Vambery, London 1873)

8 Introduction a l' histoire de l' Asie (Paris 1895)

9 Early History of the Turks (Washborn, Contemporary Review, LXXX, pp 249-63)

१० सोगिदइस्कया कलोनिजात्सिया सेमिरेच्वा (अ० न० वेर्नेस्ताम)

भाग ५

उत्तरापथ (७६६-९४० ई०)

अध्याय १

आगूज, उइगुर

१ आगूज

आगूज एक पुरानी तुर्क जाति थी, जिसका स्मरण मोगिलियानके अभिलेखमें आया है। मोगिलियानने आगूजोंको हराकर चीनकी ओर भगा दिया था। मोइनचुरा (उइगुर खान) के सहायक किपचकोंके पूर्वज आगूज—आगूजोंके पाच विभागोंमें एक किपचक थे। किपचकका अर्थ वृक्षकोटर है। शायद किसी समय किसी पूर्वजने वृक्ष कोटरमें छिपकर प्राण बचाया हो। गूज या आगूज तुर्कोंके तीन विभाग थे—किपचक, ककाली और करलुक (गरलोक)। किपचकोंके ही वंशधर सलजूक, तथा आधुनिक तुर्कमान, उसमानली और कजाक हैं। कोई कोई आगूजोंके उत्तराधिकारी किपचकोंको ककालियोंका पूर्वज मानते हैं। इन्हीं ककालियोंके उत्तराधिकारी वायन तुर थे। ककाली (कङ्कली) यायिक (उराल) नदीके पूर्वमें अपनी गाड़ियोंके साथ घूमा करते थे, इसीलिये इनका नाम कङ्काली या तिङ्कली (गाड़ीवाला) पडा। ९ वी सदीके अतमें किपचक वोल्गाके पश्चिममें पहुँच गये थे, और १३ वी सदीमें आधुनिक रूसियोंके पूर्वज स्लावोंको परेशान कर रहे थे। किपचकोंसे ही सलजूक-वंश निकला, जिसने कितनेही समय तक मध्य-एशिया और ईरानपर शासन किया। आजकलकी तुर्की के तुर्क उसमानली शाखाके वंशधर हैं। ७वी ८वी सदीमें कालासागरसे उत्तर पेचनगा घुमन्तु घूमते थे, जिनके पूर्वोत्तरमें किपचक, दक्षिण-पश्चिममें खजार, पूर्वमें गूज और पश्चिममें स्लाव रहते थे। गूज या आगूज ७वी ८वी सदीमें चीन की सीमासे लेकर कास्पियन तक फैले घुमन्तु जीवन बिताते थे। सामानियोंके सारे शासनकाल (८९२-९९३ई०) में ये उनके उत्तरी पड़ोसी थे। खोकन्द और पूर्वी तुर्किस्तान से बक्षु तटकी ओर इनका प्रवाह चल रहा था। सामानियोंकी शक्ति के पतनके बाद बुखारा प्रदेशमें भी ये घुम आये और वहाँ एक सरदार तकमक पुत्र सलजूक के कारण एक शाखा सलजूक कहीं जाने लगी। सलजूक पहलेपहल मुसल्मान बना। उसके पहले गूज अधिकतर बौद्ध या ईसाई धर्मोंके माननेवाले थे। सलजूक और सुवास एक गूज सरदार पेगूके सेनापति थे। उसका पेगू नाम ही बतलाता है, कि वह बौद्ध था। पेगू बोगू (भगवान) का ही रूपान्तर है, पारसी बुद्धको पेगू कहते थे।

आगूज जब मगोलियामें थे, तब ही वह इस नामसे प्रसिद्ध थे। पश्चिममें आनेपर उनमेंसे कुछको तुर्कमान कहा जाने लगा। दूसरी सदी ई० पू० के चीनी यात्री आन-साई (आलान्-या) की भूमिको जानते थे, जहाँ के निवासी ईरानी जातिसे सबध रखते थे। ग्रीक लोग आलान (आवोर-

सोग) को दोन नदी और कास्पियनके बीचके निवासी जानते थे। पीछे भी अलान बोलगाके पूरबमे रहते थे। ३७४ ई० आसपास के हूण अलानोके ऊपर पड़े, जिसके कारण वह अपनी भूमि छोड़नेके लिये मजबूर हुए। ८वीं सदीमें तुर्क खाकानने अपने अभिलेखमें आगूजो अथवा ताकुज-आगूजोके खानका जिक्र किया है। नौकी गिनती में आगूज कहनेका मतलब यही है, कि उनके नौ कबीले थे—कभी कभी तुर्क और आगूज दोनों शब्द साथ साथ आते हैं। आगूज वही तुर्क जनता थी, जो कि छठी सदी ई० में चीन की भीमासे ईरान और विजतीन (पूर्वी रोम) की सीमा तक घुमन्तू जीवन बिताती थी। रूमी विद्वान व० व० वर्तोल्ट के कथना-नुसार^२ तुर्क उनका राजनीतिक नाम था और आगूज नृवशीय। अरब भूगोलज्ञ आगूजो का रहना पूर्वी कास्पियनसे इस्फिजाब तक और ताकूज-आगूजोका तरिम-उपत्यकामे कूचा और तुर्फान तक बतलाते हैं—तुर्फान उनका केंद्र था। १३ वीं सदीके भूगोलज्ञ इब्न-असीरने लिखा है, कि आगूज कभी भी ताकूज-आगूजोके नीचे नहीं रहे। अरब ताकूज-आगूजोका रहना जहाँ बतलाते हैं, चीनी वहीपर उसी समय उइगुरोका निवास बतलाते हैं। ८६६ ई० में तुर्फानको उइगुरोने लिया था। इससे जान पड़ता है कि अरब जिनको ताकूज-आगूज कहते हैं, चीनी उन्हीको उइगुर नाम देते हैं। अरबोके अनुसार ८२० ई० (२०४ हि०) में तोगुज उश्रूसनाको ले खोइदसे जीजक तकके स्वामी बन गये। विजतीय (रोमक) ऐतिहासिकोके अनुसार छठी सदीमें बोलगासे पश्चिमका इलाका तुर्क राजाके हाथमें चला गया। ५७६ ई० में विजतिया द्वारा ध्वस्त होनेपर किमेरियोके बासपोर (केच) को तुर्कोने ले लिया।

५९० ई० में वहा विजतीय शक्तिमें विद्रोह हुआ। तुर्कोकी इस अल्पकालिक सफलताके समय ६२५ ई० में इस प्रदेशपर खजारी कगानका अधिकार था। ८वीं और ९ वीं सदीके मध्यमें निम्न बोलगोमें खजार और बोलगार रहते थे। इन्ही तुर्कोसे आत्मरक्षाके लिये सासानी ईरानियोने छठी सदीमें दरबद और गुर्जोके रक्षा-प्राकार बनवाये। छठी सदीमें तुर्क (चोल, सुल) के राज्यमें कास्पियनसे पूर्व के प्रदेश तथा गुरगानमें जर्थुस्ती देहकान रहते थे। अब्बासी खलीफाके ऊपर आगूज जार्जिया से चिमकद (सिर-उपत्यका) तक प्रहार करते थे। बोलगा (इतिल) के ऊपरी और निचले भागमें आगूज रहते थे, जिनके उत्तरी पड़ोसी किमाक थे। अरब भूगोलज्ञ इब्न-फजलान ने अपनी यात्रा के समय (९२२ ई० के वसंत में) आगूजो को केवल उस्तउर्द में पाया था, उस समय एम्बा नदी से पूर्व में तुर्क-वशी बाश्किर रहते थे। इस समय कास्पियन के पश्चिम में खजार, पूर्व में आगूज, जिनके पूर्व में करलुक घुमन्तू रहते थे। आगूजो के सरदार को खान नहीं यबगू कहा जाता था, यही बात करलुको में भी थी। यबगू को मोगोलियान के शिला लेख में जब्गू कहा गया है—११वीं शताब्दी के लेखक महमूद काशगरी ने भी ज की जगह य का प्रयोग किया है। यब्गू जाडो में निम्न सिर-उपत्यका में रहता था। सामानी सीमात सैराम से सिर के मुहाने तक उसकी गोचर-भूमि थी। आगूजो की भूमि से जाते वणिक्पथ पर जहा-तहा मुसल्मानो के भी नगर थे। इन्ही में एक यगीकेत (देहनब) था, जो कि सिरदरिया से छ-सात किलोमीटर हटकर बसा था। फारेलेसे १० दिन और फराब से १२ दिन में वहा पहुँचा जाता था। यहा आगूजो का एक राजा रहता था।

^२“ओचेर्क इस्तोरिइ तुर्कमेन्स्कवो नरोद”, History of Bokhara (A. Vambery)

इसी के पास दो और नगर जद और तमरउत्कुल थे। इब्न-खल्दून के अनुसार आगूज बड़े समृद्ध थे, किन्हीं किन्हीं के पास एक-एक लाख भेड़ें थीं। वह ख्वारेज्म व्यापार करने जाते थे। जब सोगद और तुखारिस्तान में शांति रहती, तो आमू-दरिया के दक्षिण तट पर अवस्थित पारातगिन नगर में भी हो जाते थे, जो कि अराल से एक दिन के रास्ते पर था। गुर्गच (उर्गज) वणिक्पथ पर था। वहाँ सामान की दुलाई और व्यापार दोनों काम आगूज करते थे। १२२ ई० में इब्न-फजलान ने आगूजों को काफिर पाया था, वैसे ही जैसा कि वह ८वीं सदी में मंगोलिया में थे। फजलान ने एक आगूज राजा का नाम कुचुक यनाल बतलाया है, जो कि मुसलमान होकर फिर काफिर हो गया था। आगूजों में इस्लाम के अतिरिक्त ईसाई धर्म का भी प्रचार था, यह १३ वीं सदी के लेखक जकरिया कजवीनी के लेख से मालूम होता है।

२ उइगुर

(१) उइगुर—यह बतला चुके हैं, कि अरबों के ताकुज-आगूज और चीनियों के उइगुर वस्तुतः एक ही हैं। उइगुर शुरू में आधुनिक मंगोलिया में ओरखोन नदी की उपत्यका में रहते थे। इनका पहला राजा बुकू खा बतलाया जाता है। कहते हैं, बुकूखा ने स्वप्न में देखा, कि वह सारी दुनिया का राजा होगा। उसने अपने पड़ोसियों—किरगिज, चीन, तगुन (अम्दो) के विरुद्ध अभियान किया और अपार संपत्ति के साथ लौटा तथ। उर्दूबालिक नगरी बसाई। दूसरे स्वप्न में उसे एक जेड (अर्कीक पत्थर) का टुकड़ा मिला, जिसके पास रहने तक ससार पर उसका शासन रहेगा। इस पर उसने पश्चिम की ओर अपनी सेना चलाई और तुर्किस्तान (सप्तनद) में दाखिल होकर बलाशगुन (सूजिया) नगर बनाया। चीनी इतिहास बतलाता है, कि उइगुर ७वीं सदी में मंगोलिया के उत्तर-पश्चिम में रहते थे। ८वीं सदी में उनका स्थान वही प्रदेश था, जहाँ पर कि उर्गा (उलानबतुर) के पास पीछे मंगोल राजधानी कराकोरम नगर बसाया गया। ९वीं सदी में उनके राज्य को किरगिजों ने व्वस्त कर दिया, और वह दो भागों में विभक्त हो गये, जिनमें पूर्वी भाग का सर्क पीछे चिंगिस से हुआ। इन्हीं को पीछे वेइ-वूर या (हुइ-हो, पूर्वी तुर्क) कहा जाने लगा। मुस्लिम इतिहासकारों ने उइगुर नाम पहले पहल १३वीं सदी में लिया, इसमें पहले वह उन्हें ताकुज-आगूज कहते थे।

मंगोलों के राजनीतिक और सांस्कृतिक गुह उइगुर थे।^१ चिंगिस और उसके उत्तराधिकारियों के समय वह बड़े बड़े पदों पर थे, यह हम देखेंगे। उइगुर नाम आज भी उज्बेकों के चार विभागों में मिलता है —उइगुर-नइमन, कइ-ली-किपचक, कियत-कुग्रद, नोखुस-मगित। इनमें चौथा विभाग बुखारा के आखिरी राजवंश का था।

(२) उइगुर उत्पत्ति—पुराने ठूणों ने अपने उत्तर की तिङ्गलिङ्ग (गाडी वाली) जाति को जीता था। सियन्-पी शासनकाल (३८६-५३४ ई०) में तिङ्गलिङ्ग चीन की ओर से लड़े थे। चीनियों को पीछे यह सुनकर आश्चर्य हुआ, कि पश्चिम में भी इस जाति के लोग रहते हैं। तिङ्गलिङ्ग और सभी किरगिज ऊँचे पहियेवाली गाड़िया इस्तेमाल करते थे। ककालियों को भी यही बात

1 A thousand years of Tatars (Parker)

2 Turkistan Down to Mongol Invasion

थी। चीनी लेखकों ने साफ लिखा है, कि उइगुर और किरगिज एक ही भाषा बोलते हैं। जब तिङलिङ्ग शब्द लिखने का रवाज नहीं रहा, तो चीनी लेखक उनके लिये चिर-के अथवा तेरक (चीले, हीले) लिखने लगे। ६४८ ई० में तुर्कों और खित्तनों की भूमियों के बीच में रहने वाली जातियों ने थाङ्ग सम्राट् ताङ्ग-मुङ्ग (६२७-६५० ई०) की अधीनता स्वीकार की, वह इसी तेरक (तुर्क) नाम से पुकारी जाती थी। तुर्क से तेरक में इतना ही अंतर बतलाया जाता है, कि विवाह के समय तुर्क पुरुष अपनी स्त्री के पास चाहें तब तक रहता था, और उसी समय लौटता था, जब कि एक पुत्र पैदा हो जाता था। लेकिन, तेरकों के बारे में कहा जाता है, कि वह ऊंची गाड़ीवाले लोग थे। तेरकों का ही एक छोटा कबीला उइगुर था, ऐसा किन्हीं-किन्हीं विद्वानों का मत है। तेरक कास्पियन तक फैले हुये थे, जहाँ पर कि मंगोल-विजय के समय ककालियों को रहते पाया गया। तुर्की भाषा में ककाली गाड़ी को कहते हैं, चगेज (चिंगिस) काल में इसी का चीनी उच्चारण कङ्गली हो गया—छठी सदी में कङ्ग ली सिविर खकानका एक देरे भी था। इस प्रकार गोबी के रेगिस्तान, इस्सिकुल और सिर-दरिया के उत्तर गाड़ी रखनेवाले हूण और तुर्क तिङलिङ्ग कहे जाते थे। यही जाति प्रधानता प्राप्त कर उइगुर के नाम से मशहूर हुई। हूणों की शासक जाति (राजवंशी कबीले) पश्चिम की ओर चली गई, जो बच रहे, वह आसेना तुर्कों और किरगिजों को छोड़ उइगुर कहे जाने लगे। ये अपने पूर्वजों की तरह ही बड़े साहसी और मजबूत धुमन्तू थे, लूटपाट इनका पेशा था, और घोड़े पर बैठे तीर चलाने में बड़े कुशल होते थे। चूला खाकान ने जबर्दस्ती तेरकों को आधीन करके अपने और उइगुरों के बीच शत्रुता का बीज बोया और क्रुद्ध होकर उनके कितने ही सरदारों को मार डाला। इस पर उइगुर, कुकिर्त, तुला और बैकाल जातियों ने विद्रोह कर औ अपने अलग अलग जिगिन स्थापित किये। इन्हींके जिगिनों का समिलित जातीय नाम उइगुर पडा। मुख्य उइगुर कबीले को योकर कहा जाने लगा। उस समय ये सेयन्दा नदी के उत्तर में रहते थे। सेलिंगा नदी पर उनका एक लाख ओर्दू था, जिसमें आधे लडाई में भाग ले सकते थे।

३. उइगुर-खाकान^१

१. जिक्नेन, जिगिन या जिक्नेन उइगुरों का प्रथम राजा था।

उइगुरों के दो भाग थे नैमन उइगुर (आदि उइगुर) जो चिंगिसखा के समय जुगारिया में रहते थे, तो गुज-उइगुर (नव-उइगुर) जो ओरखोन और तुला की उपत्यकाओं में रहते थे। यह स्मरण रखना चाहिये, कि ८वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से ९वीं शताब्दी के अंत तक पूर्वी-एशिया में उइगुर बहुत शक्तिशाली रहे और एक आधुनिक लेखक के अनुसार “पुराने समय में पूर्वी-एशिया के यह सबसे अधिक सस्कृत जाति थी।” इनकी राजधानी कराकोरम (मंगोलिया) थी, किंतु इनका ओर्दू घूमा-करता था। पीछे इनका केन्द्र बिशबालिक हुआ। इनमें बौद्ध धर्म का बहुत प्रचार था। इनकी भाषा में अनुवादित कितने ही बौद्ध ग्रंथ तकलामकान की महभूमि में प्राप्त हुये हैं। बौद्धों के साथ साथ नेस्तोरीय (ईसाई) धर्म का भी इनमें बहुत प्रचार था। ८४० ई० में इनके खान खैसा का शिर काटा गया, और ८४८ ई० में यह अपनी जन्मभूमि आधुनिक मंगोलिया छोड़ने के लिये मजबूर हुये। नेस्तोरियों के सपर्क में आ उइगुरों ने सुरियानी लिपि से अपनी वर्ण-

^१ वही

माला तैयार की, जो कि उनके द्वारा चोंगिस खा के समय में जाकर मंगोलो में आज भी प्रचलित है।

(उड्गुर-राजावलि)

जिगिन उड्गुरो का प्रथम राजा था, किन्तु उगुरो को प्रधानता तब प्राप्त हुई, जब कि पूर्वी-नुकों को समाप्त कर मोइनचुर ने मध्य-एसिया में अपनी शक्ति का विस्तार किया। मोइनचुर से पहिले उड्गुरो के नौ राजा हो चुके थे, आगे आठ राजाओं के समय तक उड्गुर शक्तिशाली रहे। इनकी राजावली निम्न प्रकार है—

- (१) जिगिन . . .
- (२) बोसत (बोधिसत्व) . . . ६२६- ई०
- (३) सुमेत
- (४) बोरुन
- (५) बीस्त
- (६) तु-खेली
- (७) बुख्तेवर ७१७
- (८) .
- (९) कुतलुक बिगा—७५६ ई०
- १ (१०) मोइनचुरा (मोयुनचुर ७५६-६०)
- २ (११) यितिकिन ७६०-७८
- ३ (१२) दुरमोगो ७७८-७९
- ४ (१३) तरस ७८६ .
- ५ (१४) आचो —७९५
- ६ (१५) कुतलुग—७९५—
- ७ (१६) कौसग ८०८—२१
- ८ (१७) गुदलुग जिगिन ८२१-२४
- ९ (१८) ८२४-३२
- १० (१९) ८३२—
- ११ (२०)
- १२ (२१) आ-के
- १३ (२२) आनेन।

२ बोसत् (६२९-)

बोसत बोधिसत्व का अपभ्रंश है, जिससे पता लगता है कि वंश के आरम्भ में ही बौद्ध धर्म का उसमें कितना प्रचार हो चुका था, इसलिए उनके राजा ने बौद्धधर्म के आदर्शवाद के प्रतीक बोधिसत्व का नाम अपने लिये स्वीकार किया। वह जिगिन का पुत्र था। उड्गुरो से दक्षिण में

रहने वाले सेइदो के सहयोग से उसने अपनी शक्ति को बढ़ाया। उइगुरो को आगे बढ़ते देखकर तुर्क कगान (खान) खेले के उपराज जेले ने एकाएक सेना लेकर आक्रमण किया, लेकिन उइगुरो ने बहुत बुरी तरह से हराया, और उसे सजीव पकड़ कर घेरफा (ह्वोसी-ली-फा) की उपाधि पाई। बोधिसत्व का उर्दू (सेना) तुला नदी की उपत्यका में रहता था। उसने ६२६ ई० से पहिले चीन-सम्राट के पास भेंट भेजी थी। यह थाड वंश के आरम्भ और समृद्धि का समय था। बोधिसत्व के साथ साथ सेइदा का सरदार भी इस भूभाग में शक्तिशाली था।

३ तुमेत

बोधिसत्व के बाद उइगुरो का एक सरदार तुमेत उनका खाकान हुआ। इसने सेइदा को हराकर उनके उर्दू को अपने में मिला लिया, किन्तु कुछ ही समय बाद वह फिर स्वतंत्र हो गये। तुमेत की शक्ति को बढ़ते हुए देखकर दूसरी तेरक जातियो—उइगुर, तरकल, बैकाल, बुक्कू, तुला, गुसार, आदिर, किविर, घेई, किर, स्वतेसिर, शेकिर और किरगिज—ने चीन की अधीनता स्वीकार की, यह चीनी अभिलेखों से मालूम होता है। इसी समय किर्गिजों का नाम पहिले पहल तेरेक जातियो में गिना गया है। इनके सरदारों (राजाओं) की थाड-सम्राट ने बड़ी आबभगत की, और वह सम्राज्य के सहायक बन गये। इन घुमन्तू जातियो की प्रार्थना पर चीन ने डाकगृहों के साथ साथ अच्छे रास्ते बनवाये। छाडआन (चीन राजधानी) से उइगुरो और दूसरी तुर्की-जातियो के राजनीतिक केन्द्रों तक रास्ते तैयार किये गये। उइगुरो का कगान तुमेत यद्यपि बाहर से अपने को चीन के अधीन दिखलाता था, किन्तु अपने राज के भीतर वह नायक कागान (स्वतंत्र राजा) के तौर पर ही प्रसिद्ध था। उसके बारह मंत्री थे, जिनमें छ भीतरी भू-भाग के शासन में सहायता करते और छ बाहरी भूभाग के। यह सगठन तुर्क-सरकार के नमूने पर किया गया था। किसी कारण से उइगुरो ने तुमेत से नाराज हो उसे मार डाला।

४ बोरुन, ५ बीरुत (पीली), ओर ६ तु-खे-ली

यह तीनों कगान तुमेत के पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र थे। यह उस समय हुये, जबकि असेना तुर्क की एक शाखा तेकिश का प्रतापी कगान मे-चो शासन कर रहा था। उसने पुरानी तुर्क भूमि को जीत लिया, जिसके कारण उइगुर, सिबिर, सिकिर आदि हूणीय जातिया दक्षिण की ओर भागकर पुरानी तुर्क भूमि में खाड-चउ-फू के पास चली गईं। इसी समय तिब्बतियो का भी बहुत जोर बढ़ा। वह तरिम उपत्यका को लेकर चीन के ऊपर भी आक्रमण किया करते थे। उइगुर लोग चीन के सहायक होते थे।

७ बुखतेवर (७१७)

७१७ ई० में तुखेली के पुत्र बुखतेवर ने मे-चो के युद्ध में चीन की सहायता की और इसी सघर्ष में मे मोचो मरा। मोचो के पुत्र पर झूठा अपराध लगा कर उसे दक्षिण चीन में निर्वासित कर दिया गया।

८ पुत्र

उसके स्थान पर उसका पुत्र बैठा। उस समय इन घुमन्तू जातियों पर काबू रखने के लिये उड़गुर भूमि (उरुमची) में चीन का एक राजामात्य रहता था, जिसकी शिकायत पर मोचो-पुत्र को दक्षिण में निर्बोधित कर दिया गया, और वही जाकर वह मर गया। इस पर उड़गुर जाति के नेता राजामात्य के विरुद्ध हो गये और उन्होंने उसको मार डाला। इसके कारण राजामात्य के स्थान (बकुल) से राजपथ द्वारा चीन का सबध टूट गया। विद्रोहियों का सरदार तुकों के राज्य में भाग कर वही मरा। मरकरिन के शासन के बाद तुकों की राजशक्ति छिन्न-भिन्न हो गई यह कह आये हैं। उसमें उड़गुर लाभ उठाये बिना कैसे रह सकते थे ?

९ कुतुलिग बिगा (-७५६ ई०)

तुकों की इस अवस्था से फायदा उठानेवाला तथा पिछले विद्रोही सरदार का पुत्र कुतुलिग बिगा था। इसे करलिक, वीरा, बसिमिर, और करलुग से मुकाबिला करना पडा। बसिमिर राजा होने का दावा करता था, जिसपर बिगा ने उसका सिर काट लिया। सघर्ष में सफल होकर उसने चीन के पास दूत द्वारा सदेश भेजा, कि इस तरफ की शान्ति और व्यवस्था कायम रखने की जिम्मेवारी मैं लेता हू। उसने अपने राज्य को निष्कटक बनाकर कुतुलिग बिगा खान की उपाधि धारण की। चीन ने भी “राजकुमार” की उपाधि प्रदान की और उसे वहा भेज दिया, जहा पहिले ओर्खोन नदी के तट पर तुकों की राजधानी थी। यह चीन को अर्पित की गई तीन-नगरियों के पश्चिमी छोर से पाच सौ मील उत्तर में थी। मरने से पहले यही पर मरचो (६६३-७१६ ई०) नौ कबीलो के जीतने में सफल हुआ था। इन्ही कबीलो में से एक क-स (खजार) भी थे, जिन्होंने पीछे कास्पियन के पश्चिमी तटपर अपना राज्य स्थापित किया था। कुतुलिग बिगा ने करलुको और बसमिरो को भी जीत लिया। इस सफलता पर चीन-सम्राट् ने बिगा को कगान की उपाधि स्वीकृत की। मरकरिन के वंशजों के लिये तुर्क अब भी विरोध कर रहे थे, जिन्हें बिगा ने कई बार हराया। चीन-सम्राट् ने और भी सम्मान की आशा दी। बिगा ने अपने राज्य को बढ़ाते हुए पूर्व में पूर्वी मचूरिया के मत्स्यचर्मबाले तातारोंकी भूमि से लेकर पश्चिम में अल्ताई तक बढ़ा लिया। दक्षिण में उसकी सीमा गोबी की महामरुभूमि थी—अर्थात् उसके मरने के समय ७५६ ई० में सारी पुरानी हूण-भूमि उड़गुरो के अधीन थी।

१०. मोइनचुरा (७५६-७६० ई०)

बिगा खान के बाद तेगिन काले उड़गुरो का कगान हुआ, जो पुराने अभिलेखा में मोइनचुरा के नाम से प्रसिद्ध है। तुकों से सघर्ष अब भी चल रहा था, जिसका नेतृत्व अमरोशर कर रहा था। अमरोशर पहिले चीन की ओर से खित्तनो के साथ लड़ता रहा, फिर अपने ही स्वामी के विरुद्ध हो गया। इसीके मुह की कहावत है—“तुर्क पिता से पहिले माता का ख्याल करते हैं।” मोइनचुरा के प्रसिद्ध सेनापति बवो-जी (नेस्तोरीय) के सहायक के तौरपर भी अमरोशर ने अच्छा काम किया था। इस समय पुराने यू-ची देश के स्वामी तिब्बती थे और चीन की दोनों राजधानियां

(छाङ्ग-आन, लोयाङ्ग) विद्रोहियों के हाथ में थी। राजधानियों को फिर थाङ्ग-वश के हाथ में देने में उइगुरो ने भारी मदद की। पहिले उन्हें पूर्वी राजधानी लो-याङ्ग (आधुनिक होनान्-फू) को लूटने का भी अधिकार दे दिया गया, किन्तु पीछे वार्षिक दस हजार थान रेशम भेंट देकर पिण्ड छुड़ाया गया। ७५८ ई० में चीन दरबार में अब्बासी खलीफा और उइगुरो के दूतों का बराबर के स्थान के लिये झगडा हुआ। सम्राट् किसी को नाराज नहीं करना चाहता था, इसलिये उसने दोनों दूतों को भिन्न-भिन्न दरवाजों से एक ही साथ आस्थान-मंडप (दरबार हाल) में आने का प्रबन्ध किया और दूत के निबँध पर भी सम्राट् के सम्मान के लिये काउ-तु (दण्डवत्) करने की अनुमति नहीं दी।

१६०६ ई० में ऊपरी सेलिंगा में रुन्नी-लिपि में एक शिलालेख मिला, जो सेलिंगा के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें उइगुर राजवंश के प्रथम खान मोइनचुरा का नाम आता है। अभिलेख में तुर्क राजवंश के पिछले खान आजमिश (७४५ ई०) की मृत्यु से लेकर मोइनचुरा की मृत्यु (७५६ ई०) तक की बातें लिखी हैं। इससे मालूम होता है, कि क्युल् विलगा (कुतुलुग बिगा) कगान के मरने के बाद मोइनचुरा गद्दी पर बैठा। “उसके बाद मेरे पिता का अन्त हुआ, तो काली (साधारण) जनता ने (मुझे नेतृत्व) प्रदान किया, किन्तु कुछ लोग ताइ-बिलगा-कुतुग के समर्थक हुये, और उन्होंने उसे कगान बनाया। मैंने सेना एकत्रित की, उसके विरुद्ध अभियान किया और उसे जीत लिया। मैं जब विजयी हुआ, मेरे हाथ में नभ (दैव) ने राज दिया। किन्तु मैंने उसके पक्षपाती काली (साधारण) जनता (कारा इगित) को नहीं सताया और न उसके उर्दू, घर को जप्त किया। मैंने केवल उसे दण्डित किया और पद से हटा दिया।”

इस अभिलेख से पता लगता है, कि मोइनचुरा साधारण जनता की सहायता से सफल हुआ था, उसने अपने प्रतिद्वन्द्वी को दबाया। उइगुर घुमन्तूओं में जनतात्रिकता प्रचलित थी, जिसके कारण साधारण (काली) जनता अपने अधिकारों को इस्तेमाल करने का मौका पाती थी। यद्यपि इस जनतात्रिकता का यह अर्थ नहीं था, कि युद्धबंदियों को उनके यहाँ दास नहीं बनाया जाता था। घुमन्तू सरदारों और उनके लडाकू उर्दू की समृद्धि तो बहुत कुछ इन्हीं दासों के श्रमपर निर्भर थी।

मोइनचुरा के समय उइगुर-वंश ने तुर्कों का स्थान लिया। उसका पिता तुर्कों का एक उच्चअधिकारी (शाद) था। उसने पहिले तुर्कों के विरुद्ध बगावत की, और मोइनचुरा को हज़ारपति का स्थान दिया। तुर्कों के विरुद्ध हुई बगावत में ताकूज-आगूज ने भी सहायता की। ताकूज-आगूज के बारे में मोइनचुरा कहता है “मैंने अपने सहायक नौ आगूज जनता को एकत्रित और सघटित किया। मेरा पिता क्युल् विलगा कगान सेना के साथ गया और मुझे भी उसने हज़ार का नेता बनाकर दक्षिण-पूर्व में भेजा।” तुर्कों के मोगलियान खान के अभिलेख में हम पढ़ चुके हैं, कि उसने तागूज-आगूज जनता को उनकी भूमि और पानी से निकालकर चीन की ओर भेज दिया, जैसा कि उसी अभिलेख की सैतीसवी पक्ति में लिखा है “मैंने (उनकी सेना को) ध्वस्त कर दिया बहुत से उनमें मरे। सेलिंगा के नीचे उन्हें धकेल कर मैंने (अपना मोर्चा बनाया,) और उनके घरों को नष्ट कर दिया। उइगुर उर्दू में सौ परिवार रह गये थे। तुर्की जनता उस वक्त भूखी थी, तब मैंने उस सामान को अपने लोगों को सहायता देने के लिये जमा किया। जब मैं चौतीस वर्ष का था, तब आगूज भागे और चीन की ओर गये।”

मोगलियान खान के इस अभिलेख से मालूम होता है, कि आगूज (उडगुर) लोगो पर तुर्कों ने बहुत अत्याचार किया था, जिसका बदला मोइनचुरा ने लिया। उसने तुर्कों के अंतिम कगान अजमिश को लडाई में हराकर बंदी बनाया और उसके कथानुसार उसी के साथ “तुर्क राजवंश उच्छिन्न हो गया।”

११ यितिकिन (७६०-७७७ ई०)

मोइनचुरा के बाद उसका दूसरा पुत्र यितिकिन गद्दी पर बैठा। चीन का थाङ्ग-वंश उस वक्त बड़ी बुरी अवस्था में था। चीन को इस अवस्था में डालने में भारी कारण तिब्बती थे। इस समय सिहासन के भी कई दावेदार थे, जिनमें से एक का पक्ष लेकर यितिकिन भी शान्सी तक लूटने के लिए गया। लोगो ने कुछ दे-दिवाकर अपनी जान बचाई, किन्तु यह सब तब जबकि उसने एक दो दूत-मन्त्रो को कोड़े लगवा कर मरवा डाला, क्योंकि दूतने उडगुर खाकान और खातून (रानी) के सामने ठीक सम्मान प्रदर्शन नहीं किया। थाङ्ग वंश उडगुरो की मदद चाहता था। उन्हीं की मदद से ही सम्राट् की सेना ने शान्सी के दक्षिण-पश्चिम कोने में लडकर विद्रोह्यो को हटाया। फिर सेना वहाँ से पूर्वी राजधानी लोयाङ्ग को लेने के लिये उधर बढ़ी, जहाँ एक दूसरे विद्रोही को सी-चाङ्ग-ई (पेकिङ्ग) के समीप हराया। उडगुर सेना और छ सौ मील तक खून के समुद्र में कूच करती गई। अपमान की तो बात ही किया, वह रास्ते में सभी लोगो को लूटती, लडकियो को पकडती, प्रलय की लीला मचाती आगे बढ़ती गई। तो भी विद्रोह और दमन के सहायक उडगुरो को बहुत भारी भेंट, उपाधि और जागीरे दी गई।

७६५ ई० में यितिकिन के एक सेनापति बुक्कू ने बनावटी विद्रोह का बहाना बना सेना ले तिब्बतियो को लूटने और तरिम-उपत्यका से तिब्बतियो के शासन को खतम करने का प्रयत्न किया। लेकिन बुक्कू अपने सकल्प को पूरा करने से पहले ही मर गया। यितिकिन ने क्वो-जी से यह कह कर निपटारा किया, कि सब अपराध बुक्कू का था, उसने मेरी आज्ञा के बिना ही यह अत्याचार किये। साथ ही यितिकिन ने सम्राट् को यह भी वचन दिया, कि यदि बुक्कू के पुत्र (जो कि खातून का भाई भी था) को क्षमादान दिया जाय, तो मैं तिब्बतियो पर आक्रमण करूंगा। खातून ७६८ में मरी। उसके बाद उसकी छोटी बहन चीनी अन्त पुर से भेजी गई, जिसने बड़ी बहन का स्थान लिया। यह हम देख ही आये हैं, कि मध्यएसिया के सफल घुमन्तू सरदार चीन-सम्राट् का दामाद बनना अपना हक समझते थे। खातून खाकान की भेंट के लिये सम्राट् की ओर से अपने साथ बीस हजार थान रेशम लायी। उडगुर अपनी शक्ति को जानते थे, फिर शान दिखाने से क्यो बाज आते? चीन के सीमान्तो की मडियो में वह अपने घोडो और दूसरे जानवरो को ब्रेचने के लिये ले गये। उन्होंने प्रत्येक घोडे का ४० थान रेशम मागा। बीस से तीस हजार तक घोडे वहाँ आ चुके थे। यह माग बहुत ही अन्यायपूर्ण थी, लेकिन चीन मजबूर था। उसे दस हजार और घोडे लेने पडे। अभागे सम्राट् ताङ्ग-चुङ्ग ने पहिले ही से उत्पीडित प्रजा से अत्याचार-पूर्वक और अधिक पैसा जमा करना पसंद नहीं करना चाहा, इसलिये वह सुलह करने के लिये मजबूर हुआ। लडाई का सबसे बड़ा कष्ट तो लोगो को ही भुगतना था। उडगुर चीनी प्रजा और उनके शासको को बड़ी नीची निगाह से देखते थे। एक उडगुर ने किसी चीनी को मार डाला। उसे उडगुरो के डर के मारे मुकद्दमा चलाये बिना ही माफ कर दिया गया, जबकि उसके दूसरे

साथी उसे जबर्दस्ती छुड़ा ले गये। ७७८ ई० में उइगुरो ने फिर लूट-मार मचायी। उनके विरुद्ध आई सेनाको हार खाना पड़ी। नाहक में १० हजार आदमी जबह हुये। दूसरी सेना भेजी गई, जिसे कुछ सफलता मिली। इसी समय सम्राट ताइ-चुङ (७६३-८०) मर गया। उइगुर कगान के पास सूचना देने के लिये एक हिजडा दूत भेजा गया। उस समय कगान अपनी सारी सेना लिये महाप्राकार की ओर जा रहा था। उसने दूत के सलाम को भी लेने की परवाह नहीं की। कगान के एक मंत्री दुर्मोंगो ने इसका विरोध किया, किन्तु उसकी राय को भी यितिकिन ने ठुकरा दिया। इस पर दुर्मोंगो ने नाराज होकर कगान, उसके मन्त्रियों तथा दो हजार दूसरे अनुयायियों को मारकर “सयुक्त कुतुलुग विगा कगान” के नाम से अपने को उइगुरो का राजा घोषित किया।

१३ दुर्मोंगो सयुक्त कुतुलुग (७७७-७९ ई०)

नये कगान (खाकान) को नये चीन-सम्राट ते-चुग (७८०-८०५ ई०) ने बड़ी खुशी से तुरन्त दूत भेज कर कगान स्वीकार किया। उइगुरो के नौ कबीले थे, जिनमें मुख्य उइगुर कहे जानेवाले कगान के सबधी अपने को बड़ा समझते थे। कुछ समय बाद कितने ही उइगुर और नौ कबीलो के सरदार चीन राजधानी में एकत्रित की हुई सपत्ति को ले उत्तर में अपने देश को लौट रहे थे। उनकी ऊटो की जमात में बड़ी चतुराई से कुछ लूटी हुई लड़किया छिपाई गई थी। सीमान्त के अफसर ने बरछी से कोचकर छल को पकड़ लिया। अपराधी नौ कबीलो ने कुछ करना अच्छा नहीं समझा, क्योंकि उन्होंने अभी सुना था, कि दो हजार अनुयायियों के साथ पहिले कगान को मार कर दुर्मोंगो कगान बना है। उधर जाने पर उनपर भी आफत आती, इसलिये अपने सभी उइगुर सरदारों को मार कर उन्होंने ताइ-चाऊ में स्थिति सीमान्त राज्यपाल चाङ-क्वाङ-सेंग के पास जाकर चीन की अधीनता स्वीकार की। सरदारों का यही कसूर था, कि वह उनका ऐसा करना पसंद नहीं करते थे। राज्यपाल ने इसे पसंद किया और सम्राट के पास स्वीकृति के लिये सिफारिश करते लिखा—इन नौ कबीलों के हट जानेपर उइगुरो की शक्ति मजबूत नहीं रह जायगी। साथ ही उसने दुर्व्यवहार के साथ पेश आने के लिये अपने एक अफसर को उइगुर-कगान के चाचा के पास भेजा। चाचाने उसे मारने के लिये कोड़ा उठाया। चीनी सेना घात लगाये तैयार थी। उसने उइगुरो और दूसरे तातारों (तुर्कों) को मार डाला, और एक लाख थान रेशम, कई हजार ऊँट और घोड़े अपने हाथ में कर लिये। अफसर ने सम्राट को सूचित किया—“कि उइगुरो ने एक अफसर को कोड़े मारे। उन्होंने सए (आधुनिक उलान्चेप, मंगोलिया) की भूमि लेनी चाही, इसलिये मजबूरन हमको ऐसा करना पड़ा। अब मैं लौट आ रहा हूँ।” सम्राट ने तुरन्त उस अफसर को बुला लिया और राजधानी में बराबर रहनेवाले उइगुर-दूत के पास सब बात समझाने के लिये एक दूत भेजा।

खाकान के पास खाकान पद की स्वीकृति ले जाने के लिये एक खास दूत भेजा गया, किन्तु वह दूसरे साल पहुँच सका। खाकान ने दूत को पचास दिन तक बिना देखे ही नजरबन्द रखा। इस बीच मन्त्रियों से सलाह होती रही। अन्त में दुर्मोंगो ने सदेश भेजा—“मेरे सारे लोग तुम्हारी जान लेना चाहते हैं, मैं ही केवल अपवाद हूँ। लेकिन मेरा चचा और उसके साथी अब मर चुके हैं, इसलिए तुम्हें मारना केवल खून से खून धोना होगा, जो कि सदा के लिये और भी मलिनता पैदा करनी होगी। मैं पानी से खून धोना अच्छा समझता हूँ। मेरा कहना है, कि

४. तरस (७८९ -)

दुमोंगोके बाद उसका भाई तरस कगान हुआ। ७५१-७६६ ई० में तिब्बती भी इतने शक्ति-संपन्न थे, कि उन्होंने कासू से उरुमची और बकुल लेते हुए सारी तरिम-उपत्यका को अपने हाथ में कर लिया। इस समय रेशमपथ उनके हाथ में चला गया और चीन से पश्चिम का सबध उइगुर भूमिके रास्ते रह गया। उइगुर मनमानी कर वसूल करके काफिलों को जाने देते। शादो तिब्बतियों के हाथ में चला गया था। उइगुरों ने उरुमची लेने की बहुत कोशिश की, लेकिन सफल नहीं हुए। उनके पश्चिम में करलुग सप्तनद में बलवान होते जा रहे थे, इसलिए उइगुरों को दक्षिण की ओर ही बढ़ने का रास्ता था।

५ आचो (-७९५ ई०)

तरस के मरने पर उसका भतीजा आचो गद्दी पर बैठा। करलोग इस वक्त बहुत सबल हो गये थे। चूनदी के ऊपरी भाग में उनकी राजधानी इसिबालिक थी, जहाँ उनके यबगू की गोचर-भूमि थी। आचो करलुगो और दक्षिण में तरिम-उपत्यका के स्वामी तिब्बतियों से भी सघर्ष करता रहा। ७९५ ई० में वह निस्सतान मरा।

६ कुतुलग (७९५-८०८ ई०)

हूणो, तद्वशज अबारो, तुर्कों, उइगुरों तथा दूसरी घुमन्तू जातियों में राजशक्ति व्यक्ति में नहीं उर्दू (जन) में केन्द्रित होती थी, इसलिए उनके कगान (खान) के मरने या पकड़े जाने से जातिका सर्वनाश नहीं हो सकता था। चीन ने कितनी ही बार उन्हें उछिन्न सा करके छोड़ा, किन्तु वह चरी हुई दूब की तरह कुछ ही समय में फिर हरे-भरे हो जाते थे। आचो की जगह पर उर्दू ने उसके मंत्री कुतुलग को कगान चुना। इस कगान का चीन में अच्छा स्वागत हुआ। इसके समय मानी-धर्म के प्रचारक राजधानी कराखोजामें आये। कगान ने उनका अच्छा स्वागत किया। दो सौ बरस बाद भी राजधानी में मानी-धर्म के मंदिर मौजूद थे।

७. काउ-साङ (८०८-८२१ ई०)

८०८ ई० में उइगुरों का यह नया खाकान था, जिसने चीन से ब्याहके लिये राजकन्या मागी। चीन-दरबार ने सोचा, इस तरह के सबध से हमारे लाभ की बात यह होगी, कि उइगुरों और तिब्बतियों का झगडा चलता रहेगा, और तिब्बती हमारी तरफ मुह उठाकर नहीं देख सकेगे। लेकिन इस सलाह को सम्राट् स्यान्-चुङ ने नहीं माना। ८२१ में राजकन्या के लिये और दवाव पडा, इसपर नये सम्राट् मू-चूङ (८२१-२५ ई०) ने राजकन्या भेजी, किन्तु तब तक काउ-साङ मर चुका था, इसलिए यह भेट उसके उत्तराधिकारी को मिली।

८ गुदुलग जिगिन (८२१-२४ ई०)

घुमन्तुओं को हाथ में रखने के लिये जहाँ चीन-दरबार उनके पास रेशम के थान और सोना भेजता था, वहाँ राजकन्या देकर दामाद बनाना भी उसकी एक पुरानी नीति

थी। ऐसी कन्याये अधिकतर सम्राट् की पुत्री क्या सम्राट्-वंश की भी नहीं होती थी। इसके लिये सारे देशसे सुन्दर तरुणियाँ एकट्ठा करके रखी जाती थी। किन्तु अबके राजकन्या असली सम्राट्-पुत्री थी। इसके लिये धन्यवाद देने और राजकन्याको लानेके लिये अभूतपूर्व साज-सज्जा के साथ दून-मडल भेजा गया। इस स्वागत-मंडलीमें कबीलोके दो हजार सरदार सम्मिलित थे। वह अपने साथ बीस हजार घोड़े एक हजार ऊट भेटके लिये लाये थे। इतनी बड़ी पल्टनको राजधानीमें आनेकी इजाजत नहीं मिली, केवल पाँच सौ बराती पहुँचे, बाकी ताइयुवान फू (शानसी) में रह गये। कगानको सम्राटने एक और भी ऊँची पदवी “महामहिम धार्मिक,” की दी। खित्तन अभी इतने शक्तिशाली नहीं हुए थे। उनपर चीन और उड़गुरो की संयुक्त शक्तिका दबाव पड़ा और अन्तमें उन्होंने दोनोंकी अधिराजता स्वीकार की। थोड़े समय बाद फिर सीमान्तके लिये खित्तनोसे झगडा हुआ, पर, सम्राट् को फिर उड़गुर सेना की महंगी मदद लेनेकी इच्छा नहीं हुई। सम्राट् और कगान दोनों ८२४ई० में मर गये —कगान हत्यासे।

१९. भाई (८२४-३२ ई०)

मृतकगान के स्थानपर उसका छोटा भाई गद्दीपर बैठा, जिसकी ८३२ ई० में हत्या हो गई।

२०. भतीजा (८३२)

निहत कगानकी जगह पर उसका भतीजा गद्दीपर बैठा, किन्तु एक उड़गुर सरदारने शादो सरदार गिज़िया (सत्यवादी) से मिलकर कगानपर हमला करना चाहा, इसपर कगान ने आत्म-हत्या कर ली। अब उड़गुर राजवंशके अंतिम दिन आ गये थे, जल्दी जल्दी कगानो के मारे और बदलते जानेंसे उसकी शक्ति बहुत निर्बल हो गई।

२१ (८४० ई०)

इस कगानका नाम और समय मालूम नहीं। संभवत वह ८४० के आसपास रहा। यह पिछले कगानका सबधी नहीं था। उड़गुरोकी राजशक्ति शीघ्रतासे क्षीण होती जा रही थी, दूसरी ओर उस साल भारी हिमवर्षाके कारण उनके पशु मारे गये, फिर सूखा पड़ा, जिससे पशुओंके चरने के लिये काफी तृण नहीं रह गया। अन्तमें महामारीने अपना काम शुरू किया। उनका सबसे बड़ा धन घोडा, ऊट भेड-बकरियाँ-अधिकांश मर गये। इसी समय किर-गिज़ोसे मिलकर एक उड़गुर सरदारने सेना ले राजकीय उर्दू पर आक्रमण कर कगानको मार डाला और सारे उर्दूको नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। चीन-राजकन्या (कगानकी खान्सा) विजेताके हाथमें पड़ी। एक देरे (राजकुमार) बचे-खुचे पन्द्रह कबीलोके साथ अपने पच्छिमी पड़ोसी करलुकोकी शरणमें चला गया, बाकीमेंसे कुछ तिब्बतियोंके साथ मिल गये और कुछ करकुलके आस-पास बिखर गये। राजकीय उर्दूके पासवाले तेरह कबीले दक्षिणमें शानसीकी ओर चले गये और उन्होंने देरे ओकेको अपना कगान चुना।

२२. ओके

उइगुरोके इधर-उधर भटकनेका समय आगया विजेताके हाथमे आई चीन कुमारीको किरगिज चीन भोजना चाहते थे। इसी बीच ओकेने अवसर पा राजकुमारीको पकडनेमे सफलता पाई। इस सफलताके बाद आगे बढ़ते वह कुकुखाते (तिया-ते अथवा क्वो-ह्वाचड वर्तमान तेदुस) के पास गया, लेकिन उसका आक्रमण विफल गया। मन्त्रियोंकी इस सलाहको सम्राट्ने मान लिया कि किर्गिजको प्रोत्साहन न दिया जाय, और उसकी जगह जाचके लिये आयोग भेजा जाय। राजकुमारीने भी सदेश भेजा—चूँकि अब ओके कगान है, इसलिए मैं उसकी खातून (रानी) होना चाहती हूँ। चीनियोंमें शायद इसी समय स्त्रियोंके पैर बाधनेका रवाज हुआ, जिसमें चीनी स्त्रियोंको “तुर्कोंके साथ भागने” का मौका न मिले। सम्राट्ने नये कगानको अपना दामाद माना, फिर उसके उर्दूकी तकलीफ दूर करना भी आवश्यक था, इसलिये उसके पास पाच-हजार टन अनाज भेजा। ओकेने प्रार्थना की—हमें ताइ-चू (तेदुस और पेकिंगके बीच) में रहनेकी आज्ञा दी जाय, जिसे स्वीकार नहीं किया गया। उइगुरोके कितने ही कबीले खित्तन कबीलोमें जाके मिल गये। ओकेने अपने उर्दूको ता-तुग-फूके उत्तरी पर्वतोमें रक्खा। अब भी उसके पास लाख आदमीसे कम नहीं थे। अपनी गुजर-बसरके लिये कगानने सम्राट्से तेदुस नगर उधारके तौर पर मागा। इन्कार करनेपर उसने सारे प्रदेशमें लूटमार मचा दी। लेकिन उइगुरोमें अब पूरी फूट थी। एक उइगुर सरदार ऊमुज़ने ओकेको दबानेमें चीनकी सहायता की। रातको कगानके उर्दूपर आक्रमण कर तीस हजार बंदी बनाये, जिसमें चीनी राजकुमारी भी थी। ओके ने निकल भागने में सफल हो जाकर करा-किरगिज कबीलेमें शरण ली, जिसने रिस्वतके लोभमें उसे मार डाला।

२३. ओ-नेयन (८४७)

यह ओकेके स्थानपर नया कगान हुआ, किन्तु उसके उर्दूमें सिर्फ पाच हजार लोग थे। घेई (खेली) ने धोखा दे उसे अपना कगान बनाना चाहा, लेकिन ८४७ ई० में चीनने घेइयोको तहस-नहस कर दिया। बचे-खुचे घेई अपने बंधु खित्तनोके पास चले गये, जो एक नये साम्राज्यकी नींव डाल रहे थे। अब इस प्रदेशमें बहुत कम उइगुर थे, उच्च वर्गके केवल तीन सौ परिवार बचे हुए थे। उन्होंने जाकर शिरवी कबीलेके पास शरण ली। सम्राट्ने शिरवियोंसे कगानको समर्पण करनेकी मांग की, इसलिये कगान अपने लोगोंको उनके भागपर छोड़ स्वयं अपनी खातून, पुत्र और दूसरे नौ सवारोंके साथ भाग कर करलुकोमें चला गया। शिरवी बाकी बचे उइगुरोको अपना दास बनाना चाहते थे, लेकिन किरगिज दावेदार सत्तर हजार सेना लेकर चढ़ आये और उइगुरोको पकडकर गोबीके उत्तरकी ओर ले गये। वहासे वह दूसरे छोट-मोटे कबीलोंकी लूट-मारसे जीते, छोटी-छोटी टुकड़ियोंमें बँट अन्तमें अपने कबीलेकी दूसरी शाखामें जा मिले, जो उस समय तुर्कोंकी पुरानी जन्मभूमि (खाङ-चाउ-फू) के आसपास रहती थी।

§४. अन्तिम उइगुर

पश्चिमी तुर्क जब छिन्न-भिन्न हो गये, तो बूकिनके उर्दूके कुछ लोग भागकर उइगुरोमें जा मिले। जब किरगिजोंने उइगुरोको ध्वस्त किया, तो इन्होंने बरकुल के आसपासकी भूमिमें

जाकर शरण ली। यह कुछ समय हरामर (कराशर) में रहे। फिर अपने देरे (राजकुमार) के साथ फा-ते-ले ((खाड चाउ) पहुँचे। इनकी हीन अवस्था देखकर सम्राट् स्वेन-चुड (८४७-६०) को दया आई और उसने इनके सरदारको कगानकी उपाधि देनेके लिये दूत भेजा।

स्वेन-चुडके उत्तराधिकारी ई-चुग (८६०-७४ ई०) के समय यह पश्चिमी उडगुर इतने मजबूत हो गये, कि ८६६ ई० में इनके सेनापति बुक्कूने उडगुर तथा दूसरे कबीलोकी सेना ले तिब्बतियोंको कान्सू और कूचा आदि नगरोंको छोड़कर भागनेके लिये मजबूर किया, और तिब्बती राज्यपाल (क-लोन) के सिरको काटकर सम्राट् के पास चीन भेज दिया। लेकिन अब थाङ्क-वश भी समाप्तिपर आया था, और ९०४ ई० में उसकी जगह पाच राजवंश लेनेवाले थे। यद्यपि ८६६ ईसवीमें कूचा ओर उसके आसपासके नगरोंसे तिब्बती भगा दिये गये, किन्तु कोकोनोर प्रदेशमें वह कई सदिया पीछे तक रहे।

८६६ की इस भारी विजय—जिसमें उन्होंने दीर्घकालसे तरिम-उपत्यकाके शासक तिब्बतियोंको हराकर भगाया—के बाद इतिहासमें उडगुरोका नाम बहुत कम सुनाई देता है। नवी सदीके अंतके चीनी अभिलेखोंसे पता लगता है, कि वह इस सदीके अन्तमें सैनिक सेवा करते थे, कभी कभी चीनके सीमान्ती नगरोंमें घोंडो और बहुमूल्य रत्नोंको चाय और रेशम आदिसे बदलनेके लिये आते थे। पचवशी कालमें वह कर भेंट देनेके लिये दरबारमें आत थे और चीनको मामा कहते, क्योंकि थाङ्क-वशन अपनी कई कन्याये उडगुर कगानोंको दी थी। नवी शताब्दीमें उडगुरोका प्रभुत्व तुरफानसे ह्वाङ्क-होके मुडावके पास तक था, किन्तु अब इनके दो केन्द्र थे—(१) पीयाङ्क जो कि तुफानके पास पूरबमें था और (२) खाङ्क-चाउ, जो कोकोनोरके उत्तरमें था। खाङ्कचाउवाले नजदीक पड़ने थे, इसलिये वह चीनमें अधिक पहुँचते थे। चीनी अभिलेखोंसे पता लगता है, कि ९११ ई० में उडगुरोने दरबारमें भेंट भेजी थी। फिर एक उडगुर सरदारने भेंट भेजी, जिसका चीनी नाम वाङ्क-चेङ्क-मे था। उसे कगानकी पदवी देनेके लिये चीनसे दूत भेजा गया, किन्तु पहुँचनेके समय तक वह मर चुका था और उसकी जगह उसका छोटा भाई चाङ्क-तेगिन शासन कर रहा था।

आतुर्युक (९२६ ई०)

९२६ ई० में आतुर्युकको कगान देखा जाता है। ९२७ ई० में एक दूसरा स्थानापन्न कगान वाङ्क-चेन्-यू ने अपनी भेंट भेजी, जिसे माउ-किरे (द्वितीय शादा सम्राट् मागचुग ९२६) ने कगानकी उपाधि प्रदान की। यह स्थानापन्न ९६० ई० तक शासन करता रहा। ९६२ में उसके पुत्रने भेंट भेजी थी। यह कगान जिस प्रदेशमें रहते थे, उसके बारेमें चीनियोंने लिखा है, कि वहाँ बहुमूल्य पाषाण, जंगली घोड़े, एक कौहानी ऊँट, हरिन, सोहागा, हीरा, कपास, घोडेके चमड़े, अनाज में गेहूँ, जौ, पीली भाग, (मोम) प्याज आदि होता है। वह लोग खेतकी जोताई ऊँटसे करते हैं। खान ऊँचे महलमें रहता है। उसकी पत्नीको देवी (दिव्य कुमारी) कहा जाता है और मन्त्रीको मेयलुक। दरबारमें सिर नगा करके जाना पड़ता है—हूणोंमें भी यह रवाज था। इनकी स्त्रिया सिरके ऊपर पाच-छ इंचका जूडा चादपर बाध लाल रेशमी थैलेमें समेटकर रखती हैं। विवाहिता स्त्रिया सिरपर नमदेकी टोपी लगाती हैं।

९६४, ९६५ में उडगुरोने चीन (सुङ्ग) दरबारमें भेंटके साथ दूत भेजा था। भेंटमें रत्न, अम्बर, चमरीकी पूछ और समूर थे।

९७७ ई० में उइगुर कगानका राज्य कोकोनोर और लोबनोर सरोवरोंके उत्तरमें तुर्फानसे खड़-सा-चाउ तक था अर्थात् यूचियोकी पुरानी भूमि अब उइगुरोंके हाथमें थी। चीन सम्राटने इसी समय हुकम दिया था, कि हमारे दामाद उइगुर खाकान खान्-सा-चाउको पैसा भेजना चाहिये, जिसमें वह अच्छे घोड़ों और बहुमूल्य रत्नोंको हमारे उपयोगके लिये भेजे।

९८८ ई० में कुछ उइगुर परिवार राजाको मार उच्च अफसरोके साथ आलाशान-पर्वतके पास बसनेके लिये आये, किन्तु उनके पास उर्दू नहीं था।

९९६ ई० में खान्-चान कगानने हिया के तगूतो (अमदुओ) के विरुद्ध लड़नेके लिये अपनी सेवायें चीन-सम्राटको पेश की। तोबा (सियन्पी) राजवशकी सतान हिया-राजवशने ८९० से तब तक अपने स्वतंत्र अस्तित्वको कायम रखा, जब तक कि चिङगिस खान्ने उसे १३ वी सदीके आरम्भमें बड़ी क्रूरताके साथ नष्ट नहीं कर दिया। ९९६ ई० के थोड़े ही बाद हियाने खान्-चानको खतम कर ले लिया।

१००१ ई० में उइगुर खाकानकी भेट चीन आयी। उसके दूतने कहा था—हमारा राज्य ह्वाङ-होके पश्चिममें सुङ-साङ (इस्सिकुल से पूरबके हिमपर्वत) तक अवस्थित है—अर्थात् पश्चिममें सुङ-सानसे पूरबमें ह्वाङ-हो तक उस वक्त उइगुर शासन करते थे, किन्तु उसका यह अर्थ नहीं कि इस विशाल प्रदेशमें सैकड़ों छोटी-छोटी अधीन रियासते नहीं थी। शायद यह कगान बोगरा खान हाऊन रहा हो। उइगुरों, करलुको और कराखानियोंका सबध ऐसा था, जिसके कारण कोई भी अपनेको उइगुर या गूज कह सकता था। बोगरा खानकी राजधानी बलाशागुन (सूजिया) थी। वह काशगरसे चीनके सीमान्त तक शासन करता था। १००४में भी चीन में भेट पहुची थी। १००७ में भेट लेकर जो दूत-मंडल गया था, उसके साथ एक बौद्ध भिक्षु भी था, जो चीन राजधानीमें सम्राटकी दीर्घायु-प्रार्थनाके लिये एक बौद्ध मंदिर बनाना चाहता था। लेकिन आरम्भिक सुङ सम्राट बौद्ध धर्मको प्रोत्साहन नहीं देना चाहते थे, इसलिये स्वीकृति नहीं मिली। इस समय सुङ-वंशके उत्तरमें मंगोलिया, मचूरिया और उत्तर-पूर्वी चीन लिये हुए खित्तनोका शक्तिशाली साम्राज्य कायम था। इसी वंशके कारण चीनका दूसरा नाम खिताई पडा। खित्तनके लेखानुसार १००१ ई० में एक भारतीय भिक्षु फाङ-साङ (संस्कृत-भिक्षु)—जो एक प्रसिद्ध वैद्य भी था—को उइगुरोंने खित्तन दरबारमें भेजा था। १००८ ई० में फिर भेट आई और १०११ ई० की भेट भेजते हुए उइगुरोंने शानसी प्रदेशके आधुनिक ऊ-चाउ-फू (नगर) में एक बौद्ध मंदिर बनानेकी प्रार्थना की थी। इससे पता लगता है कि ग्यारहवीं शताब्दीके आरम्भमें पूर्वी मध्य-एशियामें बौद्धधर्म प्रभाव रखता था। १०१८ और १०२१ में भी उइगुर चीन दरबारमें भेट भेजते रहते थे। संभवतः ग्यारहवीं सदीमें भी वह घुमन्तू जीवन बिताते थे। बारहवीं सदीमें वह स्थायी निवासी बनकर रहने लगे और शानसी प्रदेश तथा आसपासमें व्यापार करनेके लिये अपना वणिक्-मंडल भेजते थे। उन्हें तगूतो (अमदुओ) के राज्यसे गुजरना पड़ता था। खित्तन सम्राट कचाऊ, शाचाऊ, हाचाऊ और असाला (अरसलन) के निवासी उइगुरोंको अपनी प्रजा कहते थे।

स्रोत-ग्रन्थ :

१ ओर्चेक इस्तोरिड तुर्कमेन्स्कवो नरोद (व० व० बरतोल्द, १९२४)

- २ कल्कि० सोओव् इचेनिये
- ३ ओचेर्क इस्तोरिड् सेमिरेच्या (व०व० बरतोल्द, बेर्नी १८९८)
- 4 A thousand years of Tatars (E H Parker, Shanghai 1895)
- 5 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Baitold)
- 6 Tibetan Documents concerning Chinese Turkistan, (F W
Thomes J R A S 1934)
- 7 History of Bokhara (A Vambéry)

अध्याय २

करलुक (७३६-६४० ई०)

१ करलुक (करलोग) जाति

करलुकका अर्थ है हिम-पुरुष^१ या हिमालका राजा। यह भी आगूजोंके पाच तुर्कोंमेंसे एक तथा उइगुरोंकी तीसरी शाखा थे, जो अल्ताई और त्यान्शान्के हिम-पर्वतोंमें रहनेके कारण इस नामसे मशहूर हुये। इनकी राजधानी अल्मालिक थी। ७६६ ई० में करलुकोने सुयाबको अपने हाथमें कर लिया। करलुको और उनकी ज्येष्ठ शाखा उइगुरोंमें सघर्ष चलता रहता था, यह हम बतला चुके हैं। पश्चिमी तुर्क साम्राज्यके पतनके बाद तुर्कवंश छिन्न-भिन्न हो गया। इसी वक्त तुर्कोंके अलग अलग कबीलोंने अलग-अलग नाम स्वीकार किये, जिन्हे ही मोगिल्यानके शिलालेख में नौ आगूज कहा गया है। चीनके अभिलेखोंमें पश्चिमी तुर्कोंकी दस शाखाये बतलायी गई हैं। शातो वह तुर्क थे, जो पथरीली भूमिमें रहते थे। एक शाखाने पूर्वी-तुर्किस्तानमें स्थान ग्रहण किया था, इनको चीनियोंने तुर्क या दूसरे नामसे याद किया है, और इन्हींको अरब-इतिहासकार ताकुज-आगूज कहते हैं। इनकी एक शाखाने दक्षिण में अपना राज्य स्थापित किया, जिसका केन्द्र निम्न-सिर-दरिया तक था। आज भी किरगिजोंमें याफेतके पुत्र त्युर्ककी पौराणिक कथा मशहूर है, जो इस्सिकुलके किनारे रहता था। सप्तनदमें त्युर्गिश शाखाके दो वंश तस्ती और आजी रहते थे।

८ वी सदीके उत्तरार्धमें सप्तनदमें करलुकोकी प्रधानता थी, जो कि अल्ताई की हिम-पर्वतमालासे यहा आये थे। ७६६ ई० में इन्होंने सुयाबको लेकर वहा अपनी एक राजधानी बनाई। करलुकोने अपने राजाकी उपाधि जबगू स्वीकार की थी, जो ही ओर्खोनके अभिलेखका यवगू है।

जिस वक्त तुर्क साम्राज्यका पतन हुआ, उस समय पूर्वमें चीनी और पश्चिम-दक्षिणमें अरब उसके ऊपर नजर गड़ाये हुए थे, किन्तु तुर्कोंका साम्राज्य इन दोनोंके हाथमें न जाकर तुर्क जातिके ही हाथमें रहा। इनके पूर्वी भागपर उइगुरोंका अधिकार हुआ, जिनके बारेमें हम अभी कह आये हैं, और पश्चिमी भाग करलुकोके हाथ में चला गया। चीन और अरबके बीच तुर्कोंकी भूमिके लिये तलस नदीके तटपर जुलाई ७५१ ई० में भारी लड़ाई हुई। अरब सेनापति जियाद सालेह-पुत्रने तराज तक धावा मारा, जो कि अतलस (तलस) नदीके बाये तटपर था। चीनी सेनापति

^१ A thousand years of Tatar (Parker)

हाउ-स्यान्-चीन तलस पर्वतपर अपनी छावनी डाली थी—आजकल तलस नदीके पुराने नगरोंके ध्वस किरगिजिस्तान गणराज्यमें पाये जाते हैं। चीनियोंकी हार हुई, जिसके कारण जहाँ चीनका उभय मध्य-एशिया पर अधिकार न हो पाया, वहाँ अरबोंकी शक्ति भी इतनी क्षीण हो गई, कि वह तलससे आगे नहीं बढ़ सके। दोनोंके झगड़ेमें करलुक अपना राज्य स्थापित करनेमें सफल हुए। हा, इतना जरूर हुआ कि अरबोंने फरगाना-उपत्यकासे करलुकोको भगा दिया। सोगदियोंका व्यापारिक प्रभाव तब भी अक्षुण्ण रहा। उन्होंने पहिले से ही चीनके पश्चिमी सीमान्त से सारे रेशमपथपर अपना अधिकार जमा रखा था। जगह जगह उनके अपने उपनिवेश थे। तुर्क, उइगुर या करलुक लोग अरबोंकी तरह धर्मान्धताके शिकार नहीं थे, इसलिये उनके यहाँ सोगदी लोग, जर्थुस्ती, मानी या दूसरे धर्मको स्वतंत्रतापूर्वक मान सकते थे। मुसलमान प्रचारक भी वहाँ पहुँचते थे। दसवीं शताब्दीके एक फारसी भूगोलज्ञ के कथनानुसार कास्तिक जोत से उत्तरमें अवस्थित बेकलिंग (बेकलीलिंग) सोगदियोंका एक अच्छा नगर था, जिसे सोगदी भाषामें सेमिकना कहते थे।^१

करलुक जबगुओंके नाम अधिकतर मालूम नहीं हैं। चीनके साथ इनका कोई सबंध नहीं था। अरबोंमें प्रतिद्वंद्विता जरूर थी, किन्तु वह स्थानीय शासक को ही करलुकोका राजा मान लेते थे।

२ धर्म

करलुक भूमिमें करलुक तुर्कोंके अतिरिक्त सोगदी भी रहते थे। बूसुन और शकोके अवशेष सोगदियोंको अपना नजदीकी समझकर उन्हींमें मिल गये और अब सभी सोगदी नामसे प्रसिद्ध थे। सोगदियोंके अतिरिक्त घुमन्तू करलुक और दूसरे तुर्क भी उनके राज्यमें रहते थे। तुर्कोंमें बौद्ध अधिक थे, पर नेस्तोरियो और मानी धर्मानुयायियोंकी भी कमी नहीं थी। उनके बहुतसे नगरोंमें ईसाइयो (नेस्तोरियो) का होना मुसलिम लेखकोंके ग्रन्थोंमें भी पाया जाता है। इस्सिकुलके पास जिकिलया घुमन्तू रहते थे, जिनमें ईसाई धर्मके अनुयायी काफी थे। वस्तुतः इस्लामके पहुँचनेसे पहिले इन जातियोंमें अपनी जातीयता और धर्मको एक नहीं किया गया था। मुसलमान लेखकोंके कहनेसे पता लगता है, कि तत्कालीन करलुक जबगूने खलीफा मेहदी (७७५-८५ ई०) के पास पहिले-पहल इस्लाम स्वीकार किया, लेकिन यह सदिग्ध है। तो भी दसवीं सदीमें तलस नदीसे पूर्व अर्थात् करलुकोकी भूमिमें जामामस्जिदे मौजूद थी। करलुक पहिले पशुपाल, शिकारी घुमन्तू थे, अब कुछ खेती-किसानी भी करने लगे थे। दसवीं सदीमें ताकुज-आगुजोंकी शाखाओंमें करलुक बड़े शक्तिशाली थे। उस समय उनके कगान (यबगू) सरदार तथा लोग अधिकतर मानीका धर्म मानते थे, किन्तु उनके भीतर नेस्तोरी, बौद्ध और मुसलमान भी थे। करलुकोका नगर वर्मखान पीछे दसवीं सदीमें ताकुज-आगुजों (कराखानियों) के हाथमें चला गया। उनके अतिरिक्त पेन्चुल (आधुनिक आकसू) भी करलुकोके हाथमें, पीछे कमजोर होनेपर कराखानियोंके अधीन, पीछे इसे किरगिजोंने ले लिया। यह याद रखना

^१ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्ये (व० बरतोल्द)

चाहिये कि इससे पहिले किरगिज ऊपरी एनेसेइ उपत्यकामे रहते थे, जहा आठवी सदीमे भी उनके पूर्वज घुमन्तुओका निवास था। दसवी सदीमे हर तीसरे साल इनका कारवा रेशमके व्यापारके लिये कूचासे होकर गुजरता था। यही किरगिज, अरब, करलुक और तिब्बती व्यापारी इकट्ठा होते थे। आखिरमे किरगिज ताकुज-आगुजोके विरोधी बन करलुकोके साथ हो गये, जिसके फलस्वरूप सप्तनदका एक भाग किरगिजोको मिल गया। यदि कराखानियोके समय किरगिज सप्तनदमे आये, तो दसवी या ग्यारहवी सदीमे उन्होने इस्लाम धर्मको स्वीकार कर लिया था, जिसके अनुयायी आज भी उनके वंशज कजाक और किरगिज हैं। लेकिन सोलहवी सदीमे भी उनके भीतर काफिरका होना मुस्लिम लेखक बतलाते हैं।

अन्तिम समयमे करलुकोका केन्द्र चू-उपत्यका ९४० ईसवी के आस-पास उनके दुश्मन “काफिर तुर्को” (कराखानियो) के हाथमे चला गया, जिनका ग्यारहवी और बारहवी सदीमे बड़ा प्रभाव था। चू-उपत्यकामे बलाशागून (सूजिया) इनकी राजधानी रही।

३ करलुकोके नगर

करलुक शासक यद्यपि अधिकतर घुमन्तू जीवन बिताते थे, किन्तु उनके लिये आमदनीके और भी रास्ते खुले हुए थे, विशेषकर वणिक्-पथपर बसे उनके नगर बड़े ही महत्वके थे। चीनसे पश्चिमी एशिया और यूरोपकी ओर जानेवाला एक वणिक्-पथ सप्तनद होकर जाता था, जिसके ऊपर निम्न नगर करलुकोके अधीन थे।—

जुल्—यह आधुनिक पिसपकके आस-पास था। रेशम-पथ यहा तराज (तलश, जिला औलियाअता) और आसीकित (नमगान जिला) होते कराकुल डाडेसे आता था। चुल या जूल तुर्की भाषामे मरुभूमि को कहते हैं।

नेवाकित्—यह चू-उपत्यकाका सबसे बड़ा व्यापारिक नगर था। यहासे एक रास्ता जिल-अरिक होता इस्सिकुलके तटपर पहुंचता था, और दूसरा उत्तर की ओर स्याव जाता था। जुलसे नेवाकित् पन्द्रह फर्सख^१ था। नेवाकित् वहा था, जहासे रास्ता चू-नदीके बाये किनारे हो करावुलकको जाता था। इस्सिकुल सरोवरके किनारे करलुक लोगोके निवास और गोचर-भूमिया थी।

किरमिनकित् (कुवैरकित्)—नेवाकित् और दरेंके बीच यह बड़ा व्यापारिक नगर था। यहा करलुकोका लवान कबीला रहता था, जिसके शासककी उपाधि कु-तेगिन-लवान और दरेंका नाम जुल (सकीर्ण दर्रा) था।

यार—जुलसे बारह फर्सख (प्रायः सत्तर मील) दक्षिणमे यह नगर था, जहा पर तीन हजार करलुक सैनिक रहते थे। यही शायद इस्सिकुलके दक्षिण तट पर जिकिल के शासक तैवसनकी राजधानी अवस्थित थी।

तोन्—यारसे पांच फर्सख (प्रायः तीस मील) इसी नामकी नदीपर यह नगर अवस्थित था।

बरसखान—तोन्से तीन दिनके रास्तेपर यह बड़ा नगर था। इन दोनों नगरोके बीचमे जिकिल

^१फर्सख = ६ वर्स्ते = ६ मील = १६०० हाथ (?)

कबीलेके लोगोके तबू होते थे। इस नगरका नाम आज भी बरसकोन नदीके नामसे सुरक्षित है। इस नगर के आस-पास चार बड़े और पाच छोटे गाव थे। नगरमें ६ हजार सैनिक रहते थे। यहाके शासककी उपाधि मनक (तेविन) बरसखान थी। दसवीं शताब्दीके अरब भूगोलज्ञोंके अनुसार बरसखानका मनक करलुक-वशी था, किन्तु पीछे यह ताकुज-आगुजोके पक्षमें हो गया। पूर्वी और पश्चिमी तुर्किस्तानके वाणिज्यके लिये इस नगरका बड़ा महत्व था। इस खानके पुत्रका नाम भी बरसखान था। उजगेद (फरगाना) से बणिक्-पथ यासी (जार्ज) जोत पार हो अरपा और करा-कोइन, अतवास तथा नरिनकी उपत्यकाओंमें होते यहा आता था। नेवाकत्से सुयाब होते हुए भी एक रास्ता यहा पहुंचता था।

अतवास—कराकोइन और अतवास नदियोंके सगमके पास पहाड़में यह नगर अवस्थित था। आजकल इसे कोशोइ-कुरगान कहते हैं। यह फरगाना, बरसखान और पूर्वी तुर्किस्तानकी सीमासे छ दिनके रास्तेपर था। निब्वती शासित इलाकेका रास्ता तुरगंत जोत पार होकर जाता था। अतवास और बरसखानके बीच कोई बस्ती नहीं थी। सप्तनदका दक्षिणी भाग ताकुज-आगुजोकी लड़ाईमें यागमा लोगोके हाथोंमें चला गया, जिनके ही हाथमें काशगर भी था। करलुक और यागमा लोगोकी सीमा नरिन नदी थी।

सुयाब—यह करलुक-भूमिका बड़ा ही महत्वपूर्ण नगर चून-नदीसे उत्तर नेवाकत्से तीन फरसख (१८ मील) पर अवस्थित, आजकलका करावुलक है। यहाका शासक करलुक कगानका भाई होता था, जिसकी पदवी यानालूशा थी। उसके पास बीस हजार सैनिक थे।

पजीकत्—सुयाबके रास्तेपर नेवाकत्से एक फरसख (६ मील) पर यह नगर अवस्थित था। यहा आठ हजार करलुक सैनिक रहते थे।

बैकलिग—इसे बैकलीलिग भी कहते हैं। कस्तिक जोतमें उतरकर यहा पहुंचते थे। यहाके शासक की उपाधि वदान-शगु, दूसरी उपाधि यनल-तैमिना भी थी। इसके पास तीन हजार सैनिक और नगरके भी सात हजार सैनिक रहते थे। बणिक्-सार्थ (कारवा) सुयाबसे बरसखान पन्द्रह ओर डाक तीन दिनमें पहुंचती थी। कस्तिक द्वारा जानेवाला रास्ता इली पार होते अलाताउ और किजिलकिया जोत से कराकोल, जहासे इस्सिकुलके उत्तरी तटसे होकर जिकलोकी भूमिमें पहुंचता था।

मिकुल—करलुकोकी भूमिके सीमान्तपर यह बड़ा व्यापारिक नगर था। शायद यह तैमूरके समयका इस्सिकुल नगर हो।

स्रोत-ग्रन्थ

- १ ओचेर्क इस्तोरिड सेमिरेच्या (व० बरतोल्द, वेर्नी १८१९)
- २ Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Barthold' 1928)
- ३ A thousand years of Tatars (Parker)
- ४ आखेंआलोगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोड किर्गिजिइ (अ० न० बेर्नस्ताम, फ्रुन्जे १९४१)

भाग ६

दक्षिणापथ (६७३-९०० ई०)

(आरम्भिक इस्लाम)



अध्याय १

अरब (६७३-८१८ ई०)

६१ पैगम्बर मुहम्मद

छठी सदी के अंत में अरब के लोग बिल्कुल सस्कृति-शून्य नहीं थे। मक्का (मक्का) और मदीना के नगर व्यापारियों और सामान्त-पुजारियों के निवासस्थे। मक्का में एक पुराना मंदिर था, जिसे काबा कहते थे। मंदिर की प्रधान पूजा-मूर्ति मूर्ति नहीं, बल्कि किसी समय आकाश से गिरे उल्का-पाषाण का टुकड़ा था, जिसे हज्र-अस्वद (कृष्ण-पाषाण) कहा जाता है। इसकी उस समय बड़ी पूजा होती थी। जान पड़ता है, इसकी कीर्ति भारत तक पहुंच चुकी थी, जहां के हिंदू इसे शिव का एक प्रसिद्ध लिंग मानते थे। इसके अतिरिक्त काबा के मंदिर में लात, मनात, सूर्य (शमश) आदि बहुत सी मूर्तियां थीं। हर साल एक बहुत बड़ी यात्रा भरती थी, जिसमें अरब के कोने-कोने के लोग दर्शन-पूजा के लिये आते थे, और इसी समय एक बड़ा व्यापारिक मेला लग जाता था। मुहम्मद जिस कुलमें पैदा हुये, उसे हाशिमि खानदान कहा जाता था, क्योंकि मुहम्मद के पिता अब्दुल्ला के पिता और दादा अबुल मोतल्लब और परदादा हाशिम थे। हाशिम के पिता का नाम अब्दुल-मनात (मनातदास) था, जिससे स्पष्ट है, कि पाच ही पीढ़ी पहले मुहम्मद के पूर्वज एक काफिर देवता को परमपूज्य मानते थे। हाशिम के भाई का नाम अब्दुल शमश (सूर्यदास) था।

कुरेश वंश काबा के पड़ोस में बहुत ऊंचा स्थान रखता था। इसी वंश में ५७० ई० में मुहम्मद का जन्म हुआ। उनके पिता का नाम अब्दुल्ला और मा का नाम आमना था। अभी मुहम्मद गर्भ ही में थे, कि उनके पिता मर गये। उनकी पर्वरिश का भार दादा अब्दुलमतल्लब के ऊपर पड़ा। मक्का के खानदानी परिवारों की रीति के अनुसार गिशु मुहम्मद को भी पालने के लिये एक बहू, स्त्री हलीमा को दे दिया गया। मक्का मदीना जैसे शहरों के लोग नागरिक हो गये थे, पर आज की तरह उस समय भी बहुत से अरब कबीले घुमन्तू थे, जिन्हें बहू कहा जाता था। घुमन्तूओं के तम्बूओं में पलना शायद पौष्प और हिम्मत बढ़ा देने वाली शिक्षा का अग समझा जाता था। कहा जाता है, मुहम्मद आजन्म अनपढ़ (उम्मी) रहे। यद्यपि इसपर विश्वास कम होता है, क्योंकि वह कितने ही वर्षों तक अपनी भावी पत्नी तथा मक्का की एक बहुत धनी स्त्री खदीजा के कारवा के सरदार होकर दूसरे देशों में व्यापार करने जाते थे। उस समय यद्यपि अरब लोगों का धर्म मूर्तिपूजा था, किन्तु मक्का जैसे शहरों में मूर्तिविरोधी यहूदी और ईसाई भी रहा करते थे, और जिन देशों में व्यापार करने के लिये मुहम्मद को जाना पड़ा, वहां तो इन धर्मों

की प्रधानता थी। मुहम्मद को यहूदी और ईसाई धर्म के विद्वानों के सम्पर्क में आने का मौका मिला और मूर्तिपूजा पर उनकी श्रद्धा नहीं रह गई।

वह खदीजा के पति होकर अब मक्का के एक धनी व्यक्ति हो चुके थे, जब कि ४० वर्ष के हो जाने पर उन्होंने पैगबर होने का दावा किया। उन सप्रदायो में दीक्षित न होकर भी वह यहूदियों और ईसाइयों के धर्म में श्रद्धा रखते थे। मुहम्मद का उद्देश्य केवल धार्मिक नहीं था। यहूदी पैगबरों के बारे में भी वह जानते थे, कि धर्म और शासन दोनों को वह अपने हाथ में रखते थे। इसके अतिरिक्त वह अपनी अरब जाति की दुर्दशा से भी खिन्न थे। अरब वीर और परिश्रमी होते हुये भी आपस में खूनी लड़ाइयां लड़ते अपने को तबाह करते रहते थे। अरब के रेगिस्तान में बिखरी हुई शक्ति के महत्व को उन्होंने जल्दी समझ लिया, और यह भी देख लिया कि यहूदी पैगबरों की तरह ही एक धार्मिक-राजनीतिक व्यवस्था के आधीन एक उन्हें एकत्रित किया जा सकता है। ४० साल की उम्र तक पहुँचते उन्हें मालूम हो गया था, कि यहूदी या ईसाई जेमे पराये धर्म की सहायता से अरबों को एकता के सूत्र में नहीं बाधा जा सकता, न अरबों की राजनीतिक और सामाजिक निर्बलताओं को दूर किया जा सकता। यह प्रधान कारण था, जो कि यहूदी और ईसाई धर्म को प्रमाण मानते हुये भी मुहम्मद ने एक नये धर्म (इस्लाम) का प्रचार किया।

उसकी मुख्य शिक्षा थी मूर्ति-पूजा के खिलाफ जहाद। मक्का के पड़े भला इसे कैसे सहन करते? काबा का मंदिर उनके लिये जीविका का साधन था। उनके देवताओं को बुरा-भला कहकर मुहम्मद उनकी श्रद्धा को ठेस लगा रहे थे। विरोध होने पर भी उन्हें सफलता मिलने लगी। उनके अपने हाशिम वंश के नौजवान उनके साथ चलने के लिये तैयार हुये। मुहम्मद के चचेरे भाई तथा आबूतालिब के पुत्र अली विशेष तौर से उनके अनुरक्त थे। हाशिम के भाई अब्दुश शम्श के पुत्र उमैया की सताने भी मुहम्मद का साथ देने के लिये तैयार हुई। उनके खास चचा अब्बास के तीनों पुत्रों ने भी जल्दी ही इस्लाम को मान लिया। हाशिम वंश के अनुकूल होने पर भी मक्का में विरोध इतना बढ़ा, कि मुहम्मद और उनके मुट्ठीभर अनुयायियों को मृत्यु का डर लगने लगा और ६२२ ई० में ५२ वर्ष की उमर में उन्हें चुपके से हिजरत (प्रवास) करके मदीना में शरण लेनी पड़ी। इसके बादका जीवन उनका मदीने से सबंध रखता है।

मदीना का पुराना नाम यस्त्रिब था, किंतु नबी (पैगबर) के बस जाने के कारण उसका नाम मदीनतुन्नबी (पैगबर का नगर) पड़ा, जिसका ही संक्षेप मदीना है। पैगबर मुहम्मद की कबर मदीना में है। मक्का के काबा मंदिर की मूर्तियों को यद्यपि तोड़-फोड़कर फेंक दिया गया, किंतु वहाँ के कृष्णपाषाण के साथ अरब लोगों का इतना अधिक पूज्य भाव था, कि उसे तोड़ने या फेंकने की हिम्मत नहीं पड़ी और आज भी मुहम्मद का अनुकरण करते हुये हर एक हाजी मुसलमान उस काले पत्थर को चुम्बन देकर सम्मान प्रकट करता है। मदीना में रहने के अंतिम दस वर्ष धर्म-प्रचार के लिये ही महत्व नहीं रखते, बल्कि इसी समय मुहम्मद ने उस राजनीतिक और सामरिक शक्ति का विकास किया, जिसने पौन शताब्दी के भीतर ही सिंधु तट से स्पेन तक, सिर दरिया से नील नदी तक फैले एक विशाल साम्राज्य की स्थापना कर दी। अपने जीवन में ही मुहम्मद अरब के भिन्न-भिन्न कबीलों को इस्लाम के झण्डे के नीचे लाने में सफल हुये थे।^१

^१ दर्शन-दिग्दर्शन पृ० ४७-५४

(नई आर्थिक व्याख्या)'

चाहे तिब्बत हों या अरब, प्रायः सभी कबीला-प्रथा रखनेवाली जातियों में पशुपालन, कृषि या वाणिज्य के अतिरिक्त लूट की आमदनी (माले-गनीमत) भी वैध जीविका मानी जाती है। माले-गनीमत को बिल्कुल हराम कर देने का मतलब था, अरबों के पुराने भावपर ही नहीं, उनके आर्थिक आय के साधन पर भी हमला करना। चाहे इस तरह की आय से सभी परिवारों को सदा फायदा न पहुँचे, किंतु जूयों के पास की भाँति कभी अपनी किस्मत के पलटा खाने की आशा को तो वह छोड़ नहीं सकते थे। हजरत मुहम्मद ने 'माले-गनीमत' नाम रखते हुये भी उसे छोटी-मोटी लूट से ईरान और रोम के देश-विजय की 'भेंटों' जैसे विस्तृत अर्थ में बदलना चाहा, तो भी मालूम होता है, अरब प्रायद्वीप में यह प्रयत्न कभी सफल नहीं हुआ। वहाँ के लोगों ने माले-गनीमत का वही पुराना अर्थ माना, इसका ही परिणाम यह था, कि अरब से बाहर अन्-अरबी लोग जहाँ लूट और छपा मारी के धर्म को हटाकर शांति (इस्लाम) स्थापित करने में बहुत हद तक सफल हुये, वहाँ अरबी कबीले तरह सौ वर्ष पहिले के पुराने दस्तूर पर हाल तक कायम रहे। जो भी हो, माले-गनीमत की नई व्याख्या थी—विजय से प्राप्त होनेवाली आमदनी में से $\frac{1}{5}$ सरकारी खजाने (बैतुल-माल) को मिलना चाहिये, और बाकी योद्धाओं में बराबर बाँट देना चाहिये। विस्तृत राज्य स्थापन करने की इच्छावाले एक व्यवहार-कुशल दूरदर्शी शासक की यह सूझ थी, जिसने आर्थिक लाभ की इच्छा को जागृत रखकर, पहिले अरबी रेगिस्तान के कठोर जीवन वाले बद्ध तुरुणों और पीछे हर मुल्क के इस्लाम लानेवाले समाज में प्रताड़ित तथा कठोर जीवी लोगों को इस्लामी सेना में भर्ती होने का भारी आकर्षण पैदा किया, और साथ ही बढ़ते हुये बैतुल-माल ने एक बलशाली संगठित सैनिक-नागरिक शासन की बुनियाद रखी। माले-गनीमत के बाँटने में समानता तथा खुद अरबी कबीले के व्यक्तियों के भीतर भाई-चारे और बराबरी के ख्याल ने इस्लामी "समानता" का नमूना लोगों के सामने रखा।

माले-गनीमत की इस व्याख्या ने आर्थिक वितरण के एक नये रूप को पेश किया, जिसने कि अल्लाह के स्वर्गीय इनाम तथा अनन्त जीवन के ख्याल से उत्पन्न होने वाली निर्भीकता से मिलकर दुनिया में वह उथल-पुथल पैदा की, जिसे कि हम इस्लाम का सजीव इतिहास कहते हैं। यह सच है, कि माले-गनीमत की यह व्याख्या कितने ही अशो में दारयबहु, सिकन्दर, चन्द्रगुप्त मौर्य ही नहीं दूसरे साधारण राजाओं के विजयों में भी मानी जाती थी, किंतु वह उतनी दूर तक न जाती थी। वहाँ साधारण योद्धाओं में वितरण करते वक्त उतनी समानता का ख्याल नहीं रखा जाता था, और सबसे बढकर कभी यह थी, कि विजित जाति के साधारण निस्व लोगों को उसमें भागीदार बनने का कोई मौका न था। अरबों ने विजित जाति के अधिकांश धनी और प्रभु-वर्ग को जहाँ पामाल किया, वहाँ अपनी शरण में आनेवालों—खासकर पीड़ित वर्ग—को विजय-लाभ में साझीदार बनाने का रास्ता बिल्कुल खुला रखा। स्मरण रखना चाहिये, इस्लाम का जिससे मुकाबिला था, वह सामन्तो-पुरोहितों का शासन था, जो सामन्तशाही शोषण और दासता के आर्थिक ढाँचे पर आश्रित था। यह सही है, कि इस्लाम ने इस मौलिक आर्थिक ढाँचे को बदलना

अपना उद्देश्य कभी नहीं माना, तो भी उसके मुकाबिले में अरब में अस्थिर कबीलाशाही भ्रातृत्व और समानता को अन्-अरबों के साथ भी जरूर इस्तेमाल किया, इसीसे उसने अल्पसंख्यक शासक वर्ग के नीचे की साधारण जनता के कितने ही भाग को आकृष्ट और मुक्त करने में सफलता पाई। यद्यपि इस्लाम ने कबीले के पिछड़े हुए सामाजिक ढाँचे से यह बात ली थी, किंतु परिणामतः उसने एक प्रगतिशील शक्ति का काम किया, और सड़ाद फैलाने वाले बहुत से सामान्त परिवारों और उनके स्वार्थी को नष्टकर, हर जगह नई शक्तियों को सतह पर आने का मौका दिया। यह ठीक है कि यह शक्तियाँ भी आगे उसी “रफ्तार-बेढगी” को अख्तियार करनेवाली थी। पर दासो-दासियों को मालिक की सम्पत्ति तथा युद्ध की लूट को उचित माल बताने के लिये अकेले इस्लाम को दोष नहीं दिया जा सकता, उस वक्त का सारा सम्य ससार—चीन, भारत, ईरान, रोम—इसे अनुचित नहीं समझता था।

५२ आरम्भिक खलीफा

मक्का के निवास तक मुहम्मद एक धार्मिक प्रचारक या सुधारक मात्र थे, किंतु मदीना जाने पर उनको अपने अनुयायियों के लिये आर्थिक, सामाजिक व्यवस्थापक एवं सैनिक नेता भी बनना पड़ा, इसका ही यह परिणाम हुआ, कि उनकी मृत्यु के समय (६२२ ई०) पश्चिमी अरब के कितने ही प्रमुख कबीलों ने इस्लाम को स्वीकार किया, तथा अपनी निरकुशता को कम करके एक सगठन में बंधना चाहा। उस समय तक सारे अरबी-भाषी लोगों में इस्लाम घर कर चुका था।

हजरत मुहम्मद स्वयं राजतंत्र के विरुद्ध न थे। ईरान और रोम के शाहशाहों की प्रसिद्धि उनके कानों तक ही नहीं पहुँची थी, बल्कि व्यापार के सिलसिले में उनके राज्यों में वह जा भी चुके थे। मुहम्मद ने जर्थुस्ती ईरानी शाह और ईसाई रोमन कैसर को इस्लाम लाने के लिये दावत दी, लेकिन वह अरब के रेगिस्तान के सदेश को अवहेलना छोड़ और दूसरी दृष्टि से देख ही कैसे सकते थे? अरब में उस समय कबीलाशाही सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था चल रही थी, जिससे सादगी और जनतंत्रता अरबों के नस-नस में इतनी व्याप्ती थी, कि मुहम्मद भी उसके आकर्षण को मानने के लिये मजबूर थे। एक देश (पश्चिमी अरब, हेजाज) के शासक हो जाने के बाद भी मुहम्मद का जीवन बहुत ही सरल था। वस्तुतः मुहम्मद ने अरब के राजनीतिक विकास में यही काम किया, कि अरबीभाषी छोटे-छोटे कबीलों को विश्रुखलित और सघर्ष-मय जीवन से उठाकर एक बड़े कबीले के रूप में परिणत कर दिया। लेकिन, यह संभव नहीं था, कि अरब से बाहर पैर रखने के बाद वहाँ की भिन्न-भिन्न भाषाओं और जातियों के लोगों को एक महान् कबीले के रूप में परिणत किया जाय, अथवा सामन्तशाही युग में बहुत आगे बढ़ गये लोगों को फिर से कबीलाशाही (जन-व्यवस्था) में लौटाया जाय। यह कैसे हो सकता था, कि सिध से स्पेन तक फैले विशाल साम्राज्य पर उसके शासक बनी-उमैया कबीलाशाही शासन द्वारा राज्य करते?

पैगबर के मरने के बाद ही झगडा शुरू हो गया। हाशिम खानदान के लोग पैगबर के उत्तराधिकारी या खलीफा बनना अपना अधिकार समझते थे, लेकिन इस्लाम में तो केवल हाशिमी (अली आदि) लोग ही नहीं थे, इसलिये जिन चार खलीफों (पैगबर के उत्तराधिकारियों) के

समय प्राचीन इस्लाम अपने कबीलाशाही जनतांत्रिक रूप को थोड़ा बहुत कायम रख सका, उनमें प्रथम अबूबकर अ-हाशिमि थे ।

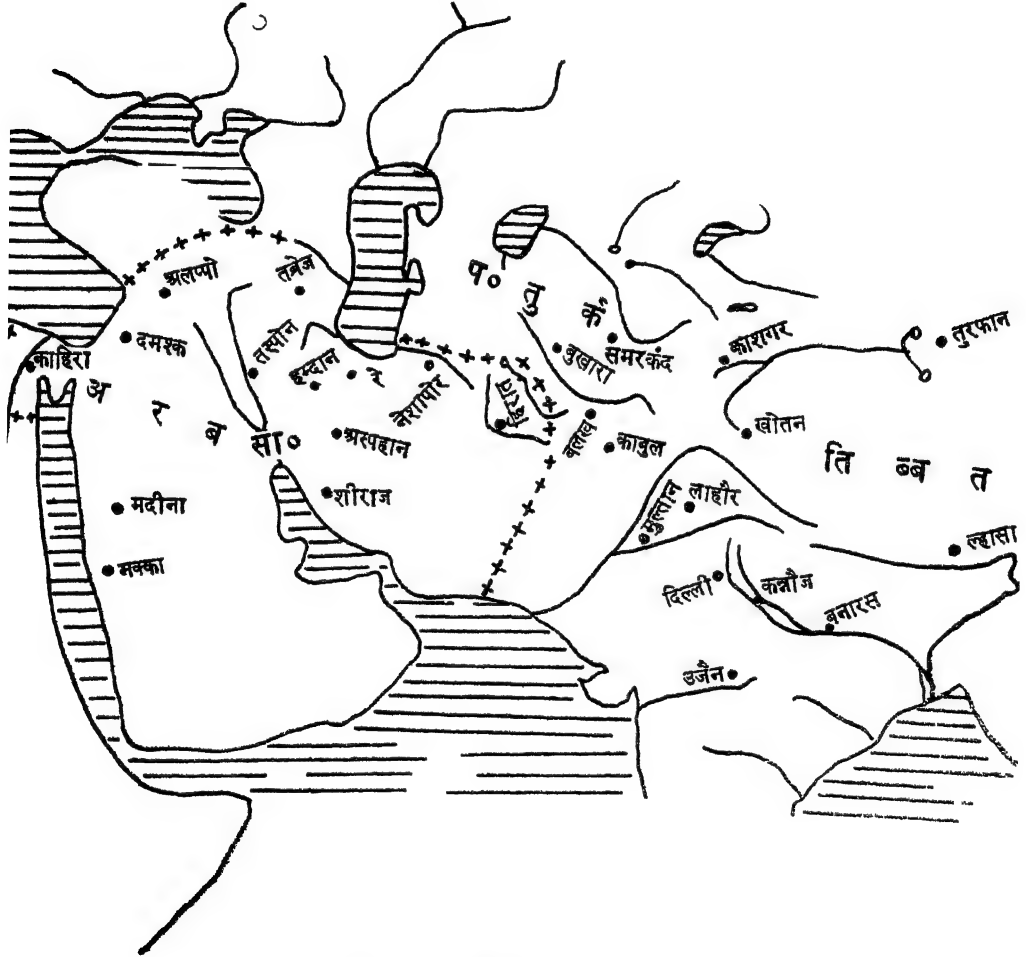
१ अबू-बकर (६३२-६४२ ई०)

मुहम्मद की कई बीबियो मेंसे एक के यह बाप और अधिक वृद्ध भी थे । इन्हीं को मुसलमानों के बहुमत ने खलीफा चुना । अबू-बकर दस साल तक शासन करते रहे । इन्हींके समय खालिद के नेतृत्व में अरब-सेना ने रोम को हराकर दमिश्क ले लिया और पहिली बार अरब के रेगिस्तानी लोगों को रोम जैसे समृद्ध और अत्यन्त सस्कृत राज्य के एक भाग पर शासन करने का मौका मिला । तभी से कबीलाशाही सादगी के स्थान पर विलासिता का आरम्भ हुआ । अबू-बकर के जमाने में सिरिया (दमिश्क) ही नहीं, बल्कि फिलस्तीन भी अरबों के हाथ में आ गया । इसी काल (६३६ ई०) में ईरान के साथ नहाबद के युद्ध में मुठभेड़ हुई, जिसमें ईरान की जबर्दस्त हार हुई । यज्दगर्द ई० सासानी वंश का अंतिम शाह उसी तरह अरबी सेना के सामने से भागता फिरा, जिस तरह हजार वर्ष पहले दारयवहु ई० अलिकुन्दर की सेना से भागता रहा । वह सीस्तान गया, वहाँ से खुरासान की ओर भागा, फिर मेर्व में शरण लेनी चाही । मेर्व तुर्कों का था । खाकान ने सुना कि सासानी शाह उसके राज्य की ओर भाग आया है, तो वह स्वयं उसे पकड़ने या शरणमें लेनेके लिये आगे दौड़ा । शायद उसे भी अरबोंका भय होगया । यज्दगर्द ने मेर्वके बाहर एक पनचक्की घरमें छिपकर जान बचानी चाही, लेकिन चक्कीवालेने उसके पास धन-ज्वेवर देखा, उसके मुहमें पानी भर आया और उसने उसे मारकर पनचक्कीकी धारमें फेंक दिया । उस वक्त मेर्वके लोग आजकी तरह तुर्क नहीं, बल्कि धर्म और भाषा दोनोंसे ईरानी थे, जो तुर्कोंके राज्यमें रहते भी अपनेको सासानियोंका सगा मानते थे । जब उन्हें चक्कीवालेके इस विश्वासघातका पता लगा, तो वह बिगड़ उठे और उन्होंने उसकी बोटी-बोटी नीच कर मार डाला । यज्दगर्दके शरीरकी मोमियाई बनाकर इस्तथ्र भेजा, जहाँ जरथुस्ती प्रथाके मुताबिक उसे दफनाया गया । नहाबद और उसके बादकी दो एक झड़पोंसे ही ईरानकी कमर टूट गई । वस्तुतः ईरानका सामाजिक ढाँचा इतना निर्बल और राजनीतिक ढाँचा इतना नीच स्वार्थपूर्ण था, कि वह जीनेपर राज्य और मरनेपर बहिश्तपरपूर्ण विश्वास रखनेवाले अरब-योद्धाओंका मुकाबिला नहीं कर सकता था । भारतकी तरह वहाँपर भी मुठ्ठी भर पुरोहित और सामन्त सर्वेसर्वा थे, दूसरे लोग नीच समझे जाते थे और उन्हें दासता या अर्धदासताका जीवन बिताना पड़ता था । दासों और अर्धदासोंके लिये इस्लामकी सामाजिक समता बहुत ही आकर्षक थी । सामन्त इतने विलासी थे, कि उनमें योद्धाकी हिम्मत नहीं रह गई थी, अथवा आपसी फूटके मारे सगठित होकर अरबोंका मुकाबिला नहीं कर सकते थे । अन्तमें उन्हें अरबोंके सामने हार स्वीकार करनी पड़ी, जिन्हें ईरानके लोग मानते थे, कि सम्यता और सस्कृतिमें हमारे सामने गिरगिटखोर अरब निरे जगली हैं ।

२ उमर (६४२-६४४ ई०)

उमर इस्लामके दूसरे खलीफा थे । इनकी भी लड़की पैगबरको ब्याही थी ।

पैगबरके धर्म और शासनको आगे बढ़ानेमें इनका काफी हाथ था। इसीलिये पैगबरकी अत्यन्त प्रिय पुत्री फातिमाके पति तथा चचेरे भाई अली को फिर वचित कर उमरको खलीफा बनाया गया। अब इस्लामका शुद्ध धार्मिक रूप लुप्त हो चुका था, और वह विश्व-विजयिनी एक जबर्दस्त सैनिक संगठनका रूप ले चुका था। हरेक अरब को पहले भी लड़नेके लिये तैयार रहना पड़ता था। एक कबीलेके किसी आदमीके मारे जानेपर दोनों कबीलोमें बदला



२६. अरबसाम्राज्य (६२२ ई०)

लेनेकी आग भड़कती पीढियों तक चली जाती। इस्लामने उसी मरने-मारनेकी भावनाको एक नई धारामें प्रवाहित कर दिया था, जिसमें अरबोंका हर एक कबीला दिल खोलकर भाग ले रहा था। यह बतला चुके हैं, कि दुनियाके और घुमन्तू कबीलोकी भांति अरब कबीले भी लूटना अपना धर्मसिद्ध अधिकार मानते थे, और यह उनकी जीविकाका साधन भी था।

इस्लामिक धर्म-विजयके नामसे वह और भी नफेमें थे, क्योंकि अब उन्हें बड़े-बड़े धनी मुल्कोंको लूटनेका मौका मिलता था—उन्हें धन मिलता, युद्धकी वदिनी स्त्रिया दासीके रूपमें मिलती और गुलाम तो इतने मिलते थे, कि राजधानी मदीनामें जिधर देखो उधर ईरानी, तुर्क या रोमन गुलाम बड़ी भारी सख्यामें दिखाई पड़ते थे। उनमेंसे बहुतसे मुसलमान भी हो जाते थे। अब इस्लाम पैगंबरके जमानेका इस्लाम नहीं था, जब कि इस्लाम स्वीकार करते ही आदमी सामाजिक समानताका अधिकारी माना जाता था। यदि अरब योद्धा लड़ाईमें जीते दाम-दासियों से कलमा पढ़ लेने मात्रसे हाथ धो बैठते, तो भला वह गाजी और जहादी होकर प्राणोको खतरमें डालना क्यों पसंद करते? जिन जातियोंसे गुलाम आते थे, वह अरबोंसे बहुत अधिक सभ्य थी। पद-पदपर अपमानित होना उन्हें असह्य था, लेकिन तलवारके डरके मारे कुछ बोल नहीं सकती थी। उमर दो ही साल तक शासक रहे। इसी २४ महीनेके शासनकी बहुत सी कहानिया सुनी जाती हैं, जिनसे उमरके सादा जीवन और न्याय-प्रियताका परिचय मिलता है। लेकिन, वह सब केवल अरबोंके लिये था, विदेशी या विजातीय मुसलमान उसके अधिकारी नहीं थे। जिन जातियों और परिवारोंके साथ अरब जहादियोंने घोर अत्याचार किया था, उनके खूनसे हाथ रंगा था, उनके आदमी भला कैसे बदला लिये बिना रह सकते थे। एक ईरानी दासने अपने परिवार या अपनी जातिपर किये गए अत्याचारका बदला लेनेके लिये उमरको मार डाला। इसकी बड़ी घोर प्रतिक्रिया हुई। अरबोंने इसका बदला सारी ईरानी जातिसे लेना चाहा, लेकिन सारी जातिको तो मारा नहीं जा सकता था। हा, उन्होंने सारे ईरानसे जर्थुस्ती धर्मको मिटानेका सकल्प कर लिया, और उसमें बहुत दूर तक सफलता भी पाई। यह वही समय था, जब कि स्वेन्-चाड भारतकी यात्रा करके अभी अभी चीन लौटा था, और दस ही साल पहले अपनी यात्रामें मध्य-एशियाकी सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक समृद्धिको अपनी आखों देख चुका था।

३. उस्मान (६४४-६५२ ई०)

ईरानी दास द्वारा मारे गये द्वितीय खलीफाका बदला लेना नये खलीफाके लिये जरूरी था। उसने ऐसे सेनापतिको राज्यपाल बनानेका इनाम घोषित किया, जो कि खुरासान (पूर्वी ईरान) में घुसनेमें सफल हो। उस्मानके समय सिरिया (अतर्प्व रोमन-प्रदेश) का शासक बनाकर उमैय्या-वशी सरदार म्वाविया दमिश्क भेजा गया। दमिश्क रोमन क्षत्रपकी राजधानी थी। वहाका राज-प्रबन्ध रोमक कानूनके अनुसार होता था। म्वावियाके सामने प्रश्न था—देशका शासन कैसे किया जाय? उसने देखा, वहापर कबीलोंकी राज-व्यवस्था लागू नहीं की जा सकती, सामन्तशाहीसे कबीलाशाहीकी ओर लौटा नहीं जा सकता। यदि वह ऐसा करनेके लिये तलवारका सहारा लेता, तो भी सारे सामाजिक और आर्थिक ढांचेका बदलना संभव नहीं था। म्वावियाकी व्यावहारिक बुद्धिने समझ लिया, कि ऐसा करनेके लिये सिरियाके लोगोंको पहले बड़ या अर्ध-बड़ के रूपमें परिणत करना होगा, जो असंभव है। उसने रोमन सामन्ती ढांचेकी रहने दिया,

और अरबी हुकूमतको मनवा तथा अधिकसे अधिक आदमियोंको मुसलमान बना अपने शासनको मजबूत करनेका प्रयत्न किया। म्वावियाने रोमक राज्य-प्रणालीको स्वीकार किया। इस्लाम और कबीलाशाही सादा जीवनको जो लोग एक समझते थे, उन्हें यह बुरा लगा। जिन्होंने पैगंबरके सादे जीवन, कबीलोकी विलास-शून्य, भ्रातृत्वपूर्ण समानताको देखा था, उन्हें म्वाविया का शाही दबदबा और शान-शौकत बुरी लगी। यदि गाढेकी चादर ओढे खजूरके नीच सोन वाला अथवा दासको ऊटपर चढाये विजित येरुशलममे दाखिल होनेवाला उमर अब भी खलीफा होता, तो म्वाविया ऐसा न कर सकता। समय बदल चुका था। पैगंबरके दामाद और परमविश्वासी अनुयायी अलीको जब यह बात मालूम हुई, तो उन्होंने इसकी सख्त निन्दा की। वह चाहते थे हमारी सत्तनत चाहे रोमपर हो या ईरानपर, वह अरबी कबीलोकी सादगी और समानताको कभी न छोड़े। अलीकी आवाज अरण्यरोदन थी। सकल शासक म्वावियापर खलीफाको नाराज होनेकी जरूरत न थी। हा, म्वाविया और अलीमे स्थायी वैमनस्य हो गया।

६३६ ई० मे नहाबदके युद्धमे ईरानियोंकी पराजय हुई थी, किंतु १३ वर्षों (६५२ई०) तक ईरानियोंका विद्रोह शात नहीं हो सका। उसमानके शासनमे खुरासान ही नहीं, बल्कि तुर्कोंके राज्यपरभी अरबोंने प्रहार किया। ६५२ई० मे अब्दुल्ला अमीरपुत्रने ख्वारेज्म को हराया। इसी समय बलखके लोगोंने अधीनता स्वीकार की। उसमानके शासनके समयसे इस्लामिक आदर्शवाद का रहासहा रूपभी खतम होने लगा। उसमानने अपने परिवारके धन-वैभवको खूब बढ़ाया, जिससे अरबो मे भीतर ही भीतर वैमनस्य होने लगा, जिसका परिणाम हुआ उसमान का कतल।

४ अली' (६५२-६६१ ई०)

२४ वर्षोंकी प्रतीक्षाके बाद उस आदमीको खलीफा बननेका मौका मिला, जो शिया मुसलमानोंके अनुसार मुहम्मदका एकमात्र उत्तराधिकारी था। अली अपने गुणोंके कारण पैगम्बर के बहुत प्रिय थे। पैगम्बरकी कोई पुत्र-मतान नहीं थी। उनकी प्रिय पुत्री फातिमाके पति अली तथा नाती हुसैन-हुसेन पैगम्बरके बहुतही प्रेमपात्र थे, इसमे सदेह नहीं। अलीको बहुत देर करके पद मिला था, किंतु दमिस्का राज्यपाल म्वाविया उन्हें फूटी आखोभी नहीं देखना चाहता था। वह समझता था, अली हमे शाहशाही या कैसरी शानके साथ चैनसे नहीं रहने देगा। अली चाहे कितनाही म्वावियाको न पसंद करते हो, किंतु म्वावियाका खान्दान बनी-उमैया एक शक्ति-शाली अरब वंश था। म्वावियाके ऊपर प्रहार करनेका मतलब था, बनी-उमैयाको दुश्मन बनाकर गृह-युद्ध आरंभ करना। अलीका सारा समय म्वावियाके विरोधमे ही बीता और उसीमे उन्हें बलि चढना पडा। यही नहीं, म्वावियाके षड्यंत्रमे उनके बड़े बेटे हुसैनको विप खाकर मरना पडा, और म्वावियाके पुत्र यजीदने अलीके दूसरे पुत्र हुसेन को करबलामे तडपा-तडपा कर मारा। करबलामे हुसेन और उनके ६६ साथियोंकी मौत बड़ी दर्दनाक घटना हे। इसने इस्लामके भीतरी फूटको सदाके लिये स्थायी बना दिया। इस्लामके पैगम्बरके प्रिय नातीका कटा हुआ शिर जब यजीदके सामने रखा गया, तो उसने उसको छडीसे ठोकर मारकर हिलाया। उस समय एक

अरब बूढ़ेके मुहमे दर्दभरी आवाज निकली—“अरे, धीरे-धीरे, यह पैगम्बर का नाती है। अल्लाहकी कसम, मैंने खुद इन्ही ओठोको हजरत के मुहसे चुबित होते देखा था।” लेकिन अरबोके लिये अब इस्लाम या उसका पैगम्बर विश्व-विजयके साधन मात्र रह गये थे। उन्हें पैगम्बर और उनके नातीसे क्या लेना-देना था ? अच्छा यही हुआ, कि अलीको अपने दोनो पुत्रोकी मृत्यु अपनी आखो देखनेका दुर्भाग्य नहीं मिला।

अली लड़ते हुए कही मारे गये थे। कौनसी जगह मारे गये, इसके दावेदार बहुतसे स्थान हैं। खुरासानमे तुर्गै-हैदरी आज भी एक अच्छा कस्बा है, जिसका अर्थ (अली) हैदर की कब्र। अफगानिस्तानके उत्तरी सूबे तुर्किस्तान मे मजार-शरीफ एक शहर है, जिसका अर्थ है पवित्र-कब्र। इसके बारेमे भी बतलाया जाता है, कि यह हजरत अलीकी कब्र है, और इसीलिये उसकी बहुत पूजा होती है। दर-खैबरमे भी अली-मस्जिद है, जिसके बारेमे बतलाया जाता है, कि अलीने काफिरोके साथ युद्ध करते समय वहा आकर स्वयं नमाज पढ़ी थी। अलीके समय अरब-राज्यको कुछ बढनेका मौका जरूर मिला, किंतु वह सफलता पहलेके तीन खलीफो तथा बनी-उमैयाके शासनके सामने अधिक नहीं थी। हा, अलीके अंतिम समयतक मध्य एसियाके भीतर अरबोके पैर पहुच चुके थे। ६५० से ६५५ ई० तक लगातार समरकंदसे दक्षिण-पश्चिममे अवस्थित मैमुरा प्रदेशको अरब लूट-पाटकर बर्बाद करते रहे, यह चीनी अभिलेखोसे मालूम होता है।

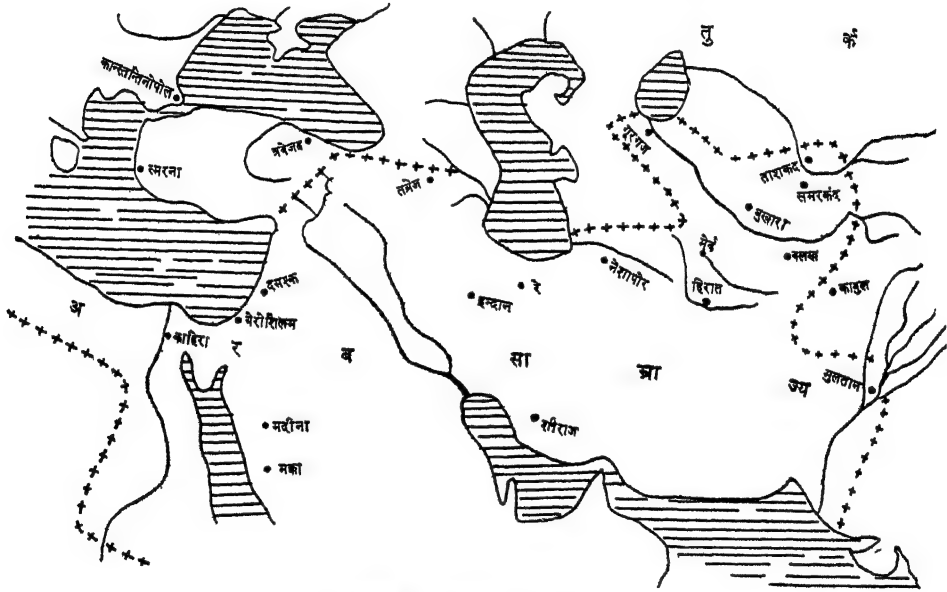
स्रोत-ग्रन्थ

- 1 Heart of Asia (E D Ross 1999)
- 2 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
- 3 History of Bokhara (A Vambery, London 1873)
- ४ इस्कुस्न्वो स्नेदनेई आजिइ (ब व वेइमार्न, मास्को १९४०)
- ५ आखितेक्तुनिये पाम्यानिकि तुर्कमेनिइ (मास्को १८३९)
- ६ दर्शन दिग्दर्शन (राहुल सांकृत्यायन, प्रयाग १९४७)
- ७ इस्लामुकी रूपरेखा ()

अध्याय २

उमैया वंश (६६१-७४६ ई०)

अलीके मरनेके बाद उनके बड़े बेटे हसनके उत्तराधिकारी बननेकी बड़ी सभावना थी। राज्यपाल म्वाविया मदीनेमे जनप्रिय नहीं था। हुसैन और हुसैन दोनोंकी यज्दगर्द (सासानी शाहशाह) की दो राजकुमारियां व्याही गई थी, जिससे शाही तडक-भडक पैगम्बर खान्दानके



२७ अरब (उमैया) साम्राज्य (७१२ ई०)

भीतर भी दाखिल होनेसे बाज नहीं आ सकती थी। पैगम्बरका नाती होने के कारण लोगो का अनुराग हसन के प्रति अधिक था। म्वाविया हसनकी बीबीने जहर दिलवा उन्हे मरवा कर स्वयं खलीफा बन बैठा

१ खलीफा म्वाविया मेरवान I (६६१-६७० ई०)

अलीके बाद खलीफाका पद म्वावियाने लेकर अपने उमैया वंशकी नींव रखी। इस वंशमे निम्न १३ खलीफा हुए —

१	म्वाविया (1)	६६१-६८० ई०
२	यजीद (1)	६८०-६८३ ई०
३	म्वाविया (11)	६८३
४	अब्दुल मलिक	६८३-७०५ ई०
५	वलीद (1)	७०५-८१४ ई०
६	सुलैमान	७१४-७१७ ई०
७	उमर (11)	७१७-७२० ई०
८	यजीद (11)	७१९-७२३ ई०
९	हिस्माम	७२३-७४२ ई०
१०	वलीद (11)	७४२
११	यजीद (111)	
१२	इब्राहीम	
१३	मेवनि (11)	७४९ ई०

उमैया राजवंशके समय खुरासान और मोगदके निम्न वली (राज्यपाल) थे —

१	अब्दुल्ला अमीर-पुत्र	६६१ ई०
२	कैस हैसम-पुत्र	६६२ ई०
३	अब्दुल्ला खाजिम-पुत्र	६६३ ई०
४	जियाद	६६५ ई०
५	हकम अमीर-पुत्र	६६७ ई०
६	रबी जियाद-पुत्र हारिसी	६७० ई०
७	खुलैद अब्दुल्ला-पुत्र हनफी	६७३ ई०
८	सईद उस्मान-पुत्र	६७६ ई०
९	सल्म जियाद-पुत्र	६८१-६८३ ई०
१०	अब्दुल्ला जियाद-पुत्र (मूसा अब्दुल्ला-पुत्र)	६८३-६९१ ई० ६८९-७०४ ई०
११	मुहल्लब	७०० ई०
१२	उमैया अब्दुल्ला-पुत्र खालिद-पुत्र	६९६ ई०
१३	मुहल्लब	७०० ई०
१४	यजीद मुहल्लब-पुत्र	७०१ ई०
१५	मुफज्जल मुहल्लब-भ्रात	७०३ ई०
१६	कुतेब मुस्लिम-पुत्र वाहिली	७०५-७१४ ई०
१७	जर्राह अब्दुल्ला-पुत्र	७१७ ई०
१८	अब्दुर्रहमान	
१९	सईद अब्दुल-अजीज-पुत्र	७२० ई०
२०	सईद अन्न-पुत्र हरसी	७२१ ई०
२१	असद अब्दुल्ला-पुत्र कसरी	७२५-७२७ ई०

२२	अशरश् अब्दुल्ला-पुत्र	७२७-७२९ ई०
२३	जुनैद अब्दुर्रहमान-पुत्र	७२९-७३३ ई०
२४	आसिम् अब्दुल्ला-पुत्र	७३४-७३५ ई०
	असद अब्दुल्ला-पुत्र (पुन)	७३५-७३७ ई०
२५	नस्र सैयार-पुत्र	७३७-७४८ ई०

तुलनात्मक अरब वंश

भारत	चीन	अरब	उत्तरापथ
	(थाङ्ग)		(पश्चिमी तुर्क)
६४०	अर्जुन ६४८-	ताइ-चुङ्ग ६२७-५०	निशि डुलू ६५१
		(उमैया)	
	काउ-चुङ्ग ६५०-८४		इर्बी शबोलो ६५१-
६६०		म्बाविया I ६६१-८०	
६८०		यज्जीद I ६८०-८३	
	वूहु (त्वी) ६८४-७०५		
		अब्दुलमलिक ६८३-७०५	
			अशिनाशिन -७०८
७००		क्लीद I ७०५	सोगो ७०८-९ सुलू ७०९-३८
	स्वान् चुङ्ग ७१३-५६	सुलेमान ७१४-१७	
		यज्जीद II ७१९-२३	(उइगुर)
७२०	येशोवर्मा ७२५-५२	हिशाम ७२३-४७	बुस्तेवर ७१९
७४०		(अब्बासिया)	कुतुलबिगा -७५६
	सुचुङ्ग ७५६-६३	सफाह ७५०-५४	मोयुनचुर ७५६-६०
		मसूर ७५४-७५	

भारत	चीन	अरब	उत्तरापथ
७६० वज्रपुष्प ७७०-	ताइचुङ्ग ७६३-८०	मेहदी ७७५-८३	दुर्मोर्गो ७७८-८९-
७८० (प्रतिहार) वत्सराज ७८३-८१५	तेइचुङ्ग ७८०-८०५	हादी ७८३-८६ हारून ७८६-८०९	आचो -७९५ कुतुलुक ७९५-८०८
८००	त्यान्चुङ्ग ८०६-२१	अमीन ८०९-१३	काउसङ्ग ८०८-२१
नागभट्ट ८१५-		मामून ८१३-३३	
८२०	मू-चुङ्ग ८२१-२५		

जिस समय म्वाविया इस्लामका खलीफा बना, उस समय अब भी पूर्वी ईरानपर अरबोंका अधिकार स्थिर नहीं हो पाया था। अब्दुल्ला अमीर-पुत्रने ६६२ ई० में खुरासानपर सफल अभियान किया। उसी समय उसको वहाका वली (राज्यपाल) बना दिया गया। लूट-मार करना आसान था, क्योंकि ईरानके विजयके बाद खुरासान, बलख, मेर्व सभी जगह अरबोंकी धाक जम चुकी थी, लेकिन स्थायी सफलता न होनेसे वली (गवर्नर) बराबर बदलते रहते थे। अमीर म्वावियाके शासन-कालमें निम्न वली मध्य-एशिया भेजे गये—

(१) अब्दुल्ला अमीर पुत्र (६६१ ई०)—खुरासान-विजेता।

(२) कैस हैगान-पुत्र (६६२ ई०)—

(३) अब्दुल्ला खाजिन-पुत्र (६६३ ई०)—

(४) जियाद (६६५ ई०)—इसे पिछले साल खलीफाने अपना भाई घोषित किया था। यह दो साल तक वली रहा।

(५) हाकिम अमीर पुत्र (६६७ ई०)—खुरासानका वली (राज्यपाल) होकर आनेके बाद इसने तुखारिस्तानकी ओर अभियान किये और वहा साथ ही बलखसे दक्षिण-पूर्व हिंदूकुश तकका प्रदेश जीत लिया। यह पहला अरब सेनापति था, जिसने वक्षुको पार किया, यद्यपि वक्षु-पारके तुखारिस्तानपर वह स्थायी अधिकार कायम नहीं कर सका। ६७० ई० में मेर्वमें इसकी मौत हुई।

(६) खुदै अब्दुल्ला-पुत्र (६७० ई०)—अल्हन्फीने नये वलीके आने तक शासन सभाला।

(७) री जियाद पुत्र अल्हारिस (६७० ई०)—यह नया राज्यपाल पहले वली जियादका सहायक था। बीसियों सालके शासनके बाद अब स्थिति अनुकूल हो गई थी, और कितने ही अरब-परिवार आकर खुरासानमें बस गये। यह आवश्यक भी था, क्योंकि इस

प्रकार खलीफाकी सेनाको पास ही मे सैनिक भी तैयार मिलते थे। अरब योद्धा, नये जीते हुए देशकी मुख-सपत्तिको देखकर अरबके रेगिस्तानसे यहाके जीवनको अधिक पसंद करते थे। रबीने बलखमे लगातार होते रहते विद्रोहोको बिना युद्ध ही दबानेमे सफलता पाई। दूसरे विजेताओसे अरब धुमन्तु विजेताओको कितने ही सुभीते भी थे। जहा अरब तलवार शत्रुकी शक्तिको छिन्न-भिन्न करती, वहा पराजितोको विजेताओके साथ एकता-बद्ध करनेका काम इस्लाम करता। सबसे पहले ईरानके दलित और उत्पीडित निम्नवर्गका इस्लामकी ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक था, क्योंकि उनका जातीय (जर्थुस्ती) धर्म हिंदू-धर्मकी तरह ही छुआछूत और जातपातका पक्षपाती था, जिसके कारण मुसलमानोके सपर्क मात्रसे आदमी जातिच्युत हो जाता, और उसका वैयक्तिक तथा सामाजिक स्वार्थ अरब विजेताओसे मिल जाता। यद्यपि अरब मुसलमान अन्-अरब मुसलमानोको समानताका अधिकार नहीं दे सकते थे, किंतु काफिरके मुकाबिलेमे मोमिनका बहुत ऊचा स्थान था, वह छोटी जातका होने पर भी बडीसे बडी जातके ईरानीसे ऊपर था। जिस समय अरब मध्यएशियापर विजय प्राप्त कर रहे थे, उस समय यहा गावका स्वामी देहकान होता था। भारतवर्षमे देहकान किसान को कहते हैं, लेकिन मूल देहकान शब्दका वही अर्थ और दर्जा था, जो कि प्राचीन हिंदू कालमे ग्रामणीका। देहकान देह (ग्राम) का राजा था। राजधानीके पासवाले प्रदेशोमे देहकानोकी निरकुशता पर शाह और पुरोहित(मोविद)-वर्गका अकुश भी होता था, किंतु दूरके प्रदेशोमे वहाके क्षत्रपका दबाव देहकानोके ऊपर इतना नहीं था, कि उसे ग्रामीणोपर मनमानी करनेसे रोका जा सके। देहकान छोटे जमीदार नहीं, बल्कि तालुकदार या छोटे सामन्तकी हैसियत रखते थे। शाही अगरक्षक इन्हीके पुत्रोमेसे लिये जाते थे। शाही नौकर (शाकिर या चाकिर) भी इनमेसे होते थे। बुखाराके खातूनके शरीर-रक्षकोके बारेमे हम बतला चुके हैं, कि वह देहकानोके लडके होते थे। ईरानमे शाही धर्म (राजधर्म) जर्थुस्ती दीन था। किंतु खुरासान आदि जैसे दूरके प्रदेशोमे कोई राजधर्म नहीं था, क्योंकि वहा बौद्ध, नेस्तोरी (ईसाई) और यहूदी धर्मके लोग भी काफी संख्यामे बसते थे। जर्थुस्ती धर्मसे निकले हुए मज्दकी जैसे धर्मके माननेवाले अत्याचर से बचने के लिये इन प्रदेशोमे आकर बस गये थे, जिसके कारण भी जर्थुस्ती धर्मकी यहा उतनी धाक नहीं थी। मावरा-उन्-नह्-र (वक्षु और सिरदरियाके बीचके प्रदेश, अन्तर्वेद) मे बल्कि जर्थुस्ती धर्मसे बौद्ध और नेस्तोरी धर्मके अनुयायी कम नहीं थे, तो भी ईरानी जातिका धर्म होनेके कारण जर्थुस्ती धर्म अधिक प्रभाव रखता था (स्वेन्-चाडके समरकंदमे रहते समय जर्थुस्तियोने बौद्धोके एक विहारको जला दिया था)।

(अरब-विजयके समय^१)

सेठ—मध्य-एशियामे चीनके व्यापारके कारण सेठोका प्रभावशाली वर्ग व्यापारिक नगरोमे रहता था। यह मामूली सेठ नहीं थे, बल्कि इनके पास बहुत भारी जागीरे (जमी-

^१ Turkistan Down to the Mongol Invasion (K Bartold),
History of Bukhara (A Vambery)

दारिया) होती, रहनेको भी अपने गढ होते थे। समाजमे इनका स्थान देहकानोसे बहुत कम अन्तर रखता था।

मध्य-एसियामे सोग्द, फगाना और तुखारिस्तान वैसे तो नगरों और ग्रामोंके देश थे, लेकिन अपने उत्तरी घुमन्तू लडाकू जातियोंसे बराबर सघर्ष रहनेके कारण यहांके लोग बीरताका मूल्य समझते थे। समरकंदमे प्रतिवर्ष एक चौकीपर भोजन और एक मटकी अगूरी शराब रखी जाती थी। यह हमारे यहांके पानके बीडा उठानेकी रस्म जैसी थी। जो आदमी उस भोजन और शराबकी ओर हाथ बढ़ाना चाहता, वह मानो पिछले सालके निर्वाचित वीर (पहलवान) को लडनेके लिये ललकारता। दोनों वीरोंमे लडाई होती। जो अपने विरोधीको मार देता, वह देशका सबसे बडा वीर माना जाता। साल भर बाद फिर इसी रीतिके अनुसार वीर-परीक्षा होती।

देशवासियों मे जहा इस प्रकार वीरोंका सम्मान किया जाता, वहा यहांके तुर्क शासकों की वीरता के बारेमे अरब भी सदेह नहीं कर सकते थे। ८६९ ई० मे अरब इतिहासकार जहीज^१ने लिखा था “कला-कौशलमे चीनी, हिकमत (दर्शन) मे यूनानी, शासनमे सासानी और युद्धमे तुर्क” बडे हैं।

मध्य-एसियाके तत्कालीन शासक और सरदार तुर्क या अतुर्क हमारे राजपूतोंकी तरह मृत्युसे डरते नहीं थे। युद्ध उनके लिये खेल था, किंतु उनमे एकता नहीं थी। आपसी शत्रुताके कारण वह एक दूसरेके विरुद्ध अरबोंको सहायता करनेसे भी बाज नहीं आते थे। खलीफा उमरने विधान बनाया था, कि मोमिन (मुसलमान) छोडकर किसीको हथियार चलानेका अधिकार नहीं है। रोम और ईरानके जीते हुए इलाकोंमे जिस तरह लोगोंने भीषण सघर्ष किया, उससे अरबोंको विश्वास नहीं था, कि गैर-मुस्लिम उनके वफादार हो सकते हैं। यह ठीक भी था, क्योंकि अरब किसी देशको केवल राजनीतिक तौरसे ही परतंत्र नहीं करना चाहते थे, बल्कि वह वहांके धर्म और सस्कृतिको इस्लामके लिये खतरेकी बात समझ उन्हें निर्मूल कर देना चाहते थे, जिसके ही कारण सघर्ष बहुत तीव्र होजाता था। मध्य-एसियामे तुर्क आये, उनसे पहले हेफ्ताल, शक और यवन आये, किंतु वह वहांकी सस्कृतिके दुश्मन नहीं थे। उन्होंने स्थानीय देवी-देवताओंको भी अपने लिये पूजनीय माना और यदि स्वयं सस्कृतिमे पिछडे थे, तो यहांकी सस्कृतिसे बहुतसी बातें सीखकर अपनेको सस्कृत बनाया। अरबोंकी नीति ऐसी नहीं थी। उन्होंने इस्लाम धर्मके नामपर बिखरे हुए अरब कबीलोंको एकतावद्ध किया था। चाहे देश-विजय ही प्रेरक रहा हो, किंतु उसने अपने योद्धाओंको इस्लामके नामपर मर मिटने और दुनियासे कुफ्रको हटाकर पैगंबर-का धर्म फैलानेका बीडा उठाया था। इसीलिये यूनानियों, शकों या तुर्कोंकी तरह धर्म और सस्कृतिके साथ समझौता करनेकी गुंजाइश नहीं थी। इसके विरुद्ध लोगोंकी चाहे अपने अपने बहु-स्वीकृत जातीय धर्मके प्रति आस्था भले ही हो, लेकिन वह तब तक दूसरे लोगोंके साथ बिगाड या अत्याचार करनेके लिये तैयार नहीं थे, जब तक कि उनके अपने धर्मपर खूनी हमले न हों। उमरका कानून उमैया खलीफोंके समयमे ही नहीं माना गया और बली (राज्यपाल) कुतैब

^१ जहीज (इतिहासकार), “अहलुस् सीन फिस्-सनाआत वल्-यूनानियून फिल्-हिक्मे व आले-सासान फिल्-मलके वल्-अतराक फिल्-हुरूबे”—रिसारला “फजायलल्-अतराक”। (Turkistan Down to the Mongol Invasion मे उद्धृत)

(७०५-७१५ ई०) ने अपनी लडाइयोमें दुश्मनोंके साथ लड़नेका अधिकार काफ़िरो-को दे दिया। अरब बहुत दिनों तक देशपर अधिकार करना नहीं चाहते थे। उनका उद्देश्य था—लूटके मालको लेकर लौट जाना और अगले साल फिर आकर उसी तरह करना। अरबों का निवासस्थान विशेषकर खुरासान और बलख प्रदेशमें था। सलम जियाद-पुत्र (६८२-६८३ ई०) ही पहला राज्यपाल था, जिसने पहली बार वक्षु-पार जाड़ा बिताया। इन लूटों और आक्रमणोंके प्रतिकारके लिये आपसमें झगड़ते छोटे-छोटे राजाओंको भी कुछ करनेका ख्याल आया। इतिहासकार तबरीके अनुसार मध्य-एशियाके राजा खतरा होनेपर ख्वारेज़्मके किसी शहरमें एकत्रित होते और आपसी झगड़ोंको शांतिपूर्वक तै करके एव मिलकर अरबोंसे लड़नेकी शपथ लेते थे। लेकिन व्यवहारत इसपर चलना उनके लिये मुश्किल था। अरबोंके विजयका एक कारण यही कमजोरी थी। समरकन्दके राजा गोरकने ७१८ ई० में चीन सम्राट्के पास लिखा था, कि हम ३५ सालसे अरबोंसे लड़ रहे हैं। लेकिन, बिखरे हुए पचासो छोटे-छोटे राजा अरबोंकी शक्तिसे मुकाबिला कैसे कर सकते थे ?

(६) रबी जिराद-पुत्र हारिती—इमने बलखके विद्रोहको बिना युद्धके शांत किया। कोहिस्तानके तुर्कोंने बहुत सख्त सघर्ष किया, जिनका नेता तर्खून नीजक था, जो पीछे कूतैबके हाथो मारा गया। रबीने वक्षु पार आक्रमण किया, किंतु लूटमारसे ही सतोष करके लौट आया। ६७३ ई० में रबी और उसके मलिककी मृत्यु हो गई। खलीफा पूरबी प्रदेशका एक मलिक (उप-राज) नियुक्त करता था, जो अपने भिन्न-भिन्न प्रदेशोंके लिये किसीको वली बनाकर भेजता था। उसके पुत्र अब्दुल्लाने केवल दो महीना शासन किया।

(७) खुलैद अब्दुल्ला पुत्र हन्फी (६७३ ई०)—जियादके मरनेके बाद खुलैदने अपने पुत्र अब्दुल्लाको कूफा बलख और खुरासानका मलिक (उपराज) बनाया। अब्दुल्ला जियाद-पुत्र खुलैदको हटाकर गवर्नर बना।

अब्दुल्ला जियाद-पुत्रने इराक (मसोपोतामिया) में एक बड़ी सेना जमा की। फिर खुरासान होते वक्षुपार हो, बुखाराके पर्वतोंमें दाखिल हुआ। वह स्वयं ऊटपर सवार था। उसने रामतीन और बैकदको लूटा। बुखाराकी शासिका खातून अरबोंके सामने लड़नेकी हिम्मत न कर समरकन्द भाग गई। कहते हैं, जल्दीमें उसका एक जूता छूट गया, जिसका दाम दो लाख दिरहम (एक दिरहम=२५ ग्रैन चांदी) था। अन्तमें खातूनने अरबोंको वार्षिक कर देना स्वीकार किया। अब्दुल्ला लूटका माल लादे लौटा। हिरात अनेपर खलीफाने उसे बसराका गवर्नर नियुक्त किया।

(८) सईद उस्मान-पुत्र (६७३ ई०)—नये गवर्नरने अब्दुल्लाकी सधिको न मानकर बुखारापर आक्रमण कर दिया। अब्दुल्लाके साथ लड़नेमें ही खातूनकी सारी शक्ति और संपत्ति खतम हो चुकी थी, फिर बेचारी अब क्या लड़ती ? सेनाकी हिम्मत भी टूट गई थी, इसलिये उसपर भरोसा नहीं किया जा सकता था। अतमें खातूनने बुखारा-खुदातको अरबोंको दे देना स्वीकार किया। समरकन्द अब भी स्वतंत्र था और सबसे धनी लोग वहां रहते थे। रानी (खातून) ने नेकचलनीके लिये बुखाराके ८० पुरुषोंको जामिनके तौरपर दिया, जिनको लिये सईद समरकन्द पर चढ़ा। तुर्कोंने मुकाबिला किया, किंतु अतमें समरकन्द अरबोंके हाथमें गये बिना नहीं रहा। सईदको ३००००

युद्ध दास और अपार संपत्ति हाथ लगी। पहले दिन युद्धमे समरकंदके सोग्दियोंको तैयार देखकर सईदने हमला नहीं किया, और दूसरे दिन उन्हें गाफिल पाकर आक्रमण कर दिया। जब सईद समरकंद-विजयके बाद बुखाराके रास्ते लौटा, तो खातूनने अपने जामिन आदमियोंको मागा। सईदका उत्तर था—“तुम्हारा विश्वास नहीं, इसलिये आमू-दरिया पार हुए बिना हम उन्हें लौटा नहीं सकते। आमू पहुँचनेपर वे वैसे लौटानेका बहाना किया। अतमे उन्हें वह अपने साथ मदीना ले गया और देहकान (सामन्ती) की वेष-भूषाको हटाकर उन्हें गुलामोंकी पोशाक पहना दी। इस दासतासे मरना बेहतर समझ अस्सी “गुलामो” ने सईदके महलमे घुसकर दरवाजा बंद कर लिया और अपने धोखेबाज शत्रुको मारकर स्वयं भी आत्म-हत्या कर डाली। यह घटना ६७९ ई० (६० हि०) की है।

२. खलीफा यजीद मेरवान-पुत्र (६८०-६८३)

म्वावियाका बेटा यह वही यजीद है, जिसने कूफाका राज्यपाल रहते समय करबलामे हुसेन और उनके साधियोंकी निर्भय हत्या कराई थी। राज्यपाल सईदकी मदीनामे हत्या हो चुकी थी, और यजीदने सल्म जियाद-पुत्रको खुरासानका वली बनाया।

(९) **सल्म जियाद-पुत्र (६८१-६८३ ई०)**—सल्मके अधिकार सभालते समय सोग्द मे विद्रोह फैला हुआ था। गोरकने हथियार रख नहीं दिया था। सईदका परिश्रम व्यर्थ हो गया। उसकी धोखेबाजीने अरबोंकी बात पर लोगोंका विश्वास नहीं रह गया था। सल्मने पहले सोग्दको ठीक करना जरूरी समझा। उसने सेनापति मुहल्लबसे सलाह करके मेर्वमे सैनिक केंद्र स्थापित किया, और ६००० अरब सेनाके साथ वक्षु (आमू-दरिया) पार हो वह बड़ी तेजीसे बुखारापर चढ़ दौड़ा। खातूनने सोग्दके तरखून मलिक गोरकसे अपना पति बनानेका लालच दे सहायता मागी। तरखून १२०००० सेना साथ ले मददके लिये आया। अरबोंने भेद लगानेके लिये जो टुकड़ी भेजी थी, उसके आधे आदमियोंको मारकर गोरक ने भगा दिया। फिर प्रधान सेनासे मुकाबिला हुआ, जिसमे तुर्कोंकी जबर्दस्त हार हुई। सल्मको अपार संपत्ति हाथ लगी, प्रति-सैनिक २४०० दिरम (एक दिरम २५ ग्रेन = १.१ माशा चांदी) अपना हिस्सा मिला। रानीको उसने क्षमा कर दिया। सल्म मेर्वके नौ मुस्लिमोंमे बहुत प्रिय था, इसका पता इसीसे लगेगा, कि उसके दो सालके शासनमे नगरके २००० लडकोंके नाम सल्म रक्खे गये।^१

^१ ओडोनोवनने अपनी पुस्तक “मेर्वकी कथा” (पृ० ३८९) मे लिखा है “एक दिन नगरका डुग्गी पीटनेवाला एक दर्जन दूसरे तुर्कमानोंके साथ मेरे झोंडेमे आया। वह अपने नवजात शिशुओंको मेरे पास लाये थे। मैं उनके शब्दोंको अच्छी तरह पकड़ नहीं पाता था। मैंने जो कुछ समझा, वह यही था, कि उन शिशुओंमेसे एक ओडोनोवन वेग था, दूसरा ओडोनोवन खान, तीसरा ओडोनोवन बहादुर। पता लगा कि तेक्के (तुर्कमान) लोग अपने नवजात लडकोंका नाम किसी प्रसिद्ध विदेशीके नामपर रक्खा करते हैं।”

३. खलीफा म्वाविया (II) (६८३ ई०)

यह वस्तुतः खलीफाके पदके योग्य नहीं था। इस्लामके विश्वविजयका यह काल था, जिसमें खलीफामें वीरताके साथ धर्माधिकाकी बहुत आवश्यकता थी। उसने शासनको अपने लिये भारी बोझा समझा और कुछ ही महीनोंके बाद गद्दी अपने उत्तराधिकारी मेरवान-पुत्र अब्दुल मलिकके लिये छोड़ दी। उत्तराधिकारके लिये अब्दुल्ला जुबेरपुत्र और अब्दुल मलिकका झगडा हुआ, जिसके कारण इस्लामी साम्राज्यके दो भाग हो गये। अब्दुल्लाने यमन, सिरिया, फिलिस्तीन और मिस्रको लिया। अब्दुल मलिकने राजधानी दमिश्कको अपने हाथमें करके शीघ्र ही अब्दुल्लासे सिरिया और मिस्र भी छीन लिया।

४ खलीफा अब्दुल-मलिक मेरवान-पुत्र (६७३-७०५ ई०)

मेरवान के पुत्र अब्दुल-मलिकने जिस समय शासनकी बागडोर सभाली, उस समय उसके प्रतिद्वन्द्वियोंकी कमी नहीं थी। उसका एक प्रतिद्वन्द्वी मुहम्मद मक्का-मदीनेमें खलीफा बन बैठा था। विजतीन (रोम) साम्राज्य अभी भी शक्तिशाली था, यद्यपि उसके हाथसे सिरिया और फिलिस्तीन निकल कर अरबोंके राज्यमें चले गये थे। अरब खलीफा विजतीनको भी ईरानकी तरह हड़पना चाहते थे। अब्दुल-मलिकने देखा, कि बाहरके सघर्षके साथ वह घरू सघर्षको सफलतापूर्वक नहीं चला सकता, इसलिये विजतीनसे सुलह करके उसने मुहम्मदको मक्का-मदीनासे मार भगाया। अब्दुल मलिककी खिलाफतमें अरबोंको मध्यएशियामें आगे बढ़नेमें बहुत सफलता मिली, जहां उसके निम्न वली हुए —

(१०) अब्दुल्ला जियाद-पुत्र (६८३-६९१ ई०) — खिलाफतके लिये जो झगडा मलिक और अब्दुल्लामें हुआ था, उसमें खुरासानके राज्यपाल (वली) अब्दुल्लाने विरोधीका समर्थन किया था, इसलिये अब्दुलमलिकने उसे हटाकर बुकैरको खुरासानका राज्यपाल बनाया।

(११-१२) बुकैर अब्दुल्ला-पुत्र, उमैया खालिद-पुत्र (६७६) — बुकैरपर विश्वास न रहनेसे खलीफाने उसकी जगह उमैयाको क्षत्रप बनाया। सेनापति मुहल्लब अब्दुल्ला जियाद-पुत्रका पक्षपाती था। नई व्यवस्थाके असंतुष्ट हो वह मेर्व छोड़कर केश (शहरसब्ज) चला गया। ७०० ई० में उसने अपने पुत्र हबीबको एक बड़ी सेनाके साथ बुखारापर आक्रमण करनेके लिये भेजा। राजाकी पराजय हुई। दो साल बाद कर उगाहनेके समय मुहल्लब मेर्व आया, जहां ७०१ ई० में उसकी मृत्यु हो गई।

(१३) यजीद मुहल्लब-पुत्र (७०१ ई०) — मुहल्लबके स्थानपर उसका पुत्र यजीद मेर्वका राज्यपाल बनाया गया।

(१४) मुफज्जल मुहल्लब-भ्राता (७०३ ई०) — हज्जाज यूसुफ-पुत्र सेकेफीको यजीद पसद नहीं आया और उसने उसकी जगह उसके चचा तथा उपराज्यपाल मुफज्जलको वली बनाया। उसका शासन केवल ९ महीनेका था, जिसमें उसने खीवा और बादगीमें लूटमार करके प्राप्त संपत्तिको अपने सैनिकों (अरबों) में बांट दिया।

५. खलीफा वलीद अब्दुलमलिक-पुत्र (७०५-७१४ ई०)

इसी खलीफाके समय ७११ ई० में अरब सेनापति मुहम्मद कासिम-पुत्रने सिधको जीता । हमे मालूम ही है, कि सिधको जीतनेमें घरेलू फूट शत्रुकी सबसे अधिक सहायक हुई ।

(१५) कुतैब मुस्लिम-पुत्र वाहिली (७०५-७१४) —मेर्व सारे अरब-शासन-कालमें दक्षिणापथकी राजधानी रहा । मेर्वको शाहेजान (राजप्राण शाहेजहा) कहते थे । मेर्व का राज्यपाल खलीफाका पूर्वी उपराज नियुक्त करता था, जो कि इस समय हज्जाज युसुफ-पुत्र था । हज्जाजने मुफज्जलको हटाकर उसकी जगह कुतैबको मेर्वका राज्यपाल बनाया । मध्य-एसियामे अरब-शासन और इस्लामकी दृढ़ नींव डालनेमें सबसे अधिक हाथ कुतैबका था । इसके पहलेके राज्यपालोका लक्ष्य प्रधानतया केवल लूटमार करते चौय उगाहना था । यद्यपि बहुत वर्षोंसे अरब खुरासानके स्वामी थे, और मेर्व उनके राज्यपालकी राजधानी थी, किंतु वक्षु-पार उनका प्रभुत्व नाममात्रका था । बस, समय-समयपर उनकी सेनाये लूट मारके लिये वहा जाती थी । वक्षु और सिरके बीचकी भूमिपर इस्लामका झंडा गाडनेवाला कुतैब था । इसने वहासे जर्थुस्त और बुद्धके धर्म को मिटाकर इस्लामको स्थापित किया और अपने सैनिकोको कुरानकी पातिया उद्धृत करते इस्लामके लिये जहादके लिये उत्तेजित किया । जहादियोंके जोशको और भी मजबूत करनेके लिये अभियानके समय तककी तनखाहे उन्हें पेशगी दे देना ।

मुसा अब्दुल्ला-पुत्र हाजेन-पुत्र (६८९-७०४ ई०) —अब्दुल्ला हाजेनपुत्र कैसी एक प्रसिद्ध अरब सेनापति था । पैगम्बर मुहम्मदने अरब कबीलोकी शक्तिको बहिर्मुखीन करके उनके घरेलू खूनी झगडोको रोक दिया था । अब वह आपस में लडनेकी जगह विदेशी काफिरोसे लडते थे । लूट में जहा बहुतसा धन मिलता था, वहा ईरानी, रोमन, सोमनी और तुर्क सुन्दरिया यदि दासी बननेसे बचती, तो बीबी बन जाती । युद्धकी लूटके बटवारेमें कभी कभी एक-एक सिपाहीपर पाच पाच स्त्रिया पडती । सबसे सुन्दरी और कुलीन स्त्रिया खलीफाके हरम के लिये चुनी जाती, उसके बाद उपराज (मलिक) का नबर आता, फिर वली (राज्यपाल) की बारी आती । हा, किसी सेनापतिकी नजर पड़ गई और खतरा नही मालूम हुआ, तो उसे भी कोई अनिष्ट सुन्दरी मिल जाती । सिपाहियोंको छँटी-छुटी स्त्रिया ही मिलती । स्त्रियोंकी इस लूटसे इस्लामको बहुत फायदा हुआ । मुल्ला काफिरोको धर्मोपदेश दे लौकिक प्रलोभनके साथ उन्हें अपनी जाति छोडा इस्लामी जमातमें भर्ती करते थे । निकाही या या दासी बीबीयोका काम था मुसल्मान पुत्र पैदा करना । दोनोही तरहसे देशकी स्वतंत्रताके लिये लडनेवाले घाटेमें रहते । काफिर कभी कभी फिरसे अपने धर्ममें लौट जाते, किंतु मुसलमानोकी यह सताने ईरानी जात-पातके कारण अपनी जातिमें लौटनेकी गुजाइश नही रखती । इस प्रकार इस्लाम ईरान और मध्य-एसियामे बडी तेजीसे बढत रहा । कितने ही अरब परिवार अरब छोडकर खुरासान, मेर्व या बलखमें बस गये थे । किंतु जनवृद्धिकी सामान्य-गतिसे वह उतनी जल्दी बहुसंख्यक नही हो सकते थे । इस वैध या अवैध स्त्री-पबध ने उस गतिको बहुत तेज कर दिया, इसमें सदेह नही । तो भी यह ख्याल रखना चाहिये, कि ईरान और मध्य-एसियाको जब अरब जीत रहे थे, उस समय वहा असह्य सामाजिक विषमता का राज्य था । भारतके शूद्रो और अछूतो की तरह वहा भी बहुतसी जातिया थी, जो

इस्लामकी जमातमे दाखिल होकर कमसे कम अपने काफिर बन्धुओंसे नीच नहीं रह जाती थी।

अपार धनके लाभ और सुखी जीवनने अरबोंकी लडाकू प्रवृत्तिको जगा दिया था। उनके कई दल हो गये थे, जो शक्ति और लाभके लिये आपसमें लड़ते रहते थे। सेनापति या राज्यपाल ज्यादा दिनतक टिकते नहीं थे, जरा सी शिकायतपर उन्हें निकालकर दमिश्कसे कोई दूसरा भेजा जाता। इसी तरह के निष्कासनकी तलवार अब्दुल्ला खाजिमपुत्रके ऊपर पड़ी। वह ६९१-६९२ ई० (७२ हिज्री) तक खुरासानका निरकुश शासक हो बैठा। उसने अपने नामके सोनेके सिक्के चलाये। खलीफा अब्दुल मलिक इसे कैसे बदरिस्त कर सकता था? अतमे खलीफाके हुकुमसे उसे कतल कर दिया गया। लेकिन अब्दुल्ला अपने भविष्यको जानता था, इसलिए अपने पुत्र मूसाको उसने वक्षु पारके तुखारिस्तान मे भेज दिया था। मूसाने मुठ्ठीभर आदिमियों की मददसे तेरमिजपर अधिकार कर लिया। स्थानीय शासक भाग गया। उसके बाद १५ साल तक मूसा वहाका स्वामी रहा। वह यजीद मुहल्लब-पुत्रकी राज्यपालताका समय (७०१-७०४ ई०) था।

इसी समय साबित कुतबापुत्रभी मूसासे आमिला। साबितका स्थानीय लोगोपर बहुत प्रभाव था। उसने स्थानीय राजाओ को अपनी ओर कर लिया और यजीद के तहसीलदारो को अन्तर्वेद (वक्षु और सिरदरिया के बीच के प्रदेश) से मार भगाया। अब सारे अन्तर्वेद का स्वामी मूसा था। वहा खलीफा का नहीं मूसा का शासन चल रहा था। इसी समय तुर्कों, सोगदो और हेफतालो ने मिलकर एक भारी सेना मुसलमानो से लड़ने के लिये भेजी, जिसे मूसा ने तितर-बितर कर दिया। लेकिन मूसा का साबित और उसके स्थानीय सहायको से झगडा हो गया। मूसा उन्हें भी दबाने मे सफल हुआ। साबित मारा गया। स्थानीय सामन्तो का मुखिया सोगद का इखशीद तरखून गोरक बडी वहादुरी के साथ लड़ता रहा, किंतु अत मे उसे भागने पर मजबूर होना पडा। ७०४ ई० मे राज्यपाल मुफज्जल मुहल्लब-पुत्र के हुकुम से सेनापति उस्मान मसऊदपुत्र ने सोगद के इखशीद और खुतल के शाह की मदद से मूसा को हराकर तेरमिज पर अधिकार किया।

इसीके बाद कुतैब खुरासान का राज्यपाल होकर आया। तालेकान आते ही उसने दिग्विजय आरभ कर दिया। मेवें होते बलख पहुंच उसने वहा के विद्रोह का दमन किया। बरमक खान्दान पीढियो से बलख के प्रसिद्ध नवविहार का महत रहता आया था। तत्कालीन बरमक भागकर कश्मीर चला गया। समझता था, कश्मीर ओर अफगानिस्तान के अपने सहधर्मियो-हिंदुओ की मदद से वह जन्मभूमि से म्लेच्छो को भगा सकेगा, किंतु अरब-शक्ति स्थानीय उत्पीडितो की सहायता पा अब दुर्जेय थी। स्वयं भारत का एक भाग (सिंध) पाच ही छ साल बाद अरबो के हाथ मे जानेवाला था। इसी समय तिब्बत के घुमन्तुओ ने अपना विशाल राज्य स्थापित किया था, जो त्यानशान और पामीर तक फैला हुआ था। चीन और तुर्कों की प्रतिद्वंद्विता के कारण उसे अरबो से मित्रता करनी पड़ी थी। फिर बरमक (परमक) को क्या सफलता मिलती? कुतैब ने बरमक की रानी को अपने हरम मे डाल लिया। उसके भाई तथा सभी देहकानो ने कुतैब का स्वागत और वक्षुतट तक उसका अनुगमन किया। कुतैब के

१ Turkistan Down to the Mongol Invasion

पराक्रम की कथाये वक्षुपार पहुँच चुकी थी। वहा कोई उससे लड़ने की हिम्मत नहीं रखता था। परले तटपर शगनियान का राजा अपने शत्रु शुगान और अश्रूनन के राजाओं के विरुद्ध—कुतैब के स्वागत के लिये प्रतीक्षा कर रहा था। पार होते ही उसने कुतैब को नगर द्वार की सोने की चाभी पेश कर राजधानी (तेरमिज) में पधारने के लिये निमन्त्रण दिया। कुतैब ने शगनियान पर यही उपकार किया, कि उसे खलीफा का करद बनाकर छोड़ दिया। अश्रूनन और शुगान के राजा भी व्रस्त थे। उन्होंने कर देकर छुट्टी ली। कुतैब वहा से मेर्व लौट गया। इसी साल उसने बादगियो के तरखून नीजक से अपनी शर्तों पर सधि की।

अगले साल (७०५-७०६ ई०) कुतैब की विजय-यात्रा फिर आरभ हुई। मेर्व से मेर्वरूद, और आमूल (चारजूय) होते उसने वक्षु पार किया। उसका लक्ष्य बुखारा था। बैकद वक्षु के दाहिने तट पर बुखारा से सबसे नजदीक का अतिसमृद्ध व्यापारिक नगर था। यह महा-सेठो की नगरी थी, जिनके पास चीन के रेशम और दूसरे व्यापार से अपार संपत्ति जमा थी। ऐसे नगर पर घुमन्तू लूटेरो की नजर सदा रहती थी, इसलिये सेठो ने अपने नगर की जबर्दस्त किलाबदी कर रखी थी। जैसे ही पता लगा, कि अरब उनके नगर की ओर आ रहे हैं, उन्होंने भी लड़ने की तैयारी कर ली। हर एक हथियार उठा सकनेवाला जवान सेना में शामिल हुआ। बैकदवालो ने सोग्दियो के पास भी सहायता के लिये प्रार्थना की। दुश्मन की सेना ने दो महीने तक कुतैब को घेरे रखा, और वह अपने स्वामी हज्जाज के पास सदेश तक न भेज सका। हज्जाज ने कुतैब की मगल कामना के लिये मस्जिदों में विशेष प्रार्थना करवाई। मध्य-एसिया का हरेक मुसलमान घर का विभीषण था। कुतैब के कितने ही दूत उनके भीतर घूम रहे थे। जो भी सोग्दी या तुर्क मुसलमान हो जाता, वह बिना मोल ही अरबों का गुप्तचर बनने के लिये तैयार हो जाता। कुतैब का प्रमुख चर तदर बुखारा की ओर गया हुआ था। उसे अच्छी रिश्तत मिल गई। उसने लौटकर अपने मालिक से कहा—“तुम्हारे सरक्षक हज्जाज पदच्युत हो गये।” कुतैब ने उसी समय अपने गुलाम सैयार से उसकी गर्दन कटवा दी और जिरार हसनपुत्र से कहा—“इस घटना को तुम्हें और मुझे छोड़कर और कोई नहीं जानता। अगर यह बाहर खुल गई, तो मैं निश्चय समझूँगा, कि यह तुम्हारा काम है। इसलिये अपनी जवान पर काबू रखना।” तदर के अनुयायियों ने कटे शिरवाले घड़ को देखा, तो वह जमीन पर गिर कर कहने लगे—“हमने समझा था, वह मुसलमानों का दोस्त है।” कुतैब ने कहा—“नहीं, वह विश्वासघाती था। भगवान् उसे किये का दंड देता, लेकिन उसे यही फल मिल गया। तैयार हो जाओ, कल शत्रुओं से मुकाबिला करना है।”

लड़ाई शुरू हुई। मुकाबिला सख्त था। कुतैब बड़ा बहादुर सेनापति था। वह सैनिकों की पाती में घूमता उनका उत्साह बढ़ा रहा था। शाम तक शत्रुओं में भगदड़ मच गई। बहुत कम ही लोग नगर के भीतर भाग कर जा सके, बाकी सबको अरबों ने तलवार के घाट उतारा। इसमें शक नहीं, बैकद (पैकद) जीतने में अरबों को भारी कुर्बानी देनी पड़ी। ५० दिनों तक मुसलमानों की सारी कोशिशें बेकार गईं और वह नगर के भीतर नहीं घुस सके। हर प्रयत्न में भारी प्राणहानि उठा कर लौटना पड़ा। एक टुकड़ी ने किले की दीवार के नीचे खाई खोदकर इसे सुरंग के जरिये भीतर के अस्तबल से जोड़ दिया। दीवार में दूसरा मार्ग बनाया, जिसके द्वारा उन्होंने अपने कुछ आदमियों को भीतर भेज दिया। जैसे ही मुसलमान किले के भीतर पहुँचे,

पहले गये आदमी उनसे आ मिले। कुतैब ने कह रक्खा था “इस सुरग से जो आदमी किले के भीतर पहले दाखिल होगा, मैं उसे खून का दाम दूंगा। अगर वह मारा गया, तो वह दाम उसकी सतान को मिलेगा।” उस्ताह मे आकर सभी सैनिक सुरग के भग्नस्थान पर टूट पड़े और किले को सर कर लिया। नागरिकों ने कुतैब से प्राण-भिक्षा मांगी। उसने भी व्यर्थ खून-बहाना पसंद नहीं किया।

अपनी एक सेना को वहाँ छोड़कर कुतैब मेर्व की ओर लौट चला। उसका एक सेनप बर्की एक प्रभावशाली सेठ की दो कन्याओं को जबर्दस्ती पकड़ कर ले जा रहा था। यह सुन इज्जत के वस्ते बैकदवाले फिर जानपर खेलने के लिये तैयार हो गये। लोगो ने नाक-कान काटकर अरबों की हत्या की। कुतैब एक ही फरसख आगे खूनबून में पहुँचा था, कि उसे विद्रोह की खबर मिली। उसने तुरत लौटकर शहरपर हमला कर दिया। नागरिक फिर मजबूती से मुकाबिला कर रहे थे। एक मास तक वह नगर को घेरे रहा। अंत में सुरग खोदकर आग लगा दी गई। दीवार गिर गई। बैकद वालों ने बहुत प्रार्थना की, किन्तु कुतैब ने उनकी एक भी नहीं मानी। शहर जीत कर उसने सभी हथियारबंद नागरिकों को मार डाला और बाकी नर-नारियों को गुलाम बना लिया। वह समृद्ध नगर अब ध्वसो का ढेर रह गया। सारे खुरासान के जीतने से जितनी गनीमत (लूटका माल) मिली थी, उससे भी अधिक बैकद से मिली। यहाँ के देवालय (बौद्ध बिहार) में एक सोने की मूर्ति^१ ४००० दिरहम वजन की (१ दिरहम=२५ ग्रैन, $\frac{1}{2}$ तोला) सोने की मूर्ति मिली और डेढ़ लाख मिस्काल (मिस्काल= $\frac{1}{16}$ तोला) भारी एक सुवर्णपात्र तथा कबूतर के अंडे के बराबर दो मोतिया। लोगो में कहावत थी, कि उन्हें पक्षियों ने अपने चोंचों में लाकर देवता के ऊपर चढ़ाया था। लेकिन मुसलमान अपने अल्लाह को छोड़कर किसी देवी-देवता के चमत्कार पर विश्वास करनेवाले नहीं थे। कुतैब ने अपने स्वामी हज्जाज के पास भेंट के साथ विजय की खबर भेजी।

^१ यद्यपि मुसलमान अधिकतर मूर्ति-भजक के रूप में ही प्रसिद्ध हैं, लेकिन जहाँ आमदनी का सवाल आया, वहाँ उन्होंने मूर्तियों के साथ दूसरा सुलूक भी किया। अबूरेहा अलबेरूनी (जन्म ९७३ ई०, मृत्यु २०४८ ई०) ने अपने ग्रंथ (किताबुल-हिन्द, अन्जुमन तरक्की उर्दू, दिल्ली १९१४, पृ० १४९-१५५) में लिखा है—

“मशहूर मूर्तियों में एक सूर्य के नाम की मूर्ति मुल्तान में थी। इसी सबब के कारण उसका नाम आदित्य रक्खा गया था। यह मूर्ति लकड़ी की बनी, बकरी के लाल रंग की खाल से मढ़ी थी। इसकी दोनों आँखों में दो पद्मराग मणियाँ (लाल) जड़ी हुई थी। मुहम्मद कासिम-पुत्र मुन्ब्वी ने जब मुल्तान जीता, और वहाँ की आबादी और समृद्धि के कारण पर विचार किया, तो उसे उसी मूर्ति के कारण पाया, क्योंकि लोग चारों ओर से उसके लिये तीर्थ करने आते थे। मुहम्मद कासिम-पुत्र ने उसको उसी हालत में छोड़ देना अच्छा समझा और अपमान के लिये मूर्ति की गरदन में गाय का गोشت लटका दिया, तथा वहाँ पर एक जामामस्जिद बनवा दी। (पीछे) जब मुल्तान पर करामिता वंश का अधिकार हुआ, तो जलम शैबान पुत्र ने उस मूर्ति को तोड़ डाला, उसके पुजारियों को कत्ल कर दिया और एक बुलन्द टीले पर अपना मकान पुरानी जामा मस्जिद की जगह बनवाया। उमैया वंश के समय जो कुछ किया गया था

बैकद बहुत पुराना शहर था। प्रधान वणिक्पथ चीन से फर्गाना होकर यहा आता था। व्यापारी यहा से नावो द्वारा ख्वारेज्म पहुचते, जहा से स्थल मार्ग होकर कास्पियन तट, फिर समुद्री रास्ते से काकेशस की कुरा नदी पकड, एक जोत पारकर काला सागर तट पर पहुच बहुमूल्य पण्योको जहाज से यूरोप के भिन्न-भिन्न देशो मे पहुचाते। चीन के व्यापार मे बैकद का बहुत बडा हाथ था। जिस समय कुतैब ने बैकद पर आक्रमण किया, उस समय अधिकांश परिवारो के मुखिया चीन तथा दूसरे देशो मे व्यापार के लिये गये हुये थे। लौट कर आने पर उन्होने अपनी स्त्रियो-बच्चो को दाम देकर अरबो के हाथो से छुडाया। वह फिर बैकद को आबाद करने मे लग गये। मध्य-एसिया का इतिहासकार नरशाखी लिखता है—“इतिहास मे यही ऐसा नगर है, जो जड-मूल से ध्वस्त हो जाने के बाद उसी पीढी मे अपने ध्वसावशेष पर समृद्धि के साथ पुन स्थापित हो गया।” “बैकद-निवासियो ने अरबो को कर देना स्वीकार किया। कुतैब ने सधिपत्र लिखकर शांति स्थापित की। उसने शरदकाल मे बैकद विजय किया था। जाडो के लिये वह फिर अपनी राजधानी मेवें लौट गया। कुतैब के पहले दो साल ज्यादातर लूट के अभियानो मे बीते। यद्यपि तेरमिज और बैकद विजय कर अब अरबो ने अपने को दुर्जेय साबित कर दिया था, किंतु अभी स्थायी राज्यविस्तार और शासन की स्थापना नही हो सकी थी। बैकद अन्तर्वेदका दक्षिण द्वार था। बलख से सोगद जाने का एक रास्ता तेरमिज से होकर भी था, किंतु वहा दरबद (लोहद्वार) से गुजरना पडता, जो सैनिक दृष्टि से आक्रमणकारियो के अनुकूल नही था।

७०६ ई० का वसंत आया। कुतैब फिर दिग्विजय के लिये निकला। उस समय, अन्तर्वेद के नगर और ग्राम दुर्गबद्ध थे, लेकिन बैकद के पतन से लोग समझ गये थे, कि अरबो से मुकाबिला करने का परिणाम क्या होता है। नुमुशकत और रातीना ने वार्षिक कर देना स्वीकार किया। लेकिन आगे बुखारा ही नही सारे सोगद के लोग—सोगदी और तुर्क—अपने देश और संस्कृति के शत्रुओ से लडने के लिये तैयार थे। ताराब, खूनवून और रामतीन के बीच मे कुतैब

उससे डाह करके पहिले की जामामस्जिदको बन्द कर दिया गया। जब अमीर महमूद (गजनवी) ने इस मुल्क से करामिता का अधिकार उठा दिया, तो पहली जामामस्जिद मे फिर से शुक्रवार की नमाज चालू की और दूसरी को बन्द कर दिया, जो कि अब सिर्फ मेहदी की पत्तियो का खलिहान भर रह गई है। थानेश्वर नगर की हिन्दू बडी इज्जत करते हैं। यहा की मूर्ति का नाम चक्र स्वामी है। यह मूर्ति प्राय पुरुष मात्र है और पीतल की बनी हुई है। इस वक्त वह गजनी के मैदान मे सोमनाथ के सिर के पास पडी हुई है। सोम-नाथ का सिर महादेव के शिशन के आकार का है।

सन् ५३ हिजरी (६७२ ईस्वी) की गरमियो मे जब सिसली (द्वीप) को जीता गया, और वहा से रत्न-जटित मुकुट पहिने सोने की मूर्तिया लाई गई, तो अमीर म्बाविया (६६१-६८० ई०) ने सिन्ध भेज दिया, जिसमे उन्हे वहा के राजाओ के हाथ बेच दिया जाय। उसने देखा कि अखण्ड बेचने मे कीमत ज्यादा—अर्थात् मूर्ति के एक दीनार भर सोने की कीमत एक दीनार सिक्के की कीमत से ज्यादा मिलेगी। उसने धर्म की नीति के विरुद्ध शासन की नीति के आधार पर मूर्ति के कारण होने वाले भारी दोष (मूर्ति पूजा आदि) का ख्याल नही किया।

की सेना घिर गई। सोगद का तरखून मलिक गोरक (गूरक), खुनुक-खुदात, बर्दान (बुखारा)-खुदात और चीन-सम्राट का भाजा राजकुमार कुर-मगानून ४०००० सेना के साथ आ डटे थे। कुतैब लौटने की सोच रहा था, जब कि एकाएक तुर्क उसके ऊपर टूट पड़े। शत्रु की शक्ति को देखकर अरबों में उत्साह नहीं था। मगर कुतैब बीच में कूदा। उसके उत्साह दिलाने पर अरब लड़ने के लिये तैयार हो गये। दोपहर तक अल्लाह ने काफ़िरो की सेना को भगा दिया। विजयी कुतैब तेरमिज और बलख के रास्ते लौटा। रास्ते में फारयाब में उसे हज्जाज का पत्र मिला, जिसे पढ़कर स्वामी के हुकुम के अनुसार वह बर्दानखुदात (बुखारा के राजा) को जीतने के लिये लौटा। जमीन में उसने वक्षु पार किया। रास्ते में सोगद (समरकंद), केश (शहरसब्ज़) और नसाफ (नखशाब) के भटों को हराता वह बुखारा पर पड़ा और निचले खर्काना में बर्दान के दाहिनी ओर अपनी छावनी डाली। शत्रु की बड़ी सेना ने उसपर आक्रमण किया। ढाई दिन तक घमासान लड़ाई होती रही। हम जानते हैं, कि इससे पहले भी (६७३ ई० और ६७६ ई० में) बुखारा की खातून को अरबों ने अनेक बार हराया, लेकिन तुर्क इतनी जल्दी हार माननेवाले नहीं थे, तभी तो अरब युद्ध में तुर्कों का लोहा मानते थे। अतः अरब विजयी हुये। अब कुतैबने बर्दान-खुदात (बुखारा) पर सीधे आक्रमण किया, किंतु असफल हो उसे मेवं लौटना पड़ा। कुतैब ने हज्जाज के पास विवरण भेजा, तो उसने नक्शा मांगा। नक्शा मिलने के बाद उसने कुतैब को हिदायत दी—“अपने पूर्व लक्ष्य पर लौट जाओ और अपनी प्रार्थनाओं में उसे छोड़ने के लिये पश्चात्ताप करो। दुश्मन के कमजोर स्थान पर आक्रमण करो। “किश बिकिश बसिफ नफसन बरिद् बर्दान” (केश को पीस डाल, नसफ को नष्ट कर डाल, और बर्दान को भगा दे)। सावधानी रखना, जिसमें तुम घिर न जाओ। रास्ते की ओर कठिनाइयों को मेरे ऊपर छोड़ दो।”

७०८ ई० (९० हि०) में कुतैब ने बुखारा पर फिर आक्रमण किया। खबर पाते ही बर्दान-खुदात ने सोनिद्यों और दूसरे पड़ोसियों को सहायता भेजने के लिये कहा, किंतु उनके आने से पहले ही कुतैब वहां मौजूद था। उसने बुखारा को घेर लिया। कुमक आते ही अरबों पर आक्रमण हो गया। इस युद्ध के बारे में इतिहासकार तबरी लिखता है—“जब तुर्क नगरसे बाहर निकल आये, तो अज्द कबीलेवालों ने अलग अलग लड़नेकी आज्ञा मांगी। उन्होंने सीधे तुर्कों पर आक्रमण कर दिया। कुतैब अपने कवच पर हरा मुखाच्छादक डाले बैठा बड़े धैर्य से देखता रहा। तुर्क अज्दों को कुतैबके खेमों तक खदेड़ते आये, किंतु यहा स्त्रियों ने घोड़ों के मुह पर पीट पीटकर मुसलमानों को मजबूर किया कि वह दुश्मन की ओर लौटे ? फिर उन्होंने तुर्कों को खदेड़कर पहली जगह पहुंचा दिया। एक ऊँचे टीले का लेना मुश्किल, मालूम हो रहा था। कुतैब ने ललकारा—“कौन है, जो उन्हे यहां से भगायेगा ?” लेकिन कोई आगे नहीं बढ़ा। सारा कबीला खड़ा मुह ताकता रहा। फिर कुतैबने बेनी-तमीन कबीले को उनकी पुरानी प्रतिष्ठा और वीरता का स्मरण दिलाते ललकारा। तमीनों के सरदार बाकीने झड़ा उठाते कहा—“ओ तमीन की मतानी क्या तुम आज मुझे छोड़कर भाग जाओगे ?” “नहीं नहीं” की आवाज आई। वह वहां पहुंचे, जहां पर कि एक छोटी सी धारा शत्रु को अलग करती थी। सवार-अफमर हुसैनी धारा में पहले कूदा। बाकी लोग उसके पीछे पीछे थे। बीच में पहुंचकर बाकीने झड़ा हुसैनी को दे दिया, फिर अपनी देख-रेख में उस धारा पर पुल बनवाकर बोला—“जो प्राण न्योछावर करने के लिये तैयार है, वह पार आवै, जो नहीं चाहता, वह अपनी जगह पर ही रहे।” ८०० आदमी पिल पड़े।

फिर बाकी ने हुसैनी के रिसाले को शत्रु पर प्रहार करते हैरान करने के लिये कहा, और खुद पैदल सैनिकों के साथ आक्रमण करने के लिये बढ़ा। दोहरी मार के सामने तुर्क सैनिकों का छक्का छूट गया। अरब पुल पर से टूट पड़े। शत्रु सेना में भगदड़ मच गई, वह पूर्णतया पराजित हुई। खाकान और उसके पुत्र दोनों घायल हुये। यह देखकर आसपास के लोग कुतैब के नाम से कापने लगे। सोगद के तरखून गोरक ने दो सवारों के साथ धारा के पास जा बात करने के लिये प्रतिनिधि बुलाया और कुनैब को कर देना स्वीकार कर वह अपने राज्य (समरकंद) की ओर चला गया। कुतैब अब नीजक के साथ मेर्व की ओर लौटा। नरशाखी के कथनानुसार हैयान नवातयेन ने सोगद तरखून से कहा—अधिक बुद्धिमानी इसी में है, कि मित्रों को छोड़कर अपने राज्य में लौट चले। “जब तक गर्मी है तब तक हम वहां रहेंगे, जब जाड़ा शुरू होने पर लौटेंगे, उस समय सभी तुर्कों को तुम अपने विरुद्ध पाओगे। तुम्हारे सुंदर सोगद को भला वह कब छोड़ना चाहेंगे ?” तरखून को यह बात पसंद आई। फिर पूछने पर हैयान ने कहा “कुतैब के साथ सुलह करो, हरजाना दो। फिर तुर्कों को कहो, कि हज्जाज सिंध पर भी सेना भेज केश और नकशाब के रास्ते सेना भेज रहा है। तुम पीछे लौटोगे, तो वह भी जरूर लौट जायेंगे।” उसी रात तरखून ने कुतैब से संधि की। उसे २००० दिरहम दिया। कुतैब ने वचन दिया, कि हम तुम्हारे राज्य (समरकंद) को तग नहीं करेंगे। चीन-सम्राट् के भाजेने भी तरखूनका अनुसरण किया। कुतैब का बुखारा पर यह चौथा आक्रमण था।

स्वतंत्रता का अंतिम प्रयास—७०९ ई० (९१ हि०) में फिर कुतैब ने विजय-यात्रा आरंभ की। उसके अनुयायियों में बादगियों का राजा नीजक और तुखारिस्तान के राजा जिगाय का एक मंत्री भी था। नीजक को आशा थी, कि कुतैब तुर्कों से पिट जायगा, किंतु वह आशा सफल नहीं हुई। उसने देखा, अरब-शक्ति बड़ी तेजीसे बढ़ती जा रही है। यही समय है, जब कि मध्य-एशिया की दबो जातियों को अपनी स्वतंत्रता के लिये अंतिम प्रहार करना चाहिये, फिर ऐसा समय मिलने वाला नहीं है। किसी बहानेसे कुतैबसे छुट्टी ले वह तुखारिस्तान चला गया। खुल्म में पहुंचते ही उसने बगावत का झंडा खड़ा कर दिया। अपने खजाने को काबुल के राजा (हिंदू) के पास भेजकर उससे मदद मांगी। बलख के राजा (इस्पाहबद), मेर्वरूद, तालिकान, फारयाब और जुज्जान के राजाओं को भी धर्मयुद्ध में सम्मिलित होने के लिये निमंत्रित किया। सब तैयार हो गये, लेकिन तुखारिस्तान-शासक जिगाय साथ नहीं हुआ। नीजकने अपने अधिराज (जिगाय) के पैरों में सोने की बेंड़ी डालकर बंदी बना लिया और तुखारिस्तान से कुतैब के प्रतिनिधि को बिदा कर दिया। कुतैब को यह खबर उस समय मिली, जब कि जाड़ा शुरू हो चुका था, और सेनाये जाड़े के निवास के लिये जहां-तहां बिखर गई थी।

तुखारिस्तान का भीषण सर्षर्ष ९१ हिजरी (७०९ ई०) के शरदमे शुरू हुआ। पिछली अर्ध-शताब्दी से अरबों के साथ यहां के लोगों का सर्षर्ष हो रहा था। वह उनसे जरा भी दया-माया की आशा नहीं रखते थे, न उनकी किसी बात पर विश्वास रखते थे। संधि करना और तोड़ना अरब सेनपों का साधारण काम था। क्रूरता में वह उत्तर के घूमन्तू विजेताओं को भी मात करते थे। धन और स्त्रियों का लूटना शायद ही कभी इतना लोगों ने देखा हो। सबसे बुरी बात जो वहां के लोगों को खटकती थी, वह था उनके मन्दिरों, धर्मस्थानों और धार्मिक वस्तुओं का अल्लाह के नाम पर निर्दयतापूर्वक सहार करना। तुखारिस्तान और मध्य-

एशिया के लोग धार्मिक बातों में सकीर्ण नहीं थे। वहाँ बौद्ध, जर्थुस्ती और ईसाई शांतिपूर्वक रहा करते थे। उनके शासक (तुर्क) किसी एक धर्म को मानते हुये भी सभी धर्मों के प्रति उदारता दिखलाते थे।

कुतैब के लिये जरूरी था, कि नीजक को इस बगावत के लिये दंड दे, नहीं तो मध्य-एशिया पर जो उसकी धाक जम गई थी, उसका खात्मा हो जाता। उस समय मेर्व में मौजूद सैनिक ही आसानी से मिल सकते थे। उसने अपने भाई अब्दुर्रहमान को २००० सेना के साथ दलख भेजा और वहाँ बसत तक चुपचाप रहने को कहा। फिर तुखारिस्तान पर आक्रमण करना, उस समय “मैं तुम्हारे पास रहूँगा।” जाड़े के अंत में शहर अवावद, अबहरशहर (नेशापुर), सरख्सा, और हिरात से भी सेना मगवा ली। मेर्व में सैनिक और नागरिक अधिकारी नियुक्त कर कुतैब ने पहला आक्रमण मेर्वरूद पर किया। वहाँ का सामन्त हारकर भागा और उसके दो पुत्रों को कुतैब ने सूली पर चढ़वा दिया। फिर तालिकान में लड़ाई हुई, जिसमें तुर्क हार गये। जो मारे जाने से बचे, उन्हें अरबों ने फासी पर लटका दिया। कहते हैं, उनके लिये मील लंबी फासी की पाती खड़ी की गई थी। अरब शासक नियुक्त करके कुतैब आगे बढ़ा। फाराब और जुज्जान ने बिना विरोध के अधीनता स्वीकार की। कुतैब का स्थानीय शासक पर या तो विश्वास नहीं था, या वह उनकी अवश्यता नहीं समझता था। अरब इतने शक्तिमान् थे, कि वह स्वयं शासन कर सकते थे। कुतैब ने इन दोनों जगहों के लिये भी अरब अफसर नियुक्त किये। बलखवाले पहले से शांत रहे।

एक दिन रहने के बाद कुतैब खुल्मकी पहाड़ियों में घुसा। नीजक ने बगलान में अपनी छावनी डाली थी और घाटे की रक्षा के लिये एक टुकड़ी नियुक्त कर दी थी। कुतैब तूफान की तरह आगे बढ़ता जाकर नीजक के दुर्भेद्य गढ़ के सामने रुका। रूब और समिन्जान के राजाओं ने क्षमादान पा गढ़ का दूसरा रास्ता बतला दिया। तुर्क बुरी तरह से घिर गये। अरबों ने सबको तलवार के घाट उतारा, और बहुत थोड़े जान लेकर भाग पाये। वहाँ से कुतैब समिन्जान की ओर चला। बगलान और समिन्जान के बीच के रेगिस्तान में नीजक किलाबदी करके स्वयं केर्ज चला गया, जिसका रास्ता एक ही ओर से था, जिसपर कोई घोड़े पर सवार होकर नहीं जा सकता था। कुतैब ने दो महीने तक उसे घेरे रखा, लेकिन किले को नहीं सर कर सका। नीजक की रसद खतम हो गई, कुतैब को भी इस दुर्गम पहाड़ी में लड़ने में डर लगने लगा। उसने शाम से काम निकालना चाहा, और सुलेमान को नीजक के पास आत्म-समर्पण करने के लिये भेजते उससे कह दिया, कि अगर सफल नहीं हुये, तो तुम्हें जान से हाथ धोना पड़ेगा। वह जाड़े के इन्तिजाम और कई दिन के सामान के साथ गया। नीजक से बात हुई। नीजक ने क्षमादान की शर्त रखी। प्राण बच जायेंगे, इस आशा से वह सुलेमान के साथ कुतैब के पास गया। बंदी बनाकर कुतैब ने उसे पास रखा और बसरा में हज्जाज के पास पत्र भेजा। उस समय अरब और अजम (इराक और ईरान) का एक ही मलिक (उपराज) होता था। ४० दिन के बाद उत्तर आया, कि नीजक को मार डालना आवश्यक है। लेकिन कुतैब वचन दे चुका था। वह तीन दिन तक तम्बू में बंद रहकर सोचता रहा। लेकिन स्वामी की आज्ञा का कैसे उल्लंघन कर सकता था? चौथे दिन उसने नीजक और उसके ७०० अनुयायियों को मरवा, नीजक के शिर को हज्जाज के पास भेज दिया। यह एक ही उदाहरण नहीं था। ऐसे अनेक उदाहरणों के कारण मध्य-एशिया के लोग अरबों को झूठे, धोखेबाज और खून के प्यासे मानते थे। नीजक ने अपने अधिराज तुखारिस्तान के राजा को

सोने की जजीर में बाध रक्खा था। उसे भी मुक्त कर कुतैब ने दमिस्क भेज दिया। कुतैब यह विश्वासघात करने के बाद मेर्व लौटा। जुज्जान के राजा ने प्राणभिक्षा पाने की शर्त पर अधीनता स्वीकार करनी चाही। कुतैब ने स्वीकार किया। राजा स्वयं सामने आया और अपने लिये जामिन दिये। कुतैब ने एक अरब हबीब को बुलाने के लिये भेजा। जुज्जान के राजा ने अपने परिवार के कई आदमी भेजे, फिर स्वयं मेर्व गया। उसके साथ कुतैब ने सधि की, किंतु लौटते वक्त जहर देकर तालिकान में उसे मरवा दिया। इस पर लोग बिगड़ उठे और उन्होंने हबीब को मार डाला। अब कुतैब ने राजा के परिवार के सभी जामिनो को मार डाला। इसी साल कुतैब ने सूमान, केश, नख्शाब तीनों नगरो पर अधिकार किया और सोग्द के तरखून के ऊपर अपने भाई अब्दुर्रहमान को आक्रमण करने के लिये भेजा। तरखून ने कर और जामिन दिया। बुखारा में कुतैब भी मौजूद था। अब्दुर्रहमान समरकंद से लौटकर वहां आ भाई से मिला। फिर दोनों साथ मेर्व लौटे। तरखून की इस बात से सोगाद के लोग नाराज हो गये। तरखून ने आत्म-हत्या कर ली।

७११ ई० (९३ हिजरी) का साल आया। इसी साल हज्जाज ने अपने सेनापति मुहम्मद कासिमपुत्र को सिधविजय के लिये भेजा। वह सिधु के मुहाने पर उतरा। आपस में लड़ते सिध्दी राजाओं को हराकर उसने सारे मिथ को खलीफा के लिये जीत लिया। हज्जाज की विजयाकांक्षा इतनी सफलता से थोड़े ही तृप्त होनेवाली थी। उसका मनसूबा चीन विजय करने का था। शायद उसे मालूम नहीं था, कि चीन कितना दूर है, वहां का थाडवश कितना मजबूत है और रास्ते में तरिम उपत्यका तिब्बती घुमन्तुओं के शक्तिशाली हाथों में है। हज्जाज ने घोषित कर दिया था, कि जो कोई चीन को जीतेगा, उसे हम चीन का राज्यपाल (बली) बनायेंगे। ऐसी सरगरमी में कुतैब बिना कुछ नई सफलता दिखलाये चुप रहकर अपने स्वामी का कृपापात्र कैसे रह सकता था? उस समय ख्वारेज्मका राजा चिगान था, जिसका छोटा भाई खोरजाद बड़े भाई से अधिक प्रभावशाली था। वह उसमें खतरा समझने लगा और भाई के डर से मुक्त होने के लिये चिगान ने चुपके से कुतैब को बुला लिया। कुतैब एकाएक हजारारुप जा पहुंचा। हजारारुप वह जगह है, जहां वक्षु के दोनों किनारे इतने सँकरे हैं, कि थोड़े से आदमी बड़ी सेना का मुकाबिला कर सकते हैं। खोरजाद ने दूसरा चारा न देखकर आत्मसमर्पण कर दिया। कुतैब ने उसे चिगान के हाथ में दे दिया। चिगान ने कुतैब की बड़ी भेट-पूजा और स्वागत-सत्कार किया। चिगान का एक और प्रतिद्वंद्वी खामजर्द का राजा था, जिसे दबाने में उसने कुतैब से मदद चाही। यह काम कुतैब ने अपने भाई अब्दुर्रहमान को सौंपा। अब्दुर्रहमान ने हमला करके खामजर्द को मार डाला, देश को जीत लिया और खामजर्द के ४००० दासों और बहुत से लूट के माल को लिये मेर्व लौटा।

इसी समय सोग्दमें फिर भारी उथलपुथल मची। कुतैब सीधे समरकंदपर आक्रमण करने गया। सोग्दियों ने अपने वीर नेता तथा सोग्दके इखशीद के नेतृत्वमें अरबोंका भयकर प्रतिरोध किया। अरबोंकी सेना बहुत बड़ी थी। तुर्क अब अगर कुछ शक्ति रखते थे, तो उत्तरमें, किंतु इस समय पश्चिमी तुर्क कगानको अपने भीतरी झगड़ोंसे फुरसत नहीं थी। अरबोंका खतरा उनके लिए दूरकी बात थी। अरब भारी सख्यामें पहुंचकर समरकंदको घेरनेमें सफल हुए। गोरकने शाश(ताश्कंद)के राजासे सहायता मगाई। कुतैबने २००० शाशियोंपर एकाएक

आक्रमण करके उन्हें मार भगाया। काफी समय तक गोरकने मुकाबिला किया। कितनी ही बार शहरसे बाहर निकलकर तुर्क अरबोंपर आक्रमण कर उन्हें तग करते, लेकिन रसद-पानीकी कमी और लड़नेकी शक्ति कम हो जानेके कारण अतमे गोरकने सुलहकी प्रार्थनाकी। कुतैबने इसके लिए भारी हरजाना मागा और शहरमे मस्जिद बनवा, नमाज शुरू करानेकी बातको भी शर्तोंमे रक्खा। शर्तें मजूर करनी पड़ी। ४०० हथियारबंद अरब समरकंदसे बुतपरस्तीको नेस्तोनाबूद करनेके लिए घुसे। उन्होंने समरकंदकी सभी मूर्तियोंको तोड़ या जला डाला। इस कामको सबसे पहले कुतैबने अपने हाथों आरंभ किया। गोरक खूब जानता था, कि अरब क्यों सफलता प्राप्त कर रहे हैं। उसने कुतैबके उत्तरमे कहा भी था—“तू अपने शत्रुओंको उनके भाई-बिरादरोकी मददसे जीत रहा है।” और ऐसे भाई-बिरादर मुस्लिम अरबोंकी मदद करनेके लिए सभी देशोंमे तैयार थे।

७१२ ई० (९४^१ हि०) के जाड़ोमे विश्राम करनेके बाद कुतैब फिर एक बड़ी सेनाके साथ विजययात्राके लिए निकल वक्षु पार हुआ। इस सेनामे केश, नखशाब और ख्वारेज्मके भी २०००० सैनिक थे। काशान, और खोजन्दको जीत उसने शाशपर आक्रमण कर इस्लामकी विजयध्वजा मध्य-एशियाके सबसे उत्तरी नगरपर जा गाड़ी। आधी शताब्दीके प्रतिरोधके बाद मानो मध्य-एशिया अब भवितव्यताके सामने शिर झुकानेके लिए तैयार था। क्यों न होता, जब कि धर्म बदल कर अपने भाई ही लाखोंकी तादादमे विजेताओंका साथ दे रहे थे। अरब-विजेता तीन पीढ़ियोंमे अजमी (गैर-अरब) लोगोंके संपर्कमे आकर उनकी स्त्रियोंसे सनाने पैदा कर अब शुद्ध अरब भी नहीं रह गए थे। जहा तक स्त्रियोंका संबंध था, अरब शुरू ही से रक्त-शुद्धि को नहीं मानते थे। कुतैबने बुखारा, समरकंद आदिमे पहले पहल मस्जिदें बनवाई, जो कि अब भी इन शहरोंकी सबसे पुरानी मस्जिदें हैं। उसने बुखाराके आधे घरोंको खाली करवा उनमे अरबोंको बसा दिया था। मेवमे पहलेही ऐसा किया जा चुका था। घरमे बसे अरब जहा सुरक्षा रखनेका काम करते थे, वहा हर तरीकेसे लोगोंको मुसलमान बनानेका प्रयत्न करते थे। अज्ञान और कुरानका ऊंचे स्वरसे पाठ कुफ्र भगानेकी सबसे बड़ी दवा है, यह कुतैबकी मान्यता थी।

७१३ ई० मे कुतैबका सरक्षक हज्जाज मर गया। अगले साल खलीफा वलीद भी मर गया, जो कि भारतवर्षके अरब-शासित प्रदेश (सिंध) का प्रथम मुसलमान खलीफा था।

६ खलीफा सुलेमान (७१४-७१७ ई०)

वलीदके बाद उसका भाई सुलेमान नया खलीफा बना। वलीद अपने पुत्रको खलीफा बनाना चाहता था, जिससे हज्जाज भी सहमत था। स्वामीके सहमत होनेपर कुतैब कैसे असहमत रह सकता था? अपनी इस सहानुभूतिके कारण कुतैबको नया खलीफा फूटी आँखों देखना नहीं चाहता था। कुतैबको यह बात मालूम हो गई थी, इसीलिए सुरक्षित समझ उसने परिवारको समरकंद पहुँचा दिया। ७१४ ई० (९६ हि०) मे कुतैबने अंतिम अभियानका नेतृत्व किया। वह त्यागशानकी पहाड़ियोंमे घुस गया, और फार्गाना-विजय करके तेरक जोत पारकर काशगरके

^१ ७-१०-७१२ से २८-८७-७१३ ईसवी तक (सिन्धोनिसिचिस्किय तबलिस्ती, लेनिनग्राद १९४०)

ऊपर चढा। तुर्कोंके उत्तराधिकारी उइगुर फूटकी बीमारीसे ग्रस्त थे, और हरेक उइगुर राजकुमार कगान से अपनेको स्वतंत्र समझता था। काश्गर, खोतन, कुलजा आदि सभी जगहोंके राजकुमार अलग-अलग स्वतंत्र शासक बन बैठे थे। कुतैबको एक जगह एक ही छोटे राजासे मुकाबिला करना पड़ता था। काश्गरके राजाको नतमस्तक होना पड़ा। लेकिन कुतैब केवल राज्य ही दखल करना नहीं, बल्कि वहाँके लोगोंको मुसलमान भी बनाना चाहता था। यह जहाद, धर्मयुद्ध था। धर्मयुद्धकी क्रूरताको अरबोंने कहा तक पहुँचा दिया था, इसे कहनेकी अवश्यकता नहीं। धर्म-मदिरो और धर्मके नेताओंके साथ वह किसी प्रकारकी दया दिखलानेके लिए तैयार नहीं थे। इस शताब्दीके आरम्भमें जर्मन विद्वान् लेकाकने रेगिस्तानमें एक उजड़े नगरकी खुदाईके वक्त एक भयंकर दृश्य देखा था। एक घरके भीतर कितने ही बौद्ध और नेस्तोरी भिक्षु तलवारके नीचे ढेर हुए पाये गये। यद्यपि इस्लामने आरम्भिक कालमें ईसाइयों और यहूदियोंके प्रति बहुत सहानुभूति दिखलाई थी, पैगंबर मुहम्मद स्वयं उनके प्रशंसक थे, किंतु अब नेस्तोरी ईसाई भी अरब-विजेताओंके लिए काफिरोसे कम घृणाके पात्र नहीं थे। मध्य-एशियाका यह पूर्वी भाग (तारिम-उपत्यका) कुतैबके सामने “त्राहि मा” “त्राहि मा” करता रहा, किंतु उसका कोई फल नहीं हुआ। कहीं पर किसीने यदि थोड़ा मुकाबिला किया, तो उसे बड़ी निर्दयतापूर्ण हत्याका सामना करना पड़ा, जिसमें बच्चे-बूढ़े भी नहीं बच सके। तुर्फानके लोगोंने अरबोंको देखते ही इस्लाम स्वीकार कर लिया। इसीसे वह धन और जन दोनोंकी रक्षा समझते थे। कुतैबकी सेना क्यों न लड़नेके लिए तैयार होती, जब कि वह जानती थी, कि रेशम-पथके इन समृद्ध नगरोंकी सारी संपत्ति उन्हें लूटमें मिलने वाली है।

लेकिन, इस अपार लूटने अरबोंके भीतर भी भारी ईर्ष्याका बीज बो दिया था। कुतैबके अनुयायी एक दूसरेके धनको देखकर अपने स्वामीसे भी सतुष्ट नहीं थे। कुतैबका पुराना सरक्षक हज्जाज मर चुका था। नया खलीफा सुलेमान उसका शत्रु था। खलीफाका प्रधान सलाहकार यज़ीद मुहल्लबपुत्र था, जिसे कुतैबने खुरासानके राज्यपालके पदसे बर्चित किया था। इधर खुरासानके अरब कबीलोंमें दलबन्दीने भयंकर वैमनस्य पैदा कर दिया था। भविष्य क्या होगा, इसे कुतैब जानता था। उसने एकके बाद एक तीन चिट्ठियाँ दूत द्वारा खलीफाके दरबारमें भेजते दूतसे कह दिया—इन तीनों चिट्ठियोंमेंसे पहले उस चिट्ठीको देना, जिसमें खलीफाके प्रति राजभक्ति प्रकट की गई है, फिर दूसरी चिट्ठी देना, जिसमें यज़ीद मुहल्लबपुत्रके प्रति घृणा प्रकट की गई है, तब तीसरी छोटे कागजवाली चिट्ठी देना, जिसमें लिखा है—“मैं सुलेमानको अपना खलीफा नहीं मानता और मैंने उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया है।” कुतैबने दूतको कह रक्खा था, कि चिट्ठी देते वक्त खलीफाके चेहरेका भाव देखते रहना। यदि वह पहले पत्रको पढ़कर उसे यज़ीदको देदे, तो फिर उसके हाथमें दूसरा पत्र देना, यदि उसे भी वह यज़ीदको दे,

‘अल्बेरूनी ने ‘किताबुल हिन्द’ (पृ० २२४) में लिखा है—“किरतास मिस्र में बर्दी की गोद से बनाया जाता है, और उसकी बनावटमें अक्षर खोद दिया जाता है। करीब करीब हमारे समय तक खलीफोंके आज्ञा-पत्र इसी पर लिख जाते थे। इसमें शब्दों के बदलै जानेकी सभावना नहीं है, क्योंकि वह इससे खराब हो जाता है। कागज चीनका अविष्कार है। पहिले एक चीनी ने समरकन्द में कागज बनाया।”

तो तीसरा पत्र पेश करना । खलीफाने पत्रको यजीदके हाथमें देनेके सिवा और कोई क्रोधका भाव प्रकट नहीं किया । दूत लौट आया । कुतैबके दूसरे और तीसरे पत्र खलीफाको नहीं दिये गये, इसलिए खलीफाने उसे उसके पदपर बहाल रखनेका स्वीकृतिपत्र दे अपने एक दरबारीको भेजा । हलवाई (बगदादसे उत्तर-पूरब ईरान और तुर्ककी सीमापर एक महत्वपूर्ण नगर) में पहुँचकर खलीफाके दूतने सुना, कि कुतैबने बगावत कर दी है । वह वहीसे लौट गया ।

अपने दूतसे सारी बातें सुनकर कुतैबको जल्दी करनेके लिए अफसोस हुआ । सलाह करने-पर उसे मालूम हो गया, कि सुलेमान उसे क्षमा नहीं करेगा, हा, इस्लामकी सेवाओंके लिए शायद उसका प्राण बच जाये । कुतैबने कहा “वाय, मौतसे मुझे डर नहीं, लेकिन खलीफा जरूर यजीदको खुरासानका वली बनायेगा, और मुझे सारी दुनियाके सामने बेइज्जत करेगा । इससे मुझे मौत अधिक पसंद है ।” उसके भाई अब्दुर्रहमानकी सलाह थी—“समरकंद जाकर अपने अनुचरोसे कहो जिसे मेरे साथ रहना हो, वह रहे और जो लौट जाना चाहता हो, वह लौट जाये । इसके बाद खलीफासे स्वतंत्र होनेकी घोषणा कर दो ।” लेकिन, कुतैबने अपने दूसरे भाई अब्दुल्ला की सलाह मानी और तदनुसार अपने अफसरोको बुलाकर खलीफाके विरुद्ध विद्रोह करनेके लिये बड़ा जोशीला व्याख्यान दिया, अपनी इस्लामकी सेवाओं और सफलताओंकी बात कही और यजीदके दुष्कर्मोंको खोलकर कहा । तब भी उसके अफसर बिल्कुल चुप रहे । इसपर कुतैब गुस्सेमें पागल होकर अपने सहायकोको “कायर, बुद्ध, काफिर, पाखंडी” कहते कापते हुए अपने महलमें चला गया । अब्दुर्रहमान और दूसरोंने उसे शांत करनेकी कोशिश की, मगर कुतैब किसीकी बात माननेके लिए तैयार नहीं था । अरब भी इस बात को सहन नहीं कर सकते थे, विशेषकर, जबकि वह जानते थे, कि इस्लामका खलीफा कुतैबके विरुद्ध है । उन्होंने बदला लेने का नारा लगाते उसके महलको घेर लिया । जिनके बलपर उसने सारी सफलतायें प्राप्त की थी, और काफिरोपर अत्यन्त निर्दयतापूर्ण अत्याचार किए थे, वही अब उसके जानके गाहक हो गये । कुछ लोगोंने उसके अस्तबल में आग लगा दी । एक टुकड़ी ने उसके दरबार-हालमें दाखिल हो पहले ही तीरसे घायल कुतैब का तुक्का बोटी कर डाला । इस तरह ४६ सालकी उम्रमें धर्मके नामपर नृशंसता करनेमें अद्वितीय कुतैबका अवसान हुआ ।

कुतैब जैसे दूसरे इस्लाम-प्रचारक शायद ही और हुए हो । अपने बुखाराके चारो अभियानोंमें वह वहाके नागरिकोंको उनका धर्म छोड़ाकर जबर्दस्ती मुसलमान बननेके लिए बाध्य करता रहा । उस समय तो लोग प्राण और धनकी हानिके डरसे मुसलमान हो जाते, किंतु फिर उन्हें अपनी जातीय सस्कृति और सबंधी याद आते, तो फिर वृत्त-परस्त (बुद्ध-पूजक) बन जाते । ७१२ ई० (९४ हि०) में समरकंदके एक अग्निमंदिरको गिराकर उसकी जगह कुतैब ने जुमा (शुक्रवार) की नमाजके लिए एक बड़ी मस्जिद बनवाई, जिसमें जो भी नमाज पढ़ने जाता, उसे दो दिरहम दिया जाता । कुतैबने घरोंको खाली करके ही अरबोंको नहीं बसाया था, बल्कि हर परिवारको अपने घरमें एक-एक अरब रखनेके लिये मजबूर किया था, जो चर, धर्म-प्रचारक और घरदामाद सबका काम करता । एक अग्रज इतिहासकार डेनिसन् रास^१ ने लिखा है “उस (कुतैब) का स्वभाव

^१ The Heart of Asia “His character was an epitome of the qualities, which made Islam a terror to man-kind, and ultimately conspired to reduce it to emptance.”

उन गुणोका राशीभूत रूप था, जिसने मानवताके लिए इस्लामको भयकी वस्तु बना दिया और अतमे उसे निष्पौरुष बना देनेमे सहायक हुआ।”

कुतैबके बाद विद्रोहियोंके अगुवा बाकीने खुरासानका राजकाज सभाला।

(१६) यजीद मुहल्लब-पुत्र (७१५ ई०) कुतैबके मरनेके ९ मास बाद यजीद राज्यपाल बनकर आया। उसने आते ही बाकीको पकडकर बदीखानेमे डाल दिया और कुतैबके हमरे साथियोंको दड दिया। कुतैबके अत्याचारोसे सोगदके लोगोमे असतोष था, और आशा की जाती थी, कि यजीद पहले उधर जायेगा। किंतु, यजीदने पूरब न जाकर खुरासानसे पश्चिमकी ओर विजय-यात्रा करनी चाही। ७१६ ई० (९८ हि०) को उसकी सेना जुर्जान और तबारिस्तानपर पडी। कास्पियनके पश्चिम खजारोका बहुत जोर था, जिनसे रक्षा पानेके लिए अजोफ तट तक किलाबदी की गई थी, तो भी खजार ओर्दूका आतक इतना था, कि सीमाके दक्षिणके निवासी अपनी सुरक्षाके लिए खजारोको भी कर दिया करते थे। यजीदने खुरासानका प्रबध अपने पुत्र मुखल्लदके हाथमे छोडा था। उमैया (और पीछे अब्बासी) वंशकी शासन-व्यवस्थाके अनुसार खलीफा स्वयं अपना मलिक (क्षत्रप, उपराज) नियुक्त करता, जो अपनी इच्छानुसार किसीको प्रदेश का वली (राज्यपाल) बनाकर भेजता। वली अपने अधीनस्थ सारे कर्मचारियोंकी नियुक्ति करता। जब तक नीचेवाले के लूटके मालमेसे ऊपरवालोको काफी भेंट मिलती रहती, तब तक उसको कोई खतरा नहीं था। जुरजानके लोगोने अपनी स्वतंत्रता, धर्म और सस्कृतिके दुश्मनोका जी-जानसे प्रतिरोध किया, जिसपर यजीदने शपथ ले ली कि “मे तब तक अपनी तलवार को म्यानमे नहीं डालूंगा, जब तक इतना खून न बह जाये, जिससे आटेकी चक्की चल सके, और उसके पिसे आटेकी मे रोटी न खालू।” कहते हैं, उसने अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके छोडी। जब इस्लामका महासेनापति-गवर्नर ऐसा कर सकता था, तो नीचेवालोकी बात ही क्या? काफिरोंके विरुद्ध जो भी किया जाये, सब उचित था।

७ खलीफा उमर II अजीजपुत्र (७१७-७२० ई०)

सुलेमानके मरनेपर उमर खलीफा बना। निष्पक्ष इतिहासकार भी कहते हैं, कि उमैया खलीफोमे यह सबसे भलेमानुस और सदाचारी था। इसने यजीदके अत्याचारोको सुना। यजीदने गनीमत (लूट) की बहुतसी राशि अपने पास दबा ली थी। खुरासानके नौमुस्लिमोने भी उसकी निर्दयता और अत्याचारके लिए खलीफाके यहा गोहार की थी। उसने हुकुम दिया, कि सभी जातिके मुसलमानोंको अरब मुसलमानोके बराबर माना जाये। काफिरोपर चाहे जितना कर लगाया जाय। जिन लोगोने इस्लाम स्वीकार कर लिया है, उन्हें खतना करानेके लिये मजबूर न किया जाय। राज्यपालोका काम है, वह अपने प्रदेशमे इस्लामका प्रचार करे, रवात (सराय) स्थापित करे, मस्जिदें बनाये। दूसरे धर्मवालोके गिर्जे, सिनागोज और अग्निमदिर न तोडे जाय, हा, उन्हें नये मदिरोके बनानेकी इजाजत नहीं है।

(१७) जरह अब्दुल्लापुत्र ७१७-७१९ ई०) —खलीफा उमरने यजीदकी जगह जरहको खुरामानका शासक नियुक्त किया।

८. खलीफा यजीद II अब्दुलमलिक पुत्र (७१९-७२४ ई०)

उमरके मरनेपर यजीद नया खलीफा बना। हर नये खलीफाके बननेपर कुछ गडबड होती थी। तीसरे खलीफा स्वाविया II (६८३-६७७ ई०) के समयसे खिलाफत दो टुकडोमे बँट गई थी, पश्चिमी खिलाफत (अरब-साम्राज्य)के खलीफा अब्दुल्लाके वंशज होते थे, जिन्होंने स्पेन तकको अपने अधिकारमे कर लिया था। नये खलीफाके सिंहासन-आरोहणके समय मौका पाकर यजीद मुहल्लबपुत्र जेलसे भागनेमे सफल हुआ। उसने बसरामे पहुँचकर खलीफाके विरुद्ध बगावत शुरू की, जिसका असर पूर्वी प्रदेशोपर भी पडा और विद्रोहको एक साल बाद दबाया जा सका। खलीफाने मस्लमाको उभय इराक (मसोपोतामिया और ईरानका) क्षत्रप नियुक्त किया, जिसने कूफाके पास फुरात नदीके तटपर यजीदको हराकर मार डाला।

(१८) सईद अब्दुल्ला पुत्र (७१७-७१९ ई०) मस्लमाने सईदको खुरासानका राज्यपाल नियुक्त किया। इस वक्त खोजद और फार्गानाके लोगोने आम बगावत कर रखी थी। लेकिन सोगदी तरखून अरबोका करद सामन्त था। उसे देशद्रोही कहकर विद्रोहियोने दबाना चाहा। तरखूनने मेवँसे सहायता मागी, लेकिन नया राज्यपाल निर्बल और ढुलमुल बुद्धिका आदमी था, वह सहायता नहीं भेज सका। इसपर सोगदियोने अपने उत्तरके पडोसी तथा शक्तिशाली तुर्क कगान सुलू (७१६-७३८ ई०) से मदद मागी। सुलूने विधर्मियोके खिलाफ धर्मयुद्ध करना लाभकी बात समझी, और समरकंदपर अक्रमण कर दिया। अरब देरसे आये, तब तक तुर्क ३००० सोगदियोको कतल कर चुके थे। यजीद दो साल तक खलीफा रहा, और इस सारे समय मध्य-एशियामे बराबर अशांति बनी रही। सुलू खाकान विद्रोहियोकी पीठपर था। उधर पश्चिमकी ओर खज़ार और किपचक कबीले भी अरबोको फूटी आखो नहीं देखते थे, जिसके लिए अरब सेनाको उधर भी बराबर लडना पड रहा था। वहा भी सफलता का मुह देखनेको नहीं मिला। जिस समय मध्य-एशियावाले अपने सब तरहके दुश्मन अरबोसे लड रहे थे, उस वक्त अरबोके नीचे पिसे जाते सोगदियोको शरण देना पडोसी सहधर्मियोका कर्तव्य था। फार्गानाके शासकने ७२१-७२२ ई० मे अपने यहा इस्फारा जिलेमे सोगदियोका रहनेके लिये जगह दी। कुतैब द्वारा नियुक्त शासक हिशाम अब्दुल्लापुत्रको निकालकर फार्गाना पहले ही स्वतंत्र हो चुका था।

उभय-इराकसे पहलेकी अपेक्षा आमदनी कम हुई। यह भी सर्वत्र होते युद्धका परिणाम था। इस कसूरमे मस्लमा ७२० ई० (१०२ हि०) मे हटा दिया गया, और उसकी जगह उमर हुबैरा पुत्र क्षत्रप नियुक्त हुआ। बेचारा सईद झूठे ही कुजैना (हिजडा) कहा जाता था, वह समरकंदकी दीवारोके नीचे लड रहा था, जब कि दमिश्कसे बर्खास्तगीका हुक्म आया।

(१९) सईद अम्रपुत्र हरसी (७२१-७२२ ई०) नया राज्यपाल बहुत चुस्त आदमी था। विद्रोही सोगदी सुलूकी सहायतासे बहुत मजबूत थे। उन्होने जब नये राज्यपालकी दृढता देखी, तो उनमे से बहुतोरो—विशेष कर देहकानो (जमीदारो) और व्यापारियो—ने जन्मभूमि छोडनेका निश्चय कर लिया। सोगदका तरखून गोरक इससे सहमत नहीं था, तो भी फार्गानाके राजाके इस्फारामे जगह देनेकी बात मानकर बहुतसे लोग वहा चले गये। पीछे उसने विश्वासवात कर शरणार्थियोको अरबोके हाथमे दे दिया। सईद ने

समरकंदको अपने हाथमे करके खोजद (वर्तमान लेनिनाबाद) को घेर लिया। शहरके समर्पण करनेपर हम सब अपराध क्षमा कर देगे, यह वचन दे कर भी उसने सोगदियोंके साथ विश्वासघात कर उन्हें कल कर डाला। वचन-भंग और निरीहो-निरपराधोंकी निर्मम हत्या अरब-शासन का आवश्यक रूप और मध्य-एशियामे इस्लामके प्रचारका साधारण ढंग था। इसी तरहकी घोखेबाजीसे सईदने जरफशा (सोगद)-उपत्यकाके सभी दुर्गोंको अपने हाथमे किया। कश्क-उप-त्यकामे भी यही बात हुई। वस्तुतः सोगदी जितना लडनेमे बहादुर थे, और जिस प्रकार सुलू जैसा पृष्ठपोषक उन्हें मिला था, वैसी ही यदि उनमे एकता होती, तो सईद फिर सोगदपर अरब-शासन स्थापित नहीं कर सकता था। सोगद-विजय करके सईदने जाकर फर्गनाको घेर लिया। वहाके राजाने एक लाख दिरहम और बहुतसे गुलाम देकर छुट्टीपाई। फिर “शठे शाठ्य” की नीति उसे पसंद आई, और अगली रात जब मुसलमान अपनी सफलतासे निश्चित हो सो रहे थे, उसी समय वह १०००० आदमियोंको लेकर उनपर दूट पडा और बहुतोको मार डाला। किंतु प्रधान सेनापति आलमको जब खबर लगी, तो उसने आकर खूब बदला लिया, और फर्गनाके राजा (तुर्क) को उसके २००० अनुयायियोंके साथ मार डाला। इस तरह सफल होते हुए भी ७२२ ई० (१०४ हि०) मे सईद हरमीको पदच्युत कर दिया गया और उसकी जगह मुस्लिम नया सेनापति बनकर आया।

मुस्लिम सईदपुत्र किलाबी सारी पूर्वी सेनाका प्रधान-सेनापति नियुक्त हुआ था। उसने सुलू खाकानके हाथो हार पर हार खाई और बड़ी मुश्किलसे कुछ सेनाके साथ जान बचाकर आमू (जेंडू) दरियाके दक्षिण भाग कर बलख पहुंचनेमे सफलता पाई।

९ खलीफा हिशाम (७२३-७४२ ई०)

नया खलीफा यजीदका भाई था। इसने उमरकी जगह खालिद अब्दुल्लापुत्र कसरीको उभय-इराकका क्षत्रप बनाया और खालिदके भाई (२०) असद अब्दुल्लापुत्रको एक बड़ी सेनाके साथ तुर्कोसे बदला लेनेके लिये मध्य-एशियाकी ओर भेजा। असद (सिंह) भी सुलूके सामने सियार साबित हुआ। तीन बार वक्षु पार हो सोगदकी ओर बढ़ना चाहा, लेकिन हर बार उसे खाली हाथ लौटना पडा। इस अफसलतासे क्रुद्ध होकर उसने अपने सेनापतियोंको बहुत बुरी तरह फटकारा और बाल मुडवा, नगा कर, बेडी डाल उन्हें अपने भाई खालिदके पास भेज दिया। खालिद अपने भाईकी इस मूर्खतापर बड़ा नाराज हुआ और उसने असरस अब्दुल्लापुत्रको पूर्वी सेनाका सेनापति बनाकर भेजा।

(२१) असरस अब्दुल्ला-पुत्र (७२४-७२९ ई०) असरसने देख लिया, कि विद्रोहियों को केवल राजनीतिक स्वतंत्रताकी कामना ही भारी प्रेरणा नहीं दे रही है, बल्कि वह मुसलमानोंको विधर्मी समझकर भी बहुत घृणा करते हैं। उसने सारी प्रजाको मुसलमान बनानेकी योजना बनाई और प्रत्येक स्थानमे अरब और ईरानी दो-दो धर्म-प्रचारक नियुक्त किये। समरकंदमे नौमुस्लिमोंको कलमा दुहरानेके लिये दक्षिणा दी जाने लगी। इससे असाधारण सफलता मिली। लोग कलमा सुनाकर दक्षिणा भी लेते और बहुतसे करो और बेगारोसे भी मुक्त हो जाते। लेकिन देहकानोपर इसका प्रभाव बरा पडा। वह अब मुसलमान थे, गावोंके बिना मुकुटके राजा थे, वह भला क्यों पसंद

करने लगे, कि लोग कर और बेगारसे मुक्त हो जाये। खजानेमे भी आमदनीकी कमी हो गई। खजाची ने कहा—“करमे ही मुसलमानोंकी शक्ति है।” असरसने मुसलमान होनेपर कर-मुक्त कर देनेका हुकम दे रखा था। अब उसने दुबारा हुकम दिया—उन्हीको कर से मुक्त किया जाय, जिन्होंने खतना करा लिया है, और जो नमाज-रोजा आदि इस्लामिक कर्तव्य को पूरा करते तथा कुरान का एक सिपारा पढ सकते हैं। इस पर सोगद से जवाब आया—“देसी लोगो ने सच्चे मन से इस्लाम को स्वीकार किया है। वह मस्जिदें बनाने लगे हैं। सब लोग अरब बन गये हैं। इसलिये किसी पर कर नहीं लगाना चाहिये।” खजाना खाली था। ऐसे इस्लाम-प्रचार से अरबी राज्य का ही दीवाला निकलने वाला था, इसलिये असरस ने हुकम दिया—“जिनपर पहले कर लगाया जा सकता था, उन सबपर कर लगाओ।” इसका परिणाम हुआ सर्वत्र विद्रोह। अरब धर्म-प्रचारको ने बड़े परिश्रम से इस्लाम के लिये दिग्विजय की थी, यह हालत देखकर वह भी विद्रोहियों के साथ हो गये। सोगद का अरब धर्मप्रचारक पकड़ा गया। सारे सोगद ने अरबों के खिलाफ बगावत का झंडा उठाकर तुर्कों से मदद मागी। ७२८ ई० में केवल समरकंद और दबूसिया के नगर ही अरबों के हाथ में रह गये, बाकी बुखारा आदि पर विद्रोहियों का कब्जा हो गया। ७२९ ई० में बड़ी मुश्किल से अरबों ने बुखारा में दुबारा अपना शासन स्थापित किया। ७३० ई० या ७३१ ई० में सुलू ने सोगदियों की मदद के लिये एक बड़ी सेना भेजी। सोगद के इखशीद ने भी विद्रोहियों का साथ दिया। इसी समय असरस ने अपने शासित प्रदेशों में जगह जगह रवात बनाने शुरू किये, जो प्रतिरक्षा के लिये घुडसवारों की चौकियों का काम देती थी। असरस की भी वही हालत हुई, जो उसके पूर्वाधिकारी हरसी की हुई थी। उसे लौटा लिया गया और उसकी जगह जुनैद को राज्यपाल नियुक्त किया गया।

(२१) जुनैद अब्दुर्रहमान पुत्र (७२९-७३४ ई०)—यह पहले सिंध में राज्यपाल रहा चुका था और अपने रणकौशल तथा क्रूरता के लिये मशहूर था। इसने बड़े जोश के साथ मध्य-एशिया पर फिर से अरब-शासन स्थापित करने के लिये चढ़ाई की। बुखारा में अपनी सेना में जाते समय यह खाकान (सुलू) के हाथ में पड़ने से बाल-बाल बचा। खलीफा हिशाम की एक रानी को इसने (भारत की लूट से) एक बहुमूल्य रत्नमाला भेंट की थी, जिसके कारण उसे यह पद मिला था। खलीफा ने उस समय कहा था, कि मेरे लिये भी एक ऐसी माला भेजना। ७३०-७३१ ई० में खाकान से पहली मुठभेड़ हुई, जिसमें उसने १७०००० तुर्क सेना को हराया, ३००० तुर्क मारे। सुलूका भतीजा बदी बना, जिसे जुनैद खलीफा के पास भेज कर और स्वयं जाड़ा बिताने के लिये मेर्व चला आया। अगले साल वक्षुपार हो उसने अपनी सेना के तीन भाग किये, जिनमें से १०००० सेना लेकर सौरा घुर्री को समरकंद पर चढ़ाई करने के लिये भेजा, दूसरे भाग को उमर होरेतपुत्र के अधीन तुखारिस्तान पर। बाकी को लेकर वह स्वयं तुखारिस्तान की ओर जा रहा था, इसी समय उसे पता लगा, कि खाकान ने समरकंद में सौरा को खतरे में डाल दिया है। सेना सारी एक जगह नहीं थी, किंतु जो भी सेना मौजूद थी, उसे लेकर वह समरकंद की ओर बढ़ा। किसी तग और अघेरे रास्ते में तुर्कों ने उसे घेर लिया। भयकर युद्ध में सैकड़ों अरब मारे गये। जुनैद ने मुश्किल से एक खड्ग में छिपकर जान बचाई। सौरा घिरा हुआ था और जुनैद भी शत्रुओं को चारों ओर देख रहा था। दोनों में से एक को मरना आवश्यक था, तभी दूसरा बच सकता था। उसने सौरा को हुकम दिया—किला छोड़कर समर-

कद से बाहर निकल आओ। सौरा बड़ी हिचकिचाहट में था, तो भी अपने प्रधान-सेनापति की आज्ञा मान कर १२००० सेना के साथ जुनैद के डेरे की ओर चला। करीब करीब पहुँच चुका था, इसी समय एकाएक तुर्कों ने आक्रमण कर दिया। १२००० आदमियों में से सिर्फ़ तीन बचकर निकल सके। सौरा मारा गया। जुनैद मौका पा भाग निकलना चाहता था, लेकिन सुलू उसे कहा छोड़नेवाला था? कगान की सेना ने उसे घेर लिया। जुनैद ने दासों को मुक्त करने का प्रलोभन दे लड़ने के लिये कहा, और उनकी सहायता से वह समरकंद पहुँच सका। खलीफा ने जब इस महापराजय की बात सुनी, तो बसरा और कूफा से २५००० सेना एकत्रित करके भेजी। चार मास के सघर्ष के बाद सुलू से बुखारा की भी खतरा होने की खबर लगी, तो वह नख़ सैयारपुत्र—जो कि छावनी का सेनापति था—की अधीनता में छावनी को छोड़कर बुखारा की ओर चला आया। दो साल के सघर्ष के बाद जुनैद सोगद को फिर काबू में कर पाया। इस सघर्ष में सारा अतर्वेद अरबों के हाथ से निकल गया था। उस समय जरफ़शा-उपत्यका अन्न की खान थी, उसपर तुर्कों के अधिकार होने का कारण ही संभवतः ७३५ ई० (११५ हि०) का अकाल पड़ा, काफ़िरो ने मेवं अनाज भेजने नहीं दिया।

शिया-आंदोलन—खिलाफत के लिये पैगंबर मुहम्मद के हाशिम वंश और दूसरे वंशों में वैमनस्य खड़ा हुआ था, जिसमें अली और मुहम्मद के दोनों नाती हुसैन और हुसेन बलि चढ़े। जो अरब उमैया वंश से विशेष सबध नहीं रखते थे, उनकी भी सहानुभूति धीरे धीरे विरोधियों के साथ होती गई। यही विरोधी पीछे शिया या बातिनी कहे जाने लगे। लेकिन हाशिम-वंश के पक्षपाती भी सभी एकमत नहीं थे। कुछ मुहम्मद की पुत्री फातिमा और दामाद अली की सतान को मुहम्मद का असली उत्तराधिकारी मानते थे, और दूसरे मुहम्मद के चचा अब्बास की सतान को भी शामिल करते थे। जिस समय आंदोलन और सघर्ष सफलता से दूर था, उस समय अब्बास और अली दोनों के पक्षपाती एक होकर काम कर रहे थे। अरबों के बाहर शिया-आंदोलन का जो प्रभाव पड़ा, वह धीरे-धीरे इतना प्रबल हो गया, कि उसी के बलपर उमैया-वंश नष्ट हुआ और अब्बास की सतान को पूर्वी खिलाफत का स्वामित्व मिला। खुरासान में शिया आंदोलन का आरंभ जुनैद के काल ही में हुआ। ७४० ई० में हारिस सुरैजपुत्र ने “अल्ला की किताब और पैगंबर की सुन्नत” (सदाचार) के नाम पर अपना काला झंडा उठाया। उसने प्रतिज्ञा की, कि धर्मद्रोहियों और उनके अनुयायियों के साथ जो भी शर्तें की गई हैं, उनको नहीं माना जायगा और मुसलमानों पर कर नहीं लगाया जायगा, तथा किसी पर अत्याचार नहीं किया जायगा।” यह बात नौमुस्लिमों और अमुस्लिमों दोनों के लिये आकर्षक थी। जुनैद शिया-प्रचारकों को पकड़ पकड़कर शहीद बनाने लगा, जिसमें कितने ही अरब तथा प्रभावशाली लोगों से सबध रखते थे।

जुनैद की सारी सफलता बेकार गई। उसने यजीद मुहल्लबपुत्र की लड़की से शादी करने की गलती की, जिसके कारण खलीफा नाराज हो गया और उसने आसिम अब्दुल्ला-पुत्र को राज्यपाल बनाकर भेजा। आसिम के पहुँचने से पहले ही जुनैद मर चुका था।

(२२) **आसिम अब्दुल्ला-पुत्र (७३४-७३६ ई०)**—आसिम बड़ा ही अत्याचारी था। जुनैद के अनुयायियों पर उसने बहुत क्रूरता दिखलाई, जिसके कारण बहुत से अफसर उससे घृणा करने लगे। आरिस सुरैजपुत्र ने विद्रोह कर दिया। मेवंरुद प्रदेश, बलख,

बाबेल, अबबाब जैसे खुरासान के शहरो पर हारिस का अधिकार हो गया। इस्लाम के नाम पर गनीमत (लूट) का माल हलाल था ही, इसने और भी अधिक हिस्से का प्रलोभन दिया और गाजियो की भारी भीड़ उसके आसपास इकट्ठा हो गई। आसिम उसे दबा न सका और हासिम अपने काले झंडे को फहराता अनुयायियों को बढ़ाता जा रहा था। अंत में आसिम को बर्खास्त कर उसके भाई खालिद ने उसकी जगह कसरी को फिर से खुरासान का राज्यपाल बनाया।

(२३) असद अब्दुल्ला-पुत्र कसरी (७३५-७३८ ई०)—आसिम अब्दुल्लापुत्र ने खलीफा हिशाम को नरमी दिखाने के लिये लिखा था, यह भी उसके बर्खास्त होने का एक कारण हुआ। असद ने हारिस को मार भगाया। वह जाकर सुलू से मिल गया, जिसने उसे फाराब में जागीर देकर रख लिया। राजधानी मेर्व ऐसी जगह नहीं थी, जहाँ से विद्रोही सोगद को दबाया जा सके। वहाँ से सीधे बुखारा जाने का रास्ता किजिलकुम (रेगिस्तान) के भीतर से जाता था, जिससे किसी बड़ी सेना का गुजरना आसान नहीं था, और दूसरा रास्ता बलख होकर बड़े चक्कर का था, जिसमें समय बहुत लगता था। असद ने बलख को ही ७३६ ई० में अपनी अस्थायी राजधानी बनाया और उसी साल खुत्तल को लेना चाहा। किंतु, खाकान सुलू गाफिल नहीं था। उसने आक्रमण किया और असद का डेरा तथा हरम खाकान के हाथ में पड़ गया। सुलू की बातचीत निष्फल गई। असद बलख लौटा और खाकान तुखारिस्तान के पर्वतों को। सुलू की यह अंतिम विजय थी। ३० वर्षों तक इस दुर्जेय तुर्क खाकान (अबू-मुजाहिम) की धाक सारे मध्य-एशिया पर थी। चीन सम्राट ने भी दामाद बना बड़ी से बड़ी पदविया दे उसे अपना बनाने का प्रयत्न किया। तुर्कों का उसपर असीम विश्वास था, जिन तुर्कों की वीरता और युद्धकौशल को देखकर अरबों ने ("अल् अतराक फिल्हृब") युद्ध में तुर्कों को अजेय माना था। लेकिन बुढापे में सुलू का हाथ बेकार हो गया था, जिससे वह सीधे युद्ध में भाग लेने लायक नहीं रह गया था। घुमन्तू लडाके ऐसे नेता को पसंद नहीं कर सकते। यद्यपि पहले असद को तैमिज और खुत्तल के इलाकों में सफलता नहीं मिली। लेकिन अब सुलूका दुर्भाग्य और असद का सौभाग्य जगा। समरकंद को आत्म-समर्पण करने के लिये मजबूर करने को असद ने जरफशा के ऊपरी भाग में बारगसर पर पहुँच कर खुद बाध बनाने में भाग ले पानी को रोकना चाहा, किंतु उसमें सफलता नहीं हुई। ७३७ ई० में तुखारिस्तान में जो लडाईया लडनी पड़ी, उसमें खाकान के साथ देने वाले शिया-पक्षपाती हारिस और खुत्तल का राजा भी थे। किंतु शगान-खुदात (शगानियान) अरबों के साथ रहा। पहले तो असद को सफलता नहीं मिली, किंतु अंत में उसके आक्रमण से तुर्क उश्रूसना लौट जाने के लिये मजबूर हुये। वहाँ से जा समरकंद में उन्होंने लडने की तैयारी की। इसी समय सुलू कगान को तुर्गिस कुमार कुरसूल ने मार डाला। सुलू के मरने के साथ ही पश्चिमी तुर्क-साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। हारिस तुर्कों के देश में भाग गया। खुत्तलपति से अरबों ने खुत्तल को ले लिया। असद समरकंद पर चढाई करने के लिये जा रहा था, इसी समय एक विद्रोही अनुचर ने अपनी जाति के इस शत्रु को मार डाला।

(२४) नख सैयार-पुत्र (७३७)—नख कुतैब की युद्ध में भाग ले चुका था। वह बड़ा अनुभवी और वृद्ध पुरुष था। उसे कुतैब ने ७०५ ई० में एक गांव की जागीर दी थी। उस समय अरबों में घोर द्वंद्व चल रहा था। उनके मुजारी और यमनी दो दल हो गये थे। मुजार

उत्तरी अरब से आये थे, और यमनियों का मूल स्थान यमन था। खुरासान के मुजारियों का नस्ल शेख (सरदार) था। वैसे नस्ल अत्यन्त योग्य शासक और कुशल सेनापति था। वह जितना शक्तिशाली था, उतना ही उदार, अपने अधीनोका भी बड़ा प्रेमपात्र था। अपने नौ सालकी शासन में खुरासान को उसने उमैयों के लिये बचाये रखा। उस समय उमैया-वंश कमजोर हो चुका था, उसका सितारा डूबने ही वाला था। प्रतिद्वंद्वी खारजी (शिया) मुहम्मद और अली के वंश की दुहाई देकर बल संचय कर रहे थे। उनका प्रचार खुरासान और मध्य-एशिया में बड़े जोर शोर से हो रहा था।

नस्ल ने देखा, जिस शक्ति से अरब शासन को सबसे ज्यादा खतरा है, वह है तुर्क। यद्यपि सुलू खाकान—जिससे परेशान होकर अरबों ने उसे “इब्न मुजाहिम” (सघर्षकारियों का बच्चा) नाम दे रखा था, मर चुका था। किंतु जिस तेरगास राजकुमार कुरसूल ने उसे मारा था, उसके प्रबल होने का डर था। कुरसूल भी पश्चिमी तुर्कों के ही तुरगिस वंश का था, इसलिये तुर्कों की जो शक्ति सुलू के पीछे थी, वही कुरसूल के पीछे हो गई। अरबों के विरोध में सारे उत्तरापथ और दक्षिणपथ के लोग एकमत थे। कुरसूल की एक दो सफलताओं के बाद वह सुलू की तरह ही दुर्बल हो जाता, इसलिये पहले उसकी ओर ध्यान देना आवश्यक था। पश्चिमी तुर्क राज्य पिछले खाकान के मर जाने के कारण विश्रुखलित हो गया था। इस मौके से फायदा उठाते हुये नस्ल ने सिरदरिया की ओर मुह फेरा। ७३९ ई० में उसने उश्नुसना, शाश, (ताशकद) और फर्गाना के शासकों के साथ नरमी दिखला सधि करके इन तुर्क शासकों को कुरसूल से अलग करने में सफलता पाई। फिर वह सीधे कुरसूल के ऊपर पड़ा। पहले दो अभियानों में वह सफल नहीं रहा। अंतिम अभियान शाश के शासक के विरुद्ध था, जिसकी सहायता के लिये कुरसूल आया था। सिर दरिया के तट पर लड़ाई हुई, जिसमें कुरसूल बंदी हुआ, और नस्ल ने उसे मरवा दिया। कुरसूल के मरने के बाद तुर्कों पर इतना आतक छाया, कि उश्नुसना, शाश, और फर्गाना के राजाओं ने अधीनता स्वीकार करते हुये नस्ल से सधि कर ली।

अब उत्तर के घुमन्तूओं का भय खतम हो गया था। नस्ल पहले मुसलमान विद्रोहियों को छेड़ना नहीं चाहता था, क्योंकि इससे भीतर की निर्बलता और बढ़ती। उसने सारे मुसलमानों का ध्यान एकत्रित करने के लिये काफ़िरो के ऊपर आक्रमण किया। मुसलमानों पर शरीयत (धर्मशास्त्र) के विरुद्ध जो कर लगे थे, उन्हें अमुस्लिमों पर लगवाया, फिर ८०००० अमुस्लिमों को करमुक्त कर उसे ३०००० मुसलमानों पर लगाया। सोगद में करमुक्ति ने लोगों को मुसलमान होने के लिये अधिक आकर्षित किया था, फिर कर लगने पर सोगदी क्यों उसे पसंद करते? तो भी जो सोगदी अरबों के राजनीतिक और धार्मिक अत्याचारों के कारण सुलू खाकान के राज्य में शरणागत हुये थे, अब नस्ल की सफलता और उसकी न्यायप्रियता पर विश्वास करके सोगद लौटने की सोचने लगे थे। नस्ल ने उनकी सारी शर्तें मान कर ७४१ ई० में उनके साथ समझौता कर लिया। शर्तें थी—(१) मुर्तिद (पुन अपने धर्म में लौटे) लोगों को दंड नहीं दिया जायगा, (२) मुर्तिदों को प्रवास के पूर्व के बाकी करों से मुक्त किया जायगा, (३) मुसलमान कैदी छोड़ दिये जायेंगे, यदि काजी (न्यायाधीश) कानून-निर्धारित सख्ता में गवाहों की गवाही के बाद वैसा फैसला दे। खलीफा ने भी नस्ल के लिखने पर इन शर्तों को मजूर कर लिया। राजधानी में कितने ही लोग नस्ल को इस प्रकार दबने के लिये बदनाम करते थे, जिसका उत्तर नस्ल देता

था—“अगर मेरे प्रतिद्वन्द्वियों ने सोग्दियों की वीरता होती देखी, तो वह भी उनकी शक्तों को मानने से इन्कार नहीं करते।” मुजारी होने के कारण अक्सर नस्ल का भूतपूर्व मलिक असद से झगडा रहता था, क्योंकि असद यमनी दल का नेता था। नस्ल ने अपने पहले चार साल के शासन में केवल मुजारी सेनापति नियुक्त किये, किन्तु पीछे उसने यमनियों को भी लेना शुरू किया। यमनियों ने इस विश्वासका उलटा बदला देते ७४४ ई० में जूदे अलीपुत्र करमानी के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया।

(शिया-आन्दोलन)^१—नस्ल का सबसे बड़ा दुश्मन हारिस था, जो कि शियों का पक्षपाती और अब तुर्कों में चला गया था। नस्ल ने शामकी नीति से काम लिया और उसी साल (जिस साल कि यमनियों ने विद्रोह किया था) खलीफा मोतसिम से कहकर अनुयायियों सहित हारिस को क्षमा दिलवाई। ७४५ ई० में हारिस मेर्ब लौटा। उधर किरमानी और नस्ल का झगडा चल रहा था। हारिस को न मुजारियों से कुछ लेना-देना था, और यमनियों से, इसलिये उसने निर्फ यही घोषणा की, कि मैं तो केवल न्याय की विजय चाहता हूँ। जैसे ही उसने अपने अनुयायियों की काफी शक्ति देखी, कुछ हजार को लेकर काला झडा खडा कर दिया। उसने नस्ल को न छेड़कर पहले उसके प्रतिद्वंद्वी किरमानी पर आक्रमण किया। यद्यपि हारिस ७४६ ई० की वसत में उसी लडाई में मारा गया, लेकिन जिस संप्रदाय का वह समर्थक था, वह एक सिद्धांत और आदर्श के लिये लड रहा था, इसलिये हारिस का खडा किया काला झडा गिरने नहीं पाया।

पैगबर मुहम्मद और उनके उपदिष्ट कुरानी इस्लाम के सिद्धान्त बहुत सरल, अरबों के तत्कालीन सामाजिक विकास के अनुरूप थे, लेकिन ग्रीक, रोमन और ईरानी जैसी सभ्य और सुसंस्कृत जातियों के साथ जब मुसल्मानों का संपर्क हुआ, तो उस सादगी से काम नहीं चल सकता था, इसीलिये सिद्धांतों में मतभेद होने लगा। आदिम इस्लाम के मुख्य-मुख्य सिद्धांत थे—(१) ईश्वर एक है, वह बहुत कुछ साकार सा है और उसका मुख्य निवास इस दुनिया से बहुत दूर छ आसमानों को पारकर ७ वे आसमान पर है, (२) वह दुनिया को केवल “कुन” (हो) कहकर अभाव से भाव में लाता है, (३) प्राणियों में आग से बने फरिश्ते और मिट्टी से बने मनुष्य सर्वश्रेष्ठ है, (४) फरिश्तों में से कुछ पथभ्रष्ट होकर सदा के लिये अल्लाह के दुश्मन बन गये हैं, वह सदा मनुष्यों को मार्गभ्रष्ट करने की कोशिश करते हैं, उनका सरदार इबलीस है, जो फरिश्ता होते समय अजाज़ील के नाम से मशहूर था, (५) मनुष्य दुनिया में केवल एक बार जन्म लेता है, और ईश्वरी वाक्य कुरान द्वारा विहित और निषिद्ध कर्म करके उसके फलस्वरूप अनंतकाल के लिये स्वर्ग या नर्क पाता है, (६) स्वर्ग में सुंदर प्रासाद, अगूरों के बाग, शहद-शराब की नहरें, अनेक सुंदरिया (हूरे) तथा बहुत से तरुण सेवक (गिलमान) होते हैं, (७) दया, सत्यभाषण, चोरी न करना आदि सर्वधर्ममान्य भले कर्मों के अतिरिक्त नमाज, रोज़ा (उपवास), दान (ज़कात) और हज (विशेष समय में काबा-दर्शन) ये चार मुख्य विहित कर्म हैं, (८) निषिद्ध कर्मों में हैं अनेक देवताओं और उनकी मूर्तियों का पूजन, शराब पीना, हराममास (सूअर तथा बिना कलमा पढ़े मारे गये जानवर का मास) खाना आदि है।^२

^१ Heart of Asia (E D Ross)

^२ विस्तार के लिये देखो लेखक की पुस्तक “इस्लाम धर्म की रूपरेखा”

सुन्नियो में आगे चलकर जो मतभेद हुये, उनके कारण उनके चार सप्रदाय हो गये— (१) कूफा (मेसोपोतामिया) के रहनेवाले अबूहनीफा (७६७ ई०) के अनुयायी हनफी कहे जाते हैं, जिनकी सख्या भारत और पाकिस्तान में अधिक है, (२) मदीना-निवासी इमाम मालिक (७१५-७९५ ई०) के अनुयायी मालिकी है। मराको और मुस्लिम स्पेन में इनकी सख्या अधिक थी। इमाम मालिक ने कुरान के अतिरिक्त पैगबर-वचन (हदीस) को धर्म-निर्णय के लिये बहुत आवश्यक बतलाया, जिसके कारण हदीसों को जमा करने का काम शुरू हुआ। (३) इमाम शाफई (७६७-८२० ई०) के अनुयायी शाफई कहे जाते हैं। यह पैगबर के आचरण (सुन्नत) को सर्वाधिक अनुकरणीय मानते हैं। (४) चौथा सप्रदाय इमाम अहमद इब्नहम्बल के अनुयायियों (हबलियों) का है—जो कि ईश्वर (अल्लाह) को साकार मानते हैं। धर्म के सबध में अंतिम निर्णय के लिये प्राचीन पथी कुरान, सुन्नत (पैगबर के सदाचार), कयास (अनुमान या दृष्टांत) द्वारा किसी निष्कर्ष पर पहुचने के अतिरिक्त चौथे प्रमाण बहुमत (इज्माअ) को भी मानते हैं, जिनमें पूर्व-पूर्व को बलवत्तर स्वीकार करते हैं।

यह बहुमत ही था, जिसके बलपर अली को खलीफा होने से तीन बार वंचित किया गया। किंतु जितना ही समय बीतता गया, उतना ही अली के अनुयायियों का जोर बढ़ता गया। अली को वंचित कर तीसरे खलीफा बने उसमान ने वर्तमान कुरान को पुस्तक-रूप में संग्रह किया। अली के अनुयायियों का कहना है, कि उसमें ऐसी बहुत सी आयते (मंत्र) हटा दी गई हैं, जिनमें अली और उनकी सतान के पक्ष में कहा गया था। इस्लाम का सर्वोपरि प्रमाण कुरान है। जब उसमें घटाने-बढ़ाने की बात एक सप्रदाय ने मान ली, तो सिद्धांतों में फेर-फार करने की पूरी गुजाइश हो गई। कहते हैं, इन सैद्धान्तिक मतभेदों का आरम्भ इब्न-सबा (सबा-पुत्र) ने किया, जो कि ७ वीं सदी में (पैगबर मुहम्मद के मरने के आधी शताब्दी बाद) हुआ था। वह यहूदी से मुसलमान बना था। यहूदी अपनी मूलभूमि (फिलस्तीन) को छोड़ने के लिये मजबूर हुये, और भिन्न-भिन्न देशों में बिखरकर ग्रीक तथा दूसरी उन्नत विचारधाराओं के संपर्क में आये। वह सर्वत्र विचार स्वातंत्र्य के पोषक रहे। इब्न-सबा, जान पड़ता है, बौद्ध और प्लातोनी विज्ञान-वादद्वारा अनुप्राणित नवप्लातोनी अद्वैतवाद से प्रभावित था, इसलिये उसने हलूल (जीव का अल्ला में विलयन) सिद्धांत का प्रचार किया। वह पैगबर के दामाद अली में भारी श्रद्धा रखता था, इस लिये लोगों को यह कहने का मौका मिला, कि इब्न-सबा के सिद्धांत के स्रोत हजरत अली थे। इब्न-सबा की परंपरा आगे बढ़ती गई और इस्लाम में शिया और खारजी (बाह्य) जैसे सप्रदाय पैदा हुये। अरब में इनके मतभेद बहुत कुछ कुरान और पैगबर-सतान के प्रति अधिक श्रद्धा और कम पर निर्भर थे। शिया लोगों का कहना था, कि पैगबर का उत्तराधिकारी होने का अधिकार उनकी पुत्री फातिमा और अली की सतान को है। आगे चलकर इस सप्रदाय ने दार्शनिक मतभेदों में भी हाथ बटाया और अंत में अरबों और ईरानियों के शताब्दियों से चले आते द्वंद्व से फायदा उठाने में इतनी सफलता प्राप्त की, कि ईरान ने १५ वीं सदी में शियामत को अपना राजधर्म घोषित किया। यह बात १४९९ ई० में सफावी वंश के शासन (१४९९-१७३६ ई०) के साथ आरम्भ में हुई। उस समय शिया-प्रचार में जो सफलता प्राप्त हुई थी, उसमें ईरानी राष्ट्रीयता को भी मिलाकर अबूमुस्लिम ने शियों के काले झंडे को गाड़ा, लेकिन उसे मुहम्मद के चचा अब्बास की सतान अबुल् अब्बास सफाह ने बड़ी चतुरता से अपने हाथ में कर लिया।

अबू-मुस्लिम^१(मृत्यु ७५५ ई०)—अब्दुर्रहमान मुस्लिमपुत्र को दुनिया अबू-मुस्लिम के नाम से अधिक जानती है। वह इस्पहान का रहनेवाला था। ईरान के एक तीर्थयात्री दल के साथ मक्का गया, जहाँ उस समय मुहम्मद अब्बासी भी आया हुआ था। अबू-मुस्लिम वही एक प्रतिष्ठित अरब-परिवार में घोड़े की जीन बनाने का काम करने लगा था। इस २० साल के तरुण को मुहम्मद अब्बासी ने जल्दी परख लिया और उसने भविष्य-वाणी की, कि यही तरुण अब्बासी राज्य की स्थापना करेगा। मुहम्मद ने उसे अपने पक्ष के समर्थन के लिये इराक भेजा। वह जानता था, कि अब अरबों का नहीं, ईरानियों का पलरा भारी होने जा रहा है। अबू-मुस्लिम दो साल (७४२-७४४ ई०) खुरासान में अपने गुरु की ओर से प्रचार करता रहा। वह अच्छा वक्ता, सगठन करने में निपुण और साथ ही ईरानी होने के कारण ईरानियों पर पूरा प्रभाव डाल सकता था।

किरमानी के विरुद्ध लड़ते हारिस सुरेजपुत्र मारा गया। किरमानी का मनसूबा कहीं बढ न जाय, इसके लिये नस्र ने ७४६ ई० में एक छोटी सी सेना उसके विरुद्ध भेजी। लेकिन सफलता नहीं मिली, फिर मेर्व की अपनी सारी सेना ले वह किरमानी के ऊपर चढ़ा। उमैया का झंडा सफेद था, शियों ने अपने झंडे के लिये काला रंग अपनाया था। अबू-मुस्लिम ने देखा, यही अच्छा मौका है, और उसने अपना काला झंडा फहरा दिया। भीतर ही भीतर लोग पुराने (उमैया) शासन से असंतुष्ट थे, इसलिये चारों ओर से गाजी (धार्मिक योद्धा) अबू-मुस्लिम के झंडे के नीचे आने लगे। नस्र इस विरोध को शांत करने में असमर्थ रहा। उसने अपने सहयोगी इराक के क्षत्रप मेर्वान से यह कहकर सहायता मागी, कि खुरासान का हाथ से निकलना उमैया-वंश के लिये खतरनाक होगा, लेकिन सहायता नहीं आई। अबू-मुस्लिम ने किरमानी को भी आकर मिल जाने के लिये निमंत्रित किया, लेकिन इससे पहले ही नस्र ने अपने एक सिपाही द्वारा किरमानी को मरवा कर उसके शिरको खलीफा के पास भेजवा दिया था। यमनी दल तथा किरमानी के दो पुत्र अबू-मुस्लिम से जा मिले। नस्र ने उमैया-वंश को गाढ़ी नींद से जगाने के लिये बहुत कोशिश की, लेकिन उसमें सफलता नहीं मिली। ७४७ ई० में अबू-मुस्लिम ने अपनी विजयिनी सेना लेकर सारे खुरासान और सोगद की राजधानी मेर्व में प्रवेश किया और उमैया खलीफा की जगह अब्बासी फलीफा के नाम से खुतबा (शुक्रवार की नमाज का व्याख्यान) पढ़ने का हुक्म दिया। नस्र पहले ही सघर्ष छोड़कर सरख्सा होते हुये नेशापोर भाग गया था। अबू-मुस्लिम ने उसके पीछे कहतबा शबीबपुत्र को भेजा, जिसने नेशापोर के पास नस्र को हराया। वह वहाँ से भागा। जुर्जान में सिरिया से कुमक के लिये आई सेना को पाकर नस्र ने फिर मुकाबला करना चाहा, किंतु कहतबा ने उसे अंतिम हार दी। नस्र हमदान की ओर भागा। बुढापे में इस परेशानी के कारण साव में पहुंचकर ७४८ ई० में उसने प्राण छोड़ दिया।

उसके मरने के साथ उमैयों की सारी आशाये खतम हो गई। जुर्जान, रे (तेहरान), साव, कुम सभी अब्बासियों के हाथ में चले गये। खलीफा ने अपने योग्य सेनापति नस्र को खोकर अब खतरे को महसूस किया और सारी सेना को इस ओर लगा दिया, लेकिन कहतवाने इस्पहान के पास ७४९ ई० (१३२ हि०) में उसे हराया और

^१ Heart of Asia (E D Ross)

नहावद का विख्यात किला भी ले लिया। ईरान-विजय करके कहतबा इराक की ओर बढ़ा, जहाँ कूफा शियों का केंद्र था। करबला के पास उसकी उमैया सेनापति हुवैरापुत्र के साथ भिड़त हुई, जिसमें कहतबा मारा गया, लेकिन उसके पुत्र हसन ने सेना का संचालन हाथ में लेकर हुवैरा को हरा वासित की ओर खदेड़ दिया। कूफा के यमनियों ने विद्रोह करके नगर को अब्बासियों के हाथ में दे दिया। हसन कहतबा-पुत्र के नगर में प्रवेश करने पर अब्बासियों का नेता अबुल-अब्बास प्रगट हुआ और कूफा अब्बासियों की अस्थायी राजधानी बना। अबू-सल्मा को उसने अपना महा-मंत्री बनाया। अंतिम फैसला ७५० ई० में (मेसोपोतामिया) की लड़ाई में हुआ, जहाँ मेरवान अपनी सारी शक्ति के साथ अब्बासी सेनापति अब्दुल्ला (अबुल-अब्बास के चचा) से भिड़ा। मेरवान की बुरी तरह हार हुई और वह मिस्र की ओर भागा, जहाँ उसे मार डाला गया।

अबू-मुस्लिम के प्रधान सहायक थे अबू-दाउद खालिद-पुत्र इब्राहिमपुत्र और जियाद सालेहपुत्र खुजाई। अबू-मुस्लिम ने देखा, जब तक यमनियों की कमर नहीं तोड़ दी जाती, तब तक स्थायी सफलता नहीं हो सकती, इसलिये उसने पहले यमनी नेताओं का सहार किया। अबू-दाउद ने खुत्तल में पहुँचकर यमनी नेता उस्मान को मारा, उसी दिन अबू-मुस्लिम ने दूसरे नेता अली को खतम किया। अरबों को सफलतापूर्वक दबाने के बाद अबू-मुस्लिम ने देखा, जिस ईरानी राष्ट्रीयता के बल पर उसने सफलता पाई, वह भी सिर उठा रहा है। ईरान के जातीय धर्म (मज्दयस्न, जर्थुस्ती धर्म) को फिर से शक्तिशाली बनाने के लिये कितने ही लोगों में भावना पैदा हो गई थी, जिनका अगुआ नेशापोर के पारसियों का नेता बिह अफरीद (माह-अफरीद) था। उसने इस्लाम के प्रहारे से शिक्षा लेकर अपने धर्म में बहुत से सुधार करने चाहे और जर्थुस्तियों की मूर्ति-पूजा आदि कितनी ही बातों का तीव्र खडन किया। अबू-मुस्लिम खतरे को समझ रहा था। जर्थुस्ती पुरोहितों (मागियों) ने भी उससे शिकायत की—अफरीद दोनों धर्मों की जड़ काट रहा है। अबू-मुस्लिम ने इस आंदोलन को बुरी तरह से दबा दिया। बुखारा में शारिक शेखपुत्र महरी ने ७५५-७५९ ई० में एक नया अरब सगठन खड़ा करते हुये घोषित किया “हमने पैगंबर के परिवार का अनुगमन इसलिये नहीं किया, कि लोगों का खून बहाये और मनुष्य में विषमता कायम करे।” शारिक अली का पक्षपाती था, और अबुल-अब्बास को नहीं चाहता था। अरबों ने भी देखा, कि अबू-मुस्लिम के निष्ठुर हाथों में पडने से यही अच्छा है, कि अली के नाम से अपने लिये स्वतंत्र स्थान बनाये। थोड़े ही समय में ३०००० आदमी अली के झंडे के नीचे चले आये। बुखारा और ख्वारेज्म के अरब-सरदारों ने उसका साथ दिया। बुखारा के नागरिक भी शारिक का समर्थन करने लगे। अबू-मुस्लिम ने उसके विरुद्ध जियाद सालेहपुत्र को भेजा। शारिक ने अपने प्रोग्राम में समानताको स्थान देकर सपत्तिशाली वर्ग को अपने विरुद्ध कर लिया था। बुखारा-खुदात कुतैबा और दूसरे ७०० गढ़वाले जियाद के समर्थक थे। कुतैब ने बुखारा पर विजय प्राप्त की, और कश्क कुषाण (कुषाण या हेफताली सेठों) के धर्म को नष्ट किया। लोगों ने शहर के भीतर के अपने घरों को देकर दूसरी जगह ले अपने लिये ७०० महल बनवाये और उनके चारों ओर बाग लगवाये थे। यही उन्होंने लाकर अपने नौकरो और ग्राहकों के रहने के लिये भी घर बनवाये। थोड़े ही समय में इस नये शहर की जनसंख्या पुराने से भी ज्यादा हो गई, और इसका नाम कुश्के-मगान (मगोका गढ़) बन गया।—यहाँ पारसियों के मंदिर भी अधिक थे। जब सामानियों ने

बुखारा ले लिया, तो उसके प्रतिहार-नायकने अपने लिये जमीन खरीदनी चाही। उस समय जमीनका मूल्य बढ़कर प्रति जिफ ४००० दिरहम हो गया, जो बढ़ते बढ़ते एक समय १२००० दिरहम तक पहुँचा। यह ७०० महल-निवासी इसी कुशके-मगानके रहनेवाले धनाढ्य लोग थे। भला वह शारिकके साम्यवादको कैसे पसंद कर सकते थे? जियादने बड़ी क्रूरतासे विद्रोहियोंको दबाया। बुखारा नगरमें आग लगा दी गई, जो तीन दिन तक जलती रही। विद्रोहियोंको पकड़कर शहरके दरवाजों पर लटका दिया गया। बुखारामें सफलता प्राप्त कर जियाद समरकंद गया। यहाँ भी उसने विद्रोहियोंका बड़ी क्रूरतापूर्वक कत्ल किया। सारी सेवाओंके बाद भी बुखारा-खुदात (कुतैबा) को इस्लामसे दूर हो जानेका अपराध लगाकर अबू-मुस्लिमने मरवा डाला।

स्रोत-ग्रन्थ

- 1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
- 2 Heart of Asia (E D Ross)
- 3 History of Bokhara (A Vambery)
- ४ इस्कुस्त्वो स्नेइ आजिइ (ब० व० वेइमार्न, मास्को १९४०)
- ५ आखितेक्नुनिये पाम्यत्निकि तुर्कमेनिइ (मास्को, १८३९)
- ६ किताबुल्हिन्द (अबूरैहाँ अल्बेरनी)
- 7 Sur les monnides de Boukhara-Khoudats (Lerch)
- ८ सिनखोनित्तिचेस्किये तब्लिट्सी द्ल्या पेरेवोदा इस्तोरिचेस्किख दात् पो खिञ्जे ना येव्रोपेइस्कोये लेताइम्चिस्तिनिये (लेनिनग्राद १९४०)

अध्याय ३

अब्बासी (७४६-८१८ ई०)

१. खलीफा सफ़ाह अबुल-अब्बास (७५०-७५४ ई०)

मुहम्मद अब्बासीने अबू-मुस्लिमको अपने उद्देश्य की पूर्तिके लिये अपना हथियार बनाया था। हाशिमवश सवा सौ वर्षोंसे जिसका स्वप्न देख रहा था, उसे अबू-मुस्लिमकी सहायतासे मुहम्मद अब्बासीने पूरा करनेमें सफलता पाई, किंतु विजय प्राप्तिसे पहले ही वह मर गया। यद्यपि उसका पुत्र अबूजाफर—जो कि मसूरके नामसे द्वितीय खलीफा हुआ—१० साल बड़ा था, किंतु दासी-पुत्र होनेसे उस समय वह गद्दी नहीं पा सका, और छोटा भाई सफ़ाहके नामसे प्रथम खलीफा हुआ। सफ़ाहका अर्थ है खूनी। न जाने क्यों इस तरहका नाम उसे पसंद आया। अब्बासी खानदान उस समय कूफा (मसोपोतामिया) में रहता था। उमैया-वंशकी राजधानी दमश्क सिरियामे थी। यद्यपि आगे चलकर धीरे धीरे मसोपोतामिया (इराक)से फारसी भाषा लुप्त हो गई, किंतु अखामनी वंशके समयसे ही ईरानकी एक राजधानी मसोपोतामियामे रहती आई थी। सेलूकियोंने भी यही अपनी राजधानी रखी, जिसका नाम सेलूकिया था। पाथिव भी अपना राजनीतिक केन्द्र यही रखने थे, क्योंकि यहांसे वह अपने पश्चिमी प्रतिद्वंद्वी रोमका आसानीसे मुकाबिला कर सकते थे। यही सासानियोंकी राजधानी तस्पोन थी, जिसे अरबोंने मदैन (नगरी) नाम दे दिया। अब्बासियोंने पहलेसे चले आये अपने केन्द्र कूफाको राजधानी बनाया, जो मदैनमें घूमती खलीफा मसूर द्वारा ७६२ ई० (१४५ हि०) में बगदादमें परिवर्तित हुई और अत तक रही। इस्लामिक विजयके बाद करीब तीन सदियों तक उमैया और अब्बासी शासन-कालमें दरबार और सरकारकी भाषा अरबी थी, और जब तक शुद्ध ईरानी वंश ताहिरी (८१८-८७२ ई०) सफ़ारी (८६१-९०० ई०) और सामानी (८९२-८९३ ई०) ने पुन ईरानी राष्ट्रीयताको जागृत नहीं कर दिया, तब तक (प्राय तीन सदियों) तक अरबी भाषा ही सर्वेसर्वा रही। फारसीके राजकीय भाषा बननेका सवाल ही क्या था, जब कि उपेक्षाका शिकार होनेके कारण वह साधारण साहित्यिक भाषा भी नहीं बन पाई। अब्बासी वंश वैसे १२५८ ई० (६५६ हि०) में खतम हुआ, जब कि चिंगिसके पौत्र हुलागूखानने उसको सर्वथा उच्छिन्न करना आवश्यक समझा, किंतु, राजशक्तिके तौरपर वह छठे खलीफा मोतसिमके समय (८३३-८४२ ई०) में ही समाप्त हो गया। इस वंशके खलीफा और उनके समयमें मध्य-एशियाके राज्यपाल निम्न थे—

अब्बासी खलीफा और उनके राज्यपाल—

खलीफा		राज्यपाल	
१ सफ़ाह	७५०- ७५४ ई०	१ अबू-मुस्लिम	७४९-७५५ ई०
२ मसूर	७४५- ७७५ ई०	२ अबू-दाउद खालिद	७५५-७५७ ई०
		३ अब्दुल जब्बार	७५७-७५८ ई०
		४ मेहदी (युवराज)	७५८
		५ ख़ाजिम	
		६ हुमैद कहतबापुत्र	७६९
३ मेहदी	७७४- ७८३ ई०	७ अबू-औन	७७५
		८ मुआज मुस्लिमपुत्र	७७६
		९ मुसैयाह जुबैरपुत्र	७७९
		१० फज़ल सुलेमानपुत्र	७८२
४ हादी	७८३- ७८६ ई०	११ जाफर अशासी	७८७
५ हारुन रशीद	७८६- ८०९ ई०	१२ अब्बास अशामी	७८८
		१३ गतरिब अतापुत्र	७९१
		१४ हम्जा ख़ुजाई	७९२
		१५ फज़ल बर्मक	७९२
		१६ मसूर हिमथारी	७९५
		१७ जाफर बर्मक	७९६
		१८ मामून (युवराज)	७९८
		१९ अली ईसापुत्र	
		२० हरसमा	८०९
६ अमीन	८०९- ८१३ ई०	२१ ताहिर	
७ मामून	८१३- ८३३ ई०	नूह (सामानी)	
८ मोतसिम	८३३- ८४२ ई०		
९ वासिक	८४२- ८४७ ई०		
१० सुतवक्कल	८४७- ८६१ ई०		
११ मुन्तशिर	८६१- ८६२ ई०		
१२ मुस्तईन	८६२- ८६६ ई०		
१३ मुहताज	८६६- ८६९ ई०		
१४ मुह्तदी	८६९- ८७० ई०		
१५ मोतमिद	८७०- ८९२ ई०		

१६ मोजिद	८९२- ९०२ ई०
१७ मुक्तफी	९०२- ९०८ ई०
१८ मुक्तदिर	९०८- ९३२ ई०
१९ काहिर	९३२- ९३४ ई०
२० राजी	९३४- ९४० ई०
२१ मुत्तकी	९४०- ९४४ ई०
२२ मुस्तकफी	९४४- ९४६ ई०
२३ मुतीअ	९४६- ९७४ ई०
२४ ताई	*९७४- ९९० ई०
२५ कादिर	९९१-१९३१ ई०
२६ कायम	१०३१-१०७५ ई०
२७ मुन्तदी	१०७५-१०९४ ई०
२८ मुस्तज़हिर	१०९४-१११८ ई०
२९ मुस्तरशिद	१११८-११३० ई०
३० राशिद	११३५-११३६ ई०
३१ मुक्तफी	११३६-११६० ई०
३२ मुस्तखिद	११६०-११७० ई०
३३ मुस्तजी	११७०-११८० ई०
३४ नाशिर	११८०-१२२५ ई०
३५ जाहिर	१२२५-१२२६ ई०
३६ मुस्तन्शिर	१२२६-१२४२ ई०
३७ मुस्तअसिम	१२४२-१२५८ ई०

खलीफा घोषित होनेके बाद कूफामे अबुल-अब्बासने उमैया-वंशके सर्वथा उच्छेद करने का हुक्म दिया। अलीके पक्षपाती करबलाके शहीदोंको भूल नहीं सकते थे। चारो ओर खून-खून-खूनका ही नारा था। सफ़ाहके चचा दाऊदने मक्कामे और अब्दुल्लाने फिलस्तीनमे उमैया-वंशकी सत्तानोंको चुन चुनकर खतम किया। अब्दुल्लाने एक बार उमैयोंको पूर्णतया क्षमादान की घोषणा कर दी, और ७० उमैया-त्रैशियोंको दस्तरखानपर भोजनके लिये बुलाया। बेचारे बातमे आ अच्छे दिनोका स्वप्न देखते भोजनके लिए बैठे। अब्दुल्लाके इशारेपर उसके नौकर टूट पड़े और सबको वही मार डाला। हाशिमी खान्दानने उमैया-खानदानको उच्छिन्न करके ही सतोष नहीं किया, बल्कि उमैया-खलीफो की कब्रोंको खुदवाकर उनके मुर्दोंके ककालोंको चूर्ण-चूर्ण करके हवामे उड़ा दिया। पहली विजयके बाद ही उन्होंने सिरियापर भी आक्रमण कर दिया। अतिम नगर वासितमे उमैया सेनापति हुबैरपुत्रने शरण ली थी। उसने आत्म-समर्पण करनेमे ही भलाई समझी। उधर खुरासानमे अबू मुस्लिम उमैयोंका नाम तक न रखनेकी प्रतिज्ञाको कार्यरूपमे परिणत करने लगा था, जिसके कारण वहा जबर्दस्त विद्रोह हुए। उमैयाके पक्षपातियोंने चीन सम्राट् स्वेन्-चुङ्ग (७१३-७५६ ई०) की सहायतासे बुखारा, सोगद और फार्गानामे घोर सघर्ष

शुरू किया, लेकिन समरकंदके शासक जियादने बड़ी क्रूरताके साथ उनको दबा दिया। मूल सोगदी अपनी परंपराके अनुसार विदेशियोंमें लड़नेके हर एक अवसरको हाथमें जाने नहीं देते थे। उन्होंने नख्के झंडेके नीचे आकर मुकाबिला किया, और जियादने उनके साथ बड़े भयंकर ढंगसे बदला लिया। एक तरह कह सकते हैं, कि अब अन्नवंद (सोग्द) सोगदियोंके हाथसे निकलता जा रहा था, राजनीतिक तौरसे ही नहीं, बल्कि जातीय तौरसे भी। खुरासानी अरबों द्वारा पराजित होकर पहले मुसलमान हो गये थे। उनकी कट्टरताका नमूना अबू-मुस्लिम खुरासानी था। शासन और सेनामें हर जगह अब खुरासानियोंकी पूछ थी। वह खुरासानमें आ-आकर अन्नवंदमें बसते जा रहे थे, जहां युद्ध और सामाजिक मधर्पका नेतृत्व अबू-मुस्लिम कर रहा था। अब्बासियोंके शासनकी स्थापनाके साथ ही एक दूसरे ईरानी बगका भाग्य बरमका। बलख (बाख्त्रिया) का बौद्ध नवविहार अपने प्रभाव और वैभवके लिए बहुत समयसे मशहूर था। स्वेन्-चाङ्गके समय (६३१-६४६ ई०) और उससे पहले यहांके प्रधान-नायक भिक्षु होते थे, लेकिन आगेकी गड़बड़ीमें किसी नायकने व्याह करके अपनी सतानको महती दे दी और वह परमकके नामसे नवविहारकी अपार संपत्तिको भोगते मध्य-एशियाके बौद्धोंके धार्मिक नेता बन गये। यही परमक अरबीमें प अक्षरके न होनेसे बरमक हो गया। परमक वशी पीछे मुसलमान हो गये। खालिद बर्मकीको बगदादके खलीफाका महामंत्री बननेका मौभाग्य प्राप्त हुआ, तबमें बरमक खानदान प्रायः आधी शताब्दी (८०२ ई०) तक अब्बासी खलीफोंके विशाल राज्यका सर्वे-सर्वा रहा।

यद्यपि सोगद और फर्गानाके विद्रोहको इस तरह दबा दिया गया, पश्चिमी तुर्क तथा उसकी शाखा तुर्गिसका साम्राज्य भी छिन्न-भिन्न हो गया, किंतु उनकी जगह बुमन्तुओने फिर एक नया शक्तिशाली राज्य कायम कर लिया था। चीन भी इस वंशको अपने राजदूतके हाथ बड़ी बड़ी पदवियां भेजकर प्रोत्साहित कर रहा था। यही नहीं, रेशमपथको अपने हाथमें रखनेके लिये चीन नहीं चाहता था, कि फर्गाना और आगेके प्रदेशोंका मालिक उसका कोई प्रतिद्वंद्वी हो। ७४८ ई० में चीनी सेनाने आकर सुयावको ध्वस्त किया। दूसरे साल उसने शाश (ताशकंद) के शासकको अधीन सामन्तका कर्तव्य न पालन करनेके अपराधपर तलवारके घाट उतारा। फर्गानाके इखशीदको बुलानेके लिए चीनी दूत आये। इखशीद मर गया था। उसके पुत्रने सहायता के लिए अरबोंको बुलाया। जुलाई ७५१ ई० तक जियादने शारिकका विद्रोह दबा दिया था। फिर उसने सेनापति कौ-स्यिन्-चाउ द्वारा संचालित चीनी सेनाकी ओर मुड़कर उसे हराया। कहते हैं, जियादने इस युद्धमें ५०००० चीनियोंको मारा और २०००० को कैदी बनाया। लेकिन चीनी लेखकोंके अनुसार उनकी सारी सेना ३०००० थी। अरबों और चीनियोंकी यह लड़ाई बड़े ऐतिहासिक महत्वकी है। इसी लड़ाईमें इस बातका फैसला हुआ, कि उभय मध्य-एशिया चीनी संस्कृति और प्रभावमें रहेगा अथवा अरबी धर्म और संस्कृतिमें दीक्षित हो जायेगा। इस हारके बाद भी चीनी अरबोंके प्रतिद्वंद्वियोंको सहायता पहुंचाते रहे। तरिम-उपत्यका इस समय तिब्बतियोंके हाथमें थी, जिनसे अरबोंने सुलह कर रखी थी, इसके कारण इली-उपत्यका द्वारा चीन अपनी पूरी शक्ति नहीं लगा सकता था। साथ ही थाङ्-वशी सम्राट् स्वान्-चङ् (७१३-७५६ ई०) को अपने आनंद-मौजसे ही छुट्टी नहीं थी, कि वह राजकाज को देखे।

अबू-मुस्लिमने अपनी ओरसे अबू-दाऊद इब्राहिमपुत्रको बलखका राज्यपाल नियुक्त किया

था। उसके खुत्तल और केश (शहसब्ज) पर भेजे अभियान सफल रहे। खुत्तल-खुदात (शासक) हारकर चीन भाग गया। केश-खुदातको मारकर अबू-दाऊदने उसकी जगह उसके भाईको शासक नियुक्त किया। ७५२ ई० में उश्रूसनाके सामन्तीने भी अरबोंके खतरेको देखकर चीनसे सहायता मागी, लेकिन चीन कुछ नहीं कर सका।

अबू-मुस्लिमके ही बलपर अब्बासी खिलाफत कायम हुई थी। बाम्बेरीने लिखा है^१ “अबू-मुस्लिमकी ईमानदारीके प्रति हमारे मनमें सम्मान पैदा होता है। उसने आश्चर्यजनक रीतिसे थोड़ेसे समयमें अन्तर्वेदके सभी तुर्कोंको अपनी ओर कर उनको अपने साथ इतना अधिक घनिष्ठताके साथ सबंधित कर लिया, कि आज भी कितनी ही कयाये उसके सबंधमें उज्बेको और तुर्कमानोंके मुहसे सुनी जाती है, जिनमें अबू-मुस्लिमकी वीरता और चमत्कारिक कार्योंकी तुलना खलीफा अलीसे की जाती है।” अबू-मुस्लिमके खिलाफ भी शिकायतें बगदाद पहुंच रही थी। खलीफाको भय लगने लगा, कि कहीं वह अपनी प्रचंड शक्तको हमारे विरुद्ध न कर दे। ७५१ ई० में सफ्फाहने अपने भाईको पूर्वी प्रांतोंका हाल जाननेके लिये भेजा, जिसने खलीफाको सचेत कर दिया। अगले साल (७५२ ई० में) खलीफाके इशारेपर समरकंदके गवर्नर जियादने अबू-मुस्लिमके खिलाफ विद्रोह किया। आशा यह की गई थी, कि जियाद इस प्रकार अबू-मुस्लिम या उसके प्रभावको खत्म कर देगा, लेकिन परिणाम उलटा हुआ—जियाद मारा गया। अगले साल (७५३ ई० में) खलीफा अम्बारमें मर गया और उसकी जगह उसका वधित भाई अबू-जाफर मंसूरके नामसे खलीफा बना। अबू-मुस्लिम कितना जनप्रिय था, यह इसीसे मालूम होगा, कि जियादने जब अपने स्वामीके विरुद्ध विद्रोह किया, तो उसकी सेनाने उसका साथ देनेसे इन्कार कर दिया। उसने भागकर बारकतके देहकानके पास शरण ली, जिसने उसका शिर काटकर अबू-मुस्लिमके पास भेज दिया। सिवा नोमानी ने भी खलीफाके इशारे पर अबू-मुस्लिम से लड़ना चाहा था, उसे पकड़कर आमूलमें प्राणदंड दिया गया। इस अवधिमें बलखका गवर्नर अबू-दाऊद अबू-मुस्लिमके साथ रहा।

२ खलीफा मंसूर (७५४-७५७ ई०)

सफ्फाहने स्वयं अपने बड़े भाई अबू-जाफरको अपना उत्तराधिकारी चुना था, लेकिन उसका चचा अब्दुल्ला अपनी पुरानी सेवाओंके लिये खलीफा बननेके लिये उत्सुक था। अबू-मुस्लिमने जाफरका साथ दिया। अब्दुल्लाने १७००० खुरासानी सेनाका बंध करवाया, लेकिन उससे कुछ लाभ नहीं हुआ। अबू-मुस्लिम ने ईरानी सेनाके साथ निसिबि में पहुंचकर अब्दुल्लाकी शामी (सीरिया) सेनाको बुरी तरह हराया। अब्दुल्लाने अपने दावेको छोड़ दिया। मंसूरको इस सेवाके लिये अबू-मुस्लिमका बहुत कृतज्ञ होना चाहिये था, लेकिन वह नहीं चाहता था कि खलीफा बनाने-बिगाड़नेका अधिकार किसी दूसरेके हाथ में हो। खलीफाके बुरे भावोंका पता अबू-मुस्लिमको लग गया था, और वह खुरासान लौटना चाहता था। खलीफा समझता था, सारा खुरासान अबू-मुस्लिमके साथ है, इसलिये उसे वहां जाने देना अच्छा नहीं। उसने अबू-मुस्लिमको सिरिया-मिस्र का मलिक नियुक्त किया और आकर भेंट करनेके लिये मर्दन (राज-

^१ History of Bokhara (A, Vambery)

धानी) बुलाया। अबू-मुस्लिमने इसके उत्तरमें लिखा—“एक सासानी शाहने एक बार कहा था ‘वजीरके लिये इससे अधिक खतरेका समय दूसरा नहीं हो सकता, जब कि राज्यमें पूर्ण शांति विराज रही हो। इसलिये मैं इसे उचित नहीं समझता, कि अमीरुल्मोमिनीन (विश्वासियोंके स्वामी) के समीप रहूँ। हा, इसके कारण उनकी स्वामिभक्त प्रजा रहनेसे मैं अपनेको रोक नहीं सकता। अगर अमीरुल्मोमिनीन मुझे ऐसा करनेकी इजाजत देगे, तो मैं उनका अत्यन्त विनम्र सेवक बना रहूँगा। पर यदि वह अपनी दुर्भावनाओंके वशमें पड़ेगे, तो मुझे मजबूर होकर अपनी सुरक्षाके लिये अपनी राजभक्ति लौटा देनी पड़ेगी।”

इसके उत्तरमें खलीफाने लिखा—“मैंने तेरे पत्रका भाव समझ लिया, लेकिन तेरी स्थिति सासानी राजाओंके बुरे वजीरोसे भिन्न है। तेरे जैसे नम्र और स्वामिभक्त सेवकको शांतिकालमें किसी चीजसे डरनेकी अवश्यकता नहीं। यद्यपि तेरे पत्रके अंतमें जिन बातोंकी ओर संकेत किया गया है, उनसे तू पूर्णतया मेरे अधीन है, यह बात सिद्ध नहीं होती, लेकिन आशा है, कि तू इस पत्रके वाहकके साथ अवश्य लौट आयेगा। मैं अल्लाहसे प्रार्थना करता हूँ, कि वह तुझे शैतानके फरेबमें पड़नेसे बचनेकी शक्ति दे। शैतान तेरे शुभ सकलपोंको बेकार करनेकी कामना रखता है और तेरे लिये सर्वनाशके दरवाजेको खोलना चाहता है।”

अबू-मुस्लिमने उत्तरमें लिखा—“मेरे पास पैगंबरके परिवारके साथ बहुत घनिष्ठ तथा संबंधित एक पथप्रदर्शक (तुम) था, जिसका काम था, अल्लाहकी बतलाई शिक्षा और कर्तव्य कर्मके बारे में मुझे शिक्षा देना। उससे मैं ज्ञान-विज्ञान सीखनेकी आशा रखता था, लेकिन उसने ससारी चीजोंके लोभमें स्वयं कुरानके वाक्यों द्वारा मुझे अज्ञान और भ्रान्तिमें डाल दिया। उसने उलटी व्याख्या की तथा अल्लाहके नामपर मुझे तलवार निकालनेके लिये कहा और हुकुम दिया, कि अपने हृदयसे दयाके भावोंको लुप्त कर दूँ, और अपने शत्रुओंकी प्रार्थना और दया भिक्षाको न स्वीकार करूँ, किसी भी अपराधको न क्षमा करूँ। मैंने उसे स्वामी बनानेके लिये सब कुछ किया। अब मेरे लिये इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं रह गया, कि मैंने जो पाप किए हैं, उन्हें क्षमा करनेके लिये अल्लाहसे प्रार्थना करूँ।”

यह पत्र भेजकर अबू-मुस्लिम खुरासान चला गया। मसूरने अबू-मुस्लिम द्वारा नियुक्त खुरासानके राज्यपाल अबू-दाऊद खालिदको राज्यपाल बनाकर उसे हुकुम दिया, कि वह अबू-मुस्लिमकी शक्तिको खतम कर दे। सेनाको तब तक उसका हुकुम मानना था, जब तक कि वह अब्बासी-वंशके लिये लड़ता था, अब वह विद्रोही है, इसलिये वह मृत्युदण्डके योग्य है। अबू-दाऊद ने वह पत्र खुरासानी सेना और अफसरोको दिखलाया। सबने अबू-मुस्लिमको छोड़कर अबू-दाऊद को अपना अधिपति माना। अबू-मुस्लिमको यह खबर मालूम हुई। उसने सब ओरसे निराश होकर खलीफाकी सेवामें जाना स्वीकार किया। वह राजधानी मदन पहुँचा। वही खलीफा द्वारा नियुक्त पाँच हत्यारोंके ४५ सालकी आयुमें इस पराक्रमी विजेताको ७४५ ई० (१४७ हि०) में मार डाला। अबू-मुस्लिमने अब्बासी वंशकी स्थापनाके लिये छ लाख आदिमियोंकी हत्या कराई थी। सबका जिम्मेवार वही नहीं, बल्कि उसका स्वामी था, जिसको गद्दीपर बैठानेके लिये उसने सब कुछ किया था। अब खलीफाने अपनेको बिल्कुल स्वतंत्र समझा। लेकिन अबू-मुस्लिमके मरनेके बाद उसके अनुयायी खलीफाके खिलाफ हो गये, और उन्होंने हाशमी वंशमें अब्बासियोंका साथ छोड़कर अली-वंशके पक्षपातियोंके साथ हो जाना पसंद किया। अबू-मुस्लिमके मरनेके बाद

खुरासानमे भारी विद्रोह हुआ। यद्यपि उसे दो मासके भीतर ही दबा दिया गया, लेकिन उसके दलको नष्ट नहीं किया जा सका। अन्तर्वेद और ईरानके शिया (अली-पक्षीय) आदोलनकारी अबू-मुस्लिमको शहीद मानने लगे। इस दलने अपनी पोशाक और झंडेका रंग सफेद रखा, इसीलिए उन्हें श्वेतपट (सपीद-जामगान, अलमुवैयदा) कहा जाने लगा।

(२) अबूदाऊद खालिद ईब्राहीम पुत्र—अबू-मुस्लिमके अनुयायियोंको दबानेके लिये दाऊद ने बहुत प्रयत्न करना चाहा, लेकिन वह बहुत दिनों तक जी नहीं सका। महलके जगलेसे गिर जानेके कारण उसकी कमर टूट गई, (स्वामीके साथ विश्वासघात करनेवालेको मानो अल्लाहकी ओरसे दंड मिला) और उसी साल (८५७ ई० मे) वह मर गया।

(३) अब्दुल जब्बार (७५७-७५८ ई०)—अबूदाऊदकी जगह यह राज्यपाल होकर आया,। बुखाराके अरब शासक मुजाशी हारिस-पुत्र अन्सारीको इसने फासीपर चढ़ाया, क्योंकि उसकी सहानुभूति शियोंके साथ थी। अब्दुल जब्बार विद्रोहको दबानेमे सफल नहीं हुआ। जब उसे अपने बर्खास्त करनेकी खबर मिली, तो वह स्वयं विद्रोही बन गया। अब खलीफाने अपने पुत्र तथा उत्तराधिकारी मेहदीको खुरासानका राज्य-पाल बनाकर भेज।

अब्बासी खलीफा यद्यपि अरब थे, लेकिन विवाह-शादी और राजनीतिक कारणों से उन्होंने ईरानियोंके साथ बहुत घनिष्ठ संबंध स्थापित किया था, इसीलिए बरमक-वशियोंको अपना प्रधान-मंत्री बनाया। इनके कालमे भी ईरानी (पारसी) भाषाको राज्यका आश्रय नहीं मिला, और अरबी ही राज्य-भाषा बनी रही। अब्बासियोंके कालमे ही ग्रीक तथा संस्कृत आदि भाषाओंकी अमूल्य साहित्यिक निधियोंको अनुवाद करके अरबी भाषाको बहुत समृद्ध किया गया। तो भी बहुत सी बातोंमे अब्बासी खलीफा ईरानियतको पसंद करते थे। जहां पहले अरबोंने शासनकी सुभीते के लिये अपने प्रतियोगी सासानियोंकी कितनी ही बातें जल्दी जल्दीमे स्वीकार कर ली थी, वहां अब सासानी प्रभाव राजकाजके हर विभागपर स्पष्ट दिखाई पड़ता था। उमैयाकी राजधानी दमश्क थी, जहां रोमन क्षत्रप पहले रहा करता था, इसलिए उनपर रोमन प्रभावका अधिक पड़ना आवश्यक था। ७६२ ई० मे खलीफा मसूरने बगदाद नगरकी स्थापना की, और ७६८ ई० मे उसे खलीफाकी राजधानी बननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। इससे पहिले थोड़े समय तक कूफा अब्बासियोंकी राजधानी रही, फिर मदेन (तस्पोन) हुई, जो कि बहुत पहलेसे ईरानकी राजधानी रहती आई थी। नई राजधानीका नाम बगदाद (भग-दत्त, भगवानका दिया) यही बतलाता है, कि ईरानका प्रभाव अल्लाह शब्द तक पहुंच चुका था। मध्यएशियाके लिये अरबोंने मेर्वको राजधानी बनाया, यद्यपि इससे पहिले तुर्कों और दूसरे राजवंशोंने बलखको प्रधानता दी थी।

अब्बासियोंने अब खुलकर अली और अबू-मुस्लिमके अनुयायी शियोंका दमन करना शुरू किया। पैगबरके वंशके नामसे उन्होंने अपने दलको संगठित किया था। फिर लोग पैगबरकी बेटीके वंशको छोड़कर पैगबरके चचा अब्बासको क्यों मानते? अब्बासी वंश अब केवल शस्त्रके बलपर ही लोगोंको दबा सकता था, वह शिया संप्रदायका अगुवा अपनेको नहीं कहा सकता था। इमाम हसनके वंश-धर मुहम्मद और इब्राहीमने ७६२ ई० मे विद्रोह किया। इससे पहले ७५८ ई० मे एक ईरानी धार्मिक संप्रदाय रावदीने काफी तरद्दुदमे डाला और एक बार तो उसके कारण खलीफाके प्राण भी संकटमें पड़ गये थे। रावदियोंके सिद्धांतोंमे पुनर्जन्म भी था, जो

कि पूर्वी ईरान और मध्य-एशियामे हाल तक बहुत प्रभाव रखनेवाले बौद्ध धर्मके कारण था। इस्लामके भीतर होनेके कारण वह अल्लाहको मानते थे, लेकिन जिब्रैल (फारिस्तोके सरदार) आदम ही नहीं बल्कि खलीफा और उसके दो सेनापतियोंके शरीरमे भी अल्लाहका अस्थायी तौरपर निवास अर्थात् आशिक अवतार मानते थे। मध्य-एशिया और पूर्वी-ईरानमे अशांति थी, अरमेनियाके उत्तरमे हूणोंके वशघर खाजार घमन्तुओका भारी दबाव था। उनसे लड़नेके लिये ७६२ ई० मे खलीफाकी सेना अरमेनिया पहुँची। खाजार कास्पियन समुद्रके पश्चिमी तटके मालिक थे। उन्हींकी प्रधानताके कारण कास्पियन समुद्रका नाम बहीरा-खाजार (खाजार-समुद्र) पड़ा, जो आगे बहीरा-खिजिर बनाकर खिजिर फरिस्ताके साथ जोड़ दिया गया।

मसूरको एक और ईरानी संप्रदाय उस्ताद्सीके विद्रोहका मुकाबिला करना पड़ा। इस संप्रदायके अधीन हिरात, बादगी, सीस्तान तथा दूसरे प्रदेशोंके तीन लाख ईरानी सैनिक लड़ रहे थे। इन्होंने खुरासान और मेर्व-रूद प्रदेशके अब्बासी सैनिकोंको भागनेके लिए मजबूर किया, तब मसूरने सेनापति खाजिम खुजैम-पुत्रको मेहदीकी सहायताके लिये भेजा। खाजिमने २०००० सेना लेकर उस्ताद्सियोपर चढ़ाई की। ७०००० उस्ताद्मी मारे गये और १४००० बंदी बनाये गये। उस्ताद्सी पहाड़ोंमे भागे, लेकिन वहाँ भी उनका पीछा किया गया और उन्हें आत्म-समर्पण करना पड़ा। बगदादमे रूसाफ नामका एक अलग महल्ला बसाया गया था, जो खुरासानियोंके लिए था। अभिमानी अरब खलीफा पैगबर-जातीय तथा विश्व-विजेता होने के अभिमानमे चूर हो बाकी सभी लोगोंको नीच समझते थे, इसलिए खुरासानियोंका उनके भीतर निर्वाह नहीं हो सकता था, इसीलिए कूफा और मदैनके अरबी वातावरणसे अलग होनेके लिये बसाये बगदाद नगरमे भी अरबोंका प्रधान मुहल्ला अलग हो रहा।

(६) हुमैद कहतबापुत्र (७६९-७७५ ई०) — प्रसिद्ध सेनापति कहतबाका पुत्र हुमैद अब खुरासानका राज्यपाल नियुक्त हुआ। अभी तक अरबोंने हिंदुकुश (महाहिमगिरि) पर्वतमालाके पश्चिम तक ही अपनी विजयको सीमित रक्खा था। हुमैदने काबुलके विरुद्ध जहाद (धर्मयुद्ध) घोषित किया। काबुलकी प्रजा और वहाँके तुर्क शासक भारतीय सस्कृति और धर्मके प्रभाव क्षेत्रमे थे। इससे आधी शताब्दी पहले सिंध और मुल्तानको अरबोंने इस्लामिक सल्तननके आधीन किया था, और पख्तूनो (पठानो) से छेड़-छाड़ नहीं शुरू की थी। सिंध और मुल्तानमे अरबोंके शासनमे उतनी धर्मांधता नहीं थी, किंतु हुमैदने जैसे-तैसे सारे काबुलको मुसलमान बनानेका सक्लप कर लिया। यद्यपि अभी उसे इतनी सफलता नहीं हुई।

३. खलीफा मेहदी (७७४-७८३ ई०)

मसूरके बाद उसका पुत्र मेहदी खलीफा बना। उसने जिस समय शासन आरंभ किया, उस समय मध्य-एशियाकी अशांति दबाई नहीं जा सकी थी।

(७) अबू-औन (७७५-७७६ ई०) — हुमैदकी जगह अबूऔन राज्यपाल बनकर आया। मेहदी खुरासानाकी परिस्थितिसे स्वयं वाकिफ था। अबू-मुस्लिमके कतलके बाद उसके अनुयायियोंका नेता एक अनपढ़ व्यक्ति इसहाक हुआ, जो उत्तरमे तुर्कोंके पास दूत बनकर भेजा गया था, इसलिए उसको अल्-तुर्क भी कहते थे। इसहाकके नेतृत्वमे अन्तर्वेदका विद्रोह बहुत प्रबल

हो उठा था। वह अपनेको ईरानी पैगबर जर्थुस्तका उत्तराधिकारी जिदा-जर्थुस्त घोषित करते हुए कहता था, कि अपने धर्मकी स्थापनाके लिए ईरानियोमे जर्थुस्त फिर आ गया। यद्यपि इसहाकके विद्रोहको दबा दिया गया, लेकिन अबू-दाऊदको इसी संप्रदायके आदमीके हाथो प्राण खोना पडा। अबू-दाऊदके उत्तराधिकारी अब्दुल-जब्बारने ७६९ ई० मे विद्रोहियोका साथ दिया था। इन विद्रोहियोका नेता श्वेतपट बराज था। अब्दुल-जब्बार पराजयके बाद मेवँरूदके पास पकडा गया और उसे सरकारके हवाला कर दिया गया।

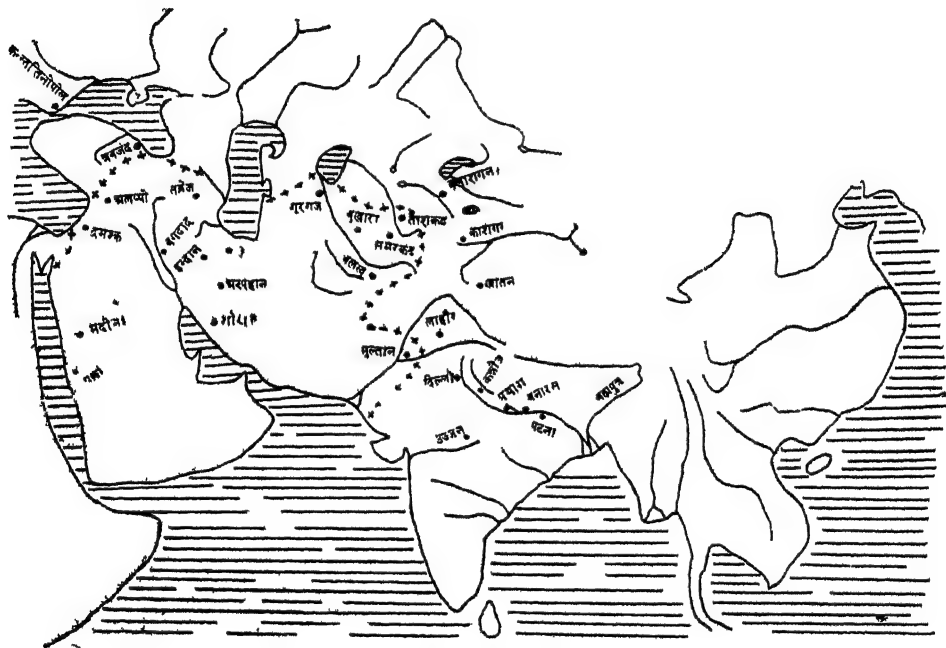
मुकन्ना विद्रोह—मध्य-एसियामे सबसे अधिक खतरनाक विद्रोह मुकन्नाका था। मुकन्नाका असली नाम हाशिम हाकिम-पुत्र था। वह मेवँके पास पैदा हुआ था। पैगबरीका दावा करनेके बाद वह अपने मुहपर हरा परदा डाले रहता था। उसने अपने अनुयायियोको समझा रखा था, कि मेरे चेहरेका तेज इतना तीव्र है, कि उसे कोई सहन नहीं कर सकता, इसीलिये मैं चेहरेपर हरा परदा डालता हूँ। मुकन्ना पहले अबू-मुस्लिमका अनुयायी था, फिर अब्दुल-जब्बारके विद्रोही होनेपर उसका साथी बना। उसका उपदेश था—जैसे अल्लाह (खुदा) ने आदम, नूह, इब्राहीम, मूसा, ईसा और अबू-मुस्लिम मे अवतार लिया, वैसे ही आज ब्रह्म मेरे भीतर है। अरबोने हरा परदा डालने के लिये उसका नाम “अल्-मुकन्ना” (परदेवाला) रख दिया। यह कहना सिद्ध है, कि उसने अपने चेहरेकी कुरूपताको ढकनेके लिये परदा रखना शुरू किया था। पहले पहल सुबाह गावने उसका पक्ष लिया, फिर किश और नसाफके इलाकेमे उसे सफलता मिली। बुखारा-खुदात बुनियात उसका सहायक बना। सोगदमे भी मुकन्ना-पथियोने विद्रोह कर दिया। बुखारा-प्रदेश के मुकन्नियोका केन्द्र नरशाख था, जहा प्रसिद्ध अरबी-इतिहासकार नरशाखीपैदा हुआ। मुकन्नाको तुर्कोसे भी सहायता मिली। अतमे जब खलीफाकी भारी पलटन चढ दौडी, तो उन्हें दबना पडा, और मुकन्नाने किश (शहरशब्ज) के पास एक पहाडी किले मे शरण ली। चारो ओरसे निराश होकर मुकन्नाने जहर खा लिया और उसका शिर काटकर मेहदीके पास हलब (अलेप्पो) भेजा गया।

(८) **मुआज मुस्लिमपुत्र (७७६-७७९ ई०)**—मुआज जब मुकन्नाके विद्रोहको दबा नहीं सका, तो मुसैयाह जुबैर-पुत्र (७००-७८३) को आना पडा।

(९) **मुसैयाह जुबैरपुत्र (७७९-७८२ ई०)**—यह मुआजकी जगह राज्यपाल होकर आया, और मुकन्नी विद्रोह दबानेमे इसे सफलता मिली। इस समय अन्तर्वेद केकितनेही गावोमे जिदीक (मज्दकी) रीति-रवाजवाले बहुतसे श्वेतपट (सफेद-जामगान) रहते थे, जिनमे सबसे अधिक इलाककी देहातोमे फैले हुए थे। मज्दक मानीके धार्मिक सुधारोका पक्षपाती तथा साम्यवादी समाज स्थापित करनेकी इच्छा रखता था। कवादके शासनकाल (४८७-९८, ५०१-३१) मे उसे बहुत भारी सफलता मिली थी, किन्तु कवादके बूढापके समय उसका साथ छोड दिया और अपने पुत्र खुस्रो अनौशेरवानके उत्तराधिकारके झगडेके साथ मज्दक और मज्दकियोको बडी भारी सख्यामे मरवाया। यही मज्दकी अरबो और इस्लामकेसमय जिदीक बन अपनेको छिपानेके लिये, इस्लाम या शिया संप्रदायका परदा डाले रहते थे, यद्यपि भीतरसे वह मज्दकी सिद्धात (वैयक्तिक सपत्ति और विवाह-प्रथाके-विरोध) के पक्षपाती थे।

यद्यपि नस्नने उमैयोका पक्ष लेकर अपने प्राणोको खोया, लेकिन पीछे उसके वंशज अब्बासियो केअनुकूल हो गये। नस्न-वंशी लैसके लडके रफीने मुकन्ना-विद्रोहके दबानेमे अपने चचेरे भाई असन तामन-पुत्रको साथ लेकर अब्बासियोकी मदद की। पीछे रफी पर व्यभिचारका अपराध लगाया

गया, तो उसने प्राणरक्षा के लिये विद्रोही बन समरकदको दखल करवहासे अब्बासी शासनको खत्म कर दिया। नसाफके निवासियोंने उससे सहायता मांगी, तो उसने शाश (ताशकद) के शासकको तुर्कोंकी सेनाके साथ सहायतार्थ भेजा। फर्गाना, खोजन्द, उश्रूसना, शगानियान, बुखारा, ख्वारेज्म और खुत्तलके लोग रफीके ओर हो गये थे। उसके उत्तरके पड़ोसी ताकुज-आगूज, करलक और तरिम-उपरत्यकके शासक तिब्बतियोंने भी उसकी सहायताके लिये आदमी भेजे थे।



१८ अरब (अरबासौय) साक्षात् (६०६ ई०)

रफीका विद्रोह जल्दी नहीं दबा। जब उत्तरी तुर्कों ने उसका साथ छोड़ दिया और अब्बासी सेनाका जोर बढ़ा, तो उसने ८०९ ई० में खलीफा मामूनी न्यायप्रियताको सुनकर उसके पास आत्म-समर्पण किया। मामूनी उसे पूर्ण क्षमा प्रदान की और इस प्रकार दस-पंद्रह वर्षके बाद यह भीषण विद्रोह दब सका।

(१०) फजल मुलेमान-पुत्र तूसी (७८२-७८७ ई०)—पुसेयाहके असफल होने पर फजलको सीस्तान और खुरासानको राज्यपाल बनाकर भेजा गया। इसके अगले साल खलीफा मेहदी मर गया।

४ हादी (७८३-७८६ ई०)

चौथे खलीफा हादीका शासन भी अशांतिपूर्ण रहा, अन्तर्वेदमे विद्रोह होते रहे।

⁸Turkistan Down to Mongol Invasion, History of Bokhara (Vambery)

५. हारून रशीद (७८६-८०९ ई०)

अब्बासी खलीफोमने अपने विद्याप्रेम और दरबारी दबदबेके लिए हारून और उसके पुत्र मामूनकी ख्याति दुनियामे सबसे बढकर है। ७८६ ई० मे हारूनने खालिदकी जगह उसके पुत्र यहिया बरमकको अपना प्रधान-मन्त्री बनाया। अब्बासी वजीरोमे यह सबसे शक्तिशाली था, जिसके हाथमे ८०२ ई० तक सारी सल्तनतकी बागडोर रही।

(११) जाफर अशासी (७८७-७८८ ई०)—माल भरके लिये जाफर खुरासानका राज्य-पाल बनकर आया।

(१२) अब्बास अशासी (७८८-७९१ ई०)—पिताके सफल न होनेपर उसका पुत्र अब्बास राज्यपाल बनकर आया, किंतु उसे भी रफीके सामने बहुत सफलता नही मिली।

(१३) मतरिब अनापुत्र (७९१-७९२ ई०)—यह जाफरका भाई था, जिसे भतीजेकी जगह राज्यपाल बनाकर भेजा गया, किंतु कोई सफलता न दिखलानेके कारण उसे भी साल भर बाद लौट जाना पडा।

(१४) हजमा खुजाई (७९२-७९४ ई०)—इसके समय दैलममे शियोका जबर्दस्त विद्रोह हुआ।

(१५) फज़ल यहियापुत्र बरमक (७९४-७९५ ई०)—प्रधान-मन्त्री यहियाने अपने पुत्र फज़लको खुरासानका राज्यपाल बनाकर भेजा। फज़लने खुरासानमे कितनी ही मस्जिदे बनवाई और डाकके सुप्रवधके लिये डाक-चौकिया कायम की। उसने अन्तर्वेदमे जहाद (धर्मयुद्ध) घोषित किया, जिसके उत्तरमे उश्रूसनाके राजा खाराखरूने अब्बासी सेनापर असफल आक्रमण किया।

(१६) मंसूर हिमयारी (७९५-७९६ ई०)—फज़लका स्थान इसने लिया, किंतु इसे भी सफलताका मुह देखना नही नसीब हुआ।

(१७) जाफर यहिया-पुत्र बरमक (७९६-७९८ ई०)—प्रधान-मन्त्रीने अपने दूसरे पुत्र जाफरको सीस्तान और खुरासानका उपराज बनाकर भेजा किंतु वह भी दो सालसे अधिक नही टिक सका।

अब हारूनने अपने शिशु पुत्र मामूनको हमदान (पश्चिमी ईरान) से पूर्वके सारे प्रदेशका क्षत्रप बनाकर भेजा और सरक्षक होनेके कारण शासन जाफरके हाथमे रहा।

(१८) अली ईसा-पुत्र—अलीका राज्यपाल होना बगदादमे बरमक वशके पतनका द्योतक था। यहिया, और उसके दोनो पुत्र फज़ल और जाफर बरमक वशके अतिम प्रभावशाली शासक थे। नये राज्यपाल अलीने प्रजापर इतना अत्याचार किया कि, ८०४ ई० मे उसके अत्याचारोकी जाचके लिये अपने उत्तराधिकारी अमीनको बगदादमे स्थानापन्न बनाकर हारूनने स्वयं ५०००० सेनाके साथ प्रस्थान किया। रे (तेहरान) मे अली भारी भेटके साथ खलीफाके आगमनकी प्रतीक्षा कर रहा था। भेटकी देखकर खलीफा खुश हो गया। वह स्वयं ८०६ ई० मे बगदाद लौट गया और अली ईसा-पुत्र अपनी राज्यपालीकी ओर। इसीके शासनकालमे लैस-पुत्र रफीको खूब आगे बढनेका मौका मिला और उसने समरकंद पर अधिकार कर सोगदियो और तुर्क धुमन्तुओकी सहायतासे अलीकी सेनाको अन्तर्वेदसे मार भगाया। जब यह खबर हारूनको मिली, तो उसने सेनापति हरसमाको भेजा। उसके भी

सफल न होनेपर युवराज अमीनके हाथमे शासनका काम छोड़ हारूनने स्वयं युद्धक्षेत्रका रास्ता लिया। किरमानशाह पहुंचकर उसने अपने दूसरे पुत्र मामूनको फजल सहल-पुत्रकी सचिवतामे मेर्वमे निवास ग्रहण करनेके लिये भेजा। हरसमाने आगे बढ़कर रफीके ऊपर चढ़ाई की। बुखारामे अपना युद्ध-शिविर रक्खा, और कुछ ही समयमे सारे अन्तर्वेदको अपने हाथमे करनेमे सफल हुआ। हारून बीमारीके कारण धीरे-धीरे ही खुरासानकी ओर बढ़ सकता था। तूस पहुंचनेपर उसकी हालत बहुत खराब हो गई और वही २४ मार्च ८०९ ई० (जमादी २, १९३ हि०) को वह ४५ सालकी उम्रमे मरा, तूसमे ही उसकी कब्र बनी।

६ अमीन (८०९-८१३ ई०)

हारूनके मरनेपर उसके दोनो पुत्रो अमीन और मामूनमे सिंहासनके लिये झगडा हुआ। अमीनका राजधानीपर अधिकार था और मामूनका खुरासान तथा मध्य-एशिया पर। अमीनने अपने वजीर फजल रबीअपुत्रके परामर्शसे तूसमे अवस्थित सेनाको लौटनेके लिये आज्ञा भेजी। यह काम भाई ही नहीं पिताकी इच्छाके भी विरुद्ध था, इसलिये उसका पालन होना आसान नहीं था। मामूनने सारे डाक-संबध तोड़ दिये और अपनेको हमदानसे पूरब तिब्बतके सीमात तक फैले राज्यका खलीफा घोषित किया। वजीर फजल सहल-पुत्रकी योग्यताके कारण वह अपने यहां व्यवस्था स्थापित करनेमे सफल हुआ। कुछ समयके घेरेके बाद हरसमाने सशस्त्र दल ले लिया। रफीने मामूनके हाथमे आत्म-समर्पण किया। उसे क्षमा मिली। अमीनने जब मामूनको दबानेमे सफलता नहीं पाई, तो उत्तराधिकारियोंकी सूचीसे उसका नाम निकलवा दिया। मामूनने भी राज्यके आधे भागमे खुतबासे भाईका नाम निकलवा दिया। अमीनने ८१० ई० में मामूनको दबानेके लिये ५०००० सेना देकर अली ईसा-पुत्रको भेजा। रे (तेहरान)मे जब वह पहुंचा, तो देखा, कि मामूनका जनरल ताहिर सीमात-रक्षाके लिये तैयार है। ताहिरने अलीको द्वंद्व-युद्धमे मार डाला। अलीकी सेना भाग खड़ी हुई। मामूनने ताहिरको बगदादपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। हरसमाकी सेनाके साथ ईरानी और तुर्की सेना ले ताहिरने बगदादी सेनाको हराते १२ महीनेके घिरावेके बाद (८१३ ई०) बगदाद ले लिया। भागनेकी कोशिश करते अमीनको एक ईरानी सिपाहीने मार डाला।

मामूनने अपने खुरासानके निवास-काल (८०९-८१८ ई०)मे सोग्द, उश्रूसन, फगर्नाके राजाओको अधीनता स्वीकार करनेके लिये सेना भेजी थी। ८१० ई० (१५४ हि०) मे उसकी सेनाने कुलान (वर्तमान तरती, जिला औलियाअता)पर आक्रमण किया। इसी समय सूफी सक्कीकी इब्राहीम-पुत्र बलखी मारा गया। ८११ ई० मे मामूनने अपने वजीर फजलसे शिकायत की थी,— बड़े बुरे मौकेपर अभियान करनेके लिये मजबूर होना पडा है, इस समय करलुकोका यब्गू अधीनता स्वीकार करनेसे इन्कार करता है, तिब्बतका खाकान (चन्-पो) भी विरुद्ध है, काबुलका राजा खुरासानपर आक्रमण करनेकी तैयारी कर रहा है, उतरारके शासकने कर देनेसे इन्कार कर दिया है। वजीर फजलने सलाह दी—“यब्गू और तिब्बतके खाकानको पत्र लिखकर उन्हें अपने राज्यका राजा तथा पडोसियोंके आक्रमण करनेपर सहायता देनेका वचन दो। काबुलके राजाको भेड़ भेजकर शांतिका वादा करो और उतरारके राजाका एक सालका कर भाग कर दो।” मामूनने वैसा ही किया।

७ मामून (८१३-८३३ ई०)

८१३ ई० में मामूनके हाथमें निष्कटक खिलाफत आई, लेकिन अरबोंके डरके मारे मामूनने वजीर सहलपुत्रकी रायसे बगदाद न लौट मेर्वको ही अपनी राजधानी रक्खा। इसका परिणाम अच्छा नहीं हुआ, पश्चिमी प्रदेशकी प्रजा खलीफासे रुष्ट हो गई और मामूनको अपने भाईकी तरह दूसरोंके हाथमें खेलना पड़ा। उसने अपने विश्वासपात्र ईरानी सेनापति ताहिरको बगदादका शासक बनाकर भेजा। ईरानियोंकी मददसे मामूनने भाईको हराकर तख्त पाया था, और उन्हींके बलपर मेर्वको राजधानी बनाया था, इसलिये ईरानियोंका प्रभाव बढ़ना स्वाभाविक था। मध्य-एशियाके दो शासक ताहिरी और सामानी इसी समय मूलबद्ध हुए। ताहिर बगदाद-पर शासन करनेमें अधिक सफल नहीं हुआ। वहाँ अरबोंका प्रभाव अधिक था, जो ईरानियोंके प्रभुत्वको देख नहीं सकते थे। उधर अमीनके खूनका बदला लेना भी आवश्यक था। ताहिरने दामकी जगह शाम और भेदसे काम लिया और एक बार सारे इराकपर खलीफाका प्रभुत्व स्थापित कर दिया। किंतु, राजधानी हट जाने से बगदाद और उसके आसपासके लोगोंको जो क्षति हो रही थी, उसके कारण विद्रोह और वैमनस्य बढ़ता ही गया। ईरानकी और जगहोंमें भी ऐसे विद्रोहोंकी कमी नहीं थी। वजीर फजल सहलपुत्र ईरानी था, यह अरबोंके लिये आगपर घी का छिड़कना था। बहुत समय तक मामून अपने वजीरके हाथमें खेलता रहा। उसने ईरानियोंको बड़े बड़े दर्जे दिये। यद्यपि मध्य-एशियाका शासन-सूत्र पहले ताहिरी वशमें गया, लेकिन उसी समय सामानी भी प्रभुत्वमें आये। ८१७ ई० में नूह सामानी और उसके भाइयोंको समरकंद, फर्गाना, शाश, उश्नुसनासे उत्तर-पूरब सिर-नदीके दक्षिणी तटपर चिरचिक-उपत्यकामें, पैरक, उश्नुसना (उरा-स्यूबे जिला), और हिरात नगरका शासक बनाया गया। ८७० ई० में मामूनको सहलपुत्रकी नीति गलत मालूम हुई, उसे खतरा साफ-साफ दिखाई पड़ने लगा। इसी साल मामूनने मेर्वसे बगदादके लिये प्रस्थान किया। सररक्षा पहुंचनेपर मामूनके इशारेपर वजीर फजल गुसुलखानेमें मरा पाया गया। मामून बगदाद नगरमें दाखिल हुआ। अब ईरानी दल उसके कोपका भाजन था। उसने बगदादके शासक ताहिरको पदच्युत कर दिया। ताहिर ने जब पूरब जानेका निश्चय किया, तो उसे प्रसन्न करनेके लिये ८१८ ई० में पूरबका उपराज बना दिया। लेकिन साथ ही खलीफाने एक हिजडा भी साथ करके उसे हिदायत कर दी थी, कि यदि ताहिर विरुद्ध जावे, तो उसे जहर दे देना। ताहिरको यह बात मालूम हो गई। उसने अपने शासित देशमें खुतबेसे मामूनका नाम निकलवा दिया, लेकिन दूसरे ही दिन ताहिर अपने बिस्तरे पर मरा पाया गया।

मेर्व ८०९ से ८१३ ई० तक खलीफा अमीनके प्रतिद्वंद्वी मामूनकी और ८१३ से ८१७ ई० तक खलीफा मामूनकी राजधानी रहा। ताहिरियोंने अपनी राजधानी नेशापोरमें रखी।

(अरबी साहित्य)—मसूर और हारून तकका शासनकाल (७४५-८३३ ई०) अरबी साहित्यके तीव्र विकासका समय है। यद्यपि ७वीं सदीके मध्यसे लेकर प्रायः १०वीं सदीके मध्य तक अरबी (पारसीके क्षेत्रकी भी) राजभाषा रही, किंतु उसके साहित्य-सृजनका विशाल कार्य अब्बासीखलीफोंकी सरक्षकतामें इसी वक्त हुआ। ग्रीक, पहलवी और संस्कृत भाषाओंसे हुए अनुवादोंको देखकर अरब विद्वानोंकी आखे खुली। ग्रीक (यूनानी) साहित्यकी निधियोंके महत्त्वको

समझ कर उमैया खलीफा यजीद (१) (६८०-६८३ ई०) के पुत्र खालिद (मृत्यु ७०४ ई०) ने अनुवादके कामको पहिले पहिल शुरू कराया। उसे कीमिया (रसायन) का बहुत शौक था। उसीने सर्व प्रथम एक ईसाई साधु द्वारा कीमियाकी एक यूनानी पुस्तकका अरबीमें अनुवाद कराया। लेकिन अनुवादकी प्रगति आगे नहीं बढ़ी। उमैया-वंश अरब-जाति और अरबी भाषाको दुनियामें सर्वोपरि मानता था, इसलिये उसका ध्यान उधर क्यों जाता? अब्बासी वस्तुतः आधे अरब और आधे ईरानी थे, इसलिए पहलवीके साथ-साथ यूनानी (ग्रीक) और सुरियानी भाषाओके साहित्य की ओर भी उनका ध्यान गया। मसूरके शासनकाल (७५३-७७४ ई०) में वैद्यक, तर्कशास्त्र, दर्शन और भौतिक विज्ञानके बहुतसे ग्रंथ अरबीमें अनुवादित हुए। उस समयके अनुवादकोमे इब्न-मुकफ्फा (मुकफ्फा-वंशी) का नाम विशेष तौरसे स्मरणीय है। मुकफ्फा स्वयं ईरानी जाति का ही नहीं, बल्कि ईरानी धर्मका भी अनुयायी था। उसने कितने ही ग्रीक दर्शन-ग्रंथोके भी अनुवाद किये। बहुतसे और अरबी अनुवादोकी भांति वह काल-कवलित हो गये, लेकिन ग्रीक विचारधाराके प्रसारमें मुकफ्फाके अनुवादोने बड़ा काम किया, इसमें शक नहीं।

हारून और मामूनके अनुवादकोमे कुछ भारतीय पंडित भी थे, जिन्होंने वैद्यक और ज्योतिष के संस्कृत ग्रंथोके अनुवाद करनेमें सहायता की—सिध इस समय अब्बामियों का था। अब्बानी-कालके कुछ अनुवादक हैं *—

अनुवादक	ग्रंथ	मूलकार
योहन्ना वित्रिक-पुत्र	तेमाऊस	प्लातोन
	प्राणिशास्त्र	अरस्तू
	मनोविज्ञान	"
	तर्कशास्त्र (अपूर्ण)	"
अब्दुल्ला नइमलाहमसी	सोफिस्तिक	प्लातोन
.	भौतिक-शास्त्र-टीका	फिलोपोन
कस्ता लूकापुत्र		

अफ्रादीसियस

मामूनके बाद भी अनुवादका काम जारी रहा। हानेन इसहाकपुत्र (९१० ई०), होवेश इब्नुल-हसन, मत्ता युनुसपुत्र अल्कन्नाई (९४० ई०), अबू-जकरिया आदिलपुत्र (९७४ ई०), अबू-अली ईसा जूरा (१००८ ई०), अबुल्खैर अल्हसन खम्मर (जन्म ९४२ ई०) मुख्य अनुवादक थे। मसूर और मामूनका समय (७५४-९३३ ई०) करीब करीब वही है, जो कि तिब्बतके राजाओ ठी-दे चुग्तन, ठी-स्रोड, दे-चन और ठी-दे चनका (७४०-८३६ ई०), जब कि हजारों संस्कृत ग्रंथोका तिब्बती भाषामें अनुवाद करके तिब्बती साहित्यको समृद्ध किया गया। तिब्बतीय अनुवादक बौद्ध थे। वह अपने धर्म या दर्शनके ग्रंथोका अनुवाद बहुत ही शुद्ध करना चाहते थे, जब कि अरबी अनुवादकोमे प्रायः सभी यहूदी, ईसाई या साबी धर्मके माननेवाले थे।

* दर्शनदिग्दर्शन

यह अमुस्लिम अनुवादक अपने धर्मके पक्के थे। खलीफा भी उदार थे। खलीफा मसूरके पूछनेपर जार्ज इब्नजिब्रीलने उत्तर दिया—“मैं तो अपने बाप-दादोके धर्ममें ही मरूंगा। चाहे वह स्वर्गमें हो या नर्कमें, मैं भी उन्हीके साथ रहना चाहता हूँ।” अर्थात् गीताके शब्दोंमें वह मानता था “स्वधर्मो निधन श्रेय।” मसूर इस उत्तरको सुनकर हँस पड़ा और उसने अनुवादकको बहुत इनाम दिया।

अरबी-साहित्यमें जब अरस्तू और प्लातोन जैसे यूनानी दार्शनिकों एवं बुद्धि-वादियोंके ग्रंथोंका अनुवाद होने लगा, तो उसका असर अरब विद्वानोंके ऊपर पड़ना आवश्यक था। इस प्रभावका पहला परिणाम इस्लाममें मोतज्जला संप्रदायकी उत्पत्ति थी। इस संप्रदायका केंद्र बसरा रहा। इसके आचार्योंमें सबसे बड़ा विद्वान अल्लाफ अबुलहुजैल था, जिसका देहांत ९वीं सदीके मध्यमें हुआ था, इस प्रकार यह शकराचार्य (७८८-८२० ई०) का समकालीन था। अल्लाफ बड़ा ही वाद-चतुर था। ईश्वरको अद्वैत और निर्गुण सिद्ध करनेमें इसने अपने समसामयिक शकरके निर्विशेष चिन्मात्र ब्रह्माद्वैतके साधक तर्कोंका इस्तेमाल किया। अल्लाफका कहना था अल्लाह (ब्रह्म) में कोई गुण (विशेषण) नहीं हो सकता। मोतज-लियोंके मुख्य सिद्धांत थे—(१) जीव कर्ममें स्वतंत्र है, (२) ईश्वर केवल भलाइयोंका स्रोत है, (३) ईश्वर निर्गुण है, (४) ईश्वरकी सर्वशक्तिमत्ता सीमित है, (५) चमत्कार (मोजजा) झूठे हैं, (६) जगत् अनादि नहीं सादि है, (७) कुरान भी अनादि नहीं सादि है। मोतजलियोंका दूसरा आचार्य नज्जाम (मृत्यु ८४५ ई०) संभवतः अल्लाफ का शिष्य था। अद्वैत विज्ञानवाद पहले ही नव-प्लातोनिक दर्शनके रूपमें ईरानियों और क्षुद्र-ऐसियाके विद्वानों तक पहुंच चुका था, इसलिए उसे भारतसे जानेकी आवश्यकता नहीं थी।

सिक्के—अरब खलीफा सासानियों और रोमकोंके उत्तराधिकारी थे, इसलिये उनके सिक्कोंपर रोमक और सासानी सिक्कों का प्रभाव देखा जाता है। काना बुखारा-खुदातके तौरपर ३० साल तक शासन करता रहा। बुखारामें सबसे पहले उसीने रौप्य मुद्रा (दिरहम्) ढाली थी। यह काम उसने उस समय किया, जबकि द्वितीय खलीफा अबूबकर (६३२-६४० ई०) के के समय सिक्कोंका काम शुरू हुआ। कानाके सिक्केपर एक ओर बुखारा-खुदातका चित्र रहता था। यह सिक्के बहुत समय (८ वीं शताब्दीके अंत) तक चलते रहे, फिर ख्वारेज्मी सिक्के आये। बुखारियोंने अपने शासक गितरिफ अता-पुत्रसे सिक्का ढालनेके लिये कहा। उस समय चादी बहुत महंगी थी, इसलिये गितरिफ (७९१-७९२ ई०) ने हारून रशीदके जमानेमें अष्टधातु (सोना, चादी, सीसा, रागा, लोहा, तांबा) का दिरहम् ढाला। गितरिफ इस सिक्केका आरंभक था, इसलिये उसका नाम ही गितरिफी पड़ गया। खोटी धातुका सिक्का होनेके कारण लोग लेनेसे इन्कार करते थे, जिसपर उन्हें लेनेके लिये बाध्य किया गया। छ गितरिफी एक चादीके दिरहम् के बराबरकी दरसे उसे सरकारी करमें भी ली जाती थी। उस समय बुखारा-प्रदेशका कर था दो लाख दिरहम्, जिसे ११,६८,५६७ गितरिफी निश्चित कर दिया गया था। पीछे गितरिफीका मूल्य बढ़ता गया। जब वह मूल्यमें रौप्य दिरहम् के बराबर हो गई, तो भी करकी रकमको घटाया नहीं गया। ८३५ ई० में तो १०० रौप्य दिरहम् ८५ गितरिफीके बराबर था, और ११२८ ई० में मूल्य और बढ़कर १०० दिरहम्के बराबर ७० गितरिफी थी। अन्तर्वेदके सिक्कोंमें गितरिफी के अतिरिक्त मुहम्मदी (मुहम्मद दाहद पुत्र का) दिरहम्० मुसैयबी (मुसैयब जुबैरपुत्र) दिरहम्

(७८०-७८३ ई०) भी चलते थे। मध्य-एशिया में ८२६-८२८ ई० में भिन्न-भिन्न प्रदेशों में निम्न प्रकारके सिक्कों द्वारा कर उगाहा जाता था^१—

प्रदेश	सिक्का
ख्वारेज़्म	ख्वारेज़्मी दिरहम
तुर्किस्तान (प्रदेश)	ख्वारेज़्मी, मुमैयवी
उश्त्रूसना	मुमैयवी, मुहम्मदी
फर्गाना	मुहम्मदी
योगद	
किश् (शहरमब्ज)	
नसाब	. .
शाश	.
खोजन्द	
बुखारा	गिनरिफी

सोह्रद में ५वी, ६ठी सदी में सासानी सिक्कों की नकल की गई।

स्थानीय सिक्कों के अतिरिक्त खलीफा के सिक्के भी मध्य-एशिया में चलते थे। उमैय्यो के सिक्के कूफी लिपि में होते थे, जब कि अब्बासी सिक्के अरबी लिपि में। इनके अग्रभाग में “लाइलाहा इल्लल्लाहु मुहम्मद रसूलल्लाहु” लिखा रहता और दूसरी ओर खलीफा का नाम तथा टकसाल का नाम होता था। खलीफा मोतमिद (८७०-८९२ ई०) के एक सिक्के पर पृष्ठभाग में “अल्मोआफिक बिल्लाहु” तथा “बिस्मिल्लाहु ज़रब हाजा दिरहम् ब-समरकद . मातैन” उत्कीर्ण है। मोतमिद ने अपने भाई अबू-अहमद तलहा को “अल्मोआफिक बिल्लाहकी” उपाधि दी थी। भारत में मुसलमानों के सिक्के अकबर के समय से पहले तक टेढ़ी-मेढ़ी अरबी लिपि होते थे, सिक्को पर मूर्ति उत्कीर्ण करना इस्लाम के विरुद्ध था, इसलिये जहागीर को छोड़कर भारत में किसी मुस्लिम शासक ने मूर्ति उत्कीर्ण कराने का साहस नहीं किया।

^१Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)

स्रोत-ग्रन्थ :

- 1 Heart of Asia (E D Ross)
- 2 Turkistan Down to Mongol Invasion (W Brtold)
३. इस्कुस्तवी खेद्निआजिइ
- ४ अखितेक्तुनिये पाम्यात्तिकि तुर्कमानिइ
- 5 History of Bokhara (A Vambery)

अध्याय ४

ताहिरी (८१८-८७२ ई०)

१. ताहिर (८१८-२२)^१

ताहिरने इस राजवंशकी स्थापना की। ताहिरियोका पूर्वज राजिक, सल्म जियादपुत्रके अधीन सजिस्तानके राज्यपाल अबू-मुहम्मद तलहा अब्दुल्लापुत्र कुला खुजाईका एक अफसर था। राजिकके पुत्र मुशाअबको हिरात प्रदेशके वुशग नगरका शासक बनाया गया था। जिस वक्त अब्बासियोके लिये अबू-मुस्लिम प्रचार कर रहा था, उसी समय तलहा अबू-मुस्लिमके एक अनुयायीका सचिव था। यूसुफ बरमकने वुशगको तलहाके हाथसे छीन लिया। विद्रोह दमनके बाद मुशाअब फिर वुशगका शासक बना दिया गया। उसकी मृत्यु ८१४ (१९९ हि०) में हुई। उसके पुत्र हुसैनको वह पद मिला, और हुसैनसे उसके पुत्र ताहिरको, जो अपनी योग्यता और सेवाओसे मामूनके शासनकालमें बहुत शक्तिशाली शासक बन गया। ताहिरने रफी लैसपुत्रके विरुद्ध लड़नेके समय भी अब्बासी सेनाका संचालन किया था। ८११ ई० में मामूनने अपने भाई अमीन के विरुद्ध जो सेना भेजी थी, उसका प्रधान-सेनापति ताहिर था। वजीर फजल सहलपुत्रने अपने हाथसे ताहिरके भालेमें झड़ा लगाया था। मामूनके लिये पश्चिम विजय करनेके बाद उसे अलजजीरा (मसोपोतामिया) का राज्यपाल, बगदादकी सेनाका सेनापति और सवाद (इराक) का वित्तीय शासक भी बनाया गया। ताहिरके मित्र अहमद अबू-खालिद-पुत्रने खुरासानके गवर्नर रसा गस्सन अबाद-पुत्रके विरुद्ध मामूनका कान भरा, जिसमें वह हटाया गया। आगे जिस तरह खलीफा ताहिरके खिलाफ हुआ, इसके बारेमें हम कह चुके हैं।

तुलनात्मक ताहिरी सफ़फारी-सामानी वंश

ई०	भारत (प्रतिहार)	चीन (थाङ्ग)	दक्षिणापथ (ताहिरी)	उत्तरापथ
८२०	नागभट्ट ८१५-	मुचुङ्ग ८२१-२५	ताहिर I ८१८-२२	
			अली ८२८-३७	
	भोज I ८३६-	वेन्चुङ्ग ८२७-४१	अब्दुला ८३७-४४	

^१ Heart of Asia (E D Ross), Turkistan down to Mongol Invasion

८४०	वूचुङ ८४१-४७ स्वानचुङ ८४७-६०१	ताहिर II ८४४-५१ (उङ्गुर) मुहम्मद ८५१-६७ ओन्नेयन् ८४७- (सफफारी)
८६०	ईचुङ ८६०-७४ सीचुङ ८७४-८९	याकूब ८६१-७८ अम्र ८७८-९००
८८०	चाउचुङ ८८९-९०४	(सामानी) नस्र I ८७५-९२ इस्माईल ८९३-९०७
महेन्द्र पाल ८९३-		
९००	चाउह्वान ९०४-७ (खित्तन)	अहमद ९०७-१४
महिपाल I ९१४-	अपओकी ९०७-२६	नस्र II ९१४-४२ (कराखानी)
९२०	ताइचुङ ९२६-४७	आतुर्युक ९२६
९४०	महेन्द्र II ९४५- देवपाल ९४८-	नूह I ९४३-५४ अब्दुल्मलिक ९५४- शातुक ९५५-
९६०	विजयपाल ९६०- चिङ्चुङ ९६८-८३	मसूर ९६१-७६ नूह II ९७६-९७
९८०	शेङ्चुङ ९८३-१०३१	मसूर II ९९७-९८ बुगरा ९९२- इलिकनस्र ९९३-
१०००	राज्यपाल १०१८- २७	मुत्तासिर -१००४ तुगान १०१२- २५

२ तलहा (८२२-८२८ ई०)

यद्यपि ताहिरने मामूके खिलाफ विद्रोह किया था, और खुतवेसे उसका नाम हटवा दिया था, किंतु खलीफाकी हिम्मत नहीं हुई, कि उसके वंशसे शासन छीन ले। ताहिरका एक पुत्र अब्दुल्ला मसोपोतामिया और मिस्रमें मामूनके लिये लड़ रहा था, दूसरे पुत्र तलहाको मामूनने पूर्वका उपराज रहने दिया। तलहाने अपना शासन-केन्द्र मेर्व नहीं नेशापोरमें रक्खा, जहासे वह तबा-रिस्तान, खुरासान, अन्तर्वेदपर पूर्ण प्रभुत्व रखता था। इसीके शासनकालमें अहमद अबूखालिद-पुत्रके सेनापतित्वमें एक सेना मध्य-एशियाके उत्तरी भागमें भेजी गई। उश्रूसनाके राजा कावूस, फजल यहिया-पुत्र बरमकके समय अधीनता स्वीकार करनेवाले अफशीनाका पुत्र था। कावूसने मामूनको कर देना स्वीकार किया था, किंतु जब खलीफा मेर्वसे बगदाद चला गया, तो उसने इन्कार कर दिया। उसके बाद राजवंशमें झगडा उठ खडा हुआ और कावूसकी ओर किसीका ध्यान नहीं गया। कावूसके पुत्र हैदरने एक प्रसिद्ध सरदार—जो कि उसके भाई तथा प्रतिद्वंद्वी फजलका

ससुर और उसके दलका मुखिया था—को मार डाला । इस हत्याके बाद हैदर वहासे भागकर बगदाद पहुँचा । दूसरी ओर फजलने अपने दलको मजबूत करनेके लिये उत्तरी तुर्क ताकूज-आगूजौको देशमें बुलाया । ८२२ ई० में अहमद अबूखालिद-पुत्रने सेनाके साथ जब उश्रूसनामें प्रवेश किया, तो हैदरने एक गुप्त छोटे रास्तेसे उसे देशमें पहुँचा दिया । कावूसको पता नहीं लगा, और लड़ना बेकार समझकर वह आत्मसमर्पण के लिये मजबूर हुआ । फजल तुर्कोंके साथ भाग गया, पीछे उन्हें भी छोड़ अरबोंसे मिल गया । इस विश्वासघातके कारण उसकी मददके लिये आये हुए तुर्क उत्तरी बयाबानमें नष्ट हो गए । कावूस आत्मसमर्पण करके बगदाद गया, अभी तक वह मुसलमान नहीं हुआ था । बगदादमें खलीफाके हाथों उसने इस्लाम स्वीकार किया और उसकी ओरसे उश्रूसनाका शासक नियुक्त हुआ । उसके बाद उसका पुत्र हैदर शासक बना, जो पीछे खलीफाके दरबारमें प्रथम श्रेणीका सरदार और अफशीनके नामसे बड़ा प्रसिद्ध हुआ । ८४१ ई० में अफशीन हैदरको फासी दी गई, लेकिन उसका वंश ८९३ ई० (२८० हि०) तक उश्रूसनापर शासन करता रहा । अंतिम अफशीन शेर अब्दुल्ला-पुत्रके ८९२ (२७९ हि०) में ढाले हुए सिक्के लेनिन्ग्रादके एरमिताज म्यूजियममें रखे हुए हैं ।

अहमद अबूखालिद-पुत्रको जब मध्य-एशिया भेजा गया, तो तलहाने अहमद और उसके सचिवकी खूब भेंट-पूजा की । यही अहमद सामानियोंका भी सरक्षक था । उसने अहमद असद-पुत्रको फिरसे फर्गानाका शासक बनाया । फर्गाना, काशान और उस्तका अंतिम पतन नूह असद-पुत्रके हाथों हुआ । नूहने ८४० ई० में इस्फिजाबको जीता और वहाके लोगोंको अपने अगूरके बगीचों और खेतोंके किनारे दीवार बनानेका हुक्म दिया, क्योंकि तुर्क बराबर लूट मार करनेके लिये आया करते थे । इतना होनेपर भी इस्फिजाबका शासन तुर्की राजवंशमें १०वीं सदी तक रहा । इस्फिजाबके शासकने खलीफा से विशेष रियायतें प्राप्त थीं । उसे कर देना नहीं पड़ता था, उसकी जगह वह एक दानिक (चवन्नी) और एक झाड़ू भेजता था ।

३ अली (८२८-८३७ ई०)

अलीने भी अपने पूर्वाधिकारीके शासनको अक्षुण्ण रखा । इसीके समय तुर्किस्तानकी ओर खलीफाने अपने अभियान भेजे थे । खाराजियोने विद्रोह किया, जिसमें नेशापोरके पास अली मारा गया ।

४ अब्दुल्ला (८३७-८४४)

खलीफाने अलीके मरनेकी खबर सुनकर अब्दुल्ला ताहिरपुत्रको उपराज बनाकर भेजा । इस समय खलीफा मोतसिम् (८३३-८४२ ई०) गद्दीपर था । मोतसिम्के समय उसके गारदमें सोगद, फर्गाना, उश्रूसना और शाशके तुर्क भरती थे । अब्दुल्लाने अपने राज्यकी सीमाको बढ़ाना चाहा, और उसके लिए अपने पुत्र ताहिरको सामानियोंके सहायक गूजोंके देशमें विजय करनेके लिये भेजा । ताहिर इस्लामका झंडा लेकर ऐसे स्थानोंमें गया, जहाँ इससे पहले मुसलमान गाजी नहीं पहुँचे थे । खलीफा मोतसिम्के समय तक आमू और सिरद-रियाके बीचके लोग पक्के मुसलमान हो चुके थे—इन लोगोंमें सोगदी और तुर्क दोनों ही जातियाँ थीं । इस्लामका झंडा लेकर इन्होंने अपनी उत्तरी पड़ोसी तुर्कोंके साथ दीनकी लड़ाई

लडनी शुरू कर दी। अब्दुल्ला ताहिरियोका सबसे शक्तिशाली शासक था। इसके समय खलीफाका शासन नाममात्र रह गया और एक तरह अरबोंके शासनके जूयेको उतारकर ईरानी अपना वंश स्थापित करनेमें सफल हो गए। मोतसिम अतिम अब्बासी खलीफा था, जिसने मध्य-एशियामें अपने अधिकारका कुछ उपयोग किया। उसने २०,००,००० दिरहम् लगाकर शाश (ताशकद) नगरमें एक नहर खुदवाई, जो कि १३ वी सदी तक काम देती रही।

५. ताहिर II (८४४-५१ ई०) —

अब्दुल्लाकी मृत्यु (८४४ ई०) के बाद ताहिर और मुहम्मदने शासन किया। मुहम्मदके शासनके बाद ८७२ ई० में इस ईरानी राजवंशका अंत हुआ। अब बगदादी खलीफा का अधिकार यही था, कि लोग उसे इस्लामका धर्मगुरु मानते थे। शुक्रवारको नमाजके बाद जो खुतबा (उपदेश) पढ़ा जाता था, उसमें खलीफाके तौर पर उसका नाम लिया जाता था। यह प्रथा अतिम अब्बासी खलीफा मुस्तअसिम (१२४२-१२५८ ई०) तक चलती रही। मुहम्मद ताहिरके शासनकालके अतिम वर्षमें भी उसके प्रदेशमें कुछ भूमि खलीफाकी निजी संपत्ति थी।

शासन-व्यवस्था—ताहिरी और सामानी दोनों उच्चकुलीन थे, इसलिए उभमें अबू-मुस्लिम या शियोकी तरह ईरानी राष्ट्रीय भाव या जनतात्रिक झुकावका पता नहीं था। एक-तत्रताके साथ जनताको अधिकसे अधिक अपने साथ रखनेकी ताहिरियोने अवश्य कोशिश की, क्योंकि उन्हें इस्लामिक खलीफाकी इच्छाके विरुद्ध हो अपने अस्तित्वको कायम रखना था। शांति और व्यवस्था कायम रखनेके लिये अमीरोंके जुल्मोंसे निम्न श्रेणीके लोगोंकी रक्षा करना उनके लिये आवश्यक था। ताहिरी विद्याप्रेमी थे, लेकिन अभी उनके विद्याप्रेमका सुप्रभाव पारसी भाषापर नहीं पड़ा था। अब्दुल्ला ताहिरीका कहना था “ज्ञान और विद्या, योग्य और अयोग्य दोनोंके लिए सुलभ होनी चाहिए। ज्ञान अपने आप ठीक कर लेगा, और वह अयोग्योंके पास नहीं रहेगा।” ताहिरने मुस्लिम धर्मशास्त्रपर एक ग्रंथ “किताबुल-कुनिया” तैयार कराई, जिसमें उसने किसानों के बारेमें कहा है—“अल्लाह हमें उनके हाथोंसे खिलाता है, उनके मुहसे हमारा स्वागत करता है और उनके साथ दुर्व्यवहार करनेका निषेध करता है।” अपने पिता ताहिर (I) की तरह अब्दुल्ला भी कवि था। आमूल-ख्वारेज्मके शासक उसके भतीजे मसूर तलहा-पुत्रने दर्शनपर कोई ग्रंथ लिखा था। अब्दुल्ला उसपर बहुत अभिमान करता था और उसे ताहिरियोकी प्रज्ञा कहता था।

६. मुहम्मद अब्दुल्ला-पुत्र (८५१-८७२ ई०)

मुहम्मद पहले बगदाद का गवर्नर था। खलीफा की निजी ग्राम-संपत्ति तवागिस्तान और देलमके प्रदेशों के बीच में थी, जो मुहम्मद को सुपुर्द की गई थी। मुहम्मद ने उसके प्रबन्ध के लिये ईसाई जाविर हारून-पुत्र को भेजा, जिसने मुहम्मद की जमीन का सुप्रबन्ध करते हुए पड़ोसी गांवों की गोचरभूमि को भी दखल कर लिया। इस पर अली-पक्षपातियो शियो के नेतृत्व में गांवोंके लोगोंने विद्रोह कर दिया। उनका नेता हसन जैद-पुत्र ८८४ ई० तक इस प्रान्तका शासक रहा। इस शिया-आंदोलन की सफलता वस्तुतः किसानों की सहायता से हुई, जिनके स्वार्थों के समर्थन में शिया लड़ रहे थे। शायद इसी तरह का जनतात्रिक संघर्ष ९१३-९१४ ई०

वाला भी था, जो कि हसन अलीपुत्र उत्तूशी अलीवशज के नेतृत्व में सामानियों के विरुद्ध हुआ। उत्तूशीने देलम में इस्लाम फैलाया और निम्न वर्ग का हितैषी होने के कारण जोवन भर सर्व-प्रिय रहा। अलबेरूनी हसन पर आक्षेप करता है, कि उसने पारिवारिक सगठनको नष्ट कर दिया। हसनने तालुकदारी के अधिकार को खत्म कर दिया, इसमें सन्देह नहीं। ५३ साल के शासन के बाद ताहिरी वश को याकूब लैसपुत्र ने समाप्त कर दिया। ताहिरी वश परम्परा के बारे में कहा गया है—

दरखुरासान ज-आल मस्सावशाह । ताहिर व तलहा बूद व अब्दुलल्लाह
वाज ताहिर दिगर मुहम्मद दान । कि व याकूब दाद तस्तो कुलाह ।

स्रोत-ग्रन्थ

1. Heart of Asia (E D Ross)
2. Turkistan Down to Mongol Invasion (Bartold)
३. “सियासत नामा” (निजामुल्मुल्क)

अध्याय ५

सफ़फ़ारी (६६१-६३० ई०)

सफ़फ़ार लोहार या ताम्रकार को कहते हैं। याकूब का परिवार शायद यही पेशा करता था।

१. याकूब (८६१-८७८ ई०)

खलीफा मुतविकलके समय ८४७-८६१ ई० सालेह नस्रतुत्र ने खारजी सम्प्रदाय को दबाने का बहाना करके खुरासानको दखल कर लिया था। सालेह के भी बहुत से अनुयायी थे। इसे सुनकर ताहिर (८४४-८५१ ई०) स्वयं खारजियो और सालेहके अनुयायियों के झगड़े को दबाने के लिये आया और सफलता प्राप्त कर राजधानी मेवें लौट गया। फिर दुबारा सालेहके विद्रोह की खबर आई। इस समय सालेहका सहायक याकूब लैसपुत्र सफ़फ़ार (ताम्रकार) था। याकूब में स्वाभाविक नेता के गुण थे। उसकी उदार-हृदयता बचपन ही से प्रकट थी। सयाना होने पर वह डाकुओं के गिरोह का सरदार बन गया। उसे धन और यश दोनों प्राप्त हुआ, क्योंकि जिनकी सम्पत्ति लूटता था, उनके साथ भी बड़े उदार तथा मानवोचित बर्ताव करता था। जल्दी ही उसके बहुत से अनुयायी हो गये और वह निरा डाकू न रह विजेता बन गया। सालेहने उससे सहायता मागी। याकूब तो मानो इस अवसर को ढूँढ ही रहा था। ८६१ ई० में याकूब की सहायता से विद्रोहियों को तेजी से दबा दिया गया। राज्यपाल के उत्तराधिकारी दिरहम नासपुत्र ने अपनी सेना की कमान याकूब को दे दी। चारों ओर याकूब का आतक छा गया। ताहिरी जनता में अप्रिय हो गये थे। याकूब ने ८७७ ई० में हिरात, फिर किरमान और शीराज़ तक को भी जीत लिया। अब ताहिरी नेशापोर में निर्बल से रह गये। ८७१ ई० में याकूब ने खलीफा मोतमिद (८७०-८९२ ई०) के पास अपने को खलीफा का दास घोषित करते हुए दर्शन पाने की इच्छा प्रकट की। खलीफा ऐसे भयानक आदमी से डर गया। क्या ठिकाना कहीं वह बगदाद पर भी हाथ साफ न कर दे। आखिर इराक तक की सीमा तक तो वह पहुँच ही गया था। मौतमिदने उससे जान छुड़ाने के लिये तुखारिस्तान तथा भारतीय सीमान्त तक का उसे गवर्नर बना दिया।

भारतके सीमात पर काबुलके तुर्क शासको और अफगानों (पख्तूनो) का देश था। याकूब हिंदकुश पारकर काबुल-उपत्यकामें दाखिल हुआ। काबुलके तुर्क (हिंदू) राजाको पिछले सौ वर्षोंसे किसी मुसलमान शासकने नहीं परेशान किया था। याकूब उसे जीतकर काबुलके राजा और उसकी मूर्तियोंको अपने साथ ले गया। ८७२ ई० में अंतिम ताहिरी मुहम्मदको परास्त कर उसने ताहिरी वंशका उच्छेद कर दिया। मुहम्मद ताहिरीने याकूब से कहा था—‘अगर बफरमाने-अमीनुल्-मोमीनीन आमदी, अहद व मशूर अर्जकुन्,

ता बलायत बतू संपारम्, व गर न बाज़ गर्द ।' याकूब शमशीर अज़ ज़ेरे-फसली वैहन आवर्द, व गुफ्त—'अहद मौलाय-मन ईनस्त' ('अगर तू खलीफाके हुकुमसे आया, तो आज्ञापत्र दिखला ताकि मैं तुझे यह प्रदेश सुपुर्द कर दू, नहीं तो लौट जा ।' याकूबने अपने चोगेके भीतरसे तलवार निकाली और कहा— 'मेरे स्वामीका आज्ञापत्र यह है ।')

८७६ ई० में नस्र अन्तर्वेदका वास्तविक शासक था । याकूब मंगलवार ९ जून ८८९ ई० को मरा और उसका भाई अम्र लैसपुत्र उसका उत्तराधिकारी हुआ ।

२. अम्र सफ़फ़ार (८७८-९०० ई०) —

बड़े भाईकी तरह अम्र भी बहादुर और योग्य नेता था । कुछ समय तक उसने खलीफाको अपना स्वामी स्वीकार किया । खुरासानके लोगोंने अम्रके खिलाफ खलीफाके पास शिकायत की, तो खलीफा मोतमिद् (८७०-८९२) ने अम्रको खुरासानकी गवर्नरीसे वंचित कर दिया, और उसे रफी हरसमा-पुत्रको प्रदान किया । अम्रको दबानेके लिये खलीफाने एक बड़ी सेना भेजी । पहली बार अम्र हार गया और शीराज़ तथा किरमानके रास्ते अपनी जन्मभूमि सीस्तानकी ओर भागा । वहाँ अपनी विखरी सेनाको एकत्रित करके उसने फिर खलीफाकी सेनाके ऊपर प्रहार करना शुरू किया । इसी बीच (८९२ ई० में) खलीफा मोतमिद् मर गया और मोतजिद (८९२-९०२ ई०) नया खलीफा हुआ । अम्र लैसपुत्रने नये खलीफाको अपनी सेवाये अर्पित की । उसने ऐसे जबर्दस्त आदमीके साथ शामका वर्ताव करना ही अच्छा समझा और उसे खुरासानका गवर्नर नियुक्त किया । उस समय अरब-भिन्न पूर्वी प्रदेश (अजम) के दो भाग थे— (१) ईरान और (२) मावराउन्नहर् (अन्तर्वेद, मध्यएशिया) । अन्तर्वेदके शासक अब सामानी थे और खुरासान तथा ईरानके कितने ही भाग का अम्र । रफी हरसमा-पुत्रकी ताकत बढ़ती जा रही थी । इसे देखकर भी खलीफाको यह चाल चलनी पड़ी । अम्रने ८९६ ई० (२८३ हि०) में रफीको हराकर उससे नेशापोर छीन लिया और क्रूरतापूर्वक मारकर उसका सिर खलीफाके पास भेज दिया । इस तरह सारे ईरानका स्वामी बनकर अब अम्र अन्तर्वेदकी ओर बढ़ना चाहता था । खलीफा दोरगी चाल चल रहा था । एक ओर वह अम्रको उत्साहित कर रहा था, दूसरी ओर इस्माईल सामानीकी भी पीठ ठोक रहा था । ९०० ई० (२८८ हि०) में इस्माईल सामानीने बलखको घेर लिया और कुछ लड़ाईके बाद नगरके साथ अम्र भी इस्माईलके हाथमें पड़ गया । खलीफा मर गया था । इस्माईलने अम्रको बगदाद भेजा, वहाँ उसे बदीखाने में डाल दिया गया, पीछे ९०३ ई० में कतल कर दिया गया । अम्रके पकड़े जानेके बाद उसका पुत्र ताहिर नाममात्र का शासक रहा ।

पहले खुतबामे खलीफाका नाम लिया जाता और उसके लिये दुआ की जाती थी । खलीफाके सिवा और किसीके नामसे दुआ नहीं की जा सकती थी, किंतु अम्रने खुतबामे अपना नाम रखवाकर बादशाहोको भी खुतबामे शामिल करनेका रवाज जारी किया ।

“सियातनामा”^१ में याकूब और अम्र लैस-पुत्रके पतन और इस्माईल सामानीके उत्थानके बारेमें कहा गया है “सामानियोमें एक न्यायप्रिय बादशाह (अमीर आदिल) हुआ, जिसको

^१सल्जूकी वजीर-अजम निजामुल्मुल्क की कृति

इस्माईल अहमद-पुत्र कहते हैं। वह अत्यधिक न्यायप्रिय था। उसमें बहुतसे सुगुण थे। ... वह दरबेशो (सन्तो) का भक्त था। यह इस्माईल ऐसा अमीर था, जो कि बुखारामे बैठा हुआ, खुरासान, इराक, मावराउन्नह (अन्तर्वेद) का स्वामी था। (उसने) याकूब लैसपुत्रको सीस्तानसे निकाला। वह (याकूब) शीयो के उपदेशकोके जालमें फँस गया था और इस्माईलियोके धर्ममें था। उसने बगदादके खलीफाके प्रति बुरी नियत की और बगदाद जानेका इरादा किया, जिसमें खलीफाको मार डाले और अब्बासियोके कुलको हटा दे। खलीफाको खबर मिली, कि याकूब बगदादका इरादा किए हुए है। उसने दूत भेजकर कहा : “तेरा बगदादमें कोई काम नहीं है। (वही) सारे कोहिस्तान, इराक और खुरासानको सभाल।” याकूबने कहा— “मेरी इच्छा है कि अवश्य तेरे दरगाहमें आऊ और सेवा करू, अहद (नियुक्ति पत्र) ताजा करू, नया बनवाऊ। जब तक यह न करू, मैं नहीं लौटूंगा।” खलीफाने बहुत दूत भेजा, किन्तु उसने वही जवाब दिया। वह सेना लेकर बगदादकी ओर चला। खलीफाको सदेह हुआ। (उसने) अपने दरबारके बुजुर्गोंसे कहा— “मुझे मालूम होता, याकूब लैसने आज्ञाकारितासे सिर खींच लिया है, और बुरी नियतसे यहा आ रहा है, क्योंकि मैंने उसे नहीं बुलाया। मैं हुक्म देता हू कि लौट जाय, लेकिन वह नहीं लौटता। ऐसी हालतमें उसके दिलमें जरूर बदनीयती है। मुझे पता लगा है कि वह बातिनियोके धर्मको माननेवाला है।” (बुजुर्गोंने) बतलाया कि खलीफा शहर (बगदाद) में न रहे, और बयाबानमें जाकर उर्दू और छावनी लगाए। बगदादके विशेष व्यक्ति और बुजुर्ग सब उसके साथ रहे। जब याकूब आवेगा और खलीफाको बयाबानमें सेनाके साथ देखेगा, तो उसकी नियत प्रकट हो जायेगी, उसका दुर्भाव अमीरुल्मोमनीन (खलीफा) को मालूम हो जायगा। लोग छावनीमें एक दूसरेके पास आना-जाना करेंगे। अगर वह दुर्भाव रखता है और इराक, खुरासानके सारे अमीर उसके साथ नहीं हैं, न सम्मति देते हैं। (और) उसका दुर्भाव प्रकट हो जाये, तो हम उसकी सेनाको पछाड़ेगे।” यह उपाय अच्छा लगा और वैसा ही किया गया।” यह खलीफा अल्मोतमिद-अल्लाह अहमद (८७०-८९२ ई०) था।

जब याकूब लैस वहा पहुँचा और खलीफाकी सैनिक छावनीके पास आया, तो दोनों सेनाये मिलने जुलने लगी। याकूब लैसने अपने दुर्भावको प्रकट किया और खलीफाके पास आदमी भेजा कि बगदादको दे दो और जहा मन हो वहा जाओ। खलीफाने दो महीनेका समय मागा, लेकिन उसने समय नहीं दिया। जब रात हुई, तो किसी को उसके सिपाहियोंके पास भेजकर उसकी बदनीयतीको प्रकट कराया : “वह मुल्हिद (दुर्धर्मी) है, उसके ऊपर अल्लाहकी फटकार हो। वह इसलिये यहा आया है, कि मेरे खानदानको हटा दे और दुश्मनोको मेरी जगहपर बैठायें। क्या तुम भी इस बातमें उसकी सहायता करते हो ?” उनमें से एक जमातने कहा— “हमने उससे रोटीका टुकड़ा पाया है, इसलिये उसकी सेवा करते हैं। उसने जो किया वह हमने किया।” लेकिन अधिकांश लोगोंने कहा— “हमें इस बातकी खबर नहीं थी। हम जानते थे, कि वह कभी अमीरुल्मोमनीन के खिलाफ नहीं होगा। अगर वह दुश्मनी प्रकट करता है, तो हम उससे सहमत नहीं हैं। हम मुकाबिलेके दिन तुम्हारे साथ होंगे, युद्धके वक्त तुम्हारी तरफ आ जायेंगे और तुम्हें विजय प्राप्त करायेंगे।” ऐसा करनेवाले खुरासानके अमीर थे। जब खलीफा याकूबकी सेनाके सरदारोके भावको इस प्रकार देखकर खुश हुआ।

याकूब लैस पहिले ही आक्रमणमें पराजित हुआ और बड़ी कठिनाईसे खुजिस्तानकी

तरफ भागा। उसके सारे खजानेको लूट लिया गया। खुज़िस्तान पहुँचकर उसने चारो ओर आदमी भेज सेना जमा की। खलीफाको जब इस बातकी खबर मिली, कि वह खुज़िस्तानमें मुकाम किए हुए है, तो उसने पत्र और दूत भेजकर कहा “हमें मालूम हुआ है कि तू सीधा-सादा आदमी दुश्मनोकी बातोंमें पडा है, और तूने अपने कामके परिणामपर ख्याल नहीं किया। तूने देख लिया, कि अल्लाने तेरे साथ क्या किया और तू अपनी सेना-सहित पराजित हुआ। इस समय जानता हूँ, कि तुझे समझ आई है। इराक और खुरासानके अमीर-पदके योग्य तेरे जैसा कोई नहीं है। सिवाय इस कसूरके तेरी और सेवाओको हमने पसन्द किया है और तूने जो किया उसको न किया समझते हैं। जितनी जल्दी हो, तू इराक और खुरासान चला जा, और उस बलायत (सूबा) के शासनके काममें लग जा।”

जब याकूबने खलीफाके पत्रको पढा, तो उसका दिल जरा भी नरम नहीं हुआ, और अपने काम पर उसे लज्जा नहीं आई। उसने सिरका, मछली, प्याज और रोटी लकड़ीके थालपर रखकर लानेका हुकम दिया। फिर खलीफाके दूतको बुलाकर वहाँ बैठाया, और दूतकी ओर मुह करके उसने कहा—“जा खलीफाको कह दे, कि मैं गरीबके घरमें पैदा हुआ आदमी हूँ और बापसे रूईगरीका काम सीखा। मैं जौ की रोटी, मछली, तरा और प्याजका खानेवाला हूँ। यह बादशाही. बहादुरीके कारण मेरे हाथमें आई, तेरे हाथसे नहीं पाई। मैं तब तक पैर पर नहीं बैठूँगा, जब तक कि तेरे सिरको न कटलवा लूँ और तेरे खानदानको नष्ट न करवा दूँ। जैसा कि अभी कहाँ, मैं वह करवाके रहूँगा या जौ की रोटी, मछली और तराखानेकी ओर लौट जाऊँगा।” यह कहकर इस पैगामके साथ उसने खुदाके खलीफाके दूतको लौटा दिया। खलीफाने बहुतसे पत्र और दूत भेजे, लेकिन वह नहीं लौटा और सैनिक अभियानका निश्चय करके उसने बगदाद जानेका इरादा किया। उसे कुलचकी बीमारी थी, जिसने आ पकडा। हालत ऐसी हुई, कि उसने समझ लिया, कि इस बीमारीसे छुट्टी नहीं मिलेगी। तब उसने अपने भाई अमरू लैस-पुत्रको अपना उत्तराधिकारी बनाया, और खजाना उसे दे दिया। फिर मर गया। अमरू लैस-पुत्र . . . खुरासान लौट गया और बादशाही करने लगा। सेना और प्रजा अमरूको याकूबसे भी अधिक प्रेम करती थी। अमरू बड़ा हिम्मतवाली, उदार और राजनीति-पटु था। उसकी हिम्मत और उदारता इतनी थी, कि उसके रसोईके सामानको चार सौ ऊट ढोते थे, दूसरी चीजोंका तो अन्दाजा ही नहीं किया जा सकता। लेकिन खलीफाका सदेह वैसा ही बना रहा, शायद वह भी अपने भाईका रास्ता पकड़े, और कलको वही दिन सामने आये। . . यद्यपि अमरूका ऐसा इरादा नहीं था, तोभी खलीफाने इस बातका सदेह किया और किसी आदमीको इस्माईल अहमद-पुत्रके पास बुखारा भेजा “अमरू लैस-पुत्रको निकाल, उसपर चढ़ाई कर और देशको उसके हाथसे छीन, फिर हम खुरासान, इराक के अमीरका पद तुझे दे देंगे।

. . . खलीफाकी बातोंका उस (इस्माईल)के दिलपर असर हुआ। उसने इस विचारको ठीक समझा कि अमरू लैस-पुत्रके साथ दुश्मनी करे। उसके पास जितनी सेना थी, उसे जमा किया और जैहूँ (वक्षु) नदीकी उस ओर गया। गिनती करनेपर दो हजार सवार मालूम हुए, जिनमें दो के ऊपर एक ढाल, बीस मरदोपर एक कवच, और पचास आदमियोंपर एक भाला था। वह शहर मेवमें पहुँचा। अमरू लैसके पास खबर गई, कि इस्माईल अहमद-पुत्र जैहूँ पार हो मेव आया है और . . . राज्य माग रहा है।

अमरू लैस हँसा, वह उस समय नेशापोरमे था। ७० हजार सवार उसने जमा कर बलखकी ओर मुह किया। जब दोनों एक दूसरोंके आमने-सामने हुए, तो ऐसा सयोग हुआ कि अमरू लैस-पुत्र बलखमे हारा, और उसके ७० हजार सवार ऐसे रहे कि एकको भी चोट नहीं पहुँची और न कोई कैदी बना। सबके बीचसे अमरू लैस-पुत्र ही गिरफ्तार हो गया। उसे इस्माईलके सामने लाये। इस्माईल की नज़र अमरू लैस-पुत्रके ऊपर पड़ी। उसका दिल दुखी हुआ और जाकर (अमरू से) बोला—“आज रात मेरे साथ रह, क्योंकि मैं अकेला हूँ।”

अमरूने कहा—“जब तक मैं जिन्दा हूँ। कोई पर्वा नहीं, खानेकी चीजका इतिजाम कर।”

फरश एक मन (२ सेर) मास ले आया और सैनिकोसे लोहेके दो बर्तन मागे। हर तरफ दौड़ा। कि कलिया (गोश्त) पकावे। इस प्रकार गोश्तको बर्तनमे रखा, लेकिन नमककी कमी थी।

इस्माईलने अपने अफसरको उस (अमरू)के पास भेजा, तो अमरू लैस-पुत्रने मोतमिद (अफसर) से कहा—“इस्माईलसे कह कि मुझे तूने नहीं, बल्कि तेरी ईमानदारी, विश्वास और सुन्दर स्वभावने हराया।”^१

विद्वान्—ताहिरियो और सफारियोके रूपमे अब स्वतंत्र ईरानी शासक पैदा हुए। सफ-फारी यद्यपि आभिजात्य वर्गके नहीं थे, और उन्हें अधिकतर युद्धो और सघर्षोमे ही समय बिताना पड़ा, किंतु ताहिरियोने विद्याकी ओर विशेष ध्यान दिया। बगदादके खलीफा मसूर-हारून-मामूनने दुनियाके बड़े बड़े दार्शनिको और विद्वानोकी कृतियोका अरबीमे अनुवाद करनेका रास्ता दिखलाया था, उसका फल इस समय मिला। याकूब किदी (८७० ई०) बगदादी खलीफोके समयमे पहला उच्चकोटिका दार्शनिक पैदा हुआ, जिसे ग्रीक दर्शनके अनुवादोका परिणाम कह सकते हैं। इसका पूरा नाम अबू-युसुफ याकूब इसहाक-पुत्र किदी था। दक्षिणी अरबमे किदा नामक एक कबीला था, जिसमे याकूब पैदा हुआ, किंतु इसका परिवार कई पीढियोसे इराकमे आ बसा था। याकूबका पिता इसहाक किदी कूफाका गवर्नर था। पूर्वी इस्लामने जो तीन (किदी, फाराबी, बूअलीसीना) महान् दार्शनिक पैदा किये, उनमे याकूब किदी पहला था। किदीकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी, वह भूगोल, इतिहास, ज्योतिष, गणित और दर्शन सब पर अधिकार रखता था। उसके ग्रंथ अधिकतर गणित, ज्योतिष, भूगोल, वैद्यक और दर्शनपर हैं। उस समयके किमिया (सोना बमानेकी विद्या) पर विश्वास रखनेवालोको निर्बुद्धि कहकर वह मजाक उड़ाता था, लेकिन दूसरी ओर फलित ज्योतिष पर उसका बहुत विश्वास था। अपने दार्शनिक विचारोमे वह ग्रीक दार्शनिकोसे प्रभावित था।

^१“सियासतनामा” (निजामुल्मुल्क) पृष्ठ ८-१४

^२देखो दर्शन दिग्दर्शन पृष्ठ १०९-११३।

स्रोत-ग्रन्थ

1. Heart of Asia (E D Ross)
2. Turkistan Down to Mongol Invasion (W Bartold)
३. “सियासतनामा” (निजामुल्मुल्क, लाहौर)

भाग ७

उत्तरापथ (१४०-१२१२ ई०)

अध्याय १

कराखानी (६४०-११२५ ई०)

१. उद्गम

हम देखेंगे, सामानी राज्यश्रीका अन्त समीप आ रहा था। उनके पश्चिममें ईरानका शक्तिशाली राजवंश दैलमी (बुवाईद) जोर पकड़ रहा था, दक्षिणमें गज़नवी सुबुक तगिन अपनी शक्ति बढ़ा रहा था। ख्वारेज़्ममें ख्वारेज़्मशाह की दृढ़ नींव पड़ रही थी। इसी समय उनके उत्तरमें एक और शक्तिशाली तुर्क राज्य कायम हुआ, जो काशगरसे अराल समुद्र तक फैला हुआ था। पहिले दोनों पड़ोसियोंका संबंध अच्छा था, बल्कि कहा जा सकता है, गज़नवियों, दैलमियोंकी सामानियोंसे मित्रता रही। कराखानी खानाबदोशोंने जब सामानी राजकी निर्बलता देखी, तो उनकी नज़र सिर-दरियाके पार जाने लगी। कराखानी, तुर्क जातिके प्रधान कबीलोसे अलग हो तयान-शानके सानुओपर रहते थे। कोई कोई लेखक इन्हें उइगुर नहीं मानते। इनका पहिला खान जो मुसलमान हुआ, उसका नाम सातुक कराखान था। घुमन्तुओमें किसी खानके नामपर कबीलेका नाम पड़ना बहुत देखा जाता है, इसीलिए इन घुमन्तुओको कराखानी कहा जाने लगा। इनका एक खान इल्लिखान (९९३—) भी था, जिसके कारण इन्हें इल्लिखानी भी कहा जाता है। कराखानी दसवीं सदीके अन्तमें सप्तनदमें इली और सून्नदियोंकी उपत्यकाओमें रहते थे। उनके अधीन मगरोंमें सबसे बड़े थे—कुलान (आधुनिक लुगोव्या) और मेरके। उन्होंने बोगराखान (१०७४-११०२ ई०) के नेतृत्वमें अन्तर्वेदको जीता। मुख्य खान बलाशागुन (चू-उपत्यका) और कभी कभी काशगरमें भी रहता था। अन्तर्वेदपर अधिकार हो जानेके बाद जब वहाँके कराखानी शासकको प्रधानता मिल गई, तो वह काशगरमें रहने लगा। सामानियोंका आमू तकका राज्य इन्होंने लिया और आमूसे दक्षिण को महमूद गज़नवीके पिता सुबुक तगिन ने।

हम बतला आए हैं, कि किस प्रकार उइगुर आरम्भमें ओरखोन नदीकी उपत्यका (मंगोलिया) में रहते थे, उनके पुराने खान बुक्कूने स्वप्नके चमत्कारके अनुसार पूरब तथा पश्चिमकी दिग्विजय यात्रायें की, और बलाशागुन (औलियाअता से उत्तर-पूरब) बसाया।

कराखानी राजवंशका आरम्भ कैसे हुआ, इसके बारेमें ऐतिहासिकोंका एकमत नहीं है। कुछ तो इनके तुर्की या उइगुर कबीलेके होने में सदेह करते हैं। लेकिन हमें यह मालूम है कि अरब ताकूज़-आगूज़ोंकी करलुकोपर विजयकी बात कहते हैं और यह कि ग्रामा कबीलेने काशगरको ले लिया। यह ग्रामा ताकूज़-आगूज़ोंकी एक शाखा थी। इसी समय काफिर तुर्कोंने बलाशागुनको जीता। यह भी पता लगता है, कि इन जीतोका अर्थात् ताकूज़-आगूज़ोंका नेतृत्व कराखानी कर रहे थे, इन्होंने ही करलुक राज्यको खतम किया। कराखानियोंके सबधमें

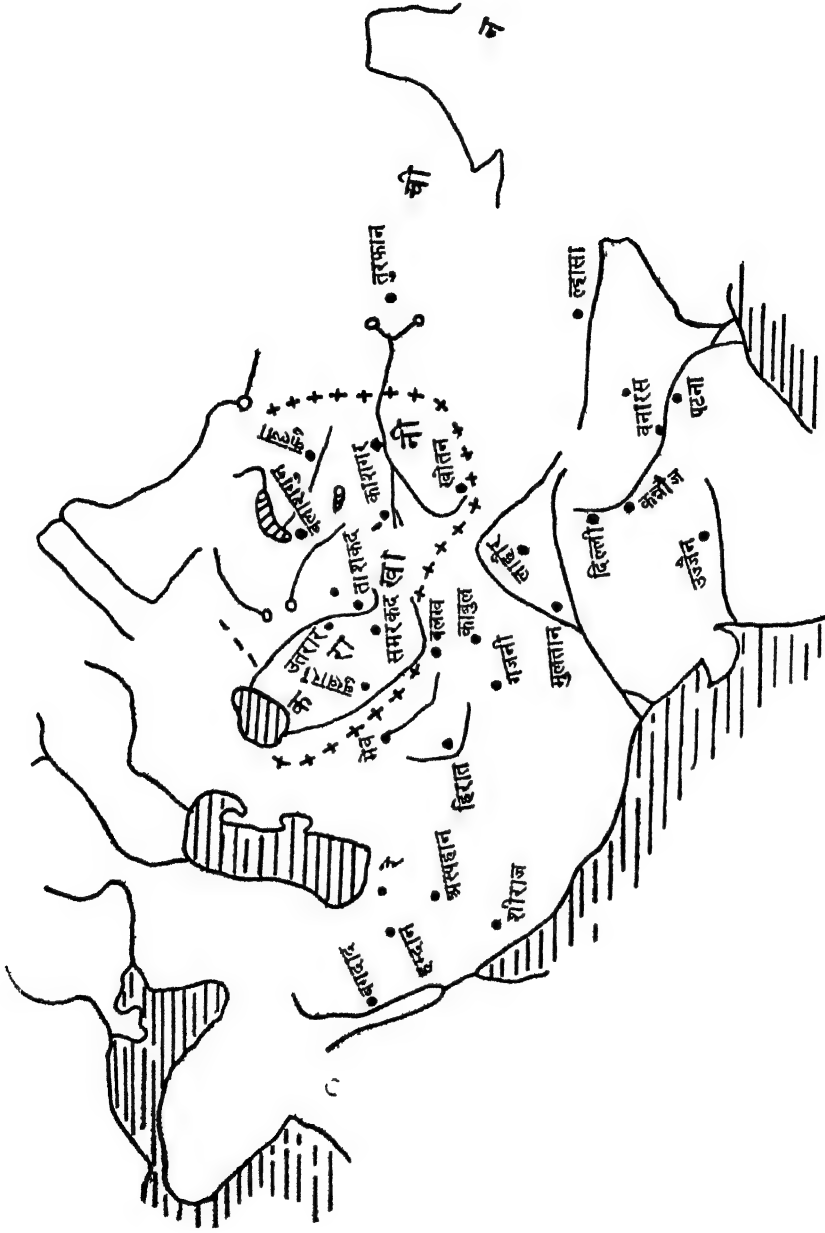
जो स्थिति करलुकोकी है, वही स्थिति सलजूकी साम्राज्यमें आगूजोकी है। कराखानियोंकी पुरानी परम्परा बतलाती है, कि सबसे पहिला सातुक बोगरा खान अब्दुलकरी-पुत्र अन्तर्वेदका विजेता था। दूसरे अन्तर्वेद-विजेताका यह दादा था। यही पहिले पहल मुसलमान हुआ। कहते हैं, सन् ९६० ई० में दो लाख खेमेवाले बहुतसे तुर्की कबीलोने इस्लाम धर्म स्वीकार किया। अन्तर्वेद (मावराउन्नहर) जैसे सांस्कृतिक केन्द्र का—जहापर कि अब इस्लाम जड़ जमा चुका था—प्रभाव उत्तरके इन घुमन्तुओंके ऊपर पड़ना आवश्यक था। उमैया-कालसे इस्लामिक धर्म-प्रचारक व्यापार और दूसरे सबधोसे यहां पहुंचने लगे थे, किन्तु उस वक्त उन्हें सफलता नहीं हुई, क्योंकि सनातनी इस्लाम इन घुमन्तुओंके अनुकूल नहीं था। यह घुमन्तु बौद्ध और दूसरे धर्मोंके प्रभावके कारण ध्यान, योग, त्याग-पूर्ण रहस्यवादी धर्मकी ओर ज्यादा आकृष्ट होते थे। यह काम मुसलमान सूफी-सन्त ही कर सकते थे, इसलिए जहा मौलवी असफल हुए, वहा सन्तोंने इन घुमन्तुओंमें सफलता पाई। वस्तुतः मुसलमान सूफी-सन्त जिन बातोंको प्रधानता देते थे, उनपर केवल इस्लामके नामकी मुहर भर थी, नहीं तो वह वही बातें थी, जिनको कि बौद्ध, नेस्तोरी या मानी साधक-सन्त मानते थे।

काफिर तुर्कोंने बलाशगूनको ९४२ ई० में ले लिया था। अगले साल खानका पुत्र सामानियोंके हाथमें कैदी बन गया। कुछ आगूज किसी कारणवश अपनी भूमि छोड़ सामानी सरकारकी आज्ञासे अन्तर्वेदकी उस भूमिमें चले गये थे, जो कि घुमन्तुओंके अनुकूल थी। इनका काम था, सामानी सीमाकी रक्षा करना। यह आगूज (तुर्कमान) इस्फिजाबके पश्चिम और पश्चिम-दक्षिणके इलाकोमें रहने लगे। सिर-दरियाके निम्न-भागमें आगूजोंका एक दूसरा कबीला अपने नेता सलजूकके नेतृत्वमें अलग जा बसा। सलजूक मुसलमान बना और उसने जन्द-निवासी मुसलिम जनताको काफिरोको कर देनेसे मुक्त कराया। मरनेके बाद सलजूक खान जन्दमें दफनाया गया। उसके उत्तराधिकारियोंकी वहा नहीं पटी और ९८५ ई० के आसपास वह दक्षिणकी ओर चले गये। ग्यारहवीं सदीमें जिन्दका मुसलमान शासक सलजूकी कबीलेका घोर विरोधी था। सलजूक के प्रार्थना करनेपर सामानियोंने उन्हें नूर (बुखाराके उत्तर-पूरब के पहाड़ोंके नजदीक आधुनिक नूरअता) में बसा दिया। कुछ साल बाद जब बलाशगूनके खानने इस्फिजाबको दखल कर लिया, तो उनके साथ लड़नेमें सलजूकियोंने सामानियोंका साथ दिया।

§२. राजावलि

उत्तरापथमें निम्न कराखानी कगान (खान) हुए—

कराखानी	गजनवी	सलजूकी
१ शातुक कराखान -९५५		
२ बुगरा खान -९९३		
३ इलिक नस्त -९९३-१०१२	१ सुबुक तगिन -९९७	
४ तुगान १०१२-१०२५	२ महमूद ९९७-१०३०	
५ कादिर -१०३२		
६ अरसलन I १०३२-१०५६	३ मसऊद १०३०-४१	१ तुगरल १०३६-६३
७ बोगरा II -१०५६	४ मुहम्मद -१०४१	



कराखानीसाम्राज्य (१०००)

कराखानी

गजनी

सल्जूकी

- ८ इब्राहीम I - १०५९
 ९ तुगरल युसुफ १०५९-७४
 १० तुगरल तैमन - १०७४

- ५ मौदुद - १०४१
 (स्वारेज्म)

- २ अल्पअरसलन १०६३-
 ३ मलिकशाह १०७३-

कराखानी	गज़नवी	सल्जूकी
११ बोगरा III हारून १०७४- ११०३	१ अनुश्तगिन -१०९७	४ महमूद १०९२-
		५ बर्कियारुक १०९४-
१२ कादिर II जिब्रील ११०३-	२ मु० कुतुबुद्दीन १०९७-	६ मलिकशाह II -११०४
	११२७	७ मुहम्मद ११०४-
		८ महमूद II १११७
	३ अत्सिज़ ११२७-५६	९ सज़र १११७-५७

§३. राजा

१. शातुक कराखान (९५५)

इसके बारेमें इतना ही मालूम है, कि यह ९५५ ई० में मौजूद था, तथा यही पहिले-पहल काफिरसे मुसलमान हुआ।

२. बोगराखान I (९९२)

शातुकके पुत्र मूसाका यह पौत्र था, जिसे शहाबुद्दौला और हारून भी कहते हैं। उस समय सामानी वंश बिल्कुल निर्बल हो चुका था, इसलिए बोगरा खानको अन्तर्वेदको लेनेमें कोई कठिनाई नहीं हुई। अबूअली (सामानियोंके सामन्त) ने ही बोगरा खानको बुलानेमें बड़ी तत्परता दिखाई थी, जिसके लिये यह तैयारी हुई थी, कि आमू-दरियाके दक्षिणका भाग अबूअलीके हाथमें रहेगा। सामानी शासनकी दुर्बलस्थासे तग आकर देहकान (ग्रामणी) भी बोगराखानको निमन्त्रण देनेवालोंमेंसे थे। बोगरा खान तीन पीढ़ीका मुसलमान था, इसलिए उसकी आवश्यकतमें मौलवी भी किसीसे पीछे नहीं रहे। खलीफा वासिकका वंशज अबूमुहम्मद उस्मान-पुत्र वासिकी भी खानके अनुयायियोंमें था। सामानियों पर इस सारी आफतका कारण यह भी था—जो कि आमतौरसे पुराने राजवंशोंमें दुहराया जाता है—अर्थात् एक ओर राज्यका छिन्न-भिन्न होके संकुचित होते जाना और दूसरी ओर खरबका बेतहाशा बढ़ता जाना।

मुस्लिम इतिहासकार बोगरा खानको उडगुर खानके नामसे अधिक जानते हैं। इसकी राजधानी बालाशागुन थी। काशगर, खेतन, तरस, फाराब (उतरार) और कराकोरम भी इसीके शासित नगर थे। यह सामानी नूह III का समकालीन था। हम कह आये हैं, कि खुरासानके गवर्नर सिमजूर अबूअली और हिरातके गवर्नर फाइक ने अपने स्वामीके विरुद्ध विद्रोह किया था, जिसके कारण नूहने फाइकको कड़ा दंड दिया। अब उन्होंने अपने स्वामीको दंड दिलानेके लिये बोगरा खानको बुलाया। फाइकको उस वक्त समरकंदकी रक्षा का भार दिया गया था। उसने समरकंदका दरवाजा कराखानियोंके लिये खोल दिया। नूह समरकंद छोड़ बुखारा भाग गया। समरकंदके बाद राजधानी बुखाराको लेकर अप्रयास ही बोगरा खान सारे अन्तर्वेदका शासक बन गया। बोगरा खानको यहांका जल-वायु अनुकूल नहीं आया। ९९३ (३८३ हि०) में वह बालाशागुन (सप्तनद) जा रहा था, कुछ ही मजिलोंके बाद मर गया। नूहने आकर बुखाराको फिर ले लिया। नागरिकोंने उसका बड़ा स्वागत किया, किन्तु उसके अमीर विश्वासघात पर तुले हुए थे, इसलिए ९९४ (३८४ हि०) में नूहने गजनवी सुबुक तगिनको मददके लिये बुलाया। उसका

पुत्र महमूद गजनवी सेनाका सहायक-सेनापति था। गजनवियोंकी बीस हजार सेना वक्षु (आमू दरिया) पार हो किश (शहसब्ज) में नूहके साथ आ मिली और फिर सयुक्त सेनाने विद्रोही नगरो—हिरात, नेशापोर और तूस—को फिरसे विजय किया। पर, अन्तमें नूह और सुबक तगिन में झगडा हो गया।

३ इलिक नस्र (११२-१०१२)

यह अन्तर्वेदसे विशेष सबध रखता था।

४ तुगान (१०१२-२५ ई०)

इलिकके बाद उसका भाई तुगान खाकान बना। शायद वह अन्तर्वेदका भी शासक था, सप्तनदका तो अवश्य ही था। यह भी संभव है, कि पूर्वी तुर्किस्तानने भी उसे अपना खाकान माना था, और कादिर खान यूसुफ काशगर और यारकन्दका प्रान्तीय शासक था। १०१७ ई० (कराखिताइयो) में पूरबसे आकर खित्तनोने सप्तनद ले लिया। तुगानखान भारी मेनाके साथ उनके मुकाबिले के लिए चला, तो वे सप्तनद छोड़कर हट गये। लेकिन उसके तीन ही महीने बाद तुगान खानकी पूर्ण पराजय हुई। कराखानियोंके घरकी फूटके साथ साथ महमूद गजनवी अपनी शक्तको बढ़ाता जा रहा था। तुगानखान महमूदका विश्वासपात्र मित्र था, इसलिये बाहरी हमलेका डर नहीं था। सप्तनदपर अधिकार करनेवाले चीनसे आये एक लाख तम्बूवाले काफिरो का खतरा आया। एक बड़ी सेना लेकर तुगान खान ने १०१७ ई० (४०८ हि०) में आक्रमण कर काफिरोको बुरी तरह हराया। इसके थोड़े ही समय बाद १०२५ ई० उसका देहान्त हो गया।

अरसलन खान मुहम्मद—तुगानखानका भाई था, जिसे अबू-मसूर मुहम्मद अली-पुत्र (बहिरा) भी कहते हैं। यह कहना मुश्किल है, कि वह काराखानियोंका महाखाकान था या कोई प्रादेशिक शासक। इतना मालूम है, कि उसने महमूदके साथ अच्छा सवध बनाये रखा। वह बड़ा धर्मात्मा माना जाता था। महमूदने अरसलन और उसके भाई इलिकसे अपने बड़े बेटे मसऊदके लिये एक राजकुमारी मांगी। राजकुमारीके बलख आनेपर उसका बड़ा स्वागत हुआ। महमूद काशगरीने अपनी पुस्तक “दीवान लुगातुत्-तुर्क” में लिखा है, कि मसऊद और उसकी तुर्क बीबीकी पहिली ही रात मार पीट हो गई। सुबुक तगिन और उसका बेटा महमूद भी तुर्क ही थे, लेकिन सोनिदियोंके साथ मिश्रण होनेके कारण इनके आचार-व्यवहार तथा आकृति पर भी तुर्कोंका प्रभाव कम रह गया था। भाषामें भी महमूद फारसी लेखको (फिरदोसी, बैरुनी) का संरक्षक था। उधर कराखानी अभी शुद्ध घुमन्तू मंगोलायित थे, इसीलिए महमूद गजनवीके इतिहासकार उतबीने कराखानियोंके विचित्र शरीर-लक्षणका उल्लेख करते हुए आश्चर्य किया है, तो भी कराखानी खानका इतना दबदबा और प्रतिष्ठा थी, कि महमूद अपने उत्तराधिकारी लडकेके लिये “छोटी आखो, चिपटी नाक, और चौड़े मुहवाली” खान-कुमारीको लेना इज्जतकी बात समझता था। वह भी इतनी गरबगहिल्ली निकली, कि उसने सोहागरातको ही महमूदके शाहजादेको ठोक दिया।

५ कादिरखान-यूसुफ (१०२५-३२)

कादिरखान और इलिक खान दोनों भाइयोंका झगडा था इसका जिक्र हम पत्रिले कर चके

हैं। बोगराके पुत्र इलिक तुगान (II) का भाई अली तगिन था, जिसका ही पुत्र यह कादिर खान यूसुफ था। यह कहना मुश्किल है, कि वह सारे कराखानी साम्राज्यका खान था या केवल काशगर प्रदेशका। मुहम्मद तुगान और इलिकका चौथा भाई अली-पुत्र अबू-मसूर था, जिसकी उपाधि असलम खान थी। बुखाराकी टकसालमें १०१२ (४०३ हि०) के ढले सिक्कोपर इसकी उपाधि अरसलन खान मिलती है। अरसलन खान भी तुगान खा से झगड़ पड़ा। १०१६ ई० में उजगन्दके पास दोनोंकी लड़ाई हुई। ख्वारेज़्मशाह मामूनने बीचमें पड़कर दोनों भाइयामें सुलह करवाई। यह भी कहा जाता है, कि कादिर खान पहिले समरकन्दकी गद्दीपर बैठा था। पीछे उसने सारे काशगर और खोतनको अपने हाथमें कर लिया। कादिर खा यूसुफने अपने काफिर भाइयों और प्रजाके बीच इस्लामका प्रचार करनेमें बड़ी तत्परता दिखाई। बोगरा खानके मरने पर, कहते हैं, खानका अधिकार परिवारकी दूसरी शाखाके हाथमें चला गया और यूसुफको हिस्सा नहीं मिला। उसने असतुष्ट आदमियोंको अपनी ओर खींचा। फिर खोतन ले धीरे धीरे वह सारे पूर्वी तुर्किस्तानके नगरोका स्वामी बन गया। ११वीं सदीके आरम्भमें इलिक नख्का भाई तुगान खान काशगरका शासक था, लेकिन १०१३ (४०४ हि०) और १०१४ (४०५ हि०) में काशगरमें जो सिक्के चलते थे, उनपर खलीफा कादिर और मलिकुल्-मश्रिक नासि-रुद्दौला (पूर्व-स्वामी, राज्य विजेता) कादिर खान यूसुफका नाम मिलता है। बादके वर्षोंमें भी वहां उसीके नामके सिक्के चलते रहे। इससे पता लगता है, कि अपनी मृत्युसे बहुत पहिले ही तुगान खानको पूर्वी तुर्किस्तानसे हाथ धो लेना पड़ा, और वह सप्तनद तथा अन्तर्वेदका ही शासक रह गया। उसका भाई मुहम्मद अली-पुत्र तराजका शासक था। अन्तर्वेदमें भी भाईके जीवनमें वही अधीनस्थ शासक था। उसकी मृत्यु १०१५ (४०६ हि०) में हुई थी। उसने असलम खानकी पदवी धारण कर १०२४ तक शासन किया। अरसलनके अन्तिम सालोंमें जो दुर्व्यवस्था हुई, उससे अली तगिनने फायदा उठाया।

६ अरसलन खान सुलेमान (१०३२-५७ ई०)

कादिर खान यूसुफका ज्येष्ठ पुत्र बोगरा तैमन सुलेमान था, जो अरसलन खानकी उपाधि धारण कर पूर्वी तुर्किस्तान और सप्तनदका शासक बना। कादिर खा का दूसरा पुत्र ईगान-तैमन मुहम्मद “बोगरा खान” की उपाधि ग्रहण कर तलस (औलिया-अता) और इस्फिजाब पर शासन करता था। दोनों भाइयोंने महमूद-पुत्र मसऊद गजनवीसे बातचीत चला अन्तर्वेदके अपने भाई-बन्धुओंके ऊपर चढ़ाई करनेकी तैयारी की, लेकिन उसमें सफलता नहीं हुई। उस समय सिमकन (बैकलिंग) नगरका शासक लश्कर खान था। अरसलन और उसके भाईमें दुश्मनी हो गई। १०४३ ई० (४३५ हि०) में अरसलनने अपनी अधिराजता रख अपने राज्यके भिन्न-भिन्न भागोंको अपने बन्धुओंमें बांट दिया, और अपने हाथमें काशगर और बालाशागुन का शासन रक्खा। लेकिन इतनेसे शान्ति नहीं स्थापित हुई, और १०५६ ई० में बोगरा खानने अरसलनको बन्दी बना उससे गद्दी छीन ली।

७. बोगरा खान II (१०५६-५९)

बोगरा खान बहुत दिन शासन नहीं कर सका। पन्द्रह ही मासमें उसकी स्त्रीने उसे विष

देकर मार डाला । कारण यह था कि बोगरा अपने बड़े लडके चागिरी तैमन हुसैनको राज देना चाहता था, जबकि खतून अपने पुत्र इब्राहीमको ।

८. इब्राहीम (१०५९-...)

इब्राहीम ज्यादा समय तक शासन नहीं कर सका । थोड़े ही समय बाद बर्सखानके शासक यनाल तैमनसे लड़ाई हुई, जिसमें वह मारा गया । वस्तुतः घुमन्तुओमें यह भाव काम करता रहता है, कि कोई खान बनकर ऐश्वर्य क्यो भोगे, जबकि सामाजिक दृष्टिमें सब बराबर है । खानों का जीवन सीधा-साधा घुमन्तू जीवन नहीं था । लूट और दिग्विजयसे अपार संपत्ति और दास-दासी उनके हाथमें आते थे, जिसमेंसे खान अपने और अपनी सतानके लिये अधिक भाग रखना चाहता था, जिसके कारण खान और उसके परिवारके आदमियोंमें बड़ी विषमता खड़ी हो जाती थी । यही घरेलू कलह और खूनका कारण बनती थी । यद्यपि बाहरी शत्रुओंके सामने कितनी ही बार वह आपसी फूटको भूल जाते थे, किन्तु वैमनस्य धीरे धीरे बढ़ता ही जाता रहा । बोगरा खानके पुत्रोंमें इब्राहीम अंतिम खान था ।

एक रूसी इतिहासकारने इन घुमन्तुओंके बारेमें लिखा है^१—“उनके अनेक विभाजन बराबर झगड़ेका कारण बने रहते । झगड़ोंको मिटानेके लिये कोई बहुत कड़ा कदम उठाया नहीं जा सकता था, क्योंकि झगड़नेवाले भी राजवशके अपने व्यक्ति थे, जिनकी सेवायें सकट या विजयके समय बहुत महत्व रखती थी । उनमें नियम था—एक हजार तुर्कोंकी सेना खड़ी कर उन्हें दरबारके गुलामोंमें शामिल कर उनके साथ गुलामों जैसा बरताव नहीं किया जाता । उनको इस तरहकी शिक्षा दी जाती, जिसमें कि वह प्रजाके साथ अधिक परिचय प्राप्त कर सकें, और उनपर शासन करते यह भूल जाये, कि वह गुलाम हैं ।” तुर्कोंमें इस तरहके “गुलामों”के रखनेकी प्रथा बहुत चल गई थी, क्योंकि राज-वशियोंकी महत्वाकांक्षाओंके कारण खान या तैगिनको बराबर प्राणोंका सकट बना रहता था, जबकि यह गुलाम तुर्क उतनी महत्वाकांक्षा नहीं रखते थे । गुलामोंके स्वभावमें आसानीसे परिवर्तन लाया जा सकता था, क्योंकि वह जानते थे कि उनका सारा भविष्य अपने वश सबधके ऊपर नहीं बल्कि मालिककी कृपाके ऊपर अवलंबित है । महमूद गजनवीका पिता सुबुक तगिन इसी तरह गुलामके रूपमें पला और बढ़ा था । दिल्लीका प्रथम सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक भी गोरियोंका इसी तरहका तुर्क गुलाम था । वस्तुतः यह गुलाम साधारण अर्थमें दास नहीं थे । उनको शिक्षा-दीक्षा ऐसी दी जाती थी, जिसमें ऊँचे-से-ऊँचे सैनिक असैनिक पदोंको वह सँभाल सकें । उनके मालिक उन्हें गुलामकी तरह नहीं मानते थे, यह तो इसीसे मालूम है, कि इनमेंसे कितने ही अपने मालिकके दामाद बनते थे । वस्तुतः मालिकका विरोध करनेमें इन्हें घाटा ही घाटा और मालिकको खुश रखनेमें लाभ ही लाभ था, यही कारण था, तुर्कोंमें इस प्रथाके बहुत चल पड़नेका ।

९. तुगरल कराखान युसुफ (१०५९-७४)

इब्राहीमके बाद काशगर और बलाशागुन पर कादिर खान यूसुफके एक पौत्र तुगरल

कराखान यूसुफ ने १६ साल राज्य किया, जिसमें उसका भाई बोगरा खान हारून भी सम्मिलित था। अन्तर्वेद-शासक शम्शुल्मुल्क नख (इलिकनसके पौत्र) के साथ उसकी लड़ाई हुई, किन्तु अन्तमें खोजन्दको सीमा मानकर दोनोंने सुलह कर ली।

१०. तुगरल तैमन (१०७४-...)

तुगरलके पुत्र तुगरल तैमिनने केवल दो साल राज्य किया।

११. बोगरा खान III हारून (१०७४-११०२)

भतीजेके बाद चचाने २१ साल (४६७-९६ हि०) तक काशगर बलाशागुन और खोतनपर शासन किया। अन्तर्वेद दूसरी कराखानी शाखाके हाथमें चला गया। बोगरा खान उस समय काशगरमें अपने भाईका उपराज था, जबकि १०६९ (४६२ हि०) में उसने “कुदतकु-बिलिक” नामक तुर्की भाषाका प्रथम काव्य लिखा। तुर्की भाषाका यह प्रथम काव्य एक खानकी कलमसे लिखा गया है। इससे पहिले भी तुर्की भाषामें कविताएँ बनीं होगी, किन्तु जनकाव्य होनेके कारण वह अधिकतर मौखिक रही। १०८९ ई० में मलिक शाह सल्जूकी (११०४-१७ ई०) समरकन्दपर अधिकार कर उजगन्द तक आया। बोगरा खानने उसे अपना अधिराज स्वीकृत किया। जब मलिक शाह समरकन्द चला गया, तो देशमें विद्रोह हो गया, जिसमें जिकिलोने काशगर खानके भाई तथा अतबाशके शासक याकूब तैमनको बुलाया। याकूब समरकन्दपर आक्रमण करने गया, किन्तु जब मलिक शाहने उसकी तरफ मुह फेरा, तो वह अतबाश भाग गया, जहाँ उसकी लड़ाई अपने भाईके साथ हो गई। बोगरा खानने अतबाशपर अधिकार करके याकूबको बन्दी बना लिया। मलिक शाहने उजगन्द पहुँचकर काशगरके खानसे याकूबको मागा। बोगरा खान इसके लिये तैयार नहीं हुआ। सल्जूकी सेनाने काशगरको घेर लिया, जिसमें बरसखान-शासक तुगरल यनाल-पुत्रका शायद हाथ था, जिसके पिताको बोगरा खानके भाई इब्नीहीम ने मारा था। बोगरा खान अन्तमें बन्दी बना। इसकी खबर उसके पुत्र और खातून (रानी) को मिली। मलिक शाह ने याकूबको तना देखकर उससे सुलह की और उजगन्द छोड़कर चलते समय याकूबको तुगरलसे लड़ाई जारी रखनेका हुकम दे गया। युद्धका क्या परिणाम हुआ, यह मालूम नहीं, किन्तु बोगरा खान हारून याकूबके बन्दीखानेसे जरूर छूट गया, क्योंकि उसने ११ वीं सदीके अन्त तक काशगरपर शासन किया। इन घटनाओंको देखनेसे मालूम होगा, कि सारे उत्तरी कराखानियोंका भी कोई एक सर्वमान्य खाकान कितने समय तक रहा, यह कहना मुश्किल है। खानज़ादोंमें बराबर झगड़े होते थे और वह एक दूसरेको बन्दी बना अपने राज्यका विस्तार करते थे। सल्जूकी अन्तर्वेदमें कुछ नहीं कर सकते, यदि उत्तरी कराखानियोंमें एकता होती। कराखानियोंमें खानज़ादा (राजकुमार यात तगिन), वेग जैसे उच्च कुल थोड़ेसे थे। उनके अतिरिक्त विशाल घुमन्तू जनता लडाइयोकी लूट-पाटमें सहायता करती थी। जब तक लूटमें हिस्सा मिलता रहे, तब तक तुर्क जन-साधारणको इसकी पर्वाह नहीं थी, कि कौन महाखान है और कौन तगिन या वेग। लेकिन ऊपरी वर्गमें सपत्तिकी विषमताके कारण कभी समझौता नहीं हो पाता था।

१२. कादिर खान II जिबराईल (११०३ . . .)

यह संभवतः कराखानियों का अन्तिम कगान बोगरा खान मुहम्मद के पुत्र कराखान उमर का पुत्र था, जिसके हाथ से कराखिताईयो ने राज्य छीन लिया। यह बलाशागुन और तलसका शासक था। इसके बाद कराखिताईयो के आने तक सप्तनद (बलाशागुनका) इतिहास अधिकारावृत है। ११०२ ई० में कराखान जिबराईलका सितारा बहुत ऊँचा था। उसने अन्तर्वेदकी ही दखलकर सतोष नहीं किया, बल्कि आमू पार सलजूकियोंकी भूमिपर भी आक्रमण किया। तेरमिज लेने में उसे सफलता मिली, लेकिन २२ जून (११०२) को इसी शहरके करीब सुल्तान सिजरसे लड़ाई हुई, जिसमें वह बन्दी बनकर मारा गया। जिबराईलको मारनेके बाद सिजरने महमूद तगिनको अरसलन खानकी पदवी देकर अन्तर्वेदकी गद्दीपर बैठाया।

इस्लाम—कराखानियोंसे पहिले सप्तनदके तुर्क-देशमें कोई मुसलमान राजवश नहीं हुआ था। अरब इतिहासकार इब्नुल-असीरके अनुसार ९६० ई० (३४९ हि०) में २ लाख तुर्क तबूओने इस्लाम स्वीकार किया। १०४३ ई० में बहुतसे मुसलमान तुर्क किरगिज मरुभूमिमें घुमन्तू जीवन बिता रहे थे। इब्नुल-असीर लिखता है, कि गर्मियोंमें इन तुर्कोंके दस हजार तबू बलगार (वोल्गा नदीके किनारे रहनेवाली तुर्क जाति) के पड़ोसकी भूमिमें रहा करते थे, जो जाडोमें जाकर बलाशागुनके पास डेरा डालते। पूर्वी तुर्किस्तानपर सदा चीनी संस्कृतिका प्रभाव रहा। उसी प्रभावके कारण बहुतसे कराखानी खाकानो तथा अन्तर्वेदके शासकोने भी तबगाच-खान (तमगाच खान) की पदवी धारण की। आठवीं सदीके ओरखूनके शिलालेख से मालूम होता है, कि यह चीन सम्राट्की दी हुई पदवी होती थी। १०६७ (४५९ हि०) के कराखानी सिक्कोपर लिखा रहता था “मलिकुल-मश्रिक वस् सीन” (पूर्व और चीनका स्वामी)। उरुमची, तुरफान और हामीके नगरोंके पास कराखानियोंकी सीमा चीन से मिलती थी। इन नगरोंमें पन्द्रहवीं सदी तक अभी इस्लामकी प्रधानता नहीं थी, और वहाँ बौद्ध और नेस्तोरी धर्म अधिक प्रभावशाली थे। कराखानी सिक्कोपर अरबी लिपिके साथ साथ उइगुर-लिपिका भी व्यवहार होता था, जिसे मानी-धर्मी अथवा नेस्तोरी अपने साथ लाये थे। बोगरा खानके काव्य “कुदतकु-विलिक” में उपयुक्त कितने ही पारिभाषिक शब्द उइगुर-तुर्की-मंगोल तीनों भाषाओंके एकमे हैं।

स्रोत-ग्रन्थ

- 1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
- २ ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्या (व० बरतोल्द, बेर्ली १८९८)
- ३ आखेंआलोगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोइ किर्गिजिइ (अ० न० बेर्नश्ताम्, फ्रुन्जे १९४१)
४. क्रतिक० सोओब० XIII pp115—..
- ५ कुदतकु-विलिक (बोगराखान)

अध्याय २

कराखिताई (१११५-१२१८ ई०)

§१. उद्गम

कराखिताईका अर्थ है काले-खिताई। खिताई चीनका एक प्रसिद्ध राजवंश था, जिसने चाउ वंश (सुग राजवंशकी शाखा) के रूपमें ९६० ई० से ११२६ ई० तक शासन किया। इसकी राजधानी कै-फैङ थी। इसके शासनका महत्त्व इतना समझा गया, कि जिस तरह चीन-वंश (२५५-२०६ ई० पू०) के गौरव-पूर्ण शासनके कारण भारत और बहुतसे दूसरे देशोंमें देशका नाम चीन पड़ा, वैसे ही खित्तन-वंशके कारण आज भी रूस और मुसलिम देशोंमें चीनका नाम खिताई मशहूर है। हमारे यहाँ भी नान-खिताईमें उसी चीनी रोटीका आभास मिलता है।

खित्तन उसी वंशके थे, जिसके कुनोक-घेई, जो पहाड़ोंमें वृक्षोंपर अपने मुर्दोंको टांगा करते थे, फिर तीस साल बाद हड्डियाँ जमाकर उन्हें जलाते और शराबकी धार देते हुए प्रार्थना करते—“जाडेमें दोपहरको हम दक्खिणाभिमुख भोजन करें, ग्रीष्ममें उत्तराभिमुख। अपने शिकारों में हम बराबर बहुतसे सूअर और हरिन पायें।” खित्तन और घेई दोनों पुराने सियान्-पी की सतान थे और उन्हींकी भूमिमें रहते थे। घेई मूलतः जूमिन कबीलेकी पूर्वी शाखामें थे। जूमिनोंने छठी सदीमें उत्तरी चीनपर राज किया था। किन्तु उससे पहिले ही मूजुग सियान्-पी ने घेइयो और खित्तनोको सिरामुरैन नदीके उत्तर सुगारी नदी और मरुभूमिके बीचमें खदेड़ दिया था। प्रथम तोबा सम्राट्ने ३८८ ई० में लूटमार मचानेके लिये घेइयोको दण्ड दिया था। ४४० ई० से घेई और खित्तन बराबर चीन दरबारमें घोड़ोंकी भेंट लाते थे। ४७९ ई० में खित्तन सिरामुरैनकी शाखा पाइ-लग (लौह) नदीपर अवस्थित आधुनिक तुमैद (मंगोल) देशमें चले गये। छठी सदीमें खित्तन सिरामुरैन (सिरा नदी) के उत्तरमें थे। घेइयो और खित्तनोकी लूट-मारसे बचनेके लिये तोबा (वंश) ने चीनके महाप्राकारको नानकाङ्ग जोत (पेकिङ्ग के समीप) से तातुङ्ग-फू तक चीन सौ मील बढ़वाया। उसी सियान्-पी वंश से खित्तन वंश निकला, जिससे पीछे मचू हुए, जो कि भापा और सस्कृति सभी बातोंमें अब चीनी बन गये हैं।

उत्तरके घुमन्तुओंमें देखा जाता है, परिस्थिति अनुकूल होनेपर एक छोटा सा कबीला योग्य नेताके अधीन एक विशाल जनका नेतृत्व हाथमें ले राज्य या साम्राज्य कायम करनेमें सफल होता है। खित्तनोके साथ यही हुआ, चंगेजी (चिंगीसी) मंगोलोके साथ भी यही बात हुई। जब तुर्कोंने घेइयो और खित्तनोको दबाना चाहा, तो दस हजार खित्तन परिवार कोरिया भाग गये और चार हजार चीनकी प्रजा बन गये। ४६८ ई० में थाङ्ग सम्राट् ताइ-चुङ्ग (६२७-६५० ई०) ने खित्तनोका एक नया प्रदेश बनाकर उसके शासकके वंशका नाम ली रख दिया। उसके नीचे

१० इलाकोके शासक थे । यही प्रदेश आजकल जेहोलके नामसे प्रसिद्ध है । उसी सम्राट्ने आधुनिक युङ्ग-पिङ्ग-फूमे सभी पूर्वी बर्बर जातियोंके ऊपर एक उच्च-आयुक्तक नियुक्त कर खाकानकी पदवी प्रदान की । घुमन्तू जातिया अपने स्वभावसे मजबूर हो लूट-पाट करना छोड़ नहीं सकती थी, जिसके लिये चीनको लड़ाई करनी पड़ती थी । ९०७ ई० में थाङ्ग-वश खतम हुआ, लेकिन इससे पहिले ८४२ ई० में उङ्गुरोके मुकाबिलेमें खित्तनोके साथ मेल-जोल बढ़ानेके लिये थाङ्ग-वशने साम्राज्यी मुद्रा प्रदान कर उन्हें अपने सरक्षणमें ले लिया । थाङ्ग-वश के खतम होने पर खित्तनोकी ताकत बढ़ती गई । आगे हाथ बढ़ानेसे पहिले उन्होंने घेई, सिव, सिरवी जैसे बहुतसे छोटे-छोटे कबीलोको अपने अधीन कर लिया । घेई खित्तनोके पश्चिममें रहते थे, अतएव तुर्क उनके समीप थे, इसीलिए उनके ऊपर तुर्कोंका ज्यादा प्रभाव था । घेईयोको मूर्ख कहा जाता था, जो शब्द कि हूणोम आवारो (ज्वेन-ज्वेन) को छोड़कर और किसीके लिये उपयुक्त नहीं होता था । घेई सुअर पालने थे, अपने मुर्दोंको पेड़ोंपर रखने थे, जो दोनों ही बातें तुगुसी जातियोंमें पाई जाती हैं । खित्तनोके दबावके मारे घेई आधुनिक कलगन इलाकेमें जा शिकारी जीवन बिताने लगे ।

यही घेई और खित्तन थे, जिनकी भूमिमें ११-१२ वी सदी में मंगोलोके पूर्वज रहते थे ।

६२. खित्तन सम्राट्

यद्यपि खित्तन-वशका सस्थापक अपोकी था, किन्तु वास्तविक सम्राट् उसका पुत्र ताङ्गचुङ्ग हुआ । खित्तन-वशावली निम्न प्रकार है —

१	अपोकी (अ० ५ ओ० की)	९०७-२६ ई०
२	ताङ्गचुङ्ग (तेकवाङ्ग)	९२६-४७ ई०
३	शीचुङ्ग (उरि-क)	९४७-९५१ ई०
४	मूचुङ्ग (जुईत)	९५२-६८ ई०
५	चिङ्गचुङ्ग (मिङ्गकी)	९६८-८३ ई०
६	शेङ्गचुङ्ग (लुङ्गशू)	९८३-१०३१ ई०
७	शिङ्गचुङ्ग (शुङ्गचैन, मूफूकू)	१०३१-५५ ई०
८	ताङ्गचुङ्ग (हुकी)	१०५५-११०१ ई०
९	ल्यान-चू-नी (यन्ही)	११०१-२१ ई०
१०	तेङ्गचुङ्ग	११२१-२५ ई०

(१) अपोकी (९०७-२६ ई०)

खित्तनोने चीनसे स्वतंत्र हो आपसमें एकता स्थापित कर अपने मघका नाम स्याङ्ग-लो-को मूली रखा, जिसका अर्थ है नदी (मिरामुरैन) का दोनों तीर । इनके आठ कबीले थे, जिनके अलग-अलग मुखिया हुआ करते थे । वही अपने ऊपर एक प्रधान (राष्ट्रपति) चुनते थे, जिसे एक नगाडा और झंडा राज्य-चिह्नके रूपमें दिया जाता था । पुराने सियन्-पी वशमें भी यही प्रथा देखी जाती थी । यदि देशमें अकाल महामारी आती, या ढोरो और भेड़ोंको बहुत क्षति पहुँचती, तो मुख्य सरदार पदच्युत कर दिया जाता । खित्तन घुमन्तुओकी मुख्य जीविका थी

अश्व-पालन। जब चीनियोंने झगडा होता, तो खितनोंको मारनेके लिये वह चरागाहोंमें आग लगा देते। दसवीं सदीके प्रारम्भमें, जबकि थाङ्गवशका स्थान शादो तुर्क-वंशने लिया, आठो खित्तन कबीलोका प्रधान अ-पओ-की था। राजनीतिक अशान्तिके कारण बहुतसे चीनी भागकर उसकी शरणमें गये थे। उसने उनके और अपने दूसरे बन्दियों के लिये नगर बनवाये। खित्तन स्वयं आम घुमन्तुओकी तरह नागरिक जीवनको घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। इन नगरोंमें से एक आधुनिक दोलो-नोर (झील) के आस-पास था। अ-पओकी ने सुना, कि चीनी लोग निर्वाचन-प्रथाको बड़ी नीची निगाहसे देखते हैं। वह नौ सालोंसे खित्तनोका सभापति था। उसपर अब राजा बननेकी धुन सवार हुई। उसने आठो कबीलो तथा प्रवासियों में से भी कितने ही को लेकर अपना एक खास कबीला बनानेकी राय ली। फिर इस कबीलेको सम्य चीनी रीति-रिवाज सिखलानेके लिये एक चतुर चीनीको नियुक्त किया। अपने नगरको भी उसने ठीक चीनी ढंगपर बसाया। वहां बाजार थे, दूकानें थी और रहनेके घर थे। शहर बनानेके लिये ऐसा स्थान पसंद किया, जहां बहुतसी कृषि-योग्य भूमि, लोहा और नमक पासमें था। उसने चीनी व्यापारियों और किसानोंको इतना सुभीता दिया, कि उन्होंने देश लौटनेका ख्याल छोड़ दिया। अपओकी की स्त्रीने सलाह दी, कि अपने इलाकेसे जो नमक ले जाये, उनसे क्षति-पूर्ति मांगे। यह विचार सबने पसन्द किया। एक बड़ा उत्सव मनाया गया, जिसमें सभी सरदार बुलाये गये। अपओकीने उनको वही मरवा दिया और निर्वाचनका नियम ताकपर रखकर स्वयं स्थायी महाराज बन गया। अपओकी बहुत शक्तिशाली शासक और सेनापति था। पञ्चात्-ल्याङ (चू) राजवंश अब भी खित्तनोका अधिराज था। उसने उनरो पिङ छुडानेका निश्चय किया। कलकन, जेहोल और पेकिङ्गके बीचके प्रदेशपर लूट-मार शुरू की, जो थाङ्ग-वंशके उत्तराधिकारी शादो तुर्कोंके हाथमें था। एक जगह उसके विरोधीने सफलता पाई, तो वह अपनी घुमन्तू सेना ले पेकिङ्गके पास तक पहुँच गया।

पीछेकी ओर कितने ही छोटे-छोटे राज्य थे, जिनके आक्रमणका डर रहता था। इसके लिये पहिले बोत्सकाई कबीलेको खतम करना जरूरी था। इसके लिये उसने शादो तुर्क वंशसे लल्लो-चण्पो लगाई। शादोके मरनेके बाद उसका पुत्र माउ-चि-लि (माउकिरे, मिङ्गचुङ्ग) ९२६ ई०में गद्दी पर बैठा। नये सम्राट्के गद्दी पर बैठनेकी सूचना देनेके लिये अपओकीके पास दूत भेजा गया। अपओकीने खबर सुन आकाशकी ओर ताकते रोते हुए जोरसे चिल्लाकर कहा—“अफसोस तुम्हारे पितामह सम्राट् और मैं दोनोंने भाई बननेका निश्चय किया था। इसलिये होनान (राजधानी) सम्राट्का पिता मेरा पुत्र था। जब अशान्तिकी बात सुनी, तो मैं पचास हजार सेनाके साथ अपने बेटेकी मददके लिये कूच करनेको तैयार था। तब तक बोत्सकाईका खात्मा करना बाकी था, इसलिए मैं अपनी हार्दिक इच्छाको पूरा नहीं कर सका। मेरा पुत्र (च्वाङ्ग-चुङ्ग ९२३-२६ ई०) मर गया। मुझसे सलाह पूछे बिना इसने कैसे अपनेको नया सम्राट् घोषित कर दिया ?” इसपर दूतने जवाब दिया—“नया सम्राट् कुछ समयसे महासेनापति (फील्ड-मार्शल) के सैनिक पदपर आरुढ़ था। उसने पिछले बीस वर्षोंसे स्वयं सेनाका संचालन किया है। उसकी कमानमें तीन लाख अभ्यस्त सैनिक हैं, इसलिए नभ (भगवान) और मनुष्य दोनोंने ही उसे इस पदपर स्थापित करनेमें सहायता की। भला उसका विरोध कौन कर सकता है ?”

अपओकी का पुत्र तूयरिक (तू-यू, ताङ्ग-चुङ्ग) दूतके पास खड़ा था, उसने उससे कहा—

“बहुत लम्बी बातें न करो ! तुम उस कहावतको जानते होगे, अगर कोई गाय दूसरे के खेतमें चरने जाये, तो उसे पकड़कर अपना माल बनाया जा सकता है।”

दूतने उत्तर दिया—“कैसे एक गुमनाम किसानके सबधकी कहावत का प्रयोग देवताओं द्वारा अभिषिक्त तथा मनुष्यों द्वारा स्वीकृत व्यक्ति पर लागू हो सकती है ? उदाहरणार्थ जब तुम्हारे महान् पिताने निर्वाचनको उठाकर खित्तन-सिंहासनको अपने हाथमें कर लिया, तो कौन उन्हें अनुचित कृत्यका अपराधी बना सका ?”

अपओकीने कुछ गरम होकर कहा—“मैं जानता हूँ, कि मेरे पुत्रके पास महलमें दो हजार औरतें तथा एक हजार गायक-वादक आदि थे। वह अपना समय स्त्रियों और मदिरामें मस्त हो बकबकानेमें बिताता था। वह अयोग्य आदमियोंको राजकाजमें लगाये हुए था, और किसी आदमीके दुःख-सुख पर ध्यान नहीं देता था। इसके कारण उसका पतन हुआ। जबसे उसके पतनकी खबर सुनी, तबसे मैंने और मेरे परिवारने पिथक्कड़ी छोड़ दी, अपने बाजो और शिकारी कुत्तोंको मुक्त कर दिया। उन गायक-वादकोंको छोड़ बाकी सभी हटा दिये, जिनकी कि सार्वजनिक भोजीमें आवश्यकता होती है। ऐसा न करता, तो मेरा भी परिणाम मेरे पुत्र जैसा होता। मैं चीनी बोल सकता हूँ, लेकिन मैं अपने लोगोंके सामने उसका एक शब्द भी मुहसे नहीं निकालता। इसीलिए कि वह चीनियोंकी नकल करके डरपोक और कमजोर बन जाये। अच्छा यही है कि तुम लौट जाओ, और सम्राट्में जाकर कहो, कि मैं दो हजार लोगोंके साथ पेकिङ और चेङ्गटिङफूके बीच कहींपर उससे मिलूँगा, और वही उसके साथ सधि करूँगा। अगर वह मुझे पेकिङकी मैदानी भूमि दे देगा, तो मैं उसपर और आक्रमण नहीं करूँगा।

अपओकीने बोत्सकाईपर आक्रमण किया। उनकी राजधानी फ्यूचिङ (कइयेवान) को ले उसका नाम “पूर्वी तान” रख पुत्रको वहाका राजा बना दिया। थोड़े समय बाद ९२६ ई० में अपोकी मर गया। इरीके समय पुरानी सियान्पी प्रथा—लकड़ीके अक्षरों द्वारा सदेश भेजना छोड़ दिया गया। किसी चीनीने चीनी सकेत लिपि और चित्रलिपिको मिला-जुलाकर एक नई लिपि तैयार की। इसीमें उस समयके कुछ अभिलेख मिले हैं, किन्तु अभी वह पढ़े नहीं गए। अपोकीका शासन-काल ९०७-९२६ ई० था, जबकि वह “दिव्य सम्राज्यीय राजा” बना था। उसका उर्दू सी-लू में तालिङ नदीपर चरवाही करता था, जो कि मंगोलिया और मचूरियाके सीमान्त प्रदेश के भीतर था। वही उसने राजधानी मुजग बनवाई थी। पाचवे खित्तन सम्राट् मिङकी (चिङ-चुङ ९६८-७६) ने तीन सौ मील और पूरब मुकदनके पास अपनी राजधानी (पूर्वी पेटिका) बनाई। उत्तरी पेटिका (राजधानी) पश्चिमी राजधानीसे सौ मील उत्तर थी। इसके अतिरिक्त एक दक्षिणी पेटिका भी थी, जो कि पश्चिमी राजधानीसे दक्षिण थी। खित्तन घुमन्तू थे। उनके सम्राटोंको शिकारका बहुत शौक था, इसलिए उन्होंने यह शिकारकी पेटिकायें (हिंशकारगाहें) बनवाई थी। चारोही शिकारगाहोंके फाटक और दरवाजे पूर्वकी ओर खुलते थे। खित्तन अपने सभी शुभ कामोंको भारतीयोंकी भांति पूर्वाभिमुख करते। महीनेकी हर प्रथम तिथिको पूर्वाभिमुख हो यात्रा या दूसरा काम करते। ऊपरी राजधानीमें बाकायदा नगर, बाजार, दूकानें थी। उन्होंने अपना कोई सिक्का नहीं चलाया। सिक्केका काम रेशमके थान देते थे। उनके नगरोंमें बहुतसे रेशमके कारखाने थे। खित्तन बौद्ध थे। उनके बड़े-बड़े मठ बने हुए थे, जिनमें भिक्षु-भिक्षुणिया रहते थे। इसके अतिरिक्त वहा

चीन राजधानीकी नकल करते हुए, वेश्याशालाये, आमोदगृह भी थे। नगरमे शिल्पो, मल्लो, विद्यार्थियो, अध्यापकोके घरोके साथ साथ बहुत तरहके राजकीय कार्यालय थे।

(२) ताइ-चुङ् (९२६-९४७)

आपोकीने अपनेको बाकायदा सम्राट् घोषित नहीं किया था। उसके बाद पुत्र ताइचुङ् (तेक्वाग) अपनी माके जोरपर पिताकी गद्दीपर बैठा और बड़ा भाई कुछ नहीं कर सका। खित्तन सरदार भी ताइ-चुङ्के साथ थे। इसने भी बापकी तरह लूट-पाट जारी रखी। शादो सम्राट् तेक्वाङ्कने अपने दामादको सीमान्तका रक्षक बनाकर भेजा, लेकिन अपने ससुरके अयोग्य उत्तराधिकारियोके समय विद्रोह करके वह खित्तनोका अनुयायी बन गया। खित्तन अपनी गाडियो और रिसालोके साथ येन्-मेन् (हसद्वार) डाडेसे आ गये। पश्चात्-थाङ्-वशीय (शादो, तुर्क) सेना बुरी तरहसे हारी। दामाद शीकिङ्कतान सम्राट् घोषित हुआ और खित्तनोको उनकी सहायताके बदले प्रदेश और बहुत सी चीजे भेट की। माउकिरे (शादो सम्राट्) ने अन्तिम प्रार्थनाकी थी—“मे एक गरीब सीधा-सादा तातार हू, जिसे स्थिर विचारवाली जनताने स्वीकार करके गद्दीपर बैठाया। मेरी केवल यही प्रार्थना है, कि जब तक दैव अपनी कृपासे मुझे जीवित रखे, तब तक अपने लोगोकी भलाईके लिए आप मेरा पथप्रदर्शन करे।”

इसी समय यन्-चिङ् (आधुनिक पेकिङ्) खित्तनोके एक इलाके का शासन-केन्द्र बना। इस प्रकार पेकिङ्के वैभवका शिलारोप हुआ। अबसे ताइ-चुङ्कने अपने वंशका नाम ल्याओ (लोह) रक्खा।

खित्तन साम्राज्यके भीतरका महाप्रकारसे दक्षिणवाला चीन बारह सूबोमे बाटा गया था। इसके अतिरिक्त मचूरिया और उत्तरी तातार भूमि भी उनके हाथमे थी। खित्तन-वंश आरम्भसे अन्त तक घुमन्तू रहा। ताइ-चुङ्कने अपने साम्राज्यका सगठन चीनी ढंग पर किया था और उसी रीतिके अनुसार वह शादो सम्राट्को बढिया मदिरा, जवाहिरात और मिठाइयोके साथ प्रतिवर्ष तीन लाख थान रेशम भेजा करता था। लेकिन अब अधिराज और अधीनके स्थानपर पत्रोमे “पिता-पुत्र” का प्रयोग किया जाता था। यह नहीं मालूम होता, शीनकिङ्क ताङ् (काउचू ९३६-९४२) ने अपने जीवनके अन्त तक खित्तनोके साथ हुई सधिका पालन किया। ९४३ई०म खित्तनोने तीन सेनाओको भेजकर चीनपर आक्रमण किया, किन्तु युद्धका फल अनिश्चित रहा। अगले बसतमे उन्होने फिर आक्रमण किया और बहुतसे नगरो-ग्रामोको जलाया लूटा, पर चीनी सेनाने आकर उन्हें हरा दिया। ताइ-चुङ् अपनी गाडी (रथ) छोड सफेद ऊटपर भागकर किसी तरह यन्चि पहुचा। उस साल उस प्रदेशमे सूखा, महामारी और टिड्डियोका प्रकोप था, इसलिये मजबूर होकर वह विजयी शादो-तुर्कोके साथ सुलह करनेके लिये तैयार था, लेकिन कडी शर्तोंके कारण सुलह नहीं हो सकी। ताइ-चुङ्कने सिरपर “सम्राजीय आज्ञासे जीव-दान” का गोदना गुदवाकर सभी बढियो को लौटा दिया। फिर वह पियान् (आधुनिक काइ-फेङ्-फू राजधानी) पर चढ दौडा। चीन-सम्राट् और राजमाताने क्षमा-प्रार्थना की। ताइ-चुङ्कने जवाब दिया—“मेरे पोते, बहुत अफसोस मत करो, बस मेरे भोजनके लिये कोई स्थान दे दो।” उसके लिये सम्राजीय रथ भेजा गया, तो उसने उसका इस्तेमाल न करके जवाब दिया—“मेने शरीरमे कवच लगा कर सारे चीनको जीतनेकी प्रतिज्ञा कर ली है, इसलिये मेरे पास महोत्सव या शिष्टाचारके लिये

उपयुक्त होनेवाले रथके इस्तेमाल करनेका समय नहीं है ।” सम्राट् और सम्राट्की माता विजेताका स्वागत करनेके लिये प्राकारसे बाहर आये । खित्तन विजेताने जवाब दिया—“कैसे सड़कके ऊपर दो सम्राट् भेंट करेंगे ।” दूसरे दिन ताइ-चुङ् चिन राजधानीमें दाखिल हुआ । उसके सिरपर समूरी टोपी, शरीरपर कवच था, वह घोड़ेपर सवार था । चिन-वशके सारे अफसरोंने विजेताके सामने दण्डवत्-प्रणाम किया । फाटकके भीतर घुमकर रक्षी मीनारके ऊपर चढ़ कर उसने दुभापियाको चीनी भाषामें घोषित करनेको कहा—“मैं केवल एक मनुष्य हूँ, तुम्हें डरनेकी कोई अवश्यता नहीं । मैं अपनी इच्छासे यहाँ नहीं आया । चीनी सेनायें मुझे यहाँ लाईं ।” फिर वह राजमहलमें गया । अन्त पुरकी सुन्दरिया स्वागतके लिये तैयार थी, किन्तु उसने उनकी ओर ताका भी नहीं । शामको शहरके बाहर एक पहाड़ीपर उसने रात बिताई । चिन-सम्राट्की “कृतघ्नियोंका मरदार” की पदवी देकर उसे जेहोलके पास खित्तनोकी राजधानी, ह्वाङ्गुङ्फूम भेज दिया । राजधानीमें पहुँचनेके सातवें दिन ताइचुङ्ने महलमें रहना शुरू किया । अब सभी फाटकोपर खित्तन सैनिक पहरा देने लगे । अगले दिन उसने दरबार किया, किन्तु वहाँ चीनी सम्राट्की भेज न धारण कर अपने जातीय भेसमें आया । उसके अगले दिन दूसरा दरबार किया, जिसमें उसका सारा भेस चीनी था, किन्तु टोपी समूरी और बदन भी तातारोंकी तरह वाई ओर थे । सारे चीनी अधिकारी पूर्ण दरबारी पोशाकमें थे । दरबार-हालके सामने घेड़ोंकी गाड़ियाँ और तातार (खित्तन) सवार पातीसे खड़े थे । तीन सप्ताह बाद उसने एक और भारी दरबार किया । अब ताइचुङ्ने चीनी सम्राट्की विशेष चिह्न नागमुकुट धारण किया, जिसके साथ शरीरपर भूरे रंगका चोगा और हाथमें राजदण्ड था । उसने सभी अपराधियोंको एक ओरसे क्षमादान दिया । चीन-साम्राज्यका नाम महाल्याउ साम्राज्य हो गया । यह घोषणा ताइचुङ्के द्वितीय कालके दसवें वर्ष अथवा उसके राज्यारोहणके बाईसवें वर्ष (९४७ ई०) में हुई । दूसरे चान्द्रमासकी पहली तिथिको ताइचुङ्ने “निश्चय ही मैं सच्चा सम्राट् हूँ” कहते फिर एक बड़ा दरबार किया । इस दरबारमें उसने घोषित करके सभी प्रदेशों और नगरोंके लिये दुभापियाके साथ एक-एक खित्तन राज्यपाल नियुक्त किये । खित्तन सेनाको रसदकी कमी हुई, इसपर ताइचुङ्ने चारों तरफ सैनिक दल दौड़ाये, जिन्होंने पूर्व और पश्चिममें एक हजार मीलके प्रदेशको लूट-पाटकर रसद जमा कर ली ।

सेनापति ल्यू-ची-युवानने शान्सी प्रदेशमें प्रायः सारे खित्तन सैनिक राज्यपालोंको मार डाला । गरमीका मौसम मिरपर था । ताइचुङ् अपने सालेको चिन-राजधानीका प्रबन्ध सौंपकर चिन नौकरशाही, चतुर शिल्पियों, अन्त पुरकी स्त्रियों और कई हजार सैनिक अफसरोंको लेकर चला । ह्वाङ्गुङ् (पीत नदी) पार हो वह चाङ्गते नगरमें पहुँचा । उसने प्रदेशके लोगोंकी भेंटपर नज़र दौड़ा कर एक चीनी अफसरसे कहा—“मुझे बड़े शिकारीको घेर कर शिकार करके मांस खानेमें आनन्द आता है, किन्तु जबसे मैं चीनमें दाखिल हुआ, तबसे मेरा उत्साह जाता रहा । यदि मैं अपने पूर्वजोंके घरको एक बार और देख लूँ, तो मैं बड़े सतोषके साथ मरूँगा ।” ल्याउ-चाङ्ग पहुँचकर वह बीमार पड़ा और वही मर गया । खित्तन पेट चीरकर नमक डाल उसकी लाशको उत्तरकी ओर ले गये ।

३. शीचुङ् (९४७-९६२ ई०)

ताइचुङ्के मरनेके बाद उसका भतीजा तुर्युक-पुत्र बू-यू (उर्युक) गद्दीपर बैठा । यह बड़ा

क्रूर किन्तु जिन्दादिल आदमी था। शराब उसे बहुत पसंद थी। वह एक अच्छा कलाकार, काफी सुपठित, सुशिक्षित आदमी था। वह बापके साथ चीन नहीं भागा था। खित्तनोने मौकिरेके दामादको सिंहासनपर बैठनेमें मदद की थी। उसी समय मौकिरेके उत्तराधिकारी तथा दत्तक पुत्रने तुर्युकको मार डाला। उर्युक उस समय चचाके साथ चीनमें था। मृत्युके समय भी वह उसीके साथ था। चीनी सेनापतिके पास एक लाख सेना थी, किन्तु वह उससे कोई लाभ नहीं उठा सका। उर्युकने उसे पानगोष्ठीमें सम्मिलित होनेके लिये बुलाकर तालेमें बन्द कर दिया और ताइचुङ्कको इच्छाको घोषित किया—“तुम केन्द्रीय राजधानीमें साम्राज्यसिंहासनपर आरूढ़ हो सकते हो।” लेकिन दादीने ताइचुङ्कके दूसरे पुत्रका पक्ष लिया। लड़ाई हुई। सेनाने साथ छोड़ दिया, इसलिये दादी हार गई। दादीने राज्यके उत्तरी भागके एक ऐसे स्थानको मागा, जहापर कि अपोकीकी समाधि, उसके विशेष स्मृति-चिह्न रक्खे हुए थे। यह स्थान सिरामुरैन (सिरा नदी) के ऊपरी भाग (आजकलके बारिन मंगोल इलाके) में था। यही दादीको समाधिस्थ कर दिया गया। पांच साल राज करनेके बाद (९५२ ई० में) अपनी अवश्यताओकी पूर्तिके लिए उसने सेनाको लूट-मार करनेका हुकुम दिया। जब सेना नहीं तैयार हुई, तो उसके साथ जबर्दस्ती करना चाहा, जिससे विद्रोह हो गया, बू-यू मारा गया, और एक खूनके लिये कई खून किये गए।

४. मूचुङ् (९५१-९६८ ई०)

अब ताइचुङ्का पुत्र शूल (जुईत) खित्तनोका सम्राट् बनाया गया। इसका नाम अपने दादा ही का मूचुङ् था। राज-काजमें दिलचस्पी नहीं रखते। वह बड़ा शराबी और सभवत मपुसक था। सारी रात शराब पीता और सारे दिन सोया करता, जिसके कारण इसका नाम “सोनेवाला राजा” पड़ गया। ९५९ ई० में चाउ वंशके द्वितीय राजाने खित्तनोपर आक्रमण करके उनके कई नगर छीन लिये। मूचुङ् ने खबर सुनकर जवाब दिया—“क्या परवाह है, यदि कुछ नगर वह लौटा ले।” ९६० ई० में शुङ्-वंश (९६०-१२७९ ई०) की स्थापना हुई, लेकिन वह तातारों (खित्तनो) के साथ झगडा मोल नहीं लेना चाहते थे। उन्होंने जबर्दस्ती छीने हुए घोड़ोंको खित्तनोके पास लौटा दिया और सीमान्तके लोगों पर लूट-मार करनेकी मनाही कर दी। पर तो भी खित्तन कई सालों तक लूट-मार करते रहे। इसपर शुङ् सम्राट् ताइचू (९६०-७६ ई०) ने स्वयं खित्तनोके खिलाफ सेना-संचालन किया। ९६९ में मूचुङ् मार डाला गया और उसके स्थान पर शीचुङ् (उर्युक) का पुत्र गद्दीपर बैठा।

५. चिङ्-चुङ् (मिन्गी) (९६८-८३ ई०)

अब से सारे खित्तन-सम्राटोंके नाम चीनी होने लगे। चिङ्-चुङ् ने अपने वंशका नाम महाखित्तन रखा। ९७० ई० में साठ हजार खित्तनोने पाउ-चाउ (पाउतिङ्फू, पीछे प्रान्तीय राजधानी ची-ली) पर आक्रमण किया। लेकिन चीनी सेना ने उन्हें बुरी तरहसे हराया। शुङ् सम्राट् ने प्रत्येक खित्तन सिरके लिये चौबीस थान रेशम इनाम देनेकी घोषणा की। उसने समझा, खित्तनोकी सारी सेना खरीदनेके लिये बीस लाख थान काफी होंगे।

९७५ के बाद दोनों राज्योंके सबधमें कुछ नरमी आई। बहुतसे दूत-मंडल और राज

धानीमें रहनेके लिये एक राजदूत भेजा गया। खित्तन भी अब बड़ी तेजीसे चीनी सस्कृतिमें दीक्षित होते जा रहे थे। ९७६ ई० में शुङ सम्राट् ताइ-चूके मरनेपर मवेदना प्रकट करनेके लिये खित्तनोने एक विशेष दूत-मंडल भेजा। ९७८ में फिर लडाई छिड गई। नये शुङ सम्राट् ताइ-चुङ (९७६-९७ ई०) ने थोडे दिनोंके लिये खित्तनोके आधीन नगर या-मिङ (पेकिङ) पर अधिकार कर लिया। लडाईमें दस हजार खित्तन मारे गये। पीढियोंसे युद्ध-क्षेत्र बने रहनेके कारण यह प्रदेश इतना बरबाद हो गया था, कि शुङ सेनाको उमें छोड जाना पडा।

६. शेङ्गुडु (९८३-१०३१)

चिङ्गुडुकी मृत्यु (९८३ ई०) तक लूट-पाट जारी रही। उसके मरनेपर उसका १२ सालका पुत्र लुङ सू शेङ्गुडुके नामसे गद्दीपर बैठा और उसकी मा अभिभाविका बनी। शुङ-वंशके साथ लडाई और लूट-पाट अब भी जारी रही। ९८४ ई० के अभिलेखोंमें पता लगता है, कि अभिभाविका राजमाता अपने एक चीनी सेनापति हान-तेजङ्गसे फमी हुई थी। ९८६ में एक भारी चीनी सेनाने आक्रमण किया, लेकिन उसे सफलता नहीं मिली। ९८७ ई० की लडाईमें भी खित्तनोने सभी चीनी सेनापतियोंको हराया। ९८९ में शुङ सम्राट्को युद्ध-घोषणा निकालते हुए और भी सेना भेजनी पडी। उस समय ओर्ट्स प्रदेशमें तिब्बती कबीलोंका जोर था। खित्तन घुमन्तुओने ९९५ ई०में इन तिब्बतियों (तगुतो)को अपनी ओर कर लिया, लेकिन जब खित्तनोको भागते देखा, तो उन्होंने भी भीषण प्रहार किया। बहुतसे खित्तन तबू (परिवार) ह्वाङ्गहो नदीके दूसरे पार चीन की ओर चले गये और शुङ वंशको कम से कम दस हजार मजबूत सवारोंकी साह्यक सेना मिल गई। ९९९ ई० में तृतीय शुङ सम्राट् (चेनचुङ ९९७-१०२२ ई०) ने स्वयं सेनाका संचालन करते खित्तनोपर आक्रमण किया। खित्तनोको लगातार पाच साल तक हानि पर हानि उठानी पडी। १०३० ई० में खित्तनोका एक चीनी अफसर शुङकी ओर चला गया, जिससे उसे बहुतसे सैनिक भेद मालूम हुए—पेकिङमें १८ हजार चीनी रिमाला हैं, गी-शी कबीला और कुछ सरदार महा-दीवारके उत्तरमें रहते हैं। इनके अनिरिक्त एक लाख अस्मी हजार सवार-सेना और है, जिनमें पाच हजार शरीर-रक्षक सैनिक हैं। लूट-पाटके लिये ५४ हजार सैनिक हैं। लगातार आक्रमणसे परेशान होकर खित्तन राजा और राजमाताने सारी सेना लेकर शुङ सेनापर आक्रमण कर दिया। आधुनिक होक्यानफूमें भारी लडाई हुई। खित्तनोने इस लडाईमें एक प्रकारका तोपखाना इस्ते-माल किया—घायद इतिहासमें यह पहिला तोपखाना था, जिसमें धनुष बाणके सिद्धान्तपर बड़े-बड़े पत्थर और लकड़ीके कुन्दे फेंके गये। यहा वह असफल रहे, किन्तु शाङ्चाउ (तामिङ्गफूके पास कै-चाउ)में वह शुङ सेनाको करीब करीब घेर लेनेमें सफल हुए, किन्तु उसी समय उनका सेनापति मिरमें बाण लगनेमें घायल होगया और शिविरमें लौटकर उसी रात मर गया। खित्तन पीछे लौटे। दोनों राज्योंमें सुलह हुई। चीनकी अधिकृत भूमिके बदलेमें खित्तनोको सालाना दो लाख थान रेशम और एक लाख औंस (७८ मन) चादी भेंट मिलने लगी। इसके अतिरिक्त कुछ रेशम और चादी अभिभाविका रानीको भी मिली। १०१० ई० में राजमाता मर गई और थोडे ही समय बाद उसका जार चीनी महामंत्री भी मर गया। १०२२ में चेङ्गुडुके मरनेपर शिङ्गुडु नया शुङ सम्राट् बना। इसके बाद खित्तनोमें कोई बडा झगडा नहीं हुआ और १०३१ में शेङ्गुडु भी मर गया।

७. शिङ् चुङ् (मुयुकु १०३१-१०५५)

अब उसका बेटा गद्दीपर बैठा। इसके समय भी राजशासन अन्त पुरकी रखेलियोंके हाथमें रहा। ओर्दुसमें तगुतो (अमदो-तिब्बतियों) का राज्य काफी प्रबल हो उठा था, जिनकी राजधानी हिया थी। १०२८ ई० में तगुन्-राजाने उइगुरोके नगर खाङ्चाङ्को दखल कर लिया। शुङ्-सम्राट् ने भी तगुतोके चीनपर पडते दबावको देखकर अपने हाथसे गये नगरोको लौटाना चाहा। शुङ् राजदूतके कहनेका उत्तर देते हुए खित्तन-राजाने कहा—“हमारे लोग युद्ध करनेके लिये बेकरार हैं, किन्तु क्षतिपूर्तिके रूपमें यदि चीनी प्रदेश मिल जाय, तो मैं सतुष्ट हो जाऊंगा।” फिर ममज्ञाते हुए कहा—“हमने हंसद्वार (जोत) को इसीलिये बन्द कर दिया है, कि तगुत् लोग न आ सकें। खित्तन सीमान्तपरके जलाशयको बंद करना तो ९९७ से ऐसा ही चला आ रहा है। हमारी किलाबन्दियोंको मजबूत करनेके लिये जो मिपाही भेजे गये हैं, वह केवल टूटी-फूटी चीजोंकी आवश्यक मरम्मतके लिये ही। हमने सधि-नियमके विरुद्ध कोई बात नहीं की।” यद्यपि छिन्-वशके सस्थापक शादोने कुछ इलाके खित्तनोको रिश्वतमें दिये, लेकिन उत्तर-चाङ्-वशके द्वितीय सम्राट्ने उसके कुछ भागको माग लिया। यह दोनों घटनाये शुङ् राजवशकी स्थापनाके पहिले की हैं। दूतने कहा—“यदि चाङ्-वशके विधानको तुम तोड़ देना चाहते हो, तो हम भी छिन्-वशके विधानको तोड़ देगे, जिससे शुङ्-वशको ही लाभ होगा। सम्राट्ने मुझे यह कहनेके लिये भी आदेश दिया है, कि उनकी रायमें तुम्हारी इच्छा जो इलाका लेनेकी है, उसके भीतर उस भूमिसे लाभ उठानेका भाव ही काम कर रहा है, किंतु यह केवल लाभ का ही प्रश्न नहीं है, बल्कि इसमें बहुतसे मूल्यवान् जीवनोंके बलिदान की भी बात है। इसीलिए सम्राट् आपके पास भेजी जानेवाली भेंटमें उतना मूल्य और बढ़ानेके लिये तैयार है, जोकि विवादग्रस्त भूमिसे मिलता। यदि खित्तन उस भूमिको ही लेना चाहते हैं, तो उसका अर्थ यही है, कि वह १००५ ई० के सधि-पत्रको तोड़ फेकनेके लिये उतारू है। यदि युद्ध करना ही अभिप्रेत है, तो परमभट्टारक उसे कबूल करनेसे इन्कार नहीं करते।” शिङ्चुङ्पर दूतकी इस बातका प्रभाव पड़ा। उसने व्याह्के लिये राजकन्या मागी, तो दूतने कहा—“विवाह-संबंधके कारण जल्दी झगडा उत्पन्न हो जाता है। वह उतना स्थायी नहीं है, जितनी कि भेंट। प्रथम श्रेणीकी राज-कुमारीके लिये एक लाख औंस (७८ मन) चादी दहेजमें देते हैं, जोकि आपको मिलनेवाली वार्षिक भेंट से कहीं कम है।” इसपर खित्तन राजाने कहा—“अच्छी बात है, तुम जाओ, जब दूसरी बार आओगे, तो मैं बतलाऊंगा कि भेंट और राजकन्यामें मुझे किसको लेना है, लेकिन अबके पूरे अधिकारके साथ आना।”

चीनी दूत दुबारा आया। उस समय दो लाखकी जगह तीन लाख थान रेशम और एक लाख की जगह दो लाख औंस (१५६ मन) चादी वार्षिक भेंट देना तै हुआ। इसके साथ यह भी निश्चय हुआ—(१) चीन पा-चाङ् सीमाके बाधको तोड़कर प्रवाहित नहीं करेगा, (२) सीमान्तपर और सेना नहीं बढ़ायेगा, (३) खित्तन भंगेलुओको शरण नहीं देगा।”

इसके बाद १०४४ ई० में खित्तनोने चीनको सूचना देकर भंगेलुओको शरण देनेके दोष पर तगुतोंके विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया। खित्तन विजयी हुए। तबसे चीनी अभिलेखोंमें “उत्तरी महाराज्य” की जगह “महाखित्तन” और दक्षिणी महाराज्य की जगह “महाशुङ्” लिखा जाने

लगा। १०५४ ई० में दोनों देशों में पचास साल तक बनी रही शान्ति के उपलक्ष में शिङ्चुङ ने अपना चित्र भेजकर जङ्गेडसे उसका चित्र मगवाया। उससे अगले साल २५ साल के शासन के बाद शिङ्चुङ मर गया और उसके स्थानपर उसका पुत्र गद्दी पर बैठा। यह बौद्धधर्म का बड़ा पक्षपाती था, इसने कितने ही ऊँचे सरकारी पदों पर बौद्ध भिक्षु नियुक्त किये थे।

८. ताउ-चुङ (१०५५-११०१ ई०)

आगे शुङ और खित्तन सम्राटों में अधिकतर मैत्रीपूर्ण मन्त्रव्यवस्था रहा। दोनों ने एक दूसरे का चित्र मगवाया। तो भी खित्तन घुमन्तू नीमान्न पर छोटी-मोटी लूट-पाट करने से अपने को रोक नहीं सकते थे। चीन ने युद्ध को खर्चीली चीज समझकर सब कुछ बर्दाश्त किया।

रीति-रवाज—खित्तन फरवरी-मार्च के मास में चालीम दिन शिकार में बिताते थे, फिर ताळु नदी में बरफ में छेद करके मछली मारने। उसके बाद तलही चिड़ियों का शिकार करते। गरमियों में वह तान्-शान् (कोयला गिरि) जयवा ऊपरी राजधानी में चले जाते, शरद में पहाड़ में हरित का शिकार करने जाते। खित्तनो के दो कबीले सबसे कुलीन समझे जाते थे—(१) स्याउ, राजकीय घेई वश के प्रतिनिधि, (२) युयेहत (यूयेतुह) अर्थात् खित्तन राजवंश।

शासन-विभाग—अर्पाकी में पहिले खित्तनो में जनतांत्रिक गणराज्य-व्यवस्था थी। अर्पाकी ने उसे उठाकर राजतंत्र स्थापित किया। राज-मंचालन के लिये एक राजसभा होती थी। कार्यकारिणी सभा और केन्द्रीय कर्मचारी वर्ग को दक्षिण पक्षी कहते थे, क्योंकि वह राजमहल के दक्षिण ओर रहने थे।

तेगिन—राजवंशी कुमार

इलीपिर—महायक-मन्त्री।

लिन्या—अध्यापक या आचार्य।

इलिगिन्—प्रान्तीय राज्यपाल की उपाधि।

खित्तनो के अपने चार कबीले—घेई, शिन्वी, नूचन और बोत्सकार्द—के लिये एक खास विभाग और उसके अधिकारी होते थे। उनके सभी पन्द्रह से पच्चीस साल की उम्र के पुरुष सैनिक सेवा करने के लिये बाध्य थे। युद्ध के लिये जब खित्तन प्रस्थान करते, तो एक धूमिल रंग के बल और एक सफेद घोड़े की बलि देने। सफेद घोड़े की बलि ह्ण और पीछे के मगोल भी देते थे। यह बलिदान आकाश (देव), पृथिवी, सूर्य तथा कार्त-मिन् (भूमि) के पैतृक पहाड़ों के देवताओं के लिये दी जाती थी। राजा के मरने पर उसकी मोने की मूर्ति एक अलग तबू में रखी जाती और उसके निमित्त प्रतिमास प्रतिपदा और अमावस्या को खाद्य और मदिरा से श्राद्ध किया जाता था।

सैनिक व्यवस्था—राजाओं के प्रत्येक समाधि-मंदिर के पास अपने सैनिक और घोड़े होते थे। हरेक सैनिक को अपने खर्चों में जौन, अश्वकवच (लोहे या चमड़े का) और दूसरे सामान, चार सौ तीरों के साथ चार धनुष, छोटे और बड़े दो भाले, एक कुठार, एक हथौड़ा, एक छोटा झंडा, लोहा चकमक पत्थर, जल-पात्र, राशन का थैला, वशी, नमड़े का टुकड़ा, छाता, दो सौ फुट रस्सी, एक थैला भुना दाना, साथ लाना पड़ता था। खित्तन नवम्बर में दक्षिण की ओर लूट मार के लिये जाते और फरवरी में लौट आते। लूट के लिये वह गावमें बिखर जाते और लूटने

से ही मतौष न कर तूतके पेड़ों और मेवे के बागों को काट डालते, घरों में आग लगा देते। स्त्रियों, बच्चों, बूढ़ों, और निरीह आदमियों को भी पकड़ ले जाते। जिस स्थान से चीजे नहीं ले जा पाते, वहाँ के लोगों को कहते कि, हम जल्दी ही फिर आ रहे हैं। छोटी-छोटी टुकड़ियों में होकर वह नगर-द्वार पर आक्रमण करते। घाट या सँकरे रास्ते में पहुँचने पर तुरन्त रक्षा के लिये पहुँचे-दार नियुक्त कर देते। नगर को घेरते समय वह अपने बंदियों को आगे करके खाइयों में मिट्टी डलवाते, लकड़ियाँ कटवा कर लगवाते और उन्हीं के पीछे पीछे नगर की ओर बढ़ते। खित्तनों के विरोधी चीनियों की सेना मुख्यतः पैदल सेना थी, जिसे अपने कवच और रसद के बोझ को लेकर चलना पड़ता था। यदि इन चीजों को साथ न रखते, तो अपने शरीर की रक्षा और भूख की मुश्किल होती। सब चीजों को लेकर चलने पर चीनी सैनिक जल्दी थक जाते।

१०६७ ई० में खित्तनों ने अपने वंश का नाम “महाल्याउ” रखा। शुङ्ग-सम्राट शेङ्ग-चुङ्ग जब १०६७ ई० म गद्दी पर बैठा, तो अभिषेकोत्सव में खित्तनों ने मित्रता प्रकट करने के लिये एक दूत-मंडल भेजा। साथ ही उन्होंने चो-चाउ और यी-चाउ के नगरों पर किले-बन्दी को और मजबूत किया, वहाँ बहुत सी रसद और हथियार को भी जमा किया, सीमान्त पर सेनाएँ जमा कर दी। इसके बाद सीमान्त नदियों को जबर्दस्ती पार करने की बात लेकर झगडा कर दिया। असल में वह लड़ाई करने का बहाना ढूँढ रहे थे। १०७४ ई० में बहुत सी शिकायतों की एक सूची लेकर खित्तन-दूत शुङ्ग-राजधानी में गया और कुछ किलेबंदियों के तोड़ देने तथा सीमान्त में कुछ परिवर्तन करने की माँग की। थोड़ी आवाजाही के बाद शुङ्ग-दरबार ने महादीवार की दक्षिणी पानी में दो सौ मील तक उनकी सीमा को मान लिया। इसी समय खित्तन राज-परिवार में झगडा हो गया। मां-बेटे की ईर्ष्या से युवराज और उसकी माँ ने अपने प्राण खोये। इसपर पौत्र येन्-ही युवराज हुआ। ४७ वर्ष राज करने के बाद ११०१ ई० में ताउ-चुङ्ग मरा।

९. ताउचूङ्ग-ति (येन् ही ११०१-२१)

इसके गद्दी पर बैठने के एक साल पहिले शुङ्ग-सम्राट चुङ्ग मरा था। चीन उस समय हिया (तगूतो) के साथ लड़ रहा था। ताउ चुङ्ग ने शुङ्ग दरबार में अपना दूत-मंडल भेजा। इस समय ल्हासा (तिब्बत) का साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया था। खित्तनों ने मध्यस्थ बनने के लिये दूत-मंडल भेजा था। और शुङ्गमन्त्री ने मदद मागने के लिए इससे पहिले खित्तनों के दरबार में दूत-मंडल भेजा था। किन्तु, उस समय कुछ नहीं हो सका। चार साल बाद फिर मध्यस्थता करने के लिये दूत-मंडल भेजा गया। ताउचूङ्ग-ति बड़ा ही क्रोधी और लोभी था। उसके सारे सरदार उससे असंतुष्ट थे। वह शरद में हरिन का शिकार करने गया था, जबकि नूचेनो के सरदार आकूता ने विद्रोह कर दिया और मिङ्गच्यान (आधुनिक निगूता, किरिन प्रदेश) के इलाके और नगरों पर अधिकार कर लिया। उसके विरुद्ध भेजी गई बोत्सि-काई सेना हार गई। बोत्सिकाई कबीले का ही एक अंग नूचैन थे, यद्यपि वह उतने सम्य नहीं थे। १११४ में और बड़ी सेना भेजी गई, उसके भी हारने के बाद १११५ ई० में ताउचूङ्ग स्वयं मैदान में उतरा, किन्तु आकूता ने उसे हर लड़ाई में पछाड़ा। नूचेन सरदार ने खित्तनों के ल्याउ (लौह) के मुकाबिले में अपने वंश का नाम किन (सुवर्ण) रखा और किन् सम्राट की पदवी धारण की।

बोस्तिर्काई सेना ने भी विद्रोह करके खित्तन युवराज को मार डाला और अपने सेनापति काउ-युङ्गचाङ्ग को बोस्तिर्काई सम्राट् घोषित किया। इसके हाथ में आज-कल की प्रायः सारी ल्याउ-तुङ्ग उपत्यका थी, केवल मुकदन को वह नहीं ले पाया। एक चीनी सेनापति ने बीस हजार सेना ले जाकर उसे हराकर मारा।

११२८ ई० में खित्तन भूमि में सूखा पड़ा हुआ था। लोग वस्तुतः एक दूसरे को खा रहे थे। ताउ-चू ने किन्-चाउ-फू के उपराज अपने चचा को प्रधानसेनापति बनाया, क्योंकि उसके ही प्रभाव से मुकदन बच पाया था। नूचेनो ने उसे हरा दिया और बढकर तालिङ्ग नदी पर चिनचाउ, शियान-चाउ आदि नगरों को ले लिया। ताउ-चू इस समय अपनी मध्य राजधानी (जैहोल प्रदेश) में था। खबर सुनकर वह चुपचाप जवाहिरात से पाच सौ थैले भरवा दो हजार सर्वोत्तम घोड़ों को भी तैयार करके भागने की सोचने लगा। किन् लोग अपने थके घोड़ों और आदमियों को विश्राम देने के लिये ठहर गये थे। वह सारे ल्याउ-तुङ्ग उपत्यका को जीत चुके थे। उन्होंने खित्तन सम्राट् के पास दस मागे भेजी थीं, जिनमें एक थी—किन् मरदार को सम्राट् स्वीकृत करना। उस परिस्थिति में खित्तनो ने इसे पसन्द किया और एक खास दूत-मंडल द्वारा रथ, मुकुट और दूसरे राज्योपकरण भेंट के रूप में आकूता के पास भेजे। लेकिन वह इतनेमें सतुष्ट नहीं हुआ। उसने खित्तन दूतों को सी सी कोंटे मरवाकर लौटा दिया। ११२० ई० में आकूता ने ऊपरी राजधानी ले ली और खित्तन सम्राटों की सारी कदों को नष्ट करा दिया। यहाँ से वह पूर्वोत्तर में केन्द्रीय राजधानी को गया। इधर ताउचू के परिवार में उसके चारों पुत्रों में झगडा हो गया। अब किन् मेना का कौन मुकाबिला करता? ११२१ ई० में मध्य-राजधानी भी हाथ से निकल गई। ताउचू वहाँ में ख्वेन्-याउ की ओर भागा। यहाँ उसके अत्यंत जनप्रिय तथा सम्मानित द्वितीय पुत्र को इसलिये आत्महत्या करने के लिये मजबूर होना पड़ा, कि वह ताउचू के छोटे पुत्र को राजा होने में बाधा न डाल सके। छोटे भाई की मौसी ताउचू के मंत्री को व्याही थी। यह दिखाया गया था, कि यह काम दो प्रतिद्वन्द्वी चचाओं के मनोरथ को विफल करने के लिये किया गया था। तरुण राजकुमार ने इस आत्मत्याग को जरा भी ननुनचके किया था। उसके इस त्याग का लोगों पर भारी प्रभाव भी पड़ा। लोग ताउचू के बिलकुल विरुद्ध हो गये। ताउचू वहाँ से जान बचाकर तातुङ्ग-फू भागा। जहाँ पहुँचने पहुँचने उसके पाच हजार अनुयायी उसे छोड़कर अलग हो गये, लेकिन बड़ा पुत्र अपने तीन सौ सवारों के साथ उसके साथ रहा। तातुङ्ग के गवर्नर को दुश्मन में मुकाबिला करने का आदेश दे फिर वह तेदुस् पहुँचा। लोगोंका भाव विगडा होने के कारण वह वहाँ से भी आगे भागा, लेकिन अभी तीन मील भी नहीं जाने पाया था कि नौकरो ने ही ताउचू को माग डाला। तातुङ्ग के गवर्नर ने अपना नगर (नूचेनो) किनो को दे दिया।

१० ते-चुङ्ग (११२१-)

ताउ-चू के मरने के बाद तेचुङ्ग ने राज्य संभाला। ताउ-चू ने इसे ही पेकिङ्ग का अधिकारी बनाया था। किनोकी शुङ्ग दरबार में भी बातचीत चल रही थी। शुङ्ग दरबार में पूर्ववत् भेंट देना स्वीकार किया। अधीनता के बारे में आकूता ने माग की—“तुम मुझे अपने बराबर मानो।” शुङ्ग वंश को उसकी बात मानने में ही कुशल मालूम हुआ। शुङ्ग-सम्राट ने

अपने हाथ से चिट्ठी लिखते समय उसे “परमभट्टारक महाकिन्-सम्राट्” संबोधित किया, और पहिले की त्यान्-चिन् और पेकिङ्ग की माग को भी छोड़ दिया।

ये-लू-ताउचू (दैशी) गोबी रेगिस्तान पार कर गया था, जबकि आकूता मर गया और उसकी जगह उसका भाई बू-ची-वाई (गू-की-माई) गद्दी पर बैठा। कुछ समय के लिये नूचेन् शान्ती प्रदेश छोड़ गये। ये-लू की कुमक के अतिरिक्त तीस हजार और सवार ताउ-चू के पास थे। उसने फिर लड़ाई करने की कोशिश की, मगर ये-लू ने उसे बेकार समझकर साथ नहीं दिया।

ये-लू ने चचा को गद्दी पर बैठाकर शुङ्ग दरबार में दूत भेजा, किन्तु सम्राट् ने यह कहकर मिलने में इन्कार कर दिया, कि अभी वैध सम्राट् जिन्दा है, इसलिये हम खित्तनो का दूसरा सम्राट् नहीं मान सकते। जिन लोगों ने चचा को गद्दी पर बैठाया था, वह भी अधिकार के लिये मोल-भाव कर रहे थे। किन्-विजेताओं और शुङ्ग का भी भय था। मोल-भाव करते समय शुङ्ग के भेजे एक दूत को चचा सम्राट् ने मरवा डाला और ये-लू दैशी को चो-चाऊ लेने के लिये भेज दिया। ये-लू ने वहाँ की चीनी सेना को ह्वाङ्ग-चाउ तक भगा दिया, लेकिन थोड़े ही समय बाद चचा मर गया। उसका स्थान उसकी विधवा ने लिया, किन्तु असली ताकत सेनापति स्याउ-कान के हाथ में थी। नान-काउ जोत अब किनो के हाथ में थी, इसलिये पेकिङ्ग खतरे में हो गया था। विधवा रानी को लिये ये-लू खित्तन सेना के साथ भाग कर तेदुम् में सम्राट् ताउ-चू के पास गया। ताउ-चू ने विधवा चाची को मरवा डाला और चचा को गद्दी पर बैठाने के लिये ये-चू को भला-बुरा कह कर छोड़ दिया। आकूता ने सुना, कि भगोडा सम्राट् तेदुस में शक्ति संचित कर रहा है। उसने शाम से काम लेते हुये एक तातार भिक्षु को भेजकर ताउ-चू को राजधानी में बुलाया और भाई बना उसे और दूसरे खित्तन राजकुमारी को महल देकर अच्छी तरह रखने का वादा किया। लेकिन ताउ-चू ने उसपर विश्वास नहीं किया, और आक्रमण करके शानसी के (तेदुङ्ग से दक्षिण) एक नगर को ले लिया। इसपर एक किन् सेनापति ने धावा बोलकर सारे राजपरिवार को पकड़ लिया। ताउ-चू ने हिया (तगुत्) में शरण लेनी चाही, मगर तगुत् आफत मोल लेने के लिये तैयार नहीं थे। वहाँ से वह एक गुमनाम से दूसरे तिब्बती कबीले में जाकर छिपा। ११२५ ई० के आरम्भ में अब भी उसके पास एक हजार सवार थे। किनो को पता लग गया था। उन्होंने यकायक हमला कर दिया। ताउ-चू ने जान बचाने के लिये अपने खजाने और दूसरी बहुमूल्य वस्तुओं को रास्ते में बखेरना शुरू किया। इन बहुमूल्य वस्तुओं में छ फुट लम्बी सोने की एक बुद्ध-मूर्ति भी थी। लेकिन, किन् सेना पीछा करने से रुकी नहीं, और अन्त में ताउ-चू के पास पहुँच गई। किन् सेनापति ने बन्दी सम्राट् के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हुए घोड़े से उतरकर शराबका प्याला उसके सामने किया, फिर उसे बड़े आदर से ले गये। किनो ने उसे ‘तटवर्ती राजकुमार’ की उपाधि देकर आधुनिक व्लादिवोस्तोक के नजदीक चाङ्ग-पाइ पर्वत के पूर्व में नजरबन्द कर दिया।

किनो ने शुङ्ग वंश के विश्वासघात से नाराज होकर ह्वाङ्ग-हो नदी के उत्तर के सारे चीन को मागा। तगूतो ने भी शक्ति को देखकर उसकी अधीनता स्वीकार की। शुङ्ग की ओर से अनुकूल उत्तर न आने पर ११२६ ई० में किन सेनापति व्योली-तो (वारिब) ने छोटी छोटी नावों से ह्वाङ्ग-हो (पीत नदी) को पार किया। शुङ्ग सेना अधिक प्रतिरोध नहीं कर सकी और बिना बहुत लड़े-भिड़े किनो ने आधुनिक काङ्ग-शङ्गफू को ले लिया। विजेता ने पचास लाख औंस (पच्चीस

लाख छटाक) सोना, एक करोड औस चादी, दस लाख थान रेशम और दस हजार ढोर मागे । शुङ सम्राट् ने जल्दी जल्दी जमा करके दो लाख औस सोना चालीस लाख औस चादी की पहिली किस्त दे दी, बाकी को किस्तो मे देने का वादा किया । पर इस से जान नही बची । किनो ने फिर शुङो के ऊपर आक्रमण कर कई लडाइयो मे शुङ सेना को परास्त किया । इन्ही लडाइयो मे कुछ सैनिक यत्र इस्तेमाल किये गये थे, जिन्हे पीछे चिंगिस ने भी इस्तेमाल किया । राजधानी ले लेने पर शुङ सम्राट् (हुङ-चुङ ११००-२६ ई०) ने अपने को किन् सेनापति चन-मूहो (जे-मू-गुर) के हाथ मे अर्पण कर दिया । शुङ राज्य को पूर्णतया दखल करने की जगह विजेता ने यही पसन्द किया, कि अधिक से अधिक हरजाना लिया जाय । उनकी माग थी— एक करोड औस सोना, दो करोड ताल' चादी और एक करोड थान रेशम । शुङ सम्राट् ने सिंहासन छोड दिया । उसकी रानी और बहुत सी अन्त पुरिकाओ, तथा दूसरे तीन हजार के करीब परिचारको को किन् तातार-भूमि ले गये । शुङ-वश के बहुत से अधिकारी याङ-ची नदी के दक्षिण भाग गये । किनो ने शानसी, शानतुङ, चि-ली तथा होनान के प्रदेश अपने राज्य मे शामिल कर लिये ।

खित्तन साम्राज्य खतम हो गया, लेकिन उसके एक राजकुमार येलू दैशी ने उभय-मध्य-एसिया मे एक विशाल साम्राज्य कायम किया, जिसे इतिहास कराखिताई (काला खित्तन) के नाम मे जानता है ।

३ कराखिताई (११२५-१२१८ ई०)

कराखिताइयो की वशावली

१ येलू दैशी	११२५- ४३
२ (पुत्री)	११४३
३ येल्यु इले (रानी)	११४३
४ चे-लू-गू	— ११८२
५ गुरखान	— १२१०
६ कुचुलुक	१२१०-१२१८

१ येलू दैशी ११२५-४३ ई०

खित्तन सम्राट ताङ-चूने राजकुमार येलू दैशी को चचा को गद्दी पर बैठाने के लिये फटकारा था । हाथ से चले गये राज्य के लिये फिर आक्रमण करने की योजना मे येलू ने साथ देते कहा—सारी सेना रहने पर जब हम सफल नही हो पायें, तो अब सफलता की क्या आशा सकती है ? वह अपने दो सौ आदमियों के साथ रात को निकल भाग कर पाई-ताता (श्वेत तातार) की भूमि मे चला गया । पुराने सबध के कारण श्वेत तातारो ने उसकी मदद की । वहा से वह उरुम्ची की ओर बढ़ा । इतिहासकार जुवैनी के अनुसार कराखिताई येलू के नेतृत्व मे किर-गिजो की भूमि से होकर एमिल पहुँचे । वहा उन्होंने एक नगर बसाया, जो कि पीछे चिंगिस

^११ ताल = ५ औस = २॥ छटाक ।

अपमानजनक उत्तर दिया, जिसपर कराखिताइयो ने अन्तर्वेद पर आक्रमण किया और ९ सितम्बर ११४१ ई० में कतवान की मरुभूमि में सिजर को पूरी तरह हरा कर सलजूकी सेना को दर्गम (समरकन्द से दक्षिण) की ओर हटने के लिये मजबूर किया। इस संघर्ष में दस हजार हताहतों को नदी बहा ले गई और तीस हजार युद्धक्षेत्र में काम आये। सिजर तैरमिज की ओर भागा। येलू को मदद के लिये बुलाने वाले करलुक शासक मुहम्मद ने भी देश छोड़ दिया और सारे अन्तर्वेद ने येलू के सामने सिर झुकाया। उसी साल (११४१ ई०) बुखारा पर भी गुरखान का अधिकार हो गया। उस समय बुखारा में खानदानी रईसों का एक वंश था, जिनकी उपाधि “सद्रे जहा” (जगत् प्रधान) तथा खानदान का नाम बुरहान था। यह मुल्लो तथा खलीफा उमर के वंशज थे। कराखिताई आक्रमण के समय अब्दुल अजीज उमर-पुत्र बुखारा का सदर था। कराखिताइयो ने विरोध करने के कारण सद्रे-जहा के खानदान के मुखिया हुशामुद्दीन उमर अब्दुल अजीज-पुत्र को मार डाला और अल्पतगिन को बुखारा का शासक नियुक्त किया—यह अल्पतगिन सुबक तगिन का स्वामी नहीं था, जिसका कि पुत्र विजेता महमूद गजनवी था। सिजर की पराजय के बाद हल्ला हो गया, कि ख्वारेज्म शाह ने कराखिताइयो को बुलाया है, जबकि असली बात यह थी, कि कराखिताइयो की एक सेना ने ख्वारेज्म शाह के राज्य को लूटा, लोगों को भारी सख्खा में मारा, जिस पर अतिमिज्र मधि करने के लिये मजबूर हुआ, और जिसके अतिरिक्त उसने तीस हजार सुवर्ण दीनार वार्षिक कर देना स्वीकार किया। शायद कतवान के युद्ध के तुरत बाद ही ख्वारेज्म पर हमला नहीं हुआ, क्योंकि मिज्र की पराजय से फायदा उठाने के लिये अत्सिज्र अपनी सेना ले सलजूकियों के मुख्य प्रदेश खुरासान पर चढ़ दौड़ा था, और उसी साल १९ नवम्बर (११४१) को उसने मेर्व को लूटा। कराखिताइयो के आक्रमण के भय से पीछे लौटकर पुन मई ११४२ ई० में वह नेशापोर पहुँचा। नेशापोर के लोगों के सामने अत्सिज्र ने घोषणा की थी—हमारी मच्ची सेवाओं के प्रति कृतघ्नता दिखलाने के कारण सिजर को यह सजा मिली है। हमें मालूम नहीं, कि पश्चात्ताप करने में उसे कुछ फायदा होगा। उसे हमारे जैसा मित्र और सहायक कहीं नहीं मिलेगा। अत्सिज्र के हुकुम पर २९ मई को नेशापोर में उसके नाम का खूनवा पड़ा गया। उसी साल की गरमियों में मिज्र ने खुरासान पर फिर अधिकार कर लिया।

करमीना (उज्बेकिस्तान) में येलू ने गुरखान (खानों का खान, राजाधिराज) की पदवी धारण कर अपने को सम्राट् घोषित किया। इसी उपाधि के कारण कराखिताई वंश को गुरखानी वंश भी कहते हैं। गुरखान उपाधि इतनी बड़ी सम्झी गई, कि पीछे विजेता तेमूर भी गुरखान कहा जाता था। सम्राट् घोषित करने हुए येलू ने चीनी रेशम का सुंदर चोगा, तथा दूसरी राजसी पोशाक पहिनी। लोगों के मन को देख कर लोभ में न पड़े, इसके लिये उसने अपने चेहरे को ढाक लिया। कुछ इतिहासकारों का मत है, कि येलू मानी के धर्म का अनुयायी था, लेकिन यह सदिग्ध है, क्योंकि खित्तन तातार बौद्ध धर्म के पक्षपाती थे। येलू की सेना बड़ी अनुशासनबद्ध थी। किसी नगर को जीतने पर लूट-पाट नहीं होने पाती थी। नगर पर अधिकार करते ही हर घर से एक एक दीनार युद्धकर वसूल किया जाता। अपने सहायकों के प्रति गुरखान ने कभी विश्वासघात नहीं किया, और न उनको पद में च्युत किया। मग्ननद,* कुलजा, मिर-दरिया के उत्तर-पूर्व वाले प्रदेश

पर गुरखान का सीधा शासन था। इली नदी के पश्चिम चू-उपत्यका तथा बलाशागुन से नातिहूर तक का होमुन-उर्दूखोतो (गृह) कहा जाता था। यहाँ पर गुरखान का अपना उर्दू विचरण करता। येलू के अनेक समय बाद तक कोपाल से थोड़ा पश्चिम समतल भूमि में अवस्थित कायलिक करलुक्खानो के हाथ में था। अन्तर्वेद तथा पूर्वी तुर्किस्तान पर भी कराखानियों का शासन था, ममरकन्द में भी करलुक वंश का राज्य था। ख्वारेज्म में ख्वारेज्मशाह शासन करता था। येलू देशी का राज्य गोबी के रेगिस्तान से वक्षू (आमू-दरिया) तट और तिब्बत के सीमान्त से सिबेरिया तक फैला हुआ था। डब्लुअमीर के कथनानुसार प्रथम गुरखान की मृत्यु ११४३ ई० में हुई थी। कराखिताइयो के अधीनस्थ कबीलो में नैमन बड़ा महत्व रखता था, जिसके ऊपर विजय प्राप्त करने के बादही चिंगिस की शक्ति बढ़ी। मंगोलो को संस्कृत बनाने में भी नैमनो का हाथ था।

२. गुरखान-पुत्री (११४३)

येलू देशी के बाद उसकी पुत्री गद्दी पर बैठी, किन्तु वह थोड़े ही दिनों बाद मर गई।

३. येलू-इ-ले (११४३)

चीनी इतिहास के अनुसार बहान के मरने के बाद उसका भाई गद्दी पर बैठा। शायद वह अल्पवयस्क था, इसलिये उसकी मा अभिभाविका वनी जो बेटी के समय भी शासन का भार संभाले हुई थी। जुवेनी के कथनानुसार गुरखान की लड़की सत्तर साल तक राज करती रही। चीनी इतिहास के अनुसार लड़की का नाम बू-शो ख्यान (खानखाना) था। चीनियों ने यह भी लिखा है, कि उसने अपने पति को मरवा डाला और वह खुल्लमखुल्ला जारो को रखती थी। जुवेनी कहता है, कि विद्रोहियों ने उसे और उसके एक जार को मार डाला। जान पड़ता है, यह येलू की लड़की ही थी, जिसको जुवेनी भ्रम से लड़की की मा कहता है।

४. चे-लु-गू (११४३-८२ ई०)

अभिभाविका बहान के कत्ल के बाद अपने बड़े भाई को भी मारकर ये-ल्लू इले के पुत्र चे-लु-गू गद्दी पर बैठा। इसका असली नाम मानी या कुमानोम था। इसके विलासितापूर्ण जीवन और अत्याचार के बारे में मुसलमान ऐतिहासिकों ने बहुत अतिरंजन से काम लिया है। यदि वह ऐसा नालायक होता, तो आधी सदी तक कराखिताई साम्राज्य अच्छी तरह चल नहीं सकता था। गुरखानी चाहे बौद्ध धर्मी रहे हो, किन्तु शासक के तौर पर वह सभी धर्मों को समानता की दृष्टि से देखते थे। इसी गुरखान के समय नेस्तोरी पेत्रियार्क इलियास (११७६-९० ई०) ने काशगर में अपनी मैत्रोपोली (धार्मिक प्रदेश की राजधानी) स्थापित की और उसका नाम “काशगर और नेवाकित की मैत्रोपोली” पड़ा। इससे मालूम होता है कि इस मैत्रोपोली में सप्तनद^१ (नेवाकत) का दक्षिणी भाग भी था। कराखिताइयो के समय मध्यएशिया की मुल्लाशाही दबी

^१ बेर्नश्ताम के अनुसार सातों नदियाँ हैं—(१) अरिस, (२) असा-तलस, (३) चू (४) इली, (५) कोकस्-कराताल, (६) शेसा और (७) आगूज। पहिले नाम बूसुनो और शकोकी भाषा में होंगे, जिनके शायद यह तुर्की अनुवाद है।

जिससे इस्लामिक धर्मान्विता कुछ शिथिल हुई और ईसाइयो और दूसरे धर्मों को सास लेने का मौका मिला। लेकिन, इस समय तक जनता अधिकतर मुसलमान हो चुकी थी, जिसके भावों को उत्तेजित कर के पुराने शासक समय-समय पर विद्रोह करते रहते थे। चेलुगुके समय खोतन के करलुक शासक अरमलन खानने विद्रोह किया, जिसके झंडे के नीचे धीरे धीरे और भी बहुत से मुसलमान विद्रोही एकत्रित हो गये। अरसलन खानने खिताई सरदार शामूर तबड को फसाने की कोशिश की थी। अपने अधीन मुसलमान शासकों पर गुरखानों का रोब बहुत था।

५. गुरखान (१२१० ई०)

चे-लू-नू के बाद गुरखानी वंश में और भी शासक हुए होंगे, किन्तु अगले तीस-पैंतीस वर्षों का इतिहास अधकारावृत है। हो सकता है, उस समय गुरखानी सिंहासन के दावेदारों में झगडा चल रहा हो। नैमन राजकुमार कुचलुक भाग कर गुरखानियों में चला आया। उसका पिता ताइ-वड-खान चिंगिसके हाथों मारा गया था। नैमन वंश की ख्याति ही गुरखान के पास नहीं पहुँची थी, बल्कि ताइ-वड् खित्तन साम्राज्य का एक शक्तिशाली तथा विश्वासपात्र सामन्त था। १००८ ई० (६०८ हि०) में दरबार में पहुँचने पर गुरखान ने कुचलुक का स्वागत करते अपनी लडकी व्याह दी। कहते हैं कुचलुक पहिले ईसाई था और लडकी बौद्ध थी। अपने श्वसुर के प्रति भक्ति का परिचय देते शादी के बाद कुचलुक भी बौद्ध हो गया।

उधर १२०८ ई० में चिंगिस खान ने नैमनों के अवशेषों को इतिश नदी के तट पर बुरी तरह से हराया। नैमनों के नेता कुचलुक और मेगित कुमार तुक्ता-बिकी फिर से नैमनों के प्रभुत्वको स्थापित करना चाहते थे। तुक्ता-बिकी युद्ध क्षेत्र में मारा गया। उसके पुत्र ने गुरखान के सामन्त उइगुर इदिकुत (राजा) पर आक्रमण करके वहाँ स्थान बनाना चाहा। इदिकुत गुरखान का जुआ फेककर चिंगिसकी ओर हो गया। १२०९ ई० में गुरखानी प्रतिनिधि शाकम जोक काराखोजा में रहता था, बहुत भारी कर लगाने के कारण लोगों ने घेर कर उसका सिर काट लिया। मेगितों को उइगुरों ने हरा दिया, बाकी बचे लोग गुरखान के राज्य में कुचलुक से जा मिले।

(१) मुस्लिम विद्रोह

उइगुर-भूमि के पूर्वी सीमान्त से मुस्लिम-जगत शुरू होता था। यद्यपि कराखिताइयो के इस्लाम-विरोधी भावों के कारण मुसलमानों में क्षोभ था, किन्तु तब भी उनकी सुसंगठित शक्ति के सामने मुल्लों की कुछ नहीं पेश जाती थी। तेरहवीं सदी के प्रारंभ में चिंगिस के आक्रमण के कारण जब मंगोलिया के घुमन्तू नैमन और मेगित भागकर इस ओर आने लगे, तो मुसलमानों का क्षोभ शक्तिशाली हो उठा। इसे शुद्ध धर्मकी लड़ाई नहीं कह जा सकता था। इसके कारण थे—कराखिताई साम्राज्य की शक्ति का ह्रास, उसके शासन का कमजोर होना, हरेक सामन्त का अपनी शक्ति बढ़ाने के लिये उनावलापन, तथा कर उगाहने वालों की मनमानी। आन्दोलन पूर्वी-तुर्किस्तान में आरंभ हुआ, जहाँ पर करलुकों के साथ गुरखान का बर्ताव बहुत बुरा था। गुरखान को पता लग गया था, कि विद्रोह हमारे सारे मुस्लिम प्रदेशों में फैलेगा।

लेकिन जब तक घुमन्तू यहां नहीं पहुँचे थे, तब तक आन्दोलन को सफलता नहीं मिली। गुरखान ने काशगर के खान के पुत्र को कैद कर रखा था, जिसे कुचुलुक ने मुक्त कर दिया। मुसलिम विद्रोह अरसलनखान अबुलमुजप्फर यूसुफ (मृ० मार्च १२०५ ई०) के शासन में आरम्भ हुआ था। कहते हैं, एक बड़ा धनी मुसलमान महमूद बाय अत्याचार से पीड़ित होकर भाग गया, जिसे नगर को घेरे में डाल कर उस पर विजय प्राप्त करते समय सोलह वर्ष बाद पकड़ा गया। इस मघर्ष में ४७ हजार मुसलमान मारे गये। कुलजा प्रदेश में मुसलमानों ने बुजार के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। बुजार ने अलमालिक नगर में तुगरल खान की पदवी धारण कर अपने को चिंगिस का सामन्त घोषित किया। लेकिन अभी चिंगिस चीन से लड़ने में लगा हुआ था, इसलिये वह पच्छिम की ओर ज्यादा ध्यान नहीं दे सकता था।

ख्वारेज्म से झगडा—कराखिताइयों ने १२०७ ई० में बुखारा पर आक्रमण किया। उस समय यहां के धनी लोग ख्वारेज्मशाह के पक्ष में थे। ख्वारेज्म शाह खिताई सेना का मुकाबिला नहीं कर सकता था। उसने मलिक सिजर से सहायता चाही, किन्तु सिजर ने सहायता न देते कहा “थाल बनाने वाले के लड़के को अपने किये का फल भोगने दो।” मलिक सिजर कई मालो तक ख्वारेज्मशाह के दरबार में बन्दी रहा। उसने बुखारा पर काफी समय तक शासन किया था और उसका बनवाया सिजर-मलिकमहल १२२० ई० के चिंगिसी अग्निकाण्ड से भी बचा रहा।

ख्वारेज्मशाह १२०८ के वसन्त में खुरासान में शान्ति स्थापित करने गया था। १२०८ ई० (६०५ हि०) में ख्वारेज्म में एक बड़ा भूकम्प आया, जिसमें शहर में दो हजार और बाहर भी बहुत में आदमी मरे, दो गांव घरती के गर्भ में चले गये। इसीके बाद १२०९ ई० में खिताई वजीर महमूद बे कर उगहाने के लिये आया।

ख्वारेज्मशाहसे झगडके कारणकी दो परंपराये है—

(१) **परंपरा—**ख्वारेज्मशाह बहुत समय तक कराखिताइयोका करद रहा। १२१० (६०७ हि०) में कर उगहानेके लिये गुरखानी वकील आया। वह तख्तपर ख्वारेज्मशाहकी बगलमें बैठ गया। मुहम्मदने नाराज होकर उसे नदीमें फेकवा दिया। कराखिताइयोंसे झगडा होना जरूरी था, इसलिए महमूदने तुरन्त जाकर बुखारा ले लिया। फिर समरकन्दके शासक उस्मान खाके पास दूत भेजकर शामसे काम लेना चाहा। उसमें सफल न होनेपर समरकन्दपर चढाई की। उस्मानका अपने मालिक गुरखानसे अच्छा सबध नहीं था। उसने गुरखानकी कन्या मागी थी। गुरखान अपनी कन्या एक मुसलमानको कैसे देता? इन्कार करनेपर उस्मान नाराज हो गया। इसलिए उसने मुहम्मद ख्वारेज्मशाहसे मेल कर लिया और उसके नामसे समरकन्दमें खुतबा और सिक्का चलवाया। ख्वारेज्मशाहने समरकन्दकी किलाबन्दी करनेका हुक्म दिया और अपनी मा तुर्कानि-खातूनके सबधी अमीर बुरतानाको उस्मानके दरबारमें अपना वकील नियुक्त किया। वहासे ख्वारेज्मशाह आगे सिर नदी पार हो अगस्त या सितम्बर रबी (१२१० ई०) में इलामिशके मैदानमें कराखिताई सेनापति तायन-कू से जाकर भिडा। पराजित तायन-कू बन्दी बनाकर ख्वारेज्म भेजा गया। मुहम्मद आसानीसे उत्तरारको भी ले समरकन्द होते ख्वारेज्म लौट गया।

ख्वारेज्मशाहकी अनुपस्थितिमें किपचक कादिर खानके बचे-खुचे लोगोंने जन्दके आसपास

के इलाकेको लूटा और उजाड़ा था, इसलिये बदला लेनेके ख्यालसे मुहम्मद ख्वारेज्ममे ज्यादा न ठहर सीधे जन्दकी ओर गया। उस्मान मुहम्मदकी कन्यासे व्याह करनेके लिये उसके साथ आया था। वह राजधानी (गुरगच) मे रुक गया। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने जन्दमे किपचकोको हराया, किन्तु इसी वक्त उसे खबर आई, कि कराखिताई सेनाने समरकन्दको घेर लिया है। वह उधर दौड़ा। पर, तबतक कराखिताई सत्तर बार आक्रमण कर चुके थे, जिनमे सिर्फ एक बार नगरवाले नगरके भीतर शरण लेनेके लिये मजबूर हुए। इधर ख्वारेज्मशाहके आनेकी खबर मिली और उधर राजकीय पूर्वी सीमान्तपर रहनेवाले नैनम कबीलेके मुखिया तथा गुरखानी दामाद कुचलुकके बगावतकी खबर भी, इसलिए कराखिताई समरकन्दवालोंसे सुलह करके लौट गये। ख्वारेज्मशाहने उनका पीछा किया। यूगाकका शासक मुसलमान था, तो भी उसने नगरको समर्पण नहीं किया। एक सेना उसके विरुद्ध भेजी गई। सेनाने नगरको दखल कर उसके शासकको ख्वारेज्मशाहके सामने पहुंचाया। उसी समय कुचलुकका दूत पहुंचा।

कुचलुक तथा मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके बीच सधि हो गई। सधिके अनुसार तै हुआ कि जो गुरखानको पहिले हराये, वह सारी तुर्क-भूमिका स्वामी हो। यदि ख्वारेज्मशाह सफल हो, तो काशगर और खोतन तक उसको मिले, यदि कुचलुक सफल हो, तो सिर-दरियासे पूर्वका देश उसका हो। गुरखानी सेनाके साथ लडनेमे ख्वारेज्मशाह असफल रहा और कुचलुक सफल। युद्ध-आरम्भके पहिले ही ख्वारेज्म प्रतिनिधि बुरताना तथा कूबदजामा प्रदेशके इस्पाहबद (माजदरानी राजकुमार) ने कराखिताइयोसे इस शर्तपर समझौता कर लिया, कि बुरतानाको ख्वारेज्म ओर इस्पाहबदको खुरासान दे दिया जाय, तो वह ख्वारेज्मशाहका साथ छोड़ देगे। गुरखानने और भी उदारता दिखलाई। युद्धके आरम्भमे ही बुरताना और इस्पाहबद रण-क्षेत्र छोड़कर भाग गये। कराखिताइयोकी वाम-पक्षीय सेना प्रतिद्वन्द्वी मुसलमानोकी दक्षिण-पक्षीय सेनासे मिश्रित हो गई। इसी तरह मुसलमानोकी वामपक्षीय सेना कराखिताइयोकी दक्षिण पक्षीय सेनासे मिश्रित हो गई। दोनो सेनाओंका केन्द्रीय भाग अस्त-व्यस्त हो गया। युद्धका कोई निश्चित परिणाम नहीं हो पाया, दोनो सेनाओने अपने शत्रुओकी छावनियों और शरणार्थियोंको लूटा। इस गडबडीमे ख्वारेज्मशाह एकाएक कुछ अनुयायियोंके साथ कराखिताइयोसे धिर गया। दुश्मनकी पोशाक पहिननेकी ख्वारेज्मशाहकी आदत थी, इसलिये वह कई दिन उसी तरह रहकर मौका पा भाग निकला और सिर-नदी के तटपर अपनी सेनासे आ मिला। उसकी सेनामे हल्ला हो गया था, कि शाह मर गया।

(२) परंपरा—दूसरे इतिहासकारने कराखिताइयोसे ख्वारेज्मशाहके झगडेका कारण इस प्रकार बतलाया है —

सुल्तान मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने दो-तीन साल तक कराखिताइयोको कर नहीं दिया। कर उगाहनेके लिये गुरखानका वजीर महमूद बेग आया। जिस वक्त वह गुरगच पहुंचा, उसी वक्त ख्वारेज्मशाह किपचकोंके ऊपर आक्रमण करने चला गया और बातचीत करनेका काम अपनी मा तुर्कान खातूनके ऊपर छोड़ दिया। रानीने सारा रुपया देकर देर करनेके लिये बटेकी ओरसे क्षमा प्रार्थना की और पूर्णतया अधीनता स्वीकार की। वजीर मुहम्मद बेगने लौट कर ख्वारेज्मशाहके गर्व करनेकी शिकायत की। इसपर गुरखानने ख्वारेज्मी दूतोंका भी सम्मान नहीं किया।

गुरखानके पूर्वी प्रदेशमें विद्रोह हो रहे थे। कुचुलुकने उनके दबानेके बहाने जाकर वहा बस गये अपनी जाति (नैमन लोगो) के उर्दूको जमा कर लिया। कुचुलुककी नीयतका पता जल्दी ही गुरखानको लग गया। उसने अपने सामन्त समरकन्दके शासक उस्मानसे सहायता मागी, लेकिन कन्या देनसे इनकार करनेके कारण उस्मान गुरखानसे नाराज हो चुका था। उसने मदद भेजनेसे इनकार कर गुरखानसे मनमुटाव किए ख्वारेज्मशाहका पक्ष ले लिया और ख्वारेज्म शाहसे मिलकर उसके नामका सिक्का और खुतवा चलवाया। इसपर गुरखान ने तीस हजार सेनाके साथ आकर समरकन्दको दखल कर लिया, लेकिन समरकन्दके खजानेको नहीं लूटा। पूरबमें कुचुलुकके विद्रोहके सफल होनेकी खबर पा गुरखानी सेना समरकन्द छोड़कर लौट गई। अब मुहम्मद ख्वारेज्मशाह समरकन्द पहुंचा। उस्मानने आगे बढ़कर उसका स्वागत किया और अपने प्रदेशको उसके हाथमें दे बह उसकी सेनामें शामिल हो गया। दोनों साथ तराज गये। सेनापति तायन-कू एक मजबूत सेनाके साथ मुकाबिला करनेके लिये तैयार था। सप्तनदमें बलाशागुनसे नातिदूर गुरखानने कुचुलुकपर विजय पाई, किन्तु उसका सेनापति तायन-कू मुसलमानोंके साथ लड़ते तराजमें बन्दी बन गया था। निश्चित हार किसी की नहीं हुई, किन्तु तायन-कू बन्दी बना। दोनों सेनाये पीछे लौट गई। कराखिताई सेनाने सेनापति विहीन हो अपने ही इलाकेको खुद लूटा। बलाशागुनके नागरिकोंको डर हुआ, कि ख्वारेज्मशाह उनके नगरकी ओर आ रहा है, इसलिये उन्होंने अपने नगरके फाटक बन्द कर लिये। वजीर महमूद और गुरखानने बहुत रोका, लेकिन उन्होंने नहीं माना। १६ दिनके मुहासिरके बाद शहरपर अधिकार हुआ और कराखिताई सेना तीन दिनों तक लूट मार करती रही। ४७ हजार नगर-निवासी मारे गये। सारी सम्पत्ति नष्ट हो गई। कारून जैसे बनी महमूदने भयभीत होकर सलाह दी, कि सरकारी खजानेको लूटो। कुचुलुक लूटनेवाली सेनाका अगुआ बन गया था। जब लूटे हुए मालको लौटानेके लिये सेनापर जोर दिया गया, तो सैनिकोंने विद्रोह कर दिया। कुचुलुकने इस मौकेसे फायदा उठाकर सैनिकोंको अपनी ओर खींच लिया। सेना द्वारा परित्यक्त गुरखान कुचुलुकके सामने आत्मसमर्पण करने गया। कुचुलुकने ऐसा करने नहीं दिया, बल्कि स्वामी और पिताके समान उसका स्वागत किया। अब सारी शक्ति कुचुलुकके हाथमें चली गई। गुरखानकी एक रानीको व्याह कर बह गुरखानको सिंहासनपर रख उसका सम्मान करता रहा। दो साल बाद गुरखान मर गया। एक रूसी इतिहासकार के मतसे दूसरी परंपरामें ही अधिक सत्यताका अंश है।

ख्वारेज्मशाहकी पराजयसे समरकन्दपर कराखिताइयोंका अधिकार हो गया, इससे जान पड़ता है कि पहिली बार विद्रोह दबा दिया गया। गुरखानने उस्मानके साथ उस समय (१२१० ई०) नरमी दिखलायी, इसी समय उस्मानको अपनी ओर पूरी तौरसे करनेके लिये गुरखानने अपनी कन्या भी व्याह दी, उसको थोड़ा कर देने के लिये कहा और समरकन्दमें अपना वकील रख दिया। उस्मान मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके विरुद्ध हो गया। जब १२१० ई० में कुचुलुकने करलुकोंकी सहायतासे सप्तनदके ऊपरी भागमें सफलता पाई थी और उजगन्दमें रक्खे गुरखानके खजानेको लूट लिया था, और गुरखानी सेनाको समरकन्द छोड़ अपने देशकी रक्षाके लिये लौट जाना पड़ा था। अब अन्तर्वेदमें फिर लड़ाईके बादल मडराने लगे। ख्वारेज्मशाह किपचकोंके ऊपर सफल अभियान करके जन्दसे लौटकर बुखारा आया, वही उससे उस्मान भी आ मिला।

इसी अभियानमें उजगन्द ख्वारेज्मशाहके हाथमें आया। जैसा कि पहिले कहा, कोई निर्णायक विजय नहीं हुई थी, इसलिये ख्वारेज्मशाह कराखिताइयोका पीछा नहीं कर सका और न सन्तानदके अपने धर्मभाइयो की कोई मदद कर सका। तो भी इस युद्धके कारण मुसलमानोंमें ख्वारेज्मशाहकी इज्जत बहुत बढ गई। सरकारी कागजोंमें उसे “द्वितीय सिकन्दर” लिखा जाने लगा और उसने अपने को “सुल्तान सज्जर”के नामसे मशहूर होने दिया।

६. कुचुलुक (१२१०-१२१८ ई०)

मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने जब कराखिताइयोपर आक्रमण किया, उसवक्त उजगन्दका शासक जलालुद्दीन कादिर खान (उलुक सुल्तान) था। कुचुलुकने गुरखानको अपने हाथमें कर काशगरी खानके पुत्र अरसलनखान अबुलफतह मुहम्मदको मुक्त कर दिया था। मालूम होता है, कुचुलुकका कृपापात्र होनेके ही कारण काशगरियोंने अबुलफतहको १२१० (६०७ हि०) में मार डाला। यह कह ही चुके हैं, कि गुरखानके जीवनमें कुचुलुक राजसिंहासनपर नहीं बैठा। साम्राज्यी दबदबके सभी चिह्नोंको उसने गुरखानके लिये रखा। विशेष अवसरोपर गुरखान जब सिंहासनपर बैठता, तो उसके दरबारियोंकी तरह कुचुलुक भी सामने खड़ा रहता। जब कुचुलुकने गुरखानके सारे राज्यको अपने हाथमें ले लिया, तो मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने कुचुलुकसे माग की—गुरखानने मुझे अपनी कन्या तमगाच खातूनको आहने, अपने सारे खजानेको दहेजमें देने और अपने पास सिर्फ दूरके प्रदेशोंको रखनेका वचन दिया है। लेकिन कुचुलुक ऐसे वचन-दानको कब मानने वाला था? उसका ध्यान सबसे पहिले उस मुसलिम आन्दोलनकी ओर गया, जो कि कराखिताइयोके राज्यमें फैल रहा था। इसी आन्दोलनके अन्तिम अवशेषके रूपमें पहिलेके घोडाचोर डाकू बुजार (ओजार) ने कुलजा प्रदेशमें अपना स्वतंत्र राज्य कायम कर लिया था। कुचुलुकने उसके देशपर अधिकार कर लिया, और १२११ से १२१३ ई० तक करलुकोकी गोश-मालीके लिये पूर्वी तुर्किस्तानको लूटता-बर्बाद करता रहा। देशमें अकाल पड गया। मुहम्मदकी सेना विश्वालिफ पहुची, लेकिन लोगोंने डरके मारे कुचुलुककी अधीनता स्वीकार की। पूर्वी तुर्किस्तानपर विजय प्राप्त कर मुसलिम-आन्दोलनकी जड़ से खतम करते कुचुलुकने वहां मुसलमानोंपर बहुत अत्याचार करना शुरू किया। मुहम्मद ख्वारेज्मशाह काशगर और खोतनमें अपने धर्म-भाइयोंकी कोई मदद नहीं कर सका, यही नहीं अन्तर्वेदके उत्तरी इलाकोंकी भी वह रक्षा नहीं कर सका। १२१४ ई० की गर्मियोंमें समरकन्दके ऊपर कुचुलुकके आक्रमणका भारी भय था। ख्वारेज्मशाहने अपनेको असमर्थ पा अन्तमें इस्फिजाब, शाश, फरगाना और काशानके लोगोंको देश छोडकर दक्षिण-पश्चिममें चले आनेका हुकुम दिया, जिसमें वह कुचुलुकके हाथोंमें न पडे। सिर नदीके ऊपर वाले फरगाना प्रदेशको भी हाथसे जाते देख, उसे भी उजाड देनेका हुकुम दिया। घुमन्तुओंके उस सरदारके मारे, मध्य-एशियाके एक अत्यन्त शक्तिशाली शासककी यह स्थिति थी जिसे कि बिना अधिक कठिनाईके १२१८ ई० में मंगोलोंके एक सेनापतिने खतम कर दिया।

एक तीसरी परंपरा है . कि कराखिताईसेनाने गुरखानके खजानेको मागा था, जिसके न देने पर सेनामें विद्रोह हो गया। यह देख गुरखानका साथ छोडकर कुचुलुक विद्रोहियोंके साथ हो गया और गुरखानको पकडकर उसे ही तखतपर तब तक रहने दिया, जब तक कि दो साल बाद

(१२१२ ई० मे) वह मर नहीं गया। इससे एक साल पहिले ही (१२११ ई० मे) चिंगिसकी सेना हुविलेइ नोयनके आधीन पूर्वी सप्तनदमे पहुँची। मंगोल जानते थे कि हमारा शत्रु नैमन राज-कुमार गुरखानियोका दामाद बनकर अपनी शक्ति बढ़ा रहा है, इसलिए वह उसका पीछा छोड़नेके लिये तैयार नहीं थे। यही खबर पाकर करलुक बुजार अरसलन खानने अपनी राजधानी (कायालिक) में कराखिताई प्रतिनिधिको मरवाकर अपने को चिंगिसके अधीन घोषित किया।

(१) उस्मान खा से भगडा

ताजुद्दीन विलगा खान उस्मान खानका चचेरा भाई था, जो पहिले कराखिताइयोकी ओरमे उत्तरारका शासक रह चुका था और वही पीछे उसने ख्वारेज्मशाहकी अधीनता स्वीकार की। ख्वारेज्मशाहने उसे वहामे निर्वासित कर दिया। पीछे विलगाखान एक साल नसा नगरमे रह अपनी उदारताके कारण बहुत जनप्रिय हो गया। इससे डरकर ख्वारेज्मशाहने जल्लाद भेजकर उसका सिर कटवा मगवाया। उस्मानको नजदीक लानेके लिये ख्वारेज्मशाह उसे अपना दामाद बनानेके लिये ख्वारेज्म ले गया था। तुर्कान खातूनने तुर्कोंकी प्रथाका बहाना करके एक साल तक उस्मानको वहा रहनेके लिये कहा। १२११ के वसन्तके अभियानमे समरकन्दियोकी शान्त देखकर उस्मानको सपत्नीक समरकन्द भेज दिया गया। ख्वारेज्मशाहके साथ उस्मानका तंजर्बी अच्छा नहीं था, इसलिए उसने कराखिताइयोसे फिर सबध जोड़ना चाहा। उत्तरी सप्तनदमे उसी वक्त मंगोल सेनापति हुविले (कुबिले) नोयनके सामने वहाके खानने अधीनता स्वीकार की थी। कराखिताई शासक मार डाला गया था, तो भी उस्मानने ख्वारेज्मशाहके मुसलिम जुयेकी जगह काफिरोके जुयेको उठाना ही पसन्द किया, जिसमे समरकन्दके लोग भी उसके साथ थे। ख्वारेज्मशाहको इस बातका पता लगा, कि उस्मान कराखिताई रानीके पक्षमे है और ख्वारेज्मी रानीके साथ बुरा बर्ताव कर रहा है। यही नहीं १२१२ ई० मे उस्मानकी आज्ञासे समरकन्दियोने विद्रोह कर वहा रहनेवाले सारे ख्वारेज्मियोको मार डाला। उस्मानकी आज्ञासे मरे हुए ख्वारेज्मियोके शरीरको दो टूक करके बाजारमे कसाइयोंके मासकी तरह लटका दिया गया था। ख्वारेज्म राजकन्याने जान बचानेके लिये अपनेको किलेमे बन्द कर लिया। उस्मानने मुश्किलसे उसे जीवित रहने दिया। इसका बदला लेनेके लिये ख्वारेज्मशाहने अपनी राजधानीमे बसते सभी विदेशियो और समरकन्दियोको मार डालना चाहा, पर उसकी मा तुर्कान खातूनने उसे रोका। ख्वारेज्मशाहने समरकन्द पर चढ़ाई की और जल्दी ही नगरको आत्मसमर्पण करना पडा। उस्मानने तलवार और पारचा (वस्त्र) ले ख्वारेज्मशाहके सामने उपस्थित हो पूर्ण अधीनता स्वीकार की। तीन दिन तक समरकन्द शहरको लूटा गया। केवल विदेशियोके मुहल्ले ही इस लूटसे बचे। सैयदो, इमामो और आलिमोने बड़ी मिन्नत की, तब जाकर लूट बन्द हुई। ख्वारेज्मशाहने उस्मानको क्षमा कर देना चाहा, लेकिन उस्मानकी ख्वारेज्मी रानी (मुहम्मदशाहकी पुत्री) के हठके कारण दूसरी रात उसे कत्ल करवा देना पडा। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने फरगाना और तुर्क-भूमिके अमीरोके पास अधीनता स्वीकार करनके लिय दूत भेजे। कुचुलुककी गति-विधि रोकनेके लिये उसने इस्फजाबमे एक सेना रखी। अबसे समरकन्द ही उसकी राजधानी सा बन गया। उसने वहाँ एक मस्जिद बनवाई और एक महल बनानेका काम भी शुरू कर दिया।

कुचुलुकमे शासक और सैनिकके बहुतसे गुण थे, लेकिन जहा तक मुसलमानोका सबध था,

वह उन पर किसी तरहकी दया दिखानेके लिये तैयार नहीं था। इसके ही कारण उसने सारे मध्य-एशियाके मुसलमानोंको अपना दुश्मन बना लिया और इसीसे फायदा उठाकर मुहम्मद ख्वारेज्मशाह मुसलमानोंका नेता और विजेता बन गया। इलीउपत्यकामें बुजारको हराकर कुचुलुकने उसकी राजधानी (अल्मालिक) को घेर लिया। लोग अपने शहरके लिये बड़ी बहादुरीसे लड़े। जब उसके पुराने शत्रु मंगोल वहां पहुंचे, तो कुचुलुक ने वहांसे हटते हुये बुजारको मरवा डाला। मंगोल सेनापति जेबे नोयनने शहरमें प्रवेशकर बुजारके पुत्र सुकनाग तगिनको गद्दीपर बिठाया और उसकी लडकी उलुकू खातूनको चिंगिसके अन्त पुरके लिये भेज दिया। मंगोलोंने सुकनाग तगिनसे संधि की। १२२१ ई० में चीन-सम्राट्का प्रतिनिधि अब भी बुजारकी राजधानी अल्मालिकमें रहता था, जिसका काम था—(१) जन-गणना करना, (२) लोगोंको सैनिक सेवाके लिये भरती करना, (३) डाकका यातायात ठीक रखना, (४) कर उगाहना, (५) दरबारमें भेटके पहुंचानेका प्रबन्ध करना। इस प्रकार वह सैनिक नेता और कर-उगाहक दोनों ही था। मंगोलोंको मध्य-एशियाके सम्य प्रदेशमें पहिले पहल यही अपने दारुखची (राज-प्रतिनिधि) नियुक्त करनेकी अवश्यकता पड़ी। जब मंगोल सेना वहां पहुंची, तो काशान और आकसीकत के गुरखानी शामक इस्माईलने नगरके बुजुर्गोंके साथ मंगोलोंके पास आत्मसमर्पण किया।

जेबे नोयनने इसकी सूचना चिंगिसको दी। हुकुम आया, कि इस्माईलको हराबलका पथ-प्रदर्शक बना कुचुलुकके विरुद्ध आगे बढ़ो। १२१९ ई० में बीस हजार मंगोल कुल्जाके रास्ते मत्तनदमें पहुंचे। बलाशागुन बिना प्रतिरोधके उनके हाथमें चला गया। उन्होंने उसका नाम बदल कर गोवालिग (सुनगर) रख दिया। फिर काशगरमें पहुंचकर जेबेने घोषणा की, कि सभी अपने-अपने धर्मके अनुसार स्वतंत्रता-पूर्वक पूजा-पाठ कर सकते हैं। मंगोलोंने नगरको नहीं लूटा, केवल कुचुलुकके बारेमें खोज-परताल की। काशगरी लोग मंगोलोंके आगमनको अल्लाकी दया कहते थे। कुचुलुक बिना लड़े भागा और सिरिकुलमें मारा गया। जैवोंको गुरखानकी अपार संपत्ति हाथ लगी। उसने हजार श्वेतमुख घोड़े चिंगिसके पास भेजे। जिस शत्रुने वर्षोंसे ख्वारेज्मशाहकी नींद हराम कर दी थी, उसे जेबेने इतनी आसानीसे खतम कर दिया। धार्मिक स्वतंत्रता देकर मंगोलोंने कुचुलुकके अत्याचारके कारण क्षुब्ध और पीड़ित मुसलमानोंको अपनी ओर कर लिया था। अब मंगोलोंके खिलाफ अपने युद्धको ख्वारेज्मशाह धर्मयुद्ध का नाम नहीं दे सकता था। मंगोलोंने तो मुसलमानोंको धार्मिक स्वतंत्रता दी, और ख्वारेज्मशाहने कई मुसलमान दूतोंको जानसे मार डाला।

उत्तरापथमें तेरहवीं सदीके प्रथम पाद में मंगोलोंके रूपमें एक नयी शक्ति आ पहुंची, जिसने चीनमें लेकर मिर-दरियाके तट तक एक विशाल साम्राज्य कायम कर दिया।

(२) मंगोलोंसे झड़प—

जैसा कि पहिले कहा, किपचकोंके साथ की लड़ाईमें मुहम्मद ख्वारेज्मशाह ज्यादा सफल रहा। शिकनाग ख्वारेज्मके राज्यमें मिला लिया गया। जन्दसे उत्तर बढ़कर मुहम्मदने किरगिज-महभूमिके किपचकों पर कई अभियान भेजे। ऐसे ही एक अभियानमें १२१६ ई० में संयोगवश ख्वारेज्मी सेनाकी टक्कर चिंगिसकी सेनाकी एक टुकड़ीसे हुई। तुर्गई प्रान्तमें

ख्वारेज्मशाहने जब १२१५ ई० में आक्रमण किया, तो उसे खबर लगी, कि पराजित मेर्गित तक्तू खानके नेतृत्वमें मंगोलियासे भागते आ रहे हैं, जिनका पीछा करते मंगोल कडली (किपचक)-भूमिमें आ गये हैं। यह खबर सुनकर समरकन्दसे बुखारा और जन्द होते मुहम्मदशाहने उधरकी ओर प्रस्थान किया। वहाँ पहुँचने पर पता लगा, कि मेर्गित ही नहीं मंगोल भी आ गये हैं। ख्वारेज्मशाह समरकन्द लौट साठ हजारकी बड़ी सेना लेकर इरगिज नदीके तटपर पहुँचा। नदीकी धारमें पिघलती बरफका जोर था, इसलिए उसे कुछ समयके लिये रुक जाना पड़ा। जब नदी बरफ-मुक्त हो गयी, तो नदी पार मेर्गितोंके ऊपर पड़कर उमने उन्हें नष्ट कर दिया। फिर कैली और किमाज नदियोंके बीच पहुँचा। एक घायल मुसलमानने बतलाया, कि आज ही मेर्गितों और मंगोलोंकी भयंकर लड़ाई हुई है। मुहम्मदने विजेता मंगोलोंका पीछा किया और दूसरे दिन सबेरे उन्हें जा पकड़ा। इस टुकड़ीका नेता जूजी और दूसरे मंगोल सरदार थे। वह ख्वारेज्मशाहसे लड़ना नहीं चाहते थे। उन्होंने कहा कि हम केवल मेर्गितोंके विरुद्ध भेजे गये हैं, हमें दूसरे से लड़नेका हुक्म नहीं है। ख्वारेज्मशाहने जवाब दिया—“हम सभी काफ़िरोको अपना शत्रु समझते हैं।” उसने मंगोलोंको लड़नेके लिये मजबूर किया। युद्धका कोई फैसला नहीं हुआ। मुसलमानोंके दक्षिण-पक्षके सेनापति शाहजादा जलालुद्दीनने बड़ी बहादुरीसे मुसलमानोंको हारनेसे बचाया। दूसरे दिन फिर लड़नेका निश्चय था, लेकिन उस दिन अंधेरेमें ही जलती आग छोटकर मंगोल भाग गये। लड़ाईमें मंगोलोंने इतनी वीरता दिखाई थी, कि मुहम्मदको उनसे फिर खुले मैदानमें लड़नेकी हिम्मत नहीं हुई।

स्रोत-ग्रन्थ

- 1 A thousand years of Tatars (Parker)
- 2 A short History of Chinese Civilisation (Tsu Chi, London 1945)
३. ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्या (व० बरतोल्द, वेर्नी १८९८)

भाग ढ

दक्षिणापथ (८९२-१२२० ई०)

अध्याय १

सामानी (८६२-६६६ ई०)

उद्गम—

अब्बासी राज्यपाल असद अब्दुल्ला-पुत्र कसरी (७२३—७३५—७३७) के शासन-काल में सासानी वीर बहराम चोबीन के वशज सामान ने अपने नगर से वचित किये जाने पर मेवं में जा असद से मदद मागी और उस की सहायता से वह फिर सामान-खुदात (सामान का शासक) बन गया। मुस्लिम शासक के प्रति कृतज्ञता दिखलाते हुए सामान ने अपना जर्थुस्ती धर्म छोड़ इस्लाम स्वीकार किया और अपने सरक्षक के नाम पर अपने पुत्र का नाम असद रक्खा। असद के चारो पुत्रो ने समरकन्द में रफी लैस-पुत्र के विद्रोह को दमन करते समय खलीफा हारून रशीद की बडी सेवा की। इसके लिये खलीफाने खुरामान के राज्यपाल गस्सान अब्बाद-पुत्र को लिखा, कि इन चारो भाइयो को एक-एक नगर का शासक बना दिया जाय। इस प्रकार ८१७ (२०२ हि०) से असद-पुत्रो में से नूह को समरकन्द, अहमद को फर्गाना, यहिया को शाश-उश्रूसना और डलियास को हिरात का अमीर बना दिया गया। ८२० ई० में गस्सान के उत्तराधिकारी ताहिर ने भी उन्हें अपने पदोपर रहने दिया। यही चारो भाई स्वतंत्र सामानी राजवंश के संस्थापक हैं। इस वंश में निम्न अमीर हुये—

१. नस्र अहमद-पुत्र	८७५-९२
२. इस्माइल अहमद-पुत्र	८९३-९०७
३. अहमद इस्माइल-पुत्र	९०७-१४
४. नस्र II अहमद-पुत्र	९१४-४२
५. नूह I नस्र I-पुत्र	९४३-५४
६. अब्दुल् मलिक II नूह-पुत्र	९५४-६१
७. नस्र III अब्दुलमलिक-पुत्र	९६१
८. मसूर I नूह-पुत्र	९६१-७६
९. नूह II मसूर-पुत्र	९७६-९७
१०. मसूर II नूह II-पुत्र	९९७-९९
११. अब्दुल मलिक II नूह II-पुत्र	९९९-
१२. मुन्तसिर नूह II-पुत्र	

१. नस्र^१ (८७५-९२ ई०)

याकूब लैस-पुत्र ने ताहिरि वंश को जिस वक्त समाप्त किया, उस वक्त समरकन्द का अमीर (शासक) नस्र अहमद-पुत्र था। ताहिरियों के पतन के बाद खलीफा मोतमिद (८७०-९२) के भाई मुवफ्फक ने नस्र को सारे अन्तर्वेद का शासक बनाने का नियुक्ति-पत्र (अहद) भेजा। इसके शासनमें वक्षु तट से सुदूर पूर्व तक का देश था। नस्र खुरासानसे कब स्वतंत्र हुआ, इसका पता नहीं है। ८७४ ई० (२६१ हि०) में नस्र अपने भाई इस्माईल की सहायता से अन्तर्वेद का शासन चलाता रहा। खुनबे में दोनों भाइयों का नाम था, किन्तु याकूब लैस-पुत्र का नाम नहीं था। समरकन्द से नस्र ने अपने भाई इस्माईल को बुखारा का अमीर बनाकर भेजा। उस समय राजनीतिक अशान्ति और गुडागर्दी के कारण बुखारा की बुरी दशा थी। इस्माईल ने अपने को योग्य सेनापति और शासक सिद्ध किया और अपनी न्यायशीलता से वह बहुत जल्दी जनप्रिय हो गया। डाकुओं और गुंडों का उसने बड़ी निर्दयता के साथ उच्छेद किया, केवल रामातीन और पैकद के बीच चार हजार बदमाशों को मरवाया। लेकिन बड़ा भाई कान का कच्चा था। उसे लोगों ने भडका दिया, कि इस्माईल राज्य को अपने हाथ में करना चाहता है। नस्र ने ८८५ ई० में इस्माईल के विरुद्ध चढ़ाई कर दी और मदद के लिये अपने मित्र खुरासान के शासक रफी हरममा-पुत्र को भी बुला भेजा। नस्र ने बुखारा शहर के अधिक भाग पर अधिकार कर रसद रोक दी। रफी ने आकर वहाँ की अवस्था देख कर कहा—मैं लड़ने नहीं बल्कि दोनों भाइयों में मेल कराने आया हूँ। उसने (८८६ ई० में) सुलह करवा दी। इस्माईल को बुखारा का अमीर और इस्माईल को आमिल-खराज (तहसीलदार) बनाया गया।

इस्माईल और इस्माईल दोनों मेरे विरुद्ध मिल गये हैं, यह सन्देश कर नस्र ने फर्गाना से सेना बुलाकर ८८७ ई० में फिर आक्रमण किया। इस्माईल ने भी ख्वारेज्म में सैनिक तैयारी की। मामूली झड़प के बाद ८८८ (२७५ हि० के अन्त) में उसने नस्र को हराकर बंदी बना लिया, पर अपने पराजित भाई के साथ बहुत ही सम्मान-पूर्ण वत्तिव किया और मुक्त करके उसे समरकन्द भेज दिया। तबसे अपनी मृत्यु (२१ अगस्त ८९२ ई०) तक नस्र शान्ति-पूर्वक शासन करता रहा।

२. इस्माईल^२ अहमद-पुत्र (८९२-९०७ ई०)

इस्माईल अहमद-पुत्र ८४९ ई० में फर्गाना में पैदा हुआ था। बड़े भाई नस्र ने उसे ८७४ ई० में बुखारा भेजा। ताहिरियों के पतन के बाद चारों ओर अराजकता फैली हुई थी। उस वक्त वहाँ वह कैसे शान्ति स्थापित करने में सफल हुआ, इसे हम बतला चुके हैं। ८७४ ई० के आरम्भ में हुसेन ताहिर-पुत्र ने ख्वारेज्म से बुखारा पर चढ़ाई की। पाँच दिन के संघर्ष के बाद नागरिकों ने कुछ शर्तों पर आत्मसमर्पण किया। हुसेन ने उन्हें तोड़ दिया, जिसपर फिर विद्रोह हुआ। हुसैन डर के मारे किले में बन्द हो गया और रात के वक्त नगर से वसूल किये हुये दिरहमों

^१Turkistan Down to the Mongol Invasion (w Bartold) pp 129

^२Turkistan . pp 135, 136, Heart of Asia p. 74

को लिये बिना ही भाग गया। इस जमा किये हुये धन को विद्रोहियों ने आपस में बांट लिया। कहावत थी, बुखारा के बहुत से परिवार उसी रात की कमाई से धनी बन गये। बुखारा में फिर भी शान्ति स्थापित नहीं हुई। लोगो ने अबूहब्स-पुत्र फकीर अब्दुल्ला की सलाह से नस्र अहमद-पुत्र से सहायता मागी। उसकी सहायता से इस्माईल ने आकर अमीर हुसैन मुहम्मद-पुत्र ख्वारेज्म के उपद्रव को शान्त किया। इस्माईल अब बुखारा का अमीर (शासक) बना और हुसैन मुहम्मद-पुत्र उसका सहायक। २५ जून ८७४ शुक्रवार को बुखारा में याकूब लैस-पुत्र की जगह नस्र अहमद-पुत्र के नाम से खुतबा पढ़ा गया। चंद ही दिनों बाद इस्माईल ने बुखारा में दाखिल हो शर्तें भग कर खारिजी नेता हुसैन को कैद कर लिया—खारिजी एक असनातनी मुसलिम धार्मिक संप्रदाय था। इस्माईल के और भी दुश्मन थे, खारिजी तो थे ही। उसकी सफलता के कारण उसका भाई नस्र भी सदेह करने लगा। हुसैन ताहिरपुत्र भी षड्यंत्र कर रहा था, बुखारा के कुछ धनी मानी तथा गुंडे भी बिगड़े हुए थे। किसानों का जिस तरह शोषण हो रहा था, उसके कारण बहुत से किसान ढाकू बनने के लिये मजबूर हो गये और केवल पैकन्द और रामातान के बीच उनकी सख्या चार हजार थी, किन्तु जमीन के मालिक और उच्चवर्ग इस्माईल के साथ था, जिन्हीं के बलपर इस्माईल ने शान्तिव्यवस्था स्थापित की। सबसे अधिक प्रभावशाली बुखारा-खुदात अबू-मुहम्मद और धनी सेठ अबू-हाशिम यस्सारी थे। इन्हें इस्माईल ने अपनी ओर से दूत बनाकर समरकन्द भेजा और चुपके से अपने भाई नस्र को लिख दिया, कि इन्हें जेल में डाल दे। पीछे छुड़वा मगाकर उनपर अपनी कृपा प्रकट करते रुपया पैसा दे अपनी ओर करके भाई के खिलाफ कर दिया। इस्माईल ने खतरा पैदा करा दिया था, इसलिये, जैसा कि पहिले कहा, ८८८ ई० में भाई को उससे लड़ने के लिये मजबूर होना पड़ा। पैकन्द के नगर वासियों ने अमीर नस्र का स्वागत किया।

नस्र के मरने पर उसका अनुज इस्माईल अन्तर्वेद और ख्वारेज्म का स्वामी बना, किन्तु वह राजधानी को बुखारा से हटाकर समरकन्द नहीं ले गया। अब्बासी खलीफा अब नाममात्र के खलीफा थे। उनका काम था भेंट और तोहफे लेकर पदविया और दर्जे प्रदान करना। खलीफा मोतजिद (८९२-९०२) ने इस्माईल के लिये नियुक्ति-पत्र भेजा। इस्माईल अपने को कट्टर मुसलमान साबित करना चाहता था, इसलिये वह उत्तर के काफ़िरो के खिलाफ धर्मयुद्ध (गजा) छेड़कर गाजी बने बिना कैसे रह सकता था? उसने सिर-दरिया के उत्तर ताराज (औलिया-आता से प्राय ३० मील दक्षिण) पर आक्रमण किया। वहां के तुर्क बौद्धों और ईसाइयों ने काफ़ी मुकाबिला किया, किन्तु भीतर फूट के कारण तुर्क इस्माईल की सेना का मुकाबिला नहीं कर सके। शासक और देहकानो (ग्रामपतियों) ने इस्लाम स्वीकार किया। ताराज नगर के फाटक के खुलते ही इस्माईल भीतर घुसकर तुरन्त प्रधान गिरजे में पहुंचा और उसे मस्जिद बना खलीफा के नाम से वहां नमाज अदा की। लूट की अपार संपत्ति के साथ वह बुखारा लौटा। यह कह आये हैं, कि सफ़फ़ारी अमीर अम्रू लैस-पुत्र की आखे अन्तर्वेद पर गड़ी थी। ९०० (२८८ हि०) में इस्माईल ने अम्रू के खिलाफ अभियान कर वक्षु पार हो बलख को घेर लिया। नगर के साथ-साथ अम्रू भी उसके हाथ में आया। अम्रू को इस्माईल ने खलीफा के पास बगदाद भेज दिया। खुश होकर खलीफा ने इस्माईल सामानी को खुरासान, तुर्किस्तान, अन्तर्वेद, सिन्ध-हिन्द और जुरजान का वली (क्षत्रप) बना दिया। इस्माईल का शासन अपने शान्ति के लिये

बड़ा ही शान्तिपूर्ण था। सिन्ध प्रायः दो सदियों पहिले मुसलमानों के हाथ में चला गया था, इस्माईल अब उसका (भारत के एक भाग का) भी स्वामी था। उसका शासन अच्छा था। उसने हर नगर के पृथक् पृथक् अमीर (शासक) नियुक्त किये थे। इस शान्ति से लाभ उठा उसने गाजी का कर्तव्य पालन करते उत्तर के काफिर तुर्कों पर आक्रमण करना जारी रखा। अपने अन्तिम अभियान में वह हजरत तुर्किस्तान नगर पर चढ़ दौड़ा और तुर्कों को हराकर उनको वहां से खदेड़ दिया तथा लूट की अपार संपत्ति के साथ वह बुखारा लौटा। उसके शासन के अन्तिम चार सालों में बुखारा नगर शान्तिपूर्ण ही नहीं बल्कि बहुत ही वैभवशाली था। नगर की संपत्ति को बढ़ाने तथा उसे अनेक इमारतों से अलंकृत करने में इस्माईल का बड़ा हाथ था। यद्यपि बुखारा ने इससे पहिले ही एक मुसलिम-केन्द्र का रूप ले लिया था, लेकिन बुखारा को बुखारा-शरीफ बनाकर उसे इस्लामिक संस्कृति और विद्या का महान् केन्द्र बनाना बहुत कुछ इस्माईल का काम था। अब भी इस्माईल की बनवाई कुछ इमारतें वहां मौजूद हैं। बुखारा ने पूरबका बगदाद वन अनेक शताब्दियों के लिये मध्यएशिया ही नहीं सारे पूर्वी इस्लामिक जगत की काशी का रूप लिया। वड़े से बड़े धर्मशास्त्री, कवि और दार्शनिक यहां पैदा हुए। यहां के इतिहासकारों ने अपने और अपने से पहिले के इतिहास पर सुंदर ग्रंथ लिखे। बुखारा उस समय एक ऐसे राज्य की राजधानी थी, जिसमें मेर्व, नेशापोर, रे (तेहरान), आमूल, हिरात, बलख और मुल्तान जैसे महान् नगर थे। इस्माईल ९०७ ई० में मरा। उसके बाद उसका पुत्र अहमद गद्दी पर बैठा।

३. अहमद इस्माईल-पुत्र (९०७-९१४ ई०)

अहमद को अपने बाप का समृद्ध और सुशासित राज्य मिला, लेकिन इसी समय ईरान के पश्चिमी भाग पर दैलमी वंश का शासन स्थापित हुआ, जो धीरे धीरे सारे ईरान पर अधिकार करने की कोशिश कर रहा था, जिसके कारण सामानियों के पश्चिमी प्रदेशों को खतरा पैदा हो गया। सामानी राज्य में उस समय मंत्रियों का अधिक जोर था, जिनमें अधिकांश तुर्क थे, सेना के अधिकारियों में भी वही अधिक थे। अहमद ने अपने को अधिक पक्का मुसलमान साबित करने के लिये बीच में लोक-भाषा (पारसी)—जो राजभाषा बन गई थी, को हटाकर फिर अरबी को राजभाषा बना दिया। उसके सात वर्ष के शासन में सामानी वंश का प्रभुत्व बढ़ने की जगह घटता ही गया और वह अपने आस-पास के लोगों में भी इतना अप्रिय हो गया, कि २३ जनवरी ९१४ ई० को अपने ही गुलामों ने उसे मार डाला। इसके समय में सबसे बड़ा इस्लामिक धर्मशास्त्री (फकीह) अब्दुल्ला बुखारी ८०९-९१६ ई० में मौजूद था, जिसकी हदीस जामे-अस-सहीह (सही बुखारी) आज भी मुसलमानों में बहुत प्रामाणिक मानी जाती है। इसमें अब्दुल्ला ने १६ साल के घोर परिश्रम के बाद पैगम्बर (मुहम्मद) के वचनों और आचारों को ६ लाख परम्पराओं द्वारा संहत किया। फारसी का प्रथम और महान् कवि अबुलहसन रूदकी इसी समय हुआ था, जिसकी सरस कविताएं आज भी मौजूद हैं। इस्लामिक जगत के महान् दार्शनिक फारबी का भी यही काल है।

फारबी^१ (८७०-९५० ई०)—बगदादी काल में विदेशी भाषाओं से बहुत से दर्शन

^१ दर्शनदिग्दर्शन (राहुल सांकृत्यायन) पृ० ११३-१२४

ग्रथ अरबी भाषा में अनुवादित हुए, यह हम कह आये हैं। अब इस्लामिक जगत ने स्वयं-दार्शनिक पैदा करने शुरू किये। फाराबी उनमें प्रधान था। किन्दी बगदादी केन्द्र का स्वतंत्र दार्शनिक था, तो फाराबी और बू-अली सेना सामानी काल की देन हैं। फाराबी का असली नाम था अबू-नस्र मुहम्मद-पुत्र तर्खन-पुत्र उजलक-पुत्र अल्फाराबी (फाराब-निवासी)। फाराबी का जन्म फाराब जिले के वासिज नामक स्थान में हुआ था। वासिज में एक छोटा सा किला था, जिसका किलेदार अबूनस्र का बाप मुहम्मद था। बाप, दादो के नाम से मालूम होता है, कि फाराबी तुर्क था। यह कहने की आवश्यकता नहीं, कि अभी अरबों तथा सामानियों के पूरा प्रयत्न करने पर भी सारा मध्यएशिया मुसलमान नहीं हुआ था। बौद्ध, मानी या नेस्तोरी विचारों का भी वहां प्रभाव था। १५० वर्षों से इस्लाम मध्यएशिया पर पूर्ण विजय प्राप्त करने की कोशिश कर रहा था, लेकिन सिर-दरिया से थोड़े ही दूर पर अवस्थित ताराज इस्माईल के विजय के पहिले इस्लाम से अछूता था। फाराबी के स्वतंत्र विचार उसकी जन्मभूमि के वातावरण में मौजूद थे। संभवतः फाराबी की शिक्षा अपनी जन्मभूमि के बुखारा या समरकन्द जैसे नगरों में हुई थी। उसने अपनी शिक्षा को तब तक समाप्त नहीं समझा, जब तक कि बगदाद के एक ईसाई विद्वान् योहन हैलान-पुत्र के चरणों में नहीं बैठा। फाराबी ने दर्शन के अतिरिक्त साहित्य, गणित, ज्योतिष और वैद्यक का भी अध्ययन किया था।

दर्शन पर तो उसने अपनी कलम चलाई ही, संगीत पर भी उसने एक पुस्तक लिखी। कहा जाता है, फाराबी सत्तर भाषाओं का पंडित था। तुर्की तो उसकी मातृ-भाषा ही थी। फारसी उसकी जन्मभूमि की भाषा थी। अरबी इस्लाम की जबान ठहरी। इनके अतिरिक्त सुरियानी, इब्रानी, यूनानी आदि भाषाओं से भी उसे काम पडा था। शिक्षा समाप्त करने के बाद भी फाराबी बहुत समय तक बगदाद में रहा। उसके बाद वह हलब (अलप्पो) के सामन्त सैफुद्दौला के विशेष प्रेम से वहां रहने लगा। फाराबी की रहन-सहन बौद्ध भिक्षुओं की सी थी। वह शान्त और एकान्त जीवन को बहुत पसन्द करता था। अब इस्लाम में सूफी अपने योग-दर्शन-प्रेम और स्वतंत्र-विचारों के लिये मशहूर होने लगे थे। फाराबी सूफियों की पोशाक में रहता। उसपर यूनानी सोफिस्तों और बौद्ध भिक्षुओं के जीवन का बहुत अधिक प्रभाव था। दमिश्क गया था, वही ८० साल की उम्र में दिसम्बर ९५० ई० में उसका देहान्त हुआ। हलब के सामन्त सैफुद्दौला ने सूफी पोशाक पहनकर फाराबी की कब्र पर फातिहा पढा। फाराबी और बू-अली सेना जैसे विचारक किसी भी देश के गौरव हैं। जन्मभूमि (अन्तर्वेद) ने उनके जीवन में उनका उतना सम्मान नहीं किया, किन्तु सोवियत उजबेकिस्तान और ताजकिस्तान अपने इन महान् रत्नों की अब कदर कर रहे हैं। उनके ग्रंथों की खोज हो रही है, उन पर विद्वान् डाक्टर-उपाधि के लिये निबन्ध लिख रहे हैं। उनकी ग्रन्थावलिया छप रही हैं। कवि उनकी गौरव-गाथाओं पर काव्य लिख रहे हैं।

यह हमें मालूम है, कि यूरोप ने यूनान के महान् दार्शनिकों—सुकरात, प्लातोन, अरस्ता तिल—के साथ सबंध स्थापित करने और प्रेरणा लेने में अरबी विद्वानों के उपकार को मुक्त कंठ से स्वीकार किया है। यदि अरब अनुवादकों और विचारकों ने अपनी कलम न उठाई होती, तो शायद हम यूनान के गंभीर दर्शन को आज पा भी नहीं सकते। यूरोप के पुनर्जागरण में यूनान के प्राचीन दार्शनिकों का बहुत बड़ा हाथ है। फाराबी अरस्तू के ग्रंथों का महान् भाष्यकार

है। उसके भाष्य और ग्रंथ इतने महत्वपूर्ण समझे गये, कि विद्वानों ने उसे द्वितीय अरस्तातिल और "द्वितीय आचार्य" (हकीम मानी) का नाम दिया। अरस्तू को पुनरुज्जीवित करने में फाराबी की सेवायें अमूल्य हैं। फाराबी ने अपनी खोजों से अरस्तू के ग्रंथों की जो सख्या और क्रम निश्चित किया था, उसे आज भी वैसे ही माना जाता है—फाराबी ने अरस्तू के नाम पर कुछ दूसरी पुस्तकों भी शामिल कर दी। उसने अरस्तू के तर्कशास्त्र के ८, विज्ञान के ८, अतिभौतिक, आचार, राजनीति आदि विषयों पर भाष्य और ग्रंथ लिखे हैं। दूसरे विषयों की ओर भी उसकी रुचि थी, किन्तु फाराबी ने अपना ध्यान तर्कशास्त्र, अतिभौतिक शास्त्र और भौतिक शास्त्र पर अधिक दिया।

४. नस्त्र' (II) अहमद-पुत्र (२१४-४२ ई०)

नस्त्र के समय पश्चिम में सामानियों के प्रतिद्वन्द्वी दैलमी (बुवायही) थे। दोनों ईरानी वंशों का परस्पर वैवाहिक सम्बन्ध भी था। दोनों वंशों की तुलनात्मक वंशावलि निम्न प्रकार है—

सामानी	बुवायही
४ नस्त्र II	११४-४२
५ नूह I	१४३-५४
६ अब्दुल-मलिक I	९५४-६१
७ नस्त्र III	९६१
८ मसूर I	९६१-७६
९ नूह II	९७६-९७
१० मसूर II	९९७-९९
	१ अली बुवायही-पुत्र -९३२
	२ अहमद मुईउद्दौला ९३२-६७
	३ आजादुद्दौला (रकनु० १) ९६७-
	४ मज्दुद्दौला

५ नूह I नस्त्र II-पुत्र (९४३ ५४ ई०)

नूह के शासन-काल की कोई उल्लेखनीय घटना नहीं है।

६ अब्दुलमलिक नूह-पुत्र (९५४-६१)

अब्दुल-मलिक के समय की एक घटना स्मरणीय है। सामानियों के सैनिक और असैनिक बड़े-बड़े पदों पर तुर्कों की काफी सख्या थी। इन्हीं में एक तुर्क अल्पतगिन (सिंह कुमार) प्रतिहारों का अफसर था। दिसम्बर ९५६ ई० में इसने एक विशिष्ट सामानी अधिकारी बकर मलिक-पुत्र को राजद्वार पर मार डाला। सदेह किया जाता है, कि इस हत्या में अमीर (अब्दुल मलिक) की भी सम्मति थी। बकर का उत्तराधिकारी अल्पतगिन का पहिलेका सहायक-सेनापति अब्दुल हसन महमूद इबराहीम-पुत्र सिमजूरी था। उसने ९२७ ई० में दरबार में घोषणा-पत्र और झंडे को पहुंचाया। अल्पतगिन ने खुरासान के अबू मन्सूर अब्दुल्रज्जाक-पुत्र को शासक के तौर पर तूसमें रख छोड़ा था। सामानी दरबार ने अबू

मन्सूर को प्रोत्साहित करते हुए अल्पतगिन का स्थान दे दिया। इस पर अल्पतगिन गजना (गजनी) की ओर चला गया, जहाँ ९६२ ई० में उसने गजनवी राजवंश की स्थापना की। अल्पतगिन ९६३ ई० में मरा। उसके बाद उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र इसहाक हुआ, जिसे गजना के पुराने राजा ने ९६४ ई० में हरा दिया। जिस पर सामानी (मन्सूर I) मदद से वह ९६५ ई० में फिर गजनी लौट सका। इस्माईलके वक्त में अब भी सिर-दरिया के उत्तर काफिर तुर्कों की भूमि थी। धर्म-युद्धों में एक काफिर तुर्क सुबक तगिन बन्दी बनाया गया। नेशापोर (खुरासान) में किसी दास-वर्णिक से उसे सेनापति अल्पतगिन ने खरीद लिया। सुबक तगिन के गुणों को उसके मालिक ने पहिचाना लिया, और उसको आगे बढ़ने का मौका मिला। जब अल्प-तगिन सामानियों से नाराज़ होकर गजना चला गया, तो सुबक तगिन भी उसके साथ था। सुबक तगिन ने अल्प तगिन और उसके पुत्र की बड़ी सहायता की और अन्तिम उत्तराधिकारीने सुबकतगिन के लिये अपना सिंहासन छोड़ दिया। इस प्रकार २० अप्रैल ९५७ ई० को सुबक तगिन सिंहासन पर बैठा। उसके बाद उसने अफगानिस्तान ओर भारत के विजयों से बड़ी ख्याति प्राप्त की और अन्त में सामानी वंश के उच्छेद में उसने और उसके पुत्र महमूद गजनवी ने खास तौर से भाग लिया।

८ मन्सूर I नूह-पुत्र (९६१-७६ ई०)

अब्दुल मलिक के बाद उसका पुत्र नस्र III थोड़े ही दिनों तक शासन कर सका। फिर अब्दुलमलिक का भाई मसूर I सामानी शासक हुआ। इसने दैलमी राजा रुकुनदौला (९६४-७५) की अपोती तथा जादुदौला की लड़की से ९७१ ई० में शादी की। अल्प तगिन ने मसूर को अमीर मानने से इन्कार कर दिया। उस समय वह खुरासान (नेशापोर) का राज्यपाल था। झगड़े का फैसला हथियार से ही हो सकता था। बलख के युद्ध में अल्प तगिन असफल हो गजना की ओर चला गया और वहाँ अपने को मजबूत करके मसूर के आक्रमणों का उसने जवाब दिया। अल्प-तगिन और मसूर की मृत्यु एक ही साल हुई।

९ नूह II मन्सूर-पुत्र (९७६-९७ ई०)

नूह के गद्दी पर बैठने के समय गजना में सुबकतगिन ने अपना शासन अभी स्थापित नहीं किया था, वह अल्प तगिन के उत्तराधिकारी का समर्थक था। उसने वधु पार कर सामानियों के राज्यपर आक्रमण किया। किश के पास नूह में भेंट हुई। सुबक तगिन सामानियों से स्वतंत्र नहीं होना चाहता था, उसने राजभक्ति की शपथ ली। उसकी पहिले की सेवाओं के लिये तथा ख्वारेज्मियों से मनमुटाव होने के कारण नूह ने नसा और अबीवर्द सुबकत-गिन को देने के लिये कहा। यह दोनों प्रदेश अबूअली के थे। उस ने नसा दे दिया, लेकिन अबीवर्द से इन्कार किया, इसके कारण दोनों ख्वारेज्मियों (अबू-अब्दुल्ला और गूरगजी अबूअली) में झगडा हो गया। इसके लिये नूह ने अबूअली पर ९९४ ई० में आक्रमण करके पूरी विजय प्राप्त की। सुबक तगिन ने इसमें नूह की सहायता की, इसके लिये सामानी दरबार ने “नासिरुद्दीनु-दौला”, की सुबकतगिन को और उसके पुत्र अबुल्कासिम महमूद को “सैफुद्दीनु- (राज्य खड्ग) की पदवी प्रदान की। नूह ने अबूअली की जगह महमूद गजनवी को

खुरासान का राज्यपाल बनाकर नेशापोर भेजा। १९ सितम्बर ९९६ ई० में अबूअली को गूरगजी अमीर मामूनने हराकर बन्दी बनाया और अब अबूअली अब्दुल्ला की जगह मामून स्वयं ख्वारेज्मशाह बन गया। अमीर महमूद ने काराखानी फायक को पकड़कर बन्दीखाने में डाल उसके राज्य को ले लिया। बुखारा सरकार और अबू अली में उस समय झगडा छिडा हुआ था, मामून ने बीच में पड़कर समझौता कर दिया।

अब दक्षिण में सामानियों के सामन्त गजनवी एक बड़ी शक्ति के रूप में खड़े हो रहे थे। इसी समय उत्तर के घुमन्तू कराखानियों ने भी हमला कर दिया। ९९६ ई० में कराखानियों के जबर्दस्त हमलेके कारण नूह के हाथ में अब अन्तर्वेद का एक छोटा सा भाग रह गया, इसलिये वह अकेला दुश्मनों का सामना नहीं कर सकता था। उसके बुलाने पर सुबुकतगिन एक बड़ी सेनामें साथ आया, जिसके साथ गूजगान और खुत्तलके बड़े अमीर भी थे। सुबुकतगिनने नूह को किश (शहरसब्ज) में आकर मिलने के लिये कहा, लेकिन वजीर अब्दुल्ला उज्जर-पुत्र ने इसमें हतक होने की बात कहकर नूह से इन्कार करा दिया। सुबुकतगिन ने नूह की गोशमाली के लिये अपने दोनो बेटो महमूद और बुगराचुक को २० हजार सेना देकर बुखारा भेजा। नूह का दिमाग ठंडा हुआ और उसने सुबुकतगिन की सारी बातें मान ली। अब्दुल्ला को पदच्युत कर उसे सुबुक तगिन के हाथमें दे दिया। सुबुक तगिनने अपने आदमी अबूनस अहमद मुहम्मद पुत्र अबूजैद-पुत्रको सामानी वजीर बनाया। मागने पर नूह ने अबूअली, और उसके हाजिव तथा वजीरको सुबुकतगिन के हाथ में दे दिया, जिन्हें उसने गर्देज के किले में कैद कर दिया। इसके बाद सुबुकतगिन ने कराखानियों से लड़ाई न कर समझौता कर कतवान की महभूमि को मामानी और कराखानी सीमा मान ली, जिससे सारी सिर-उपत्यका कराखानियों के हाथ में रही और जैसा कि पहिले बतलाया, उनकी बात मानकर फायक की समरकन्द का गनवर नियुक्त किया गया। बहुतों के दक्षिण का स्वामी अब सुबुकतगिन था, खुरासान भी सामानियों के हाथ से निकल गया था। २३ जुलाई ९९७ ई० को नूह II की मृत्यु हुई।

बू-अली सीना (९८०-१०३७ ई०)

यद्यपि बू-अली सीना का दार्शनिक जीवन कुछ समय बाद शुरू होता है, किन्तु इस्लामी जगत के इस महान् दार्शनिक के निर्माण में सामानी शासन का काफी हाथ है। बूअली सीना के बारे में हम कह सकते हैं, कि उसके रूप में इस्लामिक दर्शन उन्नति की पराकाष्ठा पर पहुँचा। बू-अली सीना, दार्शनिक मसकविया (मृ० १०३० ई०) महाकवि फिरदौसी (९४०-१०२० ई०) और महान् पंडित और पर्यटक अल्बेरूनी (९७३-१०४८ ई०) का समकालीन था। मसकवियासे सीमा की भेट हुई थी और अल्बेरूनी से उसका पत्र-व्यवहार हुआ था। इस का पूरा नाम अबू-अली अल्-हुसैन यदन् अब्दुल्ला इब्न सीना था। इसका जन्म ९८० ई० में बुखारा के पास अफशान में हुआ था। सीना के परिवार के लोग पीढ़ियों से सरकारी कर्मचारी होते आये थे। उसने प्राथमिक शिक्षा घर पर पाई। देशभाई फाराबी पहिले दार्शनिक हो चुका था। दोनों की जन्मभूमिया आधुनिक उज्बेक सोवियत प्रजातंत्र में थी। सीना के परिवार में स्वतंत्र विचारों का वातावरण था। उसने स्वयं लिखा है कि मेरे बचपन में मेरे बाप और चचा यूनानी नफस (विज्ञान) के सिद्धान्त पर खारिजियों (वातनियों) के मत से

बहुस किया करते थे। खारजियो का बुखारा मे कितना जोर था ओर इस्माईल सामानी को उसके दबाने मे कितनी मुश्किल पडी थी, इसे हम बतला चुके है। प्राथमिक शिक्षा समाप्त कर बू-अली सीना बुखारा मे पढने आया। वहा उसने दर्शन और वेद्यक का विशेष तौर से अध्ययन किया। अभी वह १७ वर्ष का तरुण था, इसी समय उसने नूह II (मसूर-पुत्र) की चिकित्सा करके रोग-मुक्त किया। इस सफलता मे उसे सबसे ज्यादा फायदा यह हुआ, कि नूह के पुस्तकालय का दरवाजा उसके लिये खुल गया। पुस्तकालय को देखकर सीना के मन मे क्या भाव पैदा हुये यह उसके निम्न वचन से मालूम होता है—“मे एक इमारत मे घुसा, जिसमे बहुत से कमरे थे। हरेक कमरे मे पाती से पुस्तके एक के ऊपर एक रखी हुई थी। एक कमरे मे अरबी किताबे, और काव्य ग्रंथ थ, दूसरे कमरे मे कानून (फिका) की पुस्तके थी, इत्यादि। हरेक कमरे मे एक-एक विज्ञान से संबंध रखनेवाली पुस्तके थी। मैंने पुराने ग्रंथकारो की पुस्तको की एक सूची पडी और अपनी अपेक्षित पुस्तक मांगी। मैंने वहा ऐसी पुस्तके देखी, जिनका नाम भी बहुत से लोगो को मालूम नही था। पुस्तको का ऐसा संग्रह उससे पहिले ओर बाद मे मैंने कभी नही देखा। मैंने उन्हें पढकर फायदा उठाया और प्रत्येक ग्रंथकार और उसके विज्ञान के सापेक्ष महत्व को समझा।” पीछे यह अफवाह फैलाई गई कि पुस्तको को पढकर सीनाने आग लगादी, जिसमे कि वह ज्ञान दूसरे के पास न जाये। लेकिन यह विश्वास करनेकी बात नही है। सीना इतना हृदय-हीन नही हो सकता था, ओर न सामानी अमीर नूह इसकी इजाजत दे सकता था। शताब्दियोंसे मध्यएशिया की पुस्तके जहा-तहा बिखरती तथा नष्ट होती रही। १९१७ की बोलशेविक क्रान्तिसे पहले कुछ छोटे-मोटे संग्रह जहा-तहा थे। ताशकन्दके पुस्तकालय मे ५०० हस्तलिखित ग्रन्थ थे। आज वहा ५० हजार से ऊपर हस्तलिखित ग्रन्थ संगृहीत हो गये है, जिनके सूचीपत्रोको कई जिल्दो मे छापा गया है और वहा के बहुमूल्य हस्तलेखोको प्रकाशित करने का काम भी शुरू हो गया है।

सीनाका तरुणार्धका सरक्षक नूह (II) २३ जुलाई ९९७ ई० को मर गया। सामानी राज्य क्षीण होते होते कुछ ही समय बाद बुखारा भी कराखानियोके हाथमे चला गया। इन वृमन्तू तुर्कोके शासनमे सीनाको क्या प्रोत्साहन मिल सकता था? सीनाका स्वभाव ऐसा था, कि वह दरबारी नही हो सकता था। उसने अपने उजडे हुए दयारको छोड भिन्न-भिन्न दरबारोकी खाक छाननी शुरू की। कही वह छोटा-मोटा अफसर बनाया जाता, कही अध्यापक और कही लेखक। अन्तमे जगह-जगह भटकते वह पश्चिमी ईरानमे हमदानके शासक शम्शुद्दौलाका वजीर बना। शम्शुद्दौलाके मरनेके बाद उसके पुत्रने सीनाको कुछ महीनोके लिये जेलमे डाल दिया। जेलसे छूटनेके बाद अस्फहानके शासक अलाउद्दौलाके दरबारमे पहुचा। अलाउद्दौलाने जब हमदानको जीत लिया, तो अबू-सीना फिर वहा लौट गया। यही ५७ वर्षकी उम्रमे १०३७ ई० मे सीनाका देहान्त हुआ। हमदानमे आज भी उसकी समाधि मौजूद है। यह स्मरण रखनेकी बात है, कि हमदान इखबतनके नामसे प्रथम ईरानी राजवश (मद्रवश) की प्रथम राजधानी रहा। सीनाने यूनानी दर्शनपर भाष्य और विवरण नही लिखे। उसका कहना था—भाष्य और विवरण तो ढेरके ढेर मौजूद है। उनपर विचार कर स्वतंत्र निश्चय पर पहुचनेकी अवश्यकता है। उसने अपने निश्चयोको अपनी पुस्तको “शाफा” (चिकित्सा), “इशारात” (सकेत) और “नजात” (मुक्ति) मे लिखा। १७ वर्षसे ५७ वर्षकी उमर तकके ४० वर्षोकी एक एक घडीका उसने पूरा उपयोग किया। दिनमे सरकारी काम करता या विद्यार्थियोको

पढाता, शामको मित्र-गोष्ठी या प्रेमाभिनयमें बिताता, किन्तु रातको निद्रा न आने देनेके लिये सामने मदिराका प्याला रख हाथमें कलम ले सारी रात लिखनेमें बिता देता। सीनाका पद्य-रचना पर इतना अधिकार था, कि उसने साइस, वैद्यक और तर्ककी पुस्तकोको भी पद्यमें लिखा है। फारसी और अरबी दोनों भाषाओका वह लेखक था। जेलमें उसने कविताये लिखी। उसकी कविताओ और सूफी निबन्धोंमें प्रसाद-गुण बहुत पाया जाता।^१

१० मंसूर II नूह II-पुत्र (नवंबर ९९७-९९८ ई०)

दसका पूरा नाम अबुल-हारिस ममूर था। शासनकी सारी शक्ति वजीर अबुल-मुजफ्फर मुहम्मद इब्नाहीम-पुत्र बरगशीके हाथमें थी। बरगशीके बाद फायकका बहुत प्रभाव था। अबू-अली और उसके अनुयायियोंको नूहने सुवुकतगिनको दे डाला था, जिसने उन्हें मरवा डाला। वजीर अब्दुल्ला किसी तरह बन्दीखानेसे निकलकर अन्तर्वेद पहुँचा। उसके स्थानापन्न अत्रू-मुहम्मद हूसैन-पुत्र इस्फजाबी—जो कि वहाके शामक-वशकाथा—ने विद्रोह कर कराखानी शासक इलिक नख खा को मददके लिये बुलाया। इलिकका पिता बोगरा खान हारून पहिले ही अन्तर्वेद-विजयके लिये आकर मई ९९२ ई० में बुखारामे दाखिल हुआ था। सामानी सेनापति फायकने मुकाबिला करनेकी जगह उसका स्वागत किया। अबकी फिर विद्रोहियोंके बुलानेपर इलिक नख समरकन्द आया। उसने दोनो प्रधान विद्रोहियोंको गिरफ्तार करनेका हुक्म दिया। फायकको अपने शिविरमें ले जाकर उसने बड़ा स्वागत किया और तीन हजार सवारोंके साथ उसे बुखारा भेज दिया। ममूर राजधानी छोड़ आमूल (चारखूय) भाग गया। लेकिन फायकने अपनेको सामानी सेबक घोषित करते हुए बुखारापर अधिकार कर मसूरको लौटनेके लिये राजी किया। अब एक दूसरे हाजिब (राज-अफसर) बेग तुजुनको खुरासानका सेनापति बनाकर भेजा गया। सुबुक तगिन की मृत्यु (९९७ ई०) पर महमूदको खुरासान खाली कर देना पड़ा था, क्योंकि उसका छोटा भाई इस्माईल बड़े भाईके लिये स्थान खाली नहीं करना चाहता था।

मन्सूर सामानीने फायक और बेग तुजुनके झगड़ेको मिटानेके लिये समझौता कराना चाहा, लेकिन फायकने चुपचाप कोहिस्तान (वर्तमान ताजकिस्तान) के शासक अबुल-कासिम सिमजूरी को खुरासानके सेनापति बेग तुजुनपर आक्रमण करनेके लिये कहा। मार्च ९९८ ई० में विजयी हो बेग तुजुनने सिमजूरीसे समझौता कर लिया और जुलाई ९९८ ई० में अपने विरोधियोंको हराते हुए बुखारा पहुँच गया। इसके बाद फायक और वजीर बरगशीमें झगडा हो गया। बरगशीने अमीर मन्सूरकी शरण ली। मन्सूरने सुलह करानी चाही, लेकिन फायक अपने प्रति द्वन्द्वी बरगशीको समर्पण करनेके लिये कह रहा था। इस कहा-सुनीमें उसने अमीर मसूरको भी अपमानित किया। झगडा और न बड़े, इसके लिये बुखाराके शेख बीचमें पड़े। बरगशीको पदच्युतकर बूज्गानमें निर्वासित कर दिया गया। सामानी दरबारके लिये सबसे कठिन समस्या थी, बेग तुजुन और महमूद गजनवीका झगडा। महमूद अपने भाईको हराकर गजनाका स्वामी बन चुका था। खुरासानकी क्षत्रपी बेग तुजुनको दी जा चुकी थी, जिसका दावा महमूद छोड़नेके लिये तैयार नहीं था। बलख-तेरमिज-चिरागकी क्षत्रपी देकर महमूदको राजी करनेके लिये अमीर

^१सीनाके दार्शनिक विचारोंके लिये देखो “दर्शनदिग्दर्शन” पृष्ठ १३४-१४७

मन्सूरने बहुत कोशिश की, लेकिन महमूद सारे खुरासानको मांगता था। उसने वेग तुजूनपर आक्रमणकर उमे नेशापोर छोड़नेके लिये मजबूर किया। फायक और वेग तुजूनको सदेह हुआ, कि अमीर मन्सूर महमूद गजनवीसे मिल जाना चाहता है, इसलिये उन्होंने १ फरवरी ९९९ की शामको मन्सूरको समरकन्द की गद्दीसे उतार कर, एक सप्ताह बाद उसे अघा करके बुखारा भेज दिया।

११ अब्दुलमलिक नूह II-पुत्र (९९९ ई०)

मन्सूरको हटाकर अबुल्फवारिस अब्दुल-मलिकको अमीर घोषित किया गया। दोनो विरोधियोंके सामने महमूद गजनवीकी नहीं चली। उसने समझौता करके नेशापोरको वेग तुजूनको दे दिया और बलख तथा हिरातको अपने पास रखा। इस प्रकार आखिर उसने वही बात की, जिसे मन्सूर कराना चाहता था। अब महमूदके वही दो प्रतिद्वन्द्वी नहीं रह गये थे, बल्कि अबुल कासिम सिमजोरी भी उनके साथ मिल गया। महमूदको खुश होनेका कोई कारण नहीं था, तो भी उसने मई ९९९ ई० में दो हजार दीनार खैरात किये। वेग तुजूनके साथ जो समझौता हुआ था, वह भी चदरोजा रहा। महमूदकी सेनाके पिछले भागको धोखेसे मार डाला गया, जिसपर लड़ाई शुरू हो गई। महमूदने सारी शक्ति लगाकर अपने विरोधियोंको बहुत बुरी तरहसे हराया और वह सारे खुरासानका मालिक हो गया। खलीफा कादिर (९९१-१०३१ ई०) ने महमूदके पास एक पत्र लिखा, जिसमें सामानियोंकी हार का कारण उनका खलीफाको माननेसे इन्कार करना बतलाया। महमूदने खुरासान-सेनापतिका पद स्वयं न ले अपने भाई नस्रको दे दिया। अमीर अब्दुल-मलिक और फायक बुखारा भगे। वेग तुजूनने दुबारा कोशिश की, लेकिन असफल हो उसे भी बुखारा जाना पड़ा। उम्मी गरमीमें फायक मर गया। कराखानी खान इलिक नस्रने सामानी वशका खातमा कर दिया। अब्दुलमलिक तथा दूसरे कितने ही सामानी राजकुमारोको पकड़कर कराखानी उजगन्द ले गये।

१२. मुन्तसिर सामानी (-१००९ ई०)

सामानियोंके वशोच्छेदके समय उनके राजकुमारो में संघर्ष चल रहा था। बुखाराको इलिक नस्रने बिना प्रतिरोधके दखल कर लिया। सामानी प्रतिरोधियोंमें एक था मसूर II (९९७-९९८) का भाई इस्माईल, जो पकड़कर उजगन्दमें बन्द किया गया था। उसने स्त्री भेस में भागनेमें सफलता पाई। ९९९ ई० में अब्दुलमलिक II के उठाये विद्रोहको कराखानियोंने दबा दिया, किन्तु इस्माईल जल्दी हाथमें नहीं आया।

पहिली शोकमें सोगदी जनताने अपने सामानी शासकोका साथ छोड़ दिया था, लेकिन पीछे जान पड़ता है, कितनोने भूल स्वीकार की, और इस्माईल अब मुन्तसिर (विजयी) उपाधि धारण कर बुखारा पड़ुच वहासे ख्वारेज्म गया। पिताके सिपाहियों द्वारा मारे जानेपर बने ख्वारेज्मशाह मामू-पुत्र अब्दुल-हसन अलीने मुन्तसिरको भीतर-भीतर मदद दी। मुन्तसिरने एक सेना संगठित करली जिसका सेनापति एक तुर्क हाजिव अरसलन यालू था। यालूने कराखानी गवर्नर जाफर तगिनको बुखारासे मार भगाया। बची-खुची सेना जाकर समरकन्दके गवर्नर तिगिन खानसे मिली, लेकिन वहा भी वह डट न सकी और जरफशाँ के

पुलके पास बुरी तरहसे हारकर उसे भागना पडा। यह खबर इलिक नस्रके पास पहुंची, तो वह एक बड़ी सेना लेकर आया। मुन्तसिर तथा उसके सेनापति अरसलन यालूको आमूल होते हुए ईरानकी ओर भागना पडा। खुरासान पर महमूद गजनवीके भाई नस्रका शासन था, जिसके साथ लड़ाई हुई। मुन्तसिरको सफलता नहीं मिली। उसने इसके लिये अपने सेनापति अरसलन यालूको दोषी ठहराया और उसे मरवा डाला। नस्र गजनवीने मुन्तसिरकी आखिरी सेनाको भी खतम कर दिया। खुरासानसे निराश होकर मुन्तसिर १०३० ई० में अन्तर्वेदकी ओर लौटा और गूजो (तुर्कमानो) से मदद ली। इतिहासकार गर्देजीके अनुसार गूज नेता पयगू (यवगू) ने इस्लाम स्वीकार किया। हमें मालूम है, “यवगू” नाम नहीं, बल्कि करलुको और दूसरे तुर्क घुमन्तुओमें एक पुरानी राजोपाधि है, जो शकोमें भी पाई जाती थी। संभवतः यवगू मुसलमान नहीं हुआ, बल्कि उसके सरदार सलजुक-पुत्रने इस्लाम स्वीकार किया, जिसने कि पहिले भी काफिर कराखानियोंके विरुद्ध सामानियोंकी सहायता की थी। जहा भी लूटकी संभावना हो, वहा गूज या कोई भी लडाकू घुमन्तू कैसे पीछे रह सकता है? गूज बड़ी खुशीसे मुन्तसिरके झंडेके नीचे इकट्ठे हो गये। सुबास् तगिनको उन्होंने जरफशाँके तटपर हराया और खुद इलिक खानको १००३ ई० की गरमियोमें समरकन्दके पास बुरी तौरसे हारना पडा। इलिक खानके १८ सेनापति बन्दी बनाये गये, जिन्हें गूजोंने मुन्तसिरके हाथमें देनेसे इन्कार कर दिया। वह जानते थे, इनके लिये हमें भारी रकम मिलेगी। उधर मुन्तसिरको डर हुआ, कि गूज शायद दुश्मनसे बात-चीत चला रहे हैं, इसलिए उसने उनका साथ छोड़ दिया। १००३ ई० की शरदमें वक्षु पर बरफ जमी हुई थी, उसी समय दरगानमें ३०० सौ सवारों और ४०० सौ पैदल सैनिकोंके साथ मुन्तसिर वक्षु पार हो आमूल पहुंचा। १००४ ई० में उसने नसा और अवीवर्दको लेनेका असफल प्रयत्न किया। वहाके निवासी नहीं चाहते थे, इसलिए ख्वारेज्मशाह अलीने उसे शरण नहीं दी। मुन्तसिर बाकी सेनाके साथ तीसरी बार अन्तर्वेदकी ओर लौटा। बुखाराके गवर्नरने उसे हरा दिया। तो भी नूरके किलेमें रह कर उसने दबस्वियामें अवस्थित दुश्मनकी सेनापर आक्रमण किया।

भाग्यने उसका साथ दिया। सोगदियोंका राष्ट्रीय आन्दोलन आरम्भ सा हो गया। सभी जगह सोगदी अपने राजवंशकी पुनः स्थापनाके लिये सेनामें भरती हो गाजी (धर्मयोद्धा) बनने लगे। समरकन्दके गाजियोंका नेता अलमदार-पुत्र तीन हजार गाजियोंके साथ मुन्तसिरसे आ मिला। नगरके सेठोंने भी अपने तीन सौ दासोंको मुन्तसिरके लिये हथियारबन्द करके दे दिया। गूज भी अच्छता-पछताकर उससे आ मिले। इस नई सेनाके साथ मुन्तसिरने बूरनामज्जके पास मई-जून (शाबान) १००४ ई० में महाखानकी सेनाको हराया, लेकिन यह सफलता चिरस्थायी नहीं रही। कराखानियोंकी शक्तिका स्रोत सुदूर उत्तरमें था, जिसे सुखाया नहीं जा सकता था। खान (संभवतः इलिक खान) एक बड़ी सेनाके साथ लौटा और जीजक एव खवासके बीच भूखी-मरुभूमिमें घोर लड़ाई हुई। बूरनामज्जमें भारी लूटका मौका मिला था, उसके कारण सतुष्ट हो गूज अपने अपने डेरोमें लौट गये और युद्धमें भाग लेने नहीं आये। स्वयं मुन्तसिरका एक सेनापति हसन ताकपुत्र अपने पांच हजार आदिमियोंके साथ खानसे जा मिला। बेचारे मुन्तसिरको फिर खुरासानकी ओर भागना पडा। उसने अभी भी हिम्मत नहीं हारी, और सामानी सुरखत-पुत्रके बुलानेपर वह अन्तर्वेद आया। सुरखत-पुत्र उन मामानी

राजकुमारोंमेंसे था, जो इलिक खानसे मिल गये थे। जब मुत्तसिर बुखारा की ओर बढ़ रहा था, उसी समय सैनिकोंने उसका साथ छोड़ दिया। बेकार जान देनेकी जगह उन्होंने इलिकके हाजिब (अफसर) मुलेमान और शफीकी अधीनता स्वीकार करना बेहतर समझा। बाकी सेनाको शत्रुओंने घेर लिया और वधू (आमू दरिया) के सभी घाटोंको भी रोक दिया। तो भी मुत्तसिर अपने आठ अनुयायियोंके साथ बच निकलनेमें सफल हुआ। उसके भाई और दूसरे अनुयायी पकड़कर उजगन्द पहुँचाये गये। १००५ ई० के आरम्भमें मेर्वके पास बसनेवाले एक अरब कबीलेके सरदारने धोखा देकर मुत्तसिरको मार डाला। इस प्रकार सामानी वंशका उच्छेद हुआ।

(१) सामानी शासनव्यवस्था—

अरबों के समय सामानियों की व्यवस्था के अनुसार मन्गमिया का शासन होता रहा। खलीफा सर्वतन्त्र स्वतन्त्र शासक था। वह केवल अल्ला के सामने ही जवाबदेह था। यही सिद्धांत सामानी या दूसरे स्वतन्त्र शासकों (अमीरों) का भी था। बगदाद के अधीन मानते सामानियों ने कभी सुल्तान (स्वतन्त्र राजा) होने का दावा नहीं किया। खलीफा की आखों में वह केवल अमीर (राज्यपाल), मवाली-अमीरुल-मोमनिन (खलीफा के अनुचर) या केवल आमिल (कर उगाहने वाले) थे। जो अहद (नियुक्ति-पत्र) उन्हें मिलता, उसमें और किसी शक्ति के दिये जान की बात नहीं होती थी। इतिहासकार कभी कभी सामानियों को अमीरुल-मोमनीन (मुसलमानों का शासक) कहते थे। ईरानी आदर्श के अनुसार सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र शासकों को अच्छा कत-खुदा (भूपति) होना चाहिये, इसलिये सामानी अमीर नहरो के बनाने, कराराज (भूगर्मी जलप्रणालियों) को तैयार करने, नदियों पर पुल बाधने, कृषि-प्रोत्साहन, किला-निर्माण, नवीन-नगर-स्थापन, अच्छी इमारतों द्वारा नगर को अलंकृत करने तथा सड़कों पर रवाना (पान्थशालाये) बनाने की ओर बहुत ध्यान देते थे।

उनके शासन-यंत्र के दो विभाग थे—(१) दरगाह (अन्त पुर), (२) दीवान।

१. दरगाह—इस्माईल के समयसे ही खरीदे दासमें—मुख्यतः तुर्क होते थे—जो दरगाह के आदमी तथा अमीर के वैयक्तिक शरीर-रक्षक होते थे। प्रधान सैनिक कर्तव्य केवल इन्हीं शरीर-रक्षकों के सरदार को ही नहीं बल्कि स्थानीय प्रसिद्ध कुलों की सतानों, देहकानों तथा तुर्क-सेना को भी करना पड़ता था। सामानियों के शासनकाल के आरम्भ में अन्तर्वेद के अधिकांश आदमी हथियारबंद थे और वह युद्ध या विद्रोहमें सैनिक की तरह भाग लेते थे।

सामानियों ने विशेष उद्देश्य से खरीदे होतहार तरुण तुर्क दासों की शिक्षा का विशेष प्रवन्ध किया था, जो कि मलजूकी वजीर निजामुल्मुल्क के कथनानुसार* निम्न प्रकार थी।^१

^१ मियासतनामा में है—सामानियों के जमानेमें भी यही कायदा था। उनकी सेवा, विद्या और सस्कृति के अनुसार क्रमशः गुलामों का दर्जा बनाया जाता। जैसे ही गुलामको खरीदते, एक साल उसे प्यादा रहकर सेवा करने की आज्ञा देते। उन गुलामों को आज्ञा नहीं थी, कि वह रिक़ाब में पैर रखे या जरदोजी की पोशाक पहने। यदि इस एक साल में गुप्त या प्रकट धोड़े पर चढ़ने का पता लगता, तो दण्ड दिया जाता। जब एक साल सेवा हो जाती, तो बसा-कबाशी कहलाता, और हाजिब उसे ताजी घोड़ा दिलवाता, जिसकी लगाम और रस्सी

(१) प्रथम वर्ष पैदल सैनिक, साईस का काम सीखना पड़ता और छिपकर भी घोड़े पर चढ़ने का सख्त निषेध था। इस समय उन्हें पहनने के लिये जन्दान के बने कपड़े मिलते थे।

(२) द्वितीय वर्ष हाजिब (तबुओ के सेनापति) की सहमति से उसे माधारण चार-जामे के साथ एक तुर्की घोड़ा सवारी के लिये मिलता।

(३) तृतीय वर्ष की शिक्षा में उत्तीर्ण को एक खाम तरह का कमरबन्द (कराचूर) मिलता।

इसी तरह आगे उसकी प्रगति होती। पाचवें वर्ष में गुलाम अच्छा चारजामा पाते, कपड़े भी उनके ज्यादा कीमती होते। छठे वर्ष में कवायद परेड की पोशाक मिलती। सातवें वर्ष में उसको बसाकबाशी (तबू-कमांडर) का दर्जा मिलता, जिसमें उसको तीन दूसरे आदमी भी मिलते। उसकी पोशाक होती—काले नमदे की टोपी, जिसके ऊपर चादी के तारों का काम होता, और पोशाक का कपड़ा गजा (एलिजावेथपोल) का बना होता। आगे बढ़ते हुए गुलाम खैल-बाशी (विभागीय कमाण्डर) और हाजिब (कमांडर) बनते।

(१) सारी सेना का मुखिया हाजिबे-बुजुर्ग या हाजिबुल-हुज्जाब कहा जाता, जिसका स्थान प्रथम श्रेणी के दरबारियों में होता। दरगाह का दूसरा ऊँचा पद था, साहबे-हरस या अमीरहरस। इस पद को प्रथम अमीर मुवाविया (प्रथम उमैया खलीफा) ने प्रचलित किया था।

इनके अतिरिक्त दरगाह के दूसरे कर्मचारी थे—द्वारपाल, भोजनशालाधिकारी, प्याला-बाहक।

सामानियों के प्रादेशिक शासक राज्यवश के आदमी होते थे जैसे इस्फिजाब का शासक इस्माईल का पुत्र मसूर था। कभी कभी अपनी बड़ी सेवाओं के लिये तुर्की गुलाम भी बड़े पदों पर पहुँच जाते, जैसे कि सिमजूरी, अल्पतगिन, ताश और फायक। लेकिन उन्हें यह पद पैंतीस वर्ष की उमर से पहिले नहीं मिल सकता था। खुरासान के राज्यपाल को सिपहसालार (सेनापति) कहा जाता था। वजीर को नियुक्त करते समय सैनिक कमाण्डरों की राय ली जाती थी। दरगाह के घरू कार्यों का प्रबन्ध “वकील” करता था, यह भी एक महत्वपूर्ण पद था।

सादी होती। जब एक साल ताजी घोड़े के साथ सेवा कर लेता, तो अगले साल उसे कराजूरी का पद देते। पाचवें साल वह अच्छा जीन और बढिया लगाम, दारायी या दबूशी कपड़े का चोगा पहनते। छ साल पर उनमान का चौगा मिलता। सातवें साल सोलह खूटो वाला तबू देते, उसकी सेवा मातहत गुलाम करते, और उसे बसाकबाशी का दर्जा देते। उसे काले नमदे की टोपी, जिस पर रूपे का काम किया होता, गजा का चोगा उसे पहनाते। फिर हर साल उसका दर्जा और दबदबा बढाते खैलबाशी होने तक पहुँचाते। फिर हाजिब होकर अगर विद्या और योग्यता मालूम होती, तो बड़ा बड़ा काम उसके हाथ में देते, और बादशाह तथा दरबारी लोग उसके दोस्त होते। जब तक कि वह ३५ साल का न हो जाता, न उसे अमीर (शासक) का पद देते और न बलायत (प्रदेश) पर नामजद करते। लेकिन सामानियों का पाला हुआ बन्दा (गुलाम) अल्प-तगिन ऐसा था, कि उसने ३५ वर्ष की उमर में खुरासान के सिपहसालार (सेनापति) का पद पाया।

२. दीवान—बुखारा में रेगिस्तान नामक प्रसिद्ध मैदान के पास दीवानखाने (सचिवालय) थे—(१) दीवान वजीर (२) दीवान मुस्तौफी (खजानची), (३) दीवान अमीदुलमुल्क (राज्यावलम्ब), (४) दीवान साहिब-शूरत (प्रतिहारपति), (५) दीवान साहिब बरीद (डाक-अफसर), (६) दीवान मुशरिफ, (७) दीवान-खास (अमीर के निजी जमीन्दारी का प्रबन्धक) (८) दीवान काजी (न्यायाधीश) ।

(१) वजीर, जिसे ख्वाजा-बुजुर्ग भी कहते थे, सारी नौकरशाही के ऊपर था। उसके पद का चिह्न था दावात। जैहानी, बलअमी, उतबी सामानी वश के बड़े बड़े वजीर थे। मुस्तौफी के नीचे हासिब और हुस्साब जैसे और कर्मचारी होते थे। मुसरिफ प्रत्येक नगर की खबर लेकर अमीर के पास पहुँचाता था। मुस्तुतसिब सड़क और बाजार की व्यवस्था करते थे। यह धोखे-बाजी, तथा कर वसूल करने की देखभाल एवं इस्लामी कानून के उल्लंघन करने की रोकथाम का काम करते थे। अधिकतर इनमें दरगाह के हिजडे या तुर्क गुलाम होते थे, जो प्रायः निष्पक्ष रहते थे और छोटे-बड़े लोग उनमें भय खाते थे। सामानी शासन में औकाफ (धर्मोत्तर-संपत्ति) का भी एक दीवान (दफ्तर) था।

(२) काजिउलकुज्जात—मारे राष्ट्र का प्रधान न्यायाधीश होता था। प्रदेशों में भी इसी तरह के पदाधिकारी होते थे, जिनमें प्रादेशिक वजीर को “हाकिम” या “कतखुदा” कहते थे।

(३) धर्माचार्य—इस्लाम के प्रचार के साथ साथ मुल्लाओं का जोर बहुत बढ़ गया था। अबूअब्दुल्ला इस्माईल स्थानीय मुल्लों का सरदार था। अमीर के सामने जाने पर मुल्लों को सलाम करते हुए ज़मीन चूमना नहीं पड़ता था। प्रधान-मुल्ला पुरोहित पहिले उस्ताद, और मुफ्ती और फिर शेखुलइस्लाम कहा जाता। अब्यापक अन्तर्वेद में दानिशमद कहे जाते थे। बली गवर्नर को और खातिब खुतबावाले अफसर को कहते थे।

(४) स्थानीय राजवंश—सामानियों बहुत से छोटे छोटे सामन्त और शासक थे, जिनका अपने कुल के कारण विशेष महत्व था। इन सामन्त-राजाओं में फरीग्न (गूजगान), गज़नवी (गजना) गरजिस्तान (ऊपरी मुरगाब-उपत्यका), ख्वारेज़्मिया, इस्फिजाब, शगानियान, (पूर्वी पहाड़ों में), ख़ुत्तल और रश्न के मुख्य थे। इलाक में तूनकत का मुख्य दहकान शक्तिशाली था। इनमें सबसे अधिक शक्तिशाली शासक थे ख्वारेज़्म, इस्फिजाब और शगानियान के।

(क) ख्वारेज़्म—ख्वारेज़्म के पुराने शासक अपने वंश के उद्गम को बहुत काल तक पीछे ले जाते थे। अरबों के विजय के बाद इनकी शक्ति क्षीण हो गई, और इनके दो भाग हो गये, जिनमें दक्षिणी राजधानी कात में थी, जिसके ही राजको ख्वारेज़्मशाह कहते थे। उत्तरी वंश की राजधानी गूरगज थी। गूरगज के शासक को अमीर कहते थे। ९९५ ई० में मीर गूरगज ने दक्षिण को भी जीतकर ख्वारेज़्म शाह की पदवी धारण की।

(ख) इस्फिजाब—यह भी एक पुराना राजवंश था। वह चार सिक्के और एक झाड़ू राज-करके रूप में देता था। सिर-दरिया प्रदेश के पूर्वी तथा सप्तनद के पश्चिमी भाग पर इसका प्रभाव था। यह इलाके सामानियों के आधीन थे। उर्दू शहर निवासी तुर्कमान-राजा इस्फिजाब के शासक को बराबर कर भेजा करता था।

(ग) शगानियान—यहा के मुहत्तजिद(शासक) की पदवी अमीर थी। सासानियो के समय की शगानखुदानवाली प्राग्-इस्लामिक पदवी अब नहीं चलती थी। शगानियान के अमीर सामानी वश के पतन के बाद भी रहे।

(घ) खुत्तल—यहा के शासक को खुत्तलानशाह या शेर-खुत्तलान कहते थे। बारहवीं सदी में भी खुत्तल के अमीर अपने को बहराम गोर (४२०-३८) का वंशधर मानते थे।

सामानी नगरों के मुखिया को "रईस" कहते थे^१।

(२) शिल्प और व्यवसाय—

उस समय के भिन्न-भिन्न नगर अपने विशेष-विशेष पण्यों के लिये मशहूर थे —

(१) व्यवसायिक नगर—

(क) तेरमिज—यहा का साबुन और नावें मशहूर थीं।

(ख) बुखारा—कोमल वस्त्र, जायनमाज (कालीन), ताशे का दीपक, घोड़े का कमर-बंद, उश्मूनी, चरबी, पोश्तीन, मुगधित तेल, स्वादु मांस, सरदा और तरबूजा।

(ग) करमीनिया—रूमाल

(घ) द्यूसिया, बदार—एक रंग में रंगा बदारी कपड़ा।

(ङ) रविनजान—गल नमदा, जायनमाज, जलपात्र, चमड़ा, टाट और गधक।

(च) ख्वारेज्म—नाना प्रकार के समरी चर्म, रेगिस्तानी लोमड़ी, गीदड़, वित्तीदार खरगोश, बकरी आदि के छाले, मोम, बाण, भोजपत्र, ऊँची समूरी टोपी, मत्स्यदन्त, अबर, सिन्नाया घोड़े का चमड़ा, बाज्र, तलवार, कवच, स्लाब जातीय दास, भेड़, ढोर। यह सभी चीजें ख्वारेज्म की ही नहीं थी, बल्कि इनमें से बहुत सी बुलगार तथा सिबेरिया आदि से आती थी। अगूर, किसमिस, बादाम, तिल आदि यहा के मशहूर थे। भेट के लिये शाटन घासीदार कपड़े, कालीन, कबल, तथा इनके अतिरिक्त ताले, पनीर, खमीर, मछली भी यहा होती थी। तेरमिज की बनी हुई नावें यहा बिकने के लिये आती थी।

(छ) समरकन्द—शीनगून(रूपहला कपड़ा), ताबे का बड़ा वर्तन, कलापूर्ण प्याले, तबू, रिकाब-लगाम, तुर्कों के लिये बने शाटन, मूर्मजाल (लाल कपड़ा), शिनीजी (एक वस्त्र), कई प्रकार के रेशमी कपड़े तथा सर्वश्रेष्ठ कागज। यह मालूम है, कि अरब सेनापति जिघाद सालेपुत्र ने ७५१ ई० में समरकन्द में कुछ चीनी शिल्पकारों को पकड़ा था, जिनमें टाट का कागज बनाना अरबों ने सीखा। चीनियों ने कागज का आविष्कार ईसा की दूसरी शताब्दी में ही कर लिया था। दसवीं सदी के अन्त में समरकन्द के कागज ने मुस्लिम देशों से चर्मपत्र को हटा दिया।

(ज) जोजक—कोमल ऊन और ऊर्नी कपड़ा।

(झ) बनाकत—तुर्किस्तानी कपड़े।

^१Turkistan down...

(ब) शाश^१—घोड़े के चमड़े का ऊँचा चारजामा, बाड़, तबू, चमड़ा, चौगा, जायन-माज, चमड़े की टोपी, अलसी, सुन्दर धनुष, दरजी की सुई कैंची और बढिया चीनी बर्तन ।

(ट) इस्फिजाब और फरगाना—सफेद कपड़े, हथियार, तलवार, ताबा, लोहा और तुर्क दासों के लिये मशहूर था ।

(ठ) तराज (तलश)—बकरी का छाला ।

(ड) शालजी—चादी ।

(ढ) तुर्किस्तान—घोड़े और खच्चर ।

(ण) खुत्तल—घोड़े और खच्चर ।

(२) अज्जीविका और कर—वक्षु और सिर-दरिया के बीच की भूमि (अन्तर्वेद) के निवासियों को अपनी जरूरत और विलासिता की भी बहुत सी चीजों के लिये किसी दूसरे देश का मुह्र ताकने की आवश्यकता नहीं थी। चीन का प्रभाव सीधे और तुर्क जातियों द्वारा भी यहाँ पड़ा। उसके कारण यहाँ शिल्प की बड़ी उन्नति हुई। पहिले-पहल इस प्रदेश को जीतने पर अरब विजेताओं ने यहाँ बहुत प्रकार के चीनी माल पाये। स्थानीय शिल्प-उद्योग के बढ़ने पर चीनी माल की खपत कम हो गई। जरफशा (सोद्) उपत्यका के रेशमी और सूती कपड़े मारे मुस्लिम जगत में प्रसिद्ध थे। फरगाना की धातु की चीजें, विशेषकर हथियारों की माग बगदाद में भी बहुत थी। यहाँ पत्थर का कोयला भी इस्तेमाल किया जाता था। ईसापूर्व द्वितीय शताब्दी के चीनी यात्री चाङ्ग-क्यान् ने लिखा था “यहाँ काले पत्थरों के पहाड़ हैं, जो कि लकड़ी की तरह जलते हैं।” पत्थर के कोयले ने यहाँ के धातु-उद्योग के विकास में बड़ी सहायता की। अन्तर्वेद के शिल्प और कलापूर्ण वस्तुओं के उद्योग के विकास में चीन ने ही नहीं मिस्र ने भी मदद की थी—दबीकी कपड़ा ख्वारेज्म में बनता था, जो कि मूलतः मिस्र के दबीक स्थान की चीज थी।

ख्वारेज्म के तरबूज दुनिया में बहुत मशहूर थे। उन्हें बरफदान में पैक करके खलीफा मामून (८१३-३३), खलीफा वामिक (८४२-४७) के पास बगदाद भेजा जाता था। सही-साबित पहुँचे एक खरबूजे का दाम सात सौ दिरहम होता था।

घुमन्तू जातियाँ मास के लिये ढोरो और भेड़ों को बेचने लाती थी। सवारी और ढुलाई के जानवर, चमड़े, समूर, तथा दास-दासियों को भी देकर उत्तर के घुमन्तू कपड़ा और अनाज

^१ शाशके बारे में अल्ब्रेख्तीने (अल्हिन्द पृ० ४०१ में) लिखा है—“अपरिचित और दूसरी भाषा बोलने वाली जातिके विजयी होने पर नामों में परिवर्तन बहुत जल्दी हो जाता है। विदेशी जातियों के मुह्र से उनका उच्चारण अक्सर कठिन होता है, इसलिये वह लोग उनको अपनी भाषा में बदल लेते हैं। जैसे ग्रीक (यूनानी) लोगों की आदत है, कि कभी-कभी असली नामों के अर्थ को अपनी भाषा में अनुवाद कर लेते हैं, इसलिये नाम बदल जाते हैं। शाश अपने तुर्की नाम ताश-कन्द में निकला है, अर्थात् पत्थर का गाव। अरब वाले शब्दों को अरबी कर देते हैं, जिससे शब्दों में परिवर्तन आ जाता है। उदाहरणार्थ पोसग उनकी किताबों में फोसज और सकलकन्द उनके कागजों में फारफजा बन गया है।

ले जाते थे। उत्तर के घुमन्तुओं का सबसे अधिक व्यापार ख्वारेज्मी सरतो (ताजिकों) के हाथ में था। ख्वारेज्म से उनका कारवा जहाँ उत्तर के घुमन्तुओं में जाता, वहाँ दक्षिण में खुरासान और पश्चिम में बोलगा और कासपियन पार खज्जारों के मुल्क में भी जाता था। वहाँ से एक रास्ता अराल-समुद्र के पश्चिमी तट से रेगिस्तान पार हो पेचेनगा के देश में जाता। ख्वारेज्मी सौदागरों की संपत्ति खुरासान के सभी शहरों में थी। यह व्यापारी कितने विद्या-नुरागी थे, यह इसी से मालूम होगा, कि अलबैरूनी इन्हीं में पैदा हुआ था।

(क) मजुरी—एक ताम्रकार के नौकर लैस-पुत्र याग को पन्द्रह दिरहम मासिक वेतन मिलता था।

(ख) कर—सामानियों की आमदनी प्रायः साढ़े चार करोड़ दिरहम थी। ख्वारेज्म का खर्च सबसे अधिक सेना और उसके अफमरों पर होता था, जो कि प्रतिवर्ष दो करोड़ (पचास लाख तिमाही) था। सामानियों ने खर्च बढ़ाते हुए अन्त में मृत्यु-कर भी लगा दिया था। भारत की आजकल की सरकार भी खर्च को कई गुना बढ़ाकर उसी पथ पर चल रही है।

(ग) भूमिपति—बहुत से गांव इस काल में सामन्तों की जमींदारी थे। सिमजूरियों की जमींदारी में सारा कोहिस्तान था। तुर्क गुलाम अल्पतगिन के खुरासान और अन्तर्वेद में पाँच सौ गांव थे। प्रत्येक शहर में उसका एक महल, एक बाग, एक कारवासराय, और एक हम्भाम (स्नानागार) होता था।

(छ) आयातकर—सीमान्तों और नदियों पर भी कर लिया जाता था। आमू-दरिया पर उतरने वाले जानवरों में प्रति ऊट पर दो दिरहम और सवारी के लिये एक दिरहम कर लेते थे। दिरहम के चादी के सिक्के थे। तुर्की गुलाम के क्रय के लिये प्रमाणपत्र सत्तर से सौ दिरहम तक के होते थे। तुर्की दासियों के खरीदने के लिये विशेष लाइसेंस की जरूरत नहीं पड़ती थी।

स्रोत ग्रन्थ :

- 1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
- 2 Heart of Asia (E D Ross)
३. त्रुदी अत्तेला नुमिज्मातिकी १ (लेनिनग्राद १९४५)
४. दर्शनदिग्दर्शन (राहुल सांकृत्यायन, प्रयाग १९४७)
५. सियासतनामा (निजामुल्मुल्क)
- 6: History of Bokhara (A Vambery)
७. इस्कूस्त्वो स्नेदिइ आजिइ
8. Historie des Samanides (मीरखुन्द, अनु० C Defremery)

अध्याय २

कराखानी (६६३-१३१ ई०)

§१. उद्गमः

उत्तरापथ के वर्णन में हम कराखानियों के बारे में लिख चुके हैं। कराखानी मूलतः आगूज या उइगुर तुर्कों की शाखा थे। उनका प्रथम खाकान शातुक बुगरा खान अन्तर्वेद में नहीं आया, किन्तु प्रथम मशहूर कराखानी खान बुगरा खान हारून मई ९९९ में विजेता के तौर पर बुखारा में दाखिल हुआ, यह हम कह आये हैं। इन घुमन्तुओं के कितने ही राजवंशी शासक भिन्न-भिन्न प्रदेशों और नगरों पर शासन करते हुए बड़ी बड़ी उपाधियों के साथ अपने सिक्के चलाते थे। इनके राज टूटते और स्थापित होते रहते थे, जिसके कारण निश्चित तौर से यह कहना मुश्किल है, कि इनमें से कौन अन्तर्वेद में शासन करता रहा और किसका राज्य सप्तनद और तरिम-उपत्यका तक फैला हुआ था। तो भी जिन शासकों का वर्णन नीचे दिया जा रहा है, वह प्रायः सभी दक्षिणापथ के शासक थे।

§२. खान—

बुगराखान	(मृ० ९३३ ई०)
१ इलिक नख्त
२ बुरीतगिन	१०४१-
३ इब्राहीम	१०५९-
४ शम्शुल्-मुल्क	१०६८-१०८०
५ खिज्रा	१०८०-
६ अहमद	१०९५-
७ मसऊद	१०९५-
८ कादिर	१०९५-११०१
९ महमूद तगिन	११०२-११२८
१० तमगाच बोगरा	११३०-
११ किलिच तमगाच
१२ रुकनुद्दीन महमूद

^१ Heart of Asia. Turkistan. (W. Bartold)

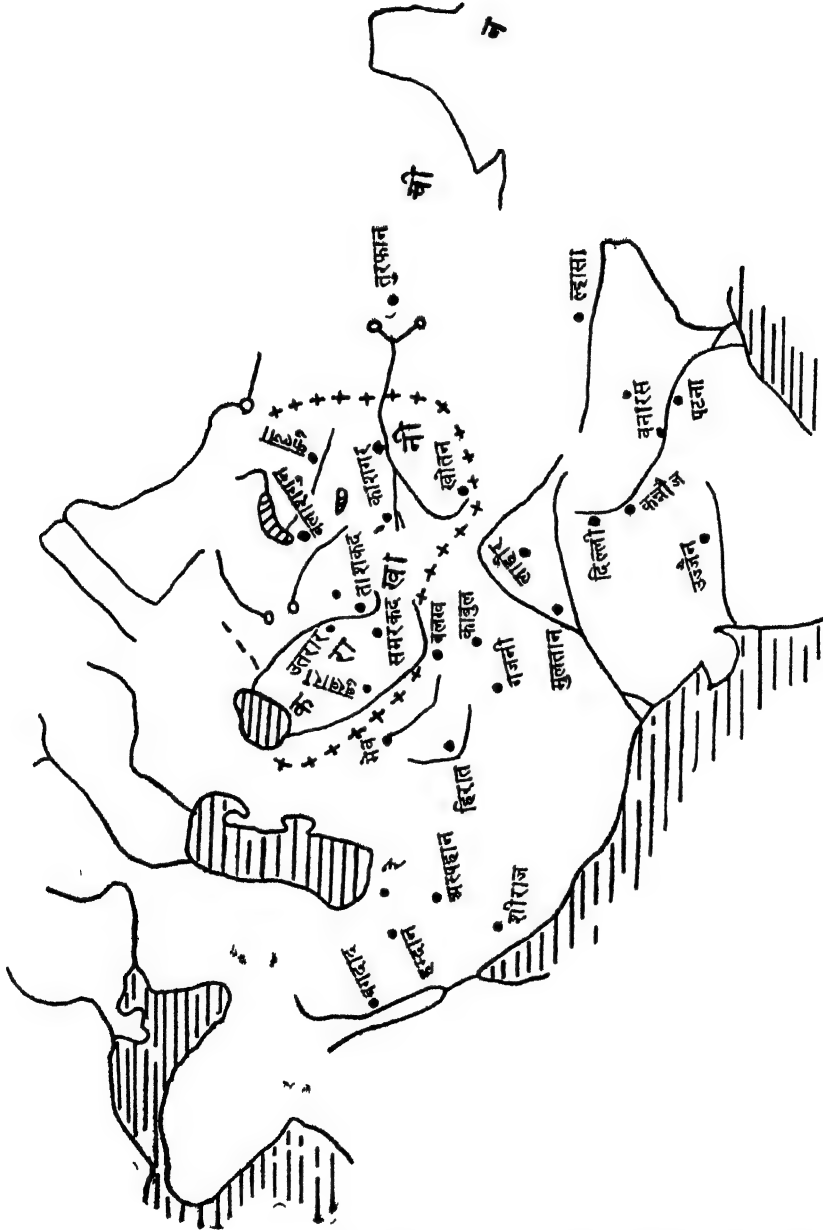
बोगराखान हारून

बोगराखान हारून (मृत्यु ९९३) के बाद काराखानी वंशका मुखिया कौन हुआ, इसे निश्चयपूर्वक कहना मुश्किल है। शायद वह इलिक नस्र (९९३-) का बाप अरसलन खान अली था, जो कि ९९८ ई० में शहीद हुआ था। उसे तुर्की भाषामें हरिक (दग्ध) पदवी से याद किया गया है, जिसका अर्थ शहीद है। अरसलनके अधीनस्थ शासकके तौरपर इलिक उजगन्दमें रहता था। काराखानी राज्यमें ही क्या सभी घुमन्तू साम्राज्योंमें पैतृक सम्पत्तिका ख्याल वैयक्तिक ही नहीं सारे राज्यकी सम्पत्ति तक पहुंचता था। राज्य केवल खान नहीं बल्कि उसके सारे परिवारकी सम्पत्ति माना जाता था, इसलिये उसके अलग-अलग इलाकोको राज-वशिकोके छोटे-छोटे राज्यके तौरपर बांट दिया जाता था, जिन्हें उनके परिवारो-उपपरिवारोके व्यक्तियोंके अनुसार फिर विभाजित किया जाता था। सारे साम्राज्यका प्रमुख खान कितनी ही बार अपने वंशके शक्तिशाली सामन्तो द्वारा मान्य नहीं होता था। राज्यके बटवारेकी यह प्रथा वैयक्तिक झगड़का कारण बन जाती, जिसके कारण शासकोमें बराबर परिवर्तन होता रहता, इसीलिये राजवंशके भिन्न-भिन्न व्यक्तियोंके शासनकालके बारेमें किसी निश्चयपर पहुंचना असंभव सा है। काराखानियोंके सिक्के बहुत मिलते हैं, लेकिन वह भी गुत्थी सुलझानेमें असमर्थ हैं। निश्चित ऐतिहासिक आकड़े न मिलनेके कारण अक्सर यह मालूम नहीं होता, कि एक या उसी तरहके सिक्केमें जो भिन्न-भिन्न उपाधिया उल्लिखित हैं, वह एक व्यक्तिकी हैं या अनेक व्यक्तियोंकी। दिक्कत और भी बढ़ जाती है, जबकि हम उत्तरापथ और दक्षिणापथ, पूर्वी तुर्किस्तान और पश्चिमी तुर्किस्तानमें एक ही काराखानी वंशके भिन्न-भिन्न शासकोको अपना स्वतंत्र सिक्का जारी करते, स्थान-परिवर्तन भी करते देखते हैं। इसीलिये हम उत्तरापथ और दक्षिणापथकी कोई सीधी विभाजक रेखा नहीं खींच सकते।

(१) इलिक नस्र (-९९३)

बोगरा खानके मरनेपर उसका पुत्र इलिक नस्र खान गद्दीपर बैठा। सामानी दरबारी फायक भागकर इलिक नस्र खानकी शरणमें गया था, जबकि नूह और सुबुकतगिनकी र्स्मिलित शक्तिने अन्तर्वेदसे काराखानियोंको हटा देनेकी कोशिश की थी। इलिक खानने फायकको सम-रकन्द का अमीर (राज्यपाल) बना दिया। लेकिन तब तक और कार्यवाही नहीं होसकी, जब तक ९९७ ई० नूह और सुबुकतगिन मर नहीं गये। नूहका उत्तराधिकारी मन्सूर भारी कायर और सुबुकतगिनका उत्तराधिकारी महमूद गजनवी महान् विजेता था। ९९६ ई० में काराखानियोंका आक्रमण हुआ। १७ अगस्त ९९२ ई० को बुखारा लौटनेके बाद सारा अन्तर्वेद नहीं बल्कि उसका एक भाग नूहके हाथमें ही रह गया था। वह अकेले इलिक खानका मुकाबिला नहीं कर सकता था, इसलिये उसने सुबुकतगिनको बडी सेनाके साथ बुलाया। जैसा कि पहले कहा, गुज़ार, शगानियान और खुत्तलके अमीर भी उसके साथ थे। बुलाने और नूह के इन्कार करनेपर सुबुकतगिनने बीस हजार सेना बुखारा भेजी। इस पर नूहने नाक रगड़कर उसकी सारी बाते मानी। वजीर अब्दुल्ला उजैरपुत्रको पदच्युत कर उसे सुबुकतगिनके हाथमें दे दिया। सुबुकतगिनने अपने आदमी अबूनस्र अहमद मुहम्मद-पुत्र अबूजैदको वजीर बनाया। उसने

कराखानियोंसे समझौता कर लिया। सुबुकतगिन अब वक्षु (आमू-दरिया) उपत्यकाका स्वामी हुआ। सारा खुरासान सामानियोंके हाथसे निकल गया।



कराखानीसाम्राज्य (९६३ ई०)

९९९ ई० की गरमियोंमें फायक मर गया। इलिक खानने चाहा कि महमूद गजनवी और उसके राज्यके बीचमें सामानियोंका भाग न रहे। मसूरको १ फरवरी ९९९ ई० को गद्दी से उतार अथा करके बुखारा भेज दिया गया था और उसकी जगह पर अब्दुल

मलिक II अमीर घोषित हुआ। इलिक खानके खतरेकी बात जब बुखारा पहुची, तो वहा बडो गडबडी हुई। खतीबने बुखाराकी मस्जिदमे लोगोको बादशाहकी ओरसे लडनेके लिये समझाना चाहा, किन्तु सशस्त्र होनेपर भी बुखारावाले अब सामानियोपर विश्वास करनेके लिये तैयार नही थे। इस्माईलके समयसे ही सामानी वस्तुतः जनताके प्रिय नही थे। वह पुराने सामान्त-वशी थे, इसलिये साधारण जनताके साथ घनिष्ठता स्थापित करने के लिये तैयार नही थे। उनका एक बडा बल यह था, कि वह कट्टर सुन्नी थे और शिया-आन्दोलनको हर तरहसे दबाना चाहते थे। शिया-आन्दोलन इस समय जनसाधारणका बडा पक्षपाती तथा जनतात्रिक आन्दोलन था। वह आर्थिक तोरसे शोषित-पीडित जनताकी आकांक्षाओका समर्थन करता था, ओर राष्ट्रीय दृष्टिसे भी अरबोका पक्षपाती न हो ईरानियो तथा दूसरोके जातीय स्वाभिमानको उभाडता था। शिया-आन्दोलनके अनुगामियोमे प्रसिद्ध दार्शनिक बू-अली सेनाका बाप और भाई भी थे। सुन्नीयोकी भी पूरी सहानुभूति सामानियोके साथ नही थी, बल्कि वह अबू अली और फायक जैसे नेताओको अपना अगुआ मानते थे। कराखानी अभी हालही मे मुसलमान हुए थे, इसलिये “नया मुसलमान प्याज ही प्याज” की कहावतके अनुसार वह इस्लामके कट्टर पक्षपाती थे। वह स्वयं असंस्कृत-अशिक्षित थे, इसलिये उनका सारा शासन-प्रबन्ध अधिक सम्य सोग्दी या तुर्की मन्त्रियोके हाथोमे था। जनता अपने धर्म-शास्त्रियोकी सलाह मानती थी, जिनका कहना था—“दुनियावी चीजोके लिये यदि सघर्ष हो, तो मुसलमान जहादके लिये बाध्य नही है।” ऐसी स्थितिमे सामानियोको बुखारासे क्या सहायता मिल सकती थी? ऊपरसे इलिक खानने घोषित किया था, “मे सामानियोके मित्र और सरक्षकके तौरपर बुखारा आ रहा हूँ।” लोग विजेताकी ओर हो गये। बुखारी सेनाके सेनापति बेग तुजून ओर यनाल-तगिन अपनी इच्छासे विजेताके दरबारमे उपस्थित हुए और उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया। २३ अक्टूबर (११९ ई०) को इलिक खान बुखारामे बिना किसी विरोधके दाखिल हुआ और सामानी खजाना उसके हाथमे आ गया। अब्दुल मलिक और दूसरे राजवंशियोको बंदी बनाकर इलिकने उजगन्द भेज दिया और वह स्वयं भी बुखारा और समरकन्दमे अपने गवर्नर नियुक्त कर लौट गया। इस प्रकार जनसाधारणकी पूर्ण उपेक्षाके साथ मध्यएशियामे ईरानी मुसलमानोके प्रथम गौरवशाली राज-वंशका अन्त हुआ। इसमे सदेह है, कि उस समय किसीने इस घटनाके ऐतिहासिक महत्वको समझा। सदियों तक तुर्को और अरबोके शासनके बाद मध्यएशियाके ईरानियोने यह सुन्दर मौका पाया था, और इसके परिणामस्वरूप ईरानी (फारसी) साहित्य, संस्कृति और कलाका पुनरुज्जीवन और प्रगति भी काफी हुई, लेकिन इस्लामने राष्ट्रीयता की भावनाको कुचलकर धर्मान्धताके भाव इतने भर दिये थे, कि लोग इस बातको नही समझते थे। उनका ख्याल था—

(२) इब्राहीम (बुरी तगिन १०४१)

गजनवियोकी निर्बलतासे लाभ उठाते मसऊदको बुद्धे दिन दिखाकर बुरीतगिनने अब अन्तर्वेदमे अपना स्वतंत्र राज्य कायम कर लिया। १०४१ (४३३ हि०) मे ही बुगरा खानने

^१बुरी तगिन अन्तर्वेदमे अपना शासन मजबूत कर खाकानसे स्वतंत्र हो गया। १०४१ ई० (४३३ हि०) मे बुगरा खानके अधीन वह बुखाराका शासक था, यह उसके सिककोमे मालूम होता है।

उसे बुखाराका शासक बना दिया था। १०४६ (४३८ हि०) के समरकन्दी सिक्कोपर इसके लिये “इमादुद्दौला ताजुलमिल्लत सैफ-खिलाफतुल्ला तमगाचखान इब्राहीम” का उल्लेख है। बुगरा खानने भी उससे पहिले चीन सम्राजी तमगाचखानकी उपाधि धारण की थी। बुरी तगिनने पीछे “पूर्व और चीनका राजा” की पदवी धारण की, और उसका पुत्र नस्र “प्राची और चीनका सुल्तान” बना, यद्यपि दोनों बाप-बेटोका “प्राची और चीन” अन्तर्वेद तक ही सीमित था।

तुर्कभूमि (उत्तरापथ) के कराखानियोंके आपसी झगडोके कारण इब्राहीम (बुरीतगिन) को सफलता मिली। बुगरा खान हारूनके समय १०४४ (४३६ हि०) में अन्तर्वेदमें शिया-आन्दोलन जोर पकड़े हुए था। अन्तर्वेदके शासक बगदादके सुन्नी अब्बासी खलीफाको अपना पोप मानते थे, किन्तु शिया मिस्र के फातमी खलीफा मुस्तसिर (१०३६-१०९४ ई०) को स्वीकार करते थे। उनके प्रभावमें स्वयं बुगरा खान आ गया और उसने शिया धर्म स्वीकार किया। मध्यएशिया, ईरान और दूसरे देशोंमें भी देखा गया है, कि अपनी प्रजाको दूसरेके प्रभावमें न जाने देनेके लिये शासक अपने धर्मको बदल देते थे। आगे मंगोलोके समय यह बात मध्यएशिया, ईरान और रूसमें दुहरायी गयी। बुगरा खानने राजनीतिक चालसे ही शियोंका समर्थन किया था, इसलिये उसने बुखाराके शियोंका कतलआम करा दिया। विचार पलटा, दूसरे शहरों में भी वैसा ही करनेका हुक्म दिया।

३. इब्राहीम II इलिक-पुत्र (१०५९)

इब्राहीम तमगाच खान बड़ा धर्मात्मा था। उसका पिता नस्र भी फकीरी जीवन व्यतीत करता था। तमगाच खान इब्राहीम स्वयं अपने लिये राजकोशसे पैसा नहीं लेता था और न मुसलमान साधुओकी राय लिये बिना टैक्स लगाता था। अली-वशज अबू-शुजा नामके एक साधुने एक बार उससे कह दिया—“तुम सुल्तान होने लायक नहीं हो।” इसपर उसने अपने महलका दरवाजा बन्द कर तख्त छोड़ना चाहा। लोगोंने बहुत समझा-बुझाकर उसे रोका। सलजूकियोंकी अपेक्षा कराखानी अधिक सस्कृत और सम्य थे। पूर्वी तुर्किस्तान और सप्तनद उनका केन्द्र होने के कारण वह चीनी तथा उइगुर जैसी सम्य जातियोंके सपर्कमें आये थे। १०६९ ई० में तुर्की भाषाकी प्रथम कविता-पुस्तक “कुदतकु-विलिक” एक सामन्त कविने लिखी। तमगाच खानने पहिले अपना सारा ध्यान देशमें शान्ति कायम रखनेमें लगाया। लेकिन, सपत्ति सबधी चोरी आदि अपराधोका दण्ड बहुत निष्ठुरता-पूर्वक दिया जाता था। एक बार समरकन्दके किलेके फाटकपर इस दण्डके विरोधमें लुटेरोने लिख दिया “हम प्याज हैं, जितना ही छाटे जायेंगे, उतना ही और बढ़ेंगे।” तमगाचने उसके नीचे लिखवा दिया “मैं यहा माली हूँ, जितना ही तुम बढ़ोगे, उतना ही मैं तुम्हारा मूलोच्छेद करूँगा।” खानने एकबार अपने दरबारियों से कहा—पहिले मैंने बहुतसे तरुण सुंदर पीधोको तलवारके घाट उतारा, अब मैं ऐसे तरुणोको अपने पास रखना चाहता हूँ, इसलिये तुम मेरे लिये तरुणोंके एक ऐसे नेताको ढूँढ लाओ, जो कि लूट-पाटसे जीविका करता है। मैं उसपर दया दिखाऊँगा, और वह मेरा काम करनेके वास्ते

* इब्राहीम बुगरा खानकी औलादका अन्तिम खाकान, १०५८ ई० में मरा, जिसके बाद उसका पुत्र नस्र (१०५८-७० ई०) गद्दीपर बैठा। इस समय काशगरका राज्य कराखानियोंकी एक दूसरी शाखा तुफगाजके हाथमें था—Turkistan (Bartold)

दो लाख सेनाके साथ अन्तर्वेदपर चढ़ा, किन्तु इसी बीच उसकी हत्या हो गयी। उसके हत्यारे किलेदारको गिरफ्तार करके मृत्यु-दण्ड दिया गया। उसी जाडेमे शमशुल्मुल्क तेरमिजको ले बलखमे प्रविष्ट हुआ। बलखके गवर्नर अयाज (अल्प-अरसलन-पुत्र) पहिले ही वहासे भाग गया। लौटते समय कुछ बलिखियोने तुर्क-सेना पर आक्रमण कर दिया। शमशुल्मुल्क बलखको जला देना चाहता था, किन्तु निवासियोकी प्रार्थनापर उसने क्षमा कर व्यापारियोसे कर वसूल कर के ही सतोष कर लिया। शमशुल्मुल्कके लौट जानेपर जनवरी १०७३ ई० मे अयाज बलख लौट आया। उसने ६ मार्चको वक्षु पार हो तेरमिजको लेनेके लिये आक्रमण किया, लेकिन परिणाम अधिकाश सैनिकोको नदीमे डुबा देनेके अतिरिक्त और कुछ नही हुआ। शमशुल्मुल्कने अपने भाईको तेरमिजका शासक नियुक्त किया था। उसी समय या १०७४ के आरम्भ मे मलिक शाह सल्जूकी (१०७३-९३ ई०) ने तेरमिज लेते हुए समरकन्दपर आक्रमण करना चाहा। शमशुल्मुल्कने शान्ति-भिक्षा मागी। सल्जूकियोका प्रसिद्ध वजीर निजामुल्मुल्क बीच मे पड़ा, और सुलह हो गई। मलिकशाह खुरासान लौट गया। काशगरी कादिर खान यूसुफके पुत्रो तुगरल कराखान यूसुफ और बोगरा खान हारूनसे भी शम-शुल्मुल्क का झगडा होता रहा। अन्तमे सुलह हुई और उन्हे फरगाना तथा सिर-नदीके पार अन्तर्वेदको दे शमशुल्मुल्कने खोजदको अपनी सीमा मान ली। खीजन्दमे पहिले अकशीकत और तूनकतमे इबराहीम और उसके पुत्रोके सिक्के ढलते थे, अब मरगिनान, अक-सीकत और तूनकतमे तुगरल कराखान और उसके पुत्र तुगरल तगिनके सिक्के ढलने लगे।

अपने पिता तमगाच खान इब्राहीमकी तरह ही शमशुल्मुल्क भी न्यायप्रियताके लिये प्रसिद्ध था। वह बराबर घुमन्तू जीवन व्यतीत करता, और केवल जाडेमे अपनी सेनाके साथ बुखाराके आस-पास डेरा डालके रहता। सूर्यास्त के बाद किसी सिपाहीको शहरमे रहनेकी इजाजत नही थी। सिपाहियोको कडा हुकुम था, कि वह अपने तबुओमे रहे और प्रजाको न सताये। घुमन्तू रहते हुए भी कराखानियोने नगरोके प्रति अपने कर्तव्यकी उपेक्षा नही की। उन्होने विशाल और सुन्दर महलो द्वारा नगरोको सजाया, राजपथोके ऊपर रवाते (सराये) बनवायी (सराय मगोल भापामे राजमहलको कहते थे, जिसका अर्थ भारतमे आकर इतना गिर गया)। तमगाच खान इब्राहीमके बारेमे पता नही, किन्तु बारहवी सदीके तमगाच खान इब्राहीम हुसैन-पुत्रने समरकन्दके गुर्जजमीन (कारजमीन) मुहल्लेमे एक ऐसा सुन्दर प्रासाद बनवाया था, जिसकी सासानी राजधानी तस्पोनके ताक-खुसरोसे तुलना की जाती थी। शमशुल्मुल्ककी इमारतोमे रवाते-मलिक (राज-पान्थशाला) थी, जो १०७८ (४७१ हि०) में खरजग गावके पास बनायी गई थी। समर-कन्दसे खोजन्द जानेवाले मार्गपर आक्-कुतल्मे भी उसने एक रवात बनवायी थी। बापकी तरह इसका भी मुल्लाओसे बराबर झगडा रहा। राज्यारम्भमे ही १०७९ ई० मे उसने इमाम अबू-इब्राहीम इस्माईल अबूनस-पुत्र सफफारीको बुखारामे कत्ल करवा दिया।

शमशुल्मुल्कसे रुकुनुद्दीन महमूद तकका शासन दक्षिणापथके कराखानी वंशके इतिहासका अंश है।

५. खिज्र खान (१०८०—..)

शमशुल्मुल्कके बाद भाई खिजिर उसका उत्तराधिकारी हुआ। यह बहुत कुछ गुमनाम सा शासक है। निजामीके ग्रंथ “अरुजे समरकन्द” के अनुसार इसके शासनमें समरकन्द समृद्धिकी चरम सीमापर पहुँचा था। इसने अन्तर्वेद और तुर्किस्तान (सिर-दरियाके उत्तरी भाग) दोनों पर शासन किया। यह विद्वान, न्यायी कवियोंसे प्रेम रखता था। कवियोंमें प्रतियोगिता कराता और विजयी कविके लिये दरबार-हालमें चादी-सोनेकी तश्तरिया पारितोषिकके लिये रखवाता। खिजिर खानके दरबार-हालमें २५० दीनारो (स्वर्ण मुद्राओं) से भरी ऐसी चार तश्तरिया रखी रहती, जिन्हें एक बार एक कविने जीत लिया था। जब खान जलूसमें निकलता, तो सोने और चादीकी चोब लिये चोबदार उसके आगे आगे चलते। खिजिर खान शायद एक ही साल राज्य कर सका। उसके बाद उसके पुत्र अहमदने गद्दी सभाली।

६. अहमद (१०९५ ई०)

खिजिर-पुत्र अहमदके शासनकालमें मुल्लाओंके साथ झगड़े-फसादने बहुत उग्र रूप धारण किया, जिससे सल्जूकियोंकी बीचमें कूदनेका मौका मिला। गद्दीपर बैठते ही, पिताके समयके प्रधान काजी और अब वजीर अबूनस सुलेमान-पुत्र कासानीको अहमदने मरवा दिया। दीवान प्रजाको बहुत सता रहा था, इसीलिए शाफई-धर्मशास्त्री अबू-ताहिर इल्क-पुत्रने प्रजाके उत्पीड़नको बतलाते हुए मलिक शाहसे सहायता मांगी। मलिक शाहने १०८९ ई० में बुखारा ले लिया। सल्जूकी सेना समरकन्द लेनेके लिये पहुँची, मुकाबिला कड़ा हुआ। किला घेरे रहते समय नागरिकोंने मलिकशाहके पास रसद पहुँचायी। कराखानियोंने अली-वशज एक अमीरको बुर्जकी रक्षाका भार दिया था। उसका लडका बुखारामे बन्दी था। मलिक शाह सल्जूकीने उसे कत्ल कर देनेकी धमकी दी, इसलिये पिता ढीला पड़ गया। बुर्ज लेकर मलिक शाहने किलेपर अधिकार कर लिया। अहमद किसी नागरिकके घरमें छिपा हुआ था। गर्दनमें रस्सी डालकर उसे मलिकके पाम लाया गया। मलिकशाहने उसे अस्पृहान भेज दिया। फिर अपनी विजय-यात्राको जारी रखते वह उज्जगन्द पहुँचा। उसका रोब इतना छा गया था, कि काशगरके कराखानी खानने स्वयं आकर अधीनता स्वीकार की, खुतबामे मलिक शाहका नाम पढ़वाया तथा उसके नामसे सिक्के जारी किये। समरकन्दमें अपना उपराज छोड़ कर मलिक शाह खुरामान लौट गया।

कराखानियोंकी सेनामें उनके जिकली कबीलेका भाग बहुत था। किसी कारणसे वह अपने खानसे नाराज हो गये और अन्तर्वेदमें रहनेवाले उनके लोग मलिकशाहसे मिल गये। लेकिन सफलता प्राप्त करनेके बाद मलिकशाहने उनकी अच्छी तरह खातिर नहीं की, जिसपर जिकलौ विद्रोही हो गये। मलिकशाहके हटते ही जिकली सेनाने समरकन्दके उपराजपर आक्रमण कर दिया। उपराजको भागकर ख्वारेज्ममें शरण लेनी पड़ी। विद्रोहियोंके नेता ऐनुद्दौलाने काश-

गरी खानके भाई तथा अतवाश नगरके गवर्नर याकूब तगिनको सप्तनदसे बुलाया। उसने ऐनुद्दौलाको कत्ल करवा कर शासनकी बागडोर अपने हाथमे ले ली। इसपर जिकली खिलाफ हो गये। मलिकशाहने खबर पाते ही फिर अन्तर्वेदका रास्ता लिया। उसके बुखारामे घुसते ही याकूब फरगानाके रास्ते अतबास भाग गया और उसकी सेना तवाबीसमे मलिकशाहसे मिल गई। यह स्मरण रखना चाहिये, कि इस समयके ईरानी शासक सल्जूकी भी कराखानियोंकी तरह तुर्क थे। दोनों की भाषाओमे भी बहुत अन्तर नहीं था, इसलिये सेनाओका राजभक्ति-परिवर्तन जातिद्रोह नहीं समझा जा सकता था। समरकन्द लेकर मलिकशाह फिर उजगन्द पहुँचा। उत्तरमे कराखानी खानोके घर झगडे इतने तीव्र थे, कि मलिकशाह निश्चित होकर फिर खुरासान लौट गया। अबकी बार भी मलिकशाहने खिज़्र-पुत्र अहमदको फिर शासक बनाया, लेकिन वह अधिक समय शासन नहीं कर सका। ईरानमे रहते हुए अहमद दैलमी दरबारके सपर्कमे आया था, जहा वह शिया विचारोसे प्रभावित हो गया। अन्तर्वेद लौटनेपर मुल्लोको यह अच्छा मौका मिला, क्योंकि अन्तर्वेदके मुसलमान धर्मान्ध सुन्नी और शियोंके कट्टर विरोधी थे। समरकन्दके धर्मशास्त्रियो(फकीहो)और काजियोने नास्तिक होने का अपराध लगा सेनाको कत्ल करनेके लिये भडकाया। लेकिन राजधानीमे अहमद इतना जनप्रिय था, कि वहा विद्रोह करानेमे सफलता नहीं हुई। तब उन लोगोने कासान नगरके शासक तुगरल यनाल बेगको विद्रोह करनेके लिए तैयार किया। जब अहमद सेना लेकर पहुँचा, तो सेनाने विद्रोह कर दिया। खानको पकड़कर समरकन्द ला धार्मिक अदालतके सामने पेश किया गया। उसने अपनेको बिल्कुल निरपराधी बतलाया, लेकिन तब भी उसे अपराधी कहकर काजियोने मृत्यु-दण्ड दे, धनुषकी प्रत्यचाको गलेमे डालकर फासी लगवा दी गई। यह जनमतको पूर्णतया विरोधी बना कर ही किया जा सकता था।

७. मसऊद खान (१०९४)---

विद्रोहियोने अहमदके चचेरे भाई मसऊद खानको समरकन्दकी गद्दीपर बैठाया। यह थोडे ही समय तक शासन कर सका।

८. कादिर (१०९५-११०१)---

इसके समय खुरासानके गवर्नर सजर सल्जूकीने विद्रोह किया चचा भतीजे की लडाईमे कादिरखान मारा गया।

१०९७ ई० मे मलिकशाह-पुत्र बरकयारक सल्जूकीके हाथमे अन्तर्वेद आ गया। उसने सुलेमान तगिन (...—११०२) महमूद तगिन और हारून तगिन कराखानी खानजादोको एकके बाद एक अन्तर्वेदका शासक नियुक्त किया था। उनमे सुलेमान तगिन दाऊद कुजतगिनका पुत्र और तमगाच खान इब्राहीमका पौत्र था। बारहवी सदीके आरम्भमे तुर्किस्तान(सिर-पार) के कराखानियोने अन्तर्वेदपर आक्रमण किया। कादिर खान जिबराईल (बोगराखान मुहम्मद-नौत्र) ने अन्तर्वेद ही नहीं ले लिया, बल्कि ११०२ ई० मे सल्जूकियोंकी भूमि(खुरासान) पर भी आक्रमण कर दिया। वह तेरमिज लेनेमे सफल हुआ, लेकिन २२ जून ११०२ ई० को तेरमिजके नातिदूर सुल्तान सजर सल्जूकी (१११७-५७) से लडते हुए मारा गया।

९ महमूद तगिन (११०२-२८) ई०

सजरने सुलेमान तगिन-पुत्र महमूद तगिनको मेवसे बुलाया। आपसी सघर्षमे कराखानी खानजादे अक्सर शरणार्थी बनकर पास-पड़ोसके सुल्तानोके दरबारमे रहते थे। कादिर खानके आक्रमणके समय महमूद अन्तर्वेदसे भागकर सल्जूकोकी राजधानी मेवमे चला गया था। महमूदने अरसलनखानकी उपाधि धारण करके ११३० ई० तक शासन किया। शासन सभालते ही उसे एक कराखानी राजकुमार (खानजादा तगिन) शागिर बेगके विद्रोहोका मुकाबिला करना पडा। पहिले विद्रोहमे ११०३ ई० मे सजर सहायताके लिये आया था और दोनो प्रतिद्वन्द्वियोमे सुलह कराकर दिसम्बर के महीनेमे मेव लौट गया। ११०९ ई० (५०३ हि०) मे शागिर बेगने फिर विद्रोह किया, लेकिन अरसलनने सजरकी सहायतासे नकशाबके पास उसे हरा दिया। इसके बाद बीस साल तक अन्तर्वेदमे शान्ति रही। अरसलनने अन्तर्वेदमे सभी कराखानियोसे अधिक इमारते बनवायी। उसने बुखाराके दुर्ग और नगर-प्राकारकी भी मरम्मत करवाई। वहाके शमशाबाद-प्रासादके ध्वस होनेपर १११९ ई० मे ईदगाह महल बनवाया। ११२१ मे बुखाराकी जामा-मस्जिदकी सुंदर इमारत इसीने बनवायी। दो और प्रासाद बनवाये, जिनमे से एकको पीछे मदरसा बना दिया गया। पैकन्द नगरका उसने पुनर्निर्माण कराया। किलेके पासकी जामा-मस्जिदके मीनारको शहरिस्तानमे ले जाकर उसे बड़े भव्य रूपमे पुन स्थापित करा दिया। लेकिन थोड़े ही समय बाद मीनार और एक तिहाई मस्जिद गिर गई। अरसलनने अपने खर्चसे सारे मीनार और मस्जिदको फिरसे (११२७ ई० मे) बनवा दिया। अरसलन अपनी इस्लाम-भक्तिको प्रमाणित करते हुए किपचक (अरालसागरसे उत्तरकी भूमि) के काफिरोपर जहाद भी बोला। यह हम पहिले बतला चुके हैं, कि मुसलमान होनेसे पहिले यह घुमन्तू बौद्ध या ईसाई साधू-सन्तोके भक्त हुआ करते थे। जिसकी तृप्तिके लिये मुसलमान साधू-सन्तोकी भी महिमा बढी। अरसलन खान महमूद भी यूसुफ हसन-पुत्र बुखारी सामानी नमदापोश (नमदेवाला) का परम भक्त था। नमदापोशने तीस साल तक बुखाराके अपने मठ (खानकाह) मे सिर्फ फलाहारपर गुजारा किया था। इसके अतिरिक्त बुखारामे एक दूसरा सन्त शेख अबूबक्र कल्ला-बादी था, जो बिल्कुल मास नहीं खाता था। अरसलन नमदापोशको बाबा (पिता) कहा करता था। १११५ (५०९ हि०) मे शेख एक दुष्टकी तीरसे मरकर शहीद हुआ। जो भी सूफी दिनमे बाजारके प्याव पर पानी पीता, उसे शेख शहरसे बाहर करवा देता, क्योंकि उसके मतमे सूफीका सबसे पहिला कर्तव्य है अपने सदाचारका पालन करना।

सूफियो-सन्तोका इतना भक्त होते अरसलनका मुल्लोके साथ बराबर सघर्ष रहा। मुल्ले एक तो परमलोभी फिर, विचार-स्वतंत्रताके घोर शत्रु थे, दूसरी तरफ बौद्ध साधुओके पथपर चलनेवाले सूफी-सन्त त्यागी तथा विचार-स्वतंत्रताके पक्षपाती थे। सूफियोके भक्त मुल्लाओको क्यो पसंद करने लगे? शमशुलमुल्कके समय मारे गये इमाम सफारका पुत्र भी अपने पिताकी तरह ही ढोंगी मुल्ला था। उसने सुल्तानपर धर्म-विरोधी होनेका आक्षेप किया, इसपर तगिनके सरक्षक सजरने उसे मेवमें निर्वासित कर दिया। जीवनके अन्तमे अरसलनको लकवा मार गया, और उसने अपने पुत्रको राजकाजमे सहभागी बना लिया। तदुपरा शासकके विरुद्ध षड्यंत्र करने वालोका मुखिया धर्मशास्त्री और अध्यापक (फकीह-मुदरिस) अशरफ मुहम्मद-पुत्र समरकन्दी

था, जो हजरत अलीका वंशज मुल्लोका सरदार और समरकन्दका रईस था। अरसलनने षड्यंत्रको दबानेके लिये सिंजरसे मदद चाही और साथ ही अपने दूसरे पुत्र अहमदको भी बुला लिया। नगरके फकीर और रईस उससे मिलने गये। तक्षण खानने उन्हें पकड़नेकी आज्ञा दे दी और फकीरको तुरन्त कत्ल करवाकर षड्यंत्रको दबा दिया। शान्ति स्थापित हो जानेपर अरसलनको इसका अफसोस हुआ कि सिंजरको क्यों बुलाया। सिंजर करलुकोको हराकर अन्तर्वेदमे दाखिल हुआ। शिकारके वक्त उसने बारह आदमी गिरफ्तार करवाये, जिन्होंने स्वीकार किया, कि हमें सुल्तानको मारनेके लिये अरसलनने भेजा था। सिंजरने समरकन्दको ले लिया। खानके कहनेपर मुल्लोने सिंजरके पास खानको क्षमा-दान करनेके लिये पत्र लिखा। सिंजरने कहा—“सुल्तानको इस बातका आश्चर्य है, कि मुल्ला लोग ऐसे आदमीकी आज्ञाकारिता स्वीकार करे, जिसे अल्लाने स्वयं पद-वर्चित कर दिया, जो किसी हथियारके उपयोग करनेमें असमर्थ है, जिसे सर्वशक्तिमान् अल्लाकी सहायता प्राप्त नहीं है, जिसे कि जगत्-शासक अल्लाकी छाया, खलीफाके उपराज (सिंजर) ने गद्दीसे उतार दिया है।” आगे सिंजरने यह भी लिखा, कि मैंने इस गुमनाम आदमीको उठाकर खान बनाया, इसके प्रति-द्वन्द्वीको खुरासानमें भेज दिया, सत्रह वर्षों तक अपनी सेनासे इसकी सहायता की। इस सारे समयमें इसने दुश्शासन किया, पैगम्बरके वंशजों (मैय्यदों) को मारा, पुराने सभ्रान्तकुलोका उच्छेद किया, केवल मदेहपर लोगोको कत्ल कराया, उनकी संपत्ति जप्त की।

सिंजरके ७० हजार हथियारबन्द सिपाही—“जिनके रास्तेमें कोई पर्वत भी बाधा नहीं डाल सकता”—गहिलेसे ही समरकन्दके ऊपर आक्रमण करनेके लिये तैयार थे। सुल्तानने कहा—“केवल नगरको बचानेके लिये मैंने उन्हें रोक रखा है—उन नागरिकोको बचानेके लिये,—ने जो कि अपनी धार्मिकताके लिये मशहूर है। सुल्तानकी रानी—अरसलन खानकी पुत्रीने सिंजरको बहुत समझाया था। ११३० के वसतके आरम्भमें सिंजरने जब समरकन्द ले लिया, तो रोग-शय्यापर पड़े अरसलनको चारपाईपर लिटाकर सुल्तानके पास पहुँचाया गया। उसकी बेटी भी मिलनेके लिये बुलाई गई। कुछ समय बाद जब सुल्तान लौटती यात्रामें बलब पहुँचा, तो वहाँ अरसलन मर गया और उसे मेर्वमें अपने बनाये मंदरसेमें दफनाया गया।

१० तमगाच बोगरा खान इब्राहीम (११३०)

सिंजरके दरबारमें अबुल मुजफ्फर इब्राहीम नामक अरसलनका एक भाई रहता था। सिंजरने मदियोंसे तुर्कों द्वारा शासित अन्तर्वेदपर सीधे अधिकार करनेमें हानि समझी और इसे ही तमगाच बोगरा खान इब्राहीमके नाम में गद्दीपर बैठाया। अब अन्तर्वेदके कराखानी शासक सल्जूकियोंके कठपुतली मात्र थे।

११ किलिच तमगाच खान

अबुल्-मलिक हसन अली-पुत्र अबुल्मोमिन-पुत्र, जो कि हसन तगिनके नामसे अधिक प्रसिद्ध है, कुछ दिनो शक्तिहीन खान रहा।

१२. रुकुनु (जलालु) दीन मुहमद

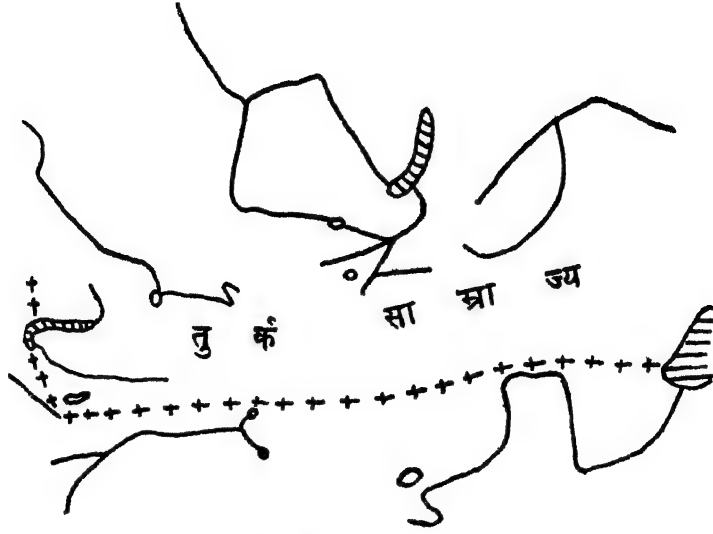
यह अरसलनका पुत्र गडबडीके दिनोमे कुछ समय कराखानियोंकी गद्दीपर रहा। सिजर सलजूकी इसका मामा था और उसका बड़ा भक्त भी, इसलिए सिजरने काशगर जीतनेपर इसे वहां का शासक बनाया। सिजरकी विजय द्वारा थोड़े दिनोके लिये सारा मुसलिम एशिया एक छत्रके नीचे आ गया, किन्तु उसी समय पूर्वसे एक और शक्तिशाली जाति (कराखिताई) आ पहुंची, जिसने बहुत दिनो बाद फिर मध्यएशियामे मुसलिम शासनको हटाकर प्रायः एक शताब्दीके लिये काफिरोका दृढ़ शासन स्थापित कर दिया।

§३ सिक्के

कराखानियोंके बहुतसे सिक्के मिलते हैं। छोटा बड़ा प्रत्येक शासक अपने शासित प्रदेशमे अपना सिक्का चलानेकी होड़ लगाये हुए था। उनके नामो और पदवियोंकी इतनी गडबडी है, कि सन् मिलनेपर भी बात स्पष्ट नहीं होने पाती। रूसके मुद्रा-विशारद दोनोंके अनुसार अन्तर्वेदके विजेता दो भाई थे, जिनमे ज्येष्ठका नाम नासिरुल्हक् नस्स और कनिष्ठका कुतुबुद्दौला अहमद था। नस्सके मरनेपर अहमद गद्दी पर बैठा। नस्स अली-पुत्रके सिक्के १०१० ई० (४०१ हि०) तक के और उसके उत्तराधिकारी अहमद अली-पुत्रके सिक्के १०१६ (४०७ हि०) तकके मिलते हैं। सन् और टकसाल के नगरका पता न होनेसे यह नहीं कहा जा सकता, कि तुगान खान (काशगरी) का शासन अन्तर्वेदमे था या नहीं। ज्येष्ठ भाई तुगान शायद इलिक नस्सके जीवनमे कराखानी राज्यवशका नाममात्रका मुखिया था। चौथा भाई अबू-मसूर मुहम्मद अली-पुत्र पीछे अरसलन खानकी पदवीके साथ शासन करता रहा। बुखारा टकसाल वाले इसके सिक्के १०१२ (४०३ हि०) के मिलते हैं। अरसलन खान भी तुगान खानसे झगड़ पड़ा था और १०१६ मे उज्जगन्दके पास उससे लड़ा था, फिर ख्वारेज्म शाह मामूनने बीचमे पड़कर शान्ति कराई। मामून स्वयं महमूद गजनवीसे लड़नेकी तैयारी कर रहा था। संभव है उज्जगन्दके पास अन्तर्वेदके शासक अरसलन खान और तत्कालीन काशगर-शासक कादिर खानके बीच सैनिक संघर्ष हुआ हो।

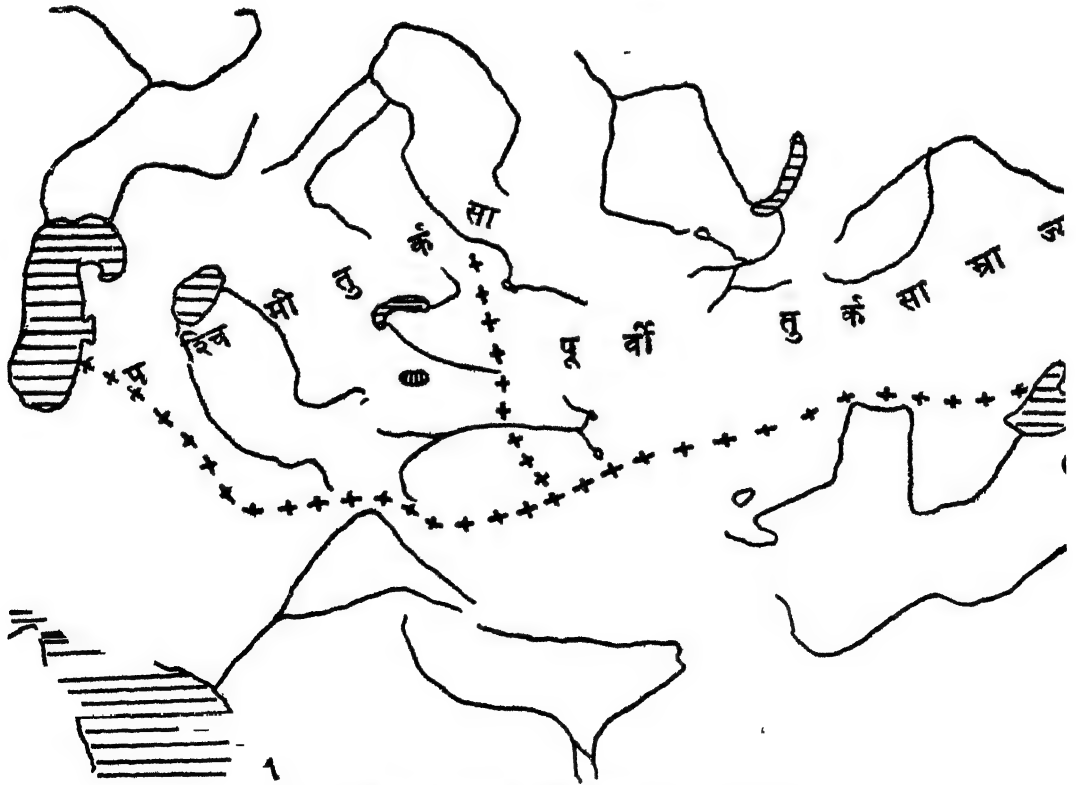
स्रोत-ग्रन्थ

- 1 Turkistan Down to Mongol Invasion (W Bartold)
- 2 Heart of Asia (E D Ross)
3. History of Bokhara (A. Vambery)
- ४ इस्क़ुस्तवो खेद्निइ अजिइ



१५ तोबाका तुर्क साम्राज्य (५६६ ई०)

भूल—पृष्ठ १११ पर पढिये ।



१६. पूर्वी और पश्चिमी तुर्क साम्राज्य (६२८ ई०)

अध्याय ३

गज़नवी (६६८-१०५६ ई०)

§१ उद्गम

गजनवी वंश ने पंजाब और सिंध पर भी शासन किया था, महमूद गजनवी ने बनारस, कालिंजर और सोमनाथ तक लूट-पाट मचाई, इसलिये भारतीय इतिहास को उसका काफी परिचय है। लेकिन पंजाब छोड़कर बाकी भारत के साथ गजनवियों का संबंध केवल लूटमार का था। उनकी शक्ति ईरान, मध्यएशिया (अन्तर्बेद) और अफगानिस्तान में दृढ़ थी। वही से सैनिक लेकर महमूद भारत के नगरों और मदिरों को लूटने आता था। भारत में उसका “चिडिया रैन बसेरा” जैसा ही था। पहिले हम कह चुके हैं, कि किस तरह सामानियों और उनसे पहिले के समय भी होनहार तुर्क तस्फो को दास-बाजारों से खरीदकर उनको वाकायदा शिक्षा दी जाती थी, जिसमें वह सैनिक-असैनिक ऊंचे पदों के लायक हो सके। घुमन्तुओं और सामानियों में राजकुमारों का सिंहासन के लिये हमेशा झगडा होता रहता था, इसलिये भाई भाई पर क्या पिता-पुत्र पर भी विश्वास नहीं कर सकता था। दास अपने रुधिर संबंध से सिंहासन के लिये दावा नहीं कर सकते थे, इसलिये यह प्रथा बहुत चल पड़ी। अल्प तगिन को सामानियों ने बुखारा जीतकर वहां का शासक नियुक्त किया था। वह भी पहिले इसी तरह का खरीदा गुलाम था। अल्प तगिन पीछे खुरासान का सेनापति* हुआ। इसीने गजनवी-वशस्थापक सुबुक तगिन को गुलाम के रूप में खरीदा था।

“सियासतनामा” (राजनीति शास्त्र) — सल्जूक सुल्तान मलिकशाहके प्रसिद्ध वजीर निजामुल्मुल्क ने इसे उसी अभिप्राय से लिखा, जिससे कि कौटिल्य ने अपने “अर्थशास्त्र” को लिखा था। निजामुल्मुल्क तूस में पैदा हुआ था। उसका पूरा नाम अबू-अली हुसेन अली-पुत्र इस्हाक-पुत्र अब्बासी था। इसके पूर्वज तूस के आसपास के दहकान थे। विद्या प्राप्ति के समय उमर खैय्याम और हसन सब्वाह-पुत्र इसके सहपाठी रहे। विद्या समाप्ति के बाद बलख के मौतमिद अली शाहजान-पुत्र के यहां लेखक (कातिब) हो गया। कुछ अनबन हो गई, तो उसे छोड़कर दाऊद मेकाइल-पुत्र सल्जूकी के पास चला गया। आगे अल्प अरसलन और मलिकशाह के जमाने में निजामुल्मुल्क का सितारा चमका और सारी सल्जूकी हुकूमत इसके हाथ में थी।

“सियासतनामा” में वर्णित राजनीतिक नियमों और सिद्धान्तोंकी बातें बड़ी सरल फारसी गद्य में हैं। उसमें अपनी बात को साफ करनेके लिये, लेखकने कितनी ही जगह उदाहरणार्थ ऐतिहासिक कहानियाँ और भूगोल आदि की बातें दी हैं।

* “सियासतनामा” अध्याय २७

निजामुलमुल्क समाज में वर्ग-भेद को उचित और आवश्यक समझता था। इसे भगवान का काम बतलाते हुए वह लिखता है (पृ० ३) —“आग जगल में पैदा होती है। वहाँ जो कुछ सूखा रहता है, वह सब जल जाता है, और सूखे के साथ रहने की वजह से बहुत सा गीला भी जल जाता है। इसी तरह बन्दगो (सेवको) में से एक को भगवान की कृपा से सौभाग्य और धन प्राप्त होता है। उसके लिये भगवान (हकताला) अन्दाजे के अनुसार प्रताप सुलभ करता है। उसे अकल और इल्म देता है, जिसमें कि वह इस अकल और इल्म के द्वारा नीचे वालों से में हरेक को अन्दाजा से सपत्ति मिले, हरेक को उसकी योग्यता के मुताबिक दर्जा और निवास दे, आदमियों में से इन के लोगो और खिदमतगारों को नियुक्त करे, और उनमें से हरेक को सम्मान तथा पद देवे, लौकिक-पारलौकिक कामों में उनके ऊपर विश्वास करे। प्रजा का काम है, आज्ञाकारिता का रास्ता पकड़े और अपने काममें तत्पर रहे।

अल्प तगिन —अल्पतगिन को इस्माईल (सामानी) ने खरीदा था, और उसने आखिरी उमर में नस्र-पुत्र अहमद की कुछ साल तक सेवा की थी, नूह के जमाने में खुरासान का सिपह-सालार बना था। जब नूह मर गया, तो नूह-पुत्र मसूर बादशाह बना। उसकी बादशाही के भी ६ साल बीते। अल्पतगिन ने हर तरह कोशिश की, लेकिन नूह-पुत्र मसूर के मन को अपनी और न कर सका। लोगो ने मसूर से कह दिया —“जब तक अल्पतगिन को तू नहीं मारता, तब तक तू बादशाह नहीं रह सकता। तू बादशाह नहीं है, तू राज्य नहीं कर रहा है। ५० साल से वह (अल्पतगिन) खुरासान में बादशाही कर रहा है। सेना उसकी बात मानती है। अगर तू उसको गिरफ्तार करे, तो उसके धन से तेरा खजाना भर जायेगा। उपाय यह है, कि उसे दरगाह (दरबार) में बुला और ऐसा कहला भेज कि जबसे हम तख्त पर बैठे, तू दरगाह में नहीं आया और अहद (नियुक्ति-पत्र) को नया नहीं किया। हमारी इच्छा है —तू हमारे लिये पिता की जगह है। ”जब यहाँ आये, तो उसे एकान्त में बुला और हुकम देकर उसका सिर कटवा दे।”

अमीर मसूर ने ऐसा ही किया। उसे दरगाहमें बुलाया। अल्प तगिन के साहिबखबर (चर) ने लिख दिया, कि तुझे किस काम के लिये बुला रहे हैं। अल्प तगिन ने चाहा, बुखारा चले और नेशापोर से सरखश की ओर कूच कर दिया। उसके साथ करीब तीस हजार सवार थे। खुरासान के सारे अमीर उसके साथ थे। जब वहाँ से तीन रोज का रास्ता आगे गया, तो उसने लश्कर के अमीरों (सेनपों) को बुलाया और उनसे कहा —“तुम्हें एक बात कहनी है। जो कुछ मैं कह रहा हूँ, इसके बारे में जो ठीक समझो, वह मुझसे कहो, ताकि मैं जानूँ।”

उन्होंने कहा —“हम तुम्हारे सेवक हैं।”

उसने कहा —“तुम जानते हो, कि अमीर मसूर मुझे किसलिये बुला रहा है?”

उन्होंने कहा —“इसलिये कि तुम्हें देखें और अहद (नियुक्तिपत्र) को ताजा करें।

उसने कहा —“जैसा तुम लोग समझते हो, बात ऐसी नहीं है। मलिक (सुल्तान) मुझे इसलिये बुला रहा है, कि मेरे सिर को घड से अलग करे। वह बच्चा है। आदमियों की कदर नहीं जानता। तुम जानते हो, कि सामानियों के मुल्क को सालों से मैं सभाले हुए हूँ। तुर्किस्तान के खानों में जिसने बुरी नीयत की, उसे मैंने हराया।”

अमीरों ने जब उसे बदला लेने के लिये कहा, तो उसने उत्तर दिया —“दुनिया के लोग

कहेगें, कि अल्प तगिन ने साठ साल सामानी खानदान को सभाले रक्खा, जब उसकी उमर अस्सी बरस की हो गई, तो अपने स्वामि-पुत्री से अलग हो उनके मुल्क को दखल किया, स्वामी की जगह गद्दी पर बैठा। मैंने सारी उम्र नेकनामी से गुजारी, अब जबकि कबर के किनारे पहुँच गया हूँ, यह ठीक नहीं, कि मैं अपने नाम पर धब्बा लगाऊँ। यह खूब मालूम है, कि गुनाह उसकी तरफ है, लेकिन सभी लोग इसे नहीं जानते। कितने ही लोग कहेंगे, कि गुनाह अमीर (सुल्तान) का है, कुछ लोग कहेंगे कि गुनाह अल्प तगिन का है। मैं उसके राज्य की इच्छा नहीं रखता और न उसकी बुराई चाहता हूँ। जब तक मैं खुरामान में हूँ, तब तक यह बात नहीं होगी। अगर मैं खुरामान से बिदा हो जाऊँ और उसके मुल्क से बाहर निकल जाऊँ, तो मतलबी लोगों को बात का मौका नहीं मिलेगा। जब तक मेरे हाथ में तलवार खिच सकती है, तब तक रोटी हाथ में ला सकता हूँ। इसी तरह बाकी उमर बिताऊँगा। अच्छा है कि अपनी तलवार को काफिर (गैर-मुस्लिम) के सिर पर चलाऊँ, जिसमें कि मुझे पुण्य मिले। अब समझे ? यह सेना, खुरासान, ख्वारेज्म, नीमरोज और मावराउन्नह्र (अन्तर्वेद) की होनेसे अमीर मसूर की है, तुम सभी उसके आज्ञाकारी (मेवक^१) हो। मैंने तुम्हें उसको दे दिया। उठो और उसकी दरगाह में जाओ। उसकी खिदमत में रहना। मैं हिन्दुस्तान की ओर जाऊँगा और धर्मयुद्ध और जहाद में लंगूँगा। अगर मारा जाऊँगा, तो शहीद होऊँगा, अगर सफलता पाई, तो कुफ्र के भवन को इस्लाम का भवन बनाऊँगा।

किंगी को यह विश्वास नहीं था, कि वह खुरासान छोड़कर हिन्दुस्तान जायेगा, जब कि खुरासान और मावराउन्नह्र में उसके पाँच सौ गाँव जायदाद के थे, कोई ऐसा शहर नहीं था, जहाँ पर उसकी सराय (महल), बाग, कारवासराय, और गरमावा (स्नानगृह) न हो। उसके पास बहुत अधिक सम्पत्ति थी। हजार-हजार भेड़ें, और सौ-हजार घोड़े तथा ऊट उसके पास थे। अल्प तगिन के मन में हुआ, बलख चले। चलकर वहाँ एक-दो महीना मुकाम करे, जिसमें कि जो भी गज्जा (धर्मयुद्ध) की इच्छा रखने वाले हैं, वह मरावरउन्नह्र, खुत्तलान और बलख के इलाके से उसके पास आवें।

इसपर भी चुगलखोरों ने चुगली की और मसूर ने १६ हजार सवार के साथ एक अमीर को बुखारा से बलख जाने के लिये कहा, जिसमें जाकर उसको गिरफ्तार करे।

जब लश्कर तेरमिज पहुँचकर जैहू (वक्षु) नदी पार हो गई। तो अल्प तगिन ने खुल्म की तरफ कूच कर दिया। खुल्म और बलख के बीच में एक तग दर्रा है। इसी तग दर्रे में चार फर्सख का रास्ता जाने पर खुल्म मिलता है। अल्प तगिन उस दर्रे में पहुँचा। उसके पास २० हजार गुलाम सवार थे। सभी अच्छे आदमी थे। धर्मयुद्ध के लिये आठ सौ आदमी और आकर शामिल हुए।”

^१बन्दगो (गुलामो) की शिक्षा—सियासतनामा के २७ वे अध्याय में निजामुल्मुल्क ने तुर्क-गुलामो की शिक्षा का सविस्तर वर्णन किया है, और वही अल्पतगिन और सुबुक तगिन जैसे सौभाग्यशाली बन्दगो का जिक्र किया है (पृ० १४-१०८)—“पुराने समय में गुलामो की परवरिश और शिक्षा की व्यवस्था उनकी खरीद के दिन से बुढ़ापे तक की जाती थी।”

अल्प तगिन कूच करके बामियान पहुँचा। अमीर-बामियान ने उसका विरोध किया, जिसपर वह बन्दी बना। अल्प तगिनने उसे माफ कर दिया और उसे खिलत दे अपना बेटा कहा। बामियान के इस अमीर का नाम शेर बारीक था। वहाँ से अल्प तगिन काबुल की ओर चला। उसने अमीर-काबुल को हराया, उसके लडके को बन्दी बनाया और उसे भी उसी तरह (पुत्र) कहकर पिता के पास भेज दिया। यह काबुल-राजा का पुत्र लोयक का दामाद था, वहाँ से गजनी जाने का इरादा किया। अमीर गजनी भाग गया। जब अल्प तगिन गजनी पहुँचा, तो (वहाँ का राजा) लोयक बाहर आया और उसने युद्ध किया। अमीर-काबुल का पुत्र दूसरी बार पकड़ा गया। (गजनी के फतह करने पर) तीन दिन ढिंढोरा पीटा गया, कि 'जिस किसी के पास मुसलमानों का माल मिलेगा, उसके साथ मैं वही करूँगा, जैसा कि मैंने अपने गुलाम के साथ किया (एक गुलाम को अल्प तगिन ने मौत की सजा दी थी)।' उसकी सेना बहुत डरी। लोग सन्तुष्ट हुए। नागरिकों ने जब इस शान्ति और न्याय को देखा, तो कहा—'हमें ऐसा ही बादशाह चाहिये, जो कि न्यायी हो। फिर हम उसको अपने प्राण बच्चे-स्त्री के समान मानेंगे। हमारा अभिलषित यही था, चाहे तुर्क हो, चाहे ताजिक।' तब उन्होंने मगर का दरवाजा खोल दिया और अल्प तगिन के पास आये। लोयक ने जब यह देखा, तो वह भागकर किले में बन्द हो गया, और २० दिन बाद निकल कर अल्प तगिन के सामने आया। अल्प तगिन ने उसे जागीर दी। उसने किसी को दुख नहीं दिया, गजनी में अपना घर बनाया और वहाँ से जा हिन्दुस्तान को लूटा। वहाँ से बहुत सा लूट का माल लाया। गजनी से काफ़िरो (हिन्दुओं) का मुल्क १२ दिन का रास्ता था। खुरासान, मावराउन्नह्र, नीमरोज में खबर पहुँची, कि अल्पतगिन ने हिन्दु-स्तान के दरबन्द (घाटे) को खोल दिया और वहाँ से बहुत सा सोना-चादी, पशु ले आया, भारी गनीमत का माल प्राप्त किया, तो चारों ओर से लोग (गाजियों की सेना में भरती होने के लिये) दौड़े। यहाँ तक कि ६ हजार सवार जमा हो गये। उन्होंने बहुत से वलायत (प्रदेश) दखल किये और बेगापुरतक साफ कर दिया, वलायत अपने हाथ में किये। हिन्दुस्तान का शाहशाह डेढ़ लाख सवार और पैदल तथा पाँच सौ हाथियों के साथ सामने आया, यह ख्याल करके कि अल्प-तगिन को हिन्दुस्तान की भूमि से बाहर कर दे या उसको उसकी सेना के साथ मार डाले। . .

निजामुल्मुल्क ने अल्पतगिन को सामानियों द्वारा पालापोसा, बन्दा बतलाते हुए लिखा है (पृ० ९५)—“३५ वर्ष की उम्र में उसने खुरासान की सिपहसालारी (सेनापतिपद) पाई। वह बड़ा ही ईमानदार और विश्वासपात्र, बहादुर, होशियार, ईश्वर से डरनेवाला था। वह सालो खुरासान का वली (राज्यपाल) रहा। उसके पास २७०० गुलाम (बन्दी) तुर्क रहते थे। एक दिन उसने ३० गुलाम खरीदे, जिनमें एक महमूद का पिता सुबुक तगिन भी था। उसे खरीदे तीन ही दिन बीते थे। वह गुलामों के बीच अल्पतगिन के सामने खड़ा था। उसी समय हाजिब ने आकर अल्प तगिन को कहा—“अमुक गुलाम जिसे वसाक बाशी का पद मिलने की आज्ञा थी, नहीं है। उसके दर्जे और उत्तराधिकार को किस गुलाम को दिया जाये।” इसी समय अल्प तगिन की नजर सुबुक तगिनके ऊपर पड़ी और उसकी जवान पर आ गया—“इसी गुलाम को मैंने प्रदान किया।”

हाजिब ने कहा—“स्वामी, अभी इस गुलाम को खरीदे तीन रोज से अधिक नहीं हुये। अभी इसने एक साल भी सेवा नहीं की, उस दर्जे पर पहुँचने के लिये सात साल सेवा करनी चाहिये।

अल्प तगिन ने कहा—“मैंने कह दिया, गुलाम ने सुन लिया, और सेवा कर दी। मैंने उसे जो प्रदान किया, उसे नहीं लौटाऊंगा। यह बसाकबाशी का पद इसे दे दिया।”

अल्प तगिन ने अपने मनमें सोचा, हों सकता है, यह गुलाम के तौर पर नया-नया खरीदा तरुण तुर्किस्तान में किसी बुजुर्ग (कुलीन पिता) का पुत्र हो। शायद यह काम को अच्छी तरह करे। यह सोचकर उसने परीक्षा लेने की सोची। जो भी पैगाम देकर भेजा, जो काम दिया, किसी में उसने गलती नहीं की। परीक्षा में हर रोज वह अच्छा उतरता गया, इसलिये अल्प तगिन के दिल में उसके लिये स्नेह हो गया। जब सुबुक तगिन १८ साल का हो गया, तो उसके नीचे २० गुलाम दिये। एक दिन अल्प तगिन ने २० गुलामों को देकर हुक्म दिया, कि वह खलज और तुर्कमान लोगों के पास जायें और उनके पास जो मालगुजारी बधी हुई है, उसे वसूल कर लायें। सुबुक तगिन भी इन गुलामों में था। जब वहां पहुंचे, तो खलजों और तुर्कमानों ने सारी मालगुजारी नहीं दी। गुलाम नाराज हो गये, और हथियार उठाकर जग करने का इरादा करने लगे, जिसमें कि जबर्दस्ती मालगुजारी वसूल कर लें। सुबुक तगिन ने कहा—“मैं हर्गिज लड़ाई नहीं करूंगा” और इसमें तुम्हारा सहायक नहीं बनूंगा। इसपर उसके साथियों ने फिर कहा। तब उसने जवाब दिया—“क्योंकि खुदाबन्द (स्वामी) ने हमें जग करने के लिये नहीं भेजा, बल्कि कहा कि मालगुजारी ले आएं। अगर जग करे और वह हमें हरा दे, तो यह बड़ी बुरी बात होगी और हमारे खुदाबन्द की इज्जत को हानि पहुंचेगी। फिर खुदाबन्द कहेगा, कि बिना हुक्म के क्यों तुमने जग किया।” अधिकांश लोगों ने भी कहा, कि वह ठीक कह रहा है। उन्होंने लड़ाई नहीं की और लौट गये। अल्प तगिन के पास जाकर कहा कि ‘तुर्कमानों ने सरकशी की और मालगुजारी नहीं दी’। अल्प तगिन ने कहा—‘क्यों हथियार नहीं उठाया? लड़ाई करके मालगुजारी उनसे क्यों नहीं लिया?’ उन्होंने कहा—‘हम जग करनेवाले थे, लेकिन सुबुक तगिन ने नहीं करने दिया। अल्प तगिन ने सुबुक तगिन को कहा—‘क्यों तूने जग नहीं किया, और क्यों नहीं गुलामों को जग करने दिया?’

सुबुक तगिन ने कहा—‘इसीलिये, कि हमारे खुदाबन्द ने आज्ञा नहीं दी थी। अगर बिना हुक्म के जग करते, तो हममें से हरेक खुदाबन्द (स्वामी) था, बन्दा नहीं। बन्दगी (मेवक धर्म) यह है, कि उतना ही करे जितने के लिये कि खुदाबन्द ने हुक्म दिया।’

अल्प तगिन खुश हुआ और उसने कहा—‘ठीक कह रहा है।’

फिर उसे तीस सौ गुलामों के अफसर का पद दिया।

अल्प तगिन को पुत्र नहीं था, कि उसको अपनी जगह बैठाये। सुबुक तगिन गुलाम था, जिसे उसने पहिले खरीदा था। उसका हक ज्यादा था। दूसरों ने कहा कि सुबुक तगिन अपनी होशियारी मुरीबत, दानशीलता, सुस्वभावता और ईश्वर से भय खाने, विश्वासपात्र होने के कारण सबसे बढ़कर है। उसे हमारे खुदाबन्द ने पाला है, और उसके कामों को पसन्द किया है। अल्प तगिन के सारे स्वभाव और आचरण उसमें हैं। सबने एक राय होकर सुबुक तगिन को अपना अमीर बनाया। सुबुक तगिन ने ज़ाबिलिस्तान के स्वामी की लड़की ब्याही थी, जिसमें महमूद पैदा हुआ, इसी कारण उसे ज़ाबिली कहा जाता था।”

तुलनात्मक गजनवी-सल्जूकी-गोरी-वश

सन् ई० भारत (कन्नौज)	चीन	दक्षिणापथ	उत्तरापथ
(प्रतिहार)	(खित्तन)	(गजनवी)	(कराखानी)
१०००	शेङ्गचुङ्ग ९८३-१०३१	महमूद ९९७-१०३०	तुगान १०१२-२५
राज्यपाल १०१८-			
१०२०			कादिर १०२५-३२
त्रिलोचन १०२७-	शिङ्गचुङ्ग १०३१-५५	मसऊद १०३०-४१	अर्सलन १०३२-५६
यश १०३७-			
१०४०		मौदूद १०४१-४८	
		इब्राहीम १०४८-५१	
	ताउचुङ्ग १०५५-११०१	(सल्जूकी)	बोगरा १०५६-५९
		तुगरल १०३६-६३	
१०६०		अल्पअर्सलन १०६३-७३	तुगरलकरा १०५९-७४
(गहडवाल)		मलिकशाह १०७३-९२	बोगराहारून १०७४-०२
१०८० चद्रदेव १०८०-		महमूद १०९२-९४	
		बर्कियारुक १०९४-११०४	
११०० मदनचद्र ११००-	त्यान्-चू-ती ११०१-२५	मलिकशाह ११०४-१७	अर्सलनमहमूद ११०२-३०
	(चिन्)		
गोविद १११४-	ताइ-चू १११५-२३	मिजर १११७-५७	(कराखिताई)
११२०	ताइचुङ्ग ११२३-३५		येलू ११२५-४३
	शे-चुङ्ग ११३५-४९		
११४०			चेलुगू ११४३-८२
	है-लिङ्ग वाङ्ग ११४९-६१		
विजय० ११५५		(गोरी)	
११६०	शीचुङ्ग ११६१-९०		
जयचद्र		गयासुद्दीन -१२०३	

११८० ११७०-११९४

‘गुरखान’

११८२-१२१०

चाङ्गवुङ ११९०-१२०९

६२. राजावलि—

गजनवी राजा इस प्रकार है —

१ सुबुक तगिन	- ९९७ ई०
२ महमूद सुबुकतगिन-पुत्र	९९७-१०३० ई०
३ मसऊद महमूद-पुत्र	१०३०-१०४१ ई०
४ मुहम्मद महमूद-पुत्र	१०४१-
५ मौदूद मसऊद-पुत्र	१०४१-
६ इब्राहीम	-१०५९ ई०

१. सुबुक तगिन (—९९७ ई०)

सुबुक तगिन योग्य सेनापति तथा शासक था। अल्प तगिनके उत्कर्षमें उसका भी हाथ था और उस के खुरासान छोड़ गजनी में नये राज्यकी स्थापनामें सुबुक तगिनका काम काफी था। सुबुक तगिन अल्प तगिनके मरने पर भी सामानी वंश का भक्त रहा, किन्तु अन्तिम शासक ने सुबुक तगिनके लिये गद्दी छोड़ दी। इसके बाद भी वह अपने को जीवन भर सामानियोंका अधीन सामन्त मानता रहा, यद्यपि अब राजशक्ति सामानियोंके हाथमें बड़ी तेजीसे निकलती जा रही थी।

२. महमूद (९९७-१०३० ई०)

महमूद अपने पिता सुबुक तगिनके मरनेके बाद गद्दी पर बैठा। सामानियोंसे झगडा था, इसलिये उसे खुरासान छोड़कर गजनीके ऊपर अपना ध्यान लगाना पडा और अन्तमें वह गद्दीपर बैठनेमें सफल हुआ। अन्तिम सामानीकी मृत्युके बाद सामानी राज्य कराखानियों और गजनवियों में बंट गया। जुलकदा ३८९ हि० (अक्तूबर-नवम्बर ९९९ ई०) में इलिक खानकी सेना बुखारा में प्रविष्ट हुई। इसी महीनेमें महमूद अपने पिता की गद्दीपर बैठा। वह स्वतंत्र शासक था, और उसे सामानियोंको अपना अधिराज माननेकी आवश्यकता नहीं थी। बगदादी खलीफा अब केवल धार्मिक गुरु भर रह गया था और उसका राज्य कितने ही स्वतंत्र राज्यो (रियासतो) में बंट चुका था, तो भी वह इस्लाम का बड़ा पोष था। स्वतंत्र शासक उसके पास बड़ी बड़ी भेंटें भेजा करते और खलीफा उन्हें भारी भरकम पदविया प्रदान करता। खलीफा कादिर^१ (९९१—१०३१ ई०) ने महमूद को “बली अमीरुल्ल-मोमनीन खुरासान-पति” (खलीफाका खुरासानी राज्यपाल) का “अहद” (शासन-पत्र) एक मुकुट और “यमीनुद्दौला-अमीनुल्ल-मिल्लत” (राज्य-दक्षिणबाहु,

^१ निजामुल्लुल्क “सियासतनामा”

जातीय-अमीन) की उपाधि के साथ भेजा था। महमूदने खुरामानमे अपने खुतबेमे खलीफा कादिरका नाम पढवाया। यह वही खलीफा था, जिसे ९९१ ई० मे दैलमियोंकी कृपासे गद्दी मिली थी, लेकिन सामानियोंने उसे खलीफा नहीं माना था। भारतके राजाओंकी तडक-भडक तथा सामानियोंकी शान-शौकतको दुगना करके महमूदने अपने दरबारको सजाया था। महमूदने ही पहिले-पहल इस्लाममे “सुल्तान”की उपाधि कमसे कम दरबारी कामोमे धारणकी थी। वैसे साधारणतया वह “अमीर महमूद” ही कहा जाता था। महमूदके सिक्को तथा गरदेजीके इतिहासमे “सुल्तान”की पदवी उसके साथ जुड़ी मिलती है।

सामानियोंके खतम होनेके बाद काराखानी और गजनवी एक दूसरेके प्रतिद्वन्द्वी बने। महमूदके “वली-अमीरल्-मोमनीन” बननेपर इलिक खान क्यों पीछे रहता? उसने अपनेको “मौला-अमीरल्-मोमनीन” (खलीफाका सरदार) घोषित किया तथा अपने सिक्कोपर खलीफा कादिरका भी नाम उत्कीर्ण करवाया। इलिक नस्रके सिक्कोपर उसकी पदवी “नासि-रल्हक” (सत्यरक्षक) है। काराखानी और गजनवी प्रतिद्वन्द्वी और पड़ोसी भी थे। हमेशा हर बातका फैसला तलवारसे करना अच्छा नहीं था, इसलिये १००१ ई० मे महमूदने शाफई इमाम अबूतैयब सलहा मुहम्मद-पुत्र सालकी और सरख्शके गवर्नर तथा अपने भाई तुगान्चिक को दूत बनाकर इलिक खानके पास उजगन्द भेजा। इलिक नस्रने उनका अच्छी तरह स्वागत किया और बहुमूल्य रत्न, कस्तूरी, घोड़े, ऊट, दामी-दास, सफेद बाज, काले समूरी चर्म, हुतुब् (बलरस) की मीग, तथा चीनकी कितनी ही बहुमूल्य वस्तुओंकी भेटके साथ अपनी लडकीको महमूदकी खातून बनानेके लिये भेजा। इस प्रकार दामाद बनाकर यह भी तै किया, कि वक्षु (आमू-दरिया) दोनों राज्योंकी सीमा रहे। लेकिन इस संधिको सबसे पहिले काराखानियोंने तोड़ा। दरअसल काराखानी जैसे घुमन्तुओंमे जनमत इतना प्रबल होता था, कि खानके मिलानेसे काम नहीं चलता था।

महमूदने भारतके काफिरोमे धर्मयुद्ध छेड़ रखा था। वह इस समय प्रतिवर्ष लूट-मारके लिये भारत जाया करता था। १००६ ई० मे ऐसे ही एक अभियानमे जाकर वह मुल्तानमे ठहरा हुआ था, जब कि काराखानियोंने अपनी दो सेनाओंको खुरासानके ऊपर भेज दिया। पहिली सेनाको सुबासी तगिनके नेतृत्वमे नेशापोर और तुसको दखल करनेका और दूसरी सेनाके सेनापति जाफर तगिनको बलख लेनेका काम मिला था। दोनोंने अपने कर्तव्य पूरे किये। बलखके नागरिकोंने काराखानियोंके साथ कुछ गुस्ताखी दिखलाई, जिसपर शहर लूट लेनेकी आज्ञा हो गई। नेशापोरके जन-साधारण तटस्थ रहे, किन्तु धनीमानी लोग अन्तर्वेदकी तरह गाजी महमूदके पक्षमे थे। यह खबर महमूदको मुल्तानमे मिली। वह तुरन्त लौट पड़ा और जाफर बलख छोड़कर वक्षु पार तेरमिज भागनेके लिये मजबूर हुआ। सुबासी तगिन भी महमूदका मुकाबिला नहीं कर सका और अपने सामान लदे काफिलेको ख्वारेज्मशाह अलीके पास भेज कर बची-खुची थोड़ी सी सेनाके साथ अन्तर्वेदकी ओर भागा। उसका भाई और नौ सौ सैनिक महमूदके बन्दी बने। महमूदका ध्यान बँटानेके लिये इलिकने जाफरको छ हजार सैनिकोंके साथ बलख पर आक्रमण करनेके लिये भेजा, लेकिन उस सेनाको वक्षु तटपर ही महमूदके भाई नस्रने छिन्न-भिन्न कर दिया। इलिकने इस घोर पराजयसे नाराज होकर अपने सैनिकोंको फटकारा। इसपर उन्होंने हिन्द-विजेताकी सेनाके बारेमे कहा—“व ओं फोलान व सलाह व अलात व मरदाँ

हेचकश मुकावमत न तवानद्" (ऐसे हाथियो, हथियारों और आदमियोंके साथ कोई नहीं लड़ सकता)। दूसरे साल इलिकने स्वयं महमूदके खिलाफ युद्धक्षेत्रमें उतरनेका निश्चय कर अन्तर्वेदके देहकानोको लड़नेके लिये बुलाया और अपने भाई कादिर खान यूसुफ (खोतनके शासक) के साथ जो झगडा चल रहा था, उसमें समझौता कर लिया। फिर उसके "बौड़े मुह, छोटी आखी, चिपटी नाको, नाममात्र मूछ-दाढीवाले, लोहेकी तलवार तथा काली पोशाकवाले" कराखानी तुर्क महमूदका मुकाबिला करने आये। बलखसे चार फरसख (२४ मील) पर सरखियान पुलके पास रविवार ४ जनवरी १००८ ई० (२२ रबी २, ३९८ हि०) को लड़ाई हुई। महमूद भारतमें केवल हीरा-मोती ही नहीं बटोरता था, बल्कि लड़ाईके सामान भी ले जाता था। इस लड़ाईमें उसने पांच सौ हाथी ला खड़े किये। तुर्क हाथियोंमें लड़नेके अभ्यासी नहीं थे, न उनके घोड़े हाथियोंके सामने डीठ होकर जा सकने थे। महमूदकी रक्षा इस युद्धमें इन्ही भारतीय हाथियोंने की, नहीं तो वह कहीं का नहीं रहता। कराखानी सेना पूर्ण रूपसे पराजित हुई। जो भागे, उनमेंसे भी बहुतेरे वक्षु नदीमें डूब गये। कराखानी सामानियोंके खुरासानी इलाकेको भी अपने हाथमें करना चाहते थे, लेकिन वह पूरी आफतमें फसे। इसमें सदेह नहीं, इस हारमें कराखानियोंका घरेलू झगडा भी कुछ कारण था। इलिकके बड़े भाई तुगान खान काशगरीने भाईके विरुद्ध महमूदके साथ दोस्ती की थी। इलिकने भाईपर चढाई करना चाहा, लेकिन इस वकन काशगरके रास्तेको बरफ रोके हुई थी, इसलिये इलिकको उजगन्द लौट जाना पडा। फिर दोनों भाइयोंके दूत विजेता महमूदके पास पहुंचने लगे। महमूदने १०११-१२ ई० में दोनों भाइयोंमें समझौता कराया। इलिक १०१२ ई० में मर गया।

§३. महमूद और ख्वारेज्मशाह

(१) अली—मामून ख्वारेज्मशाहके बाद उसका पुत्र अबुल् हसन अली ख्वारेज्मशाह बना। सुबुक तगिनके अभियानसे ज्ञात है, कि अली कराखानियोंके अधीन था। इलिक और उसके सहायकोंको जब महमूदने हराया, तो ख्वारेज्मशाह महमूद गजनवीका मित्र बन गया। महमूदने उसके साथ अपनी बहन व्याह दी तथा अलीके भाई तथा उत्तराधिकारी अबुल्-अब्बास मामून (११) मामून (१)-पुत्रको भी अपनी एक बहन १०१५ (४०६ हि०) में दी।

(२) मामून (११)—खलीफा कादिरने मामूनके पास भी अहद (नियुक्ति-पत्र), खिलअत, ध्वजा (राजचिह्न), "ऐनुद्दौला व जैनुल्मिल्लत" (राज्य-नेत्र, जाति-भूषण) की पदवी भेजी। सीधे लेनेमें महमूदके क्रोध का डर था, इसलिये मामूनने अपने दरबारी तथा प्रसिद्ध विद्वान् अबू-रेहॉ अल्बेखनीको रेगिस्तानमें जा खलीफाके दूतसे भेट स्वीकार करनेके लिये भेजा। मामून और महमूदकी दोस्ती ज्यादा दिनोतक टिक न सकी। महमूदने इलिक खान और तुगानसे सधि करली। मामूनने उस सधिमें भाग लेनेसे इन्कार कर दिया, जिसके कारण दोनोंके सबब बिगड गये। अपने वजीर अबुल्-कासिम अहमद हसन-पुत्र मैमन्दीके परामर्शानुसार महमूदने अपने पुराने दोस्तकी परीक्षा करनी चाही। १०१४ ई० में ख्वारेज्मशाहके दूतसे वजीरने कहा, कि मामूनके राज्यमें महमूदके नामसे खुतवा जारी किया जाये। ऊपरसे ऐसा दिखलाया गया, मानो वजीरने सुल्तानकी इच्छाके बिना ही यह सुझाव रक्खा। ख्वारेज्मशाहने पहिले आना-कानी की। तब मैमन्दीने स्पष्ट शब्दोंमें यह माग रखी। मामूनने अपने सेनापतियों और जन-प्रतिधिनियोंको

बुलाकर उनके सामने यह बात रखते हुए कहा—इन्कार करनेपर महमूद हमारे देशको सत्याना-शमे मिला देगा। लेकिन, उसके अमीरोंने माननेसे साफ इन्कार कर दिया और विद्रोह का झंडा उठाया। तलवार निकाल कर उन्होंने महमूदके लिये अपमानजनक कड़े-कड़े शब्द इस्तेमाल किये। मामूनने दूतसे मीठी-मीठी बातें करके शान्त करनेकी कोशिश की। अल्-बैरूनीने भी “अपनी सुनहली-रूपहली वाणी” से समझाकर महमूदके वजीरके सामने शाहसे माफी मगवाई। इसी समय अपने पक्षको मजबूत करनेके लिये अल्बैरूनीके परामर्शानुसार मामूनने इलिक और तुगान खानके झगड़को शान्त कर उनमें मेल कराया। मामूनके इस अनुचित दखलसे नाराज होकर महमूदने बलखसे अपना दूत भेज, तुगान खान और इलिकके सामने अपनी अप्रसन्नता प्रकट की। उन्होंने उत्तरमें कहा—“हमने मामूनको आपका मित्र और बहनोई जानकर उसकी बातपर ध्यान दिया”, और साले और बहनोईका झगड़ा मिटानेके लिये मध्यस्थ बननेकी इच्छा प्रकट की, किन्तु महमूदने इसका उत्तर भी देनेकी अवश्यकता नहीं समझी।

कराखानियोंने मामूनको सारी बात बतला दी। मामूनने सलाह दी, कि ख्वारेज्म और कराखानी दोनों, एक एक बाहिनी खुरासान भेजे, जो कि प्रजाको बिना दुःख दिये भिन्न-भिन्न दिशाओंसे जाकर बड़ा शान्ति स्थापित करे। कराखानी इस सलाहको माननेके लिये तैयार नहीं थे। उन्होंने फिर साले-बहनोईके बीच मध्यस्थ बननेकी बात दुहराई। मामूनने उसे स्वीकार किया। कराखानियोंके दूतने १०१६-१७ ई० में महमूदके पास पहुँचकर मीठी-मीठी बातें की। महमूदने भी कहा—तुम्हारे कहनेसे हम सभी बातोंको भूल जाते हैं। इसके बाद ही महमूदने मामूनको निम्नपत्र लिखा—

“यह मालूम है, कि हम दोनोंके बीचमें किन शतोंके साथ मित्रताकी संधि हुई थी, और ख्वारेज्मशाहपर हमारा कितना उपकार है। खुतबाके सबधमें उसने हमारी इच्छाओंका पालन यह जानते हुए किया, कि अगर ऐसा नहीं किया, तो क्या दशा होगी? लेकिन उसके लोगोंने उसे इस काममें स्वतंत्र नहीं रहने दिया। मैं ‘प्रतिहार और प्रजा’ का शब्द (ख्वारेज्मशाहके लिये) इस्तेमाल नहीं करता, क्योंकि ऐसे लोगोंके लिये इस शब्दका इस्तेमाल नहीं किया जा सकता, जो कि सुल्तानको कह सकते हैं ‘यह करो’ यह नहीं करो।’ इस बातसे शासनकी कमजोरी और असमर्थता प्रकट होती है, सचमुच ही यही बात थी। इस अवस्थासे नाराज होकर मैंने यहाँ बलखमें इतने समय तक ठहर कर एक लाख सवार तथा पैदल, एवं पाँच सौ सैनिक हाथी इन राजद्रोहियोंको सजा देनेके लिये जमा किये,

जिन्होंने अपने प्रभुकी इच्छाके प्रति विरोध प्रदर्शित किया। उन विश्वासघातियोंको मैं ठीक करना चाहता हूँ, साथ ही अपने भाई तथा साले अमीरको ऊपर उठाना चाहता हूँ, और उसे दिखलाना चाहता हूँ, कि शासन किस तरह करना चाहिए। एक निर्बल अमीर इस कार्यके अयोग्य है। हम गज़नी तभी लौटेंगे, जब कि निम्न तीन मागोंमेंसे एकको पूरा करनेके साथ मेरे पास पूर्ण क्षमा-याचना पहुँचेगी—(१) ‘मेरे नामसे खुतबा जारी किया जाय और पहिले के वचन-दानके अनुसार पूरी आज्ञाकारिता और रजामन्दी प्रकट की जाय, (२) हमारे पास हमारे योग्य पैसा और भेंट भेजी जाय, जिसे कि हम चुपकेसे लौटा देंगे, क्योंकि हमें व्यर्थके पैसोंकी अवश्यकता नहीं है, उसके बिना भी सोने-चादीके बोज़ेसे दबती भूमि और किले हमारे पास हैं, (३) अथवा क्षमा-पत्रके साथ क्षमायाचनाके लिये अपने अमीरों, इमामों

और फकीहोंको मेरे पास प्रार्थना करनेके लिये भेजे, जिसमे कि मैं वहासे अपने साथ पकड़ लाये कई हजार आदमियोंको लौटा दूँ।”

ख्वारेज्मशाहने तीनों शर्तें पूरी करना ठीक समझा। उसने खुतबाको पहिले खुरासानके अपने नगरो नसा और फारावमे, उसके बाद काथ और गूरगज इन दोनों राज-धानियोंको छोड़ बाकी शहरोमे भी जारी किया। कितने ही शेखो, काजियो और दीवानोको अस्सी हजार दीनार तथा तीन हजार घोडो को भेंटके रूपमें भेजा। इसका प्रभाव उसकी प्रजापर बुरा पडा और हजारासमे तैयार सेनाने मामूनके बुखारी हाजिब (अमात्य) अल्प तगिनके नेतृत्वमे उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। कितने ही अनुयायी और वजीर मारे गये, बाकी भाग गये। ख्वारेज्मशाह मामून किलेमे बन्द हो गया। विद्रोहियोंने बुधवार २० मार्च १०१७ ई० को किलेमे आग लगा दी और मामूनको मार डाला।

(ग) अबलूहारिस (१०१७)—मामूनके मरनेके बाद उन्होंने उसके भतीजे अबुल हारिस मुहम्मद अली-पुत्र (१०१७ ई०) को गद्दीपर बैठाया, जो कि उस समय सात सालका बच्चा था। सारी ताफन अल्प तगिन और उसके द्वारा नियुक्त वजीरके हाथमें थी। विद्रोहियोंने मनमाने तौरसे धनियोंको लूटा-मारा और इस मौके से लाभ उठाकर अपने वैयक्तिक दुश्मनोंसे बदला लिया।

महमूद गजनवीके साथ जो झगडा खडा हुआ था, उसमे मामूनने अपने सालेको खुश रख-नके लिये अपने प्राण तक खोये। इसके लिय महमूद कोई कडा कदम उठाना चाहता था, लेकिन उसकी बहन अभी ख्वारेज्ममे थी। उसको डर लगा, कि कही विद्रोही उसको नुकसान न पहुँचाये। इसलिये नरमीमे काम लेते हुए उसने केवल खुतबा जारी करने तथा हत्यारोको समर्पण करनेकी माग पेश की। दूतको यह भी सिखला दिया था, कि वह जाकर विद्रोहियोंसे कहे—सुल्तानको यदि खुश करना चाहते हो, तो उसकी बहनको सही-सलामत उसके पास भेज दो। विद्रोहियोंने बहनको तुरन्त भेज दिया, और पाच-छ आदमियोंके हत्यारा कहकर जेलमें डाल दिया। सधि हो जानेपर वह दो लाख दीनार और चार लाख घोडोंके साथ हत्यारोको भेजनेकी भी तैयारी करने लगे। लेकिन, महमूद इतने से थोडे ही क्षमा करनेवाला था? वह ख्वारेज्मपर आक्रमण करनेकी तैयारी करने लगा। वक्षु-तटके नगरो—खुतल, कबादियान और तेरमिज—मे सैनिक अभियानके लिये नौकाये बनने लगी। आमूल (चारजूय) मे रसद जमा होने लगी। इस सैनिक तैयारीकी गभीरताको छिपानेके लिये ख्वारेज्मके दूतको साथ लिये महमूद गजनवीकी ओर चल पडा। वहा जाकर उसने साफ जवाब दिया—यदि अपनी भलाई चाहते हो, तो अल्प-तगिन और दूसरे विद्रोही नेताओंको मेरे पास भेजो। ख्वारेज्मियोंके लिये लड़नेके सिवाय कोई चारा नहीं था। उन्होंने पचास हजार सवार जमा किये। अभियानके लिये प्रस्थान करते हुए महमूदने इलिक और तुगानखानको सूचित किया—मैं अपने बहनीईका बदला लेने तथा उस देशपर कब्जा करने जा रहा हूँ। उन्होंने तुम्हे और मुझे बहुत कष्ट दिया है। कराखानियोंने देखा, कि ख्वारेज्म भी महमूदके हाथमे चला गया, तो हम पश्चिमसे भी घिर जायेंगे। तो भी महमूदकी इतनी धाक थी, कि कराखानियोंने सधि नहीं तोडी और विद्रोहियोंको दण्ड देनेके महमूदके सकल्पका समर्थन किया—“क्योंकि ऐसा करनेसे दूसरो को शिक्षा मिलेगी कि राजा-ओका खून बहानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिये।”

महमूद आमूलसे वक्षुके बाये किनारे किनारे अपनी सेना लेकर चला। ख्वारेज्मकी सीमा पर अवस्थित जाफराबादमें महमूदने अपने सेनापति मुहम्मद इब्राहीम-पुत्र ताईके आधीन सेना भेजी। उसके ऊपर अचानक रेगिस्तानकी ओरसे खुमारताश शराबीने आक्रमण किया। ताईकी सेनाकी बड़ी हानि हुई, लेकिन इसी समय महमूद आ गया, और सेनाका सर्वनाश नहीं होने पाया। ख्वारेज्मी पराजित हुए। खुमारताश महमूदका बन्दी बना। अगले दिन हजारस्पके पास ख्वारेज्मकी प्रधान-सेनाके साथ मुठभेड़ हुई। यहाँ भी ख्वारेज्मी पूर्णतया पराजित हुए और विद्रोहियोंके नेता अल्प तगिन (बुखारा) और सैयद तगिनखानी बन्दी बने। सैयद चुप रहा लेकिन अल्प तगिनने महमूदको मुहत्तोड जवाब दिया। आगे बढ़ते हुए महमूदने ३ जुलाई १०१७ ई० को ख्वारेज्मकी राजधानी कातको दखल किया। वहीं उसने तीन विद्रोही नेताओंको हाथीके पैरो तले रौदवाया और उनकी लाशको हाथीके दातपर टगवा सारे शहरमें यह कहते हुए घुमवाया कि राजाओंके हत्यारोकी यही अवस्था होती है। फिर उन्हें फासी पर लटका दिया।

दूसरे विद्रोहियोंको भी उसने अपराधके अनुसार दण्ड दिया। महमूदके कितने ही राजनीतिक शत्रु भी कुफ्रके अपराधमें तलवारके घाट उतारे गये। बच्चे ख्वारेज्मशाह (अबुल्-हारिस मुहम्मद) को उसके परिवारके साथ महमूदने अपने साथ ले जा भिन्न-भिन्न किलोमें कैद कर दिया। ख्वारेज्मी सेनाके पैरोमें बेड़ी डालकर गजनी ले गये, जहाँसे पीछे मुक्त कर काफिरोके साथ लड़नेके लिये भारत भेज दिया।

ख्वारेज्मशाहका पुराना वंश खतम हुआ। उसकी जगहपर महमूद गजनवीने अपने प्रधान हाजिब अल्तूनताशको ख्वारेज्मशाह बनाकर एक नये वंशकी स्थापना की।

(१) अल्तूनताश (१०१७) —द्वितीय ख्वारेज्म शाह अल्तूनताशकी मददके लिये महमूदने अरसलन जाजिबको एक बाहिनी देकर ख्वारेज्म भेज दिया।

कराखानी इसेपसन्दनहीं करते थे, कि महमूदकी शक्ति बहुत बढ़ जायेलेकिन उन्हें अपने झगड़ोसे फुर्पत नहीं थी। महमूदका विश्वसनीय मित्र तुगान खान ने १०१७ (४०८ हि०) में चीनकी ओरसे आये काफिरोके एक लाख उर्दू (तबुओ)पर विजय प्राप्त की किन्तु जल्दी ही वह मर गया।

○ ○ ○ ○ ○

तुगान खान और अली तगिन दोनों तुगान खान (१) के पुत्र थे। अलीके पुत्र यूसुफके भी सिकके मिले हैं। अली तगिन पहिले पहल इलिक नस्सके समय अन्तर्वेदमें आया। जैसा कि मैम-डीने १०३२ ई० में महमूदसे कहा था—“अलीतगिन तीस सालमें अन्तर्वेदमें रह रहा है।” महमूद गजनवी १०२५ ई० में अन्तर्वेदकी भूमि में गया। उसी समय उसने कराखानियोंकी कमजोरी देखकर उनपर आक्रमण कर दिया। बहाना था—अली-तगिनके अत्याचारकी शिकायत देश-वासियोंने मेरे पास भेजी और तुर्क खाकानके पास भेजे गये मेरे दूतको रास्ता नहीं दिया गया। महमूदने वक्षु पार करनेके लिये जजीरो से बधी नावोंका पुल तैयार कराया। शगानियानका अमीर महमूदसे आ मिला, फिर ख्वारेज्मशाह अल्तूनताश भी आ पहुँचा। महमूदने अपने लिये १० हजार घोड़ोंके बाधने लायक एक विशाल तबू तैयार कराया। जब इसकी खबर सारे कराखानियोंके महाखान कादिर खानको मिली, तो वह पूरबसे अभियान करते हुए समरकन्द पहुँचा। महमूदका शिविर उसके शिविरसे और दक्षिण था। कादिर खान समरकन्दमें आकर

वहासे और आगे बढ़ता बड़े शान्तिपूर्ण भावके साथ महमूदके शिविरसे एक फर्सख (६ मील) की दूरीपर आकर रुक गया। तबू गाड़ दिए गये, फिर खानने महमूदके पास अपने आनेकी सूचना देनेके लिये दूत भेजकर कहा—“मैं तुमसे मिलना चाहता हूँ।” महमूदने एक दूसरेके देखने लायक सुरक्षित स्थान ठीक कर दिया। खान और सुल्तान दोनों वहाँ आकर अपने घोड़ोंसे उतर पड़े। महमूदने पहिले ही अपने खजानचीके हाथमें कपड़ेमें लिपटे एक बहुमूल्य हीरेको दे रखा था। घोड़ोंमें उतरते ही उसे खानको भेंट देनेका हुक्म दिया। कादिर खानने भी एक रत्न देनेके लिये रख रखा था, किन्तु चलते समय जल्दीमें भूल गया। पीछे उसने अपने परिचारक द्वारा रत्न भेजकर महमूदमें क्षमा मागी। दूसरे दिन महमूदने साटनके एक बड़े सुदर तबूको गाड़नेका हुक्म दिया और उसमें भोजकी तैयारी कराई। कादिर खानको दूत भेजकर भोजनके लिये निमंत्रित किया।

खानके आनेपर महमूदने बड़े ठाट-बाटके साथ दस्तरखान फैलानेका हुक्म दिया। एक ही दस्तरखानपर अमीर महमूद और खान भोजन करनेके लिये बैठे। भोजन समाप्तिके बाद दोनों “प्रमोदशाला” में गये। उसे दुर्लभ फूलों, सुस्वादु मेवों, बहुमूल्य रत्नों, सुनहरे गोटा-पट्टों, कमखाबों, बिल्लौरके सुदर दर्पणों तथा दूसरी अनेक प्रकारकी दुर्लभ वस्तुओंसे सजाया गया था। शालाको देखकर कादिर खान चकित हो गया। दोनों प्रमोदशालामें कुछ समय तक बैठे रहे। अन्तर्वेदके तुर्क खानोंमें रवाज नहीं था, इसलिये कादिर खानने शराब नहीं पी। दोनों कुछ समय तक मगीत सुनते रहे। इसके बाद कादिर खान उठा। महमूदने अपने मेहमानके योग्य भेंट उपस्थित करनेके लिये आज्ञा दी। इन भेंटोंमें निम्न चीजें थी—सोने-चादीके मद्य-वर्षक, बहुमूल्य रत्न, बगदादकी दुर्लभ वस्तुएँ, सुन्दर कपड़े, मूल्यवान् हथियार, रत्न जटित सोनेकी लगामवाले अनेक घोड़े, रत्नजटित सोनेकी अमारियोंके साथ १० हथनियाँ, बरजा के सुनहले साजोवाले खच्चर, सोने-चादीके डंडे और घटियोंवाले पाथेय, खच्चर, गोटा-पट्टे, साटन, बहुमूल्य कालीन, कामदार शिरोबंद, तबारिस्तानी गुलाबी रंगकी छीट, भारतीय तलवारे, चन्दन, भूरे अम्बर, अच्छी जाति की गदहियाँ, बरबरी बाधके चमड़े, शिकारी कुत्ते, सारस, हरिन और जानवरोंके शिकार करनेवाले सुशिक्षित बाज और शाही। महमूदने बड़े शिष्टाचार और सम्मानके साथ कादिर खानसे बिदाई लेते उसके सामने कृतज्ञता प्रकट की और मेहमानीकी श्रुतियोंके लिये क्षमा मागी।

अपने शिविर में आकर जब कादिर खानने भेंटकी चीजोंको देखा, तो वह बड़े आश्चर्यमें पड़ गया और समझ नहीं पाया, कि प्रतिदानमें क्या भेजे। उसने अपने कोषाध्यक्षको खजानेका दरवाजा खोलनेके लिये हुक्म दिया और उसमेंसे बहुतसी अर्शफियोंके साथ तुर्क-भूमिमें उपजनेवाली चीजें—सोनेकी लगाम और रिक़ाब वाले बढिया घोड़ी, सुनहले कमरबन्द और जामा पहिने तुर्क दासी, बाज, नाना प्रकारके समूर, काली लोमड़ीके समूर, चमड़ेके बर्तन, सींग सहित दो बकरियोंकी खालसे बनाये गये बर्तन, चीनी साटन आदि—को भेजा। दोनों शासक बहुत सतोषके साथ मित्रतापूर्वक एक दूसरेसे विदा हुए। इस भेंटका राजनीतिक निश्चय यह हुआ, कि दोनों मिलकर अन्तर्वेदसे अली तगिनको खतम करके वहाँ कादिर खानके द्वितीय पुत्र यगान तगिनको शासक बनाये। महमूदकी पुत्री जैनबका व्याह यगान तगिनसे और महमूदके द्वितीय पुत्र मुहम्मदके साथ कादिर खानकी पुत्रीका व्याह तै हुआ। महमूद अपने बड़े लड़के मसऊदसे प्रसन्न नहीं था, वह अपने दूसरे पुत्र मुहम्मदको उत्तराधिकारी बनाना चाहता था। लेकिन, सारी योजना अभी पूरी नहीं हो सकी थी, कि महमूदको अपने प्रतिद्वन्द्वी अली तगिनके सहायक तुर्क-

मानोके सरदार सलूक-पुत्र इसराईलसे भुगतना पडा। महमूदने इसराईलको धोखेसे पकडकर अपने राज्य पजाबके एक किलेमे बन्द करवा दिया और उसके उर्दू (घुमन्तू अनुयायियो) को नष्ट कर बचे खुचे तुर्कमानोको खुरासानमे चले जानेकी आज्ञा दी।

अली तगिन बुखारा और समरकन्द छोडकर मरुभूमिकी ओर भाग गया। उसकी बीबी और लडकियोके साथ सारा सामान महमूदके हाजिब विलगाना तगिनके हाथ लगा। इतनी सफलताके बाद भी अपने सहायकोकी हित-रक्षाका कुछ भी प्रबन्ध किये बिना महमूद बलख होते गजनी लौट गया। उसने कराखानियोकी अन्तर्वेदीय शाखाको बिल्कुल ध्वस्त करनेका ख्याल इसलिये छोड दिया, कि उससे कादिर खान सर्व-शक्तिमान् हो जाता। पीछे बलखके पडोसी प्रदेश तेरमिज, कबादियान, शगानियान और खुत्तल—प्राचीन तुखारेस्तान—महमूदके हाथमे चले आये। यगान तगिनने गजना जा महमूदकी कन्यासे पाणि-ग्रहण करने तथा श्वसुरकी सददसे अन्तर्वेदको जीतने का ख्याल प्रकट किया, तो महमूदने कहा—अभी मैं सोमनाथ नगरके रास्तेमे हू। इसी बीच शायद तुम तुर्किस्तानमे अपने प्रतिद्वन्दीको हरा सकोगे। फिर हम दोनोकी सयुक्त सेना अन्तर्वेदसे तुम्हारे दुश्मनोको निकाल देगी। यगान तगिनको महमूदके उत्तरका अर्थ साफ मालूम हो गया और इसे उसने अपना अपमान समझा। कादिर खान और उसके पुत्रोने अली तगिनके भाई तुगान खानको हराकर बलाशगुन (सप्तनद) छीन लिया। महमूद भारतसे लौटा और शायद अन्तर्वेदमे कुछ छेड-छाड भी की, किन्तु अली तगिन बुखारा और समरकन्दका स्वामी बना रहा। बलाशगुनसे निकाले जानेपर तुगान खानने अक्सीकतमे अपना शासन-केन्द्र बनाया, जहा के १०२६ (४१७ हि०), १०२७ (४१८ हि०) मे ढाले उसके सिक्के मिले है। लेकिन दक्षिणी फरगानाके उजगन्द (इलिक नस्रकी राजधानी) से १०२५ (४१६ हि०) के पहिलेके कादिर खानके नामके सिक्के, फिर १०२९ (४२० हि०) मे अक्सीकतमे भी उसी के सिक्के मिले, जिससे जान पडता है कि कादिरखानने पीछे अक्सीकतको भी ले लिया।

१०२६ ई० मे कयाखान और बुगराखान दो तुर्क (शायद कराखानी) खानो के दूत राजकन्या मागने के लिये महमूद के पास आये। महमूद ने बडे सम्मान के साथ दूतो से कहा—“हम मुसलमान है ओर तुम काफिर, इसलिये हम अपनी बहन-बेटी तुम्हे कैसे दे सकते है ? हा, अगर तुम मुसलमान हो जाओ, तो शायद बात हो सकती है।” इसी साल महमूद के पास खलीफा कादिर ने महमूदके जीते देशो का “अहद”, उसके और उसके बेटो तथा भाई युसूफ के लिये नई पदविधोके साथ भेजा। महमूद ने खलीफा को सामानियो के असली उत्तराधिकारी होनेके अपने कर्तव्यपालन करनेमे कोई कोताही न करने का वचन दिया। खलीफाने उसे “अखिल प्राचीका महान शासक” की पदवी प्रदान की। उसकी माग पर खलीफाने इस बातको मान लिया, कि महमूदके द्वारा ही वह कराखानियो से सबध स्थापित करेगा और उन्हे सीधे भेट भी नही भेजेगा। यद्यपि कराखानियो के साथ महमूद का बर्ताव बराबरी का था, लेकिन खलीफा के सामने महमूद उन्हे अपने अधीन प्रकट करता था। मगलवार ३० अप्रैल १०३० को महमूद की मृत्यु हुई। उसके बाद कराखानियो और गजनवियो के सबध मे परिवर्तन हो गया। वक्षु के उत्तर महमूद का राज्य कुछ थोडे से इलाके ही तक सीमिति था, किन्तु उसके राज्य के रूप मे पूर्वी मुसलिम भूमि का शासन अपने चरम विकासपर पहुचा था।

महमूद के शासन ने इस का प्रथम अंग्रेजों द्वारा विरोधित होने पर अंग्रेजों द्वारा किया गया

था, वहाँ उसकी दिग्विजयों के खर्च के लिये बड़े बड़े टैक्स लगाये जाते थे, जिससे प्रजा लाखों की मर्या में बर्बाद हो रही थी। महमूद ने भारत के नगरों और मंदिरों की लूट के रूप में अपार संपत्ति गजनी में पहुँचाई थी, किन्तु उसमें जनता को क्या लाभ ? जनसाधारण के लिये तो महमूद के सारे अभियान मर्यानाश के कारण थे। लोगों को उसके हाकिम जोक की तरह चूम रहे थे। महमूद के वजीर अयुल्-अब्बास फजल अहमद-पुत्र इस्फराइनी के अत्याचारों के कारण बहुत से आबाद इलाके उजड़ गये। कितने ही स्थानों पर नहरें खराब और कितनी ही जगहों में बिलकुल नष्ट हो गईं। इसके ऊपर १०११ (४०१ हि०) का महान् अकाल आया। पहिले पालने अनाजकी फसल को नहीं पकने दिया, जिससे लोगों को खाने-पीने की चीजोंका भारी अभाव हो गया। केवल नेशापोर और उसके आसपास के गावों में एक लाख आदमी अकाल की बलि चढ़े। लोगों ने कुत्तों, बिल्लियों को खाकर खतम कर दिया, और कभी कभी आदमी को आदमी का मांस खाते देखा गया। महमूद ने गरीबों में कुछ पैसों बटवाये। महमूद की बड़ी बड़ी इमारतें भारत की लूट से बनवायीं गई थी, किन्तु उनकी मरम्मत और सुरक्षा के लिये भी बहुत धन खर्च करना पड़ता था, जिसका बोझ प्रजा पर पड़ता था। महमूद ने बलख में एक बहुत सुन्दर बाग बनवाया था, जिसको अच्छी अवस्था में रखने के लिये नागरिकों के ऊपर भारी कर लगा था। वह वहाँ बराबर नहीं रहता था, पर इसी बाग में अपने जलसे करता था। एक दिन उसने अपने दरबारियों से पूछा—“क्यों बगीचे के इतने मनोहर मौदिर्य के बीच मैं एक भी प्रमोद महोत्सव मनाने में सफल नहीं होता।” अबूनस मिरस्कीनने क्षमा मागते हुए कहा—“बलख के नागरिक इस व्यर्थ के बगीचे की देखभाल के लिये बड़े दुःखी हैं, क्योंकि इस हानिकारक खर्च का बहुत बड़ा भाग उनके सिर पर पड़ता है। इसीलिये सुल्तान के हृदय में आनन्द और उत्साह नहीं हो पाता।” सुल्तान नाराज हो कई दिनों तक अबूनस से नहीं बोला। करामानियोंके १००६ ई० के आक्रमण का हवाला देते महमूद ने कहा—“मैं ऐसी आफतों से लोगों की रक्षा करता हूँ और वह मेरे लिये एक बगीचा भी ठीक-ठाक रखना भार समझते हैं।” इसके चार महीने बाद महमूद ने नागरिकों को बगीचे के कर में मुक्त कर खर्च के लिये यहूदियों के ऊपर कर लगाया।

महमूद के दरबार के रतन केवल प्रसिद्धि के लिये अपनी इस्लाम-भक्ति प्रदर्शित करते थे, नहीं तो वह सभी ढोंगी थे। महमूद आलिमों और शोधों का संरक्षण तभी तक करता था, जब तक कि वह उसके हाथ में हथियार बनकर काम करने के लिये तैयार रहते थे। उसके धार्मिक युद्ध केवल धन लूटने के लिये थे, यह भारत के अभियान से स्पष्ट है। धर्मान्धता से प्रेरित होकर उसने ऐसा किया, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। कभी कभी वह दूसरे की संपत्ति जप्त करने के बहाने उन पर कुफ्र का अपराध लगाता। महमूद ईरानी राष्ट्रीय भावनाओं का संरक्षक था, यह समझने की गलती की जा सकती है, क्योंकि महमूद के कहने पर फिरदौसी ने अपने महान् ग्रंथ “शाहनामा” को लिखा। महमूद की सेना में सबसे अधिक क्रीतदास और भाड़े के सिपाही थे, बाकी प्रजा महमूद की आखों में केवल कर देने वाले प्राणी थी, जिनके दिलों में राज-भक्ति या धर्म-भक्ति का ख्याल ही नहीं सकता था। बलख के नागरिकों के कराखानियों से मुकाबिला करने की बात पर महमूद नाराज हो गया था। उसकी दृष्टि में युद्ध प्रजा का काम नहीं था।

उसने कहा था—“प्रजा को युद्ध से क्या काम ? यह स्वाभाविक था कि शत्रुओं ने तुम्हारे नगर को जला दिया, और आमदनी के एक अच्छे स्रोत, मेरी संपत्ति को नष्ट कर दिया। तुम्हें उन

हानियों की क्षतिपूर्ति मिलती, लेकिन हमने यह सोचकर माफ कर दिया, कि अब तुम फिर ऐसा नहीं करोगे। अगर किसी समय कोई राजा अधिक मजबूत दिखाई पड़े और तुमसे कर लेकर तुम्हारी रक्षा करना चाहे, तो तुम्हें कर चुका कर अपनी रक्षा करनी चाहिये।” इससे मालूम है, कि महमूद का पिता चाहे उन्हीं तुकों का गुलाम हो, जिनमें कबीलेवाली सामन्तशाही रहते भी कुछ हद तक सादगी और सैनिक जनतात्रिकता थी, किन्तु, महमूद एक बिल्कुल निरंकुश शासक था। उसके सामने प्रजा को सिर झुकाये कर देने के सिवाय और कोई अधिकार नहीं था।

उसके दरबार में भी ऐसे ही खूसट भरे हुए थे। पहिले सभी कागज-पत्र फारसी में लिखे जाते थे। वज़ीर मँमन्दी ने फिर से अरबी को राजकीय अभिलेखों की भाषा बनाया। ऐसा करने का कारण बतलाते हुए उसने कहा—“(लोकभाषा को मान देने पर) योग्य और अयोग्य सभी बराबर हो गये, जिसके कारण सुन्दर साहित्य की हाट को बहुत नुकसान पहुँचा।” इसीलिये वज़ीर ने लेखका के तल को ऊपर उठाया। फारसी भाषा का उपयोग उन्हीं कामों में रहने दिया, जहाँ उसके बिना काम न चलता।

महमूदके राज्यमें लोगोको दो भागोमें बाटा गया था—एक वह जो कि सुल्तान की ओर से वेतन पाकर सैनिक सेवा करते थे और दूसरी साधारण जनता, जिसकी कि सुल्तान बाहरी और भीतरी शत्रुओं से रक्षा करता था। सैनिक या प्रजा में से कोई भी सुल्तान की इच्छा के विरुद्ध कोई काम करने का अधिकार नहीं रखता था। महमूद ने अपने पुत्र मसऊद तक के ऊपर खुफिया दूत रख छोडे थे।^१

महमूद के बारे में निजामुल्मुल्क ने लिखा है—“एक दिन सुल्तान महमूद अपने खास-गियो और नदीमोंके साथ शराब पिये हुये थे। उसके सिपहसालार अली नोश तगिन ओर मुहम्मद अरबी उस मजलिस में मौजूद थे। वह सारी रात शराब पीते रहे। जब जगे तो सबेरा हो गया था। अली नोश तगिन पर शराब पीने का अधिक असर हुआ था। उसने घर जाने की इजाजत मागी। महमूद ने कहा—‘दिन होने पर इस हालत में जाना ठीक नहीं है। इसी जगह बैठ होश होने पर जाना। अगर इस हालत में तुझे मोह्तसिब (अफसर) देखेगा, तो पकड़ेगा, तेरी आबरू चली जायगी और मेरा दिल दुखी होगा। अली नोश तगिन पांच हजार मर्दों का सेनापति, बहादुर था।

अली नोश तगिन उठ खड़ा हुआ और अपने घर की ओर चला। मोतहसिब ने उसको सौ सवारों और प्यादों के साथ देखा। जब अली नोश तगिन को इस तरह मस्त देखा, तो उसे घोड़े पर से नीचे खींचने का हुक्म दिया और खुद घोड़े परसे उतर कर अपने हाथ से इतना पीटा, कि वह जमीन पर पड़ गया। मोतहसिब एक बूढ़ा तुर्क खादिम (राजसेवक) था।

अली नोश तगिन को उसके घर ले गये। उसने रास्ते में कहा, कि सुल्तान के हुक्म को नहीं माना, इसलिये मेरी यह हालत हुई। अगले दिन जब अली नोश तगिन ने अपनी पीठ को नगा करके महमूद को दिखलाया, तो वह जगह-जगह कटी थी। महमूद ने हसकर कहा—‘तोबा कर और फिर मस्त हो घर से बाहर न जाना।’

महमूद बदसूरत था। "सियासतनामा" में लिखा है^१ सुल्तान महमूद गाजी का मुह अच्छा नहीं था। वह पीला था। जब उसका पिता सुबुक तगिन मर गया, तो वह बादशाही करने लगा और हिन्दुस्तान (पंजाब) उसके हाथ में आया। किसी दिन सबेरे अपने खास कमरे में जाय नमाज पर बैठा नमाज पढ़ रहा था। दो खाम गुलाम एक दर्पण उसके सामने लिये खड़े थे। इसी समय उसका वजीर शमशुकपफात अहमद हसनने भीतर आ कर कमरे के दरवाजे से मोजरा और सलाम किया। महमूद ने उसे मिर के मकैत से बैठने को कहा। महमूद ने दुआ पढ़ने में छुट्टी पा कवा (चोगा) पहना, सिरपर कुलाह रखी, आईना में निगाह करके अपने चेहरे को देखकर मुस्कुगाया, फिर अहमद हसन में बोला 'तू जानता है, कि इस समय मेरे दिल में क्या आया ?'

उसने कहा—खुदावन्द (स्वामी) उसे बेहतर जानते हैं।

(महमूद ने) कहा—मुझे सदेह है कि लोग मुझमें प्रेम नहीं करते, क्योंकि मेरा चेहरा अच्छा नहीं है। लोगों की आदत है, वह सुन्दर मुह वाले बादशाह से प्रेम करते हैं।

अहमद हसन ने कहा—ऐ, खुदावन्द, एक काम कर, जिसमें कि स्त्री-बच्चे तुझे अपनी जान की तरह में प्यार करे और तेरे हुकम पर आग-पानी में कूदे।

(महमूद ने) कहा—क्या करूँ ?

(वजीर ने) कहा—धन को दुश्मन मान, जिसमें लोग तुझे दोस्त मानें।

महमूद को बान पसन्द आई। फिर उसने दान और खैरात करने के लिये अपना हाथ खोल दिया, और लोग उसमें प्रेम तथा उसकी प्रशंसा करने लगे। बहुतसे बड़े बड़े काम और विजय उसके हाथ में आये। उसने मोमनाथ को जीता, समरकन्द उसका हुआ, इराक (हाथ में) आया। फिर एक रोज उसने अहमद हसन से कहा—जबसे मैंने धन से अपना हाथ खींच लिया, दोनों लोक मेरे हाथ में आये।

उससे पहिले सुल्तान नाम (किसी का) नहीं हुआ था। वह पहिला आदमी था, जिसने कि इस्लाम में अपने को सुल्तान कहा।"

३. मसऊद (१०३०-४१ ई०)

जैसा कि पहिले कहा, महमूद छोटे लड़के मुहम्मद को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था, लेकिन मुहम्मद कुछ ही दिनों तक शासक रह सका, फिर उसको हटाकर मसऊदने राजशासन सभाला। मसऊद में अपने पिता के केवल दोष ही मौजूद थे। उसकी सारी शक्ति सलूकियो (तुर्कमानों) को दबाने में खर्च हुई, जिन्हें कि महमूद ने अपनी जान नष्ट करके खुरासना भेज दिया था। मसऊद के अत्याचारों से जनता हताश हो गई और उच्च वर्ग ने भी असतुष्ट हो अन्तर्द्वेद में अपने दूत भेजने शुरू किये। लेकिन, इस अवस्था का लाभ कराखानियो ने नहीं बल्कि-तुर्कमानों के नेताओं ने उठाया।

गजनवियो और कराखानियो का आपस में क्या सबध था, इसका पता उस पत्र से मालूम होता है, जिसे ख्वारेज्म शाह अलतूनताश ने मसऊद के पास भेजा था—“यह अच्छी तरह मालूम

है, कि स्वर्गीय अमीर (महमूद) ने पहिले बहुत अधिक श्रम और धन व्यय करके उनकी सहायता की, जिससे कादिर खान ने बड़ा खान बन अपनी गद्दी को मजबूत किया। इस वक्त यह आवश्यक है, कि उसकी सहायता की जाय, जिसमे वह मित्रता बनी रहे। ये (कराखानी) हमारे सच्चे मित्र नहीं होंगे, तो भी बाहर से अच्छा सबंध रखना चाहिये, जिसमे वह दूसरो को हमारे खिलाफ न भडकाये। अली तगिन हमारा असली दुश्मन है। वह अपने हृदय मे बराबर ईर्ष्या रखे हुये है, क्योंकि स्वर्गीय अमीर की सहायता से उसका भाई तुगानखान बलाशगन से भगाया गया। दुश्मन कभी मित्र नहीं बन सकता, लेकिन उसके साथ भी सधि करनी होती है। मित्रतापूर्ण सबंध स्थापित करना आवश्यक है। साथ ही हमे बलख, तुखारिस्तान, शगानियान, तेरमिज, कवादियान और खुत्तल के प्रदेशो को सैनिको से भर देना है, क्योंकि शत्रु अरक्षित प्रदेशो को लूटने-पाटने के हरेक मौके को हाथ से जाने देना नहीं चाहता।”

मसऊद ने कादिरखान और उसके पुत्र बोगरा तगिन की पुत्रियो को अपने तथा अपने युवराज मौदूद के व्याह के लिये मागने के वास्ते दूत भेजे थे। अभी बात चल ही रही थी, कि १०३२ ई० मे कादिर मर गया। बड़ा पुत्र बोगरा तगिन सुलेमान अरसलन खान की पदवी धारण करके तख्त पर बैठा। द्वितीय पुत्र यगान तगिन ने बोगरा खान की उपाधि ले तलस और इस्फिजाब पर शासन शुरू किया। मसऊद ने सवेदना प्रकट करने और बधाई देने के लिए दूत भेजे। दूत सफलतापूर्वक ६ सितम्बर १०३४ ई० को गजनी लौट आये। मौदूद की दुल्हन रास्ते मे मर गई। मसऊद की शाह खातून सही सलामत गजनी पहुची और बड़े धूमधाम से शादी हुई।

अन्तर्वेद के शासक अलीतगिन के साथ समझौता नहीं हो सका। मसऊद ने अपने भाई मुहम्मद के विरुद्ध मदद करने के बदले अलीतगिन को खुत्तल देने का वचन दिया था। उसके आनाकानी करने पर झगडा उठ खडा हुआ, लेकिन वह बिना खून-खराबी के ही तै हो गया। अली-तगिन तो भी खुत्तल न पाने के लिये नाराज था। अलतूनताश ने जो सलाह दी थी, उसे न मानकर मसऊद ने अलीतगिन को अन्तर्वेद से निकालने के लिये कादिर खान के लडको को मदद दी। यद्यपि वह खुद नहीं सम्मिलित हुआ, लेकिन अलतूनताश के युद्ध मे इसका असर हुआ। १०३२ ई० मे अलतूनताश सुल्तान की आज्ञा बिना अतर्वेद मे दाखिल हुआ। सुल्तान मसऊद ने १५ हजार सेना बलख से भेजी। इस आक्रमण की खबर मुनकर अलीतगिन बुखारा की रक्षा का भार गाजियो (स्वेच्छा सैनिको) को सौंप वहाँ के किले मे १५० गुलाम सैनिक छोड खुद दबूसिया मे चला गया। शहर ने आत्मसमर्पण कर दिया। सीधे आक्रमण करके किले को भी सर कर दुश्मन ने ७२ गुलाम बन्दी बनाये। लेकिन अलीतगिन की प्रधान मेना के साथ दबूसिया मे जो लडाई हुई, उसमे उतनी सफलता नहीं हुई। मसऊद तुर्कमानो को अपना विरोधी बना चुका था, इसलिए वह सल्जूकियो के नेतृत्व मे अली के साथ हो गये। अलीतगिन के राजचिह्न (छत्र) के साथ तुर्कमानो का लाल झंडा भी पहाड पर फहराने लगा। युद्धका कोई निपटारा नहीं हुआ। इसी लडाई मे अलतूनताश मरणान्तक घाव से घायल हुआ। वजीरकी बुद्धिमानी से सेना किसी तरह सही सलामत ख्वारेज्म पहुच गई। ख्वारेज्मशाह के घायल होने की बात को छिपाकर वजीर ने अलीतगिन के साथ सुलह की बातचीत शुरू की और सलाह दी कि ख्वारेज्मशाह को बीच मे डालकर सुल्तान मसऊद से समझौता की बात की जाये। समझौता हो गया। अलीतगिन

समरकन्द लौटा और ख्वारेज्मी सेना को आमूल (चारजूय) के लूटने में कोई बाधा नहीं डाली। राजधानी की ओर कूच करने से पहिले ही अल्तूनताश मर गया।

मसऊद के आक्रमणों से अलीतगिन की आखें खुल गईं। उसने समझ लिया, कि यदि हम कराखानी आपसमें लड़ेंगे तो कहीं के नहीं रहेंगे। उसने अपने खानदान से मेल कर, अरसलनखान सुलेमान को अपना अधिराज मान लिया। अब अरसलनखान और बोगराखान के नाम से समरकन्द में भी सिकके ढलने लगे। अल्तूनताश के बाद उसका पुत्र हाखून ख्वारेज्मशाह बना।

(२) हाखून ख्वारेज्मशाह (१०३२ ई०) हाखून नवीन ख्वारेज्म वंश का प्रभावशाली शासक था। वह गजनवियों और दूसरे पड़ोसियों से बराबर लड़ता रहा। ख्वारेज्म की भौगोलिक परिस्थिति ऐसी है, जिसके कारण सदा ही वह एक स्वतंत्र राज्य रहा। अखामनशियों के समय उसे नाम मात्र की ही अधीनता स्वीकार करनी पड़ी थी। ग्रीकोबाल्टरी जुड़े को कभी उसने अपने कंधे पर नहीं रखा। कुषाणों के समय अवश्य वह उनके आधीन हुआ था, किन्तु बहुत दिनों के लिये नहीं। ख्वारेज्म जहाँ अन्तर्वेद की ओर से कराकुम की विशाल मरुभूमि के कारण दुष्प्रवेश्य था, वहाँ मेर्वकी तरफ से भी किज़िलकुम की विस्तृत मरुभूमि उसके रक्षा-प्राकार का काम देती थी। पश्चिम तथा उत्तर की ओर भी इसी तरह की उस्तुर्त और किपचककी दुर्गम मरुभूमियाँ थीं। ख्वारेज्म में आसानी से पहुँचने का रास्ता वक्षु की धारा है। हजारास्प के पास वह ऐसी जगह से गुजरती है, जहाँ थोड़े सैनिकों द्वारा अच्छी तरह प्रतिरक्षा की जा सकती है। इसीलिये किसी भी बाहरी शासक के लिये ख्वारेज्म को अपने हाथ में देर तक रखना आसान नहीं था। अल्तूनताश के राज्य के उत्तर के पड़ोसी कितनी ही घुमन्तू जातियाँ थी, जिनमें किपचकों का नाम पहिले पहिले इसी समय लिया जाने लगा था। अल्तूनताश ने उनके आक्रमणों का मुकाबिला किया। उसने और उसके पुत्र हाखून ने अपने ग्यारहवीं शताब्दी के उत्तराधिकारियों की भाँति अपनी सेना में घुमन्तुओं की भी एक वाहिनी रखी थी। अपने स्वामी गजनवियों की तरह ख्वारेज्मशाह भी अपनी प्रतिहार (गारद)-सेना के लिये भारी सख्या में गुलाम खरीदते थे। इन सैनिकों की अधिकता से महमूद को अल्तूनताश से शका हो गई थी, तो भी अल्तूनताश ने सदा अपने को गजनवियों का सामान्त माना। महमूद ख्वारेज्म की शक्ति को जानता था। उसने अल्तूनताश को गजनी बुलाने का असफल प्रयत्न किया। वही बात मसऊद के लिये भी हुई।

अल्तूनताश के मरने पर मसऊद ने अपने पुत्र सईद को ख्वारेज्मशाह बनाया और अल्तूनताश के पुत्र हाखून को केवल “खलीफतुद्दार” के तौर पर शासक रहने दिया। उसे भेट भी बाप के समय से आधी मिलती थी। ऐसी अवस्था को हाखून कितने दिनों तक बर्दाश्त करता? १०३४ में उसने आज्ञाल्लघन करना शुरू किया। हाखून का भाई मसऊद के दरबार में था। वही १०३३ के अन्त या १०३४ के आरम्भ वह छत से गिरकर मर गया। दुश्मनों ने लिख दिया कि सुल्तान ने उसे मरवा दिया। हाखून ने भाई का बदला लेने का निश्चय किया और अलीतगिन तथा सल्जूकियों से समझौता कर लिया। अगस्त १०३४ में उसने खुतबा में से मसऊद का नाम हटवा दिया। हाखून और अलीतगिन ने मिलकर तै किया, कि ख्वारेज्म सेना मेर्व पर चढ़े और अलीतगिन तेरमिज़-बलख पर। इसी योजना के अनुसार उम्जूजी पहाड़ियों ने १०३४ ई० के वसंत में खुत्तल पर और वर्ष के आरम्भ में तुर्कमानों ने कवादियान पर आक्रमण किया। मसऊद

का तेरमिज का कमाण्डर बेगतगिन तुर्कमानो के मुकाबले के लिये तैयार था, लेकिन वह मैता के पास वक्षु पार हो गये। बेग तगिन ने जाकर शापूरगान में उनको हराया। पर, उन्होंने उसका पीछा किया। बेगतगिन घायल होके मर गया। मसऊद ने अलीतगिन अब्दुल्ला-पुत्र को सेना देकर भेजा, और उसने तेर्मिज में जाकर अपना शासन स्थापित किया।

(४) सल्जूकी तुर्कमान—

हारून ख्वारेज्मशाह का सौभाग्य था, जो उसे में सल्जूकी जैसे दोस्त मिल गये। १०२९ में अली तगिन और सल्जूकियों में झगडा हो गया। अलीतगिन के हुकुम से उसके सेनापति अल्पकारा ने सल्जूक के पौत्र युसूफ को मार डाला। इसी युसूफ को अलीतगिन ने स्वयं इनच-पैगू की उपाधि दे अपने सारे तुर्कों का सेनापति बनाया था। अपने नेता के साथ हुये ऐसे विश्वासघात को तुर्कमान कैसे सहन करते? १०३० में युसूफ के चचेरे भाई तुगरल और दाउद ने विद्रोह कर अल्पकारा और उसके हजार आदमियों को मार डाला। अल्पतगिन और उसके पुत्र ने साधारण लोगों की सहायता से पीछा करके तुर्कमानो को पूरी तौर से हराकर उनकी सम्पत्ति लूट ली, बहुत से स्त्री-बच्चों को बन्दी बनाया, और बाकी को खुरासान में बसने के लिये बाध्य किया। उत्तरापथ और दक्षिणापथ की घुमन्तू जातियों के इतिहास से हम अच्छी तरह जानते हैं, कि घुमन्तुओं का नाश करना साप मारने से भी ज्यादा मुश्किल है। इन्हीं तुर्कमान घुमन्तुओं को अब ख्वारेज्मशाह ने अपनी ओर किया। वह कराखानियों और गजनवियों दोनों के दुश्मन थे, इसलिये हारून की बात मानने के लिये तैयार हो गये। हारून ने उन्हें खुरासान और माशरेवातके आसपास की जमीन दे दी, जहाँ वह चले गये।

तुर्कमान मूलतः सिर-दरिया के उत्तर के रहनेवाले थे। जन्द के तुर्कों से उनकी दुश्मनी थी—अक्टूबर १०३४ में जन्द के शासक शाह मलिक न उनपर आक्रमण कर दिया। सात आठ हजार तुर्कमान मारे गये, बाकी ने बरफ बनी सिरदरिया के ऊपर से भागकर अपनी जान बचाई। हारून ने बीच में पडकर समझौता कराना चाहा। शाह मलिक इसके लिये तैयार नहीं था, किन्तु खुरासान के लिये एक बाहिनी देने को तैयार हो गया। १२ नवम्बर को नाव पर हारून और शाहमलिक की मुलाकात हुई। हारून की ३० हजार बड़ी सेना देखकर शाहमलिक डर गया और उसने बाहिनी नहीं दी। इस प्रकार १०३५ के अन्त में खुरासान पर आक्रमण नहीं हो सका।

१०३४ के वसन्त में गजनवी शासित पंजाब में भयंकर विद्रोह हुआ—अभी पंजाब में मुसलमान नाम मात्र ही थे। मसऊद उसे दबाने में सफल हुआ।

अल्पतगिन की मृत्यु (१०३४ की गर्मियों या शरद) के समय घुमन्तू तुर्कमान खुरासान की ओर प्रवास कर रहे थे। १०३५ के वसन्त में अल्पतगिन के बड़े पुत्र के गद्दी पर बैठने की सूचना मसऊद को मिली। उसने बुखारा में अपनी ओर से सवेदना और बधाई भेजी। इस पत्र में उसने तरण इलिक को 'श्रेष्ठ अमीर-पुत्र' कहा था। अलीतगिन के दोनों पुत्र हारून के साथ किये समझौते के अनुसार काम करने के लिये तैयार थे। उन्होंने शगानियान और तेर्मिज पर आक्रमण किया, फिर वक्षु पार हो अन्दखुद में हारून की सेना से मिलने का निश्चय किया। शगानियान का शासक अबुल्कासिम मुकाबिला नहीं कर सका, और अपने उत्तर के पहाड़ियों (कुमीज़ियों) के पास में भाग गया। दलक की सेना ने टारजगी (तरबट) पार हो तेर्मिज को घेर लिया

लेकिन वह किले को नहीं सर कर सकी। इसी समय खबर मिली, कि गजनवियों ने रिश्वन देकर उसके गुलामों से हारून को मरवा डाला। अलीतगिन के पुत्र लौह-द्वार (दरबन्द) होते समकरकन्द लौट गये।

इसी साल खुरासान में सल्जूकियों की सफलता की खबर मिली। हारून की मृत्यु के बाद वह खुरासान में प्रविष्ट हुए थे। अली के दोनों पुत्रों ने शगानियान पर अभियान किया। दो तीन मजिल समरकन्द से आगे जाने पर मालूम हुआ, कि मसऊद के सेनापति अबुलकासिम और उसके सहायकों ने बड़ी सेना एकत्रित की है, तथा मसऊद अन्तर्वेद पर चढ़ाई करना चाहता है। ८ दिसम्बर (१०३५) को दोनों भाइयों का दूत क्षमा-याचना के लिये मसऊद के दरबार में बलख पहुँचा। मसऊद ने क्षमा दे दी, लेकिन गुस्से के माते दूत को सीधा दर्शन न दे दानिश-मन्द (अध्यापक) को बीच में रखकर बातचीत की।

हारून के मरने के एक साल बाद दिसम्बर १०३६ ई० में मसऊद के दरबार में अली के दोनों पुत्रों के दूत बुखारा खतीब, अल्पतगिन और अब्दुल्ला पारसी आये। अबकी बार सुल्तान ने दूतों से भेंट की और अपने भाई "इलक" की तन्दुरुस्ती के बारे में पूछा। इलक ने एक गजनवी राजकुमारी व्याह के लिये मागी थी, और कराखानी कुमारिया मसऊद को देने का वचन दिया था, एवं कराखानियों के प्रमुख अरसलनखान से समझौता कराने में मध्यस्थ बनने की प्रार्थना के साथ खुत्तल की माग छोड़ देने की बात भी कही थी। इलक ने मसऊद को यह भी कहलवाया था, कि सल्जूकियों के साथ लड़ने में हम आपकी सहायता करेंगे। निश्चय हुआ, कि इलक की बहन मसऊद के पुत्र सईद को व्याह दी जाय, और महमूद की भतीजी (नस की पुत्री) इलक को। मसऊद ने बलख के रईस (नगर-पति) अब्दुस्सलाम को दूत बनाकर अन्तर्वेद भेजा, जो कि अली-पुत्रों के दरबार में सितम्बर १०३७ में भी मौजूद था।

तुर्किस्तान के कराखानियों के साथ भी मसऊद का सबंध अच्छा नहीं था। १०३४ ई० में जब गजनवी दूत लौटे, उसी समय बोगरा खान का दूत अपनी दुल्हन जैनब को लेने आया। मसऊद इस शर्त पर तैयार हुआ, कि जैनब के नाम पर महमूद की संपत्ति से भाग न मागा जाय। बोगरा खान का दूत लौट गया। फिर मसऊद ने अरसलन खान से उसके भाई के दावे की शिकायत की। अरसलन खान के फटकारने पर बोगरा खान अपने भाई और मसऊद दोनों के विरुद्ध हो गया। ऐसी अवस्था में सल्जूकियों की सफलता से उसे खुश होना ही चाहिये था। तुगरल से उसकी पहिले से दोस्ती थी। १०३७ ई० में वक्षु तट पर एक जूते बनानेवाले के पास बोगरा खान का गुप्त-पत्र पकड़ा गया, जिसमें तुर्कमान नेताओं को वचन दिया गया था, कि तुम जो कुछ भी कदम उठाओगे, उसमें हम बाधक नहीं होंगे। सुल्तान ने मानो इस पत्र को देखा ही नहीं, ऐसा दिखलाने के लिये जूता बनानेवाले को सौ दीनार देकर भारत भेज दिया, जिसमें पत्र के बारे में कुछ पता न लग सके। फिर १० हजार खर्च करके तुर्किस्तान में अपना दूत भेजा, और अरसलन खान को बीच में पड़कर भाई से समझौता कराने के लिये कहा। २३ अगस्त १०३७ ई० को मसऊद का दूत अबूसादिक कबानी रवाना हुआ और चौदह महीना तुर्किस्तान में रह सफल होकर लौटा। बेहकी के लेख से मालूम होता है, कि इस समय भाइयों के बीच कोई वैमनस्य नहीं था।

२४ सितम्बर (१०३७) को अली के दोनों पुत्रों और किसी एक अज्ञात शामक के दूत मसऊद के पास आये।

बुरीतगिन—१०३८ ई० में इलक (1) नस्र का पुत्र अबू-इसहाक इब्नाहीम अन्तर्वेद में आया। इस समय उसकी उपाधि बूरी-तगिन थी। अली के पुत्रों जेल से भाग पहिले वह अपने अपने भाई ऐनुद्दौला के पास उजगन्द में जा कुछ समय तक रहा। १०३८ ई० की गर्मियों में मसऊद के वजीर का उसको पत्र मिला। उसे अनुकूल उत्तर देने के लिये कहा गया। बुरीतगिन कुमीजियों के वेष में ही, तीन हजार सेना जमाकर बल्खा, खुत्तल और हुल्बुक के इलाकों में लूट-मार मचाने लगा। पंज नदी के तटपर पहुँचने पर उसे खबर मिली, कि मसऊद स्वयं युद्ध के लिये आ रहा है। बुरीतगिन लौटकर क्षमा-प्रार्थी हुआ, लेकिन मसऊद ने उसके विरुद्ध अवतूबर के अन्त में दस हजार सेना भेज दी। इसी समय खबर मिली, कि बुरीतगिन खुत्तल छोड़कर कुमीजों के इलाकों में चला गया। सेनापति अली को बलख लौटा लिया गया।

मसऊद ने अब अन्तर्वेद पर अभियान करने का निश्चय कर उसी जाड़े में बुरी तगिन को खतम करना जरूरी समझा, जिसमें कि वसन्त में वह तुर्कमानों के खिलाफ अभियान कर सके। वजीर ने बहुत समझाया, “अभियान वसन्त में करना अच्छा है, क्योंकि उस वक़्त नई घास चरने के लिये रहती है, या पतझड़ (शरद) में, जब कि फसले तैयार रहती है। बुरीतगिन के विरुद्ध अभियान शगानियान के शासक अथवा अली-पुत्रद्वय पर छोड़ा जा सकता है। सुल्तान को स्वयं जाड़े में नहीं जाना चाहिये।” लेकिन पहिले कह चुके हैं, कि मसऊद ने अपने बाप के केवल अवगुण लिये थे, वह वजीर की बात मानने के लिये तैयार नहीं हुआ। उस समय अन्तर्वेद में जो गड़बड़ी फैली हुई थी, उसके कारण भी वह इस समय को अनुकूल समझता था। तेरमिज़ के राज्यपाल वेगतगिन को हुकम मिला, कि वह वक्षु पर नावों का पुल तैयार कर दे। पुल तैयार करने वाली जगह नदी के बीच में अराल-पैगम्बर का द्वीप पड़कर वक्षु को दो भागों में विभक्त करता था। पुल तैयार करने में देर नहीं हुई। सोमवार १८ दिसम्बर १०३८ ई० को सुल्तान की सेना नदी पार हो गई। रविवार ३१ दिसम्बर को वह शगानियान पहुँची। यद्यपि शत्रु की ओर से कोई प्रतिरोध नहीं हुआ, लेकिन पहाड़ों में सर्दी और बरफ से मुकाबिला करना पड़ा। इतिहासकार बेहकी स्वयं इस अभियान में मसऊद के साथ था। उसने लिखा है—“कभी भी कोई इस तरह की तकलीफ में नहीं फसा होगा। मगल ९ जनवरी १०३९ को सेना शूनियान जोतके पर पहुँची। इतने में ही वजीर की चिट्ठी आई, कि सल्जूकी सरखा से गूजगानकी ओर बढ़ रहे हैं। भय होने लगा, कहीं वह तेरमिज़ पहुँच कर नावों के पुल को न तोड़ दे, फिर तो सुल्तान अपने देश से विच्छिन्न हो जायेगा। उधर बुरीतगिन ने भी शूनियान-जोत को रोक रक्खा था। सुल्तान लौटने के लिये मजबूर हुआ। शत्रु देश के एक एक चप्पे से परिचित था। उससे मुकाबिला करना आसान काम नहीं था। शुक्रवार १२ जनवरी को वापसी की यात्रा आरम्भ हुई। दो सप्ताह बाद २६ जनवरी को मसऊद तेरमिज़ पहुँचा। इस सारे समय बुरी तगिन मसऊद का पीछा कर रहा था। उसने बहुत सी रसद और ऊटो-घोड़ों को छीन लिया। इतने बड़े विजेता के अभियान को विफल करने से बुरीतगिन का महत्त्व बढ़ गया। गजनवी सरकार के पास १०३९ में जो पत्र मिले थे, उनसे पता लगा, कि तुर्कमानों (सल्जूकियों) की सहायता से बुरी तगिन अलीपुत्रद्वय के ऊपर कई विजय प्राप्त कर चुका था। अब प्रायः सारा अन्तर्वेद उसके हाथ में था।

खुरासान में मसऊद ने एक बड़ी सेना तैयार की थी, लेकिन उसके भी सेनापति सुल्तान की तरह ही बड़े तड़क-भड़क से अभियान करनेवाले थे। पास में रसद की एक बड़ी जमान

होने से वह भारी भरकम सेना जल्दी पग नहीं बढ़ा सकती थी। ऐसी सेना के मुकाबिले मरुभूमि को मा-बाप मानने वाले घुमन्तुओं की बहुत हलकी-बाहिनी थी, जो कि अपनी रसद को मुख्य सेनाग से १२० मील पीछे रख सकती थी। साथ ही उसे अन्तर्वेद से भी सहायता मिल रही थी।

हारून का भाई इस्माईल गजनवियों को अपना खानदानी दुश्मन समझता था, इसलिये तुर्कमानों को पीछे की ओर से कोई खतरा नहीं था। मसऊद ने यह रुख देखकर उससे नाराज हो १०३८ में ख्वारेज्म का अहद जन्द के शासक शाह मलिक के पास भेज दिया और कोशिश की, कि ख्वारेज्मी स्वेच्छा-पूर्वक अधीनता स्वीकार कर लें। इसी प्रयत्न में उसने १०४०-१०४१ तक ख्वारेज्म पर चढ़ाई नहीं की। फरवरी १०४१ ई० में आमीव के मैदान में दोनों पक्षों की तीन दिन तक लड़ाई होती रही, जिसमें ख्वारेज्मी (इस्माईल) पराजित हुआ। शायद वह और भी लड़ते, मगर इसी समय अफवाह उड़ी, कि गजनवी सेना दक्षिण में आ रही है। विश्वासघात के डर से भी इस्माईल २८ मार्च को राजधानी छोड़ सलजूकियों के पास भाग गया। अप्रैल में ख्वारेज्म की राजधानी पर शाह मलिक का अधिकार हो गया, और उसने मसऊद के नाम से खुतवा पढवाया, यद्यपि उस समय तक मसऊद मर चुका था।

शाहमलिक के अभियान से पहिले ही मई १०४० ई० में सलजूकियों और गजनवियों का निर्णयात्मक युद्ध ददानकान में हो चुका था। सलजूकियों ने खुरासान पर से गजनवियों का शासन सदा के लिये खतम कर दिया। सलजूकी सरदार तुगरल ने युद्धक्षेत्र में ही सिंहासन रखवा उस पर बैठकर अपने को खुरासान का अमीर घोषित किया। इसके बाद उसने तुर्किस्तान के दोनों खानों अलीतगिन-पुत्रो—बूरीतगिन और ऐनुदीला—के पास सूचनार्थ पत्र भेजे। गजनवी सेना भाग रही थी, जिसका पीछा उसने वक्षु तट तक किया। इसका उद्देश्य यह भी था, कि अन्तर्वेद में पहुँचकर वहाँ अपनी उपस्थिति से अपना अधिकार स्थापित करे। दूसरी ओर बेहकी के अनुसार मसऊद ने पत्र में अरसलन खान को लिखा था—मुझे दृढ़ विश्वास है, कि अरसलनखान सहायता देने से इन्कार नहीं करेगा, बल्कि यह भी आशा है, कि वह स्वयं सेना लेकर सलजूकियों के विरुद्ध अभियान करेगा। सलजूकियों के महाप्रहार के कारण मसऊद को अब बलख और गज्जना के भी बचा पाने की आशा नहीं थी। वजीर के समझाने पर भी मसऊद बूरीतगिन को बलख और तुखारिस्तान का “अहद” दे पजाव (भारत) चला गया, और गज्जनी में बच रहे अमीरों को सलजूकियों की सेवा में जाने की आज्ञा दी।

लेकिन मसऊद की शका गलत निकली।

४. मुहम्मद (१०४१) —

जनवरी १०४१ में मसऊद मर गया। उसके बाद कुछ दिनों तक उसके भाई मुहम्मद ने गद्दी सभाली। मुहम्मद गजनवी इसी को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था। एक बार पहिले भी वह असफल हो चुका था, अबकी बार भी कुछ ही महीनों तक वह गद्दी पर रहा। उसे हटाकर मसऊद का शक्तिशाली पुत्र मौद्द अप्रैल १०४१ ई० में गद्दी पर बैठा।

५. मौद्द (१०४१-१०४८ ई०) —

मौद्द ने गिरते हुए गजनवी वंश को सभालने की कोशिश की। बलख और तेरमिज भी उसके हाथ में रहे। अन्तर्वेद के शासक (शायद बूरीतगिन) ने अधीनता स्वीकार की।

बेहकी के लेखानुसार अबुल-हसन अहमद महमूद-पुत्र ने तेरमिज़ में पन्द्रह साल तक सल्जूकियों का मुकाबिला किया और अंत में निराश होकर दाउद सल्जूकी (तुगरल के भाई चाकर) के सामने आत्मसमर्पण किया। तेरमिज़ के हाथ से निकल जाने पर गज़नवियों के लिये अच्छे दिनों की आशा नहीं रह गई। इतिहासकार बेहकी उस समय तेरमिज़ का शासक था, १०४८ से पहिले वह गज़नी में अभिलेख-विभाग का प्रमुख था। १०४३ ई० में सल्जूकी ख्वारेज़्म ले चुके थे और मसऊद द्वारा नियुक्त वहां का शासक मलिकशाह ईरान की ओर भाग गया था। वहां कुछ समय तक वह बेहक जिले का शासक भी रहा, किन्तु अन्त में सल्जूकियों ने पकड़कर उसे मकरान में कैद कर दिया, जहां ही वह मर गया।

६. इब्राहीम (१०४८-५१) —

मसऊद के उत्तराधिकारी इब्राहीम ने सल्जूकियों की अजेय शक्ति के सामने सिर झुकाया और दाउद के साथ संधि करके १०५९ ई० में बलख को सल्जूकियों के हाथ में दे दिया।

स्रोत-ग्रन्थ :

- 1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
- 2 Heart of Asia (E D Ross)
- ३ सोव्यत्सक्या एतनोग्राफिया १९४६ (२)
- ४ सियासतनामा (निजाममुल्मुल्क, लाहौर)

अध्याय ४

सल्जूकियों (१०३६-११५७)

सामानियों के राज्य को कराखानियों और गजनवियों ने आपस में बांट लिया था। गजनवियों की शक्ति को ध्वस्त करने में सबसे अधिक हाथ तुर्कमानों का था, जिनके नेता तुगरल खान सल्जूकी ने १०३६ ई० में ममऊद को भारी हार देकर युद्ध-क्षेत्र में ही सिंहासना-रोहण किया था।

§१. राजाबलि

सल्जूकियों के समकालीन राजवंशों की तुलनात्मक वंशावलि निम्न प्रकार थी—

सल्जूकी	गजनवी	कराखानी	ख्वारेज्मी
	महमूद	इलिकनख	मामून II
	९९७-१०३०	९९३-१०१२	-१०१७
१ तुगरल	ममऊद	अरमलन II	हारून
१०३६-६३	१०३०-४१	१०३३-५७	१०३४
	मोहूद		
	१०४१-५६		
२ अल्प अरसलन	इब्राहीम	तुगरल युसूफ	इस्माईल
१०६३-७३	१०५९	१०५९-७४	१०४१
३ मलिक शाह I		बुगरा हारून	
१०७३-९२		१०७४-११०२	
४ महमूद I			
१०९२-९४			
५ बरकियारुक		कादिर जिन्नैल	अनुशतगिन
१०९४-११०४		११०३	-१०९७
६ मलिकशाह II			
११०४			
७ मुहम्मद II			कुतुबुद्दीन
११०४-१११७			१०९७-११२७
८ महमूद II			
१११७-			
९ सिजर			अल्मिज
१११७-५७			११२७-५६

§२ उद्भव*

सल्जूकी कह आये हैं, कि सिर-दरिया के उत्तर के घुमत्तू थे । इनके कबीले का नाम तुर्कमान था, जो कि आज भी तुर्कमानिस्तान सोवियत प्रजातंत्र के निवासियों के रूप में मौजूद है । तुर्कमान तुर्कों की गूज (आगूज) शाखा के वंशज थे अपने घुमन्तू जीवन के सिलसिले में सिर-दरिया के उत्तरी तट पर पहुँचे थे । यह हम बतला चुके हैं, कि किस तरह यूची-शक हूणों के प्रहार के कारण ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी में कान्धू से भागने के लिये मजबूर हुए, और उनका पीछा करते हुए हूण और उनके वंशज आवार, तुर्क, उइगुर, आगूज, किपचक सारे उत्तरापथ में फैल गये । अरब, सामानी, सफ़ारी और ताहिरी को छोड़कर, मध्यएशिया के सारे इस्लामिक शासक तुर्क थे । इन भिन्न-भिन्न तुर्क जातियों की भाषा की समानता को देखने पर उज्बेक, तुर्कमान, किरगिज और कजाक एक ही तुर्क-जाति के मालूम होते हैं । इनके हम तीन भाग कर सकते हैं —

- (१) उत्तरी तुर्क—सिबेरिया के याकूत आदि ।
- (२) पूर्वी तुर्क—सिड, क्याड, के तुर्क, उज्बेक, कज़ाक, कूफा-तातार ।
- (३) पश्चिमी तुर्क—उस्मान अली (आधुनिक तुर्की) आजुरबायजानी, और तुर्कमान ।

तुर्कों का मूल देश अल्ताई के आसपास था, जहाँ से प्राचीन समय में वह बड़ी संख्या में चीन और मध्यएशिया की ओर बढ़े, यह हम बतला आये हैं । चीन की महादीवार ने उनके पूर्वाभिमुख बढाव को रोक दिया, किन्तु तुर्किस्तान की ओर बढ़ने में उन्हें सफलता मिली । वहाँ से उन्होंने शको और मोन्दियो के वंशजों को ढकेल या हजम कर घुमन्तू जीवन बिताना शुरू किया । इन उत्तरी घुमन्तुओं की बहुत सी लहरे आगे मध्यएशिया की ओर आती रही । इन्हीं में सल्जूकी तुर्कों और चिगीसी मंगोलों की लहरे भी थी ।

(२) सल्जूक नाम —सल्जूक इनके सरदार का नाम था, जिसने पहिले पहल इस्लाम ग्रहण किया था । इसी कारण तुर्कमान कबीले का नाम सल्जूकी पडा, किन्तु इसका मुख्य नाम तुर्कमान ही अधिक प्रसिद्ध है । पश्चिमी तुर्कों में गूजो और तुर्कमानो का ही अंश ज्यादा है । हम देख चुके हैं बाज वक्त एक विशाल कबीले का प्राचीन नाम एक छोटे कबीले के लिये रह जाता है, जब कि बाकी कबीले वाले दूसरा नाम ग्रहण कर लेते हैं । तुर्कमान भी गूजो के अन्तर्गत ही थे, किन्तु उन्हें गूजो से अलग दिखलाया गया है । इन्हीं पश्चिमी तुर्कों ने वक्षु-भूमि, अरमेनिया और क्षुद्र-एशिया तक को अपने प्रभाव में ले लिया । उस्मान अली या उस्मानी तुर्क सल्जूकियों की ही एक शाखा थी, जिसने विजन्तीन राज्य को खत्म कर १५ वीं सदी में कस्तुन्तुनिया को अपनी राजधानी बनाया और आगे पूर्वी यूरोप पर अपना राज्य विस्तार किया ।

*History of Bokhara (A Vambery)

¹Turkisten

पूर्वी तुर्कों की एक शाखा का नाम कावक था जिसी से सल्जूको (तुर्कमानों) का सबध था। कावक ताशकन्द से उत्तर की भूमि से ९८५ ई० (३९५ हि०) में अन्तर्वेद में दाखिल हो समर-कन्द और बुखारा के पास-पड़ोस में घुमक्कड़ी जीवन व्यतीत करने लगे। चरागाहों की कमी के कारण उन्हें सिर-दरिया के दक्षिण आने के लिये मजबूर होना पड़ा था। सामानियों के उत्तराधिकारी महमूद गजनवी का वर्ताव उनके साथ अच्छा था। कभी कभी झगडा भी हुआ, किन्तु तो भी उसी ने इन्हें वक्षु पार (खुरासान के) निस्सा और अबीवर्द में रहने की इजाजत दे दी। उस समय उनके सरदार का नाम मिकार्ईल था। गज्जनवियों और कराखानियों का जिस समय सवर्ण चल रहा था, उसी समय गूजो में भी आपसी वैमनस्य था, जिसके कारण एक शाखा ९५६ ई० (३४५ हि०) में जाकर जन्द में बस गई। इनका सरदार सेल्जूक किपचको के खान पीगू के दरबार को छोड़ने के लिये मजबूर हुआ। यही पहिले पहल मुसलमान हुआ। इसीलिये उसके कबीले का नाम सल्जूक पड़ा।

सेल्जूक के एक पुत्र मिकार्ईल के लडके तुगरल और चाकिर दाउद थे और दूसरे लडके का पुत्र यूसुफ था। यूसुफ को अन्तर्वेद के शासक अलीतगिन ने स्वयं पहिले ईनच-पैगू की उपाधि दे अपने सारे तुर्कों का सेनापति बनाया, किंतु पीछे नाराज हो उसे मरवा डाला। १०३७ में यूसुफ के चचेरे भाई तुगरल और दाउद ने विद्रोह करके अलीतगिन के सेनापति अल्पकारा और उसके हजार आदमियों को मार डाला। अलीतगिन के प्रहार से उन्हें भारी हानि उठानी पड़ी, यह बात हम बतला आये हैं। खुरासान में महमूद ने इन्हें बसाया और हारून ख्वारेज्मशाह ने अपनी ओर मिलाकर तुर्कमानों की शक्ति को बढ़ने दिया। अलीतगिन के दोनों पुत्र उनका कुछ बिगाड नहीं सके। अल्तूनताश ख्वारेज्म शाह से इनकी घनिष्टता बढी और वह अक्सर ख्वारेज्म में जाडा बिताने लगे। हारून ने उन्हें शोराखान ओर माशरेवात के पासका इलाका दे दिया था, यह भी हम बतला आये हैं। सल्जूकियों के अपने भाई-बन्द जन्द के शासक शाहमलिक ने अक्टूबर १०३० ई० में तुर्कमानों पर आक्रमण करके सात-आठ हजार तुर्कमानों को मार डाला, बाकी बरफ बनी सिर-दरिया को पार कर भाग गये। हारून ख्वारेज्मशाह के बीच में पडने पर भी शाह मलिक और सल्जूकियों में समझौता नहीं हो सका, यह बात भी हम बतला आये हैं। तुर्कमानों को अपनी ओर खींचने के लिये ख्वारेज्मशाह, गजनवी और कराखानी, (बुरीतगिन) सभी कोशिश करते रहे, इसी अवस्था से लाभ उठाकर वह अपनी शक्ति बढ़ाने में सफल हुए।

§३. सुल्तान

१. तुगरल मिकार्ईल-पुत्र' (१०३६-१०६३ ई०)

बडा भाई तुगरल तुर्कमानोंका सरदार था, लेकिन सैनिक योग्यतामें उसका छोटा भाई दाउद (चाकर) उससे अधिक था। १०३६ ई० में मेर्व के पासके निर्णायक युद्धमें मसऊदको उसीने हराकर गजनवी शक्तिको खतम किया था—गज्जनवियोंके साथ अन्तिम सवर्ण १०५९ में हुआ, जिसके साथ वह वंश अपने सारे महत्वको खो बैठा। मसऊदको खुरासानसे भगानेके बाद तुगरलने सारे ईरानपर अधिकार जमानेके लिये दैलिमी (बुवायही) वंशको खतम करना आवश्यक समझा। बुवाहियोंकी समाप्तिके बाद तुगरलके राज्यकी सीमा रोमन-राज्यकी सीमा

पर पहुच गई और कन्सन्तिनोपोलके इपैरातर कसतान्तिन मोनोमकको भी मजबूर तुगरलकी मैत्री प्राप्त करनी पड़ी। तुगरलकी अजेय सेना तुर्कमान घुमन्तुओकी थी, जो कि अभियानोमे अपने तबूओ और परिवारके साथ जाया करते थे। १०४८ ई० (४४० हि०) के अन्त तक आजुरवाइजान, मेसोपोतामिया और क्षुद्र-एसियापर सल्जूकियोका शासन स्थापित हो गया। ४०० साल पहिले मरुभूमिके घुमन्तू अरब अपनी विजययात्रा करते सिर-दरियाके किनारे तक पहुचें थे। इसके बाद उत्तरी तुर्क घुमन्तुओने इस्लाम स्वीकार किया। अब उन्होंने उलटी विजय-यात्रा आरम्भ की थी और तुगरल जैसे विजेताके रूपमे वह अरबकी मरुभूमि तक पहुच गये। अरबोके विजय-प्रवाहका रूप काफिर देशोके विरुद्ध धार्मिक युद्ध (जहाद) था, जिसके साथ वह रास्तेमे चुन ली गयी सस्कृतियोंके प्रभाव तथा विद्याको भी लेते आये थे। लेकिन, सल्जूकियोकी विजय-यात्रा किसी सस्कृतिको साथ लिये नहीं आयी थी। वह इस्लाम धर्मके माननेवाले थे, किन्तु थे अभी प्रायः घुमन्तू-बर्बर अवस्थामे। अपनी विजय-यात्राके आरम्भ करनेसे पहिले ही उनके पास लिखित भाषा थी, और शायद कोई साहित्य भी। तुगरलके पूर्वज ईसाई या मानीके धर्मके माननेवाले थे। इसका अर्थ है, घुमन्तू होते हुए भी तुर्कमानोके सरदारोमे शिक्षा और सस्कृतिका नितान्त अभाव नहीं था। किन्तु जहा तक साधारण तुर्कमान जनताका सबध था, वह अवश्य मरुभूमिके पुत्र थे। अरबोने राज्य लुप्त हो जानेपर भी अपने आध्यात्मिक तथा सास्कृतिक प्रभावको विजित देशोपर स्थायी तौरसे छोडा। पर तुर्क ऐसा कोई उद्देश्य अपने साथ लेकर नहीं आये थे, हा उन्होंने अपने खूनका प्रभाव अवश्य छोडा। जहा अरबी-प्रभावके कारण बलख, बुखारा विद्याके केन्द्र बन गये, वहाँ तुर्कमानोके कारण आज उज़बेकिस्तान, तुर्कमानिस्तान, आजुरबायजान और तुर्की तकका भाग तुर्की-भाषाभाषी हो गया। जहा तक आजुरवाइजान और तुर्कीका सबध है, तुर्क-भिन्न रक्तकी अधिकताके कारण वहाके निवासियोके चेहरे-मोहरेपर वह मगोलयित आकृति अधिक नहीं आ सकी।

१०५५ ई० (४४९ हि०) मे तुगरल खलीफाकी राजधानी बगदादमे दाखिल हुआ और कायम (१०३१-१०७५) को अब्बासी तख्त पाने और खलीफा बननेमे सहायता की। बाहरसे तुगरलने खलीफाके प्रति भारी सम्मान प्रदर्शित किया, किन्तु १०६३ ई० (४५५ हि०) में उसने खलीफाको लडकी देनेके लिये मजबूर किया। खलीफाकी लडकीसे तुगरल यबह नहीं कर सका था, कि रे (तेहरान) मे ७० वर्षकी उम्रमे उसकी मृत्यु हो गई। भाई चाकर (दाऊद) पहिले ही मर चुका था, इसलिये तुगरलका उत्तराधिकारी दाऊद-पुत्र अल्प-अरसलन हुआ।

इतिहासकार इदरीसी तुगरल, अल्पअरसलन और मलिकशाह जैसे सल्जूकी शासकोकी योग्यताको स्वीकार करता है, लेकिन वह उनके सरदारो और साधारण तुर्कमान कबीलेमे भेद करते हुए लिखता है—“उनके राजा लडाकू, समझदार, दृढमकल्प, न्यायशील, और दूसरे सुगुणोंसे सयुक्त है, किन्तु उनका जनसाधारण क्रूर, जगली, रूखे और मूर्ख है।” प्रथम सल्जूकी और कराखानी शासक, गजनवी महमूद-मसऊदसे भी अच्छे मुसलमान थे। कराखानी जन अपने शासकोके लिये भी इस्लामिक सदाचारकी पाबन्दी आवश्यक मानते थे, उनके खानतक भी शराब नहीं पीते थे। इन तुर्क शासको (सल्जूकियो और कराखानियो)मे आदर्श न्यायशील राजा बनने की इच्छा भी थी, किन्तु महमूद तो सुल्तानको सर्व-नियम-विमुक्त मानता था।

“घुमन्तू तुर्कमानोके नेता अपने जनसाधारण सैनिक से मुश्किलसे कोई भेद रखते थे, वह

उनके हरेक काममें शरीक होते थे। ऐसे राजा कैसे महमूद और ममऊदकी तरह यकायक स्वेच्छाचारी शासक बन सकते थे? हा, सल्जूकी सुल्तानोंने अपने सरदारोंका गणतंत्री प्रथाको हटा दिया। पहिले साहिब-खबर (राजचर) का एक पद दरबारमें रहता था, जिसे सल्जूकियों ने उठा दिया। घुमन्तुओंके लिये खुफियागिरी करना एक घृणास्पद बात थी। साहिब-खबरकी नियुक्ति न करनेके बारेमें जब पूछा गया, तो द्वितीय सल्जूकी सुल्तान अल्प अरमलनने कहा—“यदि मैं उन लोगोंके ऊपर साहिब-खबर नियुक्त करूँ, जोकि मेरे दिली दोस्त हैं, मुझमें घनिष्टता रखते हैं, तो वह साहिब-खबरकी कोई परवाह नहीं करेंगे और न उसे रिश्तत देंगे। क्योंकि उनको अपनी भक्ति, मित्रता और मेरे साथ अपनी घनिष्टतापर पूरा विश्वास है। दूसरी ओर मेरे विरोधी और शत्रु अवश्य साहिब-खबरके साथ मित्रता करेंगे और उसे पैसा देंगे। यह स्पष्ट है कि साहिब-खबर मेरे मित्रोंके सबधमें बुरी खबर और मेरे शत्रुओंके सबधमें अच्छी खबर मेरे पास पहुँचाता रहेगा। अच्छे और बुरे शब्द तीर जैसे होते हैं। अगर बहुत से तीर छोड़े जाय, तो कम से कम एक लक्ष्यपर लग ही जाता है। इसके कारण मित्रोंके सबधमें मेरी सहानुभूति कम होती जायगी और शत्रुओंके लिये वह बढ़ती जायेगी। थोड़े समयके भीतर ही शत्रु मित्रोंसे भी अधिक मेरे नजदीक हो अन्तमें उनका स्थान लेंगे। इसके कारण मेरी जो हानि होगी, उसका कोई अदाजा नहीं लगा सकेगा।” इससे उलटे सल्जूकियोंका प्रसिद्ध वजीर निजामुल्मुल्क लिखता है “साहिब-खबरका पद राज्यकी व्यवस्था (कवायद) का एक स्तम्भ है।”

इसमें मालूम होगा, कि सल्जूकी शक्ति पाकर अभी बिगड़े नहीं थे। उन्होंने अपने घुमन्तु कबीलोंकी सादगी आदि बहुतसे गुणोंको कायम रखा था। लेकिन कब तक ऐसा कर सकते थे, जब कि सभी तरहके स्वेच्छाचारों और दुर्गुणोंसे भरे सामन्ती समाजके वह शामक बन चुके थे।

खुरासान-विजयके बाद उसके कुछ शहरोंके खुतबोंमें तुगरलका नाम और कुछम दाऊदका नाम पढ़ा जाता था। घुमन्तुओंकी स्वच्छदताके कारण कराखानियोंकी भाँति सल्जूकियोंमें भी राज-परिवारिक झगड़ें बहुत रहते थे। सारा परिवार राज्यका स्वामी माना जाता दमलिये सल्जूकी राजवंशियोंको अलग अलग नगरोंका शासक बनाकर भेजना आवश्यक था। ये नगर उनकी सैनिक जागीरें थी। तुर्कोंकी विजयमें पहिले सैनिक जागीरोंका उतना विस्तार नहीं था, जितना की इस समय हुआ। यह सैनिक जागीरदार अपने अर्धदासोंसे निश्चित लगान लेने का ही अधिकार नहीं रखते थे, बल्कि उनके शरीर, मपत्ति, स्त्री-वच्चोंपर भी हक रखते थे। इस प्रथासे सबसे अधिक हानि प्राचीन कालसे चले आये देहकाना (ग्रामपतियाँ) विशेषकर खुरासानके देहकानोंकी हुई। मंगोलोंके विजय तक खुरासानमें अभी देहकान मौजूद थे, जो परिवार-सहित अपनी गडियोंमें रहते थे। उन्हींकी देखा-देखी सैनिक जागीरदारी पानेवाले तुर्क भी देहकान कहे जाते थे। १०३५ ई० में देहिस्तान, नसा और फाराबके शहर तुगरल, दाऊद और इन दोनोंके चचा पैगू (भगवान्) की जागीरें थी। इन तीनोंको देहकानकी पदवी थी, जोकि कुछ कुछ बली (गवर्नर) के बराबर मानी जाती थी। देहकानोंके चिह्न थे—दो नौकदार गिरेवाली टोपी, एक ध्वजा, और ईरानी ढंगसे सिला चोगा, तुर्की प्रथाके अनुसार थोड़ा, चारजामा, एक सोने का कमरबन्द तथा बिना कटे कपड़ेके तीस टुकड़े। देहकानोंकी प्रथाका ह्रास अन्तर्वेदमें ऋतुओंके मूल्य गिरनेके कारण भी हुआ। इतिहासकार नरसाखी लिखता है—“मेरे समयमें दानके तीरपर भी कोई भूमि नहीं लेना चाहता था, ऐसी भूमिको भी नहीं, जिसका दाम सामानियोंके समय चार

हजार दिरहम प्रति जिफ्त था। यदि कोई खरीदार मिल भी जाता, तो भूमि बिना जुती ही रह जाती। इसका कारण था शासकोकी क्रूरता और अपनी प्रजाके साथ उनका निष्ठुर व्यवहार।”

सल्जूकी अन्त तक पानीमे पद्मपत्रकी तरह तत्कालीन समाजसे निर्लेप रहे। इसका पता इसी से मालूम होगा, कि अन्तिम और महाप्रतापी सल्जूकी सुल्तान सज्जर अकबरकी तरह लिख-पढ़ नहीं सकता था। वह सभी तरहकी सस्कृतिसे अपरिचित रहे। राजकाजका सारा काम उनका वजीर देखता था। हा, तलवारके महत्वको वह मानते थे, इसलिये उसके धनी थे। ये तुर्क सभ्य देशमे आकर शासक बने, तो भी न वह अपने घुमन्तू जीवनको छोड़नेके लिये तैयार थे और न सभ्य जगत के साधारण कानूनको माननेके लिये ही। वह इसे कायरताका चिह्न मानते थे। उनके व्यवहार और वर्ग-विभाजन सदा अशान्तिके कारण रहे, तो भी अपने कबीलेवालोंके विरुद्ध कोई कठोर कदम नहीं उठा सकते थे, क्योंकि राजवशके साथके उनके सबध और सेवाओको भुलाया नहीं जा सकता था। नियम था, हजार तुर्कमान तरुणोंकी एक बाहिनी जमा की जाय, फिर उन्हें “दरबारी गुलाम” बनाकर शिक्षा दी जाय, जिसमे कि वह साधारण प्रजासे मेल-जोल पैदा कर उनके साथ हिल-मिल जाये, गुलामकी तरह राज्य सेवा करे तथा राज्यवशके अनन्य भक्त रहे। लेकिन सब कुछ करने पर भी महभूमिके स्वच्छन्द पुत्रोंको गुलाममे परिवर्तित करना आसान नहीं था। सल्जूकी प्रजामे तुर्कमान घुमन्तुओ और साधारण अतुर्कमान प्रजाके स्वार्थ भी परस्पर-विरोधी थे। घुमन्तू शान्तिके समय अपनी जीविका पशुपालनसे करते, एक जगहसे दूसरी जगह घूमा करते थे, जब कि साधारण जनता कृषि और शिल्प-व्यवसायसे जीविका करती ग्रामों और नगरोंमे रहा करती थी। हरेक घुमन्तू अपनेको सुल्तानका सबधी मानता—इसमे शक नहीं सुल्तानका सिंहासन इन्हींके सहारे टिका हुआ था—इसलिये साधारण जनताको नीच दृष्टिसे देखना उनके लिये स्वाभाविक था। इन घुमन्तुओमे स्त्रियोका प्रभाव अधिक था, जिसे हम आगे तुर्कान खातून के रूपमे चरम सीमापर पहुँचा देखेंगे।

२ अल्प अरसलन (१०६३-७३ ई०)

चचाके मरनेके बाद अल्प अरसलन^१ वक्षुसे फुरात और कास्पियन तटसे फारसकी खाडी तक फैले विशाल राज्यका स्वामी बना। इसने पुराने वजीरको हटाकर इस्लामके कौटिल्य हसन अली-पुत्र निजामुल्मुल्कको वजीर बनाया। निजामुल्मुल्कका जन्म १०१८ (४०८ हि०) मे खुरासानके तूस नगरमे हुआ। नैशापोरमे पढ़नेके समय यह महाकवि उमर खय्याम तथा इस्माइली गुरु हसन-सब्बाहका सहपाठी था। पहिले यह गजनवियोकी सेवामे था, फिर बलखमे सल्जूकी

^१निजामुल्मुल्कने “सियासतनामा” (अध्याय ४४ पृष्ठ १४५) मे अल्प अरसलन के बारे मे लिखा है—“अगर चार लाख आदमियोको बेतन-भोजन दिया जाय, तो निश्चय ही खुरासान मावराउन्नहर (अन्तर्वेद), काशगर, बलाशागून, ख्वारेज्म, नीमरोज, इराक, पारस, शशाम, आजुरवायजान, अरमन, अन्ताकिया, येरुसलम (वैतुल्मुकद्दस) जो कोई (देश) स्वामीके पास है—उसमे चार लाख की जगह सात लाख सवार हो। (फिर वह) देश और सिन्ध-हिन्द, तुर्किस्तान, चीन और माचीन (महाचीन) तक का स्वामी हो जाये। हब्शा (युथोमिया) बर्बर, रोम, मिस्र और पश्चिम उसका आज्ञाकारी होये।”

वलीका वजीर बन ३० साल तक सल्जूकी-साम्राज्यका वजीर-आज़म (महामंत्री) रहा। वह न्यायप्रिय, विचार-सहिष्णु और साहित्यानुरागी था। अल्प अरसलनके समय १०५० ई० में तुर्कोंने पहिले-पहल रोमन-राज्यपर आक्रमण किया, जिसमें रोमन-अधीन अरमेनियाका एक भाग उजाड़ हो गया। उन्होंने वहाँ ईसाइयोंको मार डाला। इस यात्रासे लीटनेके बाद अल्प-अरसलनका विचार बक्षु पार विजय-यात्रा करनेका हुआ। १०७२ ई० में वह दो लाख सेना ले इस विजय-यात्रापर निकला। उसने बेरजेमके दुर्गपतिको किसी कमूरमें मृत्यु-दण्ड दिया था, जिसने मौका पाकर अल्प अरसलनको मार डाला। इस मौकेसे फायदा उठाकर कराखानी शासक शम्शुल्मुल्क (१०६९-१०८० ई०) ने तेरमिज़से चलकर बलखको ले लिया। वहाँका वली अरसलन-पुत्र अयाज़ पहिले ही भाग गया था।

निजामुल्मुल्क, सुल्तान अरसलन और अपने बारेमें एक जगह लिखता है^१ "सुल्तान शहीद अल्प अरसलन पवित्रात्माके जमानेमें सेवकके लिये एक बात पैदा हुई। सारे जहानमें दो मजहब (संप्रदाय) हैं, एक अच्छा अबूहनीफाका दूसरा शाफई मजहब है। सुल्तान अपने संप्रदायमें पक्के थे। उनकी जीभसे अक्सर निकल जाया करता था—“आह, अगर मेरा वजीर शाफई मजहबका न होता”। वह हनफी था और शाफई मजहबको दोष देता, इसलिये उससे मुझे हमेशा शका रहती, मैं डरता रहता। संयोग ऐसा हुआ कि सुल्तान-शहीद (अल्प अरसलन) ने मावरा उन्नहर (अन्तर्वेद) जानेका इरादा किया, क्योंकि शम्शुल्मुल्क (कराखानी) आज्ञाकारी नहीं था, और न (आज्ञानुवर्तन) करना चाहता था। (सुल्तानने) सेनाको बुलाया और नख-पुत्र शम्शुल्मुल्क इब्राहीमके पास दूत भेजा। मैंने दानिशमद अक्षरको पहिले ही सुल्तानके पास भेज दिया, जिसमें जो कुछ वहाँ हो, उसकी मुझको खबर दे। सुल्तानका दूत आया। उसने चिट्ठी और समाचार दिया। खानने वहाँसे अपने रमूल (दूत) को सुल्तानके रमूलके साथ यहाँ भेजा। जैसा कि स्वभाव है, दूत समय-समय पर वजीरोंके सामने जा और जो अभिप्राय या निवेदन करना होता, उसे कह देते, जिसमें कि वजीर उसे सुल्तानसे कहे। संयोगसे सेवक साथियों के साथ अपने बैठकखानेमें बैठा शतरज खेल रहा था। शतरज खेलनेवालोंमें में एकने कहा कि समरकन्दके खानका दूत आया है। मैंने कहा—‘तौ, ले आओ।’ उसने सुल्तान और वजीरके सन्धकी कुछ बातोंका पता लगा।

३. मलिकशाह अरसलन पुत्र (१०७३-१०९२ ई०)

गद्दी पानेमें अरसलनके पुत्र मलिक शाहका हलका सा विरोध हुआ। गद्दी पाते ही उसे कराखानियोंसे मुकाबिला करना पड़ा, क्योंकि उन्होंने अल्प अरसलन के मरते ही बलखको लूटा और बरबाद किया था। १०७३ ई० में ही मलिकशाहने समरकन्दके शासक अल्प तगिन पर आक्रमण किया। अल्प तगिन की मृत्युकी खबर सुनकर उसने तेरमिज़को घेर लिया। अल्पतगिनने मजबूर होकर शांति-भिक्षा मांगी। तबसे १०७९ (४८२ हि०) तक मलिकशाहको कराखानियोंसे झगडा करनेकी आवश्यकता नहीं पड़ी। उसके बाद प्रजाके आर्तनाद सुनने के बहाने मलिकशाहने बक्षु पार हो बुखारा

^१ वही पृ० ८८०

और समरकन्दको ले लिया और कराखानी शासक अहमद खिज़िर-पुत्रको बन्दी बनाया । समरकन्दसे आगे बढ़ते हुए उसने काशगरपर आक्रमण किया । वहाके खानने भी अपने सिक्के और खुतबेमें सल्जूकी-सुल्तानको अपना अधिराज मान कर प्राण बचाया । मलिकशाह अब चीनके सीमान्तसे कान्सनान्तिनोपोल के द्वार तकका स्वामी था । इसके समय वाणिज्य-व्यापारमें बहुत भारी वृद्धि हुई । अपने शासनके पाच साल इसे युद्धमें बिताने पड़े, । उसके बादके पन्द्रह सालके अपने शान्तिपूर्ण शासनमें उसका ध्यान राजकी सांस्कृतिक, साहित्यिक और आर्थिक समृद्धि बढ़ानेमें रहा । इस्लामके इतिहासमें मलिकशाह का काल अत्यंत वैभवपूर्ण माना जाता है । इसमें जहां मलिकशाहकी सैनिक चातुरी ने काम किया था, वहां निजामुल्मुल्कके शासन का भी कम हाथ नहीं था । निजामुल्मुल्कको मलिकशाह बहुत मानता था । हसन सब्बाहपुत्रने अपने धोखाधडीके हथकण्डे द्वारा एक जबर्दस्त इस्माईली सप्रदाय कायम कर लिया और उसके गुप्तचर अपने गुश्की आज्ञापर हत्या करनेमें इतने सफल होते रहे कि हसन के नामपर ही हत्यारे को यूरोपीय भाषाओंमें असासिन कहा जाने लगा । निजामुल्मुल्क अपने पूर्व सहपाठीको सीमा अतिक्रमण करते देख चुप नहीं रह सकता था । इसपर हसनके भेजे हत्यारेने १०९२ (४८५ हि०) में निजामुल्मुल्कको मार डाला । मलिकशाह भी उसी साल कुछ महीनों बाद ३८ सालकी उमरमें मर गया ।

गजाली (१०५९-११११ ई०)

इस कालमें जहां निजामुल्मुल्क जैसे महान् राजनीतिज्ञ उमर खैय्याम जैसा अमर कवि पैदा हुये, वहां गजाली जैसे दार्शनिकको पैदा करनेका भी सौभाग्य इसी कालको है । गजालीका पूरा नाम मुहम्मद मुहम्मद-पुत्र मुहम्मद-पुत्र मुहम्मद-पुत्र गजाली था, अर्थात् उसके बाप, दादा और परदादाका नाम भी मुहम्मद ही था । सूत कातना (कोरी या ततवाका काम) इसका खानदानी पेशा था, इसलिये मुहम्मदने अपने नामके साथ गजाली लगाया । गजाली का जन्म १०५९ ई० (४५० हि०) में ईरानके तूस नगरके ताहिरान मुहल्लेमें हुआ था । इससे पहिले ही महान् कवि फिरदौसीको तूस पैदा कर चुका था । गजालीके परिवारमें विद्याकी पूछ-ताछ नहीं थी । गजालीका बाप स्वयं अनपढ़ था, लेकिन गजनवी और सल्जूकी शासनमें विद्याके प्रति लोगोंने जो प्रेम बढ़ चला था, उसके कारण बाप ने भी अपने लड़केको पढ़ानेका निश्चय किया । उसे क्या मालूम था, उसका लड़का सनातनी इस्लामका सबसे बड़ा दार्शनिक होगा । गजालीके शिक्षक नेशापोरके वेहकिया विद्यापीठके अध्यापक अब्रुलमलिक हरमैन थे । हरमैनकी विद्याकी इतनी ख्याति थी, कि सल्जूकियोंके महामंत्री निजामुल्मुल्कने राजधानी नेशापोरमें अपने नामसे मदरसा-निजामिया बनवा कर वहां उन्हें प्रबानाध्यापक नियुक्त किया था । नेशापोरमें विद्या समाप्त कर गजाली जब ४८४ हि० (१०९१ ई०) में बगदाद पहुंचे, तो सारे शहरने उनका शाहाना स्वागत किया । १०९२ (४८५ हि०) में मलिकशाह सल्जूकीके मर जानेपर उसकी प्रभावशालिनी रानी तुर्कानखातूनने अमीरो और दरबारियोंको इस बातपर राजी कर लिया, कि गद्दी उसके चार सालके बेटे महमूद (१०९२-१०९४ ई०) को मिले । साथ ही बगदादी खलीफाके सामने यह भी माग पेश की, कि खुतबा मेरे लड़केके नामसे पढ़ा जाय । खलीफाने पहिली बात मान ली, लेकिन दूसरी बातको मानना मुश्किल समझ

उससे समझौता करनेके लिये गजालीको तुर्कान खातून की दरबारमें भेजा। गजाली अपने काममें सफल हुए।

गजालीने यद्यपि इस्लामकी शरीयतपर दृढ़ रहनेका मकल्प किया था, किन्तु उनके गभीर अध्ययनने पुराने पथपर दृढ़ नहीं रहने दिया। उन्होंने अपने वास्तविक विचारोंकी सूफी वेदान्तके परदेके नीचे दबानेकी करीब-करीब उमी तरह कोशिश की, जिस तरह उनमें दो शताब्दी पहिले शकराचार्य कर चुके थे।*

घुमन्तुआमे गुलाम खरीद कर उसे शिक्षा-दीक्षा देकर योग्य पदोंके लिये तैयार करनेकी प्रथा थी, यह हम पहिले कह चुके हैं। सल्जूकियोंमें भी ऐसे गुलामोंको बड़े बड़े पदों पर नियुक्त किया जाता था। मलिक शाहने अपने तश्तदार (थालधारक) बल्कतगिनको ख्वारेज्मका राज्यपाल बनाया था। बल्कतगिनने नूश तगिनको गुलाम खरीदा था। दरबारमें बल्कतगिनका बहुत प्रभाव था। उसके गुलाम नूश तगिनकी भी बहुत चलती थी। १०७७ (४७० हि०) में बल्कतगिनके मरने पर नूशतगिन ख्वारेज्मका गवर्नर नियुक्त हुआ। यही उस प्रसिद्ध ख्वारेज्मशाही राज्यवशका संस्थापक हुआ, जिसने चिंगिस के आक्रमणके समय मध्यएशियामें भारी शक्ति प्राप्त कर ली थी। नूशतगिन अपने स्वामीसे भी अधिक शक्तिशाली हो गया, लेकिन वह जीवन भर सल्जूकियोंका भक्त बना रहा।

४ महमूद I मलिक-पुत्र (१०९२-१०९४ ई०)

अरमलनके चार पुत्रोंमें महमूद सबसे छोटा और बापके मरनेके समय केवल चार सालका था। लेकिन उसकी मां तुर्कान खातून बहुत जबरदस्त स्त्री थी, जिसके कारण और भाइयोंको वंचित कर इस शिशुको सल्जूकी ताज मिला और खलीफा मुक्तदिर (१०७५-९४) ने भी मजबूर होकर खुनवामे उसके नामकी रखना स्वीकार किया। लेकिन ज्येष्ठ पुत्र बरकियारुक इस्पहानमें तना रहा। उसके विरुद्ध खातून स्वयं सेना लेकर गई। बरकियारुक लड़नेमें गफलताकी आशा न देख अपने समर्थक मुवैयादुद्दीला (निजामुल्मुल्क-पुत्र) के पास रे (तेहरान) चला गया। अन्तमें मुवैयाद और उसके परिवारकी सहायतामें उसका पल्ला भारी हो गया। तुर्कान खातूनने इस्पहानको हाथसे न जाने देनेके लिये बरकियारुकको बहुत मा खजाना देनेको मजबूर किया, किन्तु खातूनका दरबारी दबदबा बहुत समय तक नहीं चला और पहिले खातून फिर उसके शिशु पुत्रके मरनेके साथ बरकियारुकको मौका मिला। इसी समय खलीफा मुक्तदिर भी मर गया।

५. बरकियारुक १०९४-११०४ ई०

बरकियारुक अभी सोलह सालका ही था। उसने महान् वजीर निजामुल्मुल्कके पुत्र मुवैयादुद्दीलाकी सहायतासे गद्दी पानेमें सफलता प्राप्त की। खलीफा मुस्तजहिर (१०९४-१११८ ई०) की स्वीकृति भी मिल गयी। बरकियारुक बगदाद गया, नये खलीफाने सुल्तानका बड़ा स्वागत किया। बरकियारुकका ११ सालका शासन अधिकतर लड़ाई झगड़ों में बीता।

*विशेष के लिये देखो "दर्शनदिग्दर्शन" पृष्ठ १५०-८७

१०९७ ई० में अन्तर्वेदने बरकियारुककी अधीनता स्वीकार की। उसके नियुक्त सुलेमान तगिन (. .—११०२), महमूद तगिन और हारून तगिन एकके बाद एक अन्तर्वेदके शासक रहे। इनमें सुलेमान तगिन कराखानी खान तमगाच खान इब्राहीमका पौत्र और दाऊद कूच-तगिनका पुत्र था। ११वीं सदीके आरम्भ होते ही तुर्किस्तानके कराखानियोंने अन्तर्वेदपर आक्रमण कर दिया। कादिर खान जिब्रैल (बोगराखान मुहम्मद के पुत्र)ने अन्तर्वेदको ही दखल नहीं कर लिया, बल्कि ११०२ में सलजूकियोंकी अपनी भूमिपर भी आक्रमण किया। वह तैरमिज लेनेमें सफल हुआ, लेकिन उसके पास ही २२ जून ११०२ ई० को सुल्तानके भाई सिजरसे लड़ते मारा गया।

बरकियारुक इस बातमें सौभाग्यशाली था, कि उसको अपने भाइयोंसे बहुत लड़ने झगड़नेकी जरूरत नहीं पड़ी। वह अधिकतर बगदादमें रहता था। उसका एक भाई मुहम्मद आजुर-वाइ जानका शासक था और दूसरा सिजर खुरासानका। सिजरने खुरासानका राज्यपाल रहते गजनीको करद बनानेमें सफलता पाई। बरकियारुक इस्फहानसे बगदाद जाते समय ११०४ ई० (४९८ हि०) में मर गया। मृत्युके समय उसने अपने पुत्र मलिक शाह (11) के प्रति भक्तिकी शपथ ली थी।

बरकियारुकका सकल्प पूरा नहीं हुआ। उसके भाई मुहम्मदने धोखेसे बगदादको ले लिया और शिशु सुल्तानको अपना बंदी बना गद्दी सभाल ली।

६ मलिकशाह II बरकियारुक पुत्र (११०४ ई०)

७. मुहम्मद मलिक-पुत्र (११०४-१११७ ई०)

मुहम्मदका तेरह सालका शासन भी लडाई-झगड़ोमें बीता। इसी समय ईसाइयों और मुसलमानोंके सलेबी जग शुरू हो गये। अब सलजूकियोंकी सीमा भूमध्यसागर तक पहुँच गयी थी। ईसाइयोंके पवित्र स्थान येरूशेलम आदि भी शताब्दियोंसे मुसलमानोंके हाथमें रहते अब सलजूकियोंके हाथमें थे। कुछ थोड़ेसे देशोंको छोड़कर सारा यूरोप इस समय तक ईसाई हो चुका था। यूरोपीय सामन्त नहीं चाहते थे, कि उनका पवित्र स्थान मुसलमानोंके हाथमें रहे। इसीलिए उन्होंने धर्म-युद्ध छेड़ दिया था। मुहम्मदके सेनापति इस समय उसी धर्मयुद्धमें लगे हुए थे। साथ ही गृह-कलह भी कम नहीं था। मुहम्मद १११७ (५११ हि०) में इस्फहानमें मरा।

८ महमूद II मुहम्मद-पुत्र (१११७ ई०)

अब बरकियारुकके सबसे छोटे भाई सिजरकी शक्ति बढ़ गयी थी। महमूद नाममात्रके लिये गद्दीपर बैठा था, सारी शक्ति उसके चचा सिजरके हाथमें थी। सिजरने भतीजेको उभय इराक (इराक अरब और इराक अजम ईरान) दे दिया, लेकिन शर्त यह रखी, कि ख़ुतबेमें सिजरका भी नाम रहेगा। यह प्रबन्ध भी स्थायी नहीं रहा।

९. सिजर^१ मलिकशाह-पुत्र (१११७-११५७ ई०)

सिजर सलजूकी वंशका अन्तिम और महाप्रतापी सुल्तान था। वह बीस साल तक खुरा-

^१ वही प० ८८०

सान और अन्तर्वेद का राज्यपाल रहा और अब चालीस साल तकके लिये महान् सल्जूकी साम्राज्यकी बागडोर उसके हाथमे आयी। सल्जूकी राजवंश चार पीढ़ियो पहिले घूमन्तू पशु-पाल तुर्कों का था। सल्जूकियोंके हाथमे पहिले ख्वारेज्म आया फिर इराक-ईरान-सीरिया पर उनकी विजय-ध्वजा फहरायी। सल्जूकी अपने भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके राज्यपाल अपने विश्वासपात्र तुर्क गुलामोंको बनाते रहे, यह हम कह आये हैं और यह भी कि नूशतगिनने अपनी शक्तिको बहुत बढा लिया था। उसने अपने पुत्र कुतुबुद्दीन मुहम्मदकी शिक्षाकी और बहुत ध्यान दिया था। पिताके मरने पर १०९७ (४९० हि०) में यही ख्वारेज्मशाहकी उपाधि धारण कर गद्दी पर बैठा। इसीके समय कराखिताइयोने अन्तर्वेदपर आक्रमण करना शुरू किया। कुतुबुद्दीनने ११२७ ई० (५२१ हि०) में उनके मुकाबिलेमे एक लाख सेना भेजी, लेकिन काफिरो (कराखिताइयो) ने ऐसी करारी हार दी, कि कुतुबुद्दीनको उनका करद होना पडा। कराखिताई इसके बाद राजधानी काशगरको लौट गये। जल्दी ही कुतुबुद्दीन मर गया और उसका पुत्र अत्सिज ख्वारेज्मशाह बना। अत्सिज कई साल तक सुल्तान सिजरका तहतदार बनकर मेर्वमे रहा था। उसके अधिक प्रभावको देखकर दरबारी जलने लगे, इसपर वह सिजरमे छुट्टी ले ख्वारेज्म चला गया। वहा पहुचते ही उसने अपने स्वामीसे बगावत की। सिजरने उसपर आक्रमण किया, लडाईमें अत्सिजका पुत्र इल्किलिच मारा गया और ख्वारेज्मियोंको बुरी तरहमे हारना पडा। अत्सिजने सुल्तानके सामने नाक रगडी। सिजरने अपने भनीजे सुलेमान शाहको ख्वारेज्मका गवर्नर नियुक्त किया। सिजरके लौटते ही अत्सिजने सुलेमान शाहको मार भगाया। अब सारा ख्वारेज्म अत्सिजके हाथमे था। लेकिन सिजर उसे क्षमा करनेवाला नहीं था। अपनी शक्तिको मजबूत करनेके लिये ११४१ (५३६ हि०) में अत्सिजने कराखिताइयोंको सहायताके लिये बुलाया।

जुबैनीके अनुसार गजनाके अभियानमें कान भरनेके कारण सिजरको अत्सिजने अपनी ओरसे ठडा देखा था, जिसके कारण ही उसे विद्रोह करनेकी प्रेरणा मिली। ११३८ के पतझडमें सिजरने ख्वारेज्मपर आक्रमण किया। सिजरका अत्सिजपर यह इल्जाम था, कि उसने बिना हमारी आज्ञाके जन्द और मन्किशलकके मुसलमानोंका खून बहाया, वहाके निवासी इस्लामी प्रान्तोंके विश्वसनीय रक्षक थे, वह बराबर काफिरो (तुर्कों) से युद्ध करते थे। जवाबमें अत्सिजने विद्रोह करके सुल्तानके अफसरोको कैद कर लिया, उनकी सपत्ति जप्त कर ली, खुरासानकी ओर जानेवाले सारे रास्ते बन्द कर दिये। सुल्तान इस समय खुरासानमे था। वही से उसने सितम्बर (मुहर्रिम) ११३८ ई० में भारी सेना लेकर ख्वारेज्मकी ओर प्रयाण किया। अत्सिजने हजारास्पके पास जबर्दस्त मोर्चाबन्दी कर वक्षुका बाध तोडकर आस-पासकी बहुत सी भूमि जलमग्न कर दी। सल्जूकी सेना वक्षुके किनारे किनारे नहीं चल सकती थी, इसलिए उसे रेगिस्तानका रास्ता पकडना पडा, जिसके कारण गति मन्द हो गई। १५ नवम्बरको भयकर युद्ध हुआ। अत्सिजकी सेनामे अधिकतर काफिर तुर्क थे। उसने हमला किया, किन्तु पूरी हार खानी पडी। हताहतों और बन्दियोंके रूपमे १० हजार आदमियोंका नुकसान हुआ। बन्दियोंमे ख्वारेज्मशाहका पुत्र भी था, जिसे तुरन्त कल करवा कर उसके सिरको सिजरने अन्तर्वेद भेज दिया। सिजर युद्ध-क्षेत्रमे १ सप्ताह रहा। बची सेना अत्सिजका साथ छोडकर उसके पास आ गई। सिजरने उसे क्षमा कर दिया। अत्सिज भाग

गया। सिंजर बिना किसी रुकावटके सारे ख्वारेज्म पर अधिकार कर अपने भतीजे सुलेमान मुहम्मद-पुत्रको राज्यपाल नियुक्त कर उसके साथ एक वजीर, एक अताबेग और एक हाजिब दे १० फरवरी ११३९ को राजधानी मेर्व लौट गया। सिंजर के लौट जाने पर अत्सिज फिर ख्वारेज्म लौट आया। सिंजर के वर्तव से लोग रुष्ट थे, इसलिये सारे ख्वारेज्मी उसके साथ हो गये और अत्सिज ने सिंजर के अफमरो को मार डाला, सुलेमान भी भाग कर अपने चचा के पास गया। ११३९ ई० (५३४ हि०) में अत्सिज ने बुखारापर भी आक्रमण कर दिया और वहां के राज्यपाल यगी अली-पुत्र को बन्दी बना पीछे कत्ल कर दिया। उसके बाद उसने बुखारा के किले को ध्वस्त कर दिया। इनका करने के बाद फिर उसने अपने अधिराज (सिंजर) की अधीनता स्वीकार करने की इच्छा इकट की। मई (११४१) के अन्त में अत्सिज ने राजभक्ति की शपथ ली, जिसमें कहा, कि सुल्तान ने दुनिया के सामने अपने न्याय को सदा दिखलाया और अब भी अपनी दया के प्रकाश को दिखला रहा है। लेकिन इसके कुछ ही महीनों बाद अत्सिज ने शपथ तोड़ फेंकी।

११४३ ई० (५३८ हि०) में सिंजर ने फिर ख्वारेज्म पर चढ़ाई की और अत्सिज को अधीनता स्वीकार करने के लिये मजबूर किया और वह लूटे खजाने को लेकर मेर्व लौटा। नवम्बर ११४७ में सिंजर ने तीसरी बार ख्वारेज्म पर आक्रमण किया। यह याद रखने की बात है, कि अत्सिज और सिंजर का झगडा ही कराखिताइयो के अन्तर्वेद में बुलाकर सल्जूकियों के राज्य को छिन्न-भिन्न करने और अन्त में स्वयं सिंजर के मारे जाने का कारण हुआ।

११४१ ई० में अन्तर्वेद के तुर्क सैनिकों (करलुको) और खान में झगडा हुआ। महमूद खान ने करलुको के विरुद्ध सिंजर में मदद मांगी, तो करलुको ने कराखिताइयो के गुरखान को सहायता के लिये बुलाया। यह वही गुरखान था, जिसने बलाशागुन में घुमन्तुओं की सेना के विरुद्ध वहां के खान का सर-क्षण किया था। वह सिंजरसे न लड़कर चाहता था, कि बीच में पड़कर करलुको से समझौता करादे, किन्तु सिंजर ने इसका उत्तर बहुत अपमानजनक दिया, जिसके लिये कराखिताइयो ने अन्तर्वेद पर आक्रमण किया। ९ सितम्बर ११४१ ई० को कतवान की महभूमि में लड़ाई हुई और सिंजर की सेना पूर्णतया पराजित हुई। (कराखिताइयो) ने सिंजर की सेना को दरगम (समरकन्द के दक्षिण) की ओर हटने के लिये मजबूर किया। १० हजार हताहतों की नदी बहा ले गई, ३० हजार युद्ध क्षेत्र में काम आये। सिंजर किसी तरह भागकर तेरमिज पहुंचा। सारे अन्तर्वेद ने कराखिताइयो के सामने सिर झुकाया। इसी साल (५३६ हि०) बुखारा पर भी उनका अधिकार हो गया। इस समय बुखारा में एक खानदानी रईसों का वंश था, जिसकी पदवी सद्दे-जहा (जगत का मुखिया) थी। वह अपने को उमर की औलाद कहते थे। वंशस्थापक का नाम बुरहानुल् मिल्लत अब्दुल अजीज उमर-पुत्र माजा था। कराखिताइयो के आक्रमण के समय बुखारा का सद्दे-जहा हुसामुद्दीन उमर अब्दुल अजीज-पुत्र था। सद्दे-जहा के नेतृत्व में बुखारा ने काफिरो (कराखिताइयो) का विरोध किया। सद्दे-जहा मारा गया। कराखिताइयो ने अल्पतगिन को बुखारा का शासक नियुक्त किया। सिंजर की घोर पराजय से लोगों में अफवाह उड़ी, कि अत्सिज ने ही कराखिताइयो को बुलाया, यद्यपि कम से कम इस समय के लिये

यह बात सच्ची नहीं थी, क्योंकि कराखिताइयों की एक सेना ने अत्सिज के राज्य को लूटकर भारी सख्तियों में लोगों को मारा था, जिसके कारण अत्सिज सधि करने के लिये मजबूर हुआ और उसने जिन्स के अतिरिक्त तीस हजार सुवर्ण दीनार वार्षिक कर देना स्वीकार किया। शायद कतवान के युद्ध के बाद ही ख्वारेज्म पर हमला नहीं हुआ, क्योंकि सिजर की पराजय से फायदा उठाकर अत्सिज ने जाकर खुरासान पर आक्रमण किया और १९ नवम्बर (११४१ ई०) को मेर्व को लूटा। जब उसे कराखिताइयों के आक्रमण की खबर मिली, तो पीछे लौटा। मई ११४२ को फिर वह सिजर के खिलाफ अभियान करने नेशापोर पहुँचा। नेशापोर के लोगों के सामने अत्सिज ने घोषणा की—“मैंने सल्जूक-वंश की सच्चे दिल से सेवा की, जिसके प्रति कृतघ्नता करने के कारण ही सिजर को यह बदला मिला। हम नहीं जानते, उसका पश्चात्ताप लाभदायक मिष्ट होगा। सिजर को हमारे जैसा उनके राज्य का समर्थक और मित्र कहीं भी नहीं मिलेगा। अन्तर्वेद में कराखिताइयों के राज्य की स्थापना एक महत्वपूर्ण घटना थी। करीब चार शताब्दियों बाद फिर वहाँ काफ़िरो का शासन स्थापित हुआ और मुसलमानों को उनके सामने सिर झुकाना पड़ा। सिजर निर्बल हो चुका था। अत्सिज मेर्व और नेशापोर तक लूट मार मचाता रहा, तो भी सिजर अभी अत्सिज के लिये काफ़ी था।

२९ मई (११४१ ई०) को नेशापोर में अत्सिज के नाम का खुनवा पड़ा गया, लेकिन उसी साल की गरमियों में सिजर ने खुरासान को फिर अपने हाथ में ले लिया। सिजर ने ११४३ (५३८ हि०) में चढ़ाई की, तो अत्सिज फिर अधीनता स्वीकार करने के लिये मजबूर हुआ। शायद इसी सबब में मार्च ११४४ को गूज़ो ने बुखारा पर सफल आक्रमण किया, जिसमें वहाँ का किला ध्वस्त हो गया। अत्सिज की बदनीयती की खबर सुनकर सिजर ने कवि (अदीब) साबिर को पता लगाने के लिये भेजा, जिसने सूचित किया कि अत्सिज ने पैसा देकर सुल्तान को मारने के लिये दो इस्माईलियों को नियुक्त किया है। सुल्तान सजग हो गया, लेकिन अत्सिज ने पता पाने पर साबिर को बंधु में फँकवाकर मरवा दिया।

नवम्बर ११४७ में सिजर ने तीसरी बार ख्वारेज्म पर आक्रमण किया और दो महीने के धिरावे के बाद हजारास्प को ले सका। वहाँ से अत्सिज की राजधानी में पहुँचा। अत्सिज की प्रार्थना पर दरबेश आहूपोश (हरिन-चर्मधारी साधू) ने दोनों के बीच में बिचवाई का काम किया—आहूपोश की बड़ी प्रतिष्ठा थी, वह केवल हरिन का मास खाता, और हरिन का ही चमड़ा पहनता था, इसीलिये आहूपोश के नाम से विख्यात था। सिजर ने फिर अत्सिज को क्षमा कर दिया, लेकिन शर्त यह रखी, कि अत्सिज स्वयं मेरे पास वक्षु तट पर अधीनता स्वीकार करने के लिये आये। जून ११४८ के आरम्भ में वह मुलाकात हुई, लेकिन मुलाकात के समय दरबारी कायदे के विरुद्ध अत्सिज ने सुल्तान के सामने न जमीन चूमी, न घोड़े पर से ही उतरा। उसने सिर झुकाया और सुल्तान के लगाम उठाने के पहिले ही लौट पड़ा। इस अपमान के लिये सिजर ने फिर लडाई करना मुनासिब नहीं समझा और वह मेर्व लौट गया।

खुरासान में असफल होकर अत्सिज ने सिर-दरिया की ओर मुह फेरा। सिजर को लडाइयों में फसे देखकर कराखानियों ने ज़न्द ले लिया था... अरसलनखाग महमूद का पुत्र कमालुद्दीन वहाँ राज्य कर रहा था। अत्सिज ने कमालुद्दीन से समझौता करके यह तै किया, कि ११५२ के वसन्त में काफ़िर क़िपचकों पर आक्रमण किया जाय। क़िपचकों का केन्द्र सिगनाक

(उत्तरार से २४ फरवरी, तुमैन आरिक डाक-चौकी से सात मील उत्तर) था। अत्सिज इस शर्त के मुताबिक अपनी सेना लेकर आया। उसे देखकर कमालुद्दीन डर के मारे राज्य छोड़ भाग गया और बहुत बचन देने पर वह अत्सिज के पास आया। अत्सिज को वचन की परवाह क्या थी, उसने उसे पकड़कर ज़िन्दगी भर के लिये जेल में डाल दिया। सिन्नाक पर आक्रमण नहीं हो सका। कुछ कठिनाइयों के कारण उसने अपनी सेना दूसरी ओर भेजी और ज़न्द को विद्रोहियों ने फिर ले लिया। जून ११५२ (रबी I ५४७ हि०) को अत्सिज ने ज़न्द पर अभियान किया। बीच के रेगिस्तान को एक सप्ताह में पार कर ८ रबी I (१३ जून ११५२ ई०) को उसकी सेना मिर नदी के किनारे ज़न्द से २० फरवरी पर सागदरा पहुँची। अगले दिन (शुक्रवार) को सेना शहर के दरवाजे पर थी। पता लगा, विद्रोही खान भाग गया। अत्सिजने उसका पीछा करने के लिये सेना भेजी। दूसरे विद्रोहियों ने अधीनता स्वीकार की और उन्हें क्षमा दान मिला। इस प्रकार बिना खून-खराबी के ज़न्द फिर ख्वारेज़्मशाह के हाथ में आ गया। अत्सिज ने अपने बड़े पुत्र अबुल्फतह इल्-अरसलान को ज़न्द का राज्यपाल नियुक्त किया। इसके बाद यह प्रथा चल पड़ी, और ख्वारेज़्मशाह का ज्येष्ठ पुत्र ज़न्द का राज्यपाल बनाया जाता।

११५३ ई० के वसन्त में खुरासान का वातावरण अत्सिज को अनुकूल मालूम हुआ। गूज़ो (तुर्कमानों) ने दो बार सिंजर को हराया। सेनापति और सुल्तान ने राजधानी छोड़ दी और अगस्त या जुलाई के अन्त में गूज़ा ने मेर्व को लूटा। उसके कुछ ही समय बाद उन्होंने मिंजर को बन्दी बना लिया और सितम्बर के अन्त या अक्टूबर में दुबारा मेर्व को लूटा। इसके बाद तीन माल तक सिंजर गूज़ो का बन्दी बना रहा। गूज़ उसे सारे दरबारी ठाटबाट के साथ अपने साथ लिये खुरासान के शहरो—मेर्व, नेशापोर आदि—को बुरी तौर से लूटते रहे। गूज़ो ने सुल्तान की इस अवस्था से फायदा उठाकर अपने को स्वतंत्र घोषित करने का ख्याल नहीं किया, बल्कि बंध शमक के संरक्षक होने का दिखावा किया। सबसे पहिले आमूय (आमूल) के शासक को किला समर्पण करने के लिये कहा गया। ज़न्द की भाँति यह भी अत्सिज के लिये एक महत्वपूर्ण स्थान था, क्योंकि यहीं होकर ख्वारेज़्म का रास्ता वक्षु के किनारे-किनारे जाता था। अत्सिज ने जानते हुए भी विरोध न कर अपने राज्य में लौट काफिर किपचको के विरुद्ध संघर्ष जारी किया। दिसम्बर ११५३ के अन्त से ११५४ के शरद-आरम्भ तक अत्सिज के भाई यनाल तगिन ने बैहक जिले को लूटा और बरबाद किया।

यद्यपि सिंजर गूज़ो का बन्दी था और उसकी अधिकांश सेना ने भी उनका साथ दिया था, किन्तु सल्जूकी सेना के एक भाग ने महमूद खान को अपना नेता बना गूज़ो का विरोध करना शुरू किया। महमूद ने अत्सिज के साथ समझौता करने के लिये बातचीत शुरू की। अत्सिज ने अपने दूसरे पुत्र किलिच खान को ख्वारेज़्म में छोड़ ज्येष्ठ पुत्र इल्-अरसलान को ले सेना-सहित खुरासान की ओर प्रस्थान किया। शहरिस्तान (नसा) नगर में पहुँचकर अत्सिज ने सुना, कि सिंजर अपने एक सेनापति की मदद से बन्दी खाने से भाग तैरमिज़ पहुँच गया। ख्वारेज़्मशाह (अत्सिज) नसा गया, जहाँ महमूद खान का दूत इज्जुद्दीन तुगराई उससे मिला। खान और अमीर लोग अत्सिज जैसे खतरनाक मित्र को निमंत्रित करने के लिये पछताने लगे। अत्सिज की माँगें इतनी कम थी, जिनकी वह आशा नहीं कर सकते थे। नसा से ही अत्सिज ने सुल्तान सिंजर को पत्र लिखा, जिसमें बन्दीखाने से निकल भागने में सफल होने के लिये उसे बधाई दी और

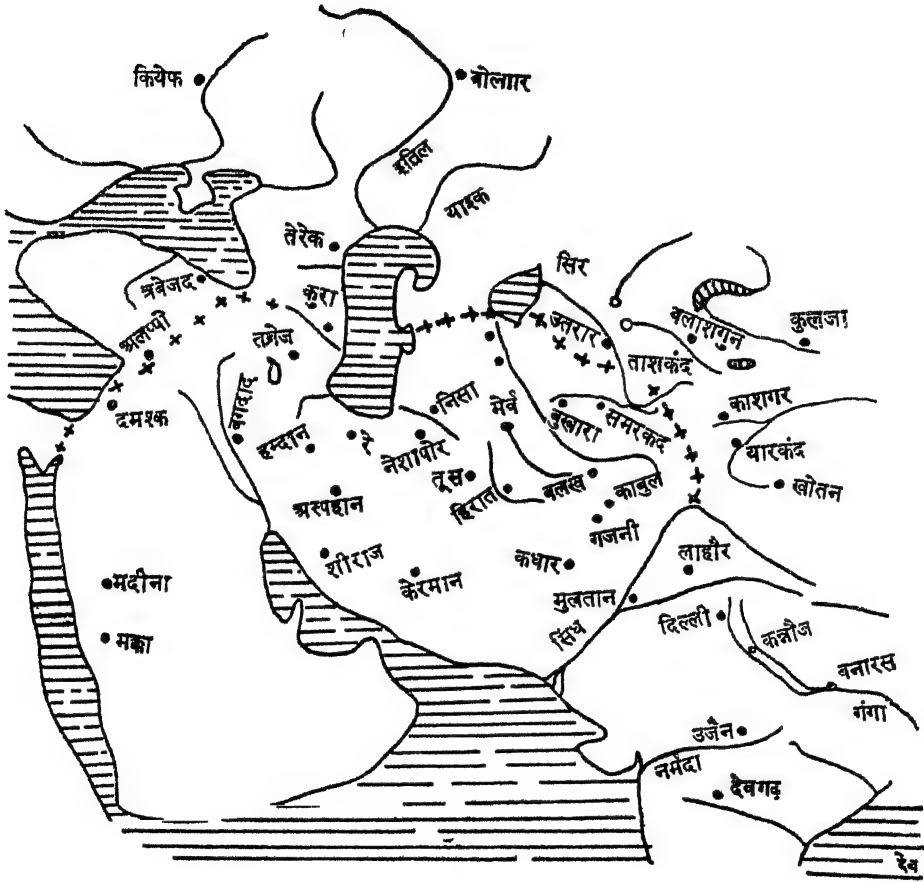
पूरी अधीनता स्वीकार करते अपने अधिराज से पूछा, कि हुक्म मिलने पर मैं सुल्तानी सेना में शामिल होने के लिये तैरमिज आ सकता हूँ, ख्वारेज्म लौट सकता हूँ, या खुरासान में रह सकता हूँ। उसने अपने मित्रों—महमूदखान, सजिस्तान सालार और पर्वतीय गोर शासक के पास भी इसी अभिप्राय के पत्र लिखे। अभी वह शहरिस्तान (नमा) में ही था, कि सजिस्तान-सालार का दूत अत्सिज के पास आया। खुरासान के शहर में अत्सिज और महमूद खान की बड़ी मित्रतापूर्ण मुलाकात हुई। फिर मई में विसाकवाशी (गारद-अफमर) ने मुल्मुल्क लौट कर सिजर का पत्र लेकर आया। महमूद के आ जाने तथा सजिस्तान और गोर के शासकों की प्रतीक्षा करते अत्सिज ने गुज-नेना तूती बेग को पत्र लिखने का हुक्म दिया। इस पत्र में उसने मिजर के कैदी होने के बारे में एक भी शब्द नहीं लिखा था। “कहा जाता है, जब गुज-सेनाये खुरासान में आई और सरकारी अफसरों ने मेवें छोड़ दिया, तो सुल्तान मिजर को भी चला जाना चाहिये था, क्योंकि पृथ्वी की अंतिम छोर तक सारी भूमि को गुज सेना अपनी संपत्ति समझती थी। लेकिन सुल्तान प्रजापर दया करते अपनी राजसी मर्यादा और अपने को स्वेच्छापूर्वक समर्पण करते हुए उनके भीतर चला गया। गुजो ने सिजर की उदार-हृदयता को नहीं समझ पाया और पवित्र दरवारी सम्मानों को नहीं माना, इसीलिये अधिराज को उनसे अलग होने के लिये मजबूर होना पड़ा। गुज क्या करते? रोजाना एक नगर में दूसरे नगर को कूच करते रहना अब उनके लिये सम्भव नहीं था। उन्हें केवल खुरासान के नगरों पर ही अधिकार करने को कहा गया था। अधिराज (सुल्तान) स्वयं उनके बीच में आ गया था। उनकी सारी मेना को बलख प्रदेश में एकताबद्ध किया जानेवाला था। विद्रोह के पहिले गुजों को बलख में रहने को जगह मिली थी। जब अधिराज स्वयं शासन करने के लिये लौट आया, तो उसकी आज्ञा के बिना किसी को उसके राज्य में अधिकार जमाने का हक नहीं है। अब उनके लिये एक यही रास्ता है, कि सल्जूकी सरकार की अधीनता स्वीकार करे और अपने अपराध के लिये क्षमा-प्रार्थी हो। महमूद खान, और ख्वारेज्म, सजिस्तान तथा गोर के शासक उनकी ओर से अधिराज के सामने इस बात की सिफारिश करेंगे, कि वह उनके लिये एक युर्न (ओर्दू) और जीविका के साधन प्रदान करे।”

अत्सिज को कराखिताइयो के खतरे का अब होश आया था, इसलिये शायद वह दिल से चाहता था, कि इस्लामिक शक्ति को संगठित और मजबूत किया जाय, लेकिन यह काम नहीं हो सका। खबूसान में ही ३० जुलाई ११५६ ई० को लकवे से उसकी मृत्यु हो गई।* अत्सिज सल्जूकी सुल्तान का सामान्त रहते मरा। लेकिन, इसमें सदेह नहीं, वह ख्वारेज्म के प्रबल वंश की नींव रखने वाला था। जन्द और मनकिश्लक पर अधिकार कर उसने उत्तर के पड़ोसी घुमन्तुओं को अपने अधीन किया, और भाड़े की तुर्की सेना से अपना सैनिक बल बढ़ा, एक स्वतंत्र राज्य की बुनियाद डाली। उसके उत्तराधिकारी ने इस शक्ति को और बढ़ाया, इसमें शक नहीं।

११५७ ई० सिजर में मरा^१, लेकिन उसके पहिले ही वह अपने गौरवपूर्ण जीवन को खतम कर चुका था। अत्सिज की सहायता से उसे फायदा उठाने का मौका नहीं मिला, और सिजर के बाद फिर सल्जूकी वंश अपने खोये वैभव को प्राप्त नहीं कर सका। मध्यएशिया में अब करा-

^१ सिजर का मकबरा मेवें में है। आखि० पाम्या० तुर्कमेन०, पृ० २९

खिताइयो की विजय-दुधुभी बज रही थी। ख्वारेज्मशाह की शक्ति भी बढ़ती जा रही थी। दक्षिण में गोरियो ने एक नई सल्तनत कायम की, जिसं भारत को जीतने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सिजर के मरने के बाद भी सल्जू की सुल्तान पश्चिमी एशिया को बाटकर अपना शासन करते रहे, जिनमें कुछ थे—



३१. सल्जूकी साम्राज्य (११५० ई०)

- | | | |
|--------------------------------|-----------|---------------|
| (१) किरमानी सल्जूक | १०४१-११८७ | (४३३-५८३ हि०) |
| (२) सिरियाके सल्जूक | १०९४-१११७ | (४८७-५११ हि०) |
| (३) इराक-कुरदिस्तान के सल्जूक | १११७-११९४ | (५११-५९० हि०) |
| (४) रूमी (क्षुद्रेसिया) सल्जूक | १०७७-१३०० | (४७०-७०० हि०) |

सिजरके बाद अत्सिज-पुत्र इल-अरसल ख्वारेज्मशाह बिलकुल स्वतंत्र शासक था।

 स्रोत-ग्रन्थ

१. Turkistan Down to Mongol Invasion (W. Bastold)
२. Heart of Asia (E. D. Ross)
३. सियासतनामा (निजामुल्मुल्क)
४. इस्कुस्त्वो खेदनेइ आज़िइ
५. प्राब्लेमा सेल्जुक्स्को इस्कुस्त्वो (इ० अ० ओब्वेर्ली)
- ६ ओचेर्क इस्तोरिइ तुर्कमेन्स्को नरोदा (व० व० बर्तोल्ड)
७. आखितेकुर्नीयि पाम्यातिकि तुर्कमेनिइ (मास्को १९३९)
- ८ Recueil de Textes relatifs a l'histoire des seldjucides (Hotsma)
९. Travels in Central Asia (A. Vambery, 1861)
१०. Sketches of Central Asia (A. Vambery, 1868)
११. History of Bukhara (A. Vambery, 1873)
१२. रज़वलनी स्तारओ मेर्व (शुस्कोव्स्की, १८९४)

अध्याय ५

गोरी (११५६-१२०७ ई०)

§१. कराखिताई (११२४-१२१८ ई०)

कराखिताइयो के बारे में हम पहिले कह चुके हैं।^१ चतुर्थ कराखिताइ शासक गुरखान चेन्-गू (११४३-११८२) के समय कराखिताई अन्तर्वेद में थे। ख्वारेज्मशाह अत्सिज पर जब सल्जूकियों का प्रहार हुआ, तो उसने अपनी मदद के लिये कराखिताई दरबार में गुहार की। हम यह भी बतला चुके हैं, कि महमूद खान और उसकी सेना के झगड़े में खान ने जब सिजर से मदद मागी, तो करलुको ने गुरखान को बुलाया। ९ सितम्बर ११४१ ई० में सिजर को कराखिताइयो ने करारी हार दी और बुखारा पर अपनी ओर से अल्पतगिन को शासक नियुक्त किया।

सिजर को हराकर वक्षु को कराखिताइयो ने अपनी सीमा मानी। अत्सिज ने कराखिताइयो की अधीनता स्वीकार की। उसके बाद करीब-करीब कराखिताई वंश के पतन के समय (१२१८ ई०) तक सभी ख्वारेज्मशाह कराखिताइयो के करद रहे।

अत्सिज के उत्तराधिकारी इल-अरसलन ने चाहा कि कराखिताई जुए को उतार फेंके, लेकिन उसमें वह सफल नहीं हुआ। ख्वारेज्मशाहोंको पहिले सल्जूकियों से और पीछे गोरियों से मुकाबिला पड़ा, जिसमें वह कराखिताइयो की मदद लेने के लिये मजबूर हुये। इल-अरसलन ने मरते वक्त अपने सबसे छोटे पुत्र सुल्तानशाह महमूद को राज्य दिया। इसे बड़ा पुत्र तेकिश कैसे मजूर कर सकता था। उसने कराखिताइयो से मदद ले भाई को हटाकर गद्दी सभाल ली। अपने पूर्वजों की तरह इसने भी काम निकल जाने पर कराखिताइयो को ११९२ (५८८ हि०) में धत्ता बताना चाहा। उसका भाई सुल्तान शाह महमूद उस समय गोरियों के यहाँ शरणागत था। वहाँ से भागकर कराखिताई रानी के पास पहुँचकर उसने कहा—ख्वारेज्मके लोग मुझे तख्त पर देखना चाहते हैं। रानी ने इस मौके को अच्छा समझा। तेकिश के ऊपर जली भुनी थी ही, उसने अपने पति कर्मा को एक बड़ी सेना देकर महमूद के साथ कर दिया। तेकिश ने रोकने के लिये वक्षु की नहर को काटकर रास्ते के इलाके को जलमग्न करा दिया। कर्मा ने देखा, लडाई की जबर्दस्त तैयारी है और लोग तेकिश के पक्ष में हैं। वह फौज लेकर लौट गया। सुल्तान महमूद ने अपने अनुयायियों और कुछ कराखिताइयो की मदद से सरख्स पर अधिकार कर लिया। तेकिश ने भी देख लिया, कि कराखिताइयो के साथ दुश्मनी करने से मैं फायदे में नहीं रह सकता,

^१देखो जिल्द १, भाग ५, अध्याय २

इसलिये उसने फिर गुरखानी दरबार की अधीनता स्वीकार की और तब से मरने के समय (१२०० ई०) तक बराबर कर भेजता रहा। उसने अपने उत्तराधिकारी पुत्र मुहम्मद अलाउद्दीन को भी वैसा ही करने की शिक्षा दी, किन्तु वह उसे जल्दी ही भूल गया। मुहम्मद १२०८ ई० में कराखिताई भूमि पर चढ़ाई की, लेकिन बुरी तरह हारा। अगले साल की चढ़ाई में उसे सफलता जरूर मिली, और उसने उत्तरार (फाराब) और तराज तक का इलाका ले लिया, लेकिन इसका कारण ख्वारेज्मशाह की बहादुरी नहीं, बल्कि चिंगिस का पूर्व की सीमा पर हमला था, जिसने १२०७ में नैमन (तुर्क) के खान ता-यझ खान को हराकर मार डाला, और उसका पुत्र गुचलुक भागकर गुरखानी दरबार में चला आया।

गुचलुक को हराकर किस तरह चिंगिस ने कराखिताई साम्राज्य को ध्वंस कर उत्तरापथ को अपने हाथ में लिया, इसके बारे में हम पहिले कह चुके हैं। कराखिताई काल में अन्तर्वेद का शासन सीधे गुरखान की ओर से होता था, वह भिन्न-भिन्न स्थानों के लिये राज्यपाल नियुक्त करता था; किन्तु, ख्वारेज्म पर कराखिताई शासन ख्वारेज्मशाह की मार्फत होता था। कराखिताई बौद्ध धर्म के मानने वाले थे, और उनकी सस्कृति चीनी थी। यह भी हम बतला चुके हैं, कि बौद्ध होने पर भी यद्यपि ईसाइयों और दूसरों के साथ गुरखानों का वर्तव बहुत उदारतापूर्ण था, लेकिन मुसलमानों के साथ वह उतनी उदारता दिखलाने के लिये तैयार नहीं थे। इसका कारण भी था। मुसलमानों ने भी अपने तीस-चार शताब्दियों के शासन में दूसरे धर्मवालों के साथ घोर असहिष्णुता का परिचय दिया था।

६२. गोरी' (११५६-१२०७ ई०)

उद्गम—हिंरात से पूर्व और दक्षिण की ओर तथा गर्जिस्तान और गुजगान के दक्षिण में जो पहाड़ी प्रदेश है, उसे गोर (गूर) कहा जाता था। खुरासानी फारसी भाषा से यहाँ की भाषा में काफी अन्तर था। १० वीं सदी तक गोर के पहाड़ी लोग प्रायः सभी काफिर थे, यद्यपि प्रदेश चारों ओर मुसलमानों से घिर चुका था। काफिर का अर्थ है बौद्ध, जुर्रुस्ती अथवा हिन्दू होना। तुमान्स्की हस्तलेख के अज्ञात लेखक के कथनानुसार उसके समय में गोरशाह अपने को गुज्जान के फरीगूनियों का सामन्त मानते थे। बाद में किसी समय वहाँ के अधिकांश लोगों ने इस्लाम स्वीकार किया। पहिले पहल महमूद गजनवी के पुत्र मसऊद की सेना १०२० ई० में गोर के भीतर तक पहुँची। मसऊद उस समय हिंरात का राज्यपाल था। विजय प्राप्त करने के बाद गजनवियों ने गोर के पुराने शासक को अपने पद पर बना रहने दिया। सिंजरके अवसान के समय (११५६ ई०में) जब सल्जूकी साम्राज्य बिखरने लगा, तो ख्वारेज्मशाह की भांति गोर-शासक ने भी उससे फायदा उठाया। सिंजर जिस वक्त गुज्जों का बन्दी था, उस समय की घटनाओं में गोरों ने भी भाग लिया। इसके कुछ ही समय बाद गयासुद्दीन और शहाबुद्दीन दोनों भाई गोर के शासक तथा सेनापति के रूप में रगमच पर आये। उनका स्थापित किया हुआ विशाल शक्तिशाली राज्य यद्यपि अपनी जन्मभूमि में बहुत दिनों तक नहीं टिक सका, किन्तु उसी ने भारत

*Turkistan .. (Bertold), Heart of Asia

मे एक जबर्दस्त इस्लामिक शक्ति की नींव डाली, जो कई सदियों तक चलती रही और उसने भारत के जीवन के हरेक अंगपर अपनी अमिट छाप छोड़ी।

१. गयासुद्दीन मुहम्मदगोरी (-१२०३ ई०)

गयासुद्दीन मुहम्मद गोरी स्वयं तख्त पर बैठा और सेनापति का पद उसके छोटे भाई शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी ने सभाला। पीछे वह गजनी का शासक भी बना, जब गोरियोने उसे ११७३ (५६९ हि०) में जीत लिया। दोनों भाइयों के पिता का नाम साम और चचाका फख्रुद्दीन मसऊद था। गोरी राज्य के बढ़नेपर मसऊदको बामियान, तुखारिस्तान, शुगनान तथा बालोर (चितराल) तक दूसरे पहाड़ी प्रदेशों के शासक का पद मिला। मसऊद के पुत्र शमशुद्दीन मुहम्मदने वक्षु पार हो शगनानियान को भी ले लिया। पूरबमें गोरियों का राज्य बख्श और चितराल तक पहुंचा। पश्चिममें हिरातको भी लेकर खुरासानमें पहुंच वह ख्वारेज्म-शाहके प्रतिद्वन्दी बन गये। गोरियोंकी स्थिति ख्वारेज्मशाहसे बेहतर थी। जहां ख्वारेज्मशाहको भाड़े की तुर्क घुमन्तू सेनाका ही बल था, वहां गोरियोंके पास केवल तुर्क गारद ही नहीं थे, बल्कि उन्हींकी तरहके लडाकू पहाड़ियोंकी बड़ी सेना भी सहायता के लिये मौजूद थी। इसके साथ ही गोरियोंको यह भी फायदा था, कि वह इस्लामके सुल्तान कहे जाते थे, जबकि कराखिताई काफ़िरो (बौद्धों) का सामन्त होनेके कारण ख्वारेज्मशाहको वह सम्मान नहीं था। थोड़े दिनों के लिये गोरी राज्यवशने मुसलिम एसियाके पूर्वी भाग का एक मात्र स्वतंत्र और सबल राजवश कहलानेका सोभाग्य पाया। पश्चिमी एसियामें सल्जूकियोंके बैठे हुए राज्य निर्बल थे, इसलिये सारे इस्लामिक जगतकी आशा गोरियों पर लगी हुई थी। अन्तर्वेदके मुसल्मान कराखिताइयोंके हाथमें थे, पर वह भी अपने दक्षिणके इन धर्मबन्धुओंकी ओर बड़ी आशा लगाये रहते थे। इन् समय कराखिताई, ख्वारेज्मशाह और गोरी यही तीन मध्यएसियाकी बड़ी बड़ी शक्तियां थी। कराखिताइयोंके अधीन रहते हुए भी ख्वारेज्मशाह गोरियोंको पछाड़नेके लिये हर तरह की तदबीर कर रहा था, और अन्तमें वह इसमें सफल भी हुआ, यद्यपि उस सफलताका उपभोग बिगिस खानने वहां पहुंचकर उन्हें नहीं लेने दिया। गोरियों और ख्वारेज्मशाह दोनोंके लिये अपनी जन्मभूमि सकटके समय बड़ी सुरक्षित जगह थी। ख्वारेज्म जहां रेगिस्तानोंसे घिरा होनेसे दुर्जेय था, वहां गोर हिन्दुकुशकी दुर्गम पहाड़ियोंके कारण दुर्घर्ष थी, पंजाबको दखलकर गजनवियों ने गोरियोंको रास्ता दिखला दिया था। तो भी उन्होंने तब तक हिन्दुस्तान पर कोई बड़ा कदम उठानेकी हिम्मत नहीं की, जब तक कि जन्मभूमिमें अपनेको मजबूत नहीं कर लिया।

गयासुद्दीनके चचा अलाउद्दीनने महमूदके वंशजोंको गजनी से भगा दिया। शहाबुद्दीनने गजनी राज्य को लेने के बाद उच्चके राजा की रानी को अपनी तरफ मिलाकर भारत में पैर जमाने का मौका पाया, फिर मुल्तान और सिंध को भी उसने जीत लिया। ११७८ ई० में गुजरात पर उसने चढ़ाई की, लेकिन वहां उसे हारना पड़ा। गुजरात की तरफ असफल हो शहाबुद्दीन ने पूर्व की ओर ध्यान दिया।

वह गजनवी खानदान से गजनी और पंजाब दोनों को ले चुका था। उस समय दिल्ली (चौहान) राज्य की सीमा पर सरहिन्द का किला था, जिसे शहाबुद्दीन ने पहिले लिया। इसके बाद पृथ्वीराज चौहान से तरावडी के मैदान में ११९१ ई० में लड़ाई हुई, जिसमें शहाबुद्दीन को घायल होने के सिवा कुछ हाथ नहीं आया। अगले साल शहाबुद्दीन फिर बड़ी सेना लेकर चढ़ा। अबकी

बार तरावडी के मैदान में हिन्दुओं की हार हुई। पृथ्वीराज शहाबुद्दीन का बन्दी बना और अन्त में मार डाला गया। चौहानों का मूल स्थान अजमेर था। शहाबुद्दीन ने तरावडी की सफलता के बाद अजमेर की ओर बढ़ कर उसे ले लिया। दिल्ली में अपने गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक को राज्यपाल बनाकर वह स्वयं गजनी लौट गया। ११९४ ई० में शहाबुद्दीन फिर एक बड़ी सेना लेकर आया। वह जानता था, कि भारत की सबसे बड़ी शक्ति दिल्ली नहीं कन्नौज है। जब तक जयचन्द को नहीं हराया जाता, तब तक वह हिन्दुस्तान का शासक नहीं बन सकता। जयचन्द दिल्ली की सीमा में मिथिला तक का राजा था। अपनी भारी सेना के साथ वह गौरी से लड़ने के लिये आगे बढ़ा और चन्दोर में लड़ते हुए मारा गया—हिन्दुस्तान में मुसलमानों की शक्ति दृढ़ हो गई।



१३. गोरी साम्राज्य (११९३ ई०)

लेकिन अपने जन्मदेश में गोरियों की सफलता वैसी नहीं रही। एक ओर वह और उसके सेनापति हिन्दुस्तान के काफ़िरो को हरा, उनके मदिरों और विहारों को तोड़ रहे थे, दूसरी ओर उनके सबसे जबर्दस्त प्रतिद्वन्द्वी काफ़िर कराखिताई उसकी नाक में दम किए हुए थे और जिनके ही कारण गोरी वंशका उच्छेद हुआ।

कन्नौज-विजय के चार साल बाद ११९८ (५९४ हि०) में गयासुद्दीन के भाई-बन्धु मुहम्मद पुत्र मसऊद-पुत्र बहाउद्दीन साम ने कराखिताई सामन्त से बलख छीन लिया, तुर्क-राजा के मरने से उसे यह मौका मिल गया। बलख में इसी समय गयासुद्दीन के नामका ख़ुतबा भी शुरू हो गया। ख़्वारेज़्मशाह तेकिश कराखिताईयों का सामन्त ही नहीं था, बल्कि इस्लाम के खलीफ़ा के

साथ भी उसका अच्छा सबध नहीं था। यद्यपि बगदादी खलीफा अब नाममात्रके खलीफा थे, लेकिन मुसलिम जगतके पोप होनेके कारण अब भी उनका काफी सम्मान था। खलीफाकी इच्छानुसार गयासुद्दीनने तेकिशके विरुद्ध खुरासानपर चढाई की। तेकिशने कराखिताइयोसे मदद मागी। जमादी 11 (अप्रैल ११९८ ई०) में तायनकूके अधीन कराखिताई सेनाने वक्षु पार हो गूजगान और दूसरे पड़ोसी इलाकोंको उजाड़ा। उन्होंने सामसे माग की, कि बलखको छोड़ दो, नहीं तो कर देना स्वीकार करो। गोरियोने कोई उत्तर नहीं दिया, किन्तु साथ ही गयासुद्दीन अपने शत्रुओपर आक्रमण नहीं करना चाहता था, क्योंकि गोर सेनापति शहाबुद्दीन उस समय हिन्दुस्तान गया था। गयासुद्दीन स्वयं गठियाकी बीमारीमें पड़ा हुआ था और कंधेकी सवारीपर ही चल सकता था। रातके वक्त तीन गोर सेनापतियोने कराखिताइयोकी छावनी पर आक्रमण किया। कराखिताइयोमें रवाज था, वह रातको तबू नहीं छोड़ते थे और न सतरी रखते थे। दूसरे दिन जब कराखिताइयोको मालूम हुआ कि, गयासुद्दीन अपनी सेनाके साथ नहीं है, तो उन्होंने फिर लड़ाई जारी की। कराखिताइयोकी हार हुई, भागते वक्त उनमेंसे काफी वक्षुमें डूब गये। गोरी वशके ऊपरका पहिला भयकर सकट दूर हुआ और इस सफलताके बाद उसकी हिम्मत भी बढ गयी। तेकिशके बाद मुहम्मद ११९७ ई० में ख्वारेज्मकी गद्दीपर बैठा, जिसकी घोषणा ३ अगस्त १२०० ई० को हुई। मुहम्मद गद्दीपर तो बैठा, लेकिन मलिकशाहके पुत्र हिन्दूखानने उत्तराधिकारके लिये झगडा शुरू कर दिया। गोरियोने हिन्दू खानका समर्थन किया और खुरासानके कितने ही शहरोको ले लिया। गोरियोके बर्तावसे खुरासानी सतुष्ट नहीं थे। इसी बीचमें गयासुद्दीन मर गया और मुहम्मदशाहकी जानमें जान आई।

२. शहाबुद्दीन (१२०३-१२०६ ई०)

१२०३ ई०में शहाबुद्दीन हिन्दुस्तानमें लौटा और ख्वारेज्मशाहकी गुस्ताखियोंके लिये सीधे उसके ऊपर चढ दौड़ा। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने जब यह बात सुनी, तो भेवें छोड़ ख्वारेज्मको लौट गया और नहरका पानी तुड़वाकर भूमिको जलमग्न करा दिया, जिससे शहाबुद्दीनको ४५ दिन देर करने के बाद आगे बढनेका मौका मिला। करासूके पास लड़ाई हुई, जिसमें मुहम्मदकी हार हुई। शहाबुद्दीनने आगे बढकर गूरगजको घेर लिया। गोरियोकी क्रूरताकी इतनी दुःख्याति थी, कि नगरका एक-एक आदमी रक्षाके लिये उठ खड़ा हुआ। ६ मास तक शहाबुद्दीन खीवगीने हद्दीमोका प्रमाण दे-देकर देशके लिये लोगोको लडनेके लिये उत्तेजित किया और कहा—“अपने प्राण और सपत्तिके लिये मरनेवाला शहीद है।” इतिहासकार औफी इस वक्त गूरगजमें मौजूद था। उसके कथनानुसार नागरिकोको हथियारबन्द करना एक सैनिक चाल थी। राजमाता तुर्कान खातूनने ऐसा करके रोक-थाम की और उधर पुत्रके पास खुरासानमें खबर भेजी। इतना हथियार भी कहा से आता? सैनिकोके लिये कागजके शिरस्त्राण बनवाये गये थे। यद्यपि सेनाकी भी हालत कुछ ऐसी ही थी, लेकिन भारी सेनाको देखकर शहाबुद्दीनको हिचकिचाहट हुई। सप्ताह के भीतर ही मुहम्मद ख्वारेज्मशाह केवल सौ सवारोके साथ राजधानीमें पहुँचा। धीरे-धीरे चारो ओरसे सेनाये आकर जमा हुई और राजधानीको शहाबुद्दीनके हाथमें जाने नहीं दिया गया। इतिहासकार जुवैनीके अनुसार उस समय ख्वारेज्मी सेना की संख्या

७० हजार थी। कराखिताइयोसे भी मदद मांगी गयी थी। गोरियोका शिविर वक्षुके पूरबकी ओर था। शहाबुद्दीनने अगले दिन नगरपर आक्रमण करनेके लिये घाट दूढनेका हुक्म दिया। इसी समय सेनापति तायनकू तराज और उस्मान (समरकन्द-सुल्तान) के नेतृत्वमें भारी कराखिताई सेना आ पहुची। शहाबुद्दीनको विजयकी आशा नहीं रह गयी और वह जल्दी जल्दी पीछेकी ओर भागा। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने उसका पीछा किया और हजारासमें पहुचने पहुचते गोरीको बुरी तरह हराया। ख्वारेज्मी विजयोत्सव मनानेके लिये गूरगज लौट आये, लेकिन कराखिताई सेनाने गोरीका पीछा नहीं छोडा। अन्दखुदमे गोरी घिर गया। सितम्बरके अन्त या अक्तूबरके आरम्भ (१२०३) में दो मन्ताह तक लडाई होनी रही। भारत-विजेता शहाबुद्दीन गोरी काफिरो (बोद्धो) के हाथसे बुरी तरह हारा और उसने भागकर अन्दखुदके किलेमें शरण ली। रूमी इतिहासकारने लिखा है “उमकी अवस्था वही थी, जो कि सेर्दांमें नेपोलियनकी। यदि उसके भाग्यमें भी वही बदा नहीं निकला, तो वह समरकन्दके उस्मानकी कृपा थी, जो कि मुसलमान होनेके कारण नहीं चाहता था, कि इस्लामका सुल्तान काफिरोके हाथमें बन्दी बने।” उस्मानने गुरखानसे मुलहकी बातचीत करनेकी आज्ञा मांगी, और समझौता करा दिया। कराखिताइयोने गोरीको अपने देशमें लौट जाने दिया और केवल वैयक्तिक स्वतन्त्रताका मूल्य वसूल किया। शहाबुद्दीन जब मैदान छोडकर किले की ओर भागा जा रहा था, उस समय किलेके भीतर ले जाना संभव न देखकर उसने अपने हाथमें चार हाथियोंको मार डाला, दो को कराखिताइयोने पकड लिया, एक और बचा था, जिसे कि उसने मुक्ति पानेके समय दे दिया। शहाबुद्दीनका अर्थ है (धर्मका तारा)। अन्दखुदमे वह धर्मका तारा डूब गया। शहाबुद्दीन दीन-हीन होकर गजनी लौटा। राजधानीमें उसके मरनेकी खबरमें अशान्ति मची हुई थी। उसने वहां पहुंचकर व्यवस्था कायम की, और मुहम्मद ख्वारेज्मशाहमें नाक रगड कर मथि की। हिरात छोड सारा खुरासान मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके हाथोंमें चला गया।

१२०५ ई० के वसन्तमें बलखके राज्यपाल ताजुद्दीन जगी (फखरुद्दीन मसऊदके पुत्र) ने ख्वारेज्मशाहके प्रदेश पर बिना अपने सुल्तान (शहाबुद्दीन गोरी) के हुक्मके यकायक आक्रमण कर दिया। गोरियोने मेवंकूदको लूट लिया, लेकिन सरखशमें ख्वारेज्मियोंने उन्हें बुरी तरहसे हराया। जगी अपने दस सेनापतियोंके साथ बन्दी बना, और ख्वारेज्म में उन्हें कत्ल कर दिया गया। जो दिल्ली, कन्नौज और काशी तकपर इस्लामकी ध्वजा गाड चुका था, कैसे हो सकता था, कि वह शहाबुद्दीन अपने अन्तर्वेदके भाइयोंको काफिरो (बौद्धों) की गुलामी में छुडानेकी नहीं सोचता। आखिर वह इस्लामका सुल्तान था। खलीफा नासिरने अपने पत्रमें सलाह दी थी, कि ख्वारेज्म शाहको पहिले खतम करो और इसके लिये कराखिताइयोंके साथ मेल करो। खलीफाका भेजा हुआ वह पत्र गजनी में ख्वारेज्मियोंको मिला, जब कि उन्होंने कुछ ही माल बाद उस पर अधिकार किया। लेकिन शहाबुद्दीन कुछ नहीं कर सका। हिन्दुस्तानमें भी शहाबुद्दीनको सुल्तानके तौरपर उतना नहीं जाना जाता, जितना कि उसके द्वारा नियुक्त शासक कुतुबुद्दीन ऐबकको। १२०५ ई० की गरमियोंमें शहाबुद्दीनके हुक्मसे बलख गवर्नर इमादुद्दीन उमरने कराखिताइयोंके मजबूत किले तेरमिजपर आक्रमण किया। उस समय इमादुद्दीनका प्रसिद्ध पुत्र बहरामशाह तेरमिजका राज्यपाल था। इसी समय हिन्दुस्तानमें बगावत (विद्रोह) हो जानेकी खबर आयी, जिसके कारण इमामुद्दीन और आगे नहीं बढ़ सका। जुबैनीके

अनुसार वह हिंदुस्तान पर अभियानके लिये हुक्म देते कहा गया था, कि सेना और खजाना की व्यवस्था ठीक करके ही कराखिताइयो की ओर बढ़नेका विचार करो। १२०६ ई० के वसन्तमें शहाबुद्दीन गजनी लौटा और कराखिताइयोके ऊपर अन्तर्वेदमें अभियान करनेकी तैयारी करने लगा। बामियानके शासक बहाउद्दीनको उसने वक्षुपर पुल बाधनेका हुक्म दिया। सुल्तकानके हुक्मसे वक्षुके ऊपर एक गढ़ बनाया गया, जिसका आधा भाग दरियामे था। यह सारी तैयारी हो रही थी; इसी समय १३ मार्च १२०६ ई० को शहाबुद्दीन गोरी एक हिन्दूके हाथों मारा गया।

३ गयासुद्दीन II महमूद (१२०६-०७ ई०)

शहाबुद्दीनके मरनेके बाद उसका भतीजा तथा गयासुद्दीनका पुत्र महमूद गद्दीपर बैठा। उसमें बाप या चचाकी योग्यता नहीं थी। उसके विरुद्ध तुर्क गुलामों (गुलाम गारद) के नेताओंने विद्रोह करके गजनी पर अधिकार कर लिया। उनमेंसे एक कुतुबुद्दीन ऐबकका हिन्दुस्तानपर अधिकार पहिले ही से था। ख्वारेज्मशाहको भी अच्छा मौका हाथ लगा और “कराखिताइयोके हाथमें बलख प्रदेश चला जायगा”, यह बहाना करके उसने बलखको लेना चाहा, लेकिन वहाके गोरी राज्यपाल इमामुद्दीन उमरने ४० दिन तक आत्म-समर्पण नहीं किया और (१२०६ ई०) नवम्बरके अन्तिम दिनों में अपने साथ बलखको भी दे दिया। उसे बन्दी बनाकर ख्वारेज्म भेजा गया। तेरमिजके गवर्नरने भी कोई आशा नहीं देखी, तो अपने पिताकी सम्मतिसे कराखिताई राज्यपाल उस्मान (समरकन्द) के हाथमें उसे सौंप दिया। दिसम्बरमें ख्वारेज्मशाहने हिरातमें बड़े विजयोत्सवके साथ प्रवेश किया। गयासुद्दीन महमूदको उसने गोरियोंके पैतृक देश गोरका शासक बनाकर रख दिया, जिसने अपनेको ख्वारेज्मशाहको अधीनस्थ मान खुतबा और सिक्का उसीके नामसे जारी किया। गोरी की शक्तिको पूरी तौरसे ध्वस्त करके अपने राज्यकी सीमाको हिन्दूकुश तक पहुँचाकर मुहम्मद ख्वारेज्मशाह जनवरी १२०७ ई० में अपनी राजधानी को लौटा।

गोरियोंका उत्थान जितना जल्दी हुआ था, उसी तरह दो पीढ़ी के भीतर ही उनका पतन हुआ। अब मध्यएशियामें कराखिताई और उसके सामन्त ख्वारेज्मशाहकी शक्ति बच रही थी।

स्रोत-ग्रन्थ :

1. Turkistan Down to Mongol Invasion (W W Bartold)
2. Heart of Asia,
- 3 History of Bokhara (A Vambery)

अध्याय ६

ख्वारेज्मी (१०७७-१२३१ ई०)

§१. प्रवेशक

दसवीं शताब्दी में मामू-वंशी ख्वारेज्मशाहों का वर्णन हम कर चुके हैं।^१ इन्होंने सामानियों की निर्बलता से फायदा उठाकर शक्ति-संचय किया। पीछे इनका अपने मन्त्रधी महमूद गजनवी से झगडा हो गया, जिससे इस वंश का उच्छेद हुआ। मामून I अबुलहसन अली, और अबुल अब्बास मामून II (—१०१७) इस वंश के शासक थे।

अपने बहनोई मामून II के मारे जाने के बाद महमूद गजनवी ने अपने एक गुलाम अलतून ताश को १०१७ ई० में ख्वारेज्मशाह बनाया। उसके बाद हारून (१०३४-१०३५) ने शासन किया, जिसमें झगडा हो जाने पर भस्मरुद गजनवी ने अपने पुत्र सईद को वहां बैठाना चाहा, लेकिन उसमें सफलता नहीं हुई। इस वंश का अन्तिम ख्वारेज्मशाह इस्माईल था, जिसे भाग कर सल्जूकियों के यहां शरण लेनी पड़ी। सल्जूकियों ने तीसरे ख्वारेज्मशाह वंश की स्थापना की। यही इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण ख्वारेज्म वंश है, जिसके उच्छेद का श्रेय चिंगिस खान को है।

ख्वारेज्मी शाह—

१. अनोश तगिन	१०७७-९७
२. कुतुबुद्दीन मुहम्मद तत्पुत्र	१०९७-११२७
३. अतसिज तत्पुत्र	११२७-५६
४. इ अल्सलन तत्पुत्र	११५६-७२
५. महमूद सुल्तान तत्पुत्र	११७२-
६. तकाश अरसलनपुत्र	११७२-१२००

भारत में (गहड़वार)

चन्द्रदेव	१०८०-११००
मदन	११००-१४
गोविंद	१११४-५५
विजय	११५५-७०
जयचंद्र	११७०-९३
गोरी	११९३-१२०६

(गुलाम)

७. अलाउद्दीन मुहम्मद तत्पुत्र	१२००-२०
८. जलालुद्दीन तत्पुत्र	१२२०-३१

कुतुबुद्दीन	१२०६-१०
अलतमश	१२११-३६

§२. सुल्तान

१. अनोश तगिन (१०७७-१०९७ ई०)

मलिक शाह सल्जूकी (१०७३-१०९२ ई०) ने अपने तश्तदार बिलगतगिन को ख्वारेज्म

का राज्यपाल नियुक्त किया था, जिसके मरने के बाद उसका क्रीतदास अनोशतगिन ख्वारेज्म का राज्यपाल बना। यह अपने स्वामी सल्जूकी सुल्तान का सदा भक्त रहा। अनोशतगिन को सल्जूकी अमीर बिलगतगिन (बिलावेग) ने गरजिस्तान के एक आदमी से खरीदा था। बिलगा-तगिन द्वारा वह मलिकशाह के दरबार में पहुँचा, जहाँ अपनी योग्यता के कारण बहुत तरफ़की करते तागतदार के पदपर प्रतिष्ठित हुआ। इस विभाग के खर्च के लिये ख्वारेज्म प्रदेश का कर लगा हुआ था। जब वह प्रदेश का शासक नहीं बना था, उसी समय उसके पुत्र कुतुबुद्दीन मुहम्मद की शिक्षा-दीक्षा मेर्व में हो रही थी। १०९७ ई० में जब ख्वारेज्मशाह बिलगतगिन किची कुचकुर-पुत्र विद्रोही अमीरो द्वारा मारा गया, तो विद्रोह के दमन के लिये सुल्तान बर्कियारुक ने अमीरदाद अब्बासी अल्तूनताश-पुत्र को खुरासान का राज्यपाल नियुक्त किया, जिसने ख्वारेज्म का शासन अनोशतगिन के पुत्र मुहम्मद के हाथ में दे दिया।

२. कुतुबुद्दीन मुहम्मद (१०९७-११२७ ई०)

अनोशतगिन ने अपने पुत्र कुतुबुद्दीन को बहुत अच्छी तरहसे शिक्षा दी थी। सल्जूकी वंश में शिक्षाका कितना महत्त्व था, यह इसी से मालूम होगा कि प्रतापी सुल्तान सियर बिलकुल अनपढ़ था। शायद घुमन्तुओं को अपने खून के साथ यह भाव भी मिलता था, कि पढ़ने-लिखने से आदमी डरपोक हो जाता है। कुतुबुद्दीन मुहम्मद को पिताने आजन्म सल्जूकियों का नमकहलाल दास रहने की शिक्षा दी थी, लेकिन कुतुबुद्दीन ने गद्दी पर बैठते ही ख्वारेज्मशाह की उपाधि धारण की। इसीके समय से अन्तर्वेद पर कराखिताइयों के आक्रमण शुरू हुये। कुतुबुद्दीन को उनसे बुरी तरह हार कर कराखिताइयों को वार्षिक कर देनेके लिये मजबूर होना पड़ा। ११२७ (५२१ हि०) में इस हार के थोड़े ही दिनों बाद कुतुबुद्दीन मर गया और उसका पुत्र अतसिज गद्दीपर बैठा।

३. अतसिज^१ (११२७-११५६ ई०)

अतसिज कई साल तक सियर का तश्तदार बन मेर्व में रहा था। सियर पर उसका अत्यधिक प्रभाव था, जिससे दरबारी जलने लगे थे। इस पर वह सियर से आज्ञा लेकर ख्वारेज्म चला गया। ख्वारेज्म पहुँचते ही उसने स्वामी के प्रति विद्रोह कर दिया। सियर ने हमला किया जिसमें अतसिज का पुत्र इल-किलिच मरा, अतसिज ने सिर नवाया किन्तु सियर ने नाराज होकर अपने भतीजे सुलेमान शाह को ख्वारेज्म का राज्यपाल नियुक्त किया। अतसिज ने सियर के लौटते ही उसके भतीजे को मार भगाया। अब सारा ख्वारेज्म अतसिज के हाथ में था। ११४१ (५३६ हि०) में सियर का जोर देखकर अतसिज ने अपनी सहायता के लिये कराखिताइयों को बुलाया।

ख्वारेज्मशाह का वंशस्थापक वस्तुतः अतसिज था। उसके दोनों पूर्वाधिकारी सल्जूकियों के इतने विनम्र सेवक थे, कि वह चूँ भी नहीं कर सकते थे। आरम्भिक वर्षों में अतसिज भी सियर के प्रति बहुत भक्ति रखता था। अन्तर्वेद में सियर ने जितने अभियान किये, उनमें अतसिज भी साथ रहा। अतसिज ने उत्तर की ओर अपनी राजसीमा को बढ़ाने का प्रयत्न किया और वहाँ के अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान जन्द (सिरदरिया) और मनकिशलक प्रायद्वीप पर कब्जा

^१ Turkistan... Heart of Asia

कर लिया। सिर-दरिया और अराल समुद्र के उत्तर की ओर अभी घुमन्तुओं का अखंड देश था, जहाँ पर किपचक पशुपाल रहा करते थे। अब भी वह इस्लाम से अछूतें थे, जिसका यह अर्थ नहीं, कि उनके सरदारों में धर्म और संस्कृति का नितान्त अभाव था। अतिसज को इनके ऊपर आक्रमण करते जहाद के कर्तव्यपालन करने का भी मौका था। वह किपचक भूमि के बहुत भीतर तक बढ़ता चला गया, और काफ़िरो के सबसे प्रतापी खानी और सरदारों को जीतने में सफल हुआ। इस सफलता के थोड़े ही समय बाद उसने सिजर में विद्रोह किया। पहिले कह चुके हैं, कि गजनी के अभियान में लोगों ने अतिसज के विरुद्ध सिजर का कान भरा था, जिसके कारण उसने ख्वाई दिखाई थी, जिसमें अतिसज का भी मन बिगड़ गया। सिजर ने ११३८ के पतझड़ में यह बहाना करके ख्वारेज्म पर आक्रमण किया कि अतिसज ने बिना मेरी आज्ञा के ज़ाद और मनकिशलक पर आक्रमण करके वहाँ ऐसे मुसलमानों का खून बहाया, जो कि उत्तर के काफ़िरो से हमारे साम्राज्य के लिये ढाल का काम देने थे। सितम्बर ११३८ ई० में सुल्तान बलख से भारी सेना लेकर ख्वारेज्म की ओर चला। अतिसज ने हज़ारास्प के पास मजबूत किलाबन्दी की थी, लेकिन तो भी सिजर में १५ नवम्बर को उसे हारना पड़ा। बन्दियों में अतिसज का पुत्र भी था, जिसके सिर को कटवाकर आतक फैलाने के लिये सिजर ने अन्तर्वेद में भेज दिया। अतिसज भाग गया। सिजर अपने भतीजे सुलेमान मुहम्मद-पुत्र को राज्यपाल बना १० फरवरी ११३९ को मेर्र लौटा। अतिसज ने ख्वारेज्म लौटकर सुलेमान को भगा दिया। यही नहीं ११३९ (५३४ हि०) में उसने बुखारा पर भी आक्रमण किया और वहाँ के राज्यपाल यगी अली-पुत्र को पकड़कर कत्ल करवाया। अब अतिसज सिजर के पास अधीनता स्वीकार करने के लिये निवेदन किया और मई ११४१ के अन्त में राजभक्ति की शपथ लेने देर नहीं हुई कि वह उसे तोड़ने के लिये भी तैयार हो गया।

अन्तर्वेद में अब भी कराखानियों का राज्य था, यद्यपि उत्तरापथ के राज्य कराखिताईको को उनसे ले चुके थे। यह कह चुके हैं, कि कराखानी महमूद खान और उसके सैनिकों के झगड़े में उनके बिचवई बनने की बात को सिजर ने बड़े अपमानजनक शब्दों में ठुकरा दिया था, जिसके कारण कराखिताइयों ने अन्तर्वेद पर आक्रमण किया और ९ सितम्बर (११४१) को कतवान की महभूमि में सिजर को बुरी तरह हराया। उसी साल बुखारा पर भी उनका अधिकार हो गया और उन्होंने अपनी ओर से अल्पतगिन को बुखारा का शासक नियुक्त किया। यह भी कह चुके हैं, कि इस वक्त अतिसज ने कराखिताइयों को नहीं बुलाया था, यद्यपि प्रचार यही किया गया था, कि ख्वारेज्मशाह ने इस्लाम के सुल्तान (सिजर) के विरुद्ध काफ़िरो (कराखिताइयों) को बुलाया। कतवान की हार के बाद सिजर फिर अपने पुराने गौरव को प्राप्त नहीं कर सका। जहाँ तक अतिसज का संबंध था, उसके मुकाबले में वह अपने को अधिक शक्तिशाली समझता था। कतवान की हार के बाद अतिसज ने भी सिजर से बदला लिया। वह खुरासान में घुसा और २१ मई (११४१) को नेशापोर में अपने नामका खुतबा पढ़वाया। सिजर फिर सभल गया और ११४३ (५३८ हि०) में उसने ख्वारेज्म पर चढ़ाई की। अतिसज अधीनता स्वीकार करने के लिये मजबूर हुआ। इसी समय मार्च ११४४ ई० में गूजा ने बुखारा को लूटा और उसके किले को ध्वस्त कर दिया। अतिसज की बदनीयती का सिजर को पता लग गया और नवम्बर ११४७ में उसने तीसरी बार ख्वारेज्म पर आक्रमण किया, जिसमें फकीर आहूपोश ने बीच में पड़कर दोनों में समझौता करवाया,

तो भी अत्सिज ने सिजर से मुलाकात के समय कैसी घृष्टता का परिचय दिया, इसे हम बतला आये हैं। लेकिन उसके कारण सिजर ने फिर लड़ाई नहीं छेड़ी। सिजर के साथ फसे होने के समय ज़न्द और मनकिशलक को अत्सिज खो चुका था। कराखानी कमालुद्दीन को अत्सिज के साथ समझौता करने के लिये मजबूर होना पड़ा, फिर वह अत्सिज का आजन्म बन्दी बना।

जून ११५१ (रबी ५४७ हि०) में अत्सिज ने ख्वारेज्म से जाकर ज़न्द के विद्रोहियों पर आक्रमण किया। बीचके रेगिस्तानको एक सप्ताह में पारकर ८ रबी ५४७ हि० (२५ जून ११५१ ई०) को उसकी सेना सिर दरिया के किनारे पहुँची। ९ को वह ज़न्द के दरवाजे पर थी। अन्त में विद्रोही भाग गये या क्षमाप्रार्थी हुये और बिना खून-खराबी के ज़न्द पर फिर अत्सिज का अधिकार हो गया। अपने जेष्ठ पुत्र इल् अरसलन को राज्यपाल बनाकर उसने यह परिपाटी चला दी, कि ज़न्द का राज्यपाल सदा ख्वारेज्मशाह का युवराज हुआ करेगा। ११५३ के वसन्त में सिजर का सितारा बड़ी तेजी से डूबने लगा, जबकि गूजो ने दो बार सिजर को हराया, मेर्व को लूटा और अन्त में सिजर को बन्दी बनाकर वह सारे खुरासान में लूट-मार मचाते रहे। अत्सिज के लिये यह सुनहला मौका था। उसने पहिले अपनी शक्ति मजबूत की, फिर वह सिजर का पक्ष लेकर गूजो पर पड़ा। तब तक सिजर बन्दीखाने से भाग चुका था। अत्सिज ने कराखिताइयो की शक्ति को बढ़ते देखा था। वह समझता था, अगर मेर्ने सावधानी से काम नहीं लिया, तो सदियों का बना इस्लामिस्तान सल्जूकी-वंश के उच्छेद के बाद ही काफिरिस्तान बन जायेगा। लेकिन अत्सिज अपने मसूबो को पूरा नहीं कर सका था, कि खबूसान में ३० जुलाई ११५६ ई० को लकवे से उसकी मृत्यु हो गयी। यद्यपि अत्सिज ने सल्जूकियों के सामन्त के तौर पर ही प्राण छोड़ा था, लेकिन अब वस्तुतः सल्जूकी नहीं बल्कि ख्वारेज्मशाह इस्लाम का सुल्तान बनने वाला था, यह काम अत्सिज के पोतो और परपोतो ने किया।

४. इल्-अरसलन अत्सिज-पुत्र (११५६-११७२ ई०)

इल्-अरसलन को राजगद्दी शान्ति से नहीं मिली। इसके लिये उसे अपने कितने ही चचो को मारना पड़ा, भाई को अन्धा करना पड़ा, सुलेमान को कैद में डालना पड़ा तथा उसके अताबेग (अध्यापक-सचिव) ओगुलबेग को मरवाना पड़ा। २२ अगस्त ११५७ को वह गद्दी पर बैठा। शासन की बागडोर हाथ में लेते ही उसने सैनिकों की तनख्वाहे और अफसरों की जागीरे बढ़ा दी। उसी साल रमज़ान (अक्टूबर-नवम्बर) में मेर्व में पहुँचकर सिजर ने अरसलन को गद्दी पाने की सनद भेजी थी। ११५७ के वसन्त में सिजर ७५ साल की उमर में मर गया, उसके साथ ऐसिया की सबसे बड़ी सल्तनत का अन्त हो गया। सिजर का उत्तराधिकारी महमूद खान इल्-अरसलन का मित्र (मुखलिस) मात्र था, जबकि अत्सिज अपने को सिजर का “बन्दा” (दास) लिखा करता था। सल्जूकी खानदान का मुखिया अब इराक का शासक गयासुद्दीन मुहम्मद महमूद-पुत्र (११५३-११५९) था, जो कि मलिकशाह का तृतीय पुत्र था। वह चाहता था कि पूर्व की सीमा बढ़ाकर सल्जूकी साम्राज्य को फिर से स्थापित करे। लेकिन अब्बासी खलीफा के साथ उसका झगडा भी चल रहा था। इल्-अरसलन ने बीच में पड़कर खलीफा मुक्तफी (११३६-११६०) के वजीर को पत्र लिखकर कहा—“सुल्तान महमूद खुरासान को डाकुओं से और अन्तर्वेद को काफिरों (कराखिताइयो) की दासता से बचा सकता है।” लेकिन इसका कोई

फल नहीं निकला। आपसी झगड़े इतने बढ़ चुके थे कि सिजर का रहस्यमय राज्य भी केरमानी, शामी (सीरिया), इराकी और रूमी (क्षुद्रेसिया) के मलजूकी शासकों में बंट गया और इल्-अरसलन ख्वारेज्मशाह ही अब एशिया में सबसे शक्तिशाली मुसलमान सुल्तान रह गया।

अन्तर्वेद में कराखिताइयो का शासन अभी सुदृढ़ नहीं हो सका था। वह मीथे शासन न करके कराखानों राजकुमारों को अपनी ओर से शासक नियुक्त करने थे। कतवान के युद्ध के अनन्तर अरसलन खान महमूद का पुत्र इब्राहीम समरकन्द का शासक बनाया गया था। करलुकों ने जनवरी-फरवरी ११५६ (५५० हि०) में मार्कर उमकी लाश को बुखारा के पास कलाबाद की मरुभूमि में फेंक दिया। उसके बाद हमन तगिन का पुत्र जलालुद्दीन अली समरकन्द की गद्दी पर बैठा। उसने करलुकों के नेता पेगु खान का मार डाला और उसके पुत्र तथा दूसरे करलुक-नेताओं—जिनमें लाचिन बेग भी था—पर बहुत अत्याचार किये। करलुक सरदार भागकर इल्-अरसलन ख्वारेज्मशाह के पास पहुँचे। इल्-अरसलन उनका पक्ष करते जुलाई ११५८ ई० में सेना ले अन्तर्वेद पहुँचा। समरकन्द के खान ने कराकुल और जन्द बे'घुमन्तु तुर्कमानों से मदद मागी और कराखिताइयो के पास भी गुहार की। कराखिताई गुरखान ने इलक तुर्कमान के सेनापतित्व में १० हजार सेना भेजी। ख्वारेज्मशाह ने बुखारा के लोगों को दिलामा देकर अपने पक्ष में किया, फिर आगे बढ़कर रबिन्जान शहर को ध्वस्त किया। जरपशा के किनारे दोनों सेनाएँ आमने सामने हुईं। ख्वारेज्मी सेना मरुभूमि में अधिक थी, इसलिये इलक-तुर्कमान ने आगे बढ़ने में आगा-पीछा किया। समरकन्द के इमाम और मुल्ला बीच में पड़े, जिन्होंने लड़ाई नहीं हुई। इल्-अरसलन करलुक अमीरों को प्रतिष्ठा-पूर्वक उनके पदों पर बैठाकर ख्वारेज्म लौट गया।

११६४ (५५९ हि०) में गुरखान ने समरकन्द के खान को लिखा, कि करलुकों को मजदूर कर बुखारा और समरकन्द से काशगर भेज दो, यहाँ उन्हें बेहथियार करके खेतों या दूसरे कामों में लगा दिया जायेगा। खान ने गुरखान के आज्ञापत्र को करलुकों को दिखला कर काशगर भेजने के लिए जोर दिया। करलुक विद्रोही बन गये और उनकी समुक्त सेना बुखारा पर चढ़ दौड़ी। बुखारा का रईस (सद्र) मुहम्मद था, जिसका पिता उमर ११४१ में शहीद हो चुका था। उसने खान के पास प्रार्थना की, कि बुखारा को बचाने के लिये जल्दी सेना भेजो। साथ ही उसने करलुकों के पास दूत भेजकर कहलवाया, कि काफिर कराखिताई किसी प्रदेश को दखल करने के बाद लूट मार नहीं करते। तुम्हारे जैसे मुसलमानों और गाजियों का उम को रोकना कर्तव्य है। इस तरह की बातचीत में उसने करलुकों को भरमाये रखा और समरकन्द के खान को आक्रमण करने के लिये मौका दिया। यद्यपि करलुक हारे, किंतु जलालुद्दीन करलुकों को पूरी तौर से नष्ट नहीं कर पाया, यह इसीसे मालूम है, कि जलालुद्दीन अली के उत्तराधिकारी किलिच तमगाज खान मसऊद के समय उन्होंने फिर विद्रोह किया। जिस समय इल्-अरसलन ने अन्तर्वेद पर अभियान किया था, उसी समय खुत्तल के अमीर अबूशुजा फरखशाह ने तैरमिज पर असफल आक्रमण किया। खुत्तल कराखिताइयो के प्रभाव में था, इसलिये समझा जाता है, कि उन्होंने यह काम गुरखान की प्रेरणा से किया था। इल्-अरसलन ने खुरासान में कोई विशेष सफलता नहीं पाई। वहाँ गूज अमीरों और दूसरों के झगड़े चलते रहे।

११६५ (५६० हि०) में कराखिताइयो ने बलख और अन्दखुद को लूटा। यह वही अन्दखुद है, जहाँ इसके ४२ साल बाद शहाबुद्दीन गोरी को कराखिताइयो ने हरा कर गौर-राज्यवश की

मिटिया मेट कर दिया। पहिले ११६३ ई० में तमगाज खान मसऊद अली-पुत्र अन्तर्वेद में कुतलुक बिलका बेग और कुतुबुद्दीन की उपाधि के साथ गद्दी पर बैठा। ११६५ ई० में उसने गूजो द्वारा ध्वस्त बुवारा के किन्ने की पक्की ईंटों की बुनियाद पर फिर से मरम्मत करवाया। इसके शासन में करलुक अमीर ऐयार बेग ने विद्रोह किया था। यह भी स्मरण रखना चाहिये, कि भारत के प्रथम मुसलमान सुल्तान कुतुबुद्दीन का दामाद और पीछे दिल्ली का सुल्तान अल्तमश भी करलुक था। ऐयार बेग साधारण घर में पैदा हो अपनी योग्यता से आगे बढ़ा था। वह अद्वितीय सवार योद्धा समझा जाता था। एक सालतक वह अन्तर्वेद का प्रधान सेनापति भी रहा। विद्रोह करने पर खान ने उसपर आक्रमण किया और जमीन तथा सवात के बीच भूखी-मरुभूमि में दोनों का युद्ध हुआ। ऐयार लड़ते लड़ते खान (कुतलुक बिलका बेग) के पास पहुँच गया था, लेकिन इसी समय खान के सिपाहियों ने उसे पकड़कर कत्ल कर दिया। खान को करलुको और खुरासान में ध्वस्त गीला मचानेवाले गूजो से लड़ना पड़ा था। गूजो से लड़ने के लिये वह एक लाख सेना के साथ जाड़े में वक्षु पार हुआ। करलुकी के साथ उसकी लड़ाईयां नखशाब, किग, शगानियान और नेरमिज में हुई। उसने विद्रोहों को दबाकर शान्ति स्थापित की।

इल-अरसलन चाहें कितना ही शक्तिशाली शाह हो, लेकिन अभी भी वह कराखिताइयो का करद सामन्त था। वार्षिक कर न चुकाने के कारण ११७१ (५६७ हि०) में गुरखाती सेनाने ख्वारेज्म पर आक्रमण किया। ख्वारेज्म ने भी मुकाबिला करने का निश्चय किया। इस समय उसकी हरावल का सेनापति ऐयारबेग था, किन्तु यह करलुक ऐयारबेग नहीं था। ऐयार बेग हार कर खिताइयो का बन्दी बना। ख्वारेज्मशाह ने बाध तोड़कर फिर भूमि को जलमग्न कर दिया, जिसमें कराखिताई ख्वारेज्म की ओर न बढ़ सके।

मार्च ११७२ ई० में इल अरसलन मारा गया।

५: महमूद

तकाश इल-अरसलन का ज्येष्ठ पुत्र तथा जन्द का गवर्नर था, लेकिन छोटे भाई (महमूद सुल्तान शाह) और उसकी माँ तैरके ने उसे वचित करना चाहा था।

६. तकाश अरसलन-पुत्र (११७२-१२०० ई०)

तकाश उसे न मान कराखि-खिताई में प्रथम गुरखान की रानी तथा उसके पति फूमा (कर्मा) के पास चला गया था। फूमा बड़ी सेना के साथ तकाश का पक्ष लेकर ख्वारेज्म आया। कराखिताई सेनाको देखकर मा-येटी की हिम्मत टूट गई और वह भाग गये। सुल्तानशाह ने मूएइद से मदद मांगी। मूएइद मदद करने के लिये आया भी। सूत्ररली नगर के पास मरुभूमि के किनारे लड़ाई हुई और ११ जुलाई ११७४ ई० को मूएइद पकड़ कर मारा गया। सुल्तानशाह और उसकी माँ देहिस्तान की ओर भागे। तकाश ने शहरपर अधिकार कर तुर्कानाको पकड़कर मरवा डाला। सुल्तानशाह भागकर पहिले मूएइद के पुत्र तथा उत्तराधिकारी तुगानशाह अबूबक्र के पास गया, फिर सुल्तान गयासुद्दीन गोरी की शरण में पहुँचा।

तकाश कराखिताइयो को मदद से ११ दिसम्बर ११७२ ई० को ख्वारेज्म की गद्दी पर बैठा।

कराखिताई जानते थे, कि तकाश उनकी दया के भरोसे ख्वारेज्मशाह बना है। कर

उगाहने के लिये कराखिताई दूत—जोकि गुरखान का सबधी भी था—ख्वारेज्म आया। उसके शेखी और अपमानजनक बर्ताव से क्रुद्ध हो तकाश ने उसे मार डाला, और उसकी आज्ञा से अमीरो ने दूत के साथियों को भी मार डाला। यह खबर जब सुल्तानशाह को मिली, तो उसने कराखिताई रानी के पास जाकर उसे उभाडा और सारा ख्वारेज्म हमारे पक्ष में है, कहकर रानी के पति कर्मा के साथ सेना लिवा लाया। तकाश ने बाध तोडकर रास्ते की भूमि को जलमग्न कर दिया। ख्वारेज्म की तैयारी को देखकर कर्मा ने भी समझ लिया, कि सुल्तानशाह की बात गलत है। वह स्वयं लौट गया, तो भी सुल्तानशाह की प्रार्थना पर एक बाहिनी उसके लिये छोड गया, जिसकी मददसे उसने सरख्श के पास गूज शामकको हरा मेवं ले लिया। फिर १३ मई ११८१ को अपने पुगाने मददगार तुगानशाह को पूरी तीर में पराजित कर सरख्श और तूस पर भी कब्जा कर लिया। इस समय तुगानशाह तकाश के सामन्त के तीर पर नसापर शासन कर रहा था। ११८१ के अन्त में गोरी-दून अमीर हुसामुद्दीन बातचीत करने के लिये ख्वारेज्म आया। तकाश ने वचन दिया, कि अगले वसन्त में मैं सेना के साथ खुरामान आऊंगा और उमी समय गयासुद्दीन (गोरी) से मिलूंगा। हुसामुद्दीन जनवरी ११८२ ई० में ख्वारेज्म से विदा हुआ, उसके साथ तकाश का दूत फख्रुद्दीन भी था।

तकाश खुरामान के अभियान के लिये तैयारी करने लगा। इसी समय सुल्तानशाह का दूत ख्वारेज्म पहुँचा। तकाश ने उससे तुगानशाह के साथ शान्तिपूर्वक रहने की माग की। दूत ने अपने मालिक की ओर से इस बात को मानकर अधीनता भी स्वीकार कर ली। अब खुरामान पर अभियान करने का कोई कारण नहीं रह गया, तो भी तकाश ने अपनी तैयारी जारी रखी और इस बात की चिढ़ी भी गोरी के पास भेज दी। मई में तकाश ने जाकर सरख्श को घेर लिया और यहाँ से गोरी के पास भेजे एक पत्र में लिखा, कि सरख्श चन्द दिनों में सर हो जायेगा, फिर हम दोनों की मुलाकात का प्रबन्ध किया जायगा। पत्र में यह भी लिखा था, कि हमारे शासित सभी प्रदेशों की बाहिनिया इस वक्त हमारी सेना में हैं। सरख्श के जल्दी सर नहीं होने पर, सरख्श के दरवाजे से तकाश ने गयासुद्दीन के पास दूसरा पत्र लिखा। अल्पकारा ऊरान जाडे में काफिर कपचको की एक बड़ी सेना के साथ आ पहुँचा है। उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र फीरान युगुर के साथ और पुत्रों को भी भेजकर अधीनता स्वीकार करते अपनी सेवाये ख्वारेज्मशाह को अर्पित की। ख्वारेज्मशाह ने उन्हे जन्द के राज्यपाल शाहजादा मलिकशाह के पास भेज दिया है, और हुक्म दिया कि उनको साथ लेकर शाहजादा काफिरो पर हमला करे। ख्वारेज्मशाह इसी जाडे में गोरी सुल्तान की मदद करने के लिये आनेवाला था, लेकिन शत्रुओं के विरुद्ध गोरियों की सफलता की खबर सुन कर उसने अभियान रोक दिया। अगला पत्र तकाश ने गयासुद्दीन मुहम्मद गोरी के नाम जनवरी ११८३ ई० में लिखा था, जिसमें ख्वारेज्मशाह ने मुलाकात न करने के लिये अफसोस प्रकट किया और यह भी कहा, कि जरूरी काम के लिये अन्तर्वेद पर अभियान करना पड रहा है, छोडे बहुत थक गये हैं इसलिये नया सफर करना मुश्किल है।

अक्तूबर नवम्बर ११८२ में तकाश ने जो खत ईरानी अनावेग पहलवान के पास भेजे, उनमें कपचको का जिक्र है। अक्तूबर के पत्र में लिखा है, कि अल्पकारा-पुत्र फीरान को तकाश के परिवार से रिश्तेदारी का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसने पिछले साल की तरह इस साल भी

अपनी सेवाये अर्पित की है— पिछले साल उसने तराज (तलस) तक के बहुत विस्तृत प्रदेश को काफ़िरो के जूये से मुक्त कर दिया। नवम्बर के पत्र में लिखा था। तुर्क-भूमि से आकर क़िपचको की वाहिनिया बराबर ख्वारेज्मशाह की सेना में भरती हो रही है।

अन्तर्वेदके अभियानके सबधमें ताशने अपने वज़ीरके पास ख्वारेज्ममें चिट्ठी लिखी थी। वक्षु पार हो ख्वारेज्मशाहने एक वाहिनी बुखारा भेजी। सैनिकोंको हुक्म दिया, कि शान्तिप्रिय निवासियोंको कोई हानि न पहुँचाई जाय। लेकिन प्राकारबद्ध नगर राजद्रोही अत्याचारियों और ढीठ मुर्तिदोने—जो कि इस प्रान्तमें रहते कुफ़के शिकार हो गये थे—भारी जमात इकट्ठा कर ली थी। ख्वारेज्मशाहने दया दिखलाते हुए बहुत देर तक अपने सिपाहियोंको रोककर बागियोंको समझानेकी कोशिश की, लेकिन मालूम हुआ कि उनके कानोंमें भ्रान्तिकी रूई पड़ी हुई है, इसलिये मगलवार १२ अक्तूबर ११८२ ई० (५७८ हि०) को सैनिकोंने नगर पर आक्रमण कर दिया। एक मुहूर्तमें प्राकार पर अधिकार हो गया। विजयके बाद सेना लूट मचाना चाहती थी, लेकिन शाहने धार्मिक जनतापर दया दिखलाते हुए सेनाको लौटा लिया। वह जानता था, आक्रमणके बाद दखल किये शहरमें यदि लूट-मार मची, तो पीड़ितोंमें वह शान्तिप्रिय निवासी भी होंगे, जिन्होंने कि मजबूर हो काफ़िरोकी अधीनता स्वीकार की थी। इस पत्र से जान पड़ता है, पहिले आक्रमणको रोक दिया गया था। अगले दिन (बुधवार) तकाशने शहरके आत्मसमर्पण करने के लिये प्रतीक्षा की। शामके अंधेरेसे लाभ उठाकर विद्रोही सेनापतिने भागना चाहा, किन्तु वह अपनी एक हजार सेनाके साथ पकड़ा गया। ख्वारेज्मशाहने उसे माफ़ कर दिया। बुखारामें सेनाके आते समय एक सैयद इमामने बड़ी सेवा की थी। तकाशने इसके लिये उसको धन्यवाद दिया। सद्दे-जहान बुरहानुद्दीन द्वारा नियुक्त बदरुद्दीनकी मुर्दारिस-इमाम-ख़तीब और मुफ़्ती के पदों पर नियुक्तिको स्वीकार किया और हिदायत दी कि ख़ुतबेमें ख़लीफ़ाके साथ मेरा भी नाम पढ़ा जाय।

तकाश अब इतना बढ-बढकर हाथ मार रहा था, मानो अधिराज ग़ुरख़ानका अब कोई अस्तित्व ही नहीं है। गयासुद्दीन और शहाबुद्दीन गोरी काबुल और भारतमें कुफ़का चिराग बुझानेमें लगे हुए थे और तकाश क़िपचक भूमिको काफ़िरोसे विहीन करना चाहता था। लेकिन सभी काम बेख़टके नहीं हो रहे थे। उसके भाई सुल्तान शाहने ख़ुरासानमें अपना अड्डा जमा लिया था और गयासुद्दीन मुहम्मद गोरीकी बुरी ग़त कर दी थी। तकाशने जब यह बात सुनी, तो उसने गयासुद्दीनको डारस देते हुए लिखा—मैं पचास हजार तुर्कोंकी सेनाके साथ बिचवई करनेके लिये आ रहा हूँ। इस पत्रमें तकाशने गयासुद्दीनको भाई नहीं बल्कि पुत्र कहकर संबोधित किया। ख्वारेज्मशाह पूरबके सारे इस्लामिक शासकोंको अपने अधीन बनानेकी इच्छा रखता था, यह इससे स्पष्ट है। ११८३ ई० की गरमियोंमें तकाश सेना-सहित ख़ुरासान पहुँचा और शायद इसी कारण गयासुद्दीन मुहम्मद गोरी की स्थिति अच्छी हो गई।

१५ अप्रैल ११८५ ई० को तुग़ानशाह मर गया और उसका पुत्र स़िजरशाह ख़ुरासानके तख़्तपर बैठा। देशमें बराबर अशान्ति मची रही। अधिकांश प्रदेश तकाशके भाई सुल्तानशाहके हाथमें था। तकाशने मध्य जून ११८७ ई० में नेशापोर ले लिया, और जन्दके भूतपूर्व गवर्नर अपने ज्येष्ठ पुत्र मलिकशाहको वहाँ का शासक बनाया। स़िजरशाहको पकड़कर उसने ख्वारेज्म भेज दिया। जब पता लगा कि वह नेशापोर वालोंसे गुप्त बातचीत कर रहा है, तो उसे अन्धा

करा दिया। २९ सितम्बर ११९३ ई० को मुल्तानशाह मर गया। अब मेर्व भी तकाश का हो गया। इसी सालके अन्तमें उसने मलिकशाहको मेर्वका राज्यपाल और उसके भाई मुहम्मदको नेशापोरका शासक बनाकर भेजा।

सल्जूकी मुल्तान तुगरलने बगदादके खलीफा नासिरका नाकमें दम कर रखा था। खलीफा अपने बच्चे-बुच्चे राज्यको बचाना चाहता था। मुल्तान तुगरल और उसके अताबेग लोगोको समझा रहे थे—“यदि खलीफा इमाम है, तो उसका कर्तव्य है नमाज पढ़नेमें लगा रहना। उसकी इज्जत और सम्मान इसीलिये है, कि वह अपने आचरण द्वारा लोगोके सामने उदाहरण पेश करे। यही उसके लिये काफी है, यही सब्बी दादाशाही है। लौकिक शासनके कामोंमें खलीफाका दखल देना बेसमझीकी बात है। यह काम मुल्तानोके जिम्मे दे देना चाहिये।” इसकी वजहसे मुल्तान तुगरलके खिलाफ हो गये थे, क्योंकि वह खलीफाके पक्षपाती थे।

खलीफाके बुलानेपर १९ मार्च ११९४ को तकाशने रे (तेहरान) के पास तुगरलकी सेनापर आक्रमण किया। तुगरल बहादुरीसे लड़ते हुए युद्ध-क्षेत्रमें मारा गया। तकाशने रे और हमदानपर अधिकार कर लिया। अब (११९४) तकाश एशियाका सबसे बड़ा मुसलमान सुल्तान था। खलीफाको अब अकल आयी और समझा, तकाश कम खतरनाक नहीं साबित होगा।

(बौद्ध, ईसाई, जर्थुस्ती)

११९५ ई० में तकाशने मिर-दरियाके उत्तरके तुर्कोंकी खबर ली। काइर तुकू खान वहाके काफिरोका नेता था। उसके विरुद्ध धर्म-युद्ध (गजवा) घोषित करने हुए तकाशने मिगनाकपर अभियान किया। जन्दमें ख्वारेज्मी सेनाके आनेकी खबर सुनकर तुकू खान भाग निकला, लेकिन ख्वारेज्मी सेनाने उसका पीछा किया। ख्वारेज्मीकी सेनामें उत्तरके धुमन्तुओं की भी वाहिनिया रहती थी, यह पहिले कह आये है। उरानियान कबीलेकी एक वाहिनी के मददगारने तुकू खानको सूचित किया, कि युद्धके समय हम ख्वारेज्मीयोका साथ छोड़ देंगे। इसमें उत्साहित हो शुक्रवार १९ मई (११९५ ई०) को तुकू खानने युद्ध छोड़ा। उरानियानोंने अपने वचनके अनुसार तकाशकी सेनाका साथ छोड़ दिया और उसकी रसद और सामानको लूट लिया, जिसके कारण मुसलमानोंकी घोर पराजय हुई। बहुतसे युद्धमें मारे गये, और उससे भी अधिकने मर-भूमिमें भूखो-प्यासों प्राण खोये। १८ दिन बाद ख्वारेज्म लौट कर तकाशने सालके बाकी समयको “इराक” में बिताया। उसी सालके अन्तमें काइर तुकू खान और उसके भतीजे अल्प दरकमें झगडा हो गया। भतीजा तकाशके पास जन्दमें सहायता मागने आया। तकाशने स्वीकार किया। शाहजादा कुतुबुद्दीन मुहम्मद जनवरी ११९८ ई० में नेशापोरसे ख्वारेज्म आया। तकाशने उसे अल्प दरककी मददके लिये भेजा। खान हार कर अपने कितने ही अमीरोंके साथ बन्दी बना, और बेड़ी पहनाकर फरवरी में ख्वारेज्म लाया गया। उसके कबीलेने अल्प दरकको अपना खान माना, किन्तु वह काफिर इस्लामके गाजीका भक्त अधिक दिनों तक नहीं रहा और उसने भी चचाका पथ पकड़ा। “लोहे को लोहा काटता है” की कहावतके अनुसार तकाशने भूतपूर्व खान (तुकू खान) को जेलखानेसे छोड़ अल्पदरक (अल्पकारा) के विरुद्ध भेजा। अगले साल श्रुभ समाचार (खबर वशारत) मिला, कि तुकू खान विजयी हुआ।

गोरियोंके प्रकरणमें हम कह चुके हैं, कि बहाउद्दीन (बामियान-शासक) ने ११९८ ई० में कराखिताई शासकसे बल्लू छीनकर वहा पर गयासुद्दीन मुहम्मद गोरीके नाम से खुतबा पढवाया। इस कामको तकाश अपने विरुद्ध समझता था। अब तक गोरी सुल्तान और ख्वारेज्मशाह हिन्दुस्तान और किपचकके काफ़िरोको परास्त करने में एक दूसरेकी सहायता करते रहे। लेकिन जान पड़ता है, तकाशके इरादेको जानकर, अब गयासुद्दीन भी तन गया था, इसीलिए उसने बल्लू पर प्रहार किया। तकाशने गयासुद्दीनके खिलाफ कार्यवाही करनेके लिये कराखिताइयोसे भी मदद माँगी। उस समय शत्रुकी भारी शक्तको देखकर गयासुद्दीन हमला नहीं करना चाहता था, क्योंकि यद्यपि भारत (दिल्ली) विजय किये हुए ६ वर्ष हो गये थे, और ४ वर्ष पहिले कन्नौज भी विजित हो चुका था, किन्तु अभी वहाँ विद्रोह शान्त नहीं हुए थे, इसलिये गोर-सेनापति शहाबुद्दीन हिन्दुस्तानमें फसा हुआ था। अन्तमें धोखेसे कराखिताइयोके शिविरपर आक्रमण करके गोरी-सेनाने भारी सफलता प्राप्त की। इस हारका दोष कराखिताइयोने ख्वारेज्मशाह पर लगाकर प्रत्येक निहत सैनिकके लिये १० हजार दीनार हर्जाना माँगा। तकाशने गयासके पास सहायताके लिये पत्र भेजा। गयासने शर्त रखी—इस्लामके खलीफाकी अधीनता स्वीकार करो और कराखिताइयोके आक्रमणसे जो नुकसान हुआ है, वह हमारी प्रजाको दे दो। जब गयाससे समझौता हो गया, तो तकाशने गुरखानको लिखा—“आपकी सेनाने केवल बल्लू को दखल करनेकी ही कोशिश की, उसने हमारी कोई सहायता नहीं की। मैं न आपकी सेनासे मिला, और न उसे मैंने नदी (वक्षु) पार करनेकी आज्ञा दी। अगर मैंने ऐसा किया होता, तो आपकी माँगके अनुसार पैसा देता। अब जब कि आप गोरियोका कुछ नहीं बिगाड़ सके, तो मुझसे माँग कर रहे हैं। मैंने अब गोरियोसे समझौता कर लिया है। मैंने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली है, अब मैं आपके अधीन नहीं रहा।”

इस तरहका मुहफ़्त जवाब सुनकर कराखिताई कैसे चुप रहते? वह ख्वारेज्मकी राजधानी को घेर कर प्रति रात छापा मारते रहते। इसी समय काफी सख्यामें गाजी तकाशसे आ मिले, जिसपर कराखिताइयोको लौट जाना पड़ा। तकाशने उनका पीछा करते हुए बुखारा को जा घेरा। बुखारा-निवासी इस्लामके सुल्तानके नहीं बल्कि काफ़िरोके वफादार रहे, और उनकी तरफसे लड़े। तकाश एक आखका काना था। बुखारा वाले कराखिताइयोकी शक्तिपर विश्वास करते थे, इसलिये उन्होंने कफ़तान और ऊची नुकीली टोपी पहनाकर एक काने कुत्तेको प्राकारके ऊपरसे “ख्वारेज्मशाह” कहकर प्रदर्शित किया। इसके बाद कुत्तेको कतापुलत (युद्धयन्त्र) द्वारा दुश्मनके शिविरपर फेंकते हुए चिल्लाकर कहा “यह है तुम्हारा सुल्तान”। ख्वारेज्मवाले बुखारियों को मुर्तित (धर्मसे पतित) कहते थे। अन्तमें बुखारा तकाशके हाथमें चला गया। उसने दया दिखलाने लोभोमें बहुत सा पैसा बाटा और कुछ समय बाद वहासे ख्वारेज्म लौट गया।

खलीफाके वजीर मुईनुद्दीनने बड़ी घृष्टतापूर्वक वर्ताव किया और कहा—चूँकि सुल्तान (तकाश) को यह दर्जा हमारे यहासे मिला है, इसलिये उसे वजीरसे मिलनेके लिये घोड़ेसे उतर कर आना चाहिये और वजीरके तबू में खलअत ले जाना चाहिये। तकाश ऐसा करनेसे इकार कर तुरन्त वहासे लौट पड़ा। उस समय तो बीच-बचाव हो गया, लेकिन वजीरके मरनेके बाद (जुलाई ११९६ ई० में) तकाशने खलीफाकी सेनापर आक्रमण कर उसे बुरी तरहसे हराया। मृत वजीरको दंड देनेके लिये उसके शवको कब्रसे निकाल उसका सिर काटकर ख्वारेज्म भेज

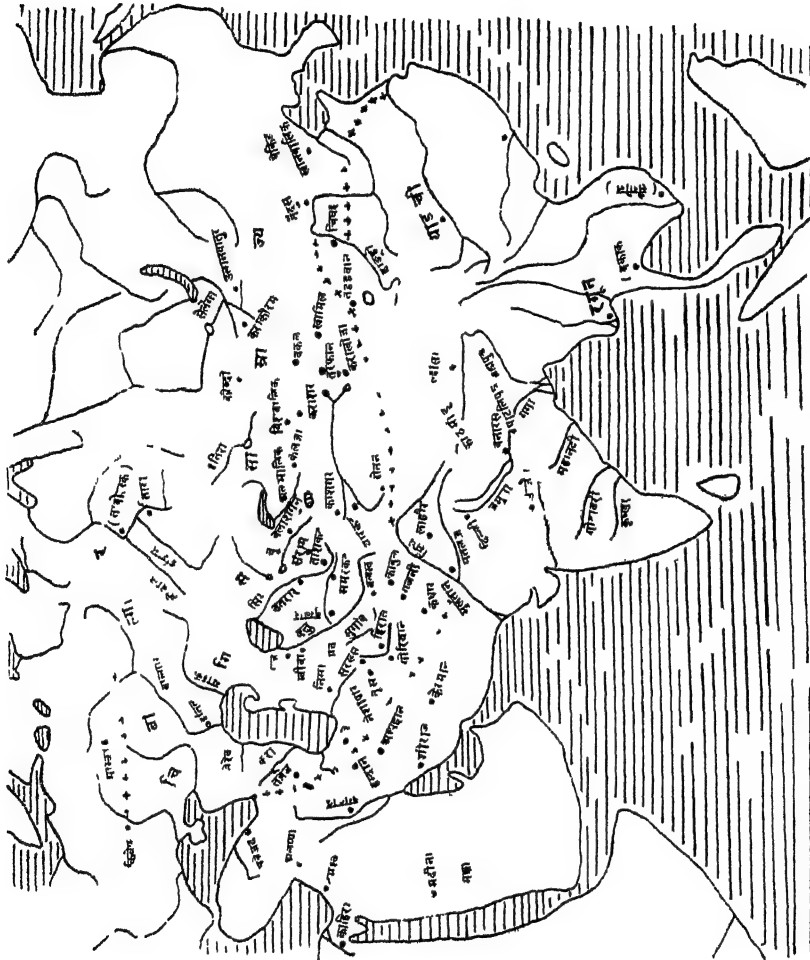
दिया। इसके बाद भी खलीफाका कहना था, कि ख्वारेज्मशाहको पश्चिमी ईरानकी ओर नजर न दौडानी चाहिये। तकाशने जवाब दिया—इतना पर्याप्त नहीं है, मेरी असह्य सेनाके खर्चके लिये इराक-अजमकी आदमनी बहुत कम है, इसलिये खुजिस्तान भी मिलना चाहिये। अतिम जीवनमें तकाशने बगदादमें भी अपने नामका खुतवा पढे जानेकी माग की। यही से ख्वारेज्म शाह और अब्बासियोंका भारी झगडा उत्पन्न हुआ, जिसका अन्त मंगोलो द्वारा दोनों वंशोंके उच्छेदके साथ हुआ। ख्वारेज्म सेनाने इस समय बड़ी बरवादी मचाई। इतिहासकार राबन्दीके अनुसार तकाशके सेनापति मायाचुकने उसमें भी अधिक क्रूरता दिखलायी, जो कि गुज्जोने खुरासान में, अथवा पीछे मंगोलोंने इराकमें की थी। जब इसकी शिकायत तकाशके पास पहुची, तो उसने मायाचुकको पदच्युत कर दिया और ख्वारेज्ममें आनेपर उसे कत्ल करवा दिया। बगदादमें रखी सेनाकी हालत भी बेहतर नहीं हुई। ११९४ ई० में—जिस साल शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरीने जयचन्द्रको हराया—खलीफाने पाच सौ सवार इराक-अजम भेजे। उन्होंने वहां पर रखी हुई ख्वारेज्मी सेनाको लूटकर मार भगाया।

तकाश ३ जुलाई १२०० ई० को मरा। यह खबर मिलनेपर इराक-निवासियोंने ख्वारेज्म की रही सही सेना को भी खतम कर दिया।

७. मुहम्मद तकाश-पुत्र (१२००-१२० ई०)

तकाशका बडा लडका मलिकशाह पिताके जीवनमेंही ११९७ई०में मर गया था, इसलिये द्वितीय पुत्र मुहम्मदकुतुबुद्दीन (धर्म-ध्रुव) और अलाउद्दीनकी उपाधिकेसाथ गद्दी पर बैठा। उसके गद्दीपर बैठनेकी घोषणा ३ अगस्त १२०० ई० को हुई। मलिकशाहका पुत्र हिन्दूखान गद्दीका दावेदार था। गोरियोंने उसका समर्थन किया, जिनकी सहायतासे खुरासानके कितने ही शहरोंको उसने ले लिया। लोग लूट-खसूटके कारण हिन्दूखान से असन्तुष्ट हो गये। उधर उसका सरक्षक गया-सुद्दीन भी मर गया। उसी वक्त मुहम्मदने अपने भतीजेपर धावा बोल दिया और १२०३ ई० तक उसने खुरासानके अपने सारे राज्यको वापस ले लिया। १२०४ ई० के वसन्तमें उसने और आगे बढ़ बादगियोंको लूटा और हिरातपर भारी कर लगाया। हिरात पर तकाशका कभी अधिकार नहीं हुआ था, इसलिये भारत-विजेता शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरीको बुरा लगना ही था। वह भारतसे लौटते ही सीधे ख्वारेज्मपर चढा। मुहम्मद जल्दी जल्दी मेर्बसे ख्वारेज्म लौटा। भूमिको जलमग्न कर गोरीकी सेनाको आगे बढ़नेमें ४५ दिनकी देर करा सका, लेकिन ख्वारेज्मियों की हार हुए बिना नहीं रही। गोरीके वर्णनमें हम बतला चुके हैं, कि किस तरह कराखिताइयोंकी मदद पहुंचनेके कारण ख्वारेज्मकी राजधानी शहाबुद्दीनके हाथमें जानेसे बची, उसे लौटना पडा और अन्तमें कराखिताई सेनाके हाथमें अन्दखुदमें ऐसी पराजय खानी पडी, जिससे वह फिर सफल नहीं सका। शहाबुद्दीन गजनी भागा। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके साथ इस्लामके सुल्तानको नाक रगडकर सधि करनी पडी। अब हिरात छोड सारा खुरासान ही ख्वारेज्मशाहके हाथमें नहीं चला गया, बल्कि इस्लामका सुल्तान अब गोरी नहीं ख्वारेज्मशाह बना। १३ मार्च १२०६ ई० को जातीय बदला लेनेके लिये हिन्दुओंने जब शहाबुद्दीनको मार डाला, तो इस्लामी दुनियामें मुहम्मद ख्वारेज्मशाहका कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं रह गया। शहाबुद्दीनके भतीजे गयासुद्दीन महमूदके समय रहा सहा गोरी साम्राज्य भी छिन्न-भिन्न हो गया। तुर्की गुलामोंने गोरी राज्यको बाट

लिया। ख्वारेज्मशाहने भी इससे फायदा उठाया और दिसम्बर १२०६ ई० को हिरातमे विज-योत्सव मनाते हुए प्रवेश किया। गयासुद्दीन महमूद अब उसका एक सरदार भर था, जिसे गोरमे शासन करनेका अधिकार दिया गया। खुतबा और सिक्के ख्वारेज्मशाहके चलने लगे। जनवरी १२०७ ई० मे ख्वारेज्मशाह अपनी राजधानीको लौट गया।



१२ खिगिह ताबारय (१२२० ई०)

पूर्वी इस्लामी जगत अब फिर एकताबद्ध होने लगा। शक्तिशाली होते भी तकाशने कराखिताइयोकी अधीनतासे इन्कार नहीं किया और वही शिक्षा वह अपने पुत्रको भी दे गया था, लेकिन मुहम्मद उसे भूल गया। उसने १२०८ ई० मे कराखिताइयोकी भूमि पर चढाई की और उसे बुरी तरहसे हार खानी पडी। अगले साल की चढाईमे उसे सफलता मिली और उत्तरार (फाराब) और तराज तकका प्रदेश उसने ले लिया। इसी समय कराखिताई साम्राज्यके पूरबी सीमान्तपर खतरा पैदा हो गया। १२०७ ई० मे चिगिसने नैमन तुर्कोके खान तायङ्ग को हराकर मारा डाला था। उसका पत्र कचलक (गचलक) भागकर गरखान (कराखिताई) के

दरबार में शरणागत हुआ। दो वर्षों के भीतर ही कुचलुकने किम तरह गुरखान के साम्राज्य को अपने हाथ में कर लिया, यह हम पहिले बतला चुके हैं। कुछ मरुताना के बाद भी ख्वारेज्मशाहने अभी कराखिताई को कर देने में इन्कार नहीं किया। लेकिन १२०९ (६०७ हि०) में जब कराखिताई दूत कर उगाहने के लिये राजधानी गुरगाज में आया और तख्त पर शाह की बगल में बैठा, तो इस्लाम के सुल्तान को यह सह्य नहीं हुआ और उसने उसे वधु नदी में फेंकवाकर मरवा दिया। यह कराखिताई साम्राज्य के प्रति युद्ध-योग्य था, इसलिये "प्रतिरक्षामे आक्रमण बेहतर होता है" इस नीति का अनुसरण करते हुए मुहम्मदने कराखिताई राज्य पर अभियान किया। बुखारा लेकर वह समरकन्द पर बढ़ा। समरकन्द के कराखिताई शामक उस्मानने उसका स्वागत किया। आगे बढ़ते हुए ख्वारेज्मशाहने मिर-नदी के पार मितम्बर (१२१० ई०) में इलामिश के मैदान में कराखिताई सेना को हराकर उसके सेनापति नायङ्कू को बन्दी बना ख्वारेज्म भेजा और उसे भी वधु में फेंकवाकर मरवा दिया। मुहम्मद ख्वारेज्मशाह का सितारा ओज पर था। अन्त-वैदका शासक उस्मान भी अब ख्वारेज्मशाह के पक्ष में था। उधर गुरखान को हाथ की कठपुतली बना कुचलुकने शासन को मजबूत किया था। कुचलुकने गुरखान की एक रानी को व्याहा और दो माल बाद (१२१२ ई० में) जब गुरखान मर गया, तो स्वयं नया गुरखान बन गया।

१२०८ के वसन्त में मुहम्मदने खुरामान जाकर वहाँ की अशान्ति दूर की। हिरान के राज्यपालने ख्वारेज्मशाह के मरने की अफवाह सुनकर गोरी झडा खडा करने की चेष्टा की थी। ख्वारेज्मशाहने राज्यपाल को उसके किये का दंड दिया। नेशापोर के राज्यपाल कजली (कजलिक) ने भी विद्रोह किया था। ३० मार्च १२०७ ई० को ख्वारेज्मशाह बड़ा पटुचा। कजलिक का पुत्र अन्तर्वेद की ओर भागकर कराखिताईयों के पास पटुचना चाहता था। उसे और उसके साथियों को वधु तट पर पकड़कर मरवा दिया गया। कजलीने कहीं भी रक्षा की संभावना न देखकर ख्वारेज्मशाह की मा तुर्कान (तेरेकिन) खातून की शरण लेनी चाही और वह गुरगाज पटुचा। तुर्कान खातून बड़ी जबर्दस्त स्त्री थी। उसका लडका भी उससे बहुत दबता था, लेकिन कजली के अपराध की गुहता को वह समझती थी, इसलिये उसने अपने पति तकाश के मकबरे में शरण लेने की राय दी। ऐसा कहकर भी अन्त में तेरेकिन खातूनने कजलिक का सिर कटवा कर पुत्र के पास भिजवा दिया और अपने सब धी की मदद नहीं की।

१२०८ (६०५ हि०) में दिन को ख्वारेज्म में एक भारी भूकम्प आया, जिससे राजधानी में दो हजार आदमी मर गये, बाहर भी बहुत से लोग हताहत हुए, दो गाव धरती के गर्भ में चले गये।

१२०९ ई० में कराखिताई दूत महमूद वाय कर मागने के लिये आया था। उसका जो परिणाम हुआ, उसे हम बतला चुके हैं। समरकन्द का शासक उस्मान ख्वारेज्मशाह का बड़ा सहायक हुआ। उसे शादी करने के लिये ख्वारेज्म बुलाया गया था, लेकिन तुर्कान खातूनने तुर्की प्रथा का बहाना बनाकर एक साल ससुराल में रहने को कहा, जिसे उस्मानने स्वीकार किया। १२११ के वसंत के अभियान में समरकन्दियों की मनोवृत्ति से डरकर वह अपनी पत्नी-सहित समरकन्द चला गया। उस्मान को ख्वारेज्म का जो तजर्बा हुआ, उसके कारण उसने गुरखान से सबध जोड़ना ही अच्छा समझा। इसी समय उत्तरी सप्तनद में मंगोल सेनापति कुबिलेनोयनने वहाँ के राज-कुमार के बुलाने पर आक्रमण किया और कराखिताई राज्यपाल को मार डाला। मंगोल काफिर थे, तब भी उस्मानने जब उनकी सफलता की अतिरिजित बात सुनी, तो काफिरोका जुआ उसे

पसन्द आया। उसकी प्रजा भी उससे सहमत थी। ख्वारेज्मशाह अपने दिग्विजयोमे बड़ा धन खर्च कर रहा था। आखिर उसका सारा भार लोगो पर ही पड़ रहा था, इसलिये वह क्यों इस्लामके सुल्तानको पसन्द करने लगे? समरकन्दियोने ख्वारेज्मियोको लूटना मारना शुरू किया। खबर पाकर ख्वारेज्मशाह चढ़ आया। समरकन्दने आत्मसमर्पण किया। उस्मान भी शरणमे आया। शायद ख्वारेज्मशाह क्षमा भी कर देता, लेकिन उसकी पुत्री तथा उस्मानकी बीबी क्षमा करनेके लिये तैयार नहीं थी, इसलिये उसे मारना पड़ा। गुरगाज एक कोनेमे था। वहासे अफगानिस्तान और ईरान तक फैले साम्राज्यका शासन करना कठिन था, इसलिये अब एक तरह से समरकन्द ही ख्वारेज्मशाहकी राजधानी बन गया। उसने वहां एक जामामस्जिद बनायी और एक बड़ा महल बनाने का काम शुरू किया। कराखिताइयोकी ओर के इलाकोको उसने छीन लिया।

गुरखान मर गया। गुचलुक से युद्ध करनेका बहाना करते हुए मुहम्मदने कहा गुरखानने अपनी कन्या तफगाच खातूनको व्याहर्न और अपने सारे खजानेको दहेजमे देनेका वचन दिया था, इसलिये राजकन्या और खजानेको भेजो, और केवल दूरके प्रदेशोपर ही अपना शासन रखो। गुचलुककी स्थिति अच्छी नहीं थी। उसके दुश्मन मंगोल उसे क्षमा करनेवाले नहीं थे। गुचलुकने अपने शासनमे मुसलिम धर्मान्विताका उत्तर अपनी धर्मान्वितासे देना चाहा, लेकिन अब तरिम-उपत्यका और सप्तनद मुसलिम-भूमि थी। वहाके मुसलमानोने धार्मिक आन्दोलन किया। इस आन्दोलनसे फायदा उठाकर एक भूतपूर्व डाकूने कुल्जा प्रदेशमे अपना स्वतंत्र राज्य कायम कर लिया। गुचलुकने इसे बड़ी बुरी तरहसे दबाया। १२१३ ई० के आसपास ख्वारेज्मशाहने मुसलमानोकी मददके लिये अपनी सेना राजधानी विशवालिक् भेजा। लेकिन लोगोने गुचलुकका साथ दिया। फिरसे व्यवस्था स्थापित करनेके बाद गुचलुकने मुसलमान आन्दोलनकारियोपर—विशेषकर पूर्वी तुर्किस्तानमे—बड़ी क्रूरता दिखलाई। ख्वारेज्मशाह अपने सहधर्मियोकी मदद करनेके लिये नहीं आया, यहा तक की अन्तर्वेदके उत्तरी इलाकोको भी वह गुचलुकके अत्याचारोसे नहीं बचा सका। १२१४ की गर्मियोमे कराखिताई सेनाके समरकन्दपर आक्रमण का बड़ा भय था। ख्वारेज्मशाहकी इतनी हिम्मत नहीं हुई, कि आगे बढ़कर गुचलुकसे लोहा ले। उसने इस्फिजाव, शाश, फरगाना और काशानके लोगोको आदेश दिया, कि वह देश छोड़कर दक्षिण-पश्चिममे चले आये, जिसमे कि गुचलुकके हाथमें न पड़े। सिर-दरियाके उत्तरी तटवाले फरगाना प्रदेशको उसने उजाड़कर वरबाद कर देनेकी आज्ञा दी, जिसमे गुचलुकके हाथमे कोई चीज न पड़े। यह ऐसा समय था, जबकि ख्वारेज्मशाहको चारो ओर गुचलुक ही गुचलुक (कुचलुक) दिखलायी पड़ता था, डर लग रहा था, कही फिरसे उसे अपना सारा राज्य खोना न पड़े और पूरबी इस्लामिस्तानपर धर्मान्ध काफिरोका अखंड राज्य कायम हो जाये।

किपचक मरुभूमिकी तरफ ख्वारेज्मशाहको ज्यादा सफलता मिली। शिगनाक अब ख्वारेज्म राज्यमे था। ज़न्दसे ख्वारेज्मियोने उत्तरकी किरगिज मरुभूमिके किपचकोपर आक्रमण किये और इमी अभियानमे मंगोल सेनासे ख्वारेज्मियोकी टक्कर हो गयी, इसे हम पहिले बतला चुके हैं। यद्यपि मंगोलोकी सेना बहुत बड़ी नहीं थी, तो भी मुकाबिला जितना कठोर रहा, उसके कारण मुहम्मद ख्वारेज्मशाह की हिम्मत नहीं हुई, कि सबेरे भाग निकली मंगोल सेनाका पीछा करे।

अपने समसामयिक मुसलमान शासकोमे मुहम्मद ख्वारेज्मशाह सबसे बड़ा था, इसमे सदेह

नहीं। १२१५ ई० में अपने पुत्र जलालुद्दीनको उसने गोरियोंके राज्यका शासक बनाया। जिस समय सुल्तान अन्तर्वेदमें कराखिनाई घुमन्तुओंके आक्रमणकी चिन्तामें पड़ा हुआ था, उसी समय उसके सेनापतियोंने प्रायः सारे ईरानको जीत लिया और सुदूर उम्मा में उसके नामका खूतबा पठा जाने लगा। बगदादका खलीफा यह नहीं चाहता था। ख्वारेज्मशाहने खलीफासे माग की, कि अब वह लौकिक शासनको त्याग दे। खलीफा इस मागको सहसा इन्कार नहीं कर सकता था। उम्मेने शेख शहाबुद्दीन सुहरावर्दीको दूत बनाकर ख्वारेज्मशाहके पास भेजा। सुल्तानने देर तक शेखको इन्तिजार करने रखा, फिर जब वह दरबारमें आया, तो उमे बैठनेके लिये भी नहीं कहा। शेखने पैगम्बरकी हदीस (वाक्य) पढ़नेकी इजाजत मागी और इस्लामिक प्रथाके अनुसार सुल्तानने मुननेके लिये घुटने टेके। हदीसका मतलब था—“कोई मोमिन (मुसलमान) अब्बासके खानदानको हानि न पहुँचाये”। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने जवाब दिया—“यद्यपि मैं तुर्क हूँ और अरबी बहुत कम समझता हूँ, तो भी तूने जो हदीस पढ़ी है, उसका भाव मैंने समझ लिया। मैंने तो अब्बासकी एक भी सतानको हानि नहीं पहुँचायी और न मैंने उनकी बुराई करनेकी कोशिश की। इसी बीचमें मैंने सुना है, कि अब्बासकी सतान काफी सख्यामें अमीरुल् मोमिनीन (खलीफा) के हुक्मसे सदा जेलोंमें बन्द रहती है। यही नहीं बल्कि वहाँ उनकी सख्या बढ़ती ही जा रही है। यह बहुत अच्छा और उचित होता, यदि शायद इस हदीसको अमीरुल् मोमिनीनके सामने पढ़ना।” शेखने समझानेकी कोशिश की, कि खलीफा धर्मवाक्योंका अर्थ समझनेका अधिकार रखता है, कि सारी मिल्लतके लिये किसी व्यक्तिको जेलमें डाले। शेखको असफल होकर लौटना पड़ा। खलीफाके साथ दुश्मनी और बढ़ गई।

खलीफा समझने लगा, कि जब तक इस काटेको रास्तेमें निकाला नहीं जाता, तब तक खैरियत नहीं है। हमने सब्बाह-पुत्रका इस्माईली संप्रदाय गुप्त-हत्यायें करनेमें बड़ी प्रसिद्धि रखता था। उस वक्त इस्माइलियोंका मुखिया जलालुद्दीन हसन था—यह याद रखना चाहिये कि हमारे यहाँके आगाखान उसी इस्माईली संप्रदायके मुखिया हैं। हसनने कहकर खलीफाने कुछ फिदाइयों (मरनेके लिये तैयार व्यक्तियों) को ख्वारेज्मशाहको मारनेके लिये भेजा। फिदाइयोंने इराकके ख्वारेज्मी उपराजको मार डाला और मक्काके अमीरको भी अपराधनके महोत्सवके समय पवित्र स्थानमें जाकर मारा।

१२१५ई० में जब ख्वारेज्मशाहने गजनीमें अपने बड़े लडकेको शासक मुर्कर करके समय दफतरको हँडवाया, तो वहाँ खलीफाके कई पत्र मिले, जिनमें गोरियोंको मुहम्मद ख्वारेज्मशाह पर आक्रमण करनेकी प्रेरणा दी गई थी। मुहम्मदने इन सब पत्रोंको दिखलाकर अपने यहाँके इमामोसे फतवा निकलवाया—“जो इमाम (खलीफा) इस तरहके अपराध करता है, वह अपने पदके योग्य नहीं है। और जो सुल्तान अपनेको इस्लामका अवलम्ब साबित कर चुका है और दीनके लिये युद्ध करनेमें अपना सारा समय देता है, उसके विरुद्ध यदि इमाम इस तरहके पड़वत्र

१ हर इमाम कि वर् इस्माल-इ हरकात कि जिक्र रफ्त इकदाम नुमायद, इमामत-इ हक न बाशद। व सुल्तानेरा कि मदद-इस्लाम नुमायद व रोजगार व-जिहाद सरफ कर्दा बाशद, कसद कुनद् आ सुल्तानरा रसद कि दफा चुनी इमाम कुनद, व इमाम दीगर नसब करदद। व जह दीगर आ कि खिलाफत रासादाद हुसैन मुस्तहक अन्द, व दर-खानदान् अब्बास गसब स्त।

करता है, तो उसको हक है, कि ऐसे इमाम (खलीफा) को हटाकर उसकी जगह दूसरेको नियुक्त करे। अब्बासियोंने जबर्दस्ती खिलाफत दखल कर ली है, वस्तुतः वह हुसैनकी सतान अली-वशियोंकी चीज है।”

यह फतवा निकालनेके बाद ख्वारेज्मशाहने नासिरको गद्दीसे हटाकर सैय्यद अलाउलमुल्क तेरमिजीको खलीफा बना उसके नामसे खुतबा पढ़वाया और सेना ले बगदादके विरुद्ध कूच कर दिया। १२१७ ई० में उसने सारे ईरानपर अपना पूरा अधिकार स्थापित कर लिया, लेकिन जाडोमे बगदादके विरुद्ध हमदानसे जो सेना भेजी, उसे कुर्दिस्तानमें बर्फानी तूफानमें पड़कर बड़ी हानि उठानी पड़ी। बची-खुची सेनाको कुर्दोंने खतम कर दिया। बहुत थोड़े लोग बचकर ख्वारेज्मशाहके पास पहुँचे। यह ख्वारेज्मशाहकी प्रतिष्ठा पर जबर्दस्त चोट थी। लोगोंमें यह ख्याल फैलाया जाने लगा, कि खलीफाके साथ दुश्मनी करनेका फल अल्लाने इस प्रकार दिया। उधर पूरबसे जो आक्रमण की खबरे आ रही थी, उसके कारण मुहम्मद और बढकर खलीफासे झगडा छेड़नेकी स्थितिमें नहीं था। तो भी फरवरी १२१८ ई० में नेशापोर पहुँचनेपर उसने खलीफाका नाम खुतबासे हटवा दिया। यही बात मेर्व, बलख, बुखारा और सरख्शके शहरोमें भी की। लेकिन ख्वारेज्म, समरकन्द और हिरातमें ऐसा नहीं करवाया। इसी समय ख्वारेज्म-शाहके घरमें झगडा हो गया। राजमाता तुर्कान खातूनने उग्र रूप धारण किया, जिसमें मुल्ला ओर सैनिक भी खातूनकी ओर थे। मुल्लोको ऐसा करनेके लिये कारण था। १२१६ ई० में शाहने शेख नजमुद्दीन कुबरा (सूफी संप्रदाय कुबरी के संस्थापक) के शिष्य तरुण शेख मजदुद्दीन बगदादीको कत्ल करवा दिया। यह सदेह किया जाता था, कि सुल्तानकी माँ तुर्कान खातून उससे फसी। ख्वारेज्मशाहकी सेना अधिकतर भाडेकी थी। १२वीं शताब्दीमें साधारण लोग बहुत नीची निगाहसे देखे जाते थे, और उन्हें मजूरकी तरह पूरी तोरसे अपने अधीन रखनेकी कोशिश की जाती थी। सुल्तान सियर सल्जूकीकी कहावत थी—“गरीबो (कमजोरों) से मजबूतो (बड़ों) की रक्षा करना उससे कहीं आवश्यक है, जितना कि मजबूतोकी स्वेच्छाचारी आचरणसे कमजोरोंकी रक्षा करना। यदि मजबूत कमजोरका अपमान करे, तो यह अन्याय (मात्र) है, जब कि कमजोर द्वारा मजबूतका अपमानित किया जाना अन्याय और अपमान दोनों है। अगर जन-साधारणको अधीनताके बधनसे बाहर निकलने-का मौका मिले, तो बिल्कुल अशान्ति और अव्यवस्था मच जायेगी। छोटे बड़ोंके कर्तव्यको पालन कर सकते हैं, लेकिन बड़े छोटेके कर्तव्यको नहीं पूरा कर सकते। साधारण लोग चाहेंगे कि अमीरोंकी तरह रहे, लेकिन फिर उनके करनेका काम कोई नहीं करेगा।” मजूरों और किसानोंके बारेमें सियरकी सरकारका नियम था—“उन्हें बादशाहोंकी भाषा मालूम नहीं है। उन्हें अपने शासकोंसे समझौता करने या उनके विरुद्ध विद्रोह करने का कोई ज्ञान नहीं है। उनका सारा प्रयत्न केवल इसी एक उद्देश्यके लिए है, कि वह जीविकाके साधनोंको प्राप्त करें, बीबी-बच्चोंके पालन करनेके साधनोंको प्राप्त करें। इसके लिये उनको दोषी नहीं ठहराया जा सकता, यदि वह बराबर शान्ति का उपभोग करना चाहें।”

(१) शासन-व्यवस्था

ख्वारेज्मशाही शासनके बाद मंगोल शासन स्थापित हो जाता है, जब कि पहिलेसे चली

आयी शासनो-पथाकी जगहपर जगह-जगह से ली हुई चिगीमीय शासन-व्यवस्था चालू होती है। इसी व्यवस्थाको तैमूर तथा दूसरे इस्लामी शासकने भी स्वीकार किया। वही मुगलों द्वारा भारतमें लाकर प्रचलित की गई। इसलिये ख्वारेज्मशाहके समय तक-बली आनी पुरानी राज्य-व्यवस्थाके बारेमें कुछ कह देना आवश्यक है। जैसा कि हमने पहिले कहा, गोरियोकी सेनामें केवल भांडेके सैनिक नहीं रहने थे, बल्कि आम-पामके पहाडोंके इस्लामिक गाजी भी लूटके लोभ और धर्म-पन्नाके ख्यालमें शामिल होने थे। ख्वारेज्मशाहकी सेना बिल्कुल भांडेकी टट्ट, थी। ऐसी सेनाको अनुरक्त और अपने हाथमें रखनेके लिये शाह उनको अर्मेनिक अधिकारियोंके ऊपर मानता था। अर्मेनिक अधिकारी निम्न प्रकार थे—

वजीर काजी और मुस्तौफी—यह राज्यके सर्वोच्च अधिकारी थे।

वकील—दरबारके अतिरिक्त दीवान-खान का भी वकील होता था। वही भारी रकम और सेनाके खर्चके लिए निश्चित की हुई निधिका नियामक था। मंगोल कालमें शायद यही वकील खारिजी (बाह्य) वकील कहा जाने लगा।

मुशरिफ—प्रान्तोंमें वकीलका काम इसके आधीन था।

इनके अतिरिक्त शाहजादावाले प्रदेशोंके भी वजीर होते थे, जिन्हें सुल्तान नियुक्त करता था।

सुल्तानी वजीर कुछ कुछ वंशक्रमगत होते थे। जैसे मुहम्मदका वजीर निजामुल्मुल्क मुहम्मद मसऊद-पुत्र हारावी तकाशके वजीरका पुत्र था।

जानवार (बधिक)—सल्जूकियोंके समय इस अधिकारीका महत्व अधिक बढ़ गया था। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके समय इस पदपर काम करनेवाला अधिकारी “अयाज जहान पहलवान” के नामसे पुकारा जाता था और उसे दस हजारों सवारका मनसब (पद) था।

जागीर—सल्जूकियोंकी भांति इस समय भी सैनिक सेबाओंके लिये जागीर दी जाती थी। तकाशके समय बारचिनलिंग कतके नियुक्त सेनापतिको रवात-तुगानीन इलाकेका एक प्रधान गाव दीवान-अर्द (सैनिक विभाग) की मार्फत मिला था। उसी सुल्तानके समय राज-राजा-यगान-दुग्दूको एक गाव नुखास-मिल्क (माफी) के तौरपर मिला था।

(२) माँसे भगड़ा—

प्रेमीके मारे जानेके बाद भी राजमाताकी बातोंको मुहम्मद मानता था। जब निजामुल्मुल्क मुहम्मद हरवीको वजीर पदसे हटाया गया, तो राजमाताके कहनेपर मुहम्मदने उसके पूर्व गुलाम सालेह-पुत्रको “नासिरुद्दीन” और “निजामुल्मुल्क” की पदवी देकर वजीर बनाया। राजमाताहीके कहने पर अपने सब से छोटे पुत्र कुतुबुद्दीन उज्जलाग शाहको ख्वारेज्मशाहने अपना युवराज बनाया, क्योंकि उसकी मा राजमाताके कबीलेकी थी। बड़े शाहजादे जलालुद्दीन मगूविरतीको खुश करनेके लिये हिरात छोड़ सारा गोरी राज्य प्रदान किया। युवराजको ख्वारेज्म, खुरासान और माजन्दरानका शासन मिला था, किन्तु असली शासन-शक्ति तुर्कान खातूनके हाथमें थी।

फरवरी-मार्च १२१८ ई० में हिरातसे लौट कर सुल्तान नेशापोर पहुँचा, तो उसे वजीर मुहम्मद सालेह-पुत्रकी अयोग्यताका पता लगा,। शाहने उसे पदसे हटाकर तुर्कान-खातूनकी ओर इशारा करते हुए कहा—“जा अपने उस्तादके दरवाजे पर।” दरबारमें आनेपर तुर्कान

खातूनने बड़ी तैयारीके साथ पदच्युत वजीरका स्वागत करवा उसे युवराजका वजीर नियुक्त किया। सुल्तानने जब अन्तर्वेदमे रहते यह बात सुनी, तो वह जल-भुन गया और उसने इज्जुद्दीन तुगरलको उक्त वजीरका सिर काटनेका हुकम देकर भेजा। तुर्कान खातूनने तुगरलको गिरफ्तार नहीं किया, लेकिन सारी सभाके सामने यह कहनेके लिये मजबूर किया, कि सुल्तानने स्वयं निजामुलमुल्कके पदकी स्वीकृति दे दी है। आखिर सुल्तान भी इसे मजूर करनेके लिये मजबूर हुआ। अपने शासित प्रदेशोमे तुर्कान खातूनकी चलती थी। सैनिक भी उसीके साथ थे। सैनिक वर्गकी मुखिया राजमाता थी।

निजामुलमुल्कके हटानेके बाद अपने शासित प्रदेशोमे ख्वारेज्मशाहने कोई वजीर नियुक्त नहीं किया, बल्कि यह काम दरबारके ६ वकीलोको सुपुर्द कर दिया। उन्हीकी सर्वसम्मत रायसे काम चलाया जाता था। इन वकीलोमे एक अभिलेख (दफ्तर) दीवान का मुखिया था। यह कहना मुश्किल है, कि मुहम्मदके दिलमे क्यों ऐसा ख्याल आया, कि व्यक्तिकी जगह उसने एक परिषद्के हाथमे शासन-सूत्र देना पसन्द किया। पुराने समयसे चली आती नौकरशाही परम्पराके यह बिलकुल विरुद्ध था। अब्बासियोके समय जो राजनीतिक ढाँचा पूर्वी मुसलिम जगत्मे स्थापित किया गया था और जिसे उनमे ताहिरियो और सामानियोने स्वीकार करके और विकसित किया, उस व्यवस्थाको मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने बिलकुल तोड़ दिया। इसके कारण नौकरशाहीका मान हेठा हो गया।

राजमाता अपने जार मुल्ला मज्दुद्दीनकी हत्याको क्षमा नहीं कर सकती थी और मुल्ला-वर्ग भी अपने एक प्रसिद्ध मुल्लाके मरवाने और खलीफाका नाम खुतबासे निकलवा देनेके लिये नाराज था। काफ़ीरोके जूयेसे जिन लोगोको मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने स्वतंत्र किया था, वह भी उनके शासनकी कठोरताके कारण विद्रोही बन गये थे, क्योंकि उनको उसने बड़ी निर्दयतासे दबाया था। इस प्रकार शासन, उनके हरेक यत्र और जनताके हरेक वर्गमे अविश्वास पैदा हो गया था, और यह ऐसे समय जब कि तीनों कालका सबसे अधिक प्रतिभाशाली सगठनकर्ता चिंगिस खान सीमात पर आ पहुँचा था।

ख्वारेज्मी वंशका अवशिष्ट इतिहास अगले अध्याय मे आयेगा।

स्रोत-ग्रन्थ

- 1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W. W. Bartold)
- 2 Heart of Asia (E. D. Ross)
- ३ किताबुल-हिन्द (अबूरेहाँ अल्बेरूनी)
- ४ आखिन्नेक्तुनिये पाम्यात्निकि तुर्कमेनिइ (मास्को १९३९)
- ५ ओचेर्क इस्तोरिइ तुर्कमेन्स्कओ नरोदा (व० व० बरतोल्द, १९२४) (तारीख रशीदी, मिर्जा हैदर, अनुवादक E. D. Ross)
- 6 A History of Mongol of Central Asia

अध्याय ७

चिंगिस खान (—१२२६)

मंगोल ऐसी भूमिके रहनेवाले थे, "जहां न शहर या कम्बा क्या^१ गांव भी नहीं के बराबर है। चारों ओर वृक्ष-वनस्पति-हीन बालूकी भूमि है। ठग भूमिका जनाश भी खेतीके योग्य नहीं है। बहुत थोड़ी सी जगहोंको नदियोंकी धारायें सिंचित करती हैं। यद्यपि पशुपालनके लिये इस भूमिके घासके मैदान बहुत अनुकूल हैं, लेकिन वहां भी कांई बड़े वृक्ष नहीं दिखाई



३४ चिंगिस

पड़ते। घोड़ेकी लीद और याकके कडेमें ही वहांके राजा और राजकुमार तक अपना भोजन पकाने हैं। आबोहवा बहुत ही कठोर है। गर्मियोंके मध्य में भी वहां ऐसे स्थान हैं, जहां भयंकर तूफान और वर्षा आती, विजलीमें कितने ही आदमी और पशु मारे जाते हैं। इस समय भी भारी हिम-वर्षा हो जाती है। कभी कभी इतनी ठंडी हवा चलती है, कि आदमी मुश्किलसे घोड़ेपर बैठ सकता है। ऐसे ही एक तूफानमें हम धरतीपर पड़ गये थे और उस धूलकी धुंधमें कुछ नहीं देख पाते थे। वहां अकसर एकाएक ओले पड़ने लगते हैं और असह्य गर्मीके बाद तुरन्त ही परले दर्जेकी सर्दी होने लगती है।" यह किसी आधुनिक यात्री या लेखकके वाक्य नहीं है, बल्कि चिंगिसके मरनेके थोड़े ही समय बाद मंगोलियामें पहुंचे कैथलिक साधू कारपीनीका लेख है। मंगोल लोगोंकी शकल-सूरत का अतिरिजित वर्णन एक लेखकने इस प्रकार किया है—“उनका चेहरा

बड़ा ही भयंकर और घृणोत्पादक होता है। जिसपर दाढ़ी-मूछका नामोनिशान केवल ऊपरी ओंठी और ठुट्डीपर कुछ गिन लेने लायक बालोंके सिवाय नहीं मिलता। वह हर किस्मके जानवरोंका मांस खाते हैं, जिनमें घोड़ेका मांस बहुत पसंद करते हैं। जानवरको काटकर बिना नमकके ही उबाल लेते हैं, फिर उसके टुकड़े करके नमकीन पानीमें डुबोकर खाते हैं। कुछ लोग बैठकर भी खाते हैं, नहीं तो प्रायः खड़े-खड़े खा लेते हैं। भोजके समय स्वामी और सेवक एक समान भाग पाते हैं। उनका पेय कूमिस (एक प्रकारकी शराब) घोड़ीके दूध से बनाई जाती है

^१ Heart of Asia

जिसे बड़े बड़े बर्तनोंमें से प्यालेमें डालकर आकाश और चारों दिशाओंके देवताओंकी ओर थोड़ा सा फेक कर पीते हैं। पीनेके समय सरदार अपने सेवकको चखाकर प्याला मुहमें लगाता है। वह इच्छानुसार बीबिया रख सकते हैं, लेकिन व्यभिचार और चोरीके लिये मगोल मृत्यु-दण्ड देते थे। उनका उस समय कोई धर्म या धार्मिक रीति-रिवाज नहीं था। लाशको कई दिन रखकर जला देते और कभी कभी मृत पुरुषके हथियारों और सोने-चादीकी दूसरी चीजोंके साथ कुछ दास-दासियोंको मारकर उनके साथ गहरी कब्रोंमें गाड़ देते। श्राद्ध या स्मारकके तौरपर मारे हुए घोड़ोंकी खालमें भूसा भरकर किमी ऊँची जगह या दरखतपर टांग देते।

१ तैयारी

मगोलोंकी यही अवस्था थी, जब कि उनमें १२ वीं शताब्दीके मध्य (११६२ ई०) में पीछे चिंगिस खानके नामसे प्रसिद्ध तेमोचिन पैदा हुआ। उस समय उत्तरी चीनका शासक किन्-राजवश था, जो कि मचु जातिसे सबंध रखता था। इसी किन्-वंशने खिताइयोंको भगाया था, इसे हम बतला आये हैं। मौकू ताता (मगोल तातार) कबीलेके खिलाफ किन् सम्राट्ने युद्ध घोषित किया था, फिर ११४७ ई० में उन्होंने मगोल राजा ओलो-ब्रोतजिले कगान (कुतुला, कुतलक) से सुलह की। यही वंश राज्य कर रहा था, जब कि ११६१ ई० में किन सम्राट् शी-चुङ्गे ने मकू-तातारके विरुद्ध युद्ध-प्राप्त की। इसके कुछ समय बाद बोइरनोर (सरोवर) के तातारोंने मगोलोंको बुरी तरहसे हराया। हम अनेक बार देख चुके हैं, कि घुमन्तुओंकी पूर्ण पराजय और उनका उच्छेद एक बात नहीं है। उस शताब्दीके बीतते बीतते चीन सरकारने कराइतो और मगोलोंको तातारोंके विरुद्ध उभाड़ा। मगोलोंके पास इतनी शक्ति अब भी थी, कि किन्-सम्राट् उनकी सहायता चाहता था। इसी सबर्धमें तेमूचिनको पहिले-पहल आगे आनेका अवसर मिला। उसने महभूमिके सरदारोंमेंसे चुनकर अपनी सेना बना युद्धमें भाग लिया। तातारोंपर विजय हुई और कराइतोंका खान पूर्वी मंगोलियामें प्रधान व्यक्ति माना जाने लगा। मंगोल सेनाने अपने नेता तेमूचिनको कगान (खान) घोषित किया। कराइतोंके खान वाङ्गखानने भी इसमें अपनी सहमति प्रकट की। तेमूचिनने खानकी उपाधि स्वीकृत करते इसी समय अपने कबीलेका नाम फिरसे मंगोल रखना स्वीकार किया। कुतला कगानके बाद “मंगोल” नाम लुप्त हो चुका था। मंगोल शब्द चिंगिसके समय भी केवल सरकारी तौरसे इस्तेमाल होता था, साधारण लोग उससे अपरिचित थे। अब मंगोल राजवंशके सरकारी कागजोंमें इसका प्रयोग होने लगा, जिससे चीनमें उन्हें मंगोल कहा जाने लगा, लेकिन मंगोलिया तथा बाहर अब भी ताता (तातार) ही इनका नाम था। “मंगोल” नाम घोषित करते तेमूचिनने यह दिखलाना चाहा, कि मैं कुतलक कगानका उत्तराधिकारी हूँ और उसी वीर कगानका रुधिर मेरी नसोंमें बह रहा है—यद्यपि ऐतिहासिक तौरसे यह दावा गलत था।

परंपरा बतलाती है, कि इसी समय तेमूचिनने अपने १० दरबारी दरजे कायम किये—

१. कौरची—धनुष बाण ले चलनेवाले चार आदमी।
२. बाउरची—खाने-पीनेका निरीक्षण करनेवाले तीन आदमी।
३. अखताची—चरागाह के निरीक्षक।

४ तेरेगिन—गाडियोंकी तैयारीका निरीक्षक एक आदमी, जिसे पीछे युर्तची भी कहा जाने लगा। यही बुढ़ापेमें बुकाउल और बाबरची होता।

५. चेरबी—घरके कारबारको देखनेवाला निरीक्षक एक आदमी।

६ चार आदमी तलवारोंको लेकर चलनेवाले, जिनका मुखिया तेमुचिनका भाई जूची कसर था।

७ दो अस्ताची, जो कि घोड़ोंकी शिक्षाके निरीक्षक थे, इनका मुखिया तेमुचिनका भाई विलगुगइ था।

८ तीन घोड़ोंके चरागाहके निरीक्षक।

९ चार खोला, ओयरा, जो कि दूर या नजदीक बाणोंमें गुप्त संदेश रखकर ले जाते थे।

१० परिपक्वके रक्षक दो अमीर, जो कि खानके दाहिने बायें बैठने और उमें सलाह देते।



३५. मंगोल महाशकट

यह परंपरा कहा तक सच है, इसे नहीं कहा जा सकता, किन्तु १२०३ ई० तक तेमुचिनने अपने प्रतिहारों (केशिक) का संगठन निश्चय ही कर लिया था। अब तक वह कराइतो पर विजय प्राप्त करके संपूर्ण पूर्वी मंगोलियाका स्वामी बन गया था। उस समय ७० आदमी दिनमें पहरा देते, जिन्हें तुर्गवुर्त कहते और ८० केबीवुर्त रातमें पहरा देते (एक वचन केव्तेवुर)। यह और दूसरे अधिकारी मिलकर केशिकतेन् (एक वचन केशिक) कहलाते। इन प्रतिहारोंमें कोर्बी (धनुर्धर), बाबुर्ची (रसोइया), एगूदेची (द्वारपाल), अस्ताची (सवार) भी शामिल थे। खानके घर प्रबन्धके अधिकारी ६ चेबी थे। इनके अतिरिक्त एक हजार बहादुर खानके

वैयक्तिक प्रतिहार थे। युद्धके समय यही हरावल गारदका काम करते और शान्तिके (बगातिर) समय दरबारके गारद बनकर रहते।

१२०६ ई० में तेमूचिनने नैमन कबीलको हराकर उनके राजा जमुकाको मारा। अब सारा मंगोलिया उसके अधीन था। इसी समय तेमूचिन ने ९ सफेद चोरोवाला झंडा खड़ा कर राजाके तौरपर आसन ग्रहण किया। यही समय है, जबकि उसने चिंगिस कगान (खान) की पदवी धारण की, जिसका अर्थ है चक्रवर्ती राजा। चिंगिसने अब फिरसे अपने गारदका संगठन किया। केन्नेवुर्त (रात्रि प्रतिहारो) की सख्या ८० से ८०० कर दी, जो पीछे १००० हो गई। कोर्ची भी बढ़ाकर ४०० और पीछे १००० कर दिये गये। इसी तरह तुर्गेवुत (दिन-रक्षक) भी १००० हो गये। हजार बहादुरोके नमूनेपर छ हजार बहादुरोका गारद बनाया गया। ये सब मिलकर पीछे दस हजार हो गये। पहरे (कराउल) की चार बारिया मुकरिर की गईं। हरेक बारीमें तीन दिन-रात ड्यूटी देनी पड़ती। दस हजार प्रतिहारोमें भर्ती करानेके लिए हरेक साहसिक सेनापति अपने साथ अपने पुत्र, एक सबधी और दस साथीको भी लाता। दशिकका पुत्र और स्वतंत्र मंगोल आमतौरसे अपने साथ एक सबधी और तीन साथियोको भरती करानेके लिये लाता। घोषणा हो जाती, कि जो कोई गारद में शामिल होना चाहता है, उसे कोई न रोके। चिंगिसने ऐसा नियम बनाया था, कि सध्याके बाद कोई आदमी खानके तबूके पास फटक नहीं सकता था, बिना साथमें प्रतिहारके कोई खानके तबूमें प्रवेश नहीं कर सकता था। अगर नियम उल्लंघन करके कोई भीतर आता, तो प्रहरी हथियार चला सकता। कौन से दिन कितने गारद ड्यूटी पर है, इसके बारेमें कोई पूछ नहीं सकता था। चिंगिसका अनुशासन बड़ा ही सख्त था। ड्यूटीके दिन न आनेपर पहिली बार ३० कोड़े मारे जाते, दूसरी बार ७० और तीसरी बार ३७ कोड़े मारकर उसे निकाल दिया जाता। कप्तानोको भी ड्यूटीपर ठीकसे न आनेपर वही सजा दी जाती। जहा एक ओर गारदके सैनिको ओर कप्तानोका अनुशासन कड़ा था, वहा उनके विशेषाधिकार भी बहुत थे। खानके गारद के एक मिपाही का दर्जा सेनाके हजारों अफसरके बराबर था, युद्धमें असलग्न एक गारद १०० अफसरके बराबर माना जाता था। गारदके आदमीको सजा तब तक नहीं दी जा सकती थी, जब तक कि कमांडर उसके बारेमें खानसे पूछ नहीं लेता। अपने एक घनिष्ठ साथी सुबुदे बगातिर (बहादुर) को एक अभियान पर भेजते समय चिंगिसने हिदायत की थी—“जो कोई भी तुम्हारी आज्ञा माननेसे इन्कार करे, अगर वह मेरा परिचित है, तो उसे मेरे पास लाओ, यदि नहीं है, तो उसी जगह उसे मरवा डालो।” खानका गारद उसी समय युद्धमें भाग लेता, जबकि खान भी उसमें सम्मिलित होता। शिविरमें खानके तबूके सामने मूल हजार बहादुर रखे जाते। कोर्ची और तुर्गेवुर्त दाहिनी ओर डेरा डालते और बाकी सात हजार बायी ओर। चिंगिसके अधिकांश विख्यात सेनापति इन्ही दस हजार वाले गारद में से आये।

५ शासन, शिक्षा

कराइट और नैमानभी घुमंतू कबीले थे, लेकिन वह मंगोलोसे अधिक संस्कृत थे। मंगोलो

को सस्कृत बनानेका काम पीछे इन्हीनेही किया। १२०३ ई० में चिंगिसके दरबारमें कितने ही मुसलिम व्यापारी आये। व्यापारके सिलसिलेमें मध्य-एशियाके लोग मुसलमानोंके शासनके पहिले से भी सुदूर उत्तरके घुमन्तुओंमें जाया करते थे, इसलिए चिंगिसके दरबार में उनका पहुँचना कोई अचरजकी बात नहीं थी। हो सकता है, कराइन और नैमन कबीलोंके अतिरिक्त इन मुसलमान व्यापारियोंके द्वारा भी चिंगिसको कुछ बातें मालूम हुईं, जिनमें प्रेरित होकर उसने अपने गारदका संगठन और शिक्षा-दीक्षाका प्रबन्ध किया। १२०६ ई० में नैमनों पर विजय प्राप्त करनेसे पहिले चिंगिसके राज-काजमें अभी लिखित कार्यवाही नहीं होती थी। नैमन खानका मुद्राधर उइगुर ताशा-तुन था, जिसे विजयके बाद चिंगिसने वही काम सुपुर्द किया। उसी के जन्ममें चिंगिस ने अपने पुत्रोंको उइगुर अधर सिखानेका भी काम दिया। चिंगिसकी दो मुहरें (मुद्रायें) थी, जिनमेंसे एक का नाम अल-तमगा (रक्त-मुद्रा) और दूसरीका नाम कोक-तमगा (नील-मुद्रा) था। दोनों नाम तुर्की भाषाके हैं। नील तमगाका प्रयोग खान अपने परिवारके लिये पत्र लिखते समय करता। १२०६ के बाद चिंगिसके राज्य प्रबन्धने नया रूप लिया, जबकि दफ्तर और दूसरे असेनिक पदोंकी व्यवस्था की गई।

मंगोलोंके प्रथम शिक्षक और राजकर्मचारी उइगुर थे। उइगुरोंके बारेमें हम कह आये हैं, कि वह बहुत पहिले ही सुसंस्कृत हो चुके थे और बौद्ध धर्मके गहरे प्रभावमें आये थे। जब चिंगिसका राज्य चीन और मुसलिम देशोंमें फैला, तब भी दरबार और दफ्तरमें उइगुरोंकी ही प्रधानता रही। उइगुरोंने स्वयं चीन, भारत, तुर्किस्तान आदि देशोंके बौद्ध, मानी और नेस्तोरी प्रचारको द्वारा शिक्षा प्राप्त की थी। मंगोलोंके गुप्त इस प्रकार उइगुर हुए। उइगुरोंके बारेमें इतिहासकार औफीने लिखा है—“कराखिनाइयो और उइगुरोंमें कुछ लोग सूर्यकी पूजा करते हैं, कुछ ईसाई हैं, यहूदी छोड़ बाकी सभी धर्मोंके अनुयायी उनमें पाये जाते हैं।” उसने यह भी लिखा है, कि उइगुर लोग शान्तिप्रिय होते हैं, उनमें योद्धाके गुण नहीं हैं। उइगुरों और कराखिनाइयोमें बौद्धोंकी अधिक मख्या थी। मंगोल राज्यमें लेखक या राजकर्मचारीको बख्शी कहा जाने लगा, जिसका कारण यही था, कि पहिले वे अधिकतर उइगुर भिक्षु होते थे। भिक्षुका उच्चारण आज भी मंगोल भाषामें बख्शी है। उक्त लेखकने लिखा है, कि प्रार्थना करते वक्त उइगुर अपने मुहको उत्तरकी ओर रखते हैं और हाथ जोड़कर जमीन पर पड़े दोनों हाथों पर अपने ललाटको रखते हैं। यह निश्चय ही बौद्धोंके नमस्कारका ढग है, जिसे आज भी सिंहल, बर्मा, स्याम में देखा जा सकता है। भिक्षुओंकी इतनी प्रधानता ही बतलाती है, कि उइगुरोंमें बौद्धोंकी अधिकता थी, जिसके ही कारण जल्दी ही बौद्ध धर्म मंगोलोंका जातीय धर्म बन गया, और अबतक है। मुसलिम इतिहासकारोंने लिखा है—“उइगुरोंके मदिरोंमें मरे आदमियोंकी मूर्तिया होती थी। वह पूजाके समय घटीका उपयोग करते थे। युरोपीय यात्री रुब्रिक (१२५१ ई०) ने उनके मंत्रोंमें “ओ मणि पद्मे हुं” को भी उद्धृत किया है। चीनी पर्यटक चाङ्चुङ्गके अनुसार उइगुर बौद्ध भिक्षु लाल कपडा पहनते थे। वर्तमान मंगोलोंकी तरह उइगुर भी अपनी धर्म-पुस्तकको नोमें कहते थे। यह ग्रीक शब्द शायद सिरियासे मानीके अनुयायियों द्वारा मध्य-एशिया पहुँचा। उइगुर बौद्धों और ईसाइयोंमें आपसी प्रतिद्वन्द्विता नहीं थी। उइगुर ईसाई चिह्नने बौद्धोंकी करलुकोसे रक्षा की थी, क्योंकि वह उइगुर थे। बौद्ध और ईसाई दोनों ही प्रकारके उइगुर मुसलमानोंके सख्त दुश्मन थे। मंगोल भाषाके

लिये उइगुर लिपिका इस्तेमाल करनेका एक फल यह हुआ, कि मंगोलोके जितने पारपरिक नियम (यासा) थे, उन्हें तथा चिंगिस खानके वाक्यो (बिलिक) को लेखबद्ध करके जमा किया जाने लगा। बहुत समय तक ये अभिलेख मंगोल सम्राटोके लिये सर्वोच्च प्रमाण रहे। सबसे पहिले चिंगिसके दत्तक पुत्र शीकी कुतुकू नोयोनने नई लिपि लिखना-पढना सीखा। चिंगिसने उसे आज्ञा दी—“मैं तुझे चोरी ओर जालसाजीके मामलोमे न्याय और दण्ड देनेके कामपर नियुक्त करता हूँ। जो कोई मृत्यु-दण्डके योग्य हो, उसे मृत्युका दण्ड दे, जो कोई सजाका अधिकारी हो, उसे सजा दे। लोगोमे सम्पत्तिके बटवारेका जो मामला हो, उसका तू फैसला कर, काले तख्ते पर अपने निर्णयको लिख, जिसमे कि आगे चलकर दूसरे उसे बदल न सके।” पीछे यासाका सरक्षक चिंगिसका द्वितीय पुत्र जगतइ (जगताई) हुआ।

किली भी जिलेका असैनिक प्रबन्धक मुखिया दैसी कहा जाता था। जूचीके भी दैसी (दस हजार) होते थे और कराखिताई कमाण्डरके भी दैसी थे। सैनिक तथा शासन विभागोके संगठन के समय एक पद “बिकी” का भी होता था। चिंगिस खान मरते समय तक भूतपूजक (शमनी) रहा, इसीलिए उसने बिकी (शमन) का पद कायम किया। बारिन कबीलेके बृद्धतम पुरुष को बिकी नियुक्त करते समय चिंगिसने आज्ञा दी थी—“तू सफेद घोडेपर चढ, सफेद पोशाक पहन, ओर जन-साधारण मे सबसे ऊँचे स्थानपर बठ। अच्छा वर्ष ओर महीना चुन ओर निर्णयके अनुसार प्रजाको सम्मान ओर आज्ञानुवर्तन करने दे।”

घुमन्तुओके रवाजके मुताबिक चिंगिसके भी राज्यमे राजकुमारो और राज-सबधियोको अपने अपने शासन-क्षेत्र मिलते थे। १२०७ और १२०८ ई० मे खानने जगली जातियोको जीता। इनका प्रदेश सालिगा और येनीसेइके बीचमे येनीसेइकी उपत्यकामे था। सिबिर-जातिकी भूमिसे लेकर दक्षिण तटके जगलो तक रहनेवाली जातियोका शासक पिताकी ओरसे ज्येष्ठ पुत्र जूची नियुक्त हुआ। सबसे बडा पुत्र होनेसे उसे सबसे दूरका इलाका मिला। साम्राज्य के बढनेपर जूची और उसके ज्येष्ठ पुत्रको उत्तर-पश्चिमके सीमान्तके इलाके मिले। इतिहासकार रशीदुद्दीनके अनुसार जूची का युर्त (उर्दू) इतिश नदीके आसपास रहता था।

२. ख्वारेज्मशाहसे वैमनस्य

१२०७ ई० के बाद कुछ वर्ष तैयारीके थे। १२११ ई० मे मंगोल सेनाने जहा चीनकी ओर पैर बढाना शुरू किया, वहा इसी समय पश्चिममे सप्तनद भूमिमे भी पटुचकर उत्तरी सप्तनदको मंगोल साम्राज्यमे मिला लिया, यह हम पहिले बतला चुके हैं। चीनमे फस जानेके कारण पश्चिमकी ओरका बढाव थोडे समयके लिये रुक गया। लेकिन नैमन और मरगित कबीलोको—जो मंगोलोके डरसे पश्चिमकी ओर भगे थे—सास लेने देना मंगोल पसन्द नहीं करते थे। १२१५ ई० मे पेकिङ-बिजयके साथ प्रायः सारा उत्तरी चीन चिंगिसके हाथमे आ गया। मुहम्मद ख्वारेज्मशाह भी चीन-विजयका स्वप्न देख रहा था। अपने समकालीनोकी तरह भूगोलका ज्ञान उसे स्पष्ट नहीं था, इसलिये चीनकी शक्ति और विस्तारका पता ख्वारेज्मशाहको कैसे लग सकता था? लेकिन जब उसे चीनके विजयका पता लगा, तो विशेष जानकारीके लिये उसने चिंगिसके पास बहाउद्दीन राजीको अपना दूत बनाकर भेजा। बहाउद्दीन चीनमे जा चिंगिससे मिला। किन्-सम्राट् स्वान्-चूङ्का पुत्र मंगोलोका बन्दी था।

और यद्धकी भयंकर ध्वनतीका दृष्टी। मारे गये लोगोंकी हड्डिया पहाडकी तरह ढेर की हुई थी, मनुष्यकी चर्चोंमें घाम चिर्पाचिरी हो गई थी। मइनी हुई लाशोंमें निकालनी दुर्गंधके कारण बहाउद्दीनके कुछ माथी बीमार होकर मर गये। गेंकिशके दरवाजेपर हड्डियोंका भारी ढेर लगा हुआ था। बहाउद्दीनने मुता, जिस दिन राजधानी पर मंगोलोंका अधिकार हुआ, उस दिन साठ हजार लडाकियोंने शत्रुओंके हाथग न पडनेके डरमें नगर-प्राकारमें कूदकर प्राण दे दिये। चिंगिसने दूतका बड़े गल्फारके साथ स्वागत किया और कहा—मैं ख्वारेज्मशाहको पश्चिमका बादशाह मानता हू और अपनेको पूर्वका। मैं चाहता हूँ कि हम दोनों सुलह और दोस्ती से रहे और व्यापारी एक राज्यमें दूसरे राज्यमें स्वतंत्रता-पूर्वक यात्रा करे। अभी चिंगिसकी सारी दुनियाका बादशाह बननेका स्वप्न नहीं आया था। यह हम जानते ही हैं, कि मंगोलोंमें बहुत पहिले उनके पूर्वज हूण तथा छठी सदीके तुर्क भी उभय-मध्यएशियाके रथायी शायक रहे। मंगोल व्यापारके महत्वसे अपरिचित नहीं थे। येतीसेइ नदीके उत्तरी पहाडोंमें बहुत सा अनाज मंगोलिया जाता था, जिसके बदलेमें उन्हें चमड़ा और दूसरी चीजें मिलती थीं। ये व्यापारी उइगुर और मुसलमान होते थे। ख्वारेज्मशाह व्यापारके लिये उतना उत्सुक नहीं था। वह यही जानना चाहता था, कि उसके प्रतिद्वन्द्वीकी शक्ति कितनी है।

व्यापार चीनमें रूम तक होता था। दममें शक नहीं, उसमें बहुत नफा था, लेकिन खतरा भी अधिक था। उधारपर दिये मालके डूब जानेका डर था, राज्य-विप्लवमें भी हर वक्त हानि की संभावना रहती थी। एक समय यदि अधिक लाभ होनेके कारण व्यापारी हाथ पैर बढ़ाने, तो दूसरे ही समय भारी हानि उठानेकी नीयत भी आ जाती। त्रेबजेन्द यूनान और रूमके व्यापारका केन्द्रीय बन्दरगाह था। जब सल्जूकी सुल्तानने उसपर आक्रमण किया, तो उसके कारण वहाके व्यापारियों—जिनमें अधिकांश मुसलमान थे—को बहुत हानि उठानी पड़ी। उसी तरह १२०९ ई० में कराखिताइयो और ख्वारेज्मशाहके बीच जब सुलह हो गई, तो तुरन्त ही बड़े बड़े कारवा चल पड़े। इन्हींके साथ कवि शेख मादी काशगर पहुचें थे। मुसलिम राज्योंके व्यापारी उत्तरी रास्ते से मंगोलिया और चीन गये, क्योंकि दक्षिणमें उन्हें कुचलुक से भय था। ओर्मुज और किश के बन्दरोंके बीचमें झगडा उठ खडा हुआ था, इसीलिए इस समय चीनका सामुद्रिक मार्ग बन्द हो गया था। बहाउद्दीनके साथ व्यापारियों का कारवा भी था, जिनमें अहमद खोजन्दी, अमीर हुसैन-पुत्र और अहमद बालचिच भी थे। वह अपने साथ जरबफ्त (जरदोजी), सूती और जन्दानी कपड़ेको लेकर गये थे। १०-२० दीनारकी चीजके लिये तीन सोने के बालिश (एक बालिश पचहत्तर दीनार) मागे। चिंगिसने नाराज होकर कहा कि उर्दूरो लाकर ऐसी चीजोंको दिखलाओ, जिसमें इस व्यापारी को मालूम हो, कि हमारे लिये यह नयी चीज नहीं है। उसके बाद उसने बालचिच का सारा माल लुटवा लिया। यह देखकर खोजेन्दीने दाम कहने से इन्कार करते हुये कहा—“मैं यह सब चीजे खान की भेंट के लिये लाया हूँ।” खानका दिल कुछ नरम पडा और उसने उसके सुनहरी धारीवाले मालपर प्रतिथान एक सुनहरी बालिश सूती थानपर एक चादीकी बालिश देने का हुक्म दिया। फिर बालचिचको भी वही दाम दिलवा दिया। उस समय मंगोलोंने मुसलमानोंके साथ बहुत सहानुभूति और सम्मान दिखलाते हुये, उन्हें सफेद नमदेके तबूमें टिकाया। पीछे अपने कडुवे तजुर्वे के कारण मंगोलोंने अनेकबार मुसलमानों के साथ बड़ी निष्ठुरता दिखलायी।

ख्वारेज्मशाहके दूतके जवाबमें चिंगिसने भी अपना दूत भेजा, जिसके साथ व्यापारियोंका एक कारवाँ भी था। इस दूत-मंडलके मुखिया थे महमूद (ख्वारेज्म), अली ख्वाजा (बुखारा) यूसुफ कका (उतरार)। भेंट की चीजें थी—चीनके पहाड़ोंसे निकला सोनेका एक डला, जोकि ऊटके कोहानके बराबर था और गाड़ीपर लादकर भेजा गया था, बहुमूल्य धातु, अकीक (जेड पत्थर) के टुकड़े, खुतूबू (वलरस) की सींगें, कस्तूरी, ऊटके ऊनसे बना कपड़ा तर्गू। दूतोंने ख्वारेज्मशाहसे कहा—“हमारे खानने आपके पराक्रम और विजयोंके बारेमें सुना है। वह चाहते हैं कि आपके साथ शान्तिकी सधि करे और आपको अपने सर्वप्रिय पुत्रोंके बराबर माने। उन्हें विश्वास है, ख्वारेज्मशाहने भी मंगोलों के विजयोंको, विशेषकर चीन-विजय, और विजित देशोंकी सपत्तिके बारेमें सुना होगा, इसलिये दोनों राज्यों के बीचमें शान्ति और सुरक्षित व्यापारिक संपर्क की स्थापना दोनों के लिये लाभदायक होगी।” ख्वारेज्मशाहने खुले दरबारमें क्या जबाब दिया, इसे इतिहासकारोंने नहीं लिखा। पीछे उसने महमूद ख्वारेज्मीको एकान्तमें बुलाकर कहा—“ख्वारेज्मी होनेके कारण पहिले तुम्हें अपने देशके हितका ध्यान होना चाहिये। तुम मुझसे सच्ची सच्ची बातें कह दो, फिर जाकर मेरे गुप्तचर बन खानके दरबारमें रहो।” ख्वारेज्मशाहने उसे एक बहुमूल्य रत्न इनाम देनेका वचन दिया, फिर यह भी पूछा—“क्या यह बात सच है, कि तमगाचकी नगरी (पेकिङ्ग) पर चिंगिसका दखल हो गया ?” दूतके हा कहनेपर मुहम्मदने कहा—“उस काफिरको मुझे पुत्र कहने का हक नहीं है।” महमूदने सुल्तानके गुस्से के डरसे जब कह दिया कि चिंगिसकी सेना आपकी सेनाके बराबर नहीं है। तब ख्वारेज्मशाहने चिंगिसके साथ सधि करनेकी स्वीकृति दी।

दूत-मंडलके प्रस्थान-समय के आस-पास ही मंगोलिया से व्यापारिक कारवा चला। जब वह ख्वारेज्म राज्यके सीमान्त नगर उतरारमें पहुँचा, उसी समय चिंगिसका दूत-मंडल लौट रहा था। कारवामें चार व्यापारी थे—उमर ख्वाजा उतरारी, हम्माल मरागी, फखरुद्दीन दीजकी बुखारी और अमीनुद्दीन हरावी। कारवामें कुल ४५० आदमी थे, जो सभी मुसलमान थे। सौना, चादी, ताबा, चीनी, रेशम, तर्गू, समूर आदि माल पाच सौ ऊटोंपर लदा था। उतरारका शासक इनालचिक काइर खान (इनाल खान) तुर्कान खातून का सबधी सुल्तानके मामाका पुत्र था। उसने गुप्तचर कहकर कारवा को रोक लिया, फिर सबको मरवा दिया। इस हत्याके कई कारण बतलाये जाते हैं—कहा जाता है, कारवा में एक हिन्दू भी था, जो पहिले से इनाल खानको जानता था, इसलिये उसने बिना आदाब किये बड़ी घनिष्ठता दिखलाते इनालको सबोधित किया, जिससे वह नाराज हो गया। कोई कहते हैं, कि उसे इस धनी कारवाको लूटनेका लालच हो गया और अपने झूठे सदेहको सुल्तानके पास लिख भेजा, जिसके ही हुकमपर कत्ल करवाया। ४५० मेंसे केवल एक आदमी जान बचाकर भाग सका। उसने जाकर यह भयंकर समाचार चिंगिस खानको सुनाया। चिंगिस बड़ी ही धीर-गभीर प्रकृतिका आदमी था। भारी उत्तेजनापूर्ण परिस्थितियोंमें भी वह आत्मसम्यक कर सकता था, जिसका प्रमाण उसने इस समय दिया। उसने तकाशके एक सेवकके पुत्र कफराज बुगराको दो तातारों (मंगोलों) के साथ ख्वारेज्मशाहके पास इस दुष्कृत्यके प्रति विरोध प्रकट करनेके लिये भेजा और माग की कि इनालचिकको दण्ड देनेके लिये हमारे हाथमें दे दो। ख्वारेज्मशाहने दूतोंसे मिलनेसे ही इन्कार कर दिया, बल्कि उन्हें भी मार डालनेका हुक्म दिया। कफराजको कतल कर दिया गया।

गया। अब चिंगिस अपने पश्चिमामुख अभियानको कैसे रोक सकता था? प्रभावशाली मुसलमान सलाहकारोंने शाहको बहुत समझाया, कि चिंगिस ख्वारेज्म-साम्राज्यके साथ अच्छा संबंध स्थापित करना चाहता है, वह कोई बड़ा कदम उठाना नहीं चाहता। “बैठा” कहकर वह अपमान नहीं बल्कि अधिक प्रेम प्रकट करना चाहता था।

इसमें शक नहीं, बगदाद, अफगानिस्तान और मारे अन्नर्वंदके स्वामी ख्वारेज्मशाहकी भी धाक चिंगिसपर थी। व्यापारिक हितोंके लिये यही बात अनुकूल थी, कि ख्वारेज्मशाहसे सुलह की जाय, क्योंकि उसने कुचलुकके साथके अपने यद्दोंके समग्र ही व्यापार, पथको बन्द कर दिया था।

ख्वारेज्मशाहके ऊपर चिंगिस तब तक प्रहार नहीं कर सकता था, जब तक कि कराखिताई राज्यके स्वामी कुचलुकको समान नहीं कर दे। कुचलुक उस वंशका भगोडा राजकुमार था, जिसे खतम करके चिंगिसने अखंड मंगोलियाका शासन अपने हाथमें लिया था। चिंगिसको मौका मिल गया, जबकि इलिके राजा बुझार (जूचीके दामाद) पर शिकार करने वक्त एकाएक आक्रमण करके कुचलुकने उसे बन्दी बना दिया। मंगोल सेनाके आनेके डरमें ही कुचलुक बहामे हटा, लेकिन बुझारको मार कर। मंगोल सेनापति जेङे नोतने उसके पुत्र मुग्नाग तगिनको गद्दीपर बैठाया और बुझारकी लड़की उलुग रातूनका चिंगिसके लिये ले लिया। मंगोल सेना कुल्जाके रास्ते आगे बढ मत्तनद होने काशगर पहुँची। कुचलुकने तरिम-उपत्यकाके मुसलमानोंपर बहुत अत्याचार किये थे, इसलिये वहाँके लोगोंने मंगोलोंका मुक्तिदाताके तौरपर स्वागत किया। कुचलुक बहामे भाग निकला, लेकिन रागीकुलमे मारा गया। जेङेने कुचलुकका सिर कटवा मगाया। इस प्रकार जिंगिसी प्रबल शक्ति ख्वारेज्मशाहके लिये एक बड़े सिर दर्दका कारण थी, उसे अ-प्रयास ही मंगोलोंके एक सेनापतिने खतम कर दिया। लेकिन इसमें ख्वारेज्मशाहका सिर-दर्द कम नहीं हो सकता था, क्योंकि अब एक दुर्घट तथा पहिलेमें शत्रु बनाया चिंगिस उसके दर-वाजेपर ताल ठोक रहा था। मुहम्मद अपने ही इस्लामका सुल्तान कहता था, लेकिन उसीने मुसलमानोंकी निन्दुर हत्या करवाई, जब कि चिंगिसके भेजे हुए दूत-मंडलके चार सौ पचास मुसलमानोंमें सिर्फ एक उसके हाथमें बचकर निकल पाया। ऐसी स्थितिमें उसे मुसलमान कैसे इस्लामका जहादी मान सकते थे?

४. अभियान

चिंगिसने जल्दी नहीं की—“रिपु-सज-पावक-पाप, इनाह न गनिये छोट करि”। उसने ख्वारेज्मशाहकी शक्तिको कम नहीं बल्कि बहुत बढ़ा-चढ़ाकर आका, इसीलिये खास तैयारी किये बिना अभियान करना पसंद नहीं किया। इस अभियानमें वह अपने सारे पुत्रों तथा प्रधान-सेनापतियोंके साथ स्वयं शामिल हुआ। मंगोलियामे चलकर १२१९ ई० की गर्मियों को उसने इतिश नदीके तटपर बिताया। पतझड़के समय उसकी यात्रा शुरू हुई। चिंगिस कयालिके अत्यंत सुंदर मैदानमें डेरा डाले हुए था, वही अलमालिकका स्वामी मुग्नाग तगिन उइगुर इदिकुत (राजा) बाबुचिक, और स्थानीय करलुकोंका राजा अरसलन खान उससे आ मिले। सेनाकी सख्या डेढ़-दो लाखके करीब थी। चीन और हिया (तगुत)पर अभी पूरी तौरसे विजय नहीं हो पायी थी, इसलिये वहाँके लिये काफी मंगोल सेना छोड़नी पड़ी थी। इसमें शक

नहीं, ख्वारेज्मशाहकी सेना इससे भी ज्यादा थी, लेकिन जैसा कि हम बतला चुके हैं, वहां घरमे ही राजमाता तुर्कान खातून और उसकी पक्षपातिनी बहुत सी भांडेकी तुर्क सेना ख्वारेज्मशाहसे बिगडी हुई थी, जिससे उसको बराबर विश्वासघातका डर लगा रहता था। शहाबुद्दीन खीवगीने शाहको सलाह दी थी, कि सिर-दरियाके पार मोर्चा लगाकर चिंगिसके आक्रमणकी प्रतीक्षा करनी चाहिये। उसने समझा, कि इतनी दूर तक आनेमे मंगोल सेना काफी थकी-मादी तथा अपने केन्द्र से बहुत दूर होगी, इसलिये लड़नेमे सुभीता रहेगा। लेकिन मंगोल सेना किसी दूसरी ही धातु की बनी थी। मंगोल सेना मुख्यतः सवार-सेना थी। एक मंगोलके लिये जहां उसका घोड़ा यात्राका शीघ्रगामी साधन, युद्धका अच्छा वाहन था, वहां खानेकी कोई चीज न मिलनेपर घोड़ेके पैरकी नसमे छेद करके उसके खूनसे वह अपनी भूख भी शान्त कर सकता था। ऐसे सैनिकोंसे लड़ना आसान काम नहीं था। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहका ख्याल था पहिले सिर-दरिया पर मुकाबिला करे, फिर अन्तर्वेदमे पग-पग पर लोहा ले। लेकिन, वह होने नहीं पाया। वक्षु पार, हिन्दूकुश पार, गजनी या हिन्दुस्तान (पंजाब) तक लड़नेका मसूबा धरा ही रह गया। सिर-तटसे भागकर वह समरकन्द आया। नगर-प्राकार बनानेका तीन सालका प्रोग्राम था, लेकिन १२ फरवरी (१२१९) को जब मंगोल सेनाये वहां पहुंची, तो अभी काम शुरू भी नहीं हुआ था। किलेकी खाई बनानेकी बात सुनकर मुहम्मदने कहा—“मंगोल अपने घोड़ोंको फेक कर इसको पाट सकते हैं।” वहांसे भी बिना लड़े ही वह वक्षुके तटपर गया। एक दिन उसके तटपर बाण लगे पाये गये। यह अपने लोगोंका काम था। ऐसी स्थितिमे ख्वारेज्मशाह चिंगिस जैसे प्रबल शत्रुसे लड़नेकी हिम्मत कैसे करता? १२२० का वसन्त आ गया, लेकिन अभी भी इस्लामके नामपर भरती की गई सुल्तानकी नव-संगठित सेना एकत्रित नहीं हो पायी। पहिले की सेना अधिकतर तुर्कोंकी थी, जिसपर माके पक्षपाती सेनापतियोंके विरोधी होनेके कारण विश्वास नहीं किया जा सकता था।

५. अन्तर्वेद-विजय

सितम्बर १२१९ मे चिंगिसने उत्तरारके करीब पहुंचकर योजनाके अनुसार अपनी सेनाको निम्न प्रकार बांट दिया—

(१) एक वाहिनी, जिसमे उइगुर भी थे, उत्तरारके लिये छोड़ दी। (२) दूसरी वाहिनी जूचीके नेतृत्वमे निम्न सिर-दरियाकी ओर, (३) पांच हजारकी एक छोटी वाहिनी सिरके ऊपर अवस्थित वानाकत और खोजन्दकी ओर भेजी, (४) चौथी वाहिनीको अपने लडके तूलुयके साथ लेकर चिंगिसने सुल्तानकी सेनाके रास्तेको बीचसे काटनेके लिये बुखाराकी ओर प्रस्थान किया। उत्तरार के पतनके पहिले ही शफी अकरा की ओरसे बदरुद्दीन अमीद चिंगिसकी तरफ हो गया। उसके पिता और चचा उत्तरारके काजी थे, जिन्हें सुल्तानने उत्तरार-विजय करते समय कत्ल करवा दिया था। बदरुद्दीनने ख्वारेज्मशाहके भीतरी झगडो तथा सेना आदिकी सारी बाते मंगोलोंको बतला दी। ख्वारेज्मशाहने मुसलमान काजियोंको कत्ल करके मुसलिम व्यापारियों तक को अपना विरोधी बना लिया था। ये सभी चिंगिसके पक्षमे प्रचार करते तथा सभी भेद बतलाते थे। चिंगिस आजन्म अनपढ़ रहा। वह एक बिलकुल ही पिछड़े हुए कबीलेमे पैदा हुआ था, लेकिन उसकी प्रतिभाका लोहा सारी दनिया गजनी के।

दारयबहु और सिकन्दर ही नहीं बल्कि नेरोलियन और हिटलर भी बच्चे मालूम होते हैं। यह हम उसके विजय-क्षेत्रको देखकर कह सकते हैं। बिना पक्की योजना बनाये और उसे ठीक तौरसे काममें लाये चिंगिस आगे नहीं बढ़ता था। सिर नदी शायद इस समय जमी हुई थी, इसलिये उस महानद को पार करनेमें चिंगिसकी सेनाको दिक्कत नहीं हुई। एक मजिल पर जरनुक का किला आया। निवासियोंके पास हाजिव दानिशमन्दको भेजकर कहवा दिया, कि तुम्हारे धन और प्राणको कोई हाथ नहीं लगायेगा। किला और निवासियोंने बिना लड़े ही आत्मसमर्पण कर दिया। मंगोलोंने अपने वचनका पूरी तौरसे पालन किया। किलेको तोंडकर उमी इलाकेके जवानोंकी उसने एक बाहिनी संगठित की, जो मुहासिरे (घिरावे) के काममें सहायता करती। मंगोलोंने शहरका नाम कुतलुकबालिक (मौभाग्य नगर) रख दिया। जरनुकमें ही तुर्कमान भी आ मिले, और उन्होंने बुखाराका एक नया रास्ता बतलाकर चिंगिसको गुप्त मार्ग जनवरी १२२० ई० में नूर पहुँचा दिया। बीच में निर्जल कजिल-कुमकी मरुभूमि है, लेकिन वहाँ कारवाका रास्ता मौजूद था। नहर खराब नहीं हुई थी, बालूकी भूमि जहाँ कम पड़ती थी, वहाँसे सेना पार हुई। हरावलका सेनापति तादर बहादुर था। नूरके बागोमें वह रातके समय पहुँचे। जाड़ोंके कारण पत्ते झड़ गये थे, इसलिये वृक्ष सूखेमें मालूम होते थे। तायरने नगर-प्राकारको लाघनेके लिये सीढ़ी बनानेके वास्ते वृक्षों को काटनेका हुकम दिया। शहरवालोंने समझा, शायद विदेशी व्यापारी आकर डेरा डाल रहे हैं। उन्हें ख्याल नहीं था, कि चिंगिस सेना मरुभूमिका रास्ता पकड़ेगी। जब पूरी एक बाहिनी (डिवीजन) आ पहुँची, तब उन्हें गलती मालूम हुई। चिंगिसने सुबुदायके हाथमें आत्म-समर्पण करनेके लिये दूत भेजा था। नगर निवासियोंके लिए दूसरा चांग नहीं था। मंगोलोंने उन्हें खाद्यसामग्री, खेतीका सामान और पशुओंको लेकर बाहर चले जानेका हुकुम दिया। चिंगिसकी सेनामें कितनी व्यवस्था और अनुशासन था, इसका यह प्रमाण था, कि मंगोल सेनाने निवासियोंसे साल भरका कर—पन्द्रह सौ दीनार—भर वसूल किया। यह नगरके लिये कुल नहीं था। आधी रकम तो स्त्रियोंके कानकी बालियोंसे ही निकल आई। स्थानीय अमीरके पुत्र डल्-खवाजाके साठ आदमी कामके लिये भरती किये गये, जिन्होंने दबूसियाके मुहासिरेके समय काम किया।

फरवरीमें चिंगिस बुखारा पहुँच गया। वहाँ ख्वारेज्मशाहकी बीम या तीस हजार सेना (जिसमें बारह हजार सवार थे) सेनापति इस्मियाहद्दीन कुतल् और ईनचखान ओगुल हाजिवके अधीन तैयार थी। दूसरे सेनापतियोंमें कराखिताइयोंका बन्दी हमीदपूर और मुयुच खान भी थे। तीन दिनोंके मुहासिरेके बाद इनच घिरावेकी पाती तोंडकर निकल भागा। मंगोलोंने उसका पीछा किया और बहुत थोड़े आदमियोंके साथ वह वधु पार होनेमें समर्थ हुआ। हमीदपूर युद्धमें काम आया। प्रतिरक्षियोंने साथ छोड़ दिया, फिर बुखारा-निवासियोंको आत्मसमर्पणके सिवाय कोई रास्ता नहीं रह गया। काजी बदहद्दीन के नेतृत्वमें नागरिकोंका एक प्रतिनिधिमंडल भेजा गया, और १० (या १६) फरवरीको मंगोल बुखारा नगरमें दाखिल हुए। किलेके चार सौ प्रतिरक्षी १२ दिनों तक और डटे रहे। इनमें चिंगिस द्वारा पराजित गुरखान जामुका भी था, जिसने बड़ी बहादुरी दिखलायी। सुल्तानके लिये जो रसद इकट्ठा की गई थी, उसे नागरिकोंने मंगोलोको दे मट्टी डालकर किलेकी खाईको पाट दिया। किला सर होनेपर वहाँकी सारी सेनाको मंगोलोंने मार डाला। उत्तरारमें चिंगिसके कारवाकी बर्तिया करके जो

चादी लूटी गई थी, उसे धनी व्यापारियोंने लौटा दिया। मंगोलोंके हुकम पर नागरिक केवल अपने शरीरपर के कपड़ोंके साथ बाहर निकल गये। उनके प्राण छोड़ दिये गये, किन्तु बिना प्रतिरोध आत्मसमर्पण न करनेके दण्डमें विजयी सेनाने उनकी सपत्तिको लूटा और जो शहरसे बाहर नहीं निकले थे, उन्हें मार डाला। इमाम जलालुद्दीन अली हसन (हुसैन)-पुत्र जन्दीने अपनी आखी मस्जिदोंको लुटते और कुरानके पन्नोंको घोंडोंकी टापोंके नीचे रौंदे जाते देखा था। इमाम-जादा रुकुनुद्दीन उस समय बुखाराके सबसे बड़े विद्वान् थे। उन्होंने अली हुसैन-पुत्रको क्रोध प्रकट करते देखकर कहा—“चुप रहो, अल्लाके क्रोधका तूफान आया है, तिनकेको कुछ कहनेका अधिकार नहीं है।” लेकिन जब मंगोलोंने बन्दिओं और स्त्रियोंके साथ क्रूरता दिखलानी शुरू की, तो इमामजादा और उसके पुत्रोंने उसमें बाधा देनी चाही, जिसपर वह मार डाले गये। चिंगिसने एक बड़ी मस्जिदमें लोगोंको जमा करवाया, फिर कोई कुछ कर न बैठे इसका बिना कुछ ख्याल किये। निबडक घोड़ेपर चढ़ा वह मस्जिदके भीतर चला गया,^१ उसने घोड़ेपर से ही कहा—“लोगोंके पापोंके दंड केलिये अल्लाके क्रोधके रूपमें मैं भेजा गया हूँ।” चिंगिसने नगरके मुखिया और वृद्धोंका नाम बतलानेके लिये कहा, फिर उन्हें बुलाकर पैसे और दूसरी चीजोंकी माग पेश की। चिंगिस बुखारामे केवल दो घंटे रहा। लूटके बाद मंगोलोंने शहरको जला दिया। ईंटकी बनी इमारने जामा मस्जिद तथा कुछ महल बच पाये। यह भी कहा जाता है कि, शहरमें आग जान-बूझकर नहीं लगाई गई। यह ठीक भी है, क्योंकि चिंगिस अपनेको लुटेरा नहीं बल्कि स्थायी विजेता-शासक समझता था।

बुखारामे जब मंगोल सेना समरकन्दकी ओर जाने लगी, तो वह अपने साथ भारी सख्यामें लोगोंको बन्दी बनाकर ले गई। मंगोल सैनिक घोड़ोंपर थे, और अभाग बन्दी पीछे-पीछे पैदल चल रहे थे। यदि कोई बंदी थक कर गिर पड़ता, तो वह उसे मार डालते। अपनी साधारण नीतिके अनुसार मंगोल किसानोंको पकड़कर उनसे मिट्टी खोदने, खाई पाटने या दूसरे मुहासिरें सब्जी काम लेने। रास्तेमें दब्रूसिया और सरेपूलमें ही उनका थोड़ासा प्रतिरोध हुआ। मंगोल सेना जरफशा (मोघ) नदीके दोनों तटोंसे कूच कर रही थी, शायद चिंगिस स्वयं उत्तरी तटसे जा रहा था। बीचमें पड़ते किलोंको फतह करनेके लिये कुछ सेनाको छोड़कर वह आगे बढ़ जाता। समरकन्दमें ख्वारेज्म-शाहकी (६० हजार तुर्क, ५० हजार ताजिक, २० हाथी की सेना थी)। दूसरे इतिहासकारोंके अनुसार तुर्क, ताजिक, गूज, खलज और करलुक सब मिलाकर १ लाख सैनिक थे। समरकन्दका शासक तुर्कान खातून का भाई तुगाई खान था। मार्चमें समरकन्द पहुँचकर चिंगिसने कोक-मराइ (नील प्रासाद) में डेरा डाला। उसने कैदियोंको भी सैनिकोंके रूपमें खड़ा कर हर दस आदमियोंपर एक झंडा दे सेनाको भारी भरकम दिखलाकर नागरिकोंको भयभीत कर दिया। चिंगिसके दोनो पुत्र जगताय और उगुताय भी उतरारसे बहुतसे कैदी लिये आ पहुँचे थे। दूसरे शहरोंकी अपेक्षा उतरारमें अधिक दिनो तक मुहासिरा करना पड़ा था। इनाल खान को प्राण बचाकर भागनेका कोई रास्ता नहीं मिला, इसलिये वहाँ उसने जान तोड़कर मुकाबिला

^१ समरकन्दके बारेमें एन्थु-चू शइने लिखा है—“नगरके चारो ओर लगातार बीसो मील तक अगूर और दूसरे फलोंके वाग, फलोद्यान, जलाशय, बहती नहरे, चौकोर कुड, गोल तडाग चले गये हैं। सचमुच समरकन्द बड़ा ही मनोहर जगह है।”

किया। उसके पास २० हजार (दूसरोंके अनुसार ५० हजार) सवार थे, जिनमें हाजिव कराजा १० हजारकी कुमक लेकर आ पहुँचा था। ५ महीनेके मुहामिरेके बाद आत्मसमर्पण करने का निश्चय करके कगजा अपने आदमियोंके साथ बाहर निकल आया, लेकिन चिगिस-पुत्र जगनाय और उगुताय स्वामीके प्रति विश्वासघाती आदमी पर विश्वास नहीं कर सकते थे, इसलिये उन्होंने कराजाको कत्ल करवा दिया। नागरिकोंको बाहर निकालकर मंगोलोंने शहरको लूटा। किला एक मास और डटा रहा, जिसके पतनके बाद प्रतिरक्षक सैनिक मार डाले गये। तीरोंके खतम हो जाने पर इनाल खानने ईंटें फेंकनी शुरू की। वह जिन्दा पकड़ा गया और उसे चिगिसके पास कोकमराय भेज दिया गया, जहाँ उसे बड़ी निष्ठुरताके साथ मारा गया।

समरकन्दके मुहामिरेके खतम होनेके बाद प्रतिरक्षकोंने छापामारी शुरू की, लेकिन उसका परिणाम उनके लिये बहुत ही भयंकर निकला। मंगोलोंने भी छिपकर उनपर आक्रमण किया और ५० (या ७०) हजार आदमियोंमेंसे एकको भी जीता नहीं छोड़ा। मुहामिरेके पांचव दिन तुर्कों और नागरिकोंने आत्मसमर्पण करनेका निश्चय किया। किलेमें थोड़ेसे ही आदमी रह गये थे। तुगाइखानके नेतृत्वम तुर्कोंने अपनी सेवायें मंगोलोंको अर्पित की, जिन्होंने पहिले स्वीकार कर लिया। नागरिकोंके प्रतिनिधि काजी और शेखुल् इस्लामके नेतृत्वमें मंगोलोंके पास आये। नमाजगाह द्वारमें भीतर मुसकर मंगोल तुरन्त किलाबन्दी तोड़नेमें लग गये। नियमानुसार नागरिकोंको निकालकर वहाँ भी मेनाने शहरको लूटा, लेकिन काजी, शेखुल् इस्लाम तथा उनके ५० हजार सैनिकोंको प्राणदान मिला। चिगिस और उसके मंगोल अभी किमी व्यवस्थित धर्मके अनुयायी नहीं थे, वह भत-प्रेतपूजक (शमनी) होनेसे सभी धर्मों और उनके पुरोहितोंके प्रति सम्मान दिखलाने थे। समरकन्दके मुग़लोंने बुखारियोंकी तरह विरोध नहीं किया, इसलिये मंगोलोंने उनके साथ नरमीका बर्ताव किया। किलेको तोड़नेके लिये उसकी मिट्टीकी दीवारोंको नहरका बाध तोड़कर भिगा दिया गया, इस प्रकार दीवारके गिरानेमें दिक्कत नहीं हुई। दुर्गके पतनसे पहिली रात अल्प एर खान हजार आदमियोंके साथ मंगोलों की पक़्तको तोड़कर सुल्तानके पास चला गया, बाकी हजार सैनिकोंको किलेकी मस्जिदमें जमाकर मंगोलोंने कत्ल कर डाला। यह वही मस्जिद थी, जिसे ख्वारेज्मशाहने बनवाया था। मंगोलोंने उसे जला भी दिया। सुल्तानकी ३० हजार तुर्क सेना तुगाइखान तथा अपने सारे नेताओंके साथ मार डाली गयी। ३० हजार कारीगरो और शिल्पकारोंको चिगिसने अपने पुत्रोंऔर सबधियोंमें बांट दिया, बाकीको मुहामिरेमें काम करनेके लिये भरती कर लिया। नगरपर दो लाख दीनार कर लगाया गया। हत्याकाण्डके बाद समरकन्दकी आबादी एक चौथाई रह गई।

समरकन्दकी विजय के बाद चिगिसने मेनाको थोड़ा विध्वंस लेने दिया।

६. जूची की सफलता

जूचीके अधीन जो सेना निम्न सिर-दरियाकी ओर भेजी गई थी, वह पहिले सिगनाक (उत्तर-रार से २४ फरसख^१) पहुँची। जूचीने हसन हाजीको भेजकर नागरिकोंको आत्मसमर्पण करनेके लिए कहा। निवासियोंने हाजीको मार डाला। मंगोलोंके सामने इसमें बड़ा अपराध कोई हो

^१ फरसख—१६०० हाथ, (६ मील)।

नहीं सकता था। ७ दिनके मुहासिरके बाद शहर पर कब्जा करके मंगोलोंने वहाके एक भी आदमीको जीता नहीं छोड़ा। हुसन्के पुत्रको नगरका शासक बना आगे बढ जूचीकी सेनाने उज्रगन्द, बरचिनलिंगकन्त और अशनासको ले लिया। अशनासकी सेना गुडो और बदमाशोको मिलाकर सगठित की गई थी, जिन्होंने मंगोलोका सख्त मुकाबिला किया। ओगुत् कबीलेके चीन तीमूर पीछे ईरानमें सेनापति—को—जन्दवालोसे बात करनेके लिये भेजा गया। लोगोंने उसके साथ बुरा सलूक किया। जूची अभी आक्रमण न कर कपचको (कगलिघो) की बस्ती कारकोरम में विश्राम करना चाहता था। २१ अप्रैल १२२० को उसे नागरिकोंके दुराग्रहके कारण आगे बढना पडा। नागरिकोंने नगर-द्वार बन्द कर लिया, लेकिन प्रतिरोधके लिये बहुत लडाई नहीं की, इसलिये जन्दके विजय होनेपर जिन लोगोंने चीन तीमूरके साथ बुरा बर्ताव किया था, उन्हीको मारा गया। अली ख्वाजा बुखारीको जूचीने यहाका राज्यपाल नियुक्त किया। जूची इसके लिये वहा नहीं ठहरा। दूसरे साल उसने ख्वारेज्मपर चढाई हुई। मंगोलोकी जो सेना यहा छोड दी गई थी, उसीने जाकर बिना रोक-टोकके यानीकन्त (शहरकन्त) ले लिया। जिन शहरोको मंगोल जीतकर वहा अपने शासक नियुक्त करते जा रहे थे, वह उनके हाथमें बराबर नहीं रहे और मंगोलोकी भी यही मशा थी। वह चाहते थे, कि सबसे बडी प्रतिरोधक शक्तियोंको पहिले खतम किया जाय, फिर छोटीको दबाना मुश्किल नहीं होगा।

सेनापति अलाक नोयन (बारिन)के नेतृत्वमें ५ हजारकी वाहिनी बनाकतपर गई। कोखोता कबीलेके सेनापति सुकेतु और तुगाई दूसरे मंगोल-सेनापति थे, जो इस वाहिनीके साथ गये थे। इलालगूमली के तुर्क सैनिकोंने तीन दिन तक मुकाबिला किया, फिर शहरने आत्मसमर्पण कर दिया। छावनीके सैनिक मार डाले गये, कारीगर और तरुण मुहासिरे सबधी कामोके लिये साथ ले लिये गये। नगरमें लूट-मार हुई। यहासे सेना समरकन्दमें चिंगिसके पास चली गई।

५० हजार दूसरे सैनिकोंके साथ २० हजार मंगोलोको चिंगिसने फरगाना-विजयके लिये भेजा। वहाके शासक तीमूर मलिकने जब देखा, कि शहरमें रहकर हम कुछ नहीं कर सकते, तो अपने हजार साथियोंके साथ सिर-नदीके बीचके एक टापूमें चला गया। यह टापू खोजन्दसे एक वर्स्त (१ मील) नीचे था। १८९६ ई० में रूसियोंने यहा खुदायी की, जिसमें बहुतसे सोने-चादी-तांबे के सिक्के, धरेलू कामके बहुत तरहके बर्तन तथा दूसरी चीजे मिली थी। यह टापू तटसे काफी दूर था, इसलिये तैमूर मलिकके आदमियों तक न बाण पहुच सकता था, न कतापुलतसे फेके पत्थर ही। मंगोलोंने बन्दियोंको दस दस की टुकडीमें बाटकर उनपर एक-एक मंगोलको नियुक्त किया। वह खोजन्दसे तीन फरसखपर अवस्थित पहाडीसे पत्थर काटकर ढोने लगे और मंगोल सवार इस पत्थरको नदीमें फेककर बाध बाधने लगे। शायद बाध तैयार हो गया था अथवा रसदकी कमी पड गयी, इसलिये तैमूर मलिक टापू-छोडनेके लिये बाध्य हुआ।

पहिले ही से छिपा रखी ७ नावो पर रसद और आदमियोंको चढाकर वह रातके समय मशालकी रोशनीमें दरियाके नीचेकी ओर भाग चला। दोनो किनारोसे मंगोल बाण-वर्षा करते हुए पीछा करने लगे। बनावकतके नजदीक मंगोलोंने सिर-दरियामें जजीर डालकर नावोको रोक-नेकी कोशिश की, लेकिन तैमूर मलिक निकल भागनेमें सफल हुआ। बरचीनलिंगकन्त और जन्दके पास उलुस इदीने नावोका पुल बाध कर कतापुलत (पत्थर फेकनेका यंत्र) खडा कर रखा था। तैमूर जम्ममें एन्डिजे की जूलीके सिने —

पीछा कर रहे थे। रमदपानी और सारे अनुचर खतम हो गये, तो भी वह पराक्रमी वीर अकेले ख्वारेज्म पहुँचा। तैमूर इसके बाद भी मुहम्मदके उत्तराधिकारी जलालुद्दीनकी ओरसे लड़ता रहा। मुगलमानीकी ओरने कभी कभी आदिमियोंकी अब्धुत पराक्रमके साथ लड़ते देखा गया लेकिन वह मूट्ठी भर ही रहे। एक विशाल सेनाको पूरी तीरमे संगठित करके प्रतिरोध करने में वह कभी मक़द नही हुए, इमीलिया तातारी (मंगोला) की मुख्य सेनाके सामने उन्हें बराबर पीछे हटना पड़ा। मंगोलोंकी आँर मुश्किलमे कही व्यक्तिगत वीरताके असाधारण उदाहरण मिले, पर उनमें गजबका अनुशासन था। उनके बड़े बड़े सेनापति अपने स्वामीकी इच्छाके आज्ञाकारी चतुर सेवक के सिवाय और कुछ नही थे। स्थितिके अनुसार अपनी सेनाओको अलग करते, फिर इकट्ठा करने और बड़ी तेजीके साथ आक्रमण करते हुए वह इस बातका ध्यान रखते थे, कि किमी एक जगहकी असफलताके कारण सारी योजना न बिगड़ हो जाय। बड़े कठोर अनुशासनमें पले हुए मंगोल सैनिक किमी समय इस बातकी कोशिश नही करते थे, कि अपने को अपने साथियोंसे बेहतर योद्धा साबित करें। उनका काम यही था, कि प्रभु या नेता जो आज्ञा दें, उसे अक्षरशः पालन करें। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने यद्यपि अपने राज्यको बहुत बढ़ाया था, उसकी धाक भी बहुत ज्यादा थी, लेकिन मंगोलोंकी लौह सेनासे जब उसका सामना पड़ा, तो वह उनना भी प्रतिरोध नही कर सका, जितना कि उसके पुत्र जलालुद्दीन ने किया। बदरुद्दीनकी सम्मतिमे ख्वारेज्मशाही के सेनापतियोंने चिंगिसको कितने ही पत्र लिखे थे, जो ख्वारेज्मशाहके हाथ में पड़ गये। इसके कारण उसको और भी सदेह हो गया। वह अपने आदिमियों पर विश्वास नही कर सकता था। वक्षु नदीके तटपर कालिफ और अन्दखुदके घाटोको ख्वारेज्मशाहने रोक रखा था। वहासे उसने समरकन्दकी सहायताके लिये १० हजार सवार और २० हजार सेना भेजी, मगर वह वहा तक नही पहुँच सकी।

७. मुहम्मद का अन्त

समरकन्दकी विजयके बाद चिंगिसने फिर अपनी सेनाका नई तौरसे विभाजन किया— (१) एक वाहिनी खोजन्द और फरगानाके लिये, (२) सेनापति अलाक नोयन और हजारी यसाउर (जालेरी) की वाहिनी वख़्श, तालकान और कुलाबके लिये, (३) जेबे, सुबोतइ और तोकूचरा बहादुरके नेतृत्वमे तीनों वाहिनियोंको भेजते हुए चिंगिसने हुक्म दिया—शान्त निवासियोंको बिना छेड़े ख्वारेज्मशाहका पीछा करो।

ऐसा करनेसे पहिले ही ७ हजार कराखिताई सेना ओर अलाउद्दीन (अलाउलमुल्क) ने सुल्तान को छोड़कर चिंगिसकी ओर जा कर सुल्तानकी सैनिक कमजोरियोंको बतलाया। इराकके शासकके पुत्र रुकुनुद्दीनके वजीरकी सम्मति मान सेना न जमाकर सुल्तान उम प्रदेशमें चला गया। अलाउद्दीनने बहुत समझाया—“सेनाको अपने पास रखना चाहिये, नही तो प्रजा राजवशको दोषी ठहराते कहेंगी” शान्तिके समय कर ले लेकर खाते रहे और सकटके समय पीठ दिखाकर भाग गये।” सुल्तानके दोनों पुत्र मृत्युके समय तक पिताके साथ रहे। जेबे और उसकी सेनाके आनेके पूर्व ही सुल्तानने वक्षु-तट छोड़ दिया। पजाब (मध्य-एशिया) में देखभाल के लिये एक चौकी छोड़कर मंगोल सेना सिर-दरियाकी भाति वक्षुकी भी आसानीसे पार हो गई। लकडीका एक लम्बा सा ढाचा बना वह उसे बैलके चमड़ेसे मढ़ देते, जिससे उसके भीतर पानी नही जाता।

इसी चमडेकी नावमें अपने बर्तन और हथियार भी रख, घोड़ेको पानीमें डाल देते, और उनकी पूछ पकड़कर चमडेकी नाव को हाथ लगाये पार हो जाते। इस प्रकार हरेक चीज—घोड़ा, हथियार, रसद और आदमी—एक ही साथ नदीके परले पार पहुँच जाते। इतिहासकार इब्नुल्असीरकी उपरोक्त बातमें थोड़ी सी भूल मालूम होती है। प्लानो कार्पीनीने मंगोलोंके बारेमें कहा है—“उनके पास एक हलकासा गोल चमड़ा होता है, जिसके सिरे पर बहुतसी मुद्धिया रहती हैं। इन मुद्धियोंके भीतरसे एक रस्सी पार कराकर इतना कस दिया जाता है कि भीतर एक छोटा सा गोल अवकाश बन जाता है। जिसमें कपड़ा, हथियार और दूसरी चीजे डालकर मुहको खूब अच्छी तरह बांध दिया जाता है। जीन और दूसरे कड़े सामान बीचमें रख दिये जाते हैं, जिनके ऊपर आदमी बैठ जाते हैं। इस प्रकार तैयार किया हुआ पात्र घोड़ेकी पूछसे बांध दिया जाता है। एक आदमी रास्ता दिखानेके लिये घोड़ेपर आगे आगे तैरता चलता है। कभी कभी पासमें पतवार भी होती है, जिसके द्वारा वह अपने चमडेकी नावको खेतें है। घोड़ेको पानीमें खदेड़ दिया जाता है। एक सवार घोड़ा तैराते आगे आगे चलता है, बाकी घोड़े उसका अनुसरण करते हैं। गरीब मंगोलोंमें हरेक आदमीके पास एक-एक अच्छी तरह सिया हुआ चमडेका थैला रहता है, जिसमें वह अपने कपड़े तथा दूसरी चीजोंको रखकर मुहको अच्छी तरह बांध घोड़ेकी पूछमें बांध देता है, फिर उपरोक्त क्रमसे नदी पार कर जाता है।” नदी पार करनेके लिये जो चमडेका थैला इस्तेमाल किया जाता है, वही रेगिस्तानी यात्रामें पानी भरनेकी मशकका काम देता है। मंगोलोंके कमसरियतका संगठन कितना सरल और मजबूत था, यह उपरोक्त वर्णनसे मालूम होगा।

ख्वारेज्मशाहने कहीं भी चिंगिससे डटकर लड़नेकी कोशिश नहीं की। सिरदरिया, समरकन्द, वक्षु (आमू दरिया) सब जगह वह पीठ ही दिखाता रहा। १८ अप्रैल १२२० ई० को नेशापोर पहुँचनेपर उसे खबर मिली, कि मंगोल वक्षु पार हो गये। भयके मारे सुल्तान एक दिन भी नेशापोरमें नहीं ठहरा। विस्तारमें उसने रत्नोंसे भरी दो सड़के अरदहन भेजनेके लिये अपने दरबारी वकील अमीन ताजुद्दीन उमर बिस्तामीको सुपुर्द कीं। इसी किलेमें पीछे सुल्तानका शव भी आया। रत्न नहीं बच सके। किलेको पीछे मंगोलोंने दखल कर लिया और उन्होंने सड़के लेकर चिंगिस खानके पास भेज दी। ख्वारेज्मशाह रे (तेहरान) होते कजवीन भागा, जहाँ उसका पुत्र रकुनुद्दीन गूरगजी ३० हजार सेनाके साथ पड़ा हुआ था। जेबे और सुबुतइके पास इतनी सेना नहीं थी, जिसके साथ कि वह पीछा कर रहे थे। उनको नष्ट कर डालनेका यह बड़ा अच्छा मौका था, लेकिन सुल्तान तो हर मौकेपर चूकनेका का ही ढंग जानता था। उसने अपनी रानी (गयासुद्दीन पीरशाहकी मा) और दूसरी स्त्रियोंको कारूनके किलेमें भेज दिया, जिसका किलेदार ताजुद्दीन तुगान था। अताबेग नसरतुद्दीन हजारास्प लूरिस्तानीको बुलाकर राय पूछनेपर उसने सलाह दी, कि लूरिस्तान पारसकी पर्वतमालाके पीछे तथा उर्वर प्रदेश है। वहाँ चलकर लूरियो, शूलियो और पारसियोंकी १ लाख सेना जमाकर मंगोलोंको मार भगाया जाये। सुल्तानने उसकी सलाहका यह अर्थ लगाया, कि वह मेरे द्वारा अपने दुश्मन फारसको अताबेगसे बदला लेनेके लिये यह सब कह रहा है। सुल्तान इराकमें ही था, कि पता लगा, मंगोल और नजदीक आ गये। वह अपने पुत्री सहित भागकर कारूनके किलेमें चला गया। वहाँ भी केवल एक दिन रहा, फिर पश्चिमदर्शक और सवारीके छोड़े के मंगल

रास्तेपर मंगोलोंमें बचने हुए आगे बढ़ा। कूचके समय मंगोल अपने नमड़े, घोड़े, हथियारके मित्राय और कुछ नहीं रखने थे। वह किमीकी लूटने नहीं थे, न घरोकी जलाने थे, न पशुओको मारने थे। हा, कुछ लोगोंको घायल करके मार डालते या कमसे कम रास्तेमें भगा देते थे। पहिली बार ज्यादा कड़ाई करने थे—लानो कागपीनी जैमे सममयायिक लेखकोने उनके बारेमें यही लिखा है।

जेबे और सुबुतङ रास्तेमें कहीं भी लूटने, मारनेके लिये न रुकने अपने कदमको नेत्र करने सुल्तान का पीछा कर रहे थे। वह उमें कहीं सुस्ताने नहीं देने थे। चिंगिस खानकी आज्ञा पालन करने उन्होंने रास्तेमें खुरामानके किमी नगरको कोई भी हानि नहीं पहुँचाई; मित्राय बूशाग (हिरान प्रदेश) के, जहाँ एक मंगोल सैन्य मार दिया गया था। उन्होंने इस शहरको बरबाद कर दिया, हर एक आदमीको मार डाला। तुकूचारने कहीं से अपने कानमें एक दाना ले लिया था, जिसके लिये चिंगिसने उसे प्राण-दण्ड की सजा दे दी, पीछे पड़बूत कर दिया। सुबुतयाने बिना कठिनाई के रे (तेहरान) को जीत लिया। पता लगा, सुल्तान हमदानकी ओर भागा जा रहा है। मंगोलोंके आनेसे पहिले ही सुल्तान रसे खाना हो चुका था। कजबीन और कासन के बीच मंगोल सुल्तानसे मिले, मगर वह पहिचान न सके। उन्होंने कुछ बाण छोड़े, जिनसे सुल्तान घायल होकर कारूनके किलेमें पहुँचा। जब मंगोलोंने किलेका मुहासिरा किया, तो सुल्तान उसे छोड़ चुका था। वह रास्ता बदलकर सरेचाहान पहुँच गया। मंगोल रास्ता भूल गये, जिनपर उन्होंने अपने पथप्रदर्शकको मार डाला और वह फिर लौट पड़े। अन्तमें २० हजार सेनाके साथ सुल्तान हमदानके पास दौलताबादके मुहासिरें फस गया, जिससे वह बहुत मुश्किलसे निकल सका। उसके अधिकांश अनुयायी यही मारे गये। पश्चिमी सीमातके पास जा कर केवल यही एक लड़ाई हुई। यद्यपि उसके पास मंगोलोंसे अधिक सेना थी, लेकिन तो भी लड़नेकी जगह सुल्तानने भागकर प्राण बचाना ही पसन्द किया। हमदानसे लौटते वक्त मंगोलोंने जुनजान और कजबीनको नष्ट कर दिया। बेग तागुद और कुचबुगा खानके नेतृत्वमें मिली ख्वारेज्मी सेनाको भी उन्होंने यही कही नष्ट किया। जाडेके आरम्भमें मंगोलोंने आनुरबायजानपर आक्रमण किया। अईबील ध्वस्त हुआ। कास्पियन तटपर अवस्थित मुगानको भी उन्होंने बरबाद किया। रास्तेमें गुर्जियो (जाजियन) के साथ लड़ाई हुई, लेकिन तब तक मुहम्मद ख्वारेज्मशाह दुनियासे चले बसा था।

अन्तमें भागते हुए मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने अब्सकून शहरके पास एक द्वीपमें जाकर शरण ली, जो कि गुरगान नदीके मुखपर गुरगान शहरसे तीन दिनके रास्तेपर अवस्थित था। शायद वह वर्तमान अशुरआदेका द्वीप था। वहाँ पहुँचते समय ही वह गुर्दे की बीमारीसे बहुत पीड़ित हो गया, जीनेकी आशा नहीं रह गई। मरते समय उसने अपने अनुयायियोंको बड़ी उदारताके साथ पक्षियों, दर्जे, जागीरे प्रदान की, जिनको उसके पुत्र जलालुद्दीनने भी माना। इसी द्वीपमें दिसम्बर १२२० ई० में सुल्तान मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने सदा के लिये आखिरी मूद ली। उसके पास कफनका कपड़ा भी नहीं था, जिसके लिये एक अनुचर ने अपना चोगा दिया। एक रूसी इतिहासकारने लिखा है—“यह था अन्त एक ऐसे बादशाहका, जिसने कि सल्जुकी साम्राज्यके अधिकांश भाग को एक छत्रछायामें ला दिया था। मंगोल आक्रमणके समय उसने बड़ी निन्दनीय कमजोरी दिखलाई।”

मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके रूपमें इस्लामको, ऐसियाके सारे मुसलिम देशोंको ही नहीं बल्कि भारतके पराजित प्रदेशको भी एक साम्राज्यके रूपमें परिणत करनेका आखिरी मौका मिला था । अभी उस विशाल इस्लामिक साम्राज्यकी सीमाये स्पष्ट नहीं थी, लेकिन वह धीरे धीरे उभड़ती आ रही थी । जान पड़ता है, मुहम्मद अपने पड़ोसियोंकी निर्बलताके कारण सफल हुआ था । यदि उसमें अपनी वैसी क्षमता होती, और इस्लामिक जगतके शासक-वर्गमें अपने स्वार्थोंके लिये भीषण फूट न होती, तो शायद चिंगिसको विश्व-विजयका ख्याल भी न आता । एक तरफ चिंगिस था, जो कि जबर्दस्तसे जबर्दस्त उत्तेजनाके समय भी उत्तेजित हो अपनी बुद्धिको खो नहीं बैठता था । सगठन करनेमें अद्वितीय था, पास आये लोगोंको अपने आकर्षणसे इतना बाध लेता, कि वह कभी उसे छोड़नेका ख्याल नहीं करते । अनुशासन और शिक्षा-दीक्षा द्वारा साधारण अनपढ़ घुमन्तू तस्फोको जेबी और सुबुताय जैसा महान् सेनापति बना देता । दूसरी तरफ तुर्कान खातूनका पुत्र मुहम्मद ख्वारेज्मशाह था, जो अपने सहायको और अनुचरोको ही नहीं अपनी माँ को भी अपना जानी दुश्मन बना लेता, किसी बातके निर्णय करनेकी शक्ति नहीं रखता और योद्धाका निर्भीक हृदय तो मानो उसे मिला ही नहीं था ।

८ जलालुद्दीन^१ मुहम्मद-पुत्र (१२२०-१२३१ ई०)

मुहम्मदका उत्तराधिकारी जलालुद्दीन यदि बापकी जगह गद्दीपर बैठा होता, तो शायद मंगोलोंको इतनी आसानीसे सफलता नहीं मिली होती, लेकिन जलालुद्दीनको तो उस वक्त गद्दी मिली, जबकि विशाल ख्वारेज्मी साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो चुका था, उसकी सैनिक शक्ति तितर-बितर हो गई थी । १२२० ई० के वसन्तमें सारा अन्तर्वेद चिंगिसके अधीन हो गया था । समरकन्दसे उसने नूशाबस्कामको बुखाराका मंगोल शासक बनाकर भेजा था । गरमियोंको चिंगिसने नशाब (नखशाब) में बिताया । इतनी मजिल मारनेके बाद घोड़ोंको चरने तथा विश्राम लेनेके लिये छोड़ना आवश्यक था । चिंगिसके निवासके कारण पीछे नशाब एक पवित्र स्थान बन गया, जहा पिछले जमानेमें मंगोल सेनप अक्सर गर्मियाँ बिताया करते । एक जगताई खानने यहा महल (करशो) बनवाया जिसके कारण इसका वर्तमान नाम पड़ा । बाबरने पानीकी शिकायत करते हुए भी यहाके वसन्तके सौंदर्यकी बड़ी प्रशंसा की है । मंगोलोंके आनेके पहिले ही किश (शहरसब्ज) की महिमा घट चुकी थी, और अब उनके आनेके बाद नशाबके भाग्यने पलटा खाय़ा । शरदमें चिंगिस जाकर तेरमिजके ऊपर पड़ा । लोगोंने आत्म-समर्पण करनेमें इन्कार कर दिया । फिर दोनों ओरसे कतापुलतकी मार शुरू हुई । अन्तमें मंगोलोंकी मारके सामने प्रतिरक्षियोंके हथियार कुठित हो गये । ११ दिनके मुहासिरेके बाद किला सर हुआ । प्रतिरोधी नगरोंके लिये उपयुक्त दण्ड तेरमिजको मिला—नगरको नष्ट कर सभी निवासियोंको मार डाला गया । १२२०-१२२१ के जाडोको चिंगिसने वक्षु तटपर बिताया । सभी बड़ी नदियोंकी तरह वक्षुका कछार भी घुमन्तुओंके शरद-निवासके लिये बहुत उपयुक्त स्थान था । पीछे जगताईने “सालीसराय” के नामसे यहा अपनी एक राजधानी बनवाई ।

^१Turkistan (Bartold)

(१) विद्याकेन्द्र ख्वारेज्म—

त्रिगिस ख्वारेज्मशाहमे लड रहा था, लेकिन अभी तक हुए उसके सारे मघर्ष ख्वारेज्मकी भूमिपर नहीं हुए थे। यह पहिले ही कह आये हैं, कि मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने अपनी राजधानी ममरकन्द मानी थी और ख्वारेज्मपर उसके पुत्रकी अभिभाविकाके तौर पर राजमाता तुर्कान खातूनका शासन था। ख्वारेज्म सेनाका भारी भाग और उसके सेनापति भी तुर्क थे, जिनमेमे अधिकांश तुर्कान खातूनके मातृपक्षीय थे। इसीलिये तुर्कान खातून सैनिक वर्गकी मुखिया थी। ख्वारेज्म बड़ा समृद्ध प्रदेश था और १२०८ ई० में शहाबुद्दीन गोरीके हमलेसे बाल-बाल बचा था। बाहरमे आई लक्ष्मी यहा धीरे धीरे जमा होती गई थी। ११ वी-१२ वी सदी वह समय था, जब कि मुसलिम जगतकी शक्ति एकताबद्ध हो आगे नहीं बढ़ रही थी। भिन्न-भिन्न विद्या और सम्प्रदायों बड़े पराजित देशोंकी बहुत कुछ अवतति हो चुकी थी, क्योंकि जिस गतिसे मुसलमानोंने ध्वंसका काम किया, उसी गतिसे निर्माणका काम नहीं किया। इसमें शक नहीं, बगदादी खलीफोंके आरम्भक जमानेमें दुनियाके ज्ञान-विज्ञानके अनुवाद और प्रचारका कितना ही काम हुआ था, लेकिन इस्लामकी सफलतामें ज्ञान-विज्ञानको नहीं बल्कि धर्मान्धताको परम सहायक माना गया था। ख्वारेज्मने अपनी पिछड़ी पीढ़ियोंकी देनको अभी उतना नहीं खोया था। अभी भी वह अपनी विद्या-निधियोंका रक्षक तथा विद्वानोंका पृष्ठपोषक था। इसी समय बहुत से महत्वपूर्ण ग्रंथ संग्रह किये गये थे। शहरिस्तानी १११६ (५१० हि०) में ख्वारेज्मका अच्छा विचारक हुआ। “वह एक अच्छा विद्वान् था। यदि उसके विचारों और रुचियोंपर दर्शन या नास्तिकताका प्रभाव न होता, तो वह इमाम (धार्मिक नेता) बना होता। यह देखकर आश्चर्य होता है, कि जहा उसकी विद्या और विचारोंकी परिपूर्णता देखकर आश्चर्य करना पड़ता है, वहा किन्हीं किन्हीं बातोंमें वह ऐसे विचार रखता है, जिनका कोई आधार नहीं। वह ऐसे विषयोंको पसंद करता, जिनका कि न कोई बौद्धिक प्रमाण था, न पारम्परिक—दीनके प्रकाशके प्रति विश्वासघात और इन्कार करनेसे भगवान् हमारी रक्षा करे। इस सबका कारण यही था कि वह शरीयत (धर्मशास्त्र) के प्रकाशमें मुह मोड़कर दर्शनके घपलेमें पड़ गया। हम उसके पड़ोसी और सहायक थे। वह यह समझानेकी बड़ी कोशिश करता था, कि (ग्रीक) दार्शनिकों के विचार बहुत ठीक हैं, और उनके विरुद्ध जो आक्षेप किये जाते हैं, वह गलत हैं। कुछ सभाओंमें मैं भी मौजूद था, जिनमें वह उपदेशकका कर्तव्य पालन करते (उपदेश दे) रहा था। मैंने एक बार भी उसके मुहसे यह कहने नहीं सुना ‘अल्लाहने ऐसे कहा’ अथवा ‘अल्लाके पैगम्बरने ऐसा कहा’ और न कभी उसने शरीयतकी एक भी गुत्थीके बारेमें अपना कोई निश्चय प्रकट किया। अल्लाह ही जानता है, उसके क्या विचार थे।’ शहरिस्तानीके बारेमें यह एक समसामयिक इतिहासकारके उद्गार थे।

राजवंशके अन्तिम समयमें कवि फखरुद्दीन राजी ख्वारेज्म-दरबारमें रहा। कवि मुबारक शाह हुसैन बिन मरवारीदी फखरुद्दीन (मृ० १२०६ ई०) ने गोरियोंके दरबारमें रहते अपना घर बनवाया था, जिसमें पुस्तकोंका बड़ा अच्छा संग्रह था, जिसके साथ वहा शतरंज भी रक्खा रहता था। वहा बैठकर विद्वान् स्वाध्यायका आनन्द लेते। इसी तरह गूरगाचमें वकील शहाबुद्दीन खीवगी पाच मदसों (विद्यापीठों) में अध्यापक था। उसने शाफई जामा-मस्जिदके पास ऐसा विशाल

पुस्तकालय स्थापित किया था, जिसके बारेमें कहा जाता है “न भूतो न भविष्यति”। मंगोलोके आक्रमणकी खबर सुनकर उसे ख्वारेज्म छोड़ना पड़ा। अपनी पुस्तकोको छोड़ते वक्त उसे बड़ा दुःख हुआ और उनमेंसे कितनी ही महत्वपूर्ण पुस्तकोको वह अपने साथ लेता गया। वह नसामे था, जबकि चिंगिसके दामाद तोकूचारने उस शहरको जीता। उसी समय शाहाबुद्दीन मारा गया। मरनेके बाद उसकी किताबें दूसरोंके हाथमें चली गयीं, जिन्हें इतिहासकार नसावीने फिरसे जमा करनेमें सफलता पाई, लेकिन पीछे वह भी यह कहते हुए देश छोड़नेके लिये मजबूर हुआ — “मैंने जो चीजें वहाँ छोड़ी, उनमें केवल पुस्तकोके लिये ही मुझे दुःख है।” शाहजादा गयासुद्दीन पीरशाहने जब नसाको दखल किया, तो पुस्तकोका सग्रह लुप्त हो गया।

(२) ख्वारेज्म का पतन

ख्वारेज्म जैसे समृद्ध देश और तुर्कों जैसी वीर सेना तुर्कान खातूनके हाथमें थी, जिससे वह जूचीको काफी परेशान कर सकती थी, इसे चिंगिस भी जानता था। इसीलिये चिंगिसने दूत भेजकर खातून को कहलवाया—मेरी तुमसे कोई दुश्मनी नहीं है। मैं तो केवल तुम्हारे पुत्रके अत्याचारोंके कारण उसमें लड़ रहा हूँ। दूतके आनेके बाद ही यह खबर मिली, कि सुल्तान वक्षु पार भाग गया। मा बेचारीकी हिम्मत क्या होती, उसने भी पुत्रका अनुसरण किया। राजधानी छोड़नेसे पहिले खातूनने गुरगाचमें बन्दी पड़े सारे शाहजादोंको नदीमें डुबोनेका हुक्म दे दिया। इन मरनेवाले में २० शाहजादों तथा अपने भाई और दो भतीजोंके साथ बुखाराका सदर बुरहान-उद्दीन भी था। खातून पहले भागकर याजिर (पश्चिमी तुर्कमानिया) गयी। फिर वहाँसे माजन्दरान प्रदेशमें लारजान और इलालके किलोमें उसने शरण ली। मंगोलोंने तुर्कान खातूनको वहाँ जा घेरा। उस विशाल किलेके चारों ओर लकड़ीका घेरा बना बाहरसे सबध-विच्छेद करा दिया। वर्षा नहीं हुई, इसलिये पानीकी कमीके कारण चार मास बाद इलालके किलेका पतन हुआ। पतनके बाद भारी वर्षा शुरू हुई। मंगोलोंने वहाँ मिली शाहजादियोंको वाट लिया। उस्मान खान समरकन्दकी बेवा खान सुल्तानकी जूचीने लिया। पीछे उसने एमिलके एक रगरेजकी बीबी बनकर अपनी जिन्दगी बितायी। तुर्कान खातूनको पकड़कर मंगोलिया भेजा गया। जहाँ वह १३३२ (६३० हि०) तक जिन्दा रही। देश छोड़नेके समय उसे तथा दूसरी स्त्रियोंको आज्ञा दी गई, कि वह अपने दुःखको जोरके साथ क्रन्दन करके प्रकट करे। खातूनके वजीर निजामुल्मुल्क को १२२१ में कत्ल करवा दिया गया था।

खातूनके राजधानी छोड़कर भागनेपर अली कूहे-दुरुगानने राजकीय खजाने और दूसरी चीजोंको अपने हाथमें कर लिया। १२२० की गर्मियोंमें खोजन्दसे भागा वीर तैमूर मलिक ख्वारेज्म पहुँचा था। ऐसे योग्य नेताको पाकर सेनाने आक्रमण कर जूचीके हाथसे यानीकन्तको छीन कर मंगोल शासकको मार डाला। जाडो तक शासन-प्रबन्ध भी फिरसे ठीक कर लिया गया, जिसका श्रेय मुशरिफ इमादुद्दीन और वकील शरफुद्दीनको था। उन्होंने लोगोंमें घोषित कर दिया, कि सुल्तान मुहम्मद शाह जिन्दा है, हम उसके पाससे आये हैं। इसके थोड़े ही समय बाद ख्वारेज्मी शाहजादे जलालुद्दीन, उजलगशाह और अकशाह पहुँच गये। शाहजादे मृत्युके समय तक सुल्तानके साथ रहे थे और पिता को दफनाने के बाद सवारों के साथ मनकिशलक आ वटाके निवासियोंमें छोड़े के मजबूरी करने लगे —

सुल्तानकी मृत्युकी घोषणा कर दी। मृत सुल्तानने उजलगशाहको गद्दी देनेकी वसीयत की थी, जिसे हराकर जलालुद्दीन गद्दी पर बैठा। उजलगके कहनेपर भी झगडा नहीं मिटा और पहिले का शामक कुतुलुक खान तूजी पहलवान—जो ७ हजार सवारों का मेनप था—पडग्र करनेके लिये तैयार हो गया। खबर पाने पर जलालुद्दीन, तैमूर मलिक और ३ सौ सवारोंको साथ ले खुरामानकी ओर भागा। चिंगिस जैमा भयकर शत्रु मिरपर था, लेकिन तब भी वह अपने भीतरी झगडोंको मिटानेके लिये तैयार नहीं थे। जलालुद्दीनके जानेंके ३ दिन बाद मंगोलोंके आ पहुंचनेकी खबर सुन उजलग और अकशाह भी ख्वारेज्म छांडकर भागे।

सिंहामनके लिये लड़नेवाले गाहजादोंकेहटते ही सभी सेनापति एक ही गुरगाचकी रक्षाके लिये तैयार हो गये। किमी किमी इतिहासकारका मत है, कि उन्हीमेंसे एक तथा तुर्कान खातूनके सवथी खुमारतगिनने सुल्तानकी पदवी धारण की। दूसरे सेनापति थे आंगुल हाजिब (बुखारा प्रतिरक्षक), गरबुका पहलवान और अली कूहे-डुरुगान (सिपहसालार)। गुरगाच जैसे बड़े शहरको जीतनेके लिये चिंगिसने एक और बड़ी सेना भेजी। दक्षिण-पूर्वसे जगतइ और उगुतइ की सेना बुखारा होते ख्वारेज्मकी ओर बढ़ी, और उत्तर-पूर्व से जूचीकी सेना। जूचीके आनेसे पहिले ही मंगोल सेनाकी सख्या १ लाख हो गई थी। धोखा देनेके लिये थोड़ी सख्यामें आकर मंगोलोंने डोंगोको हाकना शुरू किया। नगर-रक्षक उनके फेरमें पडकर दरवाजा-आलमीमें निकल उनका पीछा करने लगे। एक फर्पख पर बागखुरंम था, जहा पर मंगोल छापा मारनेके लिये तैयार थे। उन्होंने सूर्यास्तमें पहिले ही एक हजार ख्वारेज्मियोंका वध कर दिया, बाकी बचीका पीछा करने वह अकावीलान दरवाजेसे शहरके भीतर घुस गये, लेकिन अबेरा हीनेसे पहिले ही बाहर हो गये। अगले दिन युद्ध शुरू हुआ। मंगोल दरवाजा तोड़नेकी कोशिश कर रहे थे। फरीदून गोरी ५०० योद्धाओंके साथ उसकी रक्षा कर रहा था। इसी समय जगतइ और उगुतइकी सेना आ पहुंची। आत्मसमर्पणके लिये बातचीत होने लगी और साथ ही मंगोल मुहासिरा करने की नैयारी भी करने लगे। मंगोलोंका एक बडा हथियार था कतापुल्ल, जिसके द्वारा वह बड़े बड़े पत्थर फेकते थे। गुरगाचके पास कोई पहाड नहीं था, इसलिये उन्होंने तूतके वृक्षोंको काटकर उनका गोला बनाया। हरेक पेडको गोल-गोल टुकडोंमें काटा जाता, फिर उन्हें पानीमें इतना भिगोया जाता, कि वह काफी बड़े हो जाय।

जूचीके आने ही नगरको चारों ओरसे घेर लिया गया। साथ आये बन्दियोंने दस दिनोंमें खाइया पाट दी, फिर दीवार ढानेके लिए सुरंग खुदने लगी। मंगोलोंकी कार्रवाइयोंको देखकर खुमारतगिन इतना डर गया, कि वह आत्मसमर्पण के लिये दरवाजेसे बाहर निकल आया। इसका प्रभाव दूसरोंपर बुरा पडा, तो भी प्रतिरोध जारी रहा। सुल्तान खुमारके आत्मसमर्पण के समय ही मंगोल अपने झंडेको प्राकार पर गाड चुके थे, लेकिन नागरिकोंके प्रतिरोध के कारण उन्हें एक-एक सड़क और एक-एक मुहल्लेके लिये लडना पडा। भाडोंमें नफ्या (मिट्टीका तेल) भरकर उसके जरिये उन्होंने घरीमें आग लगा दी। नगरका बहुत सा भाग जल गया था। जब उन्हें पता लगा कि आग अपना काम बहुत धीरे धीरे कर रही है, तो उन्होंने आमू दरियाके जलसे शहरको काटनेके लिये नदीपर एक पुल बनाना शुरू किया, जिसपर काम करनेके लिये तीन हजार मंगोल नियुक्त किये गये। ख्वारेज्मियोंने उन्हें घेरकर मार डाला। नगर प्राकार पर अधिकार होने तक ख्वारेज्मियोंसे अधिक मंगोल मारे गये थे। पुराने गुरगाचमें

मारे गये इन मंगोलोकी हड्डियोका पहाड खडा हो गया था । शायद गुरगाच जल्दी ही सर हो जाता, लेकिन चिंगिसके दोनो पुत्रो जगताइ और जूचीमे मतभेद हो गया । जूचीको मिलनेवाले प्रदेशमे होनेसे वह शहरको बचाना चाहता था, इसीलिए जोरका आक्रमण न कर वह लोगोको आत्मसमर्पण करनेके लिये कह रहा था । जूची नही चाहता था, कि दीहातको भी नष्ट कर दिया जाय । समझदार लोगोने प्रतिरोधको बेकार समझकर उसे बन्द करनेकी सलाह दी, लेकिन उनकी बात नही चली । उधर जूची किसी बातका जल्दी निश्चय नही कर रहा था, इसलिये उसका छोटा भाई जगताई बुरा मान गया । यह खबर जब चिंगिसको मिली, तो उसने तीनों सेनाओका प्रधान-सेनापति उगुतइको बनाया ।

मंगोल गुरगाचके मुहल्लोको एकके बाद एक दखल करते गये । जब प्रतिरक्षकोके हाथमे केवल तीन मुहल्ले रह गये, तो नागरिकोने आत्मसमर्पण करनेका निश्चय करके नगरके मुहतसिब फकीह अलीउद्दीन खैयातीको जूचीके पास दया की भिक्षा मागनेके लिये भेजा । लेकिन मंगोलोको इतना नुकसान उठाना पडा था, कि अब जूची भी उनकी प्रार्थना स्वीकार नही कर सकता । सभी नागरिकोको बाहर खेतोमे जमाकर उनमेसे कारीगरोको अलग किया गया । उस समय कितनोने अपने पेशेको इस ख्यालसे छिपाया, कि और शहरोकी तरह शायद उन्हें भी अपने शहरमे रहने दिया जाय । गुरगाचसे दो लाख कारीगर मिले, जिन्हें ले जाकर मंगोलोने अपने पूर्वी राज्य मे बहुतसी बस्तिया बसाईं । छोटे उम्रके बच्चो और स्त्रियोको उन्होने दास बना लिया । बाकी नागरिकोको मार डाला या गुलाम बना लिया । इतिहासकार रशी-दुद्दीनके अनुसार उस समय ५० हजार मंगोल सिपाहियोमे प्रत्येकको चौबीस गुलाम मिले थे । मंगोलोने अब तक जितने शहर लिये थे, उन सबसे अधिक आफत का पहाड गुरगाचके ऊपर ढाया गया । दूसरे शहरोमे कलआमके बाद कुछ आदमी बच भी रहे “कुछ लोग कहीं छिप गये, कुछ भाग गये, कुछ घसीटकर बाहर लाये जानेपर भी बच निकलनेमे सफल हुए, कुछने मुदोंके भीतर लटककर अपने प्राण बचाये ।” पर यहाँ कलआमके बाद मंगोलोने गुरगाचके बावको नष्ट कर दिया, जिससे सारे शहरमे पानी भर गया, जिसने इमारतोको भिगोकर ढा दिया । बहुत समय तक नगरकी भूमि पानीमे डूबी रही और जो भी तातारो (मंगोलो) से बचनेकी कोशिश करता, वह बाढमे अथवा मकानोके भीतर प्राण गवाता । गुरगाचमे केवल दो इमारतें बच रही जिनमे एक था कूशे-अखचक (प्राचीन प्रासाद) और दूसरा सुल्तान तकाशका मकबरा । इसी बाधके टूटनेके कारण ख्वारेज्मके और नगर भी पानीमे डूब गये और एक बार फिर वक्षु अपनी पुरानी धारसे काश्पियन समुद्रमे गिरने लगी । अप्रैल १२२१ मे गुरगाच पर मंगोलोका अधिकार हुआ । जगताइ और उगुताइ अपने पिताके पास तालकान लौट गये, जो उस नगरका मुहासिरा कर रहा था ।

(३) जलालुद्दीन भगोड़ा—

ख्वारेज्मी शाहजादोंके भागनेकी खबर सुनकर चिंगिसने खुरासानके उत्तरी सीमान्त नगरोमे गारद रख दिये । जलालुद्दीन अपने तीन सौ सवारोके साथ नसाके पडोस मे पडे सात सौ मंगोलोके ऊपर टूट पडा । उनमेंसे मुश्किलसे ही कुछ भाग निकलनेमे सफल हुए । उसके भाई उजलग और अकजाब मंगोल गुरगाचके पास मिले थे ।

घेरकर मार डाला। चंद दिनों बहा रहनेके बाद ६ फरवरी १२२१ को जलालुद्दीन नसामे आगे चला। जूजान (कोहिस्तान और खुरामानकी सीमा पर काइनमे तीन दिनके रास्ते पर) में उसने किलाबन्दी करनी चाही। लेकिन जब डमकी खबर बहाके निवासियोंकी मिली, तो मंगोलोंके सर्वनाशी कार्योंकी खबरोंसे भयभीत हो उन्होंने विरोध किया। जलालुद्दीन और आगे चला। बहा १० हजार मेना लेकर अमीनमुल्क उमने आ मिला, फिर दोनों कधार होने गजना पहुँचे।



११ चिंगिस साघा (१२२० ई०)

१२२१ के वसन्तमें चिंगिसने वधु पारकर बलखपर अधिकार किया। लोगोंने पहिले बिना रोक-टोकके आत्मसमर्पण किया, लेकिन पीछे विद्रोह कर दिया। इसपर मंगोलोंने शहरको लूटकर बरबाद कर दिया। बलख आज भी मादरेशहर (नगरोकी माता) कहा जाता है, किन्तु १२२१ में मंगोलों द्वारा मटियामेट किया यह शहर उसके बाद फिर आबाद नहीं हो सका। चिंगिसकी सेनाने वहासे आगे बढ़कर तालकानके पास नुसरतकोह (विजयपर्वत) के

किलेको जा घेरा । तालकान और बलखकी पहाडियोंके बीच मंगोल सेनाये पड़ी हुई थी । नुसरतका मुहासिरा नौ महीने तक रहा ।

(४) गजनी का झगडा—

गजनी बहुत समयसे गोरियोकी राजधानी रही । इस प्रदेशमे तुर्कोंसे गोरियोकी सख्या अधिक थी । महमूद गजनवीके तुर्कों और सहाबुद्दीनके गोरियोका वैमनस्य पहिलेसे ही चला आ रहा था, जिसने इस वक्त घोर रूप धारण किया । ख्वारेज्मशाहके स्वयं तुर्क होनेसे उसके अनुचर तुर्क अपनेको बडा समझते थे, लेकिन मंगोलोके सामने दुम दबाकर भागते इन तुर्कोंकी धाक अब गोरियोके मनमे बिलकुल नहीं रह गई थी । जलालुद्दीनने पेशावरके राज्यपाल इस्तियारुद्दीन मुहम्मद अली-पुत्र खरपोस्तको गजना बुला लिया था । गजनीके तुर्क राज्यपाल अमीन-लमुल्कको अनुपस्थित देखकर उसने शासनको अपने हाथमे लेना चाहा । अमीनलमुल्कने अधिकार-विभाजन कर देनेके लिए कहा । इसपर गोरी खरपोस्तने कहा—“गोरी और तुर्क एक साथ नहीं रह सकते ।” किलेदार सलाहुद्दीन नमाईने भोजके समय खरपोस्तका काम-तमाम कर दिया और गोरियोको खबर मिलनेसे पहिले ही शहरपर अधिकार कर लिया । दो-तीन दिन बाद आकर अमीनलमुल्कने शासन अपने हाथमे ले लिया । जिस समय गजनीमे यह घटनाएँ घट रही थी, उसी समय चिंगिस नसरतकूहका मुहासिरा किये हुए था । छोटी-छोटी मंगोल सेनाएँ आस-पासके इलाकोमे जाकर लड रही थी । अमीनलमुल्क दो तीन हजारकी एक मंगोल सेनाका पीछा करने गया । सलाहुद्दीनको अकेला पा गोरियोने उसे मार डाला और शासनका भार तेरमिजसे आए दो भाई रजीउलमुल्क और उम्दतुलमुल्कके हाथमे चला गया । रजीउलमुल्कने अपनेको सुल्तान घोषित किया । अब तुर्कों और गोरियोका झगडा दूर तक फैल गया । जब तुर्कोंको इस विश्वासघातका पता लगा, तो पेशावर, खुरासान, अन्तर्वेदके भगोडे खल्जी और तुर्कमानोने सैफुद्दीन अगराक मलिकके नेतृत्वमे सगठित हो गोरी सेनाको हरा रजीउलमुल्कको मार डाला । अब अम्दतुलमुल्कने अपनेको सुल्तान घोषित किया । उसके विरुद्ध भी बलखके भगोडे राज्यपाल इमादुद्दीनके पुत्र आजम मलिक और काबुलके राज्यपाल मलिकशेरने गोरियोको साथ ले गजनी पर कब्जा कर लिया । गजनीकी यही अवस्था थी, जबकि तीस हजार सेनाके साथ अमीनलमुल्कको लिये जलालुद्दीन वहा पहुँचा । यही तीस हजार और सेना उससे आकर मिल गई । तुर्कों और गोरियोका झगडा खतम हो गया । जलालुद्दीनके सेनापति थे—अमीनलमुल्क, अकराक, आजिम मलिक, अफगान-नेता मुजफ्फर मलिक और करलुक नेता हसन ।

(५) जलालुद्दीनकी एक सफलता—

इसी गंगा-जमुनी सेनाको लेकर जलालुद्दीन ख्वारेज्मशाह मंगोलोसे मुकाबिला करके रूठी कुल-लक्ष्मीको मनानेके लिये आगे बढ़ा । उसने परवानमे जाकर डेरा डाला । वालियान (वालिस्तान, तुखारिस्तान) को घेरे हुए एक मंगोल सेना बैठी थी, जिसे जलालुद्दीनने धर दबाया । हजार मंगोल मारे गये, बाकी पञ्जशीर नदीके पार भाग गये । ख्वारेज्मियोने पुल तोड दिया । यह खबर सुनकर चिंगिसने सेनापति शिकी कुतुकू नोयनको मुकाबिलेके लिये भेजा । परवानसे एक फरसख आगे बढ़कर जलालुद्दीन लडाई की । दो दिन तक घमासान गट होकर गया ।

रात शिकीने मंगोलोको नमदेका घोडा बनाकर दिखलानेका हुक्म दिया। घोडीकी इतनी सख्या देखकर कुछ आतकतो छाया, लेकिन जब जलालुद्दीनने स्वयं अपने घोडेकी आगे बढाया, तो गाजियोकी भी हिम्मत आयी। शिकी थोडेसे आदमियोकी लेकर अकेला आगे बढा। युद्धमें मंगोलोकी जबर्दस्त हार हुई, और चंद आदमियोके साथ शिकी अपनी जान लेकर युद्ध-क्षेत्रसे भगा। इसका परिणाम एक तो यह हुआ, कि बलखके किलेका मुहामिरा उठ गया और कुछ दूसरे नगर भी मंगोलोंके हाथमें निकल गये। जलालुद्दीनने कितने ही मंगोलोको बडी बेददीसि मारा। एक समसामयिक मुसलिम इतिहासकारके शब्दोंमें—“मंगोल जलालुद्दीनके सामने लाये जाते थे, अपना गुस्सा उतारनेके लिये वह उनके कानोकी चिरवाना। जब मंगोल तडफडाते, तो जलालुद्दीन बहुत प्रसन्न होता, उसका चेहरा प्रफुल्लित हो उठता। मंगोल इस लोकमें यातना सह रहे थे, परलोकमें उनके भाग्यमें इसमें भी ज्यादा कठोर यातना बढी थी।” इस जीतमें बहुत सा मालेगनीमत (लूटका माल) प्राप्त हुआ, जिसके बटवारेमें झगडा हो गया। मंगुद्दीन अकराक, आजम मलिक और मुजफ्फर मलिकने सुल्तानका साथ छोड दिया। अब उसके साथ केवल अमीनुल्मुल्क और तुर्क सैनिक रह गये।

(६) पराजय

हारकी खबर सुनकर चिंगिस जरा भी घबराहट न प्रकट कर, पूर्णतया शान्त रहा। उसने सिर्फ इतना ही कहा—“शिकी कुतुकू सदा विजयी रहनेका आदी था, उसने कभी भाग्यके इस कठोर उलट-फेरको अनुभव नहीं किया। अब जब कि ऐसा अनुभव करना पडा, तो वह और अधिक सावधान रहेगा।” यह था उद्गार एक भीषण पराजयके समय उस विश्व-विजेता का। तालकान सर हो चुका था, इसलिए अब चिंगिस जलालुद्दीनकी खबर लेनेके लिये स्वतंत्र था। तीन सेनापतियोके साथ छोड देनेके बाद जलालुद्दीन इस स्थितिमें नहीं था, कि वह मंगोलोके साथ खुले मैदानमें लडता। वह हिन्दूकुशके दुर्गम दरोंसे फायदा उठा सकता था, लेकिन उसने यह भी नहीं किया और पीछा करते हुए मंगोलोंके सामने सिंधुके किनारे तक हटता गया। चिंगिस तालकानसे सीधे गुजखानके रास्ते बामियान पहुचा। बामियानमें उसका जबर्दस्त मुकाबिला किया गया, जिसमें चिंगिसका अत्यंत प्रिय पोत्र (जगताईका पुत्र) मुतुगिन मारा गया। चिंगिसका पारा गरम हो गया और उसने हुक्म दिया कि नगरमें किमीको जिन्दा न छोडा जाय। इसी समय उसने बामियानका नाम बदलकर मोबालिग (पापनगर) रख दिया।

मंगोल सेनाने बिना किसी विरोधके गजनापर अधिकार किया। उन्होंने सुना, कि सुल्तान पन्द्रह दिन पहिले यहासे आगे गया। चिंगिसने माबायलवचको गजनाका शासक नियुक्त किया। गजनामें भी कत्लआम और लूट मचाते वह सिंधुके किनारे पहुचा। इस समय तक जलालुद्दीनने अभी नावोका भी पूरा इतजाम नहीं कर पाया था। पृष्ठ-रक्षक सेनाने काफी प्रतिरोध किया, किन्तु मंगोलोकी प्रधान सेनाके आजाने पर वह और कुछ करनेमें सफल नहीं हुई। सिंधुमें सिर्फ एक नाव तैयार हो पाई थी, जिसपर चढा-कर ख्वारेज्मशाहकी बेगमे पार भेजी जानेवाली थी। लहरोके मारे वह भी चट्टानसे टकरा कर टूट गई। इस प्रकार ख्वारेज्मशाह अपने भारी भरकम अन्त पुर और दूसरे सामानके कारण सिंधुकी प्रतिरक्षासे भी लाभ नहीं उठा सका और उसे बुधवार २४ नवम्बर १२२१ ई० को निर्णयात्मक युद्ध करनेके लिये मजबूर होना पडा।

यह युद्ध नीलाब और सिंधुके सगमके पास घोडाटाप स्थानमें हुआ। मुसलिम सेना अपने सुल्तानके नेतृत्वमें बड़ी बहादुरीसे लड़ी, जिससे एकबार मंगोलोंमें भगदड़ मच गई और खुद चिंगिसको भी पीछे हटना पड़ा। इसी बीच १० हजार मंगोल बहादुरोंने अमीनुल्मुल्क-सचालित दक्षिण पार्श्व पर हमला कर दिया। पासा पलट गया। जलालुद्दीनका सात-आठ सालका लड़का मंगोलोंके हाथमें पड़ा, जिसे पीछे उन्होंने मार डाला। मंगोलों के हाथ में न पड़ जाये, इस डरसे जलालुद्दीनके हुक्मसे उसकी मा, बेगम और दूसरी ही कितनी ही औरतें सिंधुमें डुबा दी गईं। सुल्तान अपने घोड़ेको नदीमें डाल पार हो गया। तिकलिस (जार्जिया) विजयके समयसे सुल्तान ने इस घोड़ेको अपने साथ रखा था, और वह उसपर कभी नहीं चढ़ा था। चार हजार सवार उसके साथ नदी तट तक पहुंचे, किन्तु उनमें से केवल तीन सो ही तीन दिन बाद नदोके निचले भागमें बहकर आ मिले। चिंगिसने तुरन्त अपनी सेना सिंधु पार नहीं भेजनी चाही। अगले साल उसने २० हजार सेना भेजी, जो मुल्तान* तक पहुंची, जहां दिल्लीके सुल्तान अल्तमश (अल्तुनमश, करलुक)को मंगोलोंका मुकाबिला करना पड़ा। मुल्तानकी गर्मी (११५०-१२००) इतनी असह्य सिद्ध हुई, कि अल्तमशकी सेना नहीं बलिक इसी गर्मीने मंगोलोंको सिंधु पार जाने के लिये मजबूर किया। १२२२ का साल मंगोलोंने अफगानिस्तानके ठंडे पहाड़ी इलाकोको जीतनेमें बिताया।

चिंगिसके हमलेके ६१ वर्ष बाद १२८४ (६८३ हि०) में फिर एक बार मंगोल सेनापति इतमर ३० हजार सेनाके साथ मुल्तानके शासक सुल्तान मुहम्मदके खिलाफ आया था, जिसमें सुल्तान मारा गया और उसके दरबारी कवि अमीर खुसरो बन्दी बने, किन्तु संयोग से जान बचा कर भाग निकले। खुसरोने इस घटनाको अपने एक कसीदेमें वर्णन किया है, जिसे बदाऊनीने उद्धृत किया है। इस वर्णनसे हमें मंगोलोंके प्रति तुर्कोंके भावका पता लगता है। खुसरो स्वयं तुर्क था—

“मुमलमानोंके खूनने बहकर रेगिस्तानको रगा,
जबकि मुसलमान बन्दी फूलोंकी मालाकी तरह गरदनसे बंधे थे।
मैं भी पकड़ा गया और भयसे मेरी नसोंमें खून बहानेको एक रक्त-बिन्दु भी नहीं रह गया।
मैं पानीकी तरह जहा-तहा दौड़ता फिरा,
धाराके ऊपरके बुलबुलोंकी तरह मेरे पैरोंमें असह्य छाले थे।
अत्यंत प्याससे मेरी जीभ जली और सूखी जाती थी,
और भोजन बिना मेरा पेट मानो लुप्त हो गया।
जाड़ेके पत्रहीन वृक्ष या काँटोंसे छिले फूलकी तरह,
मुझे नगा बनाकर छोड़ दिया।
मुझे पकड़नेवाला मंगोल घोड़ेपर बैठा,
जैसे पहाड़के सानुपर सिंह टहल रहा हो।
उसके मुंह और काखसे उबकाई लानेवाली गंध आ रही थी।
उसकी ठुड्डीपर झाड़ीकी तरह या निम्न रोमकी तरह दाढ़ी लगी थी,
यदि कमजोरीसे मैं जरा सा पिछड़ जाता,
तो वह अपने तलवार और कमानों से मुझे —

९ खुरासानमे विद्रोह दमन

तालाकान जीतनेके बाद १२०१ के आरम्भमे चिंगिसने अपने पुत्र तुलुयको खुरासानके शहरों पर अधिकार करनेके लिये भेजा। जीतते हुए शहरोंमे लोभोंकी भरती करता तुलुय जब मेवं पहुँचा, तो उसकी सेना ७० हजार हो गई थी। खुरासानमे भी मंगोलोंने गजना और ख्वारेज्मकी ध्वम-लीलाकी पुनरावृत्ति की। ख्वारेज्मियों अभी बहुत से मिहामनके भूखे आपसमें लड़ रहे थे। मेवंके भूतपूर्व वज्जिर मुदोम मुक्त शर्फुद्दीन मुजफ्फरको भी बादशाह होनेका ख्वाब आया था। इसके कारण तुलुयका काम आसान हो गया। ३ मार्चके भीतर ही छोटे-छोटे नगर ही नहीं बल्कि मेवं, नेशापोर और हिगान पर भी मंगोलोंका जडा फड़गने लगा। २५ फरवरी १२२१ ई० को मेवं फतह हुआ। मंगोलोंने चार मो कारीगरोंको छोड़ बाकी सभी निवासियोंको मार डाला। स्थानीय आभिजात्यवर्गके सरदार जियाउद्दीन अली और मंगोल सेनापति वारमास शहरके शामक निकुन हुए। बचे-बुचे वाशिन्दोंको एकत्रित करनेका काम दूसरी बार आकर नई मंगोल सेनाने किया। १० अप्रैल मनीचरके दिन नेशापोर दखल हुआ। उसके भाग्यमे और भी क्रूरता बढ़ी थी। नवम्बर १२२० ई० मे नेशापोरके प्राकारमे चलाये गये वाणका शिकार तुलुय हुआ था, इसलिये अपने बहनोईका बदला लेनेके लिये तुलुयने कुछ भी दया दिखलानेमे इनकार कर दिया। शहरकी नीव तक उखेड़कर उसे जोत दिया गया। कुछ कारीगरोंको छोड़कर सारे वाशिन्दोंको मार डाला गया। ध्वम-लीला मचाने समय भी मंगोल जानते थे, कि कारीगरोंके

मे लम्बी सास ले रहा था और सोचता था:

इस स्थितिसे छुट्टी पाना असंभव है।

लेकिन अल्लाकी मेहरबानीसे मुझे छुट्टी मिल गई,

बिना छानीमें वाणसे बिधे या तलवारसे दो टुकड़े हुए।”

६१ साल बाद जो बला खुसरो और उसके साथियोंपर पड़ी, वह चिंगिसकी सेनाके लाखों बन्दियोंके ऊपर भी घटी होगी। प्यासके मारे खुसरोका मंगोल सवार और उसका घोडा राबीमे पानी पीनेके लिये टूट पड़े, ओर तुरन्त ही मर गये। उस समय खुसरोको भागनेका मौका मिला। लेकिन खुसरोके जैसे भीभाग्यशाली कितने रहे होंगे? खुसरोने मंगोलोंके बारेमे उस समय लिखा था, जबकि उन्होंने सिर्फ हिन्दुस्तानके किनारेको जरासा छुआ भर था। शेरल्-अजम (२) मे (शिवलीने) मे खुसरोके निम्न पद्य भी उद्धृत है—

“यह घटना है या आकाशसे बला आकर प्रकट हुई।

यह आफत है या प्रलय दुनियामे आकर जाहिर हुई।

आफतकी बाढके सामने दुनियाकें जड उखड़ गई,

कष्ट जैसे इस साल हिन्दुस्तानमे आकर प्रकट हुआ।

हवासे (सूखे) फूलपत्तीकी तरह मित्र-मंडली बिखर गई,

मानो फुलवाडीमे पत्तीका बिखराव आकर प्रकट हुआ।

बस चारो ओर दुनियाकी आँखोंमें पानी बह चला।

मुल्तानके अन्दर दूसरे पचआब आकर प्रकट हुए।”

मारनेसे धनके उत्पादक हाथ खतम हो जायेगे, इसलिये वह उन्हें नहीं मारते थे। कारीगर ही तरह तरहकी बहुमूल्य चीजोंको पैदा करते थे, जिनके कारण उस समय व्यापार-लक्ष्मी अपनी चरम सीमा पर पहुँची हुई थी। अरबोंने भी अपने विजयकालमें उत्पीडित जनोको अपनी ओर खींचकर अपनी शक्ति बढ़ाई थी, उसी बातको दुहराते मंगोल भी उत्पीडित, उपेक्षित और अपमानित जातियोंको अपनी ओर कर रहे थे। इसका पता इसीसे मालूम होगा, कि नेशापोरको जीतकर तुलुयने चार सौ ताजिकोंके साथ एक मंगोल सेनपको वहाँ शासन करनेके लिये छोड़ दिया। हिरातका भाग्य कुछ अच्छा था। वहाँ सुल्तानकी १२ हजार सेनाके सिवाय और कोई नहीं मारा गया। शहर पर भी तुलुयने एक मंगोल और एक मुसलमान दो संयुक्त-राज्यपाल नियुक्त किये।

१२२१ के उत्तरार्द्धमें अफवाह उड़ाई गयी, कि इस्लामके सुल्तानने मंगोलोंपर भारी विजय प्राप्त की है। इसके कारण खुरासानके कुछ नगरोंमें विद्रोह हो गया। विद्रोह दबानेके लिये जियाउद्दीन मेवँसे सरख्श गया। बारमासने कारीगरों और दूसरे युद्धबन्धियोंको बुखारा भेजनेके लिये शहरसे हटाया। लोगोंने समझा, सुल्तान आ रहा है, इसलिये यह भागनेकी तैयारी कर रहे हैं। बारमासने दरवाजेपर जा नगरके कुलीनोंको बुलाकर समझानेकी कोशिश की। उसका कोई फल न देख, जिसको भी पाया, उसे मार कर वह बुखारा चला गया। वहाँ उसकी मृत्यु हो गई, किन्तु मेवँवाले बन्दीयही थे। जियाउद्दीन फिर लौटा, मंगोल भी फिर आगये। इसी समय सुल्तान जलालुद्दीनका गार्द-अफसर कुशतगिन पहलवान एक बड़ी सेना लेकर आ पहुँचा। शहरके गुंडे भी उससे मिल गये। जियाउद्दीन दूसरे मंगोलोंके साथ भागकर मरागके किलेमें पहुँचा। कुशतगिनने शहरकी मरम्मत करवाई और खेती-बारीको फिरसे आबाद करना चाहा। वह थोड़े ही समयमें इतना मजबूत हो गया, कि बुखारापर आक्रमण कर वहाँके मंगोल-गवर्नरको भी मारनेमें सफल हुआ। इस विद्रोहको १२२२ ई० की गर्मियोंके अन्तमें ही मंगोल दबा सके। करारा नौयनके सरख्श पहुँचने पर कुशतगिन अपने हजार सिपाहियोंके साथ मेवँ छोड़कर भाग गया। सरख्श और नेशापोरके बीचमें सगबस्तके पास उसके बहुतसे आदमियोंको मंगोलोंने मार डाला। मेवँने आकर मंगोलोंने अपना गुस्सा फिर दुबारा कल्लाम करके उतारा, जिसमें एक लाख आदमियोंने प्राण गवाये। उन्होंने मेनापति अकमलिक हुमाऊँको बाकी बचोंको ढूँढकर मारनेके लिए छोड़ दिया। हुमाऊँने अपने मालिकोंसे भी अधिक क्रूरता का परिचय दिया। मंगोलोंके नगरमें हटते ही फिर सिंहासनके कई दावेदार खड़े हो गये। अबीवर्द, खरकान और मेवँ का शासन ताजुद्दीन उमर मसऊद-पुत्रने सभाला। उसने मंगोलोंकी रसदको भी लूटा, लेकिन नसाका मुहम्मिरा करते हुए वह मारा गया। इसके बाद तीसरी बार कुतुकू नौयन अपने साथ मंगोल, खल्जी और अफगान सेना लेकर आया। खल्जियों और अफगानोंने मंगोलोंसे भी ज्यादा क्रूरता दिखाई। अन्तर्वेदमें भी झगडा हुआ, लेकिन वहाँ बादशाह बननेका स्वप्न देखनेवाले नहीं पैदा हुए थे, बल्कि केवल मामूली डाकुओंने अधिकार जमाना चाहा।

१० पश्चिमकी विजय-यात्रा

चिंगिसको अपने और अपनी सेनापर पूरा भरोसा था। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहकी अस्थायी राजधानी समरकन्दको ले लेनेके बाद ही उसने अपने साम्राज्य का विस्तार पश्चिम की ओर करने का फैसला किया था।

टिक नहीं सकना, हमलिये उसने अपने दो सेनापतियों चेपे और सुबोतइको हुकम दिया—“दुनिया में जहाँ भी मुहम्मदशाह जाये, उसका पीछा करो। जो नगर तुम्हारे लिये अपना द्वार खोल दे, उसे अच्छा छोड़ना, लेकिन जो प्रतिरोध करे, उसे हमला करके मर करना। मुझे विश्वास है, कि यह काम उतना कठिन नहीं मालूम होगा, जितना कि दिखाई पड़ता है।” चिंगिसने इन दोनों सेनापतियोंको दो तुमान (२० हजार) सेना दी। अप्रैल १२२० में इन्होंने ममस्कन्दमें प्रस्थान किया। दोनों सेनापति बलख, नैशापोर, रे (नेहरान), हमदान गये। फिर शरदमें कास्पियनके किनारे विश्रामके लिये ठहर गये। मुल्तान मुहम्मदके मरनेकी खबर सुनकर वह काकेशसकी ओर बढ़कर उन्होंने जार्जिया (गुर्जी) पर आक्रमण किया। दरबन्द (काकेशस) में आगे बढ़कर सुबोताइने किपचक घुमन्तुओको उनके मित्र अलानो और दूसरे शक-जानीय घुमन्तुओंमें फँड लिया। फिर वह रूसियोंके ऊपर पड़े। ८२ हजार सैनिकोंके साथ पश्चिमी सीमान्त तकके रूषी राजुल लड़नेके लिये इकट्ठा हुए, लेकिन वह मंगोल सेनाको रोक नहीं सके। मजबूत किपचक योद्धा पार्श्वकी रक्षा करते हुए मंगोलोको दनियेपर नदीकी तरफ ले गये। रूसियोंके पास सुबोतइ जैसा सैनिक नेता नहीं था। याद रखनेकी बात है, कि सुबोतइ जैसी कितनी ही मिट्टीमें पड़ी हुई प्रतिमाओको पारसकी तरह छूकर चिंगिसने महान् सेनापति बना दिया था। दो दिन तक लड़ाई हुई। रूसी महाराजुल अपने सरदारोंके साथ काफ़ीरोंके हाथों मारा गया। थोड़ेसे लोग जो बचे, वह दनियेके ऊपर की ओर भागे। क्रिमियामें लड़ते समय चेपे घायल हो गया था, लेकिन उसने सेनोआके व्यापारियोंके एक सुदृढ़ दुर्गकी सर किया। रास्तेमें चेपे मर गया। दोनों सेनापति शायद यूरोपके पश्चिमी छोर तक खून बहाते, किलोंको सर करते चले जाते, यदि हमी समय लौटनेके लिये चिंगिसका हुकम न आया होता। रास्तेमें मंगोलोंने पहिले की अच्छी जगहोंको फिर ध्वस्त किया—बोल्गाके किनारे हूणवशी बुल्गारोंके नगरों और ग्रामोंको मलियामेट कर दिया। एक फारसी इतिहासकारने लिखा था—“क्या तुमने सुना नहीं है, कि सूर्योदयके (उदयाचल) स्थानसे सुट्टीभर आदमियोंने चलकर लोगोमें अपनी ध्वस-शीला मचाते, रास्तेमें मीत बिखेरते पृथ्वीको कास्पियनके दरवाजे तक जीत लिया? फिर वह स्वस्थ और प्रसन्न लूटके मालमें लदे अपने स्वामीके पास लौट आये।” और यह सब कुछ केवल दो वर्षके भीतर। सुबोतइने काली मिट्टी-वाले दक्षिणी रूसकी विशाल चरभूमिका पता लगा लिया और पीछे फिर लौटकर उसने मास्कोको भी मर किया।

११. मंगोल युद्धसाधन

(१) चिंगिसकी सेनाका कार्य—सन् १२१९-२५ के ६ वर्षोंमें चिंगिसकी सेनाने वह काम किया, जिसे सैनिक चमत्कार कहा जा सकता है। उत्तरी चीन जीतनेके बाद इसी समय उसने तिब्बतको जीता। कास्पियन समुद्र तक की भूमिको उन्होने केवल एक लाख आदमियों द्वारा जीत लिया और दनियेपर नदी (उक्रइन) से लेकर चीन सागर तककी भूमिके जीतनेमें केवल ढाई लाख सैनिक इस्तेमाल किये। इसमें भी आधेसे ज्यादा मंगोल नहीं थे। बाकियोंको वह बरफकी गेंदकी तरह रास्तेमें अपने साथ लपेटते लिये चले गये। इतिहासकार लिखते हैं, कि इस अभियानके अन्त समय तक पचास हजार तुर्कमान चिंगिसकी सेनाके साथी बन गये थे। रेगिस्तानी किपचक घुमन्तुओको आत्मशास्त्र कर जूचीकी सेनाने विशाल रूप ले लिया था।

आजक कोरियनो और मचुओके पूर्वज मंगोलो की सेनाके अग बन गये थे ।

(२) **मंगोल हथियार**^१—गुरगाचपर आक्रमण करते समय मंगोलोने प्रज्वलित नफता (मिट्टीके तेल)के गोलोको इस्तेमाल किया था, जिसका प्रयोग इससे पहिले मुसलमानोने ईसाई धर्मयोद्धाओके विरुद्ध नाममात्र ही कर पाया था । १२११ के बाद हम बारूदके उपयोग की बात सुनते हैं । हो-पाउ (आतिशबाजी) के तौरपर चीनी लोग गधक, शोरा और कोयलेके मिश्रण से बनी बारूद पहिले भी इस्तेमाल करते थे । लेकिन मंगोलोने इसे युद्धका हथियार बना दिया लकडीके बने हुए मीनारोको बारूद फेककर वह जला देते । मंगोलोके भयसे आतंकित एक लेखकने अतिशयोक्ति करते हुए लिखा था—“इसकी आवाज बिजलीकी कड़ककी तरह होती है, जोकि सो ली (बोस मील) तक सुनाई देती है ।” चिंगिसके मरनेके बाद १२३२ ई० में काइफोङ्ग नगरका मंगोलोने मुहासिरा किया था । उसके बारेमें समसामयिक चीनी इतिहासकारने लिखा है—“मिट्टीके भीतर गढा खोदकर छिपे हुये मंगोल गोलोकी चोटसे सुरक्षित थे । उस समय हमने चिन् स्यान्-लेई (एक ज्वाला-निक्षेपक यंत्र) नामक मशीनको लोहासे ढाधकर उसे फेकनेका निश्चय किया । हमने मशीनको उस ओर कर दिया, जिधर मंगोल सैनिक थे । गोलोने फूटकर सैनिको और उनकी ढालोको खड-खड उडा दिया ।” इसके बाद कुबिलेखानके समयके एक लेखकने लिखा है—“सम्राट्ने आज्ञा दी, कि अग्नि-धनुष छोडा जाय । इसने तुरन्त शत्रु-सेनामें खलबली मचा दी ।” मंगोल बारूदका इस्तेमाल अभी मुख्यतः शत्रुओको भयभीत करने या जलानेके लिये करते थे । वह तोप ढालना नहीं जानते थे, न उसमें बहुत सुधार कर पाये थे । १२३८-४६ में विजय करते हुए वह सारे मध्य-यूरोपको अपने हाथमें कर चुके थे और साधु स्वार्जके समय अब भी वह पूर्वी पोलदमें रहते थे । जर्मन साधु स्वार्जका निवास-स्थान फ्राइबुर्ग एक मंगोल छावनीसे तीन सौ मीलपर था । यही स्वार्ज है, जिसने पहिले पहल तोप ढालनेका आविष्कार किया । इसमें शक नहीं, कि उसने मंगोलोके अग्नि-बन्दूक को देखा था । यूरोपने पीछे इन तोपोंको अपने जहाजों पर लगाकर, विश्व-विजय किया चिंगिज खानके समय से बारूद युग आरम्भ होकर परमाणु बमके आविष्कारके समय तक चलता रहा ।

शायद बाबर १५२५ ई० में पानीपतमें विजयी होकर भारत का सम्राट् न बनता और मुगल वंश इस देशमें अपने दृढ़ शासन और सुन्दर इमारतोंको न बना सकता, यदि यूरोपसे सीखे हुए रूमी (तुर्की) कारीगरोंने उसे बड़े मुहकी तोपे ढालकर न दी होती ।

इस प्रकार स्पष्ट है, कि साधु रोजर बेकन (१२१४-१२९४ ई०) और स्वार्जसे बहुत पहिले चीनियांने बारूद बना ली थी । वह उसके फूटनेके गुणको जानते थे, लेकिन उन्होने युद्धके लिये उसका इस्तेमाल नहीं सा किया । काम लायक पहिली तोप यूरोपवालोंने बनाई, इसमें सदेह नहीं ।

(३) **मंगोल शिकार**—चीनियोंकी आविष्कार-प्रियता और शासन-व्यवस्थाको लेकर मंगोल पश्चिममें बहुत दूर तक घुस गये । कितनी ही चीजे उन्होने मुसलमानोंसे भी सीखी । चीन और रूसके बीचमें सदाके लिये सबध स्थापित करना मंगोलोंका काम है । चिंगिमने

^१ अग्नि-बन्दूकके अतिरिक्त मंगोलोके दूसरे युद्ध-साधन थे—२० घोडोंका रथ, १० आदमियोंसे झुकनेवाला पाषाण-निक्षेपक धनुष, दो सौ तोपचियोंवाला कतापुल्ल, और उड़ने-वाली आग ।

को एक उच्च विज्ञानके नोरपर विकसित किया। जैसे भारतने सैनिक चालोके अम्यासके लिये चतुरंग (शतरंज) का आविष्कार किया, उसी तरह चिंगिसने शिकार द्वारा सैनिक व्यूह रचनाकी शिक्षा दी। चिंगिसने मध्यएशियाम रहने समय १२०१ ई० में एक शिकार संगठित किया था, जिसका वर्णन इतिहासमें निम्न प्रकार मिलता है—“शिकार नहीं यह जंगली जानवरोंके विरुद्ध एक बाकायदा अभियान था, जिसमें मारा युन (उर्दू) और खान तक भाग ले रहे थे। जहाँमें मना क्व आरम्भ करनेवाली थी, वहाँ झड़िया लगी हुई थी। इसी तरह क्षितिजके परे कुर ताई शिकारके संगम-स्थान पर भी चिह्न लगा हुआ था। प्रायः ८० मीलके भूभागको घेरे हुए एक अर्धवृत्त सा बनाया गया। शिकारियों के पथ-प्रदर्शनमें अर्धवृत्त अपने दोनों पाखोंको बन्द करने कुन्ताइके पास पहुचने लगा। जंगली जागवगेमें भयका संचार होने लगा—हॉरन कापने हुए गामने कूदने दिवाई पडे, बाघ इधर से उधर मुह फेरने मिर नीचा करके दहाडने लगे। लेकिन आखीमें दूर कुरताइमें परे शिकारोंके चारों ओर वृत्त मजबूतीके साथ बन्द हो गया था। हल्ला अब और ज्यादा होने लगा। पहिले खानने यथेच्छ शिकार किया, तब दूसरोंको शिकार करनेकी इजाजत मिली। यह रोमके खूनी खेलके अखाडेकी तरहका मगोल घुमन्तुओंका शिकार-वाला अखाडा था। इस अखाडेमें जानेवालोंमेंसे कितने ही जानवरों द्वारा वृत्त तरहमें आहत या निहत हो बाहर निकाले गये। इस शिकार द्वारा चिंगिस अपने सैनिकोंको युद्धकी शिक्षा देता था, और सवागोंकी पक्षिकों मिला लेने के द्वारा वह पशुओं नहीं मनुष्योंको घेरामें लानेका तरीका सिखलाता था।” बरखपर अधिकार करनेके बाद चिंगिसने एक पूरे ग्रीष्मकालको इस महान् शिकारमें लगाया, लेकिन खान अब स्वयं शिकारमें भाग नहीं लेता था।

उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र जूचीको भाईसे झगडाकर गूरगाचको दखल करनेमें देर करनेके लिये फटकारा और उसे अपने उर्दूके साथ वहासे चले जानेके लिये कहा। जूची अराल समुद्रके परे की मरुभूमिकी ओर रवाना हुआ। चलते वक्त चिंगिसने उसे हुक्म दिया अपने शत्रुओंके विरुद्ध आवे मन या आधी घुणाके साथ व्यूह-रचना तथा लूट नहीं करना चाहिए। तुम्हारा जो भी शत्रु सामने आवे उसकी मनुष्य-शक्तिको पूरी तौरसे नष्ट कर देना।

१२ चिंगिस् सम्राट

(१) चाङ्चुन की यात्रा (१२२१ २४ ई०)

ख्वारेज्मशाहपर चढाई करनेके लिये प्रस्थान करके जब चिंगिस खान इतिश नदीके तट-पर ठहरा था, उसी समय उसने चीनके तावधमी सन्त चाङ्चुनकी पसिद्धिके बारेमें सुना। लोगोंने बतलाया कि यह महात्मा अमृतमजीवनी जानते हैं। पर, वस्तुतः चाङ्चुन् आध्यात्मिक सजीविनीका वेत्ता था। चीनके विजेता महान् खानका निमंत्रण पाकर वह इनकार कैसे कर सकता था? वह खानके पास चला। अपनी यात्राका जो विवरण चाङ्चुनने लिखा है, उससे मध्यएशियाकी उस समय आखी देखी दशाका पता लगता है। उसने मोचा था, चिंगिसमें मिलकर मैं उसकी निर्मम हत्याओंको रोकनेका कुछ प्रयत्न कर सकूँगा। चाङ्चुन् मंगोलिया, उरगुर प्रदेश, कुल्जा-प्रदेश, सप्तनद होते हुए नवम्बर १२२१ में सैराम पहुँचा। मंगोलोंके अभियानके समय जो सडके तैयार और मरम्मत कराई गई थी, वह अच्छी हालत में थी। चूनदी पर तल्लोंका और तलसपर पत्थरका पुल बनवाया गया था। सिर-दरियाके उत्तरवाले प्रदेशको

ख्वारेज्मशाहने उजाड़ दिया था, जो अब फिर आबाद हो गया था। समरकन्द तक उसे सभी जगह मंगोल शासक नहीं बल्कि देशी अफसर मिले थे। सैराम एक बड़ा नगर था। २० नवम्बर को यहाँ वैराम-महोत्सव—नव-वर्षोत्सव मनाया जा रहा था। लोग झुंडके झुंड एक दूसरेका अनुकरण करते घूम रहे थे। सिर दरिया और सैरामके बीचमे दो और नगर मिले थे, जिनमे पहिला सैरामसे तीसरे दिन और दूसरा चौथे दिन आया था। सिर नदीपर नावोका पुल था। सिर नदीसे प्रायः दो सौ ली (४० मील) के विस्तारमे भूखा-रेगिस्तान था। इसके दक्खिनमे समरकन्द तक पाच और नगर मिले। हर जगह मुसलमान अफसर थे, जिन्होंने चाङ्चुन्का बड़ा स्वागत किया। ३ दिसम्बरको चाङ्चुन्ने जरफशाँ पार किया और उत्तर-पूर्वी द्वारसे समरकन्दके भीतर दाखिल हुआ। कनलआमके बाद अब नगरकी आबादी चौथाई रह गई थी। चीनियो, कराखिताइयो और दूसरोंके साथ मिलकर लोगोको खेतो ओर बगीचोंके आबाद करनेकी इजाजत थी। मुखिया सदा भिन्न जातियोके नियुक्त किये गये थे। नगरका शासक अहाइ कराखिताई था, जिसको ताइ-सी (दैशी) की उपाधि प्राप्त थी। वह चीनी सस्कृतिसे सुपरिचित था।

चाङ्चुन्की चिंगिससे जो बातचीत हुई, उसमे इसीने दुभापियाका काम किया था। पहिले अहाई ख्वारेज्मशाहके बनवाये अपूर्ण प्रासादमे रहता था, लेकिन पीछे नदीके उत्तर तरफ रहने लगा, क्योंकि जीविका दुष्प्राप्य होनेके कारण नगरके आसपास झुंडके झुंड डाकू घूमा करते थे। चाङ्चुन्के आनेसे थोड़ा ही पहिले विद्रोहियोने आमू दरियाके नावोवाले पुलको नष्टकर दिया था। शायद जलालुद्दीनकी सफलताकी बाते सुनकर कुछ मुसलमान विद्रोहियोको ऐसा करनेका साहस हुआ। चाङ्चुन् समरकन्दमे पहिली बार २६ अप्रैल १२२२ ई० तक रहा, दूसरी बार मध्य जूनसे १४ सितम्बर तक, और तीसरी बार नवम्बरके आरम्भसे ३ दिसम्बर तक। इस प्रकार उसे नगरके बारेमे अच्छा परिचय प्राप्त करनेका मौका मिला। उसके वर्णनसे मालूम होता है कि नगरकी अवस्था अब साधारण सी हो गई थी। मुवज्जिनके अज्ञान देते ही नर-नारी मस्जिदोकी ओर दौड़ते थे। उस समय तक स्त्रिया भी पुरुषोकी तरह साधारण नमाजमे भाग लेती थी। जो लोग नमाज पढ़नेमे ढिलाई करते, उन्हें कड़ा दण्ड दिया जाता। रमजानकी रातोंको भोज हुआ करते। बाजार पण्य वस्तुओंसे भरे थे—सारा नगर ताबेके बर्तनोंसे सोनेकी तरह चमकता था। १२२२ के वसन्तमे चाङ्चुन् और उसके साथी उपनगरमे घूमने गये। उन्हें सबसे सुन्दर स्थान पश्चिमी नगरान्त मालूम हुआ। शायद इसीको बाबरने कूले-मगाक कहा है। आजकल इसे कूले-मागियान कहा जाता है, जो कि अनहारके इलाकेमे है। “वहाँ पर हमने चारो ओर सरोवर, घासके मैदान, मीनार ओर तबू देखे।” कहीं कहीं बाग भी थे, जिनका मुकाबिला चीनी बाग नहीं कर सकते थे। सितम्बर १२२२ मे जरफशाँकी पहाडियोकी ओरसे दो हजार डाकुओका झुंड शहरके पूरबमे प्रकट हुआ। समरकन्दके नागरिक प्रतिरात्रि आस्मानको आगकी ज्वालासे लाल देखते थे। अपने अन्तिम निवासके समय (नवम्बर-दिसम्बर में) सन्तने अपने लिये मिली रसदकी खिचडी-लप्सी भूखो को खिलानेके लिये तैयार कराई। खानेवाले बड़ी सख्यामें जमा हो गये।

सन्त अप्रैलके अन्तमे चिंगिससे मिलने गया। इससे कुछ पहिले ही वक्षु पार (बलख) का यातायात स्थापित हो गया था—जगतइ वर्षके आरम्भमे ही विद्रोहियोको खतमकर पुलको फिरसे बनवा चका था। चिंगिस इस यातायात के लिए तैयार था—

चाङ्चुनको मार्चमें मिली। २७ अप्रैलको समरकन्द छोड़ चौथे दिन वह किश (शहरम्बज) पार हुआ। दरबन्द (लौहद्वार) से गुजरने समय चिंगिसके खाम हुक्ममें एक हजार मंगोल और मुसलमान सैनिकों को लिये सेनप युगुरनी मन क साथ साथ चल रहा था। दरबन्द पार होनेके बाद चाङ्चुनने दक्षिणका रास्ता लिया और गारद ऊपरी सुरखानमें डाकुओंके बिकट गया। पहाड़ी लोग अभी हथियार नहीं रख चुके थे। चाङ्चुन और उसके साथी सुरखान और वक्षु नदीको तारोंमें पार हुए। उस वक्त सुरखानके दोनों नदीपर उन्होंने घना जंगल देखा था। वक्षुके घाटमें चार दिनका रास्ता चलनेपर १६ मईको चाङ्चुन चिंगिस खानके शिविरमें पहुँचा।

चिंगिसने चाङ्चुनमें मुनमजीनोंके बारेमें पूछा। जिनमें उत्तरमें सन्तने कहा—“जीवन को कायम रखनेके उपाय है, किन्तु अमरताकी कोई ओपधि नहीं है।” यह सुन खानने निराश होनेका कोई चिह्न नहीं प्रकट किया, बल्कि सन्तकी ईमानदारीको प्रशंसा की। २५ मई को उसने सन्तके उपदेशोंको सुननेका निश्चय किया था, किन्तु इसी समय पहाड़ोंमें मुसलिम विद्रोहियोंकी कार्रवाइयोंकी खबर मिली, जिसमें उपदेश सुननेका समय नवम्बर तकके लिये स्थगित कर दिया गया। सन्त समरकन्दकी ओर लौट आया, और गरमीके बढ़नेपर चिंगिस हिमवत्त पर्वतोंकी ओर चला गया। उस समय सन्त भी कुछ दिनों मंगोल सेनाके साथ रहा। लौटते समय एक हजार सवारोंके साथ एक मुसलिम सेनपथ-प्रदर्शन करते सन्तको दूसरे रास्तेमें पहाड़ ही पहाड़ ले गया। चाङ्चुन लिखता है, कि वक्षुके दक्षिणमें लोहद्वारमें भी अधिक कठिन पहाड़ी घाटी है। रास्तेमें उसे अभियानसे लौटती एक मंगोल सेना मिली, जिससे २ यी (चीनी मोहर) चादीके सिक्केसे सन्तने पचास मूंगे खरीदे। सितम्बरमें जब वह किशसे वक्षुकी ओर रवाना हुआ, तो उसके साथ चलनेके लिये हजार पैदल और तीन सौ सवार सैनिक मिले। अब की लौहद्वार नहीं बल्कि दूसरे रास्तेसे यात्रा करनी पड़ी, जो कि दक्षिण-पश्चिमकी ओरसे था। रास्तेमें नमकका चश्मा और लाल सेंधा नमक मिला। नावसे वक्षु पार हो वह बलख पहुँचा, जिसके घुसावशेषोंका वर्णन करते हुए चाङ्चुनने लिखा है—“बहुत दिन नहीं हुए, विद्रोह करनेके कारण नगर छोड़कर लोग भाग गये। कुत्तोंका भूकना अब भी नगरमें सुनाई देता है।” २८ सितम्बरको चाङ्चुनका दल मंगोल-शिविरमें पहुँचा, जो बलखसे पूरब किमी स्थानपर था। चिंगिस अब मुसलिम देशसे स्वदेश लौटनेके रास्तेमें था। सन्त भी उसके साथ कुछ दिनों तक रहा।

(२) चिंगिस मंगोलिया लौटा—ख्वारेज्मशाह के विद्रोही सेनापति सैफुद्दीन अगरक और अजिम मलिक की सेना अभी नष्ट नहीं हुई थी, इसलिये चिंगिस को तीन मास तक सिंधु तटपर रहना पड़ा। मंगोलिया लौटने के लिये वह भारतमें हिमालय और तिब्बत का रास्ता पकड़ना चाहता था। उसकी सेना में बहुत से उइगुर और तिब्बती बौद्ध थे, जो बौद्ध तीर्थोंकी यात्रा करने के कारण भारत के रास्ते को जानते थे। उसने दिल्ली सुल्तान शमशुद्दीन अलतमश को चिट्ठी लिखकर कहा, कि हम इस रास्ते जाना चाहते हैं, उसका प्रबन्ध करो। लेकिन जान पड़ता है, चिंगिस ने स्वयं अपना इरादा बदल दिया, नहीं तो अलतमश की क्या शामत आयी थी, कि वह चिंगिस की इच्छा का विरोध करता। हिमालय की जोतें भी बरफ के कारण बन्द थी। चिंगिस को यह भी खबर मिली, कि तगुत (हिया) राजा ने विद्रोह कर दिया है। ज्योतिषियों ने भी हिमालय का रास्ता पकड़ने को बुरा बतलाया। फरवरी या मार्च १२२२ ई० में चिंगिस पेशा-

वरसे काबुल के लिये रवाना हुआ। खान का हुकम था, इसलिये लाखों मजदूरों ने मिलकर ढाँडे पर पड़ी हुई बरफ को साफ कर दिया। बामियान के पहाड़ों से होते वह वगलान पहुँचा, और वहीं आमपास के विश्राम स्थानों में उसने गरमियों के दिन बिताये। रास्ता चलते हुये मंगोल सेनापतियों का एक काम था, वहाँ के पहाड़ी किलों को तोड़ना, यातायात को ठीक करना और रसद की रक्षा करना। उत्तरी अफगानिस्तान जैसे दुर्गम रास्ते में भी मुख्य मंगोल सेना को किसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा, यह चिंगिस की सैनिक दूरदर्शिता और प्रतिभा का प्रमाण था। मंगोलों को सबसे अधिक हानि तालकान में उठानी पड़ी, जहाँ पर गजना जाते वक्त चिंगिस ने अपनी रसद को छोड़ दिया था। अशियार (गर्जिस्तान) के पहाड़ी किलेका मुखिया अमीर मुहम्मद मरगानी ने रसद के ऊपर धावा बोल दिया, और सोने और दूसरे बहुमूल्य सामान से भरे बीजों को लूट ले गया, बहुत से घोड़ों को भी उसने छीना और काफी युद्ध-बन्दियों को मुक्त कर दिया। १२२३ के आरम्भ में मंगोलों ने उसके किले को १५ महीने के मुहासिरों के बाद दखल किया। १२२१ और १२२३ के बीच में गर्जिस्तान के दूसरे किलों को भी मंगोलों ने जीत लिया।

चाङ-चुन् के अनुसार चिंगिस की सेना तैरते पुल (नावों के पुल) द्वारा ६ अक्टूबर १२२२ को वक्षु पार हुई। २०, २४ और २८ अक्टूबर को तीन बार चिंगिस ने चाङ-चुन् का मापण सुना, जिसका अनुवाद अहाड ने किया और खान के हुकम से वह व्याख्यान लिख लिया गया। नवम्बर के आरम्भ में समरकन्द पहुँचने पर सन्त को सुल्तान के पुराने महल में उतारा गया। मंगोल-शिविर शहर से छ मील (३० ली) पूरब में था। चिंगिस अधिक नहीं ठहरा और उसने चाङ-चुन् को कष्ट न हो, इसके लिये उसे अपनी इच्छानुसार चलने की इजाजत दे दी। जनवरी १२२३ में चिंगिस का शिविर सिर-दरिया के दक्षिण तट पर था। शायद १० मार्च को वह चिर्चिक नदी के तट पर पूर्वी पर्वतों के पास था। चिंगिस सूअर का शिकार करते घोड़ों से गिर गया, और जगली सूअर ने हमला करके करीब करीब उसे मार डाला था। चाङ-चुन् ने उसे बुझापे में शिकार न करने की सलाह दी, जिसे चिंगिस ने स्वीकार किया। तुरन्त शिकार छोड़ना अपने लिये उसने मुश्किल समझा, तो भी अगले दो महीने उसने शिकार में भाग नहीं लिया।

१२२२ के शरद में वक्षु पार होने के बाद चिंगिसने समरकन्द में काफी समय बिताया। इस समय जगतय और उगुतय जरफशा के मुहाने के पास कराकुल में चिडियों का शिकार कर रहे थे। उन्होंने वहाँ से पचास ऊँटों पर तलही चिडियों को अपने बाप के पास भेजा। १२२३ के वसन्त में चिंगिस ने अपनी उत्तराभिमुख यात्रा शुरू की। सैराम से तीन मजिल पर शायद चिर्चिक के तट पर जगताय और उगुतय से उसकी मुलाकात हुई। कुस्तलाई (महापरिषद्) भी यही हुई। अकलसाद्र पर्वत से उत्तर दुलानबाशी के मैदान में ज्येष्ठ पुत्र जूची भी पिता से आ मिला। उसने २० हजार सफेद घोड़ों की भेंट पेश की थी। पिता की आज्ञा से वह जगली गदहों का शिकार करने गया। १२२३ ई० की गर्मियों को मंगोलों ने यहीं बिताया। यही उद्धार अमीरों पर अभियोग लगाकर उन्हें मृत्युदण्ड दिया गया। चिंगिस अपने पुत्रों के आने पर कुछ की प्रतीक्षा करने लगा। १ अप्रैल को चाङ-चुन् ने उससे विदाई ली। आगे १२२४ की गर्मियों को चिंगिस नेट इतिश तट पर बिताया और १२२५ के वसन्त में वह अपने उर्दू में मंगोलिया पहुँच गया।

(३) जूचीकी मृत्यु—१२२३ ई० ने अन्तर्वेद और स्वारेज्म में मंगोलों का अकण्टक राज्य शुरू हो गया। स्वारेज्म के नगरों को मंगोलों ने जितना समय लगा, उससे कहीं जल्दी अन्तर्वेद के नगर फिर से आबाद हो गये। स्वारेज्म की विजय के बाद जूची ने वहाँ चिनतिमूर को राज्यपाल नियुक्त किया। त्खुगमान और माजन्दरान का भी अधिकार जूची को मिला था। जूची गुरगाच को ध्वस्त होने से नहीं बचा सका, यह कह आये हैं, मगर थोड़े ही समय में उसके पास एक बड़ा नया शहर बन गया। गुरगाच का नाम बदल कर मंगोलों ने उसे उरगज कर दिया, जो आज भी इसी नाम से मशहूर है। १० वीं सदी में शहर वक्षु नदी के बायें किनारे पर था। १३ वीं सदी में जब वह विशाल साम्राज्य की राजधानी बना, तो नदी के दोनों तरफ शहर बन गया और यातायात के लिये कई पुल बना दिये गये। नया उरगज वक्षु की दूसरी धारा पर बनाया गया। यह धारा उस समय कास्पियन में गिरने लगी थी। आगे वह धारा बन्द हो गई। [१९५० ई० से सोवियत सरकार ने फिर वक्षु में एक बड़ी नहर (महान् तुर्कमान नहर) निकालकर उसे कास्पियन समुद्र में मिलाने का काम शुरू कर दिया है।] वर्तमान कून्या-उरगच का अस्तित्व १९ वीं सदी से है। मंगोलों के समय में ही उरगच यूरोप और एशिया के वाणिज्य पर होने से बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र बन गया। व्यापार को अधिक दिनों तक अस्तव्यस्त हालत में नहीं रखा जा सकता था, इसलिए व्यापारिक नगर को बढने में सुभीता हुआ, तो भी स्वारेज्म-देश को सभलने में बहुत समय लगा। वक्षु का टूटा बाध बहुत समय तक नहीं तैयार किया जा सका और ३ शताब्दियों तक वक्षु कास्पियन समुद्र में गिरती रही।

जूची अपने पिता के साथ मंगोलिया नहीं गया। उसे अपने विशाल प्रदेश का शासन करना था। उसने अपने पुत्रों को पिता के साथ कर दिया, लेकिन जूची के न आने से उसके साथ पिता का मनमुटाव सदा के लिये हो गया। पिता की मृत्यु से ६ महीने पहिले १२२७ ई० में जूची मर गया।

(४) चिंगिसकी मृत्यु (१२२७ ई०)—बैसठ साल की उमर में भी चिंगिस शरीर से सुदृढ़ और सुपुष्ट था। उसकी आखें बिल्ली की तरह कजी थीं। सिर पर थोड़ा सा सफेद बाल, शरीर लम्बा-चौड़ा और ललाट प्रशस्त था। लम्बी दाढ़ी ठुठुी पर लटकती थी। चिंगिस में असाधारण आत्मसयम था। किसी भी परिस्थिति में वह एक-तरफा भाव नहीं प्रकट करता था। जरूरत पड़ने पर वह हजारों-लाखों को कत्ल करवा सकता था, लेकिन जलालुद्दीन की तरह वह यश्रणा देकर मारना पसन्द नहीं करता था। उसकी सनानों में रूस का स्वामी बातू-खान रूसी इतिहास कारों की आखों में खूनी पशु था, लेकिन मंगोलों के लिये वह साइन खान (भला खान) था। जगतई और ग्यूक खान को कभी मुंह पर पुस्काराहट लाने देखा नहीं गया। वह प्रजा में भय संचार करना शासक का आवश्यक कर्तव्य समझने थे। उगुतय मुसलमानों के प्रति बड़ी नरमी और न्याय दिखलाने के लिये प्रसिद्ध था। चिंगिस का मित्रान था—

“न हलवा बन कि चट कर जाये भूखे। न कडवा बन कि जो चक्खे मो थूके।”

चिंगिस चोरी और झूठ का सबूत दुश्मन था। चिंगिस के अनुसाशन में पहले मंगोल ऐसा करने की क्षमता नहीं रखते थे। शराब में भी चिंगिस अति नहीं करता था। उसके हरम में चीन से रूस भारत से अमंगोलिया तक की सुन्दरिया चुन-चुन कर लाई गई थी। लेकिन उसको

उनके बारे में भी व्यसनी नहीं कहा जा सकता। कड़ा अनुशासन, और दृढ़ सगठन चिंगिस का मूलमंत्र था। दूसरे सगठनों की तरह सेना, सैनिक नेताओं और स्वयं खान के लिये स्त्रियों को पढ़ाना बहुत कड़ाई के साथ किया जाता था। बुढ़ापे में भी चिंगिस शरीर और मन से बिल्कुल स्वस्थ था। वह स्वयं घुमन्तू जाति में पैदा हुआ था। अपने तथा अपने उत्तराधिकारियों के लिये वह उसी जीवन को पसन्द करता था, लेकिन साथ ही वह बौद्धिक सस्कृति से भी समझौता करना चाहता था। जिसका प्रभाव उसके उत्तराधिकारियों पर अधिक पड़ा। यह सगठन ही था, जिसके बल पर चिंगिस की मृत्यु (१२२७ ई०) के ४५ साल बाद तक एशिया और यूरोप में फैला उसका विशाल साम्राज्य विखम्बित नहीं हुआ। पीछे चीन, मध्यएशिया, रूस और ईरान में अलग अलग राज्य अवश्य कायम हुए, तो भी वह चौदहवीं सदी तक चलते रहे।

१२२७ ई० के अगस्त में ७२ साल की उमर में चिंगिस मंगोलिया में मरा। उसने अपने पुत्रों के लिये एक विशाल साम्राज्य, एक विशाल और सुसंगठित सेना और साथ ही राजनीति तथा शासन-नियम छोड़े। उसका विजित भूखंड प्रशान्त महासागर से पश्चिम में यूक्सिन तक फैला हुआ था। उसकी प्रजा में चीनी, तगुत (अमदो), अफगान, ईरानी, तुर्क आदि जातियां थीं उसने अपने चारों लड़कों के लिये अलग अलग भूभाग बांट दिये थे पर साथ ही कहा था, कि सारे मंगोल-साम्राज्य का एक खाकान होगा।

(५) चिंगिसकी समाधि—चिंगिस की समाधि कहा नहीं थी, इसके बारे में निश्चयपूर्वक कुछ कहना मुश्किल है। उलानबातुर (उर्गा) के पास खानउला पहाड़ है, उसे भी चिंगिस की समाधि का स्थान बताया जाता है। इसके अतिरिक्त उर्दुस (ह्वाङ्ग-हो) प्रदेश में येत्जिन्कूरो में मंगोलीय तृतीय मास में इक्कीस दिन के लिये सारे मंगोल राजा जमा होते थे। यही पर महान् खाकान का चारजामा, एक धनुष और दूसरी चीजे रक्खी हुई हैं। वह एक शिविर में लौंई जाती हैं। यहां पर कोई नगर नहीं है, बल्कि कटे हुए पत्थरों की दीवारों के चारों तरफ डेरा डालने का स्थान है। यही पर नमदे के दो तबू खड़े किये जाते हैं, जिनमें से एक में एक पत्थर का डब्बा रखा रहता है। डब्बे के भीतर क्या है, यह किसी को मालूम नहीं। अब भी विशेष-अधिकार प्राप्त पांच सौ परिवार उसकी रक्षा करते हैं। यह स्थान चीन के महाप्राकार में बाहर ह्वाङ्ग ही के मोड़ के दक्खिन में उत्तरी आक्षांश ९० तथा देशान्तर १०४०° में है।

(६) जलालुद्दीनका अवसान (१३३१ ई०)—जलालुद्दीन ख्वारेज्मशाह वैसे सिंध के किनारे मंगोलों से लड़ते वक्त बच निकला और कितनी ही छोटी-मोटी लड़ाइयां लड़ता रहा, लेकिन मंगोलों के सामने फिर वह जम नहीं सका। अन्त में पश्चिमी ईरान के पहाड़ों में रहते समय एक कुर्द ने १२३१ (६२८ हि०) में उसे मार डाला।

(७) परिणाम—मंगोल-विजय से मध्यएशिया में एक नये युग का आरम्भ हुआ, इसमें मदेह नहीं। यही नहीं बल्कि हम कह सकते हैं, कि मंगोलों के कारण दुनिया के इतिहास में एक नये युग का आरम्भ हुआ। मंगोलों द्वारा ही बारूद और मुद्रणकला यूरोप में पहुंची, जिसे अपना कर आगे यूरोप दुनिया का अगुआ बन गया। जहां तक मध्य एशिया का संबंध है, मंगोलों ने विजयी इस्लाम के अभिमान को चूर-चूर कर दिया। अरब-विजेताओं ने भारी विश्वासघात और दूसरे तरीकों से जितनी असानी से अपने राज्य का विस्तार किया था, उससे वह समझने लगे थे, कि इस्लाम दुनिया में विजय और शासन करने के लिये उत्तम है।

को अब अरबों के शासन के मध्याह्न काल में अरबी शक्ति से मुकाबिला करने का मौका नहीं मिला। इस समय मध्यएशिया, ईरान, क्षुत्रेमिया तथा भारत के भी शासक मुसलमान होने लगे, भी अरब नहीं तुर्क थे, तो भी इस्लाम की अजेयता के गीत चारों ओर गाये जाते थे। मंगोल क्रूर थे, लेकिन चिंगिस ने उन्हें ऐसी कड़ी शिक्षा दी थी, कि वह धोखा देने के लिये जन्म झूठ को बर्बाद आवश्यकता थी, उसे बोल नहीं सकते थे, चारों कर नहीं सकते थे। धर्म के बारे में वह निष्पक्ष रहते थे, विजित जानियाँ के सहयोग के इच्छुक थे, और उनके आदिमियों की याचता नुसार सैनिक और अर्धसैनिक बड़े बड़े पदों का देने में भी आनाकानी नहीं करते थे। व्यापार के महत्त्व का वह समझते थे, इसलिए वह कारीगरों का कभी नहीं मारते थे। वह सड़कों और पुलों की मरम्मत का बहुत ध्यान रखते थे और उजड़े खेतों और बागों का जल्द से जल्द आबाद करने में सहायता करते थे। यहाँ कारण था, जो देश की उत्पादक शक्तियाँ बढ़ें। राजा के साथ फिर से अपने कामको पूर्णत्व करने लगती, व्यापार खूब चमकने लगता। मंगोलों ने देशों की सीमाओं का ताँडने में इस्लाम से भी ज्यादा काम किया। मुहम्मिने का काम करने के लिये युद्ध-बन्दिनों की बड़ी बड़ी फौजें संगठित कर वह एक स्थान से दूसरे स्थान, एक देश से दूसरे देश ले जाते थे। जहाँ भी कोई नया सैनिक हथियार या साधन मिलता, वह उसका उपयोग करते और बनाने वाले कारीगरों को दूर तक ले जाते। गुरगाच के एक लाख कारीगरों को वह अपने साम्राज्य के पूर्वी भाग में ले गये थे। अपने शत्रुओं के प्रति कठोर अवश्य थे और उन्होंने गुरगाच, बुखारा समरकन्द, बलख, नेशापोर, मेर्व तथा और बहुत से छोटे-मोटे नगरों के लाखों आदिमियों को घास-मूली की तरह काटा। चिंगिस इसे विजय की एक कुजी मानता था। प्रतिरोध करनेवालों को एक मर्तरे बड़ी निष्ठुरता के साथ पीस डालो, उनके बाल बच्चों तक को मत छोड़ो, फिर दूसरों को इससे कड़ी शिक्षा मिलेगी। तैमूर ने भी चिंगिस के इस गुर को अपनाया और द्वितीय विश्वयुद्ध में हिटलर ने भी चिंगिस से इस गुहमंत्र को लिया। लेकिन एक बार जब लड़ाई बन्द हो जाती, विद्रोही दब जाते, तो मंगोल निर्माण के लिये भी एक सुसंगठित विशाल शासन और दूसरे साधन प्रस्तुत करते।

(८) यास्सा—चिंगिस के बनाये नियमों को यास्सा कहा जाता था। तैमूर और उसके वंशज बाबर पैगम्बर मुहम्मद के अनुयायी थे, लेकिन जहाँ तक राजनीति और युद्धनीति का संबंध था, वह मुहम्मद की शरीयत के भी ऊपर चिंगिस के यास्सा को मानते थे। शायद बहुत लोगों का मालूम नहीं है, कि भारत के मुगल बादशाहों में खतना नहीं किया जाता था, जोकि चिंगिस से अपने सन्तान को दिखलाने के लिये ही था। चिंगिस जन्म भर अनपढ़ रहा, लेकिन वह लिखने पढ़ने के महत्त्व से इन्कार नहीं करता था। जैसे ही उर्दुगुर लिपि मंगोल भाषा के लिये प्रयुक्त हुई, वैसे ही चिंगिस के मौखिक नियमों और आज्ञाओं को लिखा जाने लगा। चिंगिस को मंगोल लोग बौद्धा (देवप्रेषित) कहते थे। काराचीनीने लिखा है—“वह (मंगोल) सबसे अधिक अपने स्वामी (चिंगिस) के आज्ञाकारी थे। वह उसका भारी सम्मान करते और धोखा देने के लिये कभी एक शब्द भी नहीं बोलते थे। शायद ही कभी वह आपस में लड़ते-झगड़ते, एक दूसरे को धायल करते या मारते। चिंगिस के राज्य में कहीं चोर-डाकू नहीं मिलते थे, इसीलिए मंगोलों के घोड़े, खजाने तथा सब तरह के माल से लदी हुई गाड़ियाँ ऐसे ही खड़ी कर दी जाती, उनकी रखवाली का इतिजाम नहीं किया जाता। मंगोलों के गल्ले का कोई पशु यदि खो जाता, तो लोग उसे

चीजों के अफसर के पास पहुँचा देते । अपने भीतर एक दूसरे के साथ वह बड़ी नम्रतापूर्वक बर्ताव करते हैं । भोजन की कमी ही तब भी वह मुक्त-हृदय से आपस में बाटकर खाते हैं । कष्ट के समय वह बड़े धैर्यशाली हैं । चाहे मंगोलों को एक या दो दिन से अन्न न मिला हो, तो भी वह गाते हैं, विनोद करते हैं । यात्रा में सर्दी और गर्मी दोनों को बिना दुःख प्रकट किये बर्दाश्त करते हैं । यद्यपि अक्सर शराब के नशे में मस्त हो जाते हैं, लेकिन उसके कारण वह कभी झगडा नहीं करते । बदमस्ती उनके भीतर एक सम्मान की चीज मानी जाती है । जब कोई मंगोल अत्यधिक पान करके कै करता है, तो वह फिर पीना शुरू करता है । दूसरे लोगों के प्रति वह अत्यंत अभिमानी और रोब दिखलाने वाले होते हैं । चाहे कोई कितना ही बडा आदमी क्यों न हो, दूसरी जाति के आदमी को मंगोल नीच दृष्टि से देखते हैं । हमने इस तरह का बर्ताव खान के दरबार में रूस के महाराजुल, जार्जिया के राजकुमार, बहुत से सुल्तानों और बड़े आदमियों के साथ होते देखा, जो कि भेट और सम्मान प्रकट करने के लिये दरबार में आये थे । यहाँ तक कि उनकी सेवा के लिये जो तातार (मंगोल) नियुक्त किये गये थे, चाहे उनकी स्थिति कितनी ही हीन हो, लेकिन वह इन बन्दी कुलीनों के आगे आगे जाते और उनसे ऊँचा स्थान ग्रहण करते । दूसरे आदमियों से वह जरा भी बात पर बिगड जाते हैं । इतने अभिमानी हैं, कि जिस पर विश्वास नहीं किया जाता ।”

ऐसी जाति के पथ-प्रदर्शन के लिये चिंगिस खान ने यास्सा बनाया था । बाबरने लिखा है—“मेरे पूर्वज और परिवार के लोग बड़े पवित्र भाव से चिंगिस के नियमों (यास्सा) का अनुसरण करते थे । अपने भोजन, दरबारों, उत्सवों और विरोध-मंडलियों में, अपने उठने और बैठने में उन्होंने कभी चिंगिस के नियमों के विरुद्ध आचरण नहीं किया ।

यास्सा के कुछ नियम निम्न प्रकार हैं—

“१ यह विधान किया जाता है, कि स्वर्ग और पृथ्वी के कर्त्ता केवल एक भगवान् पर विश्वास करना चाहिये । केवल वही अपनी इच्छा में जीवन और मृत्यु, गरीबी और अमीरी प्रदान करता है । वह हरेक चीज पर पूर्ण अधिकार रखता है ।

२ धार्मिक नेताओं, उपदेशकों, साधुओं, धर्माचारी व्यक्तियों, मस्जिद के मुअज्जिनों, चिकित्सकों, और मुर्दा नहलाने वालों को राज्य की ओर से भोजन देना चाहिये ।

३ खानजादों (राजकुमारों), खानों, अफसरों और दूसरे मंगोल सरदारों द्वारा महा-परिगड् (कूरिल्टार्ड) में निर्वाचित हुए बिना जो अपने को खाकान (सम्राट) घोषित करे, वह चाहे जो भी हो, उसे मृत्यु-दण्ड दिया जायगा ।

४ मंगोलों के अधीनस्थ जातियों के सरदार या कबीले की सम्माननीय उपाधियोंको धारण करना निषिद्ध है ।

५ जिसने अधीनता नहीं स्वीकार की है, ऐसे किसी राजा, प्रदेश या जाति से सुलह करना निषिद्ध है ।

६ सेना के आदमियों को १०, १००, १०००, १०००० के विभागों में विभाजन करने के नियम को कायम रखा जाय । इस प्रबन्धके अनुसार बहुत थोड़े समयमें एक बाहिनी और सेना-पति की इकाइयों को तैयार किया जा सकता है ।

७ जैसे ही कोई अभियान आरम्भ हो उसी समय हमारे सिने

के हाथ से हथियार मिलने चाहिये, जिसके कि वह अधीन हैं। सिपाहियों को हथियार अच्छी हालत में रखना चाहिये, और युद्ध से पहिले अफसर से उसका निरीक्षण करा लेना चाहिये।

८ कमांडिंग सेनापति की आज्ञा के बिना शत्रु को लूटने की सजा मृत्युदण्ड है। लेकिन आज्ञा मिलने के बाद सिपाही को लूटने का उतना ही अवसर मिलना चाहिये, जितना अफसर को और जो कुछ भी वह अपने साथ ले जाय, यदि उसने खान के लिये उगाहक-अफसर को उससे से भाग दे दिया है, तो बाकी का अपने पास रखने का उसे हक है।

९ सेना के आदमियों को अश्वस्त रखने के लिये प्रत्येक जाड़े में एक भारी शिकार का प्रबंध किया जायेगा। इसके लिये साम्राज्य के हरेक आदमी को मार्च और अक्टूबर के बीच के महीनों में हरिन, हरिनी, खरगोश, जंगली गदहों और कितनी ही चिड़ियों का शिकार करना मना है।

१० खाने के लिये मारे जानेवाले जानवर का गला रेतना मना है। मारने के लिये बाध कर उनकी छाती छेदनी चाहिये, और शिकारी को चाहिये, कि हाथ से कलेजे को निकाल ले।

११. पहिले चाहे इसका निषेध रहा हो, किन्तु अब जानवरों के खून और अतडी का खाना विहित है।

१२ नवीन साम्राज्य के सरदारों और अफसरों को उतनी ही रियायतों और सुरक्षाये मिलनी चाहिये, जिनकी सूची बना दी गई है।

१३ जो आदमी लड़ाई में भाग नहीं लेता, उसे कुछ निश्चित समय तक बिना मजूरी साम्राज्य के लिये काम करना होगा।

१४. जिस आदमी ने एक घोड़े या टाघन या उसके मूल्य के बराबर ही चीज की चोरी की है, उसे मृत्यु-दण्ड दिया जायगा, और उसके शरीर को दो टुकड़े कर दिया जायगा। इससे कम की चोरी की हुई चीज के लिये मूल्य के अनुसार ७, १७, २७ तक बेंत मारने की सजा दी जायगी, लेकिन चोरी गई चीज के मूल्य का नौ गुना दण्ड देने पर शारीरिक दण्ड से छुटकारा मिल सकता है।

१५ साम्राज्य का अधीनस्थ कोई आदमी किसी मंगोल को सेवक या दास नहीं रख सकता। कुछ थोड़ी सी स्थितियों को छोड़कर प्रत्येक (मंगोल) पुरुष को सेना में भरना होता पड़ेगा।

१६ जो कोई विदेशी दासी को भागने से नहीं रोकता या उन्हें शरण, खाना या कपड़ा देता है, उसे मृत्युदण्ड दिया जायगा। उस आदमी को भी इसी प्रकार का दण्ड दिया जायगा, जो कि भगोड़े दास से भेंट होने पर उसे उसके मालिक के पास नहीं पहुँचाता।

१७ विवाह कानून आज्ञा देता है कि हरेक आदमी अपनी स्त्री को खरीद सकेगा। अपने भाई-बन्धुओं में प्रथम और दूसरी श्रेणी के नजदीकी मन्त्रियों के बीच में विवाह वर्जित है। एक आदमी दो बहनों को व्याह सकता है, उतनी ही रखेलियों को रख सकता है। अपने पति की इच्छा के अनुसार स्त्रिया सम्पत्ति, तथा ऋण-विक्रय के काम को कर सकती हैं। आदमी (मंगोल) को केवल शिकार और युद्ध में लगना चाहिये। दासियों से पैदा हुए बच्चे वैसे ही बंध सतान हैं

जैसे कि पत्नियों के बच्चे । प्रथम पत्नी की प्रथम सतान को दूसरे बच्चों से अधिक सम्मान मिलना चाहिये । हरेक चीज का वही उत्तराधिकारी माना जायेगा ।

१८ व्यभिचार की सजा मृत्यु-दण्ड है । जो इसका अपराधी है, उसे उसी समय मारा जा सकता है ।

१९ अगर दो परिवार व्याह द्वारा सबधित होना चाहते हैं, और यदि उनके पास छोटे बच्चे हैं, उनमें से एक लड़का है, और दूसरा लड़की, तो उन बच्चों का विवाह हो सकता है । यदि बच्चे मर जायें, तो भी विवाह-बन्धन मौजूद रहेगा ।

२० बिजली कड़कने (वर्षा) के समय बहते पानी में नहाना या कपड़ा धोना निषिद्ध है ।

२१ गुप्तचर, झूठे गवाह, हीन-दुराचारी ऐसे सभी आदमियों तथा जादूगरों को मृत्यु की सजा दी जायेगी ।

२२ जो अफसर और सरदार अपनी ड्यूटी पर नहीं पहुँचते, अथवा खान के बुलाने पर नहीं आते—विशेषकर दूर के प्रदेशों में होते हुये—ऐसे आदमियों को कत्ल कर दिया जायेगा । अगर उनका अपराध कुछ हलका हो, तो उन्हें स्वयं खान के पास आना होगा ।

नहीं कहा जा सकता, यास्ता के इन नियमों में से सभी चिंगिस के मुँह से निकले थे । तो भी आशा की जाती है, कि इनमें से अधिकांश बातें चिंगिस की ही हैं । पैती दे. लाब्रुवा ने यास्ता का अनुवाद करते हुये लिखा है, कि मुझे पूरी सूची नहीं मिली । ब्रुवा ने इन्हें फारसी इतिहासकारों, दबरिक और कारपीनी के ग्रंथों से जमा किया ।

स्रोत-ग्रन्थ

- 1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
- 2 Heart of Asia (E D Ross)
- 3 Chingis Khan (Harold Lamb, London 1924)
४. युआन चाओ वि शि (संपादक स० अ० कोज़िन)
- 5 Life of Jengis Khan (R K Douglas, 1877)
- 6 Introduction a l'histoire de l' Asia Turcs et Mongol des Origines a' 1405 (Leon Cohun Paris 1896)
- 7 (Travel of) John of Plano Carpini (London 1900)
- 8 Ibna Batuta (Paris 1853)
9. Marco Polo (अनुवादक Henry Yule, 1921)
- 10 The Journey to the Eastern Parts of the World (William of Rubrique, London 1900)
11. Medieval Researches from Eastern Asiatic Sources (Liu Chutsui, London 1888)
- 12 A Literery History of Persia, (E G Browne, 1906-20)
13. Cambridge Medieval History Vol 1v, The Eastern Roman Empire 1493)

14. Melange d' Histoire et de Geographie Orientale (H Cordier Paris 1920)

15. Cathay and the Way Thither (Henry Yule)

१६. जामउत्-तवारीख (फजलुल्ला रशीदुद्दीन)

१७. तारीख जहांगुशा (अलाउद्दीन अता-मलिक १२५७-६० ई०)

18. Chronology of Ancient Nations (Alberuni, अनुवादक E Sachan)

19. Histoire general des Huns, de Iures, des Mongols et des autres Tartars Occidentaux (J De guigne)

20. Vie de Djenghiz Khan (मी० खन्द अनु० Joubert)

21. Discription Topographique et Historique de Boukhara (Neichakhy, Schefer)

22. Histoire des Mongols (D' Ohesson)

२३. तबकात-नासिरी (जुजजानी)

२४. मंगोलिया स्त्राना तगुतोफ (न म प्रुम्मेवाल्स्की, मास्को १९४६)

२५. किताबुल-हिन्द (अबूरेहां अल्ब्रेख्ती, अनु० मैथिल असगर अली, अजुमन तरक्की उर्दू, दिल्ली १९४१)

२६. मंगोल्स्कया पीजेस्त ओ खाने खरन् गड (ग० द० सभ्नेरेफ, लेनिनग्राद १९३७)

परिशिष्ट १ मध्यएशिया का इतिहास (१)

पुस्तक-सूचि

- अल्बेरूरी। अयूरेहों "किताबुल्हिन्द" (अजुमन त० उर्दू, दिल्ली १९४१)
आखितेकृतुनियं पाम्यात्तिकि तुर्कमेनिइ (मास्को १८३९)
आखेंओलोगिचेस्किये रस्कोप्कि व् त्रिअलोति (त्विलिसि १९२८)
इनस्त्रान्त्सेफ। क० हुन्तु इ गुन्नी (लेनिनग्राद १९२६)
उपाध्याय। भागवतशरण प्राचीन भारतका इतिहास (पटना १९४९)
उपाध्याय। वासुदेव भारतीय सिक्के (प्रयाग १९४८)
ओर्वेली। इ०अ० "प्राब्लोमा सेल्जुस्कओ इस्कुस्सत्त्वो"। "सिनखोनिचेस्किये तबलित्सी
दल्या पो खिच्चे ना येवरोनेइस्कोये लेताइस् विस्तेनिये (लेनिनग्राद १९४०)
क्रात्तिके सोओब्रश्चेनिया, VII, X, XII, (लेनिनग्राद)
क्रिस्तियान्सन। अर्थर ईरान दर जमान सासानियान (अनुवादकः रशीद यासमी तेहरान १३१७)
जुजजानी "तबकात-नासिरी"
ताल्स्तोफ। स० प० खोरेज्मस्कया एक्सपेदेत्सिया (१९३९), नोविये मतेरिअली पो इस्तोरिअ
कुलतुरि द्रेव्नओ खोरज्म। (वेस्तेनेक द्रेव्नेइ इस्तोरिइ (१९४६)
त्रेवर। क०व० कोव्रा इज नोइन उला (लेनिनग्राद १९४७)। पाम्यात्तिकि ग्रेको-वाक्त्रि-
इस्कओ इस्कुस्त्वा (मास्को)
त्रुदी अत्वेला नुमिज़प्रातिकी (लेनिनग्राद १९४५), त्रुदी उज्बेकिस्तान्कओ अकदमी नाउक
(ताशकद १९४०)
निजामुल्मुलक "सियासतनामा" (लाहोर)
पाम्यात्तिकि व् चेस्त क्बुलतेमिना (क्र० सा० XII २-४)
पिगुलेवस्कया। न. सिरिइस्कये इस्तोचिकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ (लेनिनग्राद १९४१)
प्रभैत्राल्स्की। न० म० मगोलिया इ स्वाना तगुसोफ (मास्को १९४६)
बरतोल्द। व० व० ओवेर्क इस्तोरिइ तुर्कमान्स्कओ नरोद (१९२४), ओवेर्क इस्तोरिइ
सेमिरेच्या (वेर्नी १८९८), किर्गिजी (फ्रुन्जे १९२७)
बेर्नस्ताम। अ० न० आखेंओगिचेस्किइ ओवेर्क सेवेर्नोई किर्गिजिइ (फ्रुजे १९४१),
सेवेर्नोकिर्गिजि इ पो चुइस्कओ कनाला (फ्रुजे १९४३), त्युरोक (लेनिनग्राद १९४६),
सोन्दिइस्कया कलौनिज़ात्तिया सेमिरेच्या

मलिक । अलाउद्दीन अता तारीख जहागुशा (१२५७-६० ई०)

मालोफ । इ०न० द्रेव्ने तुरत्स्किये नादग्रोबिया म् नादपिस्यामि वास्मेइना रे. तलस (१९२९)

येफिमैको । पी० पी० . पेर्वोवेलोये ओव्श्चेस्त्वो (लॅनिनग्राद १९४५)

रशीदुद्दीन । फज्जुल्ला जामे-उत्-तवारीख

वेइमार्त। व०व० इस्कुस्त्वो स्वेदिन् आज़िइ (माम्को १९४०)

वोस्तोकोवेवेनिये II (लॅनिनग्राद १९४१)

शुस्कोव्स्की रज्ज्वलिनी स्तारओ मेर्व (१८९४)

सभेयेफ । ग० द० मगोल्स्कया पोवेस्त आ खोन् सरन् गड्ड् (लॅनिनग्राद १९३७)

सांकृत्यायन । राहुल इस्लामकी रूपरेखा (प्रयाग १९४७), दर्शनदि०दर्शन (प्रयाग १९४७),
“सोवियत भूमि”—दिल्ली १९५३

सोव्यत्स्कया एत्नोग्राफिया (१९४६)

स्त्रूवे । न०व० . इस्तोरिया द्रेव्ने ओ वोस्तोका (लॅनिनग्राद १९४१)

हेरेबोतस अनुवादक—फ० मिश्रैको—इस्तोरिया व् द्रव्यानि किनगाख I, II (१८८५-८६)

Alberumi : Chronology of Ancient Nations (Tr. E. Sachau)

Allen. J. : Coins of Ancient India (London 1936)

Ayyangar. T. T. S. ; . Stone Age in India

Bartold. W., : Turkistan Down to the Mongol Invasion (London 1928)

Bergmann. F. G., . Les Scythes (Paris)

Berthelot. A., : L'Asie Ancienne Centrale et Sud Orientale d'apre's
Ptolomie. (Paris 1930)

Bloomfield. L. : Language. (1933)

Boas. Franz, & others, . General Anthropology (Newyork 1938)

Bullettine de l' Acedamy Royal des Sciences et de lettre de Dennemark
No 3 (Copenhagen)

Burkitt. M. C., : Our Early Ancesters (London 1929)

Carpini. John Plano, Travel of (London 1900)

Cordier. H., . Melonge d'histoire et de Geographique Orientale
(Paris 1920)

Czalicka. M., : The Turks of Central Asia in History and at the Present
Day (Oxford. 1918)

Desquigue. : Histoire des Huns (Paris 1756)

D' Ohesson. : Histoire des Mongol

Donglus. R. K., : Life of Jengis Khen (London, 1877)

Elliot-Smith. G. : The Evolution of Man (London, 1927) In the
Beginning, (London, 1940)

- Gardner. P. :** Catalogue of Coins in the British Museum (London 1886)
- Gorden-Childe. V. C. :** The Aryan
 : The Bronze Age
 • The Most Ancient East (London, 1928)
 • Progress and Archaeology (London 1944)
- Guignes. J. de, :** Histoire generale des Huns des Turks, des Mongoles et de Autre Tartares Occidentaux (Paris, 1756-58)
- Haddon. A. C. :** History of Anthropology (London)
- Hall. H :** The Ancient History of Near East (London 1936)
- Rawlinson. G :** Herodotus (London)
- Huen Tsang (Tr. Julien) :** Memoir Sur les Contries Occidentale
- Hotsma :** Recueil de Textes relatif a l'histoire de seldjucides (Paris)
- Ibn-Batuta. :** Travel (Paris 1453)
- Inscription de l' Arkhon** recueillies par l' expedition Finnois (1890)
- Jasperson. O.** Language its nature, Development and Origin (1923)
- Journal of American Oriental Society. (1917 Sept) :** The Story of Chang-Kien
- Keith. Arthur. :** Antiquity of Man. 2 vols (London) : New Discovery relating to the Antiquity of Man (London 1931)
- Lamb. Herold.,** Chingis Khan (London 1928)
- Leith. Duncan** Geology in the Life of Man (London, 1945)
- Lerch. :** Sur les monnides de Boukhare-Khoudats
- Lowie. R. H., :** Primitive Society (1920)
- Maspero G..** Histoire Ancienne de l' Orient 3 vols. (Paris 1905)
- Meillet. A., and m. Cohen. .** Les Langue du Monde (Paris 1924)
- Mirkhond. (Tr. Joubert). :** Vie de Djenghis Khan
- Mitra. P. .** Prehistoric India (Calcutta, 1928)
- Moret. A. :** Histoire de l' Orient, 2 vols (Paris)
- Morogon. J. de. :** L' Humanite Prehistorique (Paris)
- Marcopolo : (Tr. Henry yule) :** Travel (London, 1921)
- Nemeth. J. :** Die Kokturkischen Grabins chriften aus dem Taledes Talas in Turkistan (Budapest)
- Nerchakhi (Tr. Schefer) :** Discription Topographique et Historique de Bok hara.
- Oppert. :** Le peuple et la langue des Medes

- Paggots. :** Prehistoric India. (London, 195)
- Parker. E. H. :** A Thousoud Years of Tartars (Shanghai 1895)
: The Turko-Scythuen. (China Review, 1892)
- Pumpelly. R. :** Exploration in Turkistan 2 vols (1903-4)
- Quennell. M. and C. H. B. :** Everyday Life in the Old Stone Age
(London)
- Radloff. W. :** Altturkische studien IV.
- Rapson. :** Coins of Ancient India. (London)
- Rawlinson. H. .** Inscription of Darius
- Ridley. G. N.** Man the Verdict of Science (London, 1940)
- Ruza. Nour. .** Oughous-Name (Alexandrie, 1928)
- Ross-E. D. (Tr.) :** A History of Mongol of Centrent Asia (Tiankh-i Rashidi,
(London)
: Heart of Asia (London, 1999)
- Rubriue. William. :** The Journey to the Eastern parts of the world.
(London, 1900)
- Saint-Martin. Vivien de., :** Surles Huns Blanc ou Ephthalites
- Shiratorie K., :** A Study on the titles Kaghan and Khatun (Tokyo,
1926)
: Sur l' Origine des Huing-nu (Journal Asiatique C C X. I. (1923)
- Smith. V. :** Early History of India.
- Sten-Kono :** Notes on Indo-Scythianu Chronology.
- Stein. M. A. :** Manuscript in Turkish runic script from Miren and Tunh-
uang (J R. A. S, 1912 Jan)
- Sykes. P. M. :** Ancient Empires of the East
: Persia. 2 vols
- Tarn. W. W. :** Greek in Bactria and India (Cambridge, 1938)
: Hellenistic Civilization. (1930)
: Selucid-Parthien Studies (1930)
- Taylor. E B. :** Anthropology 2 vols (London, 1946)
: Researches to the Early History of Mankind (London 1878)
- Tsui-chi :** A Short History of Chinese Civilisation. (London, 1945)
- Thierry. Am. :** Histoire d' Attila et de ses successeurs (Paris, 1855)
- Thomes. F. W. :** Tibetan Documents Concerning Chinese Turkistan
(J R. A. S., 1934)
- Thomsen. V. :** Westturken

- Traver. C. :** Excavation in Northern Mongolia (Leningrad)
: Terracotta from Afrasiab (Leningread, 1936)
- Ujfaly. :** Migration des peuples et perticulerelement Cells Touraniens
(Paris, 1873)
- Vambery. A. :** History of Bokhara (1873), Sketches of Central Asia
(1868), Travel in Central Asia (London, 1861)
- Washborn. :** Early History of Turks
- Watters. T. :** On yuan Chwang's Travel in India, 2 vols
- Wylie. :** History of Hingnu in their relation with china (London,
1892)

परिशिष्ट २

नामानुक्रमणी

अकबर—१०७, ३१२ (मुगल)
अकमलिक, हुमाऊँ — १८४
(मंगोल मनापति)

अकशाह (ख्वारेज्म)—४७६
अकसीकत—३५७, ३८५,
४०५

अकसू—१०२, ११०, १३२
(पोलुका, बालुका) १३८,
२४९ (पेन्चुल)

अकिनी—१३१ (कराशर)

अककव—१४६

अखताची—४५८ (पद) ४५९
(सवार), (अख्ता=घोडा)

अखवतन—१४५ (हुन्दान),
१६४, १६५

अखामन—१४५

अखामनशी—१४५ (अखा-
मनी)

अखामनी—१४३-१५७ (वंश)
१४५, १६०, २९७

अगथोकल—१७६, १७८,
१७९, १८५

अगथोकलेइया—१८१ (मिना-
दर-मत्तनी)

अंगारा—१३७ (नदी)

अंग्रामेन्यु—१५१ (अह्लमान,
शैतान)

अग्निधनुष—४८६ (बन्दूक)

अग्निमित्र—१६९

अच्ची—८१, ८८ (हूण)

अजम—२८०, २८२ (अन्-
वरबा)

अजिल—१२ (मानव), २३

अजेस्—१८२

अजोफ (सागर)—६, ८
(असोफ मी)

अतबास—२५१ (काशोद
कुरगान) ३३२, ३८७

अतलस—२४८ (तलम)

अतलान्तिक—५

अताबेग—४७२ (फारस)

अतिका—१५२

अतिसज—(ख्वारेज्मशाह),
३४९, ४२६, ४२७, ४३०,
४३२, ४४०-४२

अथिना—१८३ (देवी)

अथुर—१४९ (अमीरिया,
असुर)

अथेनीय—१५५

अथेन्स—१४७, १५२, १८३

अविर—१३७, १३८ (तुक)

अद्भुतविहार—१३२

अनशन—१४५ (ईरान)

अनाहुता—१८४ (वधुदेवी)

अनोशतगिन—४३२-४०

(ख्वारेज्मी १)

अनौ—४२-४४, ५८, ६६

अन्चे—१०१

अन्तर्वेद—३००, २६८ (मावरा
-उन्-नह.) २७४ ३११ (के
सिक्के)

अन्ताकिया—४२१

अन्तिगोन—१६८

अन्तिमाखु—१७३, १७५,
१७८

अन्तियालिकिद—१८०-१८१

(गंधार)

अन्तियोक—१६८ (१, २)

१७१ (३), १७७-७९, ४)

अन्ती—१०१

अन्वकुइ—१६७ (अन्वखुद)

अन्वखुद—१६७ (अन्वखुद),

४१२, ४३७ (शहाबुद्दीन
गोरी का पराजय-स्थान),
४४३, ४४९, ४७१ (वधु-
नट)

अन्वमन—४३

अन्वराब—२२३ (अन्तलोफो)

अन्व्रोन्—७३

अन्व्रोनीय—६१ (मप्तनदकी
संस्कृति), १५९ (वा
मवरी ख्वारेज्मी ताजा
बागयाबमे)

अपिया—६९ (शकदेवी)

अपो—१०८ (तुक)

अपोको—३३५-३८ (अ-
पओकी, खितनराजा)

अपोलोदोत—१७३ (बास्तरी)
१७५, १७६ (भक्कच्छ),
१७९, १८१, १८२

अपोलोन—१८३ (देवता)

अफगानिस्तान—६, १२८,
१३५, १७१, २२३, २७९,
३६७, ३९२

अफनास—७३

अफशान—३६८ (बुखाराके
पास)

अफशीन—३१४ (उश्रुमनाका
राजा, जिसका पुत्र कावूम),
३१५

अजोका—१२२

अजोग—१६२ (ख्वारेज्म)

अजोबिता—१८४ (देवी)

अबीवर्द—३६७, ४८४

अबुलअब्बास—२९५ (अब्बासी
अबुल्कासिम—३८४ (समर-
कन्दी मुल्ला), ४०० (गज-
नवी वजीर)

अबुलखैर खम्मर—३१० (अनु-
वादक)
अबुलहारिस—४०२ (खयारेज्म
शाह)
अबुअल—३१० (अनुवादक)
अबुओन—३०४ (राज्यपाल)
अबुजकरिया—३१० (अनु-
वादक)
अबुजाफर—२९७ (अब्बासी
खलीफा मन्तूर)
अबुदाउद—२९५
अबुदाउद खालिद—३०२ (राज्य-
पाल)
अबुनल अहमद—३६८ (मामानी
वजीर)
अबुप्रकर—२५९ (खलीफा)
अबुमहम्मद इस्फिजाबी—३७०
(मामानी वजीर)
अबुमजाहिम—२९० (सुलू)
अबुमुस्लिम—२९६, २९५,
३००-३, ३१३
अबुसलम—२९५
अबुलजब्बार—११३ (राज्य-
पाल)
अबुलमलिक—२७२ (खलीफा)
३६६ (मामानी ६), ३८१
३७१ (नुह, मामानी ११),
३८१
अबुल्ला—२६७ (अमीरपुत्र,
राज्यपाल), ३६८, ३८१
(उज्जरपुत्र, मामानी वजीर)
२६७ (खाजिन-पुत्र, राज्य-
पाल), २७२ (जियाद-पुत्र,
राज्यपाल), ३१५ (ताहिरी)
अबुल्ला नईम—३१० (अनु-
वादक)
अबुल्ला बुखारी—३६४ (महीन
बुखारी-सत्राहक)
अबुल्लहसन अली—३७१ (ख्वा
रेज्मशाह)
अब्बास—२९३
अब्बासी (खलीफा)—२३८,
२९८-९९, ३६१, ४५४
अमदो—२३३ (=तगुत)
अमरानजी

अमरो—११३ (तुर्क)
अमरोशर—२३७ (तुर्क)
अमिन्तस—१६७ (ग्रीक क्षत्रप)
अमीन—३०८ (अब्बासी
खलीफा ६)
अमीर—३६२ (सामानी,
सुल्तान),
३७३ (राज्यपाल)
अमीर तैमूर—२८ (गुहा)
अमीराबाद—५८ (ख्वारज्-
मकी मस्कृति)
अमेरिकन—२६ (इंडियन)
अम्र—३१९-२२ (अम्र, सफ-
फारी), ३६३
अयस—५२ (लोह, कृष्ण)
अयाज—३८५ (अल्पअरसलेन-
पुत्र)
अरखोसिया—१७१, १७६
(विलोचिस्तान), १७८, १७९
अरदूहन—४७२
अरब—१२८, १३१, १३५,
१३६, २१८, २६९ (-विजय)
२७३ (-लूट खुरासानमे),
४१९, ४८४
अरबया—१४९ (अरब)
अरबी—३०९-११ (मे अनु-
वाद)
अरखेला—१५६ (मेमोपोता-
मिया)
अरमन—४२१
अरमेनिया—१४७, १४९,
३०४
अरसलन—२४६ (असाला)
अरसलन—३४८ (करलुक-
खान), ४६५
अरसलन—३८४ (दाऊद-
पुत्र कराखानी)
अरसलन—३२९-३० (करा-
खानी), ३८८ (महमूद
तगिन कराखानी ९)
अरसलन, अल्प—३८४
(सलजूकी)
अराल सागर—५, ६, ३५,
१२८, १३४, १५८, २३३,

अरालपैगबर—४१४ (वक्षुका
द्वीप)
अरमिज—१६५
अरिया—१७८ (हिरात)
अरिस्तातिल—१५५, ३६५,
३६६
अरिस्तोफ—१०२ (इतिहास-
कार)
“अरुजो समरकन्द”—३८६
(निजामीकी पुस्तक)
अर्तक्षत्र—१५४, १५५, (३),
१६४ (४), १७४
अर्तवान (पार्थिय)—१७०,
१७३
अर्दबैल—४७३
“अर्थशास्त्र”—३९२ (कौटिल्य)
अर्धदासता—४७
अर्मनी—१३०
अर्शक—९०२' १७० (१, २)
अलकसान्द्र पर्वत—४८०
अलसन्दा—१५६, १८१
(अलेक्सदरिया)
अलाक नोथन—४७० (मगोल
सेनापति), ४७१
अलाताउ—२५१ (पर्वत)
अलान—१३८, १३९, २३२,
४८५ (सक-वशज)
अलिकसदरिया—१५६ (अल-
सदा)
अलिकसुदर—१५४, १४८
(सिकन्दर), १६१, १६४-
१६७, १७१, १७५, १७८,
१८२, १८३
अलिकसुदर (२)—१६७
अली—२६०, २६२ (खलीफा)
अली—३१५ (ताहिरी)
अली ईसा-पुत्र—३०७ (राज्य-
पाल)
अलीतगिन—४१०, ४१८
(अन्तर्वेदपति)
अलेक्सान्द्र गिरि—१३२ (अल-
क्सान्द्र पर्वत)
अलतमश—४४४, ४८२, ४८९,
(अलतमश)

अल्ताई—५ (सुवर्ण पर्वत),
६, ५६, ५७, ६१, ६४
७५ (शक), ७६, ७९,
१०५, १०७ (अल्तुनकुश)
११०, १७१, १८४, २४८,
४१७

अल्ताई ताय—१३०

अल्तुनताश—४०३, ४१०,
४११ (ख्वारेज्मशाह) ४४०

अल्प अरसलन—३८४ (सल्जु-
की), ४१८, ४२१-२२

अल्पकारा—४४५

अल्पतगिन (ख्वारेज्मी)—
३९५, ३९६, ३९८, ४०५

अल्पतगिन (गजनवी)—३३६
-६७, ३७४, ३७८, ३९३

अल्पतगिन (बुखारी)—३९८,
४२७, ४३२

अल्पदरक—४४७

अल्बेरुनी—२८३, ३६८
(देखो बेरुनी भी)

अल्मालिक—३५७ (सप्तनदे)

अल्लाफ—३११ (मोतजली)

अवहुरशहर—२८० (नेशा-
पोर)

अवार—१०४-६ (वश), ११७
(जूजेन), १२६, १३८ ३३५
(उजेनज्वेन)

अवावव—२८० (नगर)

अबेस्ता—६५, १५१ (पुस्तक)

अब्सकूम—४७

अशगान—२३ (हृशिकान)

अशनाशिन—१२९, १३५
(पंलुर्क खान)

अशियार—४९० (गर्जिस्तान)

अशूर—४७३

अशोननिशो—११९-१३९
(पूनुर्क वश)

अशोक—८७ (राजा) १४३,
१४९, १६९

अशयोल (मानव)—१२, २३
अशयोल । प्राण—१२
(मानव)

अशिवनी—१८५

“अष्टांगहृदय”—६८

असब कसरौ—२९० (राज्य-
पाल), ३६१

असरस—२८७ (अब्दुल्ला-
पुत्र)

असाला—२४६ (अरमलन)

असिना—२१८ (खेलू)

असिनासिन्—१२१ (पूर्वी
तुर्क खाकान), २१८

असी—१०१

असीरिया—५७

आतिम—२८९ (अब्दुल्ला-
पुत्र राज्यपाल)

असोफ—१०१ (अजोफ-अम
सागर)

अहव—३६७ (नियुक्ति-पत्र),
३७३, ३९८ (शासन-पत्र)

अहमव—३८६ (कराखानी६)

अहमव—५०८ (गजनवी
वजीर)

अहमव—३१५, ३६१, ३६६-
६६ (सामानी)

अहाइ—४८८ (समरकद-
शासक)

अहुरमज्द—१४५, १४७, १५१
(भगवान)

अह्ममान—१५१ (अग्र.मेन्यु,
शैतान)

आकूता—३४५ (किन्)

आगाखा—४५३

आगूज—२३१ (किपचक,
ककाली, करलुक), २३२
(का राजनीतिक नाम तुर्क)

३७९

आचो—२४२ (उद्गुर खान)

आजमिश—२३८ (तुर्कखान)

आजो—२४८ (त्युगिश)

आजुबाइजान—१०४, १४१,
४१९, ४७३

आतुयुंक—२४५ ५६

आविम मानव—२८ (मध्य
एशिया मे)

आनुसाइ—२३१ (आलान)

आमिल—३७३ (करसप्राहक)

आमिलखराज—३६२ (कर
सप्राहक)

आमू—८, १३५ (वधु नदी),
१३८, २१९

आमूय—४२९ (आमूल)

आमूर—१७८ (नदी)

आमूल—२७५ (चारजूय),
३६४, ३७०, ३७२, ४०२,
४०३, ४०९ (आमूय)

आरियन—१६१ (हिरान)

आर्य—५३, ६४

आर्यद्वीप—६४ १४४

आर्यान वेइजा—६४

आर्य—१७१ (हरिखद),
१७३

आलान—१०१, १६० (स्वा
रेडमने), २३१ (आन्माइ)

आलशान—२४६

आसंखित—२५० (नमगान)

आसंख—४१४

आस्ट्रिया—६

आस्ट्रलायित—७४

आस्ट्रलियन—२६ (मूल)

आहुरोश—४२८, ४४१ (दक्क)

इखवतन—३६९ (अखवतन,
हमदान)

इखशीव—२८१, ३०० (फर-
गानापति)

इग्लैंड—९

इचिनी—१०२, १०३ (बूसुन्-
राजा)

इचिसे—८१, ८७ (हण)

इजुहुनतुगरल—४५६ (स्वा-
रज्मी)

इतिल—२३२ (बोद्गा)

इवरीसी—४१९ (इतिहास-
कार)

इविकुत—३५१ (उद्गुर राजा)
४६५

इविकू—३४८ (उद्गुर राजा)

इनालचिक—४६४ (स्वारे-
ज्मी अफमर)

इरवी—८४ (हण)

इन्वोचोन—१३७

इन्वोनेसिया—२६

इब्दुल्-असीर—३५० ४७२
(इतिहासकार)

इबन-मुजाहिम—२९१ (मुकु,
अमुजाहिम भी)
इबनफजलान—२३२, २३३
(इतिहासकार ९२२
ई०)
इबनखल्दून—२३३ (इतिहास-
कार)
इबनसबा—२९३ (हसन, इरमा
ईकी)
इबनहोक्ल—२२३ (भूगोलज्ञ)
इबो कुलू—१२९, १३८ (प०
तुर्क खान)
इबो शबोलो—१२०, १३४
(प० तुर्क खान)
इब्राहीम—३३१ (कराखानी),
३८३
इब्राहीम (गजनवी)—८१५
इरगिज—३५८ (नदी)
इरतिल—१३९, (द० पू०)
इराक—२३० (मार्गाना-
मिया)
इराक-अजम—८८९
इर्तिश—२८ (नदी), ८६२
(नटे ज्वी), ४६५, ८८७,
४९०
इलाक—३७५
इलामिश—४५१
इलाल—४७६ (किया)
इलालगूमली—४७०
इलि—७, (नदी) ६१, ७०
(उ० प० का), ९८, १००,
१२६, १२९, १३५, ३५२, ४६५
इलिक नख—८०१, ८०२
(अन्न-वेदांग)
इलिक नख—३२०, (नगरखानी)
३७२, ३८०
इलियट-स्मिथ—२१ (इति-
हासकार)
इलियास—३६१ (मामानी)
इलिगुइलू—११२ (तुर्क)
इल्असलन—८२०, ८३१,
(अस्मिज-पुत्र), ८३२,
४४२-४८ (खारेज्मी ४)
इल्खाकान—१०७ (इल्खान)
इल्खानी—३०८ (नगरखानी)

इलतुकानि—३४८
इल्तेरेस—१२० (पू०
तुर्क)
इविनिशू—११८ (तुर्क)
“इशारात”—३६९ (सीना
की कृति), “सकेत)
इशिमी—२५५, २५८
इसहाक—३६७ (गजनवी
अल्पतगिन-पुत्र)
इसिमी—१०८-१० (पू० तुर्क
खान)
इसिबालिक—२४२ (उइगुर
राजधानी)
इसुस—१५६
इस्केमी—२३
इस्तख—२५९
इस्पहान—२९४, ४२५ (नगर)
(अस्पहान भी)
इस्पाहबव—२७९ (बलख-
राजा), ३६३ (कबूदजामा)
इस्फराइनी—४०६ (गजनवी
वजीर)
इस्फारा—२८६
इस्फिजाब—२३२, ३१५,
३२६, ३५५, ३७४, ३७५,
३७७, ४०८, ४५२ (सिरने
उत्तर)
इस्फिदयात्र—२१९ (पाइ-
गुड-जो ५)
इस्पाहबव—३६३ (कबूदजामा)
इस्फिजाब—२३२, ३५५, ३७४,
३७५, ३७७, ४०९, ४५२
(मिरसे उत्तर)
इस्माईल—३१९, ३६२-६४
(मामानी), ३६९, ३५४
इस्माईली—४५३
इस्लाम—१२८, १४३, २५६,
२६९, २७९, २८४, २९२,
(के सिद्धांत), ३३३ (करा-
खानियों में), ४९२
इस्तिक्कुल—५६, ७३, ७९,
८८, ९८, १३०, १३२,
१७२, २३४, २४९, (सरो-
वर)
इस्तिक्कुल (शब्द)

इजान्या—१०९, १२६
(पू० तुर्क)
ईरान—६, ६४, १३१, १३५
ईरानी—७९, १४३, १६१
(-धर्म)
उइकला—१६०
उइगुर—११६ (कबीला),
११७, १२१, १२३, १२६,
२३२, २३३, (-लिपि),
२३३-४६ (वश), २३३ (नैमन
कडली-किपचक, कियत-
कुयद, नोखुस-मगित, २४२
(राजधानी इसिबालिक),
२४३ (कराखोजा), २८३,
३७९, ४६१ (बखशी),
४६२ (से मगोल-लिपि),
४८७, ४९० (अमीर)
उइशान—२३० (कुषाण)
उइसुन—१०४ (वसुन)
उकइन—४८५
उगइ—१३७ (यूची, तुर्क)
उगुतइ—४७८ (देखो उगुतय
भी)
उगुतय—४६८, ४९१
उचाउफू—२४६ (नगर)
उचच—४३४ (राज्य, भारत)
उजगन्व—२५१ (उजगेद),
३५५, ३७१, ३७३, ३८७,
३९०, ४००, ४०५, ४१३,
४७०
उज्जैन—१७६
उज्जेक—१४४
उज्जेकिस्तान—६, ११, ५६,
१७१, १५८, १७१
उजलगशाह—४७६, ४७७,
४७८ (खारेज्मी)
उतरार—३२८ (फाराब),
४३३, ४५०, ४६६, ४६७,
४६९, ४८९
उत्तरापथ—५६ (कजाक-
स्तान), ६१, ६२, ७१-
१६९, १००, ३२३, ३८३,
(तुर्कभूमि), ३२४-३५८,
३५७
उज्जेकी—२१० (अस्मिज-पुत्र)

उपनिषद्—१४४
 उबैकुल्ला जियाद-मुश्—२७०
 (राज्यपाल)
 उमर—२५९ (खलीफा),
 २८५ (उमैया)
 उमैया—१३५ (वश), २५६,
 २६४-८०, २६५ (खलीफा-
 सूचि), २६५-६० (उमैया
 राज्यपाल)
 उरगज—२३२ (गुरगज),
 ४९१, (कुन्या—)
 उरगा—२३३ (उलानबातुर)
 उरमुला—१०० (नदी)
 उराह्युबे—२२० (उशूमना)
 उरानियान—४७७
 उराल—९, ६१ १८८
 उरमखो—१०६, १२२,
 (पीतिङ्ग), १२५, २३७
 (उइगुर भूमि में), २४२,
 २३३
 उर्त—११९ (ओर्दू)
 उर्बुबालिक—२३३
 उर्म—११ (हिमनधि)
 उलगान—७५ (नदी)
 उलानबातुर—२३३ (उरगा),
 ४९२
 उलूखलून—३५७ (बुजार-
 कन्ना, चिगिस-रानी)
 ४६५
 उवरजिमया—१५०
 (ख्वारेज्म)
 उवारेज्म—१६१ (ख्वारेज्म)
 उशूमना—२२०, २३२, २९०,
 २९१, ३० (—राजा खरा-
 ख), ३०८, ३०९ (उरा-
 त्यूबे जिला), ३१५, ३६१
 उषा—४ (ओलिगोमेन्), ५
 उषा। अति—८, (होलेसेन्)
 उषा। अधि—४ (प्लिओसेन्)
 ५
 उषा। अभि—११ (प्लस्तो
 सेन्)
 उषा। इव—१४ (भारतमें)
 उषा। मध्य—४ (मिओसेन्)
 ५८

उषा। लघु—४ (ओलिगोमेन्),
 ५
 उस्तउर्त—२३२
 उस्तावसी—३०४ (विद्रोह)
 उस्मान—२६१-६२ (खलीफा)
 उस्मान—३५२, ३५४, ३५६,
 ४३८, ४५१, ४५२, (ममर-
 कन्द शासक)
 उसमानलो—२३१ (किगचक,
 आगूज), ४१७ (तुर्की के तुर्क)
 उस्तएरबा—६१
 ऊमुज—२४४ (उइगुर
 सरदार)
 ऊजजा—१४९ (गलम्)
 ऊरवेव—३९, ६७, १४४,
 १५१, १८४
 उकतिव—१६८, १७८-
 १७९ (बाख्तर), १७७,
 १८१
 एउकतिवेइया—१७८
 एउतिविम—१८३ (एउधि-
 विम)
 एउधिविम—१६९, १७०,
 १७१-७३ (बाख्तर),
 १८३ (एउतिविम)
 एउधिविम (२)—१७५
 एक्सर्त—१४६ (सिर नदी,
 यक्सर् भी)
 एउइव—४५९ (द्वारपाल)
 एसेइ—२५० (नदी),
 येनमेइ भी)
 स्फारचो—१८२ (जिला)
 एपिस्तल—१८२ (मिअस्ट्रेट)
 एकताल—१७३ (नेकताल)
 एमिल—१२८, ३४८, ४७६
 एम्बा—२३२ (नदी)
 एल—१२७ (कमीला)
 एलखान—१०७
 एल्बे—२६ (नदी)
 एसिया—१२२
 एस्किमो—२०, २४ (कपिल—)
 ३४
 एडुहौला—३८६
 एमक—१३४
 एरयानम् वेइजा—१४४

ओके—२४४ (उइगुर खान)
 ओगल ईनख—४६७
 ओगताइ—३४८
 ओर्बिर—१३५
 ओजमिशि—१०९ १२६ (पू-
 तुर्क राजा)
 ओडोनोवन—२७१ (पर्यटक)
 ओनेवन—२४४ (उइगुर खान)
 ओपिस—१६७ (बगदाद)
 ओब्—८ (नदी)
 औरखोन (नवा)—२३४,
 २४८, ३२५, ३३३
 ओरनो—१६४ (गोरी या
 खुम)
 ओराइ ऊतान्—२९
 ओरिन्यक—१२, २०, २२
 ओर्बिचियन—५
 ओर्बुस्—८१, ११४, १२३,
 १२४, ४९२
 ओर्बु—८० (उर्दू)
 ओशूमना—२२० (उशूमना
 भी)
 ओसेता—१०१, (ओस्तेनी),
 १६०
 औलियाअता—११०, २१९,
 २५०, ३६३
 कंकाली—१०६ (तिङ्ग-लिङ्ग,
 तिकालिक), २३१ आगूजा,
 का बायतुर)
 कगान—१०४, १२७, २४७
 (खान, राजा)
 कग—९८, ९९ (कक), १००,
 १३८, १३९, १५८-६३
 (ख्वारेज्ममें), १६०
 (आदिम—), १६१ (कग-
 कुराण), १७०, १८५
 कडली—१०१
 कचाउ—२४६
 कजली—४५१ (नेशापोर
 राज्यपाल)
 कजवीन—४७२, ४७३
 कजाक—१३८, १४४, २३१
 (किगचक आगूज)
 कजाकस्तान—६, ५६, १०१,
 १३८, १७१

कतखुवा—३७६ (भूमिपति,
तालुकदार)
कतपूक—१४९
कतवान—३८८, ४२७, ४२८,
४४१
कतापुल्ल—४७७, ४८६
कताकुमान—७८
कनिष्क—१०३, १८६, १५१-
२०० (हुतात्म्या), २०७
कन्धार—१५६
कन्नोज—४२५, ४२७, ४४८
कन्स्तन्तिनोपोल—४१९
कपावोकिया—१७१
कविशा—१७२, १७८, १७९,
१७९, १८०, १८१ (का-
दामन), १८४
कफराज बुगरा—४८६
(विभाग, हुन)
कवावियान—४७७, ४७८,
४७९
कव—६८
कम्बुज—१७७ (अ. भागवा)
कयालिक—३५०, ३५५ (क-
लक राजधानी) ४५५
करलक—७३७, ७३७, ७४७
(कगलक), ७४३, ७४५,
७४८-५१ (यथा, कग-
हिमपुत्र), ७५० (गगुज-
आगुज), ७५८ (ग. यथा),
७२६, ७४८, ७४९, ७५०,
७६८ (कगलक, कगलक)
करलोक—११९, १२८, १३३,
१३५ (गोत्रक), १३७
कराहत—४५८ (वा. भागवा),
४६०, ४६१
कराउल—४६० (ग. भागवा)
कराकुम्—६ (ग. भागवा),
८, २८, ३५, १५८,
१६०
कराकुरम—७३ (कगकुरम)
कराकुल—२५० (डाडा)
कराकोरम्—८९ (मंगलिका),
२३३, ३२८ (नगर) ४७०
(किपचकोक)
कराकोल—२८ (कगकुरम)

कराखानी—२४६, ३२५-३३
(इ. भागवा, वश), ३६८,
३७९-९० (खान, सिकके),
४००, ४०१, ४४३
कगखिताई—३२९, ३३३,
३४७-५८ (वश), ४२८,
४२७, ४४८, ४५०
कराखोजा—२४२ (उइगुर
ग. भागवा), ३५१
करागवा—५१
कराज—३७३ (भुगर्भी नहर)
कराजा—४६५ (हाजिव)
कराजानीयन—४८४ (मंगल
ग. भागवा)
कराजरिन—२२६
कराताउ—३५
कराबुन—१२७ (जनभाषा-
रण)
कराबुलक—७५०
कराशर—१२८ (हराशर),
१३१ (अभिनी), १३६
(गुजरा), २४५
करासूक—६१ (स. भागवा)
ग. भागवा)
१३६ (करासू)
कराहोजा—१३० (करा खोजा)
कईनभकीय—५ (जनु)
कईला—७६२-६३, २९५, २९८
कई—४३२ (कगखिताई
ग. भागवा), ४४२, ४४९
कईनी—७७० (होतात)
कईनीया—३७६
कलमन—१२२, ३३६ (नगर)
कलोन—७४५ (निखनी राज्य-
ग. भागवा)
कलव, अजीव—३ (अजीवक),
५
कलव, खतुर्थ—६
कलव, जीव—३ (जोडक),
५ (जीवक)
कलव, लुवीय—५, ७, ८
कलव, नवजीवक—३ (किनी-
जोडक), १२
कबाव—३०५
कबाव—७८० (अ. भागवा)

कइकुवान—२९५ (बुलारा मे
कइकमगान)
कइमीर—१७५
कस्तिक—२५१ (कास्तिक-
डाडा)
कस्पियन (समुद्र)—५-८,
१३०, १३९, १६४, २१६,
२१८, २३२, २७७
कहतवा—२९४ (अब्बासी
मेनापति)
काइन—४७९ (स्थान)
काइफोड—४८६
काउचू—३३८
काउतू—२३८ (दडवत)
काउतउ—१०४ (ककाडी), १०६
काउसाइ—२४२ (उइगुर खान)
काकेशस—५
काजिलकुजात—३७५
कातुशाइफू—३४६
कातून—१२७ (खातून, रानी)
काजना—७५ (नदी)
काथि—४०२ (नगर)
काविर—३७१ (अब्बासी
खलीफा)
काविरखान (कराखानी)—
३२९-३०, ३३३ (जिब्राईल
८), ३८७, ४०४, ४२५
काविरखान—३५२ (किपचक)
काना—३११ (सिकके)
कान्सू—१२२
कान्सान्तिनोपोल—४२३
काबुल—१३०, १६४, १६८,
३०६, ३९५, ४९०
कायम—३८४, ४१९ (अब्बासी
खलीफा)
काइन—४७२, ४७३ (किला)
कार्नावाल—६०
कार्पाथीय—१८४
कार्पीनी—(प्लानी)—१०१,
४५७, ४७२, ४७३, ४९६
काली—१८३
कालामडा—२८९ (अब्बासी)
कालासागर—६-८
कालिजर—३९२
कालिजर—३९२ (अ. भागवा)

- कालिव्या—५७
 कावक—४१८ (सलजूकी)
 कावूस—३१४, ३१५ (उथू-
 सना-राजा)
 काशगर—८९, १२८, १३६,
 १३५, १३६, १३८, २४६,
 २८२, ३२८, ३२९, ३६८,
 ३५२, ३५७, ३८६, ४००,
 ४२१, ४४३, ४६५
 काशान—२८२, ३१५, ३५५,
 ३८७ (कसान), ४५१
 (निरमे उत्तर)
 काशी—४३७
 कासभा—१३२ (देश)
 कासान—३८७ (देखो) काशान
 भी)
 कास्तक—११०, २४९, २५१
 किगित—११० (मुयूखान)
 किजिलकिया—२५१ (डाडा)
 किजिलकुम—(लालमह), ८,
 २८, ३५, १५८, ४६७
 किजिलसू—१०२ (लोहिन नदी)
 “कितबुल कूनिया”—३१६
 किस्तन—८० (खिताई)
 किन्—३४४ (बदा)
 किन्चाउ-फू—३४५
 किदो—३२२ (दार्शनिक)
 किझर—५३ (कनौर)
 किपचक—१३९ (भूमि), २३१
 (आगूजो के पशधर) सेलजूक,
 तुर्कमान, उन्मान-की, कजाक),
 २३३ (उइगुर), २८६, ३५४,
 ३४८ (कग्ली), ३८८ (-
 भूमि), ४५२, (-मरू) ४७०
 ४८५
 किबितक—३४८ (नरू, परि-
 वार)
 किबिर—१३७, १३८ (तुर्क,
 चिपियू)
 किमाक—२३२ (तुर्क)
 किमाज—३५८ (नदी)
 किमेरिय—२३१ (का वास्कोर,
 केच)
 कियत—२३३ (उइगुर)
 किरगिज—८०, ११७, १ ३५-
 १३७, १३८, १४४,
 २३३, २३४ (चिरेक,
 नेरेक)
 किरगिजिस्तान—५६, १७१,
 २४९ (किगिजो)
 किरमिन किन—२५०
 किरा—७ (नदी)
 किलिच—१०८ (खिलिज, कुड-
 लुइचुइ), ३८९ (कगखानी
 खान) ११, ४२९ (अन्मिज-
 पुश)
 किश—३०५, २२९, ३६५,
 ४३६, ४४४, ४७४
 कीथ, अर्थर—२५
 कोमिया—३१०
 कुइलुइचुइ—१०८ (किलिच,
 खिलिच)
 कुक—१३७ (तुर्क)
 कुकित्त—२३४ (उइगुर)
 कुप्रद—२३३ (उइगुर)
 कुक—१२१ (ड्यूक,
 महाराज)
 कुबुलुक—३५१ (नैमन),
 ३५३-५५, ४३३ (गुबुलुक
 कराखिताई खान), ४५०,
 ४६५
 कुजुल—१९६-१८७
 (कदफिस)
 कुतुकनोयन—४८० (मगोल
 सेनापति)
 कुतुबुद्दीन (ऐबक)—३३१,
 ४३५, ४३७, ४३८, ४४४
 कुतुबुद्दीन—४४०, ४४१,
 ४५५ (ख्वारेज्म शाह
 २)
 कुतुला—४५८ (कगान)
 कुतुलिग—२३७ (यिगा,
 उइगुर)
 कुतुलुक—१२० (गुडुल),
 १२६
 “देले—११५
 कुतुलुकबालिक—४६७
 (सीभाग्नगर, जरनुक)
 कुतुलुग—२४२ (कुतुलुक,
 उइगुर-खान)
 कुतल—८३ (हण), ४६७
 (इस्खियायद्दीन)
 कुनैब—(१३५, २६९, २७३-
 ८१ (अरब राज्यपाल),
 २८४ (अत्याचारी)
 “कुवतकुविलिक”—३३३
 (बोगरा खानकी कृति),
 ३८३ (प्रथम तुर्की काव्य,
 वाबि बग्याग्नका)
 कुनार—१७५
 कुनोक-घेई—३३४
 कुनुज—२२२ (हुआं)
 कुबरा—४५४ (शेख नजीमुद्दीन
 तुर्कानिबतूनका यार)
 कुबरो—५४५ (मुफ्ती
 मप्रदाय)
 कुबिले नोयन—३५६
 (हुबिले), ४५१
 कुम—२९४ (स्थान)
 कुमवसन कला—१६०
 कुमाउ—६८
 कुमोत—२२२, ४१५
 कुमजी—४११-१३ (कुमजीभी)
 कुमुक खेती—११८
 कुमूजी—४११, ४१२
 (पहाडी)
 कुम्हार—४०
 कुरव—१४४ (कीरांश)
 १४५-४६ (अखामनी),
 १५८, १६०
 कुरवपुरी—१६५ (किरो
 पाली)
 कुरसूर—२९० (तुर्क)
 कुरा—२७७ (नदी)
 कुरान—२७३
 कुशताई—४९०
 कुरेश—२५५
 कुवं—४५४
 कुलजा—९०, १३०, १३१,
 २१६, २४९, ३५५, ४५२
 (वजार खान), ४८७
 कुलान्—१२१, १३५, ३०८,
 (तरती स्टेशन का पास)
 ३२५ (लुगोवया)
 कुलाब—४७१

कुशातगिन—४९८ (स्वारेजमी सेनापति)
 कुशानिया—२२० (कुशोज-हिका)
 कुषाण—१०३, १३०, १६१, १७३, १७५, १८५ (नला), १९५-२१५ (वश), २१६, २१९ (उद्गान), २२२ (काउगाद्र) ४१०
 कुसुमध्वज—१७६ (पाटलि-पुत्र)
 कुस्ता—३१० (अनुवादक)
 कुचा—९७, १२८, १३१ (कुचा), १३६, २३२, २५१
 कुहा—२१३, २७७ (राजानी), ३०६
 कुमिश—१०५
 कुयेवना—२००
 कुशे अरब—८७१ (स्वारेजममे प्रासाद)
 कुहे दरीगान—८७६, ८७७ (अनी, मेनापति)
 कुषि—३७
 केवारनाथ—३८
 केन्तम्—६५ (भाषा), ६६
 केम्बवर्त—४९९ (रान के पट्टी मगाल)
 केम्बियन—५
 केम्बियन, प्राक्—३, ५
 करमीन—३८५ (उज-किस्तान)
 केरा—१२५ (नीला नदी)
 केदलीन—११६ (नदी), ११७
 केच—२३२ (विभागियों का बाग्योर)
 केल्ड—२५, ६५
 केत्तमीनार—५८ (मस्त्राति), १५८, १५९, (स्वारेजममे द्रविड मस्त्राति), १६०
 केस—२२१ (वाश्वाङ्गना), २७९, २८१, २८७, ३०१ (शत्रुसंघज)

केशिक—४५९ (मगोल प्रतिहार)
 कैली—३५८ (नदी)
 कैस—२६७ (हेमान-पुत्र राज्य-पाल)
 कोइलूक—६१
 कोक्वा—२२४ (नदी)
 कोकसराय—४६८, ४६९
 कोकोनोर—८२, ८७, २४५, २४६
 कोखोता—४७० (मगोल फीला)
 कोखकोर—५८
 कोरिया—१०५, १११, १२२, ४८६
 कोरोश—८२, १४४, (देखो कुत्र भी)
 कोलो—१०८ (बुद्ध)
 कोब—८५
 कोहिस्तान—२७०, ३७० (नाजिकिस्तान)
 कोबुड—१२२ (थाड)
 कोटिल्य—३९२
 कोसियन चाड—३० (थाड सेनापति)
 कोसुड—११९ (थाड सम्राट्)
 कोसु—१४० (मेनापति)
 कयाड—३०, ४०
 कुनी—१३३, १३४ (५० तुर्क गजा)
 कुली—२३८ (कुतुलुग बिलगा)
 कुलुतेगिन्—११९ (५० तुर्क), १२३, १२४
 किमिया—१०६, ४८५
 कौतासस्—५
 कोमेनो—२० (मानव)
 क्लेइत—१६७ (सेनापति)
 क्लेमेन्त अलेक्सान्दरीय—१८४
 वान् वान्—१०२-३ (बूमन राजा)
 क्वेन्लुन्—६
 क्वेजो—२३७ (सेनापति)
 क्वेजो—२३७ (सेनापति)

क्षत्रप—१४७, १४८
 क्षत्रपी—१८२
 क्षययार्श—१५१-१५४ (अखामनी), १५४ (२)
 खजार—१३०, १३९, २१६, २३२
 खबुर—१४९ (दजला नदी)
 खरकान—४८४ (खुरासान)
 खरजग—३८५ (गाव)
 खराखरू—३०७ (उश्रूसना-राजा)
 खरोष्ठी—१७५ (लिपि)
 खलज खै—३७०, ३९६
 खलजी—१२८ (वश)
 खलीफा—२६७ (अरब, तुलनात्मक), २३७, २९२, ३९६
 खस—६८ (समाधिया), ७३, ७४, ८६ (कश, खश)
 खाकान—११२ (युनख)
 खाचाड—२३६, २४४ (तुर्क मूलस्थान), २४५ (कान्ते-ले), ३४२
 खाजार—३२७, २८७, ३०४ (समुद्र), (खजार)
 खाजिम—३०४ (अब्बासी सेना-पति)
 खातून—१०७ (रानी), १२५, २२७, २७० (बुवारा-रानी), ३३२ (कातून)
 खानखाना—१०७
 खान्चान्—२४६
 खामजद—२८१ (स्वारेजमी)
 खारजी—२९१, २९३, ३१८, ३६३, ३६८ (वातिनी), ३६९ (खारिजी)
 खालिद—२५९ (अरब सेना)
 खालिद कसरी—२८७ (क्षत्रप)
 खारवेल—१७५
 खिजिर—१३९ (समुद्र)
 खिज्जखान—३२६ (कराखानी)
 खिताई—८० (किस्तन, खित्तन), ११७, ११८, ०७० ०७६

खितन—२३४, २४३, २४६,
३२९, ३३४-४६ (वश),
३३५ (-राजा), ३४३
(जातिया—पेई, शिरवी,
नूचेन्, बोल्सगई), ३४४
खिलजी—२१८
खीवगी—४६६, ४७५ (गहासु-
हीन-)
खीवा—२७२
खुजिस्तान—४४८
खुतल—२०२ (कोतुला),
२९०, ३०१, (न्युदान),
३६८, ३७५, ३७६ (वहगम
यशज), ३७७, ३८०,
३८४, ४०२, ४०५, ४१३,
४४३
खुमारतगिन—४७७ (ख्वारे-
ज्म)
खुरासान—५७, ६०, १५१,
१६४, २७०, २७२, ३६३,
३९४, ३९९, ४०१
खुरासान-राज्यपाल—२८६
(वही अन्तर्वेद के भी)
खुस्म—१६४, २२२ (हुकुमो),
२७०, २८०
खुशो—१३० (ईराना),
४८२ (देहलवी)
खुखो पबेज—२१८
खुनुकबुवास—२७८
खन्बून—२७८ (म्यान)
खुनेव (अबुलगा-पुन)—२६७
(राज्यपाल), २७०
खेलबाशी—३७४ (विभाग-
कमांडर)
खेली—१०९, ११५ (पू० तुर्क
राजा), ११८ (पेई)
खेन्—१३४ (शेगुई)
खेबर—१७५, २६३ (दर्श)
खैयातो—४७८ (ख्वारेज्मी
मुहम्मदसिब)
खैयाम (कवि)—२९२,
४२३
खोकन्व—८९, २३१
खोजन्व—१६५ (लेनिना-
बाद), २३२, २८२, २८६,

२८७, ३३२, ३८५ ४७०
खोतन—१३४ १३६, १३८,
३२८, ३३२, ३५३
खोरजाव—२८१
(ख्वारेज्मी)
खोहोतुन्—१०७ (खानून)
ख्वारेज्म—५८ (मे ताअरुग),
(मे केतमीनार, ताजा-
बागयाव, अमीरावाद
अडका कला, नशिकला,
अमीरावाद, पित्तल्युगकी,
मस्कनिया) ६६, ७३, १३५,
१४४, १४७, १४० (उवर-
ज्मिया), १५२-६३ (प्रागै-
तिहासिक कालमे ईसवी
पाचवी मई तक), १८५,
२३३, २६२, २८१ (-राजा
चिगान), ३२५ (-शाह),
३४९ (-शाह अल्मिज),
३५२-५३ (-शाह चिगसमे
लडा), ३७५२ ७७, ३८६,
३९४ (वश), ४३९-४८
(वश), ४५४ (-शामन-
व्यवस्था), ४६५, ४८८
ख्वारेज्म—५८ (की मस्कनिया)
ख्वारेज्मिया—२२१ (हो-
लि-सि-मिका)
गगा—६४
गज—२२३ (काशी)
गजनवी—१२८ (महमूद),
१२२, ३६८, ३९२-४००
(वश)
गजना—३६७ (अल्पतपगिन,
सुबुकतगिन), ४८१
(गजनी भी)
गजनी—३९५, ४६६, ४८०
गजल—४२३-२४ (दार्श-
निक)
गजा—३७४ (एलिजाबेत्
पोल)
गजार—१५० (गंधार, पेशावर
तक्षिला) १६७, १७४,
१७५, १८०, १८१
(खैबरमे जेहलम)
गंधारकला—१८३

गयासुद्दीन (गोरी)—४३३,
४३४-३६, ४३७ (गोरी ३)
४४४, ४४९
गरलोक—१३५ (कग्लोक,
गात्राह), २३१ (आगूज,
करलोक भी)
“गर्ग रहिता”—१७६
गर्जिस्तान—३७५ (ऊपरी
मर्गबि), ४३३, ४९० (मे
आधिनार)
गर्जजी—३७२ (उनिहाम-
कार)
गस्सान—३६१ (राज्यपाल)
गाय—६५, १३९
गिजिया—७४३ (उद्गुर
शाद)
गितरिफ—३११ (गिक्वे)
गिलगत—७३
गुजखान—४८१ (हिदुकुश-
मारो)
गुज—११ (हिम-गवि)
गुजरात—१८२, ४३४
गुजार—३८०
गुडुलुग—२४२-४३ (-जिगित,
उद्गुर खान)
गुडुलु—१०९, १२० (पू०
तुर्क राजा), १२३, १२४
गुम्नो—१०२ (बुसुन राजा)
गुप्तकाल—१५०
गुरखान—३४८ (येल्), ३५१
(कराखिनाई)
गुरगज—२३३ (उरगच)
४५१ (गुरगाच), ४९३
(गुरगच)
गुरिल्ला—२९
गुर्ज जमीन—३८५ (कार-
जमीन)
गुर्जी—२३२ (जाजिया),
४७३, ४८५
गुलाम—१२८ (-वश), ३३१,
३७३-७४ (शिरा)
गुसेर—१३७ (तुर्क)
गुस्तास्प—१५१ (विस्तारप)
गूज—२३१, ४६८ (देखो
आगूज भी)

गूजक—२८१ (मोघ तरखन)
 गूजगान—३६८, ३७५ (राजा
 फरीगून), ४३३ (के फरी-
 गून)
 गूरक—२८६ (देवी गोरक
 भी)
 गूरगज—२३२, ३७५, ४०२,
 ४३६, ४८७, ४९१
 गूरगजी—३६७, ३६८ (अमीर
 मामन), ४७२ (सुकनुद्दीन)
 गूरगाच—४७५, ४७७ (गूर-
 गज), ४८६
 गेवरोसिया—१७९
 गेनोआ—४९५
 गोबालिग—३५७ (मनगर,
 बालागगून)
 गोरी—१०६, १०६, १२१,
 २३८, ४६३
 गोमाता—१७७
 गोरक—२७१, २७८ (मोघ
 तरखन), २७९ (गूरक
 भी), २८०, २८६
 गारी—१६६, ४३३-३८, ४३३
 (देग, गूर), ४८९ (शाहा-
 बुद्दीन), ४५३, ४५५,
 ४६१, ४७५
 गुनु-गुनुमी—१०० (बूनन
 राजा)
 ग्रिमाल्सी—२०-२१ (मानव)
 ग्रीक—२५, ६५, ७९, १४३,
 ४७५ (दार्शनिक)
 ग्रीकब्राख्तरी—६५, ८७ (ग्रीको
 -ब्राख्तरी), १६६-८५ (वश)
 १८५ (कला)
 ग्रीनलैंड—२६, ३४
 ग्रोस—१४७, १५१
 ग्वालियर—२१६
 घेई—११८, १२२ (खेली),
 १२४ (मजूरिया), १३७
 (तुर्कि), २४४
 घेरका—१०८, ३३६
 घोरन्—१०८ (घोडा)
 झकसक—४१ (फ्लिट)
 चगेज खान—६८ (देखो

चर चुव—१२२
 चन्दोर—४३५
 चङगुप्त—१६८, १७३ (मोघ)
 १७५
 चाशो—३०८ (तिब्बती सन्ना-
 द, लह-वन्-गो=देवमहा-
 क)
 चरपत्र—४६, ८५, १६२
 (ख्वारेज्म)
 चाउ—३३४ (वश), २४२
 चाउबुन—९२, ९३ (प्रभा-
 वी)
 चाङक्यान्—६६, ८७, ८८,
 ९८, ९९, १०२, १११,
 १७३, १८१
 चाङक्याङ-सेङ—२४०
 चाङ चुङ—४६१
 चाङ चुन्—४८७-८९ (यात्रा)
 ४९०
 चाङगाइ—३६६
 चाव—१२८, १२९ (ताश-
 कन्द)
 चाविर—४१८ (मजूरकी)
 चार्गिल—८२, ८८ (हण)
 चारमदा—१७५ (पुक्ला-
 वर्ग)
 चालेंस—१४८
 चिगान—२८१ (ख्वारेज्मका
 राजा)
 चिगिस—२३३, २३४, २४६,
 ३३४, ३४७, ३५१, ४३३,
 ४५०, ४६० (का अनु-
 शासन) ४६१, (के दो
 तमगे=मुहरे), ४६२-६४
 (का ख्वारेज्मसे झगडा),
 ४५७-६४ (खान), ४५८
 (जन्म), ४५८ (के दस
 पदाधिकारी), ४९१ (आक-
 ति) ४९२ (मृत्यु)
 चिङ—४६१ (उद्गुर ईसाई)
 चिगू—१०२ (बसुन राज
 धानी)
 चिङ चुङ—३३७, ३४०
 (खितन)

चिन्—२२, ३३४ (वश)
 चिन्-स्यान्-लेङ—४८६
 (ज्वालानिकोत्र)
 चिगाजी—२९
 चिपिय—१३७ (किविर,
 तुर्क)
 चिमकन्द—२१९, २३२ (चिम
 कन्त भी, सिरतट)
 चिचिक—४९० (नदी)
 चिली—३४७
 चिवित—७५ (दर्रा)
 ची—१११ (वश)
 चीउचू—९९ (हण)
 चीकाज—११७ (किगज)
 चीची—९०-९१ (हण शान्यु)
 चीन—६६, ६७, ७९, २४३
 (-राजकुमारी), २४४ (-स्त्रि-
 योका पर बाधना), ४२१
 चीयू—८१, ८५ (हण)
 चीलाहो—१२५ (केरा नदी)
 चीहलि—८१
 चुकुतियान्—१६ (का चीन
 मानव)
 चुङलिङ—१३२ (मामीर,
 पलाङुगिरि), १३४
 चुङचीमी—१०२, १०३
 (बसुन राजा)
 चुलोकगान—१२८, १३०
 (पठुर्क खान), २१६,
 २१८
 चू—७ (नदी), १०, ६१,
 ६१, ९८, ११०, १२०,
 १२६, १२८, १३२ (सू-
 से), १३४, १३५, १३८,
 २४२, २५१ (करलीक-
 केंद्र), ३५०, ४८७
 चूवेन्—८१, ८७ (हण)
 चुजुइबो—१३४
 चूनहर—६१
 चूला—२३४ (खाकान)
 चूलाखेङ—१२९
 चूलो—११५ (तुर्क)
 चेकोस्लावाकिया—६०
 चेपे—४८५ (चिगिस-सेनप,

चेरबी—१०९, ११९ (पू० तुर्क राजा)

चेरतामलिक—८०

चेरबी—४५९ (मंगोल पद)

चेल्गू—३५० (कराखिताई)

चेसी—२१९

चोचाउ—३४६

चोल—२३२ (तुर्क)

चौहान—४३४

चोङ—९३ (तिब्बती)

च्यङ कुन्—९१

"च्यान् शान् शूकी —८८

चवाङ कुङ—३३६

छाङ अन्—११५ (चीने), १२९ (राजधानी), २३६

छिन्—३४२ (वश)

जकारिया—२३३ (कजवीनी)

जगतइ—४६२, ४६८, ४७८ (चिंगिस-पुत्र, चगतइ)

जगरोस—१४९ (पर्वत)

जंगमहाबुर—११२ (नेपाल)

जंगी—४३७ (ताजुद्दीन)

जङ्गवेङ्ग—३४३

जन—५६ (कबीला)

जनयुग—५५

जान्—२३३, ३२६ (नगर), ३५३, ४१४, ४३०, ४४०-४२, ४४५, ४४७, ४५२, ४७०

जन्बी—४६८ (इमाम जलालुद्दीन)

जबगू—२३२ (आगूजोंके खान)

जमुका—४६० (नैमन खान)

जयचव—४३५ (गहडवार) ४४९

जरंगिया—१४९

जरनुक—४६७ (किला)

जरफशा—७ (नदी), १०, ६२ (सोन्द नदी), २१९, २८७, ३७१, ४६८

जर्दुस्त्र—१५१, १८४, ३०५

जर्दुस्त्री—१३३, २४९

जरीह—२८५ (राज्यपाल)

जलबायु—४१

जलालुद्दीन—३५८ (ख्वारेज्म-शाह), ४५३, ४६६, ४७१, ४७६, ४७८, ८२, ४८३

(पराजय)

जलालुद्दीन हुसन—४५३

(इस्माईली)

जहांगीर—३१२ (मुगल)

जहाज—२६९ (इतिहासकार)

जाति-सम्मिश्रण—२५

जाबास कला—१५८ (ख्वारेज्म में), १५०, १६२

जाफर आशासी—३०७ (राज्यपाल)

जाफर बरमक—३०७ (राज्यपाल)

जारिअस्प—१६५ (हजारास्प, तुंकन्द)

जार्जिया—२३२ (देखो गुर्जी)

जालेरी—४७१ (मंगोल यसा-उर)

जावा—८, १४-१६ (-मानव)

जासी—२५१ (यामी)

जिकली—३८६-८७ (कराखानी कबीला)

जिकिल—२५० (करलुक), २५१ (-भूमि)

जिगाय—२७९ (तुबार-शासक)

जिगिन्—१०८ (तुर्क), १३१, २३४ (उझुर राजा)

जिगिस—१०७ (देखो चिंगिस)

जिन्वीक—३०५ (मज्दकी)

जिब्राल्टर—८, १७

जिब्रैल—३०४ (फरियता)

जियाव—२४८ (अरब सेनापति), २६७ (राज्यपाल)

२९५ (खुजाई), २९६

जिलअरिक—२५०

जीजक—२३२, ३७२, ३७६

जीवक, नव—४, ५

जीवक, पुरा—५

जीवक, मध्य—३ (मिसो-जोइक), ४, ५

जुंगारिया—११७, २३४

जुजजान—२७९, २८१ (-गति)

जुनजान—४७३

जुर्ब—२८८ (राज्यपाल)

जुरासिक—५

जुर्जान—२८५, २९६, ३६३

जुल्—२५० (-मरु, नगर, विशपकके पाम), २५०

(-दर्श)

जुर्बेनी—३५० (इतिहासकार) ४२६, ४३६, ४३७

जूबी—४६२ (चिंगिस ज्योठ-पुत्र), ४६५ (का दामाद

कुजार) ४६६, ४६९, ४७७, ४७८, ४८५, ४८७

पर पिता कुपित), ४९०

४९१ (-मृत्यु)

जूबी—१२० (तुर्क राजधानी)

जूजान—४७९

जूजुन—१०४ (अवार), ११७, १३८

जूजोन—११७ (अवार)

जुमिन—३३८

जुमेन्—१३०

जुस—१८३ (देवता)

जुंगी—८३ (चगीज, हूण-शान्दु)

जुगू—१०८ (यबगू, राज-कुमार)

जेङ—२३३ (अकीक पत्यर)

जेरे नोयन—३५७ (चिंगिस नेनापति), ४६५

जेबगू—१२९ (यबगू), १२० (पू० तुर्क), १२९

जेडोल—३३५

जैङ—२८७ (आमू, बक्षु), ३९४

जोइलू—१८१

जोशतगिन—४०८ (गजनवी पनापति)

ज्वानज्वान्—१०४, १०६ (आवार)

टस्कनी—६०

ठी वें खन—३१० (तिब्बत सम्राट)

ठो-दे चुगुतन—३१० (तिब्बत सम्राट्)
 ठो लोङ् देचन्—३१ (तिब्बत सम्राट्)
 डुबेलडोर्फ—१७ (जर्मनी)
 डेग्यूब—६४ (- दुनाइ)
 तुक्तूतान—३५८ (मोंगित)
 तकमक—२३१ (सलजूकका बाप)
 तकलामकान—२८, १३८
 तकाश—४४४-४८ (ख्वारेज्म ६), ४४८ (काना) ४४९, ४५०
 तक्षशिला—१५०, १७५, १७८
 तगुत—२३३ (अम्दो), २४६, ३४१, ३४६, ३४८, ४६५, ४८९ (देखो हिया)
 तनई—१८४ (यक्सर्त देवी)
 तनाइ—१६५ (दोन नदी)
 तन्ता—१८४ (- तनइ)
 तन्दूर—४४
 तफगाचखान—३५५, ४५२ (गुरखान-कन्या)
 तबगाच—३३३ (- तमगाच खान, कराखानी)
 तबाबीस—३८७ (स्थान)
 तबारिस्तान—२८४
 तमगा—४६१ (मुहर)
 तमगाच खान—३८३ (करा-खानी ३), ३८९ (करा-खानी १०), ४४५ (करा-खानी)
 तमरउत्कुल—२३२ (स्थान)
 तम्बोम—२७८ (अरब कबीला)
 तमोटा—५२ (टगटा)
 तमोसितियेति—२२२ (धर्म-स्थिति २)
 तरकन—१२७ (तरखन)
 तरखून—२८६ (सोदी)
 तर-काल—१३७ (तुर्क)
 तरबगतई—८२, ९१, ११९ (प्रदेश) २४८ (त्युगिश, तरबती), ३४८ (खुबु चौक)

तरस—२१९, २४२ (उइगुर-खान), ३२८
 तराज—६१ (जबुल), २४८, २५० (तलस, औलिया-अता जिला), ३७७, ४३३, ४५०
 तरावडी—४३४, ४३५
 तरिम—७३ (उपत्यका) ९७, १०३, १११, १२६, १३८, २३२, २३९, (परतिब्बती) २४२, २८१, ३००, ३७९
 तलस—१०, ५६, ६१, ९२, १२८, १३४, २४२ (नदी) २४९, ३३३, ४०९, ४८७
 तलहा—३१४ (ताहिरी)
 तश्तवार—४२४ (थालवाहक)
 तस्योन—१६८, २८७, ३८५ (मै ताकखुसरो, ० कसरा)
 तस्मानिया—११, २६, ३१ (मूल-निवासी)
 ताइचाउ—२४०
 ताइचाउ—२३९, २४० (थाङ्ग) ३३४, ३३६ (तूयरिक, खितनी), ३३८-३९ (कितनी)
 ताइचु—२४४ (गहर), ३४०-४१ (शुङ्ग)
 ताइयवान्—२४३ (शान्सी नगर)
 ताइर बहादुर—४६७ (मगील)
 ताइव खान—३५१ (नैमन खान)
 ताइसी—४८८ (यैसी, दैमी)
 ताइमुङ्ग—११५ (चीन-सम्राट्) ११६, ११८, ११९, २३४
 ताइहती—१०४ (तोबा)
 ताई—४०३ (मुहम्मद, सेना-पति)
 ताउ—४८७
 ताउची—१३० (मिसोपोता-मिया)
 ताउचु—३४३
 ताउचुडती—३४४ (खितनी)
 ताउचु—३४५

ताकखुसरो—३८५ (तस्यो-नमै, ताक-कसरा)
 ताकूज—२३३, ३२५, २३२ (-आगूज)
 ताजा मीराबाद—१६० (ख्वारेज्म)
 ताजाबागयाब—५८, ६१ (ख्वारेज्मकी मस्जिद), १५९ (प्रथम आर्य)
 ताजिक—३९५ (अ-तुर्क), ४६८
 ताजिकिस्तान—१७१
 तातार—७९, २३७ (मस्य-चमी), २४० (तुर्क), ४७१ (मंगोल)
 तातुङ्ग—८४ (चीनमे नगर), १०४, ३४५
 तान्शान्—३४३ (कोयला - गिरि)
 ताम्रयुग—१२, ५२-५९, १६०
 तायङ्ग खान—४३३ (नैमन खान) ४५०
 तायनूकू—३५२ (कराखि-ताई सेनापति), ४५१
 ताराज—३६३ (तराज, तलस)
 तालकान—२७४ (तालिक्कान) २७८, २८० (नरसहार), २८१, ४७१, ४८०, ४८१, ४८३
 तालिकान—२७४
 तालमी—१७१ (तुरमाय)
 तालिङ्ग—३३७ (नदी), ३४५
 तालसतोफ—५८ (प्रोफेसर)
 ताश—३७४ (सेनप)
 ताशकन्द—११०, १३१ (शीकू, चाच, शाश) २१९
 ताशातुन—४६१ (नैमन मुद्राघर)
 ताशहाइ—१०३ (राजा)
 ताहिया—१७० (पार्थिया, दई)
 ताहिर—३०८ (अब्बासी सेनापति), ३१३ (राजा),

ताहिरो—२९७, ३०८, ३१३-
१७ (वश)

तिकालिक—१०६ (ककाली)

तिका—१४५ (तिका)

तिप्रा—१६८ (दजला नदी),
१८२

तिङलिङ—१०६ (ककाली),

११३, ११६, १२३, १२८,

१३०, १३४, १३७, १९५,

२३३

तिङली—८९

तिङलुङ—९९ (प्राग्उद्गुर
किरगिज)

तिङस्वान्—११७

तिफलिस—४८२

तिम्बत—३९, ६३, ९३, ९९,

१२५, १२५, १२६, (यि.)

१३६, १३७, २३६, २३९

(कातरिमपरशासन) २४२

२७४, २८१, ३००, ३०६,

३१० (मे अनुवादकार्य)

३५०, ४८५, ४८९

तिमाखुस—१७९

तियेनशान्—५, ६, ७

तीरदात—१७०

तुकुचार—४७३, ४८३ (मेर्व-
मे निहत)

तुकुहून—१२९ (पश्चिमी
तुक)

तुक्ताविकी—३५१ (मंगित
कुमार)

तुक्यु—१०७ (तुइकू, तुर्क)

तुखार—१२८, १३८, २२१
(तुहुओलो), २२४

तुखारिस्तान—२२६, २३३,
२६७, २७४, २७९ (विद्रोह)

२८८, ३१८, ४३८

तुखो मुन्गेबो—१३७ (तुर्गि-
वश)

तुगरल—४११, ४१८-२१
(सलजुकी)

तुगरल। करा—३३१ (करा-
खानी)

तुगरल। तैमन—३३२ (करा-
खानी)

तुगरल, यनाल—३८७ (करा-
खानी)

तुगराई—४२९ (इज्जुईन)

तुगलक—१२८ (वश)

तुगशावे—२२७

तुगाई—४६९, (खान, ४७०
(मगोल)

तुगान २—३३० (कराखानी-
खान), ३९० (काशगरी),

४०१ (अन्तर्वेद खान),

४०२

तुगानधिक—३९९ (सुमुकत-
गिन-पुत्र)

तुगानशाह—४४६

तुगुस—८२, १००, १०३

तुङलो—१३७ (तुकिस्)

तुङलू—८२ (तुगुस), ९५,

तुतुक—१२७

तुन्शोशे—२१८

तुन्शोखू—१२९-१३३ (तुर्क)

तुफगाज—३८३ (कराखानी-
गाखा)

तुमान्स्की—४३३ (हम्तलेख)

तुमेत—२३५, २३६ (उद्गुर
राजा)

तुमेव—३३४ (मगाल)

तुशगर्त—२५१ (डाडा)

तुर्क—७९ ८० ९६ (वश)

१०४ १०५ (लोहकार)

१०६-३९ (साम्राज्य)

१०७ (तुइकू, तुक्यू, तुर्क)

त्यरोक, तलक) १०८

१३६ १३८ १४३ २१७

२३२ (आगूज भी) २७४

४१७ (उत्तरी, पूर्वी,

पश्चिमी तुर्क)

तुर्क। उत्तरी—४१७ (याकूत)

तुर्क। पश्चिमी—१३८-३९

१२९ (तुर्कूहून) २१६-२७

४१७ (तुर्की आज़ुबियान

और तुर्कमानिस्तानके तुर्क)

तुर्क। पूर्वी—१०६-३९ ४११

(सिख क्याङ, उज्बेकिस्तान,

कजाकस्तान कूफाके तुर्क)

तुर्कमान—१४४, २३१ (किप-

चक-आगूज) ४१२ ४८५

तुर्कमान-नहर—४९१

तुर्कमानिस्तान—६ ५६ १७१

तुर्कान खानूत—३५२ ३५६,

४०३ (सलजुकी गनी) ४३६

४५१ (तेरेक ४६४

खानूत) ४५५-५६ ४६६

४७४-७६

तुकिस्—१२८ १३७ (जातिया

—बनकू तरकल, थुङ

ला, बंकाल, गुमेर, अदिर,

किवि-रस, कुकू, उगुइ,

सिम्, कोई, खिताई) (-

तुगिस्)

तुकिस्तान—३४ (चीनी) ३५

(शहर) ९४ (शान्)

१३९ २८८ (पूर्वी) ३६३

३७७

तुर्की—३४

तुर्गई—३५७ (प्रदेश)

तुर्गिस्—१२० (तुर्क) १२१

१२३ (सूजिया राजधानी)

१२४-१३५ (त्यगिस्) १३५

(-राजा मंगो)

१३७ (वश)

तुर्गेवूर्त—४५९ (दिनके पहरे-
दार)

तुर्फान—१८५ २३२ २३३

२४५ २४६ (तुर्फान)

तुङगू—१२४ (तान्यू कू)

तुला—११३ (मगालिया मे

नदी) ११६ १३७ २३४

(तुक)

तुली—१०९ ११६-११७ (पूर्वी

तुर्क खान) १३३

तुकिन्—११२ (पर्वत) ११४

तुचिन्—१०९ (पर्वत)

तुतान्—१०४ (यश)

तुनकत—३७५ (इलाक मे)

३८५

तुन—३९९

तुनन—८१ (नग)

तुमिन—१०९ ११० १२०

(५० तुर्क खान)

तुमुन—१०७ (ईलाखान)

तुल्य—४८३, ४८४, ८६
 तेकिश—४३६
 तेगिल—२१९
 तेचुङ—२४० (थाङ) ३४५
 खितन
 तेश्राद्रखमा—१७८
 तेंदुस—२४४ (कुकुखाते)
 तेभूचिन—४३० (चिगिस)
 ४५८-६०
 तेमूर—६६ १०७ ३४९ (गुर-
 खान)
 तेमूर मलिक—४७ ४११
 तेरेक—२३४ २३६ (जातिया
 —उइगुर, तरकल, बैकाल,
 कुक्क, तुला, गुसार, अदिर,
 किबिर, घेई, किर, स्वतेंसिर,
 गेकिर, किरगिज) २८२
 (तेरेक डाडा)
 तेरेगिन—४५९ (मगोल पद)
 तेकिश—२३६ (तुर्क-शाखा)
 तेमिज—१३५ १४१ १७५
 (देमिश) १८५ २२१
 (नुवार राजधानी) २२२
 २७५ २७८ ३७० ३७६
 ३८५ ३८७ ३९९ ४०२
 ४३७ ४३८ ४४३ ४७४
 (माली सराय)
 तेमिजी—४५४ (मैयद अला-
 उम्नक खलीफा)
 तेशिकाताश—२८-३४
 (गुहा)
 तेशिककला—१६०
 तेंमूर—६६ (तेमूर)
 तोकूचरा—४७१ (मगोल,
 तुकुचर)
 तोगूज—२३६ (तो उइगुर)
 तोन्—२५० (स्थान, नदी)
 तोन्तूकुक्—१२० १२१ १२४
 (पू० तुर्क)
 तोप—४२६
 तोप्रककला—१६२
 (खाराज्म)
 तोबा—९६ (वश) १०४
 (मुकुल अवार) १०५
 (वश) १०९ १११ (पूर्वी

तुर्कखान), २१७ २४६,
 (सियन्नी), ३३४
 तोमुरी—१४६ (मसागेत -
 रानी)
 तोरमान—१७३, २१६ (हेफ-
 ताल)
 तोरस—१४९ (कत्पूतक)
 त्युगिवा—२४८ (तखनी, आजी)
 त्युगिस—१३५ (तुगिस,
 त्युगेंस)
 त्रसरेणु—१०
 त्रिनील—१४ (जावा)
 त्रियासिक—५
 थाइशान्—१२५
 थरमोपोली—१५२
 थाइराइड—२५
 थाङ—११३ (वश), ११५,
 १२१, १३५
 थाङ, पश्चाद्—३३८ (शादो
 तुर्क)
 थिङ्गु—१२६ (तिब्बत)
 वेवातर—१७३ (देव-पुत्र)
 योस—२५, १४७, १४८, १६४
 क्षिगापथ—(मव्य-एसिया)
 ५६, ६०, १२८, १४१-२२८
 १४३, २५४-३२२, ३६०
 दइर्ई—१८४ (मोगदेवी)
 दत्तमित्रि—१७५ (नगरी)
 दन्वानकान—४१४ (स्थानमे,
 तुगरल सलजूकी विजयी)
 दन्पूब—१३९ (इरतिल),
 १४८
 दबूसिया—३७२, ३७६, ४६७,
 ४६८
 दमिश्क—२५९, २७२, २८१,
 २९७, ३०३, ३६५
 दरगम—३४९ (समरकदसे
 दक्षिण)
 दरजगी—४१३ (दरवद)
 दरगाह—३७३ (अत पुर
 दरवार)
 दरबन्द—१४६, २२१ (लोह-
 द्वार), २३८, २७७ ४१२
 (दर-जगी), ४८९
 दजेंगे—२५

दलोबियान—१०८ (प० तुर्क)
 १११, १२८, १२९, २१६
 (खान) (दालोव्यान)
 दशपुर—१८३
 दशरथ—१६९ (मौर्य)
 दहै—१७० (ताहिया)
 दाऊद—४११ (सलजूकी)
 दाक्वान्—११७
 दातुबगा—१०९, ११५ (पूर्वी
 तुर्गखान)
 दादाशिश—१४७ (बाख्तरी
 क्षत्रप)
 दानिक—३१५ (सिवका)
 दानिशमन्द—४६७
 (हाजिब)
 दामो—१२९ (धर्म), २१६
 दारयबहु—१४३ (दारयोश),
 १४७ १५१, १४५, १५८,
 १६४, १७०, १७३, १७४,
 १८२, ४६६ (दारयोश
 भी)
 दारयोश—६४ (दारा, दारय-
 बहु), ६६, ८२ १४८,
 दाहखनी—३५७ (मगोल प्रति-
 निधि)
 दालोव्यान—१११ (प० तुर्क)
 (- दालोबियान)
 दास्ता—४७, ५५
 दाहै—७४ (शक) १७३
 दिमित्रि—१७१, १७४, १८२,
 १८३
 दिथोनिसिलो—१८१
 दिरहम—२७० (- २५ ग्रेन,
 १६ माशा चादी)
 दिल्ली—४३४, ४३७
 दिवू—६९ (शक-देवता)
 दिवोदात—१६८, १६९-७०
 (१), १८३ (१, २)
 दिवोदास—१४४
 दिवोनिस्—१८४
 दावान—३७३ (मन्त्रालय),
 ३७५ (वजीर, मुस्तौफी,
 अमीदुलमुल्क, साहिब शूरत,
 साहिबबरीद, मुसरिफ,
 काजी)

- "बोवान लुगानुत्तुर्क"—३२९
 (महमूद काशगरी की)
 बुनाइ—६४, १०१, १४६
 (दन्वूब)
 बुर्गो—१०७ (तूफ, तोरी,
 तुर्क)
 बुर्गो—२४०-४१ (उद्गुर
 खान)
 बूर्गो—८३
 बूलन—१०९, ११४ (पू० तुर्क
 राजा)
 बूलू—१३५
 देइओक—१४५ (देवक, परंत-
 पुत्र)
 देमित्रि—१६९, १६८, १७३-
 १७८ (बाख्तरी), (=
 दिमित्रि)
 बेरे—१२९, २४३ (राज-
 कुमार)
 बेले—१०८ (राजकुमार)
 बेवक—१४५ (देइओक)
 बेवपुत्र—१९४
 बेवमूर्ति—१६९
 बेहकान—२६८, २८७
 (ग्रामणी, ग्रामपति, तालक-
 दार), ४२० (के विल्ल)
 बेहिस्तान—४४४ (नसा)
 बैलम्—३१७
 बैलमो—३६४ (वश), ३६६,
 ३८७, ३९९, ४१८
 बैसी—४६२ (मुखिया, तैनी)
 बोन—८ (नदी), ६४, ६७,
 १०७, १६५, (ननाइ),
 २३३
 बोलोनोर—३३६
 बनिपेर—४८५
 ब्रंगियाना—१७१
 ब्रविड—१५९ (ख्वाजेजम)
 ब्राह्म—१७३ (तेशा-)
 धर्मस्थिति—२२५ (बखान)
 धातुयुग—४०-७०
 धिबगा—१८४ (वैदिक देवी)
 धून—५१ (धातु-पाराण)
 नइमन—२३३ (नैमन,
 उद्गुर)
 नकशाब—२७९, ३८८ (नख-
 शाब)
 नखशाब—१८१, २८२, ४४४
 नागरी—१७६ (मेवाडमें)
 "नजात"—३६९ (मीनाकी
 कृति)
 नज्जाम—३११ (मीनजरी)
 नन्व—१६७ (साम्राज्य)
 नफ्ता—४७७ (मिट्टीका
 तेल)
 नफ्स—३६८ (विज्ञान,
 आत्मा)
 नमगान—२५०
 नमवापोश—३८२ (फकीर
 युसुफ बुखारी)
 नरशाखी—२७७, ४२० (इति-
 हासकार)
 नर्मवा—८, १२८ (नदी)
 नवपाषाण युग—२३
 नववर्षोत्सव—८४ (हण)
 नवविहार—२२२ (बलखमे),
 नशाब—४७४ (नखशाब)
 नसा—४४५, ४७१, ४८४,
 ४८९ (शहरिस्तान)
 नसाफ—३०६
 नस्तोरी—१३८, ३६५
 नख—३६२, ३६६ (सामानी
 ४)
 नख तैयार-पुत्र—२९० (राज्य
 पाल)
 नहाबद—२५९, २९५
 नागसेन—१८१
 नान्काउ—३४६ (जोन, डाडा)
 नान्काड—३३४ (पेकिंग समीप
 डाडा)
 "न"—३४७ (- २॥ छःशक)
 नासिक—१८३
 नासिर—४३७, ४४७, ४५४
 (अब्बामी खलीफा)
 नासिर—५४५ (खलीफा)
 नासिर—४३७ (अंखलीफा)
 निका—१८४ (विजया देवी)
 निप्रोयित—२४
 निङह्या—१२२ (लिङ्गचाउ)
 निजामुल्मुल्क हसन—३७३,
 ३९२-९६ (मलजूकी
 वर्जार), ४२१ (जन्मादि)
 निनवे—१४५ (ववम राज-
 धानी)
 निवडर्थल—११ (= मुस्तर)
 निशूचो—१३४
 निशूबुलू—१२०, १३४ (प०
 तुर्क खान)
 निष्प्रणालिक ग्रथि—२५
 नौजक—२७७ (नखून), २७९
 (बागदी-राजा), २८०
 नीमरोज—३९४, ४२१
 नीमो—१०२ (बुसुन-राजा)
 नाल—१४६, १४९ (मुद्रदेश),
 २५६ (नदी)
 नीलाब—४८२ (नदी, सिव-
 शाखा)
 नीली—१२९ (प० तुर्क खान),
 २१६
 नुसरतकोह—४७९
 नूजकन्व—२१९
 नूर—३२६ (नूर अता), ३७२
 (किला), ४६७
 नूशतगिन—४२४, ४२६ (ख्वा-
 रेजमी)
 नूशावस्कास—४७४
 नूह—३२८ (सामानी), ३६१,
 ३६६, ३६७, ३६९,
 ३८०
 नेपाल—७३, ११२
 नेरोलियन—१४८, ४६६
 नेराकित—२५० (चु-उपन्यका
 मे), ३५०
 नेस्तोरी—२३४, २४९, २६४
 (नर्म), ३३३, ३५० (इलि-
 याम) (= नस्तारी)
 नेशापोर—२०५, ३१४, ३४९,
 ३६४, ३९९, ४४१, ४४६,
 ४५४, ४५५, ४७८, ४८३,
 ४८४
 नैमन—२३४ (आदि, उद्गुर),
 ३५०, ४३३ (तायझ-
 खान), ४५० ४६० (-राजा
 जमकाको चिगिसन मारा),
 ४६१, ४६२

नोखुस—२२३ (उड़गुर)
 नोम—४६२ (-पुस्तक, ग्रीक,
 मगोल)
 नौशेरवान—२१६, ३०५
 पख्तून—३०४
 पञ्चाल—१७६
 पंजशीर—४८०
 पंजाब—१५५, १६८, १७५,
 ३९२, ४०६, ४१२ (-विद्रोह
 ४६६, ४७१ (वक्षुतटे)
 पजीकत—२५१ (नगर)
 पटना—१५०
 पतजलि—१७३
 पत्थरकोयला—३७७ (फरगाना
 में)
 पयगू—३७२ (यबगू)
 परमक—२७४ (=बरमक)
 परमाणु युग—३८
 परमाणुबम—८
 परमाणु शक्ति—८
 परवान—४८०
 परोपमिसदं—१६८ (हिंदूकुश)
 १७१, १७४-७६ (परोपनि-
 सदै, परोपमिसदै)
 पर्शा—१४९ पारमीक,
 फारस)
 पशुपुरी—१५० (पर्सपोलि),
 १५६, १६५
 पलातिया—१५२
 पल्लवा—१८३ (=अथिना)
 पल्लव—१८३
 पशुपालन—३९-४०
 पतरगवै—१६४
 पहलवान—४४५ (अताबेग)
 पहलव—६८, १९१
 पाइलग—३३४ (लोह नदी)
 पाकिस्तान—१७१
 पाउकी—८८
 पाचाङ—३४२
 पाजोरक—७५-७८ (घाटी)
 पाटला—१७६ (मिव डेल्टा)
 पाटलिपुत्र—१७४-७७ (=
 पटना)
 पादकंडुक—१०९

पामीर—५, ७, २८ ५७-१३२
 १३२ (चुङ लिङ), १३७,
 १४४, २२१, २२४, २२५
 (पोमीलो)
 पारथी—७४
 पारसीक—१४५
 पारातागिन—२३३ (आमूपर)
 पार्थिव—१४९ (पार्थिया, हुर्का-
 निया)
 पार्थिया—१६१ (मेर्व से कस्पि-
 यन तक), १६७, १७०
 पार्थिव—१८० (पार्थिव),
 १८३ (पहलव)
 पाषाणयुग—४२ में (प्रतिशत
 मृत्यु)
 पाषाणयुग। अनव—, ४४-४५,
 १५८
 पाषाणयुग। नव—, १२, ३५,
 ३७-४३ (विवरण)
 पाषाणयुग। निम्नपुरा—, ४०
 पाषाणयुग। मध्य—, २८, ३५-
 ३६ (विवरण)
 पाषाणास्त्र—४१
 पिङ्गू—१३२ (विङ्गुल)
 पिट्टुटरी—२५ (ग्रथि)
 पित्तलयुग—५४, ६०-६४
 पिरो—२१०
 पिथाङ—२४५ (नगर)
 पिथान्—३३८ (काइफङ)
 पागू—४१८
 पातनबी—१२४ (हवाङहो)
 पारशाह—४७६ (गयासुद्दीन,
 पुरापाषाण युग—११ (उपरि-
 मध्य-)
 पुष्कलावती—१७५, १८५
 (चारमदा)
 पुष्यमित्र—१६९, १७५, १७६
 पूलेडवो—१०९ (एक पहाड)
 पृथिवी—३ (की आयु)
 पृथिवीराज—४३५
 पैडकन्द—१६१ (हेफनाल
 राजा)
 पैकिग—११, १५-१६ (मानव),
 १६ (अधिउषा), ११२,

चाइ-ई), ३३६, ३४१
 (यामिङ)
 पेगू—२३१ (भगवान्)
 पेचैनगा—२३१
 पेताङ—११९ (नदी)
 पेत्रा ओक्सियाना—१६५
 (कलानादरी मशहदसे उत्तर
 पूर्व)
 पेन्चुल—२४९ (-अकसू)
 पेरिनस—५
 पेशावर—१७५, ४८०, ४८९
 पैकन्द—२२० (फार्ती), २७५
 (बैकद), ३६२, ३६३,
 ३८८
 पैगम्बर—१५१
 पैमीर्यन—५
 पोल्त—१७१ (ग्रीक राजा)
 पोलित्तिमेतस—१६५ (बहुतरन
 उपत्यका), १७२ (बाहि-
 त्र्या)
 पोलिस—१८२ (पुरा)
 पोसग—३७७
 प्यासीभूमि—६ (कजाकस्तान-
 मर्ह), ८, २८
 प्रवारणा—१३१ (महा-)
 प्रवाहण—१४४
 प्रशान्त—११० (महासागर)
 प्लातोन—२९३ (-विज्ञान-
 वाद), ३६५
 प्लीनी—१७२ (रोमक)
 फाइहान—२१९ (फरगाना)
 फकीर अब्दुल्ला—३६३
 फकीह—३६४ (धर्मशास्त्री)
 फजलतुसी—३, ६ (राज्य-
 पाल)
 फजल बरमक—३०७ (राज्य-
 पाल)
 फजल सहलपुत्र—३०९
 (अब्बासी वजीर)
 फरगाना—८८, ८९ (तावान),
 १०८, १३५ १७१, १७२,
 १७९, १८४, २१९, २४९,
 २८२, ३५५, ३६१,
 ३७७, ३७७, ३८७, ४५२,

फरीगून—३७५, ४३३ (गूज-
गान-राजा)
फाऊसाऊ=भिक्षु)
फातमी—३८३ (मिस्रके शिया
खत्रीफा)
फायक—३२८ (हिरान-राज्य-
पाल), ३७० (सामानी
वजीर), ३७१, ३७४ (सेना-
पति), ३८१
फारयाब—२७९ (दक्षिणी)
फारस—६८
फारसी—२९७ (भाषा),
४०७ (गजनवी के समय
फारब—२३२, ३२८ (उत-
रार), ३६५, ४०२
फाराबी—३२२, ३६४-६६
(दार्शनिक अइनस)
फारेल—२३२ (स्थान)
फिशई—४५३ (हस्ताईली
गुडे)
फिन—२५
फिशो-ब्रिड—६५
फिरदौसी (कवि)—३२९,
३६८, ४०६ ("शाह-
नामा"), ४२३ (तुसी)
फिलिप—१५५ (मकदूनिया),
१६७ (एलिमेयसीय
क्षत्रप)
फिओपातोर—१८१
फोरोजा—४४, ५४
फुरात—२१८, ४२१
फूचिऊ—३३७ (कश्येवान्)
फोसोल—३
फात—१७० (पार्थिव १)
फावर्त—१४७
फौच—१०१ (राजा)
बक्षी ५६५
बगबाव—१६७, २९७, ३०३,
३०९, ३६४, ३७७, ४४९,
४६५
बगलान—२८
बदशशां—८८, १७२, २२४,
२२५
बदशहीन—४६६
बनाफत—३७६, ४७०

बनारस—३९२
बन्तू—३५ (भाषा)
बन्वग—३९४
बन्वा—६६२ (दास)
बबोव—१४९ (कलदान, =
यवेन)
बबेव—१६६ (बाबुल), १४६,
१६८, १६७
बन्वई—८
बरकयासक—३८७ (मन्जूकी),
६२६-२५- (मन्जूकी ५),
६४०
बरकुल—९९, २३७, २४६
बरगशी—३७० (सामानी
वजीर)
बरखिलिगकस्त—४७०
बरमक—२७४, ३०० (परमक),
३०३, ३०७ (कस्मीर में)
बरसखान—२४९, २५० (नगर)
बरैन (ख्वात)—२२६
(गुबारा), २७८
बबेर—४२१
बज्ज—१३०, २२ (फाई)
२७४, ३०० (नवविहार),
३६४, ३७०, ३९४, ४००,
४०९, ४२९, ४४८, ४५४,
४३५, ४७९ (मादरेशहर),
६८७, ४८८
बलकाश—५, ६, ५६, ६१,
८२, ११६ (मरोवर)
बलबहावुर—३७, ३९
बलाशगून—६१, २४१, ३२५,
३२६, ३३०-३३, ३६६,
३५४, ४०५, ३५७, ४२१
(सूजिया) (बालाशगून
बलकतगिन—४२४ (ख्वाजेज्म)
बसाकबाशी—३९६
बसिमिर—१२५ (कबीला),
१२६
बहराम गोर—३७६
बहराम खोब—२१८, ३६१
(—बशज सामानी)
बहिस्तून—६४
बाइसून—२८

बाउवी—४५८ (पद)
बाकु—८
बास्तर—८८, १६४, १६७,
१७३ (नगर) (देवो बाहि
यमा, बास्त्री भी)
बासनरी—१७७
बासिप्रया—१५०, १६१, १६८,
१८२ (गजवगम्या), १८२
(बलव)
बास्त्री—१८२-१८५ (गज-
वगम्या), १८५ (—कथा)
बाग बरम—६७७ (ख्वाजेज्म
में)
बाजोर—१७५
बानिनी—२८९, ३६८
(खारिजी)
बातूबान—६९१
बावगा—२७२, ३०६ (राजा
नीजक), ४६९
बाबर—१०७, १७२, ४८६
बाबुल—१४४ (बबेर), १४५
(राजधानी निनवे), १६८,
१८०
बामियान—२१८, २२३, ४३४,
४३८, ४४८, ४८२,
४९०
बयनतुर—२३१ (कौताली)
बारमास—४८४ (मंगोल सेना
पति)
बारिन—४६२ (कबीला) -
बाक—४८६, ४९२
बाशागून—२३३ (सूजिया),
२४६
बालखिब्र—४६३ (व्यापारी)
बालिश—४६३ (—७५
दीनार)
बालोर—४३४
बाबुजि—४६५ (उइगुर
खान)
बाशकिर—२३२
बासपोर—२३२ (किमेरिया-
का, केब)
बासफोस—६ (तुर्की), ८,
२३२
बिकी—४६२ (शमन ओझा)

विद्यागुल्लू—१०९, १२६ (पू०
तुर्क खान)
विहगुल्लू—१३२ (पिडगु, सर)
२१९ (सहस्रधारा)
विजन्तीय—१३०, २३२,
२७२
विल तगिन—४३९, ४४०
(ख्वारेज्मी)
विलगातगिन—४०५ (गजनवी
हाजिब)
विलिक—४६२ (वाकग,
चिगिस—)
विलोचिस्तान—१६४, १७६
(अर्कोसिया), १७८
विशबालिक—२३४, ३४८
(उद्दगुर नगर), ३५५
विसाकबाशी—३७४ (कमाडर),
४३० (गारद अकसर)
विस्ताम—४७७
विह अफरीब—३९५ (जर्जुनी
नेता)
वुकर—२७२ (गज्यपाल)
वुक्क—१३७ (तुर्क), २३९
(उद्दगुर सेनापति), २४१,
२४५ (तिब्बती-ध्वसक)
बुखारा—१३५, २२०, २२६,
२२७, २७०, २७५, २८७,
२९५, ३४९, ३६३, ३७३,
३७६, ३९३-९४, ४४८,
३५४, ४६७
बुखतेवर—२३६ (उद्दगुर)
बुजगला खाना—२२१
(वरबद)
बुतगरस्त—२८४ (बुद्धपूजक)
बुत—८७, १३१ (मूर्ति),
१४३
बुनेर—१७५
बुगुहक—१२७
बुरतमाना—३५३
बुरी तगिन—३८२ (इब्राहीम,
अतबेवपति), ३८३, ४१३,
४१४
बुलगा—२५, १३९, ३७६
बुव गी—३६६ (=देलमी),
४१८

बुअलीसीना—३२२, ३८६-७०
(दार्शनिक)
बुकिन—१३७, २४४ (तुर्क)
बुवे—९१
बुखख—१२० (पू० तुर्क),
(बुयुहक भी)
बुरनामज—३७२ (स्थान)
बुशांग—४७३ (शहर),
(बुशाग, पूसाग भी)
बेइसिन—८८, (सेनापति)
बेकन। रोजेर,—४३६
बेकलिंग—२४२ (बेकलीलिंग,
सांघी नगर)
बेकाल—६२
बेग—१२३ (सरदार), १२७
बेगलुजुन—३७०, ३७१, ३८२
(सामानी सेनापति)
बेइल—११० (डाडा, जांतु)
बेइल—१५ (लका)
बेन्डून—२२६ (बुखारा
राजा)
बेकरी—१६३ (अल्बेकनी
ख्वारेज्मी), ३२९, ३६८,
(अबूरेहा), ३७७ (देखो
अल्बेकनी भी)
बेरजेम—४२२ (दुर्ग)
बेहुतकला—१६०, १६२
(ख्वारेज्म)
बेहकिया—४२३ (नेशागोरमे
मद्रसा)
बेहकी—४१३ (इतिहासकार),
४१४, ४१५
बेकन्ब—२७० (बेकन्ब), २७५
२७७
बैकलिंग—२५१ (नगर, बैक-
लीलिंग), ३३० (सिमकन)
बेकाल—८२, १०४ (सर),
११६ (कबीला), ११७,
१२३, १३७, (तुर्क), २३४
(तुर्क)
बैरम—१०७
बोइरनोर—४५८
बोव्वा—४८३ (चिगिस)
बोगराखान—२४६, ३२५
(कराखानी), ३२८, ३३०,

३८२ (बुखारा-शासक),
४१३
बोत्सकाइ—३३६ (खित्तन),
३३७, ३४५
बोयान्—९०
बोचन—२३६ (उद्दगुरखान)
बोलन—१८२
बोलगार—२३२, ३३३, ४८५
बोसत—२३५ (उद्दगुर खान)
बौद्ध—२४९, २८०, २९३,
३३३, ३६५, ४८९
बौद्धधर्म—१०५, १०८, १११,
(तुर्कीमें), १२४, १३८,
२४६, ३४३, ३४९, ४३३
ब्योलितो—३४६
ब्राह्मन्—१०५ (अवार)
ब्राह्मी—१३१ (गुप्त—)
ब्रुवा—४९६
भुक्कच्छ—१७६
भारत—६४, १०३, १४४,
१७१, २८८, ३३७, ३६७
भाषा—३३
भूखीमहभूमि—३७२, ४८८
(कजावस्तान)
भूमध्यसागर—५, ८, ५१
भूमध्यीय जाति—५१
मक—१५० (होरमुज्दप्रदेश)
मकदूनिया—१५०, १५४,
१५५
मक्का—२५५ (बक्का)
मक्क-तातार—४५८ (मंगोल)
मग—१४७
मगयार—२६ (हुगरी), ८०,
१०४
मगनेसिया—१७१, १७७
(रोम-ग्रीस-युद्ध)
मंगित—२३३ (उद्दगुर)
मंगोल—१०१
मंगोलायित—२४
मंगोलिया—२६, ८०, ४५७,
४६५, ४८७, ४९०
मंचू—४८६
मंचूरिया—६, ८९, ९६, ९९,
१०४, २३७
मजारशरीफ—२६३

मज्झकी—३०५ (जिन्दीक)
 मज्झयस्सी—१५१ (ईरानी धर्म)
 मथुरा—६८, १७५, १७७,
 १८१
 मतरिब—३०७ (राज्यपाल)
 मत्ता अलकझाई—३१० (अब्दु-
 वादक)
 मवगास्कर—३४
 मबोना—२५६
 मईन—३०२, ३०४ (तस्रोन)
 मद्र—१४४ (मिद), १४७
 मब्लेन—१२ (मानव), २२,
 २३ (विवरण)
 मध्यापाषाण युग—२३
 (अजिल, अदयोल्)
 मध्य-एशिया—३, ५
 मनक—२५१ (वरसखान-नृप)
 मनकन्व—२१९ (चिमकैत)
 मनकिशलक—४३०, ४३६,
 ४४२, ४७९
 मंसूर—३६७ (सामानी ८, १०)
 मरकन्वा—१६५, १६७
 (समरकन्द)
 मरकरिन—२३,
 मरगित—४६२
 मराको—३५
 मराग—४८४ (किलर)
 मराथोन—१४८ (युद्ध)
 मर्ग—१५८ (मेर्व)
 मागिनान—३८५
 मगियाना—१४७, १६४
 (मेर्व), १६७, १७१, १७३
 मर्बुक—१४५, १४६ (बाबुली
 देवता)
 मर्बोनियस—१५२
 मलय—१५, ३४
 मलिक—२७० (उपराज),
 २७३, २८०, २८५,
 (क्षत्रप)
 मलिकशाह—३६५ (सल्जूकी),
 ३९२, ४१९, ४२२ (सल्जू-
 की ३), ४२५ (सल्जूकी
 ६)
 मसऊब—४०४, ४०९ (गज-
 नवी)

मसऊबखान—३८७ (करा-
 खानी)
 मसकविया—४६८ (दार्शनिक)
 मसगित—६६, ७३-७४, १०१,
 १३८, १३९, १४६, १५८
 (महाशक), १६०
 मंसूर—३०१ (अब्बासी खलीफा
 २), ३०७ (हिमयारी),
 ३७० (सामानी १०)
 मसोपोतामिया—२६
 मस्तमा—३८६ (उमैया
 क्षत्रप)
 महमूब—४४१ (कराखानी
 खान)
 महमूब—३५२ (कराखानाई
 वजीर)
 महमूब—२३८ (काशगरी)
 ३२९ (का दीवान "लुगा-
 तुतुक")
 महमूब—४४४ (ख्वारेज्मी) ५
 महमूब—(गजनवी) ४३९,
 ३६८, ३७०, ३८०, ३८१,
 ३९०, ३९८-४००, ४०५
 ४०६, ४०८ (क्रूरुप),
 ४०९ (प्रथम सुल्तान)
 ४१९, ४३३
 महमूब—४२४ (सल्जूकी) ४,
 ४२५ ८
 महमूबतगिन—३८७ (करा-
 खान) ३८८
 महादीवार—८२, ८६, ९३,
 ९४, १३०, ४१० (चीन-
 की)
 महनवी—८ (भारत)
 महाप्राकार—२४० (महा-
 दीवार)
 महाभारत—१००
 महेंद्र—(लका)
 माउ—९२, ९३
 माउकिरे—२४५ (शादी
 सभ्राट्), ३३६, ३३८
 माउकुन—८१ ८२ (हग),
 ९३, ९९, ११४
 माउबुड—२४५ (शादी
 सभ्राट्, माउकिरे)

माखीन—४२१
 माजन्बेरान—४५५, ४९१
 मातूसस्ता—५५
 मानव—१ (प्रागैतिहासिक जावा,
 नियडर्थल, पेंकिंग,
 मुस्तर-नियडर्थल), ११
 (सपियन), (हैडलवर्ग)
 मानव-जातियाँ—११, १३, २४
 (चाग), ४५-४६
 मानवित—१७ (हामोनिद)
 मानी—११०, १३३, २४२
 (धर्म), २४९, ३६५, ४६१
 मानोमख—४१९
 मामून—३०८-१२ (अब्बासी
 खलीफा), ३३० (ख्वारेज्म-
 शाह), ३६८, ३९०, ४००
 (ख्वारेज्म १, २), ४०१
 मायाचुक—४४९ (ख्वारेज्म
 सेनापति)
 माबराउझल्ल—७६८, ३२०
 ३९४ (=अन्तवद)
 मालिकी—२९३ (मुन्नी)
 मालेगनोमत—२५७ (-व्याख्या)
 माशरेबास—४१२, ४१८
 (स्थान)
 मास्को—४८५
 मिकार्डल—४१८ (सलजूक-
 पुत्र)
 मिङ्ग—१११ (वश)
 मिङ्गयान—३४४ (निगूना)
 मिङ्गली—९५ (चीन)
 मिङ्गली—८२
 मिट्टी की छत्रे—४३
 मित्र—१८४ (-धर्म)
 मिथ्र—१८४ (की पूजा)
 मिथ्रवात १—१७० (पार्थिव)
 १७७, १७९, १८०
 १८२
 मिद—१४४ (मद्र)
 मिदिया—१४९, १७९, २४५
 (=मद्र)
 मिदेल—११ (हिमसंधि)
 मिनान्वर—१७८-८०, १८३,
 १८५
 मिनिस्त्र—७३

मिनुसून—६१ (सप्तनदकी
संस्कृति), ८०
मिस्काल—२७६ (=७३
तोला)
मिस्त्र—३५, ५६, ६८, १४६,
१४७, १५६, १६८, १७८
(मेम्फी), ३०१, ४२१
मिलिन्द—१८१ (= मिना-
दर)
“मिलिन्दप्रश्न”—१८१
मिहिरकुल—२१६ (हेफताल)
मुआज—३०५ (राज्यपाल)
मुकदेन—३३७, ३४५
मुकना—३०५ (-विद्रोह)
मुकुह—१०४ (-तोबा)
मुक्तदिर—४२४ (अ० खलीफा)
मुगल—१०७
मुगान—४७३ (कस्पियन
तट)
मुजग—३३७ (खित्तन राज-
धानी)
मुजारी—२९१, २९३ (अरब)
मुजाहिम—१३६ (सूल)
मुजुड—११७ (वश)
मुड्राविड—१५९
मुतुगिन—४८१ (चिगिस-
पौत्र, जगत-पुत्र)
मुद्र—१४९ (=मिस्त्र)
मुद्रणकला—४९२
मुद्रा—१५० (दारयवहु-)
मुद्रिक—१४६ (मिस्त्र)
मुन्जान—२२४
मुन्तसिर—३७१ (सामानो १२)
मुफज्जल—२७२ (राज्य-
पाल)
मुगबि—७ (नदी), १०
मुल्तान—३०४, ३६४, ३९९
४८२
मुबैयातुद्दीन—४२४ (निजा
मुल्मुक-पुत्र)
मुसिया—१४९ (स्पर्दा)
मुसैया—३०५ (राज्यपाल)
मुसल्मान—१०८
मुस्तनिर—३८३ (फातमी
खलीफा)

मुस्तेर—११, १२, १७
(=नियडर्थल मानव),
२८
मुस्लिम—३५१ (-विद्रोह तरि-
म-उपत्यकामे)
मुस्लिम किलाबा—२८७
(सईद-पुत्र सेनापति)
मुहम्मद—३५ (रैगबर), २५५
-५८, २८१ (बिन्-कासिम),
३१६ (ताहिरी), ३५३
(ख्वारेज्मशाह), ३५५,
३५७, ४१४ (गजनवी)
४२५ (सलजूकी), ४४९-
५६ (ख्वारेज्मशाह),
४७३
मुहल्लब—२७१ (सेनापति)
मुचुड—२४२ (थाड), ३४०
(खित्तनी)
मुजुग—३३४
मुत्त-भजन—२७६ (मुल्तान)
मूय—१०९-११० (पूर्वी तुर्क
खान), १२०, २१६
मूसा—१३५ (अब्दुल्ला-पुत्र)
२७३
मुत्पात्र—४०-४१, ९८
मेगेस्थेन—१७४, १८४
मेचो—२३६ (तर्किश खान)
मेनान्दर—१७५, १८१
मेमना—१६७
मेमेग—२२० (मिमोहा)
मेम्फी—१७८ (मिस्त्र)
मेयलुक—२४५ (उइगुर मंत्री)
मेरुचक—१६७ (मुगाबतट)
मेगित—३५१ (कबीला),
३५८ (तकतूखान)
मेव—१४७ (मरगिया, मर्ग)
२५९, २६७, २७१, २७३,
(शाहेजान, शाहेजहा),
२७४, २९४, २९९, ३६४,
३८८, ४३६, ४४०, ४४९,
४५४, ४८३
मेवद—२७५, २७९, ३०४
मेसोपोतामिया—४४, ५५, ५६,
१३१ (ताउची), १८०,

मेहदी—२४९ (खलीफा),
३०४-६ (अब्बासी खलीफा)
मैन्दर—१७१ (नदी)
मैयुर्ग—२६३ (प्रदेश)
मोइनचुरा—१२६, २३१,
२३७ (उइगुरराजा)
मोकिरे—३४०
मोखे—१३७ (तुर्गिसवश)
मोखेदू—१३३
मोग—१६९
मोगिल्यान—१०९, १२४,
(पू०तुर्क खान), ११९,
१२१, १२३, २३२, २३८,
२३९, २४८
मोचो—१०९ १२१ (पूर्वी
तुर्क खान) १२४, १२६
१३५, २३७
मोतजला—३११ (संप्रदाय)
मोतजिद—३१९ ३६३
(अब्बासी खलीफा)
मोतमिद—३२०, ३६२
(खलीफा)
मोतसिम—२९७ (अब्बासी
खलीफा ६)
मोबालिग—४८१ (=बामि
यान)
मोहनजोडरो—४३, ६५
मौदूद—४१५ (गजनवी ५)
मौर्य—१५० (साम्राज्य)
१७४ १८३
मूकम—३५ (जैबुल जिला)
लीफा २६४-७१, २७२
२८६, ३७४
म्वाविया—२६१ - ६२
(खलीफा), २६४-७१,
२७२, २८६, ३७४
यक्केपर्सनकला—१६२
यरुसलैम—६४ (सिर-दरिया)
७३, १५८, १६५, १७०,
१८४ (तनइ)
यगमा—३२५ (आगूज-
शाखा)
यङ्गो केन्त—२३२ (देहेनी)
यङ्गची—१०७

यजोद—२६२ (उमैया) २
२७१, २७२, (मुहल्लब-
पुत्र) २८३, ३१० (उमैया)
यज्जगर्व—२५९ (सामानी)
यनालतगिन—३८२ (सेनप)
यनालतैमिना—२५१ (बैक-
लिग-पति)
यनूली—११२ (तुर्क)
यबगू—१०८ १२७ १२९
२१६ २१९ २३२ २४८
३७२ (उपाधि)
यमनी—२९१, २९२, २९४
(अरब-दल)
यवन—६८, १७६, १८३
(ग्रीस)
यवुना—१४९ (यवन, युनि-
यन एबलियन दोरियन)
यखिब—२५६ (=मदीना)
यहिया—३६१ (सामानी)
याकूब—३१७-२० (मफकारी)
३२२ (दार्शनिक)
३६२
यागमा—२५१ (कबीला)
याजिर—४७६
यासबल्कय—१४४
यानीकन्त—४७०
यानूसोबेले—१२९
याफेत—२४८
यामिड—३४१ (=पेकिड)
यार—२५० (स्थान)
यारकन्व—१०३, ३२९
यालू—३७१ (कराखानी राज्य-
पाल, यालू अरसलन) ३७२
(सेनापति)
यासी—२५१ (=जासी
नगर)
यास्सा—४९३-९६ (चिंगिसी
विधान)
यिनिकिन्—२३९-४० (उद्-
गुर राजा)
युद्ध-किङ्ग-जे—११३
युग—१३ (चतुर्थ तृतीय
शरट)
युङ्ग पिङ्ग फू—३३५
युमेइ—२२३

युवेइस—३४३ (खित्तन राज-
वंश)
युरेसिया—५
युरोप—१२२, १५३
यूय-बिबाह—६८
यूयो—६४ (शक) ७४
(लघु-) ७९, ८२, ८६-
८७ (पलायन) ९९
१३८, १६१, १७३, १७९,
१८०, १८७-९१, २३७
(ऋचीक, ऋजीक, आर्जीक)
यूनानी—१४७ (ग्रीस)
यूसुफ—४१८ (मलजुक-पुत्र
ईनच पैगु)
येतजिन्करो—४९२
येनेसेइ—६२, १७३ (नदी)
२५० ४६२ (एनसेई)
येनूयेन्—३३८ (द्वार)
येज़ू—३४६-५० (ताउचू
देवी) ३४८ (गुरखान)
येलूइले—३५० (करा खिताई)
येरुविलम—२१८, २६२,
४२१
योकर—२३४ (उद्गुर)
योहन्ना—३१० (अनुवादक)
योहान हेलान-पुत्र—२६५
(विद्वान)
खेन-याङ्ग—३४५
खेन्तो—९१
रईस—४१३ (नगरपति)
रक्त—५ (प्राचीन-) २६
(भेद)
रफी—३१८ (हरसमा-पुत्र)
३६१ (लेम-पुत्र)
रबात—२७३ (पायशाला)
रबात-मलिक—३८५
रबिन्जन—३७६ ४४३
रबीजियाद-पुत्र—२६७ २७०
(राज्यपाल)
रमोतान—२२० (किपूतान)
रशोबी—२२१ (तारीख)
रशोबुद्दीन—४६२ (इतिहास-
कार)
रहत—३७५
राइनलेण्ड—२६

राजा—खान, कगान, खकान
राजिक—३१३
राजो—४६२ (बहाउद्दीन
स्वारेज्म, दून) ४७५
(कवि)
राजुल—४८५ (रूपी महा-)
रागातोन—२७० ३६२
रावरी—३०३ (गमदाग)
४६९ (उतिहासकार)
रिस—११ (हिमना)
रकनुद्दीन—३९० (कर-
खाना) १०
रकनुद्दौला—३६७ (देकमी)
रकयक—१०१
रकले—८३ (हण)
रक्ष—२३८ (लिगि)
रक्षिक—४६१, ४९६, (यात्री)
रुइकी—३६४ (कवि अनुल-
हमान)
रुस—१३९, १४९
रुसाफ—३०४ (महल्ला)
रुसी—५२ (भागा) ७९,
४७०, ४८५, ४८६
रे—२९४ (तेहगान), ३६४,
४१९, ४४७, ४७२
रेगिस्तान—३७५ (बुखारा)
रोहस्ताना—१५७ १६६
१६७ (अलिफनुदर
की पत्नी)
रोम—६५ (रोमक) ११३
(रोमन सम्राट्)
रोलखान—४१८
लओविका—१७७, १७८,
२१६, ४२१
लका—३५ (मे बोद्ध धर्म)
४५, ६०, २१८
लवाख—३७, ६८, १३८
लाउशान्—८५
लाखिनवेग—४४३ (कर-
लुक)
लारजान—४७६
लिक्तेतु—१८१
लिङ्गबाउ—१२२ (निङ्ग हपा)
लिङ्ग—१३२ (महम्यारा)
लिङ्गशान्—१३० (हिमगिरि)

लिविक—१४५ (क्षुद्रसिया)
 लिन् खाकान—१०८ (उप-
 राज)
 लनि चाउ—९४ (ल्यूइवन)
 लिन्—३४ (अक्षर-सकेत
 अर्थसकेत) ५८
 लियाङ—२८४ (वश) २८७
 २९२
 ला—१२२ (वश)
 लोचिङ—११७ (सेनापति)
 लूरी—४७२
 लेकाक—२८३
 लेद—१४८ (समुद्र)
 लेनिनप्राद—७७
 लोबनोर—८२, ८६, २४६
 लोयक—३९५ (काबुल-
 राजपुत्र)
 लोयाङ—१११ (राजधानी)
 २३८ (होना-फू) २३९
 ३०१, ३०८
 लोहद्वार—८८९
 लोहमहाप्रासाद—५२ (लका)
 लोहपुग—१२, ५४
 ल्याउ—३६० (पश्चिमी-करा
 खिनाई)
 ल्याउचाङ—३३९ (नगर)
 ल्याउतुङ—३४५ (उपत्यका)
 ल्यूबोयुवान्—३३९ (सेना-
 पति)
 ल्याङचौ—१२५
 लहासा—४०२, ४०८, ४१७
 वकील—३७४, ४५६ (ल्हा
 रेजमी)
 वक्षु—८ (आम्दरिया) ७३
 ८७, १३५, १४३, १५८,
 १६५, २२१, २६७, ४५१,
 ४६६, ४७८ (कस्पियनमे),
 ४९१
 वखान—२२४ (किलोमे),
 २२५
 वखश—४३४ (नदी), ८७१
 वरखशां—२२६ (फरखशा)
 वलो—२६९ (-राजपाल),
 २८५, ३६३
 वलीद—२७३ (मलीया)

वशिष्क—२०७
 वसीलेउस—१६८, १७७ (=
 राजा)
 वसुदेव—१६९
 वसुमित्र—१६९
 वाइसुन्—१३४
 वाइमेइ—१०९, १२६ (पू०
 तुर्क राजा)
 वाग्भट—६८
 वाङखान—४५८ (कराइट)
 वाङचाउ—१०३
 वङ-चेङ-मे—२४५ (उइगुर)
 वाम्बेरी—३०१
 वालियान—४८०
 वासिक—३२८, ३७७ (अ०
 खजीफा)
 वासिज—३६५ (स्थान)
 वासुदेव—१८४, २०९-१०
 वाहलीक—६८, १५०
 (वलख), १६५
 विज्ञान अकादमी—७५
 विन्ती—११३ (चीन)
 विप—१९८ (कदफिस)
 विशरिओत—१४९
 विश्लेषात्मक—६७ (भाषा)
 विश्वामित्र—१४४
 विस्तास्प—१४७, १५१
 वुजार—३५५, (कुलजा
 खान), ३५७, ४६५
 (जूचीका दामाद)
 वू—११९-२१ (थाङ-रानी)
 वूचिन—१३५
 वूरी—८७, ९८ (चीन)
 यूसुन्—७४ (शक), ८८ ९५,
 ९७-१०४, १०२ (राजा)
 १२८, १३८, १७२ (=
 मेरेस)
 वूहवान्—९९
 वैइ—९६ (वश), ११६
 (नदी), ११७
 वैइचाङ—११८
 वैजेर—२२ (फास)
 वेत्कदला—३५ (अत्मा-
 अता)
 २२२

वेस्सुस्—१६४ (बाख्रियाका
 क्षत्रप)
 वोल्गा—८ (नदी), १३०,
 १३९, १५९, २३२
 व्लादिवास्तोक—३४६
 शक—५३, ६४-७०, ६९
 (-देवता), ७३ (-जातिय),
 ८४, १०१, १३८, १४३,
 १५०, १६५, १६४, १८५
 (क्षत्रप), ४८५ (आलान),
 शकद्वीप—६४७०, ६६, १३९
 शकराचार्य—३११, ४२४
 शकस्तान—६४ १८०
 "शकान वेइजा"—६४
 शगानान—२२५
 शगान—२९० (शगानियान)
 शगानियान—१३५, ३६५,
 ३८०, ३८४, ४०३, ४०५,
 ४०९, ४१२, ४४४
 शाङचुङ—३४१ (खित्तीनी)
 शतम्—६५ (भाषा), ६६,
 १५१, १८०
 शतरज—४८७
 "शाफा"—३६९ (सीनाकी
 कृति)
 शबोलियो—१२८
 शबोली—२१९ (शेखू)
 शबोली खिलिश—१२९, १३४
 (प० तुर्क राजा) २१८
 शबनी—४६९
 "शमशाबाद"—प्रासाद—३८८
 (बुखारामे)
 शमशुल्मुल्क—३८४-८५
 (कराखानी ४)
 शरट—३ (सौरस्)
 शरदोत्सव—८४ (हूण)
 शरक—१०४ (अवार)
 शवक्रिया—१०८ (तुर्क)
 शवपेटिका—७६
 शहरसब्ज—३०१ (=कैश),
 ४८१
 शहरिस्तान—४२९ (नसा)
 शहरिस्तानी—४७५ (विद्वान्)
 शहाबुद्दीनगोरी—४३३, ४३६-

शाइचाउ—३४१ (तामिङ-फू)
 शाचाउ—२४६
 शातवाहन—१७५
 शातुक—२३८ (सातुक)
 शातुक बुगरा—३७९ (खान)
 शाव—१२७ (शाह), २३८ (तुक उच्च-अधिकारी)
 शाबो—३३६ (तुक वंश), ३३८, (पश्चान्-थाइ)
 शान्—१३७ (प्राचीन थाई)
 शान्तुङ—३४७
 शान्यू—८१, ८३ (जर्गी), ९६ (उत्तरी, दक्षिणी)
 हूग खान) १०७, ११६
 शान्सी—८१, ११४, ११५, २३८, ३४७
 शापूरगान—४११
 शापोरो—१०८ (शाबोलियो, तुर्कखान)
 शाफई—२९३ (मुर्खा), ३८६, ३८९, ४२२ (अब्-हनीफा)
 शाबरगान—१६७, ४११
 शाबोलियो—१०८ (तुक शापोरो), (शाबोलियो भी)
 शाम—१६७ (=सिरिया), ३०१, ४२१
 शारिक, सहरा—२९५ (शिया नेता)
 शालजी—३७७
 शाव—२१६, २१८ (तुक मेनापति)
 शाश—२१६ (नाशकद), २८१, २९१, ३००, ३५५, ३६१, ३७७, ४५२
 शिकार—३८, ४८६ (चिगीसी-)
 शिङबुङ—३४२ (खितन)
 शिया—२८९, २९२, ३०३ (इवेतपट, सफेइजामगान, अलमुवैइदा), ३८२
 शिरबी—११८, २४४ (कबीला)
 शिव—१८४

शिवे—१०० (अल्ताई)
 "शोकी"—८८
 शोकी कुतुक—४६२ (सिंगि सका धर्म-पुत्र) ५८१ (मगोल मनापति)
 कोकू—१३१ (ताशकन्द)
 शोचुङ—३३९ (खितनी), ४५२ (किन्)
 शोयू—९६ (तुकिस्)
 शाराबाव—२८
 शा-हवान्-तो—८०, ८१ (चिन्)
 शुगलान—२२२ (शोगायेशा) ४३४
 शुङ—३६० (वंश)
 शुमर—१४६
 शुवेन—१३५ (चतुरहट्ट काशगर, खोतन, कूवा, मूज्या)
 शुह—८१, ८८ (हूग)
 शुली—४७२
 शुलीह—८१, ८८ (हूग)
 शुसे—१३२ नगर- (च नदी)
 शेखुल् इस्लाम—३७५
 शेगुइ—१२९, १३० (५० तुर्क राजा, शेकर्की)
 शेत्तू—११२ (नेतू, तुर्क)
 शेत्तू शबोलिया—१०९, ११२ (पन्तुर्क खान)
 शेन्सी—८१
 शेरेकिश्वर—२२६ (सेकेज-केन)
 शेलुन्—१०६, १०५
 शेरस—१२
 शेइ कगान—१३२ (तुनशेख)
 इवेतहूण—१२८ (हेफनाल)
 इवेतांग—२४
 सइवाङ्—८६, १३८ (शक)
 सईव अब्दुल्ला-पुत्र—२८६ (राज्यपाल)
 सईव अब्द-पुत्र—२८३
 सईव उरमान-पुत्र—२७०
 सकरीका—७३-७४ (शक)
 सतलुज—१७५

सत्रेजहाँ—३४९, ४२७, ४४६ (बुलारा)
 सन्मी—१३०
 सपियन मानव—१९
 सप्तगिव—१५० (ऊपरी हेल-मन्द-उप-नयका)
 सप्तनव—५६ (की पित्तल-युगीन मस्क्रानिया—अन्दो-नीय, करामक, मित्मून), ७३, १०२, ११०, १३८-३९, २३३ (तुकिस्तान), २५०, ३५० (सात नदिया—अरिस, असा-तलम, चू डलि, कांक-सकराताल, शंया, आगूज), ४६२, ४८७
 सप्तसिन्धु—६१, १६४ (पजाब), १४६ (हफन-हिन्द)
 सफाबी—२९३ (वंश)
 सफ्फार—३८८ (इमाम)
 सफ्फारी—२९७ (वंश), ३१८-२२ ३६३
 सफ्फाह—२९३ (अब्बासी खलीफा १), २९७-३०१
 समरकन्द—२८, ६६, ९२, १३३, १३५, २२० (सम जीकान), २२७, २६३, २७०-७१, २८२ (मुस्लि-ध्वस), २८८, ३००, ३२०, ३२९, ३३२, ३६१, ३६९, ३७१, ३७६, ३८०, ४५१ ४५२ (ख्वारज्मशाह की राजधानी), ४६८, ४७४, ४७५, ४८५ (विशेर), ४८६, ४८८, ४९०
 समिजान—२८० (नगर)
 सम्पत्ति—५३ (वैयक्तिक)
 सरखियान—४०० (बलखके पाम)
 सरखश—१६७ (हरीरुद तटे) २८०, २९४, ४१४, ४३७, ४४५, ४५४, ४८४ (—सरखश)
 सरत—३७ (ताजिक)

सरमात—१०१, १३८, १३९
 सरमातिक—६ (सागर) ८,
 ९, १०
 सरिंग—६१
 सरिम—६१, २२५ (सरि-
 मगोल)
 सरोकुल—४६५
 सरोपूल—१६७, ४६८
 सलूकिया—२९७ (तस्पोन)
 सलामी—१५९
 सलजूक—२३१ (तकमक-पुत्र)
 ४०५ (का पुत्र इसाईल)
 सलजूक—२३१ (किपचक,
 आगूज)
 सलजूकी—२३१ (किपचक,
 आगूज), ३२६, ३७३,
 ४११, ४१६-३१ (वश),
 ४३१ (पिछ्छे सलजूकी)
 ४३
 सलम जियाव-पुत्र—२७०
 (राज्यपाल), २७१, ३१३
 सश्लेषात्मक—६७ (भापा)
 सहस्रवारा—१३२ (लिङ्ग-यू)
 सहस्रनगर—१७२ (बलख)
 सहस्रनगरी—१६८
 “सहीहबुखारी”—३६४
 (सग्राहक अब्दुल्ला
 बुखारी)
 साइबेरिया—१७२
 साकेत—१७५, १७६
 साक्या—४० (निब्बल)
 सागवरा—४२९
 सागला—१७५, १८० (स्याल-
 कोट), १८१
 सातुक—३२५ (कराखानी),
 ३२६
 साम—४३४ (गोरी)
 सामान—३६१ (बहराम
 चौबीन वशज)
 सामानी—२३१, ३०९, ३६१-
 ७३, ३९९
 साम्यवाव—२९६
 साम्यवादी—३०५
 सालिंगा—४६२ (नदी)
 सालीसराय—४७४ (तमिज)

साव—२९४ (स्थान)
 सासानी—११३, १६१, १६८,
 ३०२
 साहिबखबर—४२० (गुप्त-
 चर)
 सिकन्दर—८२, ४६६
 सिकुल—२५१ (नगर, इस्सि-
 कुल)
 सिकके—३११ (अब्बासी)
 सिगनाक—४२८, ४२९ ४४
 सिङ्क्याङ्क—७३, १२२
 सिजर—३४८, ३४९, ३८७,
 ३४९, ४२५-३१ (सलजूकी
 ९, ४४०, ४५४, ४६२
 सिजर । मलिक—३५२
 सिजरशाह—४४६ (खुर
 मानी)
 सिथ—६४ (=शक)
 सिथिया—६४
 सिथ—३६ (उपत्यका), ५६,
 ५७, ६६, १२२, १४४
 १४६ (नदी), १६८, १७४,
 १८२, २५६, २८१, (अरब-
 विजय), ३६३, ३६४, ३९२
 ४८१, ४८२
 सिन्धहिन्द—४२१
 सिपहसालार—३७४
 सिब—१३७, १३८ (तुक)
 सिबिर—२३४ (खानान),
 ४६२ (जाति)
 सिबिली—१०९, ११८, (पू०
 तुर्क राजा)
 सिबेरिया—१५९, ३७६ (=
 माइत्रेरिया भी)
 सिमकन—३३० (बैकलिंग)
 सिमजूर—३२८ (अबू अली,
 खुरासान राज्यपाल)
 सिमजूरी (अबुल्कासिम—
 ३७०, ३७१, ३७४
 सिमजूरी अबुलहसन—
 ३६६
 सियान्दी—२३३, २४६ (ताबा)
 ३३४
 सियान्फू—८६
 “सियासतना”—१३९

(निजाममुल्मुल्क की कृति)
 ३९२, ४०८
 सिरकप—१७५ (तक्षशिला)
 सिरदरिया—७, ५६, ६४
 (यक्सर्त), १००, १४५,
 २१९, २२२ (शे), २५६,
 ४८७
 सिरामुरैन—११७ (नदी),
 ३३४, ३३५, ३४०
 सिरिया—१६७ (शाम), २९९
 ३५७, ४६१
 सिलिसिया—१४९
 सिलरियन—५
 सिबिर—१३० (सुबिली)
 सिवा नोमानी—३०१
 सिबो—११७ (मगोल)
 सिशेखू—१२९, १३४ (प०
 तुर्क राजा)
 सिंहल—५२, १७३
 सीना—३६८, ३६९, ३८२
 (=बूअली सीना)
 सीयू—८५
 सीलू—३३७
 सीस्तान—६४, १६४, १७१,
 १७९, १८०, २७८, ३०४
 सीहाड—१३० (घार)
 सुइ—११० (नदी), ११३
 (वश), ११५, १३०
 सुइशान—२४६ (इस्सिकुलके
 पूर्वके हिमाल)
 मुकरात—३६५
 मुग्दा—६४, १५० (जरफशा
 उपत्यका)
 मुग्ध—६४ (जरफशा नदी)
 मुग्नागतगिन—४६५ (वुजार-
 पुत्र)
 मुङ्क—१३१ (थाङ्क), २४५
 (वश)
 मुतिरोसू—१७८ (त्राता)
 मुतुलिसे—२२० (ओश्रूसना)
 मुदास—१४४
 मुन्नी—२९३ (संभ्रदाय.हूनफी
 मालिकी, शाफई, हम्बली)
 मुबुकतगिन—३२५ (गज्जनवी),
 ३२७ ३३७ ३४० ३६१०

३६८, ३८०, ३८१, ३९५-९८
 सुबुई—६६७ (सुबुदय), ६७३, ४७१, (सुबोतइ), ६७३ (सुबुतइ), ६७४ (सुबुतय), ४८५ (सुबोतइ, चिंगिस-पुत्र)
 सुभगसेन—१७४ (मीर)
 सुमात्रा—१५
 सुयाब—११०, १३५, २४८, २५१ (बूतडे कराबुलक)
 सुरखतपुत्र—३७२
 सुरियानी—२३४ (लिपि)
 सुर्खबुत—२२३ (बामियान)
 सुखानि—१३५ (नदी), ६८९
 सुलू—१२४, १२९, १३६-३७ (५० तुर्क खान), १३६ (अबूमुजाहिम), २२६, २३२, २८६ (खाकान) २८८, २९०
 सुलेमान—२८२ (उमैया खलीफा)
 सुलेमान तगिन—३८७ (करा-खानी)
 सुल्तान—३७३, ३९९ (मह-मूद)
 सुल्तानशाह—४४५-४७ (ख्वारेज्मी)
 सुवर्णपथ—१७२
 सुवास—२३१ (आगूज़)
 सुवास तगिन—३७२ (करा-खानी)
 सुवासो तगिन—३९९
 सुहरावर्दी—४५३ (शेख शहा-बुद्दीन)
 सुजिया—१२२३१ (तुर्गिस राजधानी), १३६० (कगशर २), २३३ (बलाशगून)
 सुनिसिर—११७
 सुफो—३२६ (सत), ३६५, ३८८
 सुबरली—४४४ (नगर)
 सुनाक्याङ्क—८८
 सुमान—२२२, २८१

सूरत—८
 सूर्य—६९ (देवता), १८४ (मूर्ति)
 सुली—१३२ (मान्द)
 सुसियाना—१६८
 सेइन्वा—२३८
 सेलू—१२९
 सेमेरेख्ये—६१ (मन्नद)
 सेमिकना—२४९
 सेयन्वा—११६, ११७, ११८, १३७, २३४ (नदी)
 सेरेस—१७२, १७३ (बूसुन)
 सेलिगा—९५ (सिलगा), २३४ (नदी), २३८ (अभिलेख)
 सेलूक—१६७ (= मेल्यूक भी)
 सेलूकी—१६१
 सेल्यूक—१६७ (सेलूक), १६५, ६८, १७०, १७३, १७४, १७७ (२, ३)
 सेल्यूकिया—१७१ (राज-धानी), १८२ (तस्पोन)
 सेल्यूकीय—१७३, १८२
 ईराम—२३२, ४८७, ४८८
 सोगे—१२९, १३५ (५० तुर्क राजा), (सुगिस वश) २२६
 सोगद—७४, ८७, १०१, १३५, १४५, १६०, १६७, १६८, १७३, १७५, १७८, २२० (सूही), २२६ २७१ (सुगय, सोगद भी)
 सोग्वियाना—१७१
 सोग्वी—११०, १२८, १३२ (सूली), १३८, १६४, २४९
 सोतेर—१८१
 सोमनाथ—३९२
 सोरेन—१८३ (सेनापति)
 सोलजे—१२, २३
 सोवियत रूस—६१, ७९ १५८ (क्रान्ति)
 सोरहुरी—२८८, २८९ (अरब सेनप)
 सोराष्ट्र—१८३
 स्कुथ—६४ (= शक)
 स्कोल—६४ (= सकोल, शक)

स्कलाब—१०१ (शक)
 स्तेपो—१२
 स्त्रतेगोस—१६७ (क्षत्रप)
 स्त्रात—१८० (मिनादर-पुत्र १), १८१ (२ भारत)
 स्वर्बा—१४९ (लिविया, सुसिया)
 स्पिताम—१६४ (मांग्दी), १६५, १८७
 स्पेन—१२२, २४६
 स्याउवेन्—१६९
 स्यान्बुङ्क—२४२ (याङ्क)
 स्यान्पो—५५, ९६, १०३, १०४ (तुङ्कह), १०४ (वश) १११, १२२ (देखो सियान्पी भी)
 स्यान्-बो—८९
 स्यालकोट—१८१ (देखो सागला)
 स्लाव—२५, ३५, १०१, २३१, ३७६
 स्वात—१७५
 स्वान्बुङ्क—३०० (याङ्क), ४६२ (किन्)
 स्वार्ज—४९६ (तोप-निर्माता)
 स्वेन्बाङ्क—२८, १२५, १३१-३३, १३८, २१८-२६
 स्वेन्बुङ्क—१२५ (याङ्क), १३६, २४५, २९९
 स्वेन्तो—९० (चीन), ९९
 हजारारप—१६५ (जारिअरप) २८१, ४१०, ४२६ (ख्वा-रेज्म), ४२८, ६३७, ४४१
 हज्जाज—२७२ (मलिक), २७८, २८०, २८२, २८२ (मृत्यु)
 हज्ज-असबद्—२५६
 हनफी—२९३
 हफतहिन्दु—१४७
 हबली—२०३ (मुन्नी)
 हब्शा—४२१
 हमवान—१५६ (हमदान), २४५ (अखयतन), २९४, ३०८, ३६९, ४८७, ४७३
 हयतान—१५६ (हमदान)

हरजवती—१५० (ग्रीक अर्वा-
शिया)
हरमेन—४२३ (पड़िन)
हरबी—४५५ (स्वारेज्मी
वजीरमुहम्मद)
हरासर—१२८ (कगसर),
१३७, २४५ (हरागर)
हरीकद—१६७
हरेयव—१४० (हिरान)
हर्जवा लुजाई—३०७ (गज्य-
पाल)
हलब—३०५ (अंगरा)
३६५
हलबाई—२८४ (स्थान)
हसन सबबाह—३०७ (उम्मा-
ईली), ४०३, ४५३
हाउस्यान्को—२४०
हाकिम—३७५ (प्रदेयापनि)
हाकिम अमीर-पुत्र—२६७
(राज्यपाल)
हाबाउ—२४६
हाजिब—३७४ (नकुमाडर)
हाजिबहुजबाब—३७४ (प्रधान
सेनापति)
हाबी—३०६ (अब्बानी
खलीफा)
हावेन—३१० (अनुवादक)
हान्—८८ (वज), १११,
११७, १६०
हार्मी—१०१, १०५, १०८
१३३, ३३३
हारिस सूरज-पुत्र—२०५
(शिया-नना), २०७, २०८
हाकन—३०८, ६१० (स्वारा-
ज्यशाह), ६१८
हाकन सगिन—३०७ (कग-
खानी)
हाकन रशव—३०७ (अब्बानी
५)
हाकन शाहानुद्दीन—३०८
(कराखानी)
हामोन—२५
हाशिम—२९७ (वज)
हिन्वी—३४
हिन्वी-युरोपीय—३४ (भाषा)
हिन्दुकुश—६४, १६८ (परो
६७

पर्मिमदे), १७५, १७९,
२२२, २२३, ३०८, ३१८,
४५४, ४६६, ४६६, ४८४
हिन्दुपुरोपीय—६५ (वज), ६६
हिन्दुस्तान—१०७, ३९५
हिन्दुखान—४३६ (मलिकशाह-
पुत्र), ४४९ (स्वारेज्मी)
हिपारखी—१८२ (मवडि-
बीजन)
हिमयुग—९, १०, ११, १३
हिमयुग । अन्तिम—६
हिमयुग । अन्त्य—७ १९
३१
हिमयुग । तृतीय—१८
हिमयुग । प्रथम—१०, १५
हिमसन्धि—१०, ११
हिमवन्त—४८९ (पर्वत)
हिमवन्त । महा—२२१ (हिन्दु-
कुश) (- परोपमिसदे
भी)
हिमानि—१०
हिमालय—५, ६, ४८९
हिमोतला—२२२
हिया—१६०, २४६ (तगुन),
३४६, ३४६ (अम्दोराज-
धानी)
हिराकिलयस्—२१८
हिरात—२७०, २८० ३०४,
३६१, ३६६, ३७१, ४३३,
४३७, ४४९, ४५०, ४८३
हिशाम—२८७ (उमैया ९)
हीनयान—२०४
हुइबुइ—३४७ (गुड)
हुकात—१४५, १४९ (फुगन
नदी)
हुबेब—३०४ (गजपाल)
हुगरी—१३९
हुर्कनिया—१४७, १४९
(पार्थव), १८०
हुलगुखान—२०७
हुविले नोयमन—३५६
(कुविले०)
हुविक—२०७
हुशामुद्दीन—३४९ (बखारा
सद्वजहा)
हुशिकान्—२२३

हुसेन—३६२ (ताहिर-
पुत्र), ४५४ (इमाम)
हु—११९ (सुरियानी, ईरानी,
हिन्दु), ११७ (अनुर्क),
१२९ (सोगद)
हुण—६५, ६७, ६८, ७४,
७९-९६, ८० (राज.वलि),
१००, १०२, १०६, १०९,
१३८, १३९, १४३, १६९,
१७२, १७९, २१६, २१९
हुत एल् शी ताउक्—९३
(हुण)
हुपेड—११९
हुलुक—८९ (हुण)
हुलुह—८१, ८८ (हुण)
हुहाथे—९१, ९२
हुफताल—११३, ११४, १२८
(स्वेतहुण), १३०, १६१
(राजा पेइकन्द) १६६
(एफताल), २११-१६, २१९
हेराकिलयस्—१३० (विज-
न्तीय)
हेरेकल—१८४
हेलियोकल—१६९, १७८,
१७९, १८०, १८३
हेलेनिक—१५२ (ग्रीक)
हेडलवगं—११, १५ (मानव)
१७
होबयान्फ—३४१
होगुइ—२१८
होनान्—१११
होपाउ—४८६ (आतिशबाजी)
होमवर्क—७३ (शक)
होमुजव—२१६, २१८
(सासानी ४)
होलोह—११८ (सुबिली)
होवेबा—३१० (अनुवादक)
होस्सना—१३०
ह्वइह्वइ—१०७
ह्वइह्वइ—१२४ (ह्वइ हो)
ह्वइह्वइ—३४६
ह्वइह्वइ—७३ (पीत नदी)
११४, ११८, १२४ (ह्वइह्वइ),
१४६, २४५, २४६, ३४१
ह्वारेज्म—६४ (=स्वारेज्म)
ह्वइह्वइ—८२ (हुण)



१-३. वसिलेओस्—अन्तिओखो II (२६२-२४७ ई० पू०) (पृ० १६८)

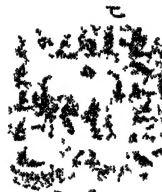
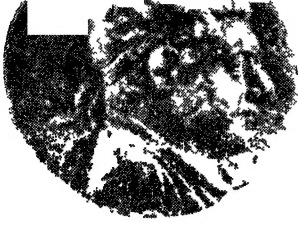
२. बिओबोतोड I (२४५-२३० ई० पू०) (पृ० १७०)

४-५. वसिलेओस् एउथुदिमोड I (२२५-१८९ ई० पू०) (पृ० १७१)

६-७. वसिलेड एउथुदिमोड



- १-२ वसिलेओस् मंगलेउ एउकतिबोउ (१६०-१५९ ई० पू०) (पृ० १७१)
३-४. वसिलेओस् एओतिरोस् एउकतिबोउ (१६०-१५९ ई० पू०)
५-६-७. वसिलेओस् विमित्रिओउ (१८१-१६७ ई० पू०) (पृ० १७३)
८-९. वसिलेओस् अन्तिमखो (१५० ई० पू०) (पृ० १७५)



- १-२ वसिलेओस् दिकडओउ (पू० १७९) इलिओक्लेओउस् (१५९-१३६ ई० पू०)
 ३-४ वसिलेओस् एउथुदिमोउ (१८३-१७४ ई० पू०) (पू० १७१)
 ५-६ वसिलेओस् अगथोक्लेओउस् (५०-० ई० पू०) (पू० १७९)
 ७ वसिलेओस् दिकडओउ इलिओक्लेओउ महरजस धर्मिउस् हेलियक्रेयस
 (१५९-१३६ ई० पू०) (पू० १७९)
 ८. अपोल्लोदोतोउ ज्रोतिरोस् महरजस अपलदतस (ई० पू० २ शतक) (पू० १७९)
 ९. वसिलेओस् मेगलेउ अजोउ (ई० पू० १ शतक) महरजस रजदिरजस महतस

55